Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ARCHAEOLOGICAL
G. K. V.
LIBRARY

Public Domain. Gurukul Kangri Collection,

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

RT 1119

COMPILED

Stock Verification-2024

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

आयुर्वेदाचार्य

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

COMPILED

आयुर्वेद गौरव

आयुर्वेद का एकमात्र सर्वोत्तम मासिक पत्र

आयुर्वेदिक औषधियोंकी निर्माण विधिमें जरा भी भूल चूक हो जानेसे शास्त्रोक्त फलसे वंचित हो जानेका भय रहता है क्योंकि आयुर्वेद अनुभवजन्य है और इसके योगोंकी निर्माण विधि पूर्ण निश्चित है। इसमें असावधानी या व्यवसायिक लोलुपता की कोई गुंजाइश नहीं है।

—सम्पादक

मूल्य
वार्षिक ३)
एक प्रति ।)

स्वरा

काशचन्द्र गुप्त M.Sc. सहकारी सम्पादक माधवप्रसाद शास्त्री आयुर्वेदाचार्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
१ वतमाने आयुर्वेद—आयुर्वेदाचार्य पं० मथुराप्रसाद उपाध्याय	२४६
२ पाश्चात्य जीवाणु विज्ञान रहस्यः—डा० श्री श्यामदास प्रपन्नाश्रमी आयुर्वेदाचार्य,	२५०
३ स्नान :—वैद्य खेमराज शर्मा छांगाणी आर्वी (म० प्र०)	२५७
४ हास्य विनोद—आयुर्वेदाचार्य कविराज पं० विश्वनाथ त्रिपाठी वैद्य	२६१
५ अकोसरे सुर्ख—के० पी० ठाकुर एम० बी० एच०	२६३
६ हरड़—श्री रामेश वेदी, गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार	२६४
७ परिवर्तन (कहानी) —आयुर्वेदाचार्य पं० मदनगोपाल वासोतिया	२६७
८ आसव और अरिष्ट—आयुर्वेदाचार्य पं० माधवप्रसाद शास्त्री साहित्यालंकार	२७३
९ प्रश्नोत्तर	२७५
१० अनुभूत—योग	२७६
११ साहित्य समीक्षा	२७९
१२ इधर उधर से प्राप्त समाचार व सूचनायें	२८०

मुफ्त-परामर्श

यदि आप किसी भयंकर असाध्य या दुखद विमारी से ग्रसित है तथा इलाज कराते २ पूर्ण हताश हो गए हैं तो आप अपना पूरा हाल लिख कर हमसे मुफ्त सलाह लेकर अपनेको रोग मुक्त करें। हमारे यहां सम्पूर्ण पत्रों-को गुप्त रक्खा जाता है। अतः पत्र व्यवहार करते समय अपने सम्पूर्ण लक्षण बेधड़क खोलकर लिख देना चाहिए! शर्म करनेसे आपके स्वास्थ्य का ही नुकशान है।

पता :—

मैनेजर—आयुर्वेद गौरव

६० पाथुरिया घाट स्ट्रीट, कलकत्ता-६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

112158
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
112158
AYURVEDA GRANTH
1954
G.K.U.
LIB
HARDWAR

ॐ

प्रा
सद्
नोट—१-"या

अ

वर्ष १

वर्तमाने-आयुर्वेदः

(साहित्य व्याकरणायुर्वेदाचार्य पं० मथुराप्रसाद उपाध्याय)

जगत्स्वास्थ्यकर्ता विहर्ता रुजानाम्,
सुसद्वृत्तवाक्योपदेष्टा प्रजानाम् ।
सदा त्र्येषणा ज्ञानदाता हि यो नः,
सुवेदः शुभं संसृतौ भव्यमीयात् ॥१॥

अष्टाङ्गं राजते यस्य, भव्यं भव्यफलप्रदम् ।
सविभागं हि तत्तत्वम्, साधु नाऽधीयतेऽधुना ॥२॥

तद्गौरवो हि भवताम्, ज्ञानदाने सदोद्यतः ।
विराजते हि संसारे, सर्वसाधनसंयुतः ॥३॥

तस्मात्त्वरा विधेयावै, ज्ञानादाने सदाबुधैः ।
गौरवो गृह्यतां नित्यम्, स्वगौरवोऽभिवर्द्ध्यताम् ॥४॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पश्चात्य जीवाणु विज्ञान रहस्य

डा० श्री श्याम दास प्रपन्नाश्रमी, M.D.,M.S., आयुर्वेदाचार्य, L.M.F., (Gold-Medalist.)

आधुनिक युग के उद्भट वैज्ञानिक जब पूर्वजों के कल्पना तीत-विषयों को वास्तव में परिणत कर अघटन संघटित कर रहे हैं, तब जीव समागम-समस्या को जो हल करने में समर्थ होंगे इसमें क्या कोई शंका हो सकती है ? किसी किसी विद्वान्के श्रीमुख से यह भी सुनने में आता है, कि जब कृमि-कीट, मच्छर, जूं, पिस्सू आदि प्राणी पंकिल वस्तुओं से स्वतः ही उत्पन्न होते हैं, तब रासायनिक प्रक्रिया द्वारा जड़ पदार्थों में प्राण-प्रतिष्ठा की प्रचेष्टा क्यों न सफल होगी ? उक्त दोनों प्रकार की शंका करनेवाले सज्जनों के ज्ञानार्थ निम्नलिखित विचार धाराये खूब स्थिर मस्तिष्कसे मनन करने योग्य होगी; यह सत्य ध्रुव सत्य है।

(क) स्मरणातीत कालसे ही प्रत्येक देश-विदेश के महा-पंडितोंने नाना प्रकार के पदार्थों के संयोग, वियोग तथा विश्लेषण आदि कार्य द्वारा उनमें चेतना शक्ति उत्पन्न करने की प्रचेष्टा पुनः पुनः की और उससे उन्हें सफलता भी नहीं मिली।

पाश्चात्य रसायन शास्त्री भी यह कार्य असम्भव समझ कर इस विषय पर हस्तक्षेप करना उचित नहीं समझते हैं। १८७२ ई० को डाक्टर वैसियनने जब "स्वतः जनन"-Abiogensis of Shontaneous generation सम्बन्धी अनुकूल विचार का प्रकट करना चाहा, तो वैज्ञानिक जगतने उनके सिद्धान्त को 'पागल का खयाल' कह कर उड़ा दिया। केवल यही नहीं, उनके लिखित दो प्रमाणिक ग्रन्थ-"Biginings of Life-(1872)" and "Evolution of Life-(1907)" भी कालावर्त में पड़कर विलुप्त हो गये हैं। उसी समय कैम्ब्रीजके विख्यात वैज्ञानिक वर्क साहब की कैवेनिस्की प्रयोगशाला में रासायनिक प्रक्रियां द्वारा रेडीयम-Radium, बावरील-Bovril आदिके संयोग से जीवोत्पत्ति की एक सूचना निकली थी—(Vide Burke's-Origin of life and Me Cabe's-From Nebula to man); परन्तु शायद पाठक वृन्द भूले न होंगे, कि इस महाआडम्बर का क्या परिणाम निकला था और जीवोत्पत्ति के स्थान पर निरर्थक वितंडाभिनय का रंगालय बन चुका था। *

(ख) अंडे में कुछ तो अम्लजान-Oxygen, कुछ तो उद्जान-Hydrogen और कुछ हिस्से में यवक्षार जान-Nitrogen रहता है। विज्ञान विद्वानोंने अशेष अनुसन्धान द्वारा यह पता तो लगा लिया; परन्तु कोई भी वैज्ञानिक उन सब उपादानोंको यथोचित परिमाण में मिश्रित कर अद्यावधि एवंविध अंडोंका उत्पादन नही कर पाया; और जिसके टनेपर पक्षी-शावक तो दूर की बात रही; यहां तक कि निकृष्ट कीड़े-मकोड़े भी उत्पन्न नहीं हुए। कहने का आशय यह है कि, विज्ञानी लोग अण्ड से सम्बन्धित जिन कई

---

* तारका चिह्नित—सम्प्रति "डान्डो बृटीश सोसियेशन" नाम की सभा के समापति डाक्टर जेप[illegible] साहब ने कहा है, कि कुछ ही दिनों के बाद वैज्ञानिक बृ[illegible] अपनी [illegible] प्रयोगशालामें जड़-पदार्थों के रासायनिक [illegible] द्वारा जैव-पदार्थ का उत्पादन करनेमें समर्थ हो जायेंगे।

नोटः—विचार के दृष्टिकोण से देखा जाय अथवा तर्कोअप्रतिष्ठित' वचन चरितार्थ करनेके लिए मान लिया जाय, कि रासायनिक प्रक्रिया द्वारा 'जैवोत्पादन'-Proto plasm bioplas जिसे केवल उत्पत्ति संज्ञा दी जा सकती है; परन्तु उस उत्पादन का मूल तत्त्व जिसमें प्राण-प्रतिष्ठा और चैतन शीलता अवश्य होनी चाहिये वह किस प्रकार से सम्भव होगा ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपादानों के विषय में कहा करते हैं, उन सबके अतिरिक्त और भी कुछ ऐसे वस्तु पक्षी आदिके अण्डेसे अवश्य ही वर्तमान है; जो आधुनिक युगके वैज्ञानिकों कोइ पार्थक्य नहीं है और वे समानानुपातिक अर्थात सूक्ष्मतम कांटे के वजन के अनुसार सम परिमाण वाले हैं। दोनों ही रसायनिक उपादान समजातीय और समान परिमाण में निश्चित हैं और दोनों ही अचेतन अण्डे का आवरण फोड़कर विचित्र साज-सज्जा से विभूषित दो अपूर्व जीव निकला करते हैं; पर एक का अण्डा क्यों मराल-शावक के रूप में बदल जाता है और जलाशय में तैरने को समर्थ हो जाता है और को मालूम नहीं है और इसी कमी के कारण रासायनिक प्रक्रिया द्वारा प्रस्तुत किए हुए अण्डे में जीवाविर्भाव होना सम्भव पर नहीं है।

(क) वर्त्तमान युगके रसायन शास्त्रियोंने विभिन्न प्रकार की परीक्षा प्रयोग के उपरान्त यह बताने की कोशिश की है, कि हंसिनी और मुर्गी के अण्डेके उपादान सहधर्मी यानी एक ही प्रकारके होते हैं उनमें दूसरे अण्डे से निकला हुआ जीव क्यों चोटी वाले वेशमें पैदा होता है जो पानीमें नहीं तैर सकता है?

इससे स्पष्ट प्रतीत होता है, कि विभिन्न जाति के अण्डे में विभिन्न प्रकृति के और भी मौलिक उपादन विशिष्ट रूप में अवश्य ही कूटस्थावस्था में वर्तमान रहता है जिसका पता लगा लेना रसायन-विज्ञान की सामर्थ्य के परे हैं और जिस अतीन्द्रिय उपादान के प्रभाव से हंसिनी का अण्डा फटकर हंश-शावक ही निकल आता है और मुर्गी का अण्डा तोड़कर मुर्गी का बच्चा ही ज्यों का त्यों निकल पड़ता है। इसके अतिरिक्त क्या यह भी एक रहस्यमय संघटन नहीं है, कि नारीके गर्भ के अन्दर रहनेवाला भ्रूण प्रथमतः (१) अणु-कोष-Call के रूप में रहता है, इसके पश्चात् क्रम से (२) शून्य-गर्भ थैली, (३) वल्लमाणु (कलल), (४) मत्स्य, (५) नाना प्रकार के नभःचर और स्तन्य पायी जीव और (६) वानरके सदृश वेश-धारण कर अन्त में (७) नर देह को लेकर इस संसार पर आ उतरता है (Hackels Evolution of Man) नामकी पुस्तके देखिये।

जिस प्रकार कई बूंद दही का सहजावहुतसे दूध को दही के रूप में बदल दे सकता है और ईस्ट (Yest) का एक कण जिस प्रकार चार पांच मन चीनी को रूपान्तरित कर डालने की शक्ति रखता है; दर्शन-शास्त्र के अध्यापक "फौशर" आदि विज्ञान-विशारद कहते हैं, कि प्राणी और उद्भिद के शरीर से निकला हुआ विविध प्रकार के रस भी उसी प्रकार शरीरस्थ विभिन्न प्रकार पदार्थों को रूपान्तरित करके जीवनीशक्ति को प्रगटित करते है अर्थात् "जैव-संघटन सामान्य रसायनिक संघटनके परिणामके सिवा और कुछ भी नहीं है।

इसी कल्पना से संघटन-विधान के बल पर परीक्षागार में कृत्रिम जीव उत्पन्न करने की वे आशा कर रहे हैं। अतः, क्या हम उनसे प्रश्न कर सकते हैं, कि अन्न, जल आदि शरीर गठनोपयोगी पदार्थोंमें जो विराट शक्ति अन्तर्हित है और उस छिपी हुई शक्ति को जागरित कर प्रकृति देवी जीवों से जीवन यापन क्रिया करा लेती है; जो अद्भूत जीवनी शक्ति उद्भिज और प्राणीज देहों में आजीवन विद्यामान रहकर शारीरिक समुदाय रासायनिक क्रियाका परिचालन करती रहती है, उस शक्तिका क्या किसीने आज पर्यन्त परिचय प्राप्त किया है अथवा उस चिर-अपरिचिता महाशक्ति'को वन्दिनी के रूप देकर क्या कोई भी वैज्ञानिक उसे किसी समय परीक्षागारके कांचके नली में प्रविष्ट करा सका है?

पकाया हुआ अन्न अथवा दूध, दही आदि भोजन पदार्थों को कई रोज पर्यन्त रख छोड़ने पर उनमें छत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पड़ने लगता है और कुछ दिनों बाद चीजें सड़ गल कर उनमें कीड़े उत्पन्न हो जाते हैं। ऐसे कीड़े कहां से आते हैं? प्राचीन कालके वैज्ञानिकों के विचारमें ये कीड़े उन भोजन पदार्थोंके अन्दर स्वतः ही उत्पन्न हो जाते हैं। कृमि-कीट, महीलता आदि कीड़े जो कि प्रायः-प्रणाली, आदि में—Drains & Drainagelines प्रायः ही दिखाई देते है, इसलिये इनकी उत्पत्ति क्लेद-कर्दम यानी कीचड़ोंसे होने के कारण ही इनका नाम "क्लेदज" रख दिया गया और यह भी विश्वास किया जा रहा है कि यही "स्वतः जनन" क्रिया है परन्तु रेडी, लीनवेल, टीन्डल, लीस्टर आदि विज्ञानाचार्यों ने दो सौ साल पर्यन्त (१६६० से १८६० तक) कठोर अध्यवसाय और सूक्ष्म दर्शी यन्त्र आदि की सहायता से विविध परीक्षाओं के बाद निश्चित् रूपसे निर्णय दिया है, कि उल्लिखित 'स्वयम्भू' यानी अपने आप उत्पन्न नहीं होते हैं; इनकी उत्पत्ति वायुमंडलस्थित उड़ती हुई धूली-कणों के सदृश जीवाणु-संक्रमण से हुई है। धरातल के सभी स्थानों में हमको धूलके कण दिखाई देते हैं और इसी सिद्धान्त को विज्ञान-विशारद टीन्डल साहब ने नाना प्रकार की परीक्षा आदि के पश्चात् प्रमाणित किया है कि संसार में सर्वत्र फैली हुई यह धूल वास्तव में सर्वांश में धूल नहीं हैं (इनके स्थूल अन्श धूल के कण और सूक्ष्मांश जैव-पदार्थ जो अतिशय क्षुद्र क्षुद्र चेतना-शक्ति सम्पन्न वाज हैं)। उक्त रेणु-रूपी असंख्य आणुवीक्षणिक जैव-पदार्थ (जीवाणु-वीजण)-Germs or Bacterias) जो कि जल-स्थल, आकाश-पाताल आदि सर्वत्र छाये हुए है; हमारी श्वास-प्रश्वास क्रिया तथा भोजन-पानीय ग्रहण करते समय अगणित "जीवाणु-वीज" हमारे शरीर के अभ्यन्तर भाग में प्रविष्ट होते रहते हैं ये ही वास्तव में मलेरिया, हैजा, चेचक, वातालिक (प्लेग), आन्त्रिक ज्वर, कण्ठ-रोहिणी, यक्ष्मा आदि रोगों के उत्पादक कारण तथा उनके व्यापक रूप देनेवाले होते हैं। * गली हुई वस्तु या सड़े हुए जीवदेहों में जो सब कीड़े दिखाई देते हैं, वे इन्ही सूक्ष्म शरीरधारी जीवाणुओं के वंशधर हैं।

वायु मंडलमें घूमनेवाले इन अप्रत्यक्ष जीवाणुओंके प्रभाव को ही दूध अम्लत्वमें परिणत हो जाता है, शराब, खजूरका रस आदि मधुर पानीयों में उत्सेचन-क्रिया अर्थात् उफान Ferment ation आ जाती है। मानव शरीरका कोई स्थान कट जानेपर ये जीवाणु उसी स्थानमें से शरीरके अन्दर तो जा घुसते है ही उपरान्त उक्त स्थान पर अपने विषैले प्रभाव फैलाकर पूयः तथा क्षतोतपन्न कर देते हैं। जो भी हो, आधुनिक, वैज्ञानिकों ने "स्वतः जनन" सिद्धान्त को असत्य कहकर त्याग दिया है। "जीव-समागम" के सम्बन्धमें वर्तमान कालके विज्ञान विदोंने यह सिद्धान्त प्रकटित किया है, कि केवल जीव से ही जीवोंकी उत्पत्ति हो सकती है, न कि जड़से जैव-पदार्थका होना कदापि सम्भव होगा।

वर्तमान युगके कृमितत्वविदोंका कथन हैं, कि एक एक श्रेणीके जीवाणु द्वारा एक पृथक् रोग उत्पन्न हुआ करते हैं जैसे—"कौमा-वैसीलस" नामक रोग वीज द्वारा हैजा, "वैसीलस-पैस्टीस" द्वारा प्लेग, "न्यूमोकोक्स" द्वारा निमूनिया आदि बहुविध रोग उत्पन्न हो जाते हैं। उक्त रोग ग्रस्त व्यक्तियोंके मल-मूत्र, निष्ठिवन, कफ, खून आदिमें उनके जीवाणु दिखाई देते हैं, इसलिये कृमि-विज्ञानविद् उक्त कृमि-कीटाणुओंको उस उस रोगके आक्रमणका प्रमुख कारण समझते हैं। अथवा कीटाणुके स्वस्थ शरीरपर आक्रमण करने से ही रोग आदि उत्पन्न हो जाते हैं, परन्तु क्या ऐसा नहीं हो सकता है कि किसी कारणसे हमारे स्वास्थ्यका नाश हो तो उक्त जीवाणु हमारे शरीरको उनकी आवास भूमि बना लेते हैं अर्थात् हम अपनी अज्ञानता वश उन्हें अपने शरीरके अन्दर वसनेके लिए बुला लेते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुसन्धित्सु उचित्वादी वैज्ञानिकने आज दो सौ वर्षसे सतत संलग्नशीलताके साथ और गम्भीर गवेषणा तथा कठोर साधना करती आई है, उसके परिणाम स्वरूप उन्हें जो निष्कर्ष प्राप्त हुआ उसीको वे आज संसारके समक्ष अश्रान्त रूपसे प्रतिपादित कर रहे हैं—(Vide Spen Cers Biology Huxleys Presidential Address of 1870 to the British Association, Tyndalls Article in the Nineteenth Century for January 1878. Haeckels Natural History of cration. Tyndalls Floating Matter in the Air and Chambers Encyclopædia article "Spontaneous Generetion."

परन्तु यहांपर यह कहना पड़ेगा, कि उल्लिखित जीवाणुओंके घटक या जनक यानी यह कहिए जड़में जैव-संयोगके जीवांकुरोंका आविर्भाव इस धरातलमें किस प्रकारसे हुआ ? इस विषयका आधुनिक वैज्ञानिकोंमें घोर तर मतभेद दिखाई देता है। "अनादि कालके किसी एक शुभ मुहूर्तमें अनिर्वचनीय रासायनिक शक्ति के प्रभाव से एकाएक जड़में प्राणकी प्रतिष्ठा होकर

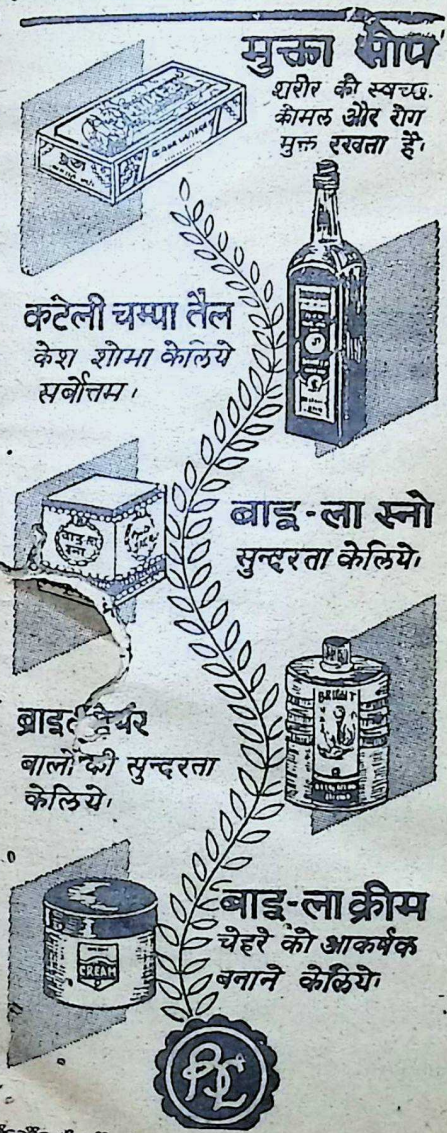

बड़े बाजार में सबसे बड़ा एवं सस्ती बस्तुयें प्राप्त करने के लिये एकमात्र स्थान

देशी और विलायती दवाओं के साथ साथ सुगन्धित व औषधियों से निर्मित सर्वोत्कृष्ट केश तैल एवं साबुन, मार्टन की मिठाइयाँ एवं बिड़ला लेबोरेटरीज़ द्वारा निर्मित, सभी तरह की दवायें व तैलों का एक मात्र प्राप्ति स्थान :-

बाइला मेडिकल हाल

१५६डी, हरिसन रोड,

कलकत्ता--७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विवर्त या क्रम विकासके नियमानुसार दीर्घ समयसे तथा बहु विधि अवस्थाओंका विपर्याय होते हुए भी क्रमशः नाना प्रकारके जीवोंसे भूमण्डल परिपूर्ण होगया है; स्वाती नक्षत्रमें सम्पन्न सिद्धियोगका वह शुभक्षण अब अतीत हो चुका है; इसलिए संसारकी वर्तमान परिस्थितिमें रासायनिक संघटनोंसे जीवोंकी उत्पत्ति होती नहीं दिखाई देती है" कहकर घोषणा करनेवाले वैज्ञानिक निबन्ध लेखक गण अपनी कल्पना शक्ति केवल जो कुछ भी समालोचना तथा जीवोत्पत्ति समस्याका समाधान करते हैं, उनके सिद्धान्तको छोड़ देना चाहिए, क्योंकि पूर्वोक्त सिद्धान्तका समाधान यह है, कि "स्वतः जनन" सिद्धान्त बिवर्तवादकी सहायतासे सिद्ध होता है और पक्षान्तरमें विबर्त अर्थात् परिणामवाद स्वतः जनन सिद्धान्त द्वारा अनायास ही प्रति पादित हो जाता है—ऐसे नवाविष्कृत विचार-विमर्श यद्यपि उनके सरल विश्वासका परिचय देता है, तथापि यह अदृश्य 'वीजांकुर" के सदृश किम्वा प्रहेलिकाकी अपेक्षा भी सूक्ष्मतर हो सकता, परन्तु दुर्दैव व परीक्षण व पर्यवेक्षण-मूलक आधुनिक विज्ञान अथवा बिचार मूलक प्राचीन न्याय-शास्त्र उसका समर्थन कदापि नहीं करेगा।

विज्ञान जगत्के सम्राट लार्ड केल वील कहते हैं, कि आदि युगमें जीवांकुर उलकापिंडमें विद्यमान था, वादमें उलकापिंडके साथ यह धरातल पर पतित होकर युग-युगान्तर वंश विस्तार करता हुचा क्रम-विकासके नियमानुसार विभिन्न देहधारी जीवोंमें परिणत हुआ है। विविध विज्ञान तत्व विशारद जर्मन पंडित हेल्म होलतज तथा यूरोप महादेशके विख्यात विद्वान्नोंने इसी सिद्धान्तको समर्थन किया है। महा-पंडित रीक्टर साहब कहते हैं, कि महाकाशका सभी स्थान अति सूक्ष्म जीवांकुरोंसे भरा हुआ है। पंच महाभूतमें व्याप्त ये अंकुर उनके अनुकूल पोषक तत्व जैसे भोजन पदार्थ, वायु और उत्तापकी सहायतासे वृद्धि प्राप्त होते हैं और कालान्तरमें न जाने कितने ही लोकोंमें कितने ही प्रकारके जीवके रूपमें आविर्भूत हुआ करते हैं।

जड़-पदार्थोंके अन्दर शक्ति (enery) ओतःप्रोत रूपसे विद्यमान रहती है और विशेष अवस्थानुसार वह प्रकटित हुआ करती है बंगालके सुप्रसिद्ध विज्ञानाचार्य सर जगदीशचन्द्र बोस, M.A.,D.Sc.,Kt.,C.I.E., C.S.I. द्वारा लिखित सारगर्भित ग्रन्थ "Response in the Living &the Non Living" का अवलोकन किया जाय तो इस विषयका बहुत कुछ आभास मिलेगा कि "ज्ञान या बोध" अर्थात् चेतना शक्ति (Sensitivty) भी उसी प्रकार चेतना चेतन-जगत्के अन्दर छिपी हुई रूपसे वर्तमान है तथा अवस्थाके तारतम्यानुसार प्रकटित हुआ करती है। आपने अपने बनाये यन्त्रोंसे यह भी प्रमाणित किया कि उद्भिज्जके स्नायु भी उत्तेजित होनेपर अपने सुख-दुःख आदि अर्थात् सहानुभूति प्राप्तिकी अभिलाषा प्रकटित कर सकते हैं। हेकेल जैसे प्रमुख जड़ द्वैत वादियोंने अपना अभिमत प्रकटित किया है, (Vide Haeekels Reedla of the Universe-pp. 57. 868 Wonders of Life) कि ब्रह्माण्ड के प्रत्येक अणु-परमाणुओंमें तीन गुण वर्तमान हैं:—(१) व्याप्ति-Extention, (२) बल-Force, और (३) अनुभूति-Sensation, परन्तु जड़वादियोंके साधन-सिद्ध प्रिय "परमाणु" अपने स्वरूपके अपरिवर्तनीय अरूपके शक्ति-सागर-गर्भमें सदाके लिए विलीन होनेका जो रहस्य है, क्या उसे जड़-द्वैतवादी समर्थन करते है? आधुनिक भौतिक विज्ञान के एक अधिनायक एरेनियस साहबके मतानुसार किसी दूरवर्ती सचल नक्षत्रके आदिम अति सूक्ष्म जैव-वीज विश्व व्यापी आलोक-रश्मियों के दबाव के कारण बिक्षिप्त होकर धरातल पर आ पड़ा है; परन्तु आधुनिक पंडितोंमें अग्रगणय नेता ब्रेकेरेलने इस सिद्धान्त के प्रतिकूल राय देते हुंए कहा हैं, कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस आलोक-तरंग में ऐसी जीवाणु-नाशक रश्मियां वर्तमान है, कि उससे तथा कथित जीवाणु-अंकुर कभी सजीव अवस्थामें पृथ्वी पर पहुंच ही नहीं सकते हैं" तथा "उल्कापिंड किम्वा आलोक-तरंग से आहत किसी अन्य नक्षत्रेस जीवाणु-वीज का धरित्री पर आ गिरना या महाकाश-मार्ग में यानी महाशून्य-गर्भ में जैव-वीज का घूमते रहना" सिद्धान्त को अगर मान भी लिया जाय तो यह प्रश्न स्वतः ही उठ खड़ा होगा, कि पूर्वोक्त उलकापिंड या ग्रह में अथवा अन्तरीक्ष में आदिम जीवांकुर किस प्रकार से उत्पन्न हुए हैं ? या यह कहिए, जि जड़ में जीवोत्पत्ति अर्थात् जड़ व जीव के संयोग समस्या का समाधान मानवी-बुद्धिके परे की बात है क्योंकि जड़-विज्ञान आज पर्यन्त इसकी मीमांसा न तो कर ही सका और कर सकेगा।

जीव-समागम रहस्य प्रसंग में रसायन शास्त्रकी ओर से प्रसिद्ध वैज्ञानिक सर हेनरी रस्को, प्राणी-विज्ञान के नाम से बिवर्त-वाद-प्रवर्तक भुवन-विख्यात डार्विन साहब और उनके साथी वालेस तथा वैज्ञानिक अज्ञवाद के आदि प्रचारक सर्व जन परिचित आचार्य हक्सली, जड़ा-विज्ञान की ओरसे टीन्डल और बिवर्तन दर्शन के महान् दार्शनिक हवर्ट, स्पेनसर और विंश-शताब्दीके क्रम विकाशवाद के प्रचारक वर्ग सो आदि विश्व-विज्ञान-विद्योंने यही त्रुटी प्रदर्शित की है कि उनके सर्व-साधन-सिद्ध सिद्धान्त इस विषम समस्याको समाधान करने में सर्व प्रकार से असमर्थ हैं, वल्कि उन्होंने एक बात और भी बताई हैं कि दृश्यमान इस माया-पटकी ओटमें छिपी हुई 'अवाड़मनसगोचर' कोई एक ऐसी "अव्यय विराट-शक्ति"-One Infinite and Eternal Energy है, जिसके प्रभाव से विश्वका सृजन-संहार कार्य हुआ करता है।

अब हमारा कहना यह है, कि वह अघटन-घटन-पटीयसी महाशक्ति जो जीवों का जीवन और प्राणियों का प्राण तथा जो जीव और उद्भिदके जीवनी-शक्ति को दीर्घस्थायी रखने के लिए अपनी स्थूल शक्तियोंको निरन्तर कल्याणके पथ पर परिचालित करती रहती है; उस-महीयसी "आद्या शक्ति" का यावतीय क्रिया-शक्ति जड़ है या सचेतन; प्राकृतिक है या चिन्मयी, अणु-चैतन्य से समुद्भासित होती है या विभु-चैतन्य से—"पराशक्ति" को ज्ञान द्वारा जाना जा सकता है अथवा वह ज्ञान-विज्ञान का पेर की वस्तु है किम्वा उस विराट शक्तिकी जड़में कोई मंगलमयो सदिच्छाये छिपी हुई है; इन जटिल समस्या को सुलझानेका या उन सब प्रश्नों का उत्तर देनेका कठोर भार उन्हीं पर छोड़कर हमे अलग रहना उचित होगा। जो कि जड़-विज्ञन, भौतिक विज्ञन को अनर्थ और अनित्य समझ कर परम परमार्थ-विज्ञान, प्रसविनी पराशक्ति का साधक हैं ! अन्तर्यामीके साक्षात्कार है !! जिसने जन्म-जन्मान्तरके अन्तमें पुनर्जन्मके समय जीवोंको क्षुद्रवीजके स्वरूपमें असहाय-असम्वल अवस्थामें शक्ति-सागर-गर्भमें ढकेल दिया है। उस समय बाहरी शक्ति अन्त पुष्टि होकर जीवोंको यानी हमारे शरीरको पोषण

इनाम लीजिये

एक सुन्दर

औषधियों की बक्सा जिसमें प्रायः सभी आवश्यक औषधियां व अन्य वस्तुयें होगी।

जिनके

लगातार ५ परीक्षित योग ५ अंकोंमें प्रकाशनार्थ प्राप्त होंगे उनको यह

उपहार स्वरुप सादर भेंट दिया जायगा।

प्रबन्धक

आयुर्वेद गौरव

६०, पाथुरिया घाट स्ट्रीट, कलकत्ता—६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और संरक्षण किया। मातृ-स्तनोंमें दूधके साथ साथ स्नेह, ममता-माया को जोड़कर के, बन्धु-बान्धवोंके प्रेम-पीयूष धारी जीवों के जीवन को प्रफुटित प्रफुल्लित किया। दुर्दिनोंमें और बाहर के आघात के परिणाम स्वरूप हृदय में शक्ति का संचार कराया तथा जिस शक्तिके बल पर बाहरके साथ जूझनेमें समर्थ हो चुका हूँ * * * * जिसमें हमारा अभिमान नहीं है, अपमान नहीं है; इन सभीके जड़में मैं हूं या तुम? हम हैं या वे? * * * * अन्तः प्रकृति और वहिः प्रकृति के इस शक्ति-संग्राम पर जीवनका कितने ही ढंगोंसे विकास होता है। दोनोंके मूलमें केवल वह एक ही महियसी शक्ति है, जिसके द्वारा जड़ और चैतन्य, अणु और विभु, अण्ड और ब्रह्माण्ड, नित्य-निरन्तर अनुप्राणित हो रहे हैं, उस विराट-शक्तिका उच्छ्वास ही जीवन की अभिव्यक्ति है। उक्त पराशक्तिके परमाणु-ग्रह से ही मानव दानवत्व को छोड़कर देवत्वको प्राप्त होते हैं।—आचार्य जगदीश चन्द्र वसु लिखित "अव्यक्त" नामक पुस्तक द्रष्टव्य।

दुनियाँमें हलचल मचा देनेवाली वही आसाम बंगालकी रहस्यमय पुस्तक

आसाम	आसामीं बंगालीं तिलस्मीं राज या खजाना—करामात	नेपाल
बंगाल		भूटान

जिसने भारतके कोने कोनेमें हलचल मचा दी। और जिसकी हजारों प्रतियाँ ६) रु० मूल्य होते हुए भी हाथोंहाथ खतम हो गई थी और फिर भी आर्डरोंका तांता लगा ही रहा। पहले एडीशन पर हजारों आदमियोंका यह कहना है कि यह पुस्तक नहीं बल्कि नामर्दोंको मर्द, बाझोंको सन्तान, रोगियोंको निरोग और हजारों प्राणियोंको प्रतिवर्ष कालके गाल से बचानेवाली, भारतके पूज्य महात्माओंकी कभी न मिटनेवाली अद्भुत शक्तिका भण्डार सचमुच 'खजाना करामात, ही है। इन सब अद्भुत प्रयोगोंके अलावा कामरूप देश [आसाम] बंगाल और नेपालकी तराईमें जादू और वशीकरण विद्याकी अद्भुत लीलायें, जिनसे आपको आश्चर्य ही नहीं बल्कि एक अद्भुत शक्तिका भण्डार हाथ लगेगा और इन विद्याओंकी सचाई शीशेकी तरह प्रकट हो जायगी। १०), २०) रु० में नामर्दों को मर्द बना देनेवाले विज्ञापनों, औषधियों या वशीकरण मन्त्रों, यंत्रोंपर खर्च करनेसे पहले इस पुस्तकको देख लें। फिर यदि पुस्तक आपको नापसन्द हो तो हमारी गारण्टी है कि तीन दिन देखकर वापिस कर दें। हम तुरन्त मूल्य लौटा दगे। इससे बढ़कर और क्या सचाई होगी। इस नये संस्करणमें दसों वशीकरण आदिके परीक्षित कभी फेल न होनेवाले प्रयोग बढ़ाये गये हैं पृष्ठ संख्या भी पहले से अधिक लगभग ६५० पृष्ठ हो गई है। मूल्य वही ६) रु० सजिल्द ६॥।) महसूल १) अलग है। परन्तु आर्डरके साथ पेशगी रुपया भेजनेवालोंको महसूल माफ होता है। जल्द आर्डर दें नहीं तो यह एडीशन भी खतम हो जावेगा और फिर पहले की तरहसे वर्षों इन्तजार करना पड़ेगा। अधिक माँगके कारण "जगाधरी, [इ० पी०] तथा बुलन्द शहर [यू० पी०] में हमारा दफ्तर खुल गया है जल्द प्राप्त करनेके लिये इन्हीं स्थानोंमें आर्डर दें, (विशेष रियायत) इस पत्रके ग्राहकोंको इस माहके अन्ततक मूल्य में १) रु० की रियायत होगी जल्दी एक प्रति संग्रह कर लें। अन्यथा पछतावेंगे।

राय साहब के० एल० शर्मा एण्ड सन्स, रईश एण्ड बैंकर्स

शिलांग (आसाम) या [५१] "जगाधरी" (ई० पी०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—: स्नान :—

लेखक—वैद्य खेमराज शर्मा छांगाणी आर्वी (म० प्र०)

हिन्दु संस्कृतिमें स्नान को एक पावन कर्म माना गया है। क्योंकि स्नानसे आरोग्य रक्षा, दैनिक शारीर स्वच्छता, मनःशुद्धि, स्थिरता, कार्य करनेकी क्षमता इत्यादि नाना भांतिके लाभ प्राप्त होते हैं। दिनचर्यामें प्रथम शौच कर्म बाद दन्त धावन एवं तत्पश्चात स्नान करना अनिवार्य माना गया है क्योंकि इन्हीं सब पर आरोग्यता अवलम्बित है। स्नानके गुणोंके सम्बन्धमें हमें आयुर्वेद शास्त्र ग्रन्थोंमें नाना भांतिके श्लोक दृष्टिगोचर होते हैं।

यथा—स्नानं पवित्रमायुष्यं श्रमस्वेदमलापहम्।
शरीर बल संधानं केश्यमोजस्करं परम्॥

श्री सुश्रुताचार्यजीके मतानुसार—
निद्रा दाहश्रम हरं स्वेद कण्डू तृषापहम्।
हृद्यं मलहरं श्रेष्ठं सर्वेन्द्रिय विशोधनम्॥
तन्द्रा पाप्मोपशमनं तुष्टिदं पुंस्त्व वर्धनम्।
रक्त प्रसादनं चापि स्नान मग्नेश्च दीपनम्॥

अर्थात् स्नान से दाह एवं श्रम नष्ट होता है। पसीना, खुजली व तृषाका नाश होता है। यह हृदयको हितकारी व मलको निकालनेमें श्रेष्ठ है। इससे सम्पूर्ण इन्द्रियां सचेष्ट बनती हैं। तन्द्रा, पाप्मा (अलक्ष्मी) मनहूंसी) का नाश होकर प्रसन्ता एवं पुरुषत्व बढ़ता है। स्नानसे रक्त निर्मल होता और अग्नि बढ़ती है।

स्नान से आलस्य नष्ट होकर शरीरमें चैतन्यता प्राप्त होती है। देहमें एक प्रकारकी शान्ति एवं शीतलता का अनुभव होता है। इससे कांति बृद्धि, मनको धैर्य, काम करनेकी पुनः सामर्थ्यता मिलती है। स्नान कर चुकनेके बाद शीघ्र ही क्षुधा प्रदीप्त होती है यह इसमें बिशेष गुण है। स्नान से उत्साह बढ़ता है। शरीरस्थ समस्त रोमकूप खुल जाते है अतः पसीना निकलनेमें सहायता मिलती है। दोषोंका निर्मल होना भी स्नान से सुनिश्चित है। अस्वस्थता, दिन भरकी थकान, रात्रिकी निद्राके कारण उत्पन्न हुई आलस्यता मिन्टोंमें दूर होकर देहमें हलकापन प्रतीत होता है एवं पुनः देहमें शक्तिका संचार होता हैं, वह इस श्लोकसे प्रतीत होता है, वह इस श्लोकसे प्रतीत होता है —

सद्योमांसं नवं चान्नं बाला स्त्री क्षीर भोजनम्
घृतमुष्णोदक स्नानं सद्यः प्राण कराणि षट्।

इस प्रकार स्नानकी महत्ता हर एक मानव मानते हैं। वस्तुतः यह महत्ता स्नानकी नहीं वरन् जलमें ही मानना चाहिये, क्योंकि जल ही संसारमें प्रति अलौकिक वस्तु है। योगके मतानुसार जलकी महिमा अपार है। शीतल छाया (जो घने बृक्षों के बीच) में शीतल जलसे स्नान करें तो मन प्रसन्न एवं प्रफुल्ल हो उठता है मस्तिष्क अपने निर्मल ज्ञानसे ओतप्रोत हो जाता है। देहका प्रत्येक अंग-प्रत्यंग तृप्त होकर देहमें एक विशेष प्रकारकी स्फूर्तिका भास होता है। देहकी शिथिलता शीघ्र नष्ट होती है। मलिनता कोसों दूर भागती है. देहमें हलकापन एवं सुख ही सुखका अनुभव होता है। मानव समाजको छोड़ पशु पक्षियोंको भी स्नानसे बड़ा आनन्द मिलता है, इनके स्नान देखनेका अवसर हमें कई बार मिलता है। यथा—हाथी; चिड़िया एवं अन्य नाना भांतिके जीवोंको स्नान बहुत प्रिय होता है। हम स्वयं अपने पालतू तोते को स्नान करा चुकनेके बावजूद भी उसकी इच्छा जलसे भरी कटोरीमें अपनी सम्पूर्ण चोंच एवं सिरका भाग डूबोकर पुनः स्नानका आनन्द लेनेकी बनी ही रहती है, इससे उनकी आत्माको सुख मिलता है। पशु-पक्षियोंके अलावा प्रकृति पेड़ों पौधोंको भी स्नानका आनन्द अवसर अवश्य देती है। प्रातः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष इन पेड़ों पौधोंको भरपूर जल (वर्षा ऋतुमें) उनकी स्वेच्छानुसार मिल जाता है, जिससे वर्ष भर उनको स्वस्थता रहती है तथा वर्षकी अन्य ऋतुएं सर्दी, गर्मीका उन पर विशेष दुष्परिणाम नहीं होता। इस प्रकार जल स्नानके बिना इनका जीवित रहना भी असंभव है। किसीने कहा भी है कि—"पानी बिना गुलशन कहीं खिलते नहीं देखा" जलको ही प्राणियों एवं सृष्टिका आधार माना है। सभी देशोंमें, ऋतुओंमें कार्योंमें जल अनिवार्य वस्तु है इसके बिना संसारका क्रम ही नहीं चल सकता क्योंकि यह पंच तत्वों की एक प्रमुख वस्तु है। जब जल में ही इतनी सामर्थ्य है तब स्नान में होना युक्ति संगत ही है।

उष्ण जलवायु एवं धूम्रपान की आदत से उत्पन्न होने वाली विजातीय उष्णता के कारण शरीरस्थ यकृत आंते एवं पाचक अंगों की क्रिया में विकृति उत्पन्न हो जाती है, अतः ये सारी इन्द्रियां अपना कार्य सुचारु रूप से नहीं चला सकती। इन क्षुद्र व्याधियों में स्नान एक अति प्रभावकारी एवं लाभदायक सिद्ध हुआ है। स्नान से शांति एवं स्वस्थता व प्रसन्ता प्राप्त होती है तथा देहमें शीतलताका आभास होता है।

स्नानके पश्चात् त्याज्य कार्य

१—स्नान के बाद हाथ से अंग मर्दन करना वर्ज्य है।

२—सिर को बिना पोंछे टोपी, पगड़ी आदि धारण करना भी मना है।

३—देह के गीला रहने पर वस्त्रादि पहनना भी त्याज्य है।

४—स्नान के बाद मैथुन सर्वथा वर्जनीय है।

५—स्नान के बाद मैला कुचैला या दुर्गन्धित वस्त्र पहनना मना है; सदैव नित्य धुले हुए कपड़े ही देह पर धारण करने चाहिये।

स्नान किसके लिये वर्ज्य है।

अर्दित रोगी, नेत्ररोगी, मुख रोगी, कर्णरोगी, अतिसार, आध्मान, पीनस, अजीर्ण, युक्त रोगी को तथा भोजन के तुरन्त बाद स्नान करना भी वर्जित है।

सुश्रुताचार्यजी के मतानुसार उक्त रोगों के साथ आरोचक, ज्वर एवं वायु के समस्त रोगीको स्नान का निषेध हैं यथा—

तच्चा तिसार ज्वरित कर्णशूला निलार्तिषु।
आध्मानारोचकाजीर्ण भुक्त वत्सु च गर्हितम्॥

आयुर्वेदीय इन्जेक्सन

हमारे इन्जेक्सन निरापद और प्रभावशाली हैं। यह बात तो सब ही कहते हैं पर परीक्षा ही कसौटी है। हमें आप १) का मनीआर्डर भेजकर ६ सेम्पुल का १ बक्स जिसमें शूलरिपु—विषमज्वरान्तक, श्वेत प्रदरान्तक के दो दो का सेम्पुल है। मंगाकर परीक्षा करें और देखें कि निरापद और प्रभावशाली गुणवाले हैं या नहीं।

प्राणाचार्य भवन लिमिटेड,
विजयगढ़ जि० अलीगढ़।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जलाशय एवं स्नान सम्बन्धी प्रतिबंध

(१) स्नान के समय शीत एवं उष्ण इन दोनों जल का प्रयोग अग्नि कारक है क्योंकि यह क्रिया संकर दोषापत्ति की श्रेणी में माना गया है।

(२) स्नानके समय शिरपर जलका सिंचन अनिवार्य है शिरपर जल डाले बिना कदापि स्नान न करें।

(३) तालाबके शीतल एवं थोड़े जल में स्नान वर्जित है।

(४) नग्न होकर स्नान करना, तैरना या सोना त्याज्य है।

(५) दूसरे के बनवाये हुये तालाब या जलाशय में स्नान करना भी मना है यदि आवश्यक हुआ तो उस जलाशय की पाँच पिंड मृत्तिका बाहर फेंक देने से वह स्थान स्नान के योग्य स्वयं के लिये हो जाता है ऐसा प्राचीन साहित्यमें दृष्टिगोचर होता है। यथा—पञ्चभिः पिण्डैकद्धृतैरात्मेव स्नानार्थं जलाशयः कृतो भवति इस्सन्दुः।

(६) अपने प्रति बिंब को जलमें देखना वर्जित है।

(७) जलाशयके किनारे (तट) पर या कुंवे पर खड़ा होकर जल की ओर देखना भी त्याज्य है।

(८) जल को हाथ-पैरों से पीटना या जल उछालना भी उचित नहीं है।

(९) सूने स्थान के जलाशय एवं दुर्गन्ध युक्त जलमें भी स्नान वर्जित है।

हेमाद्रि एवं अरुणदत्त टीकाकार एवं जठराग्नि प्रदीपन, वीर्य वर्धन तथा आयुवर्धन इन्हें स्नान के गुणों को प्रभाव से मानते हैं किन्तु यन्त्रकारों के मतों को उद्धृत कर यह भी करते हैं कि मधुर, स्निग्ध, बृहण, बल वर्धक एवं मनोहर्षण ये सब बृष्य हैं। स्नान से मन को हर्ष होता है यह बात हम प्रथम ही कह आये हैं और प्रहर्षण से बृष्यत्व अर्थात् (वीर्य वर्धनत्व) की प्राप्ति होती है। इसी प्रकार जठराग्नि के संबंध में भी कथन है कि स्नान जठराग्नि की बाहर निकली हुई रोम कूपाश्रित ज्वालाओं को भीतर ले जाता है और उनसे अग्नि को प्रबलता प्राप्त होकर जठराग्नि को प्रदीपन करता है जैसे शीतकाल में शीतवायु के स्पर्श से रुकी हुई जठराग्नि प्रदीप्त होती है। परन्तु इस विषय में बालात्ययका कथन है कि "स्नान से त्वचा के आश्रयमें रहने वाला भ्राजक पित्त भीतर प्रवेश कर अग्नि को बढ़ाता है और उससे दीपन होता है"। इससे स्नानके लिये उष्ण जल ही उत्तम माना जायगा क्योंकि शीतल जल से अग्नि शांत होती है और शीतल जल भीतर प्रवेश भी नहीं करता इस प्रकार हेमाद्र एवं अरुण दत्त इन दोनों टीकाकार का कथन है। श्री सुश्रुताचार्यजी के निम्नलिखित श्लोक से स्नान के गुणोंमें रक्त शोधक कार्य भी होता है यथा—रक्त प्रसाद नं चापि स्नानमग्नेश्च दीपनम्। इति

इसी प्रकार स्नान करने के लिये उष्ण एवं शीतल जल दोनों का उपयोग किया जाता है इस संबंध में हमारे महर्षि श्री सुश्रुताचार्यजी का कथन अक्षरशः सत्य है यथा—

उष्णेन शिरसः स्नानमहितं चक्षुष्यः सदा।
शीतेन शिरसः स्नानं चक्षुष्यमिति निर्दिशेत्॥
श्लेष्कमाकत कोपं तु ज्ञात्वा व्याधि बलाबलम्।
काममुष्णं शिरः स्नानं भैषज्यार्थं समाचरेत्॥
अति शीताम्बु शीते च श्लेष्म मारुत कोपनम्।
अत्युष्णमुष्ण काले च पित्त शोणित वर्धनम्॥

अर्थात्—उष्ण जल से शिरः स्नान नेत्रोंको सदैव हानि करता है और शीतल पानी से शिरः स्नान नेत्रों को हितकारी है। औषध रूप से कफ एवं वायु के प्रकोप में रोग बल एवं निर्बलता को ध्यान में रखकर इच्छानुसार उष्ण जल से शिरः स्नान करना चाहिये। इसी प्रकार अति शीतल या शीतऋतु में ठन्डे जलका स्नान कफ तथा वायु को प्रकुपित करता है एवं अति उष्ण जल या उष्ण ऋतु में गरम जल से स्नान करने से पित्त एवं रक्त दोनों प्रकुपित होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—'आयुर्वेद-गौरव' के ग्राहकोंको हमारी तिजोड़ी—

तत्काल-फलप्रद प्रयोग (प्रथम भाग)

इसमें 'पांच मिनट में' अफीम का प्रभाव दूर करना, हैजे को दो-घण्टे में ठीक करना, पेट-दर्द का रोगी रोता आये, हंसता जाए, गैसट्रबल फौरन दूर, रक्तप्रदर का ब्रेक, वायुगोले की शर्तिया दवा, शीतपित्त की दो-पैसे की शर्तिया औषध, स्वप्नदोष पर रामबाण औषध, प्लीहा-नाशक पट्टी, फेफड़े से खून थूकना जादू की तरह बन्द, वैज्ञानिक-डायरी के २१ प्रयोग, बिना आपरेशन के बवासीर ठीक, ठण्डाटिंचर, सात मिनट में रतौंधी ठीक, आदि 'एक सौ एक' तत्काल फलप्रद प्रयोगों का अनुभूत संग्रह है।

१ प्रति १।।), ५ प्रतियां ६) पोस्टेज अलग।

सन् ५३ की फाइल, ४) भेजकर मंगाने वालोंको यह पुस्तक भेंट में ही दी जायगी।

तत्काल-फलप्रद प्रयोग (तृतीय भाग)

इस पुस्तक को महिला रोगों पर प्रचलित अनेक पेटेण्टों का भंडाफोड़ ही समझिये। इसमें वे प्रयोग हैं, जो कोई हजार रुपये लेकर भी नहीं बताता। इनके जरिए अनेकों फार्मेसियां लाखों रुपया प्रतिवर्ष कमाती हैं। महिला रोग 'विशेषज्ञ' बनने के लिए यह एक ही पुस्तक काफी है। इसमें ३०१ चुनिन्दा योग और १७० पृष्ठ हैं। लाख काम छोड़कर इसे अवश्य मंगाइये। इसे नारी-रोगों पर मेरे २० वर्ष के उत्तम अनुभव का निचोड़ ही समझिए। अवश्य मंगाइये। मूल्य २) मात्र। ५ प्रतियां ८), राजसंस्करण २।।)

तीनों भाग एक साथ मनीआर्डर से रुपया भेजकर मंगाने से पोस्टेज माफ। वी० पी० से कोई रियायत नहीं।

तत्काल-फलप्रद प्रयोग (द्वितीय भाग)

(सफल महिला-रोग-चिकित्सा)

इसमें पुत्रोत्पादक योग, चार दिन में हिस्टीरिया ठीक, गर्भाशय के सभी रोगों का शर्तिया इलाज, शीघ्र प्रसव-कारक रामबाण नुसखा, भयानक प्रदरों का तीन दिन में शर्तिया इलाज, बिना आपरेशन के गर्भाशय की गांठ ठीक, तत्काल वायु-शूलनाशक, एक तीर में चार शिकार, आर्तव रोगोंपर रामबाण औषधें, सन्तानदाता, प्रेत-बाधा नाशक सेट, स्त्रियों का टी० बी० से शर्तिया बचाव, सरल मासिक खोल, गर्भरोधक शर्तिया योग आदि तत्काल लाभदर्शक २०१ चुनिन्दा योग हैं। पृष्ठ संख्या १६० से ऊपर। मूल्य २) मात्र। ५ प्रतियां ८), राजसंस्करण २।।) पोस्टेज पृथक्।

सन् ५४ के आयुर्वेद-चिकित्सक के ग्राहकों को यह पुस्तक मुफ्त में मिलेगी। आज ही ४) भेजिए।

'आयुर्वेद-चिकित्सक' की सन् ५३ की फाइल—

इसमें २९९ प्रयोग, और ९५ लेख, अनेकों आवश्यकीय चुनिन्दा संपादकीय नोट हैं। अवसर पर आप इससे हजारों रुपये बचा सकते हैं। इसमें महिला रोग, बालरोग, ऋतुचर्या, चिकित्सानुभव, परामर्श, परीक्षित प्रयोग आदि स्थायी स्तम्भ भी हैं। इस एक फाइल से आप मलेरिया, अतिसार, बच्चों के विशेष रोग और महिलाओं के विशेष रोगों के विशेषज्ञ बन सकते हैं। इस फाइल को अवश्य मंगाए।

मनीआर्डर से चार रुपये पेशगी भेजने वालों को पूरी फाइल के साथ 'तत्काल-फलप्रद प्रयोग' प्रथम भाग भी रजिस्ट्री से भेजा जायगा। वी० पी० नहीं होगी।

आयुर्वेदीय पुस्तकें, फाइल एवं प्रामाणिक औषधियाँ मंगाने का पता—

वैद्य पं० चन्द्रशेखर शास्त्री, लाखाभवन, पुरानी चरहाई, जबलपुर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हास्य विनोद

लेखक—आयुर्वेदाचार्य कविराज पं० विश्वनाथ त्रिपाठी वैद्य

संसारमें भगवान् रूपका आराधन ही सर्वश्रेष्ठ है परन्तु परमात्माकी माया ऐसी प्रभावशाली है कि मैं पूजा कर रहा हूँ उस समय अनेक भावनायें हृदयमें प्रकट हो रही है, अमुक कार्य नहीं हुआ अथवा यह कार्य करना चाहिये एवं उसी विषयपर ध्यान आकर्षित हो जाता है और परमात्माकी तरफसे ज्ञान दृष्टि हट जाती है इससे तो पूजामें विघ्न पैदा हो गया और अमुक कार्यकी सिद्धी भी नहीं हुई। इस संसारमें पुरुष अनेक विषयोंको चाहने वाला हार मान कर पुनः परमात्मामें ही दृष्टि डाला करता है तो जब सर्व शिरोमणि भगवान् नाम ही इस जगतमें व्यापक है तो दुनिया इस अनेक भावनाओंमें मनको चलायमान करना व्यर्थ है—कहा भी है—

हत्वानृपं पति मवेक्ष्य भुजंग द्रष्टुम्
देशान्तरान्विधिवशात्गणिकात्मजाया।
पुत्रेण भोग्य मधिगम्य चितांप्रविष्ट
शोचामि गोप गृहिणी कस्मात् तक्रम् ॥१॥

एक राजाकी स्त्री थी वह अपने मालिकके घोड़ेके सईशसे बहुत गाढ़ा प्रेम रखती थी—एक रोज सईशने रानीसे सवाल किया कि हम दोनोंको राजा किसी रोज वार्तालाप करते देखेगा तो जानसे मरवा डालेगा इससे अच्छा उपाय यह है कि रानी साहबा आप अपने पति का शिर काट दें जिससे हम दोनोंके आराममें बाधा न पहुंचे। दूसरे रोज सईश दूबका विस्तर बनाकर उसीपर सोया था कहींसे विषैला सर्प उसी रास्ते आ निकला परमात्माका भाव कोई नहीं जानता सईशके पैर तले सर्प होकर जा रहा था अचानक सईसने अपना पैर किसी वजहसे फेंका पैर फेकनेसे सर्पको चोट लगी और आग-बबूला हो गया, उलट कर सईसको काट लिया सईसका प्राणान्त हो गया और सर्प भी मर गया अब रानी साहबाका हाल सुनिये जब राजा साहब भोजन आदिसे निवृत्त हो रात्रीको अपने पलंगपर जा लेटे, जब नींद आ गई तो रानीने खूंटीसे तलवार उठाकर राजाका शिर काट लिया और केश पकड़ कर सईसके पास पहुंची और बोली कि जार पति उठो अब हम लोगोंका कार्य सिद्ध हो चुका जार पतिके न बोलनेसे अपने सुन्दर करकमलोंसे उठाई और वारबार इधर-उधर करने लगी सर्पको देख समझ गई कि इस सर्पने जार पतिको मार डाला और आप भी मर गया अपने इस अनुचित काम करने पर कोई पश्चात्ताप आदि नहीं की परमात्मा जो करते हैं अच्छा ही करते हैं, हमारे भाग्यमें यही था, सो होकर रहा राजा साहबका शिर लाकर धड़से जोड़ कर और फूट २ कर रोने लगी कि चोरोंने हमारे पतिदेवका शिर काट डाला रानीका रोना चिल्लाना सुनकर राज मन्त्री नौकर आदि आये और रानीको शान्त्वना देकर शान्त किया सुबह होते ही राजाका दाह क्रिया आदि करवाया रानीने सोचा कि मैंने अपने पतिका शिर काट डाला और जार पति सईसकी भी मृत्यु हो गयी अब इस राज्यको त्यागने ही से कुशल है।

राजा साहबको एक लड़का हुआ था जिसके भाग्य में यह लिखा था कि तुम अपने माताके साथ भोग करोगे लड़का सयाना होनेपर इस विषयको जान कर अपना सारा राज्य छोड़कर दूसरे राज्यमें जाकर राज करने लगा—रानीने अपना सब कुछ छोड़कर गणिका वेष बनाकर गाना बजाना आदि कार्य करने लगी इस रानीका लड़का जिस देशमें राज्य कर रहा था उसी राज्यमें गाना आदि करती हुई गणिका रानी भी पहुंचे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गई राजाके नौकरोंने आकर इस गणिकाकी बहुत तारीफ की राजाने हुक्म फरमाया कि आज रातको उस गणिकाको बुलाओ और गाना सुना जाय और उसके साथ आराम भी करें नौकर आज्ञा पाते ही गणिका रानीको बुला हाजिर किया। रातको राजाने गाना सुना और उसके साथ ऐस आराम भी किया आराम करनेके बाद राजाने उस गणिकासे पूछा कि आपका शुभ स्थान कहां है रानी गणिका अपने पुत्र राजासे अपना साराहाल कह सुनाया राजा सुनते खूंटी से तलवार उठाकर सपना सर काट डाला सुबह होते राजाकी लाश श्मशान भेजी गई। जरती हुई चितामें रानी गणिकाको भी डाल दिया सब इसी गणिकाने राजाका प्राण लिया है गणिका चिल्लाने लगी उस समय बहुतोंको दया आई चितासे गणिकाको बाहर करा दिया गणिका वहांसे भाग एक ग्वालेके घर गई और ग्वालासे कहने लगी कि मैं आपके यहां रहूंगी और जो कुछ आप आज्ञा देंगे उसको मै पूरा करूंगी ग्वालाने इस स्त्री को अपने यहां रख लिया और नित्य प्रति तक्र बेचनेके लिये भेजा करता था—एक रोजकी बात है कि गणिका रानी तक्र बेचनेके लिये देहातमें जा रही थी रास्तेमें खूब पानी बरसा रास्ता कीचसे भरभूर हो गया साथमें बहुतसी ग्वालिन थी गणिका ग्वालिनका पैर कीचमें फिसल गया और गिर पड़ी भाण्ड तक्रका फूट गया सारा दही मिट्टीमें मिल गया गणिका ताली बजा २ कर हंसने लगीं इसका हँसना देख सब ग्वालिन कहने लगी कि धन्य हो तुम तुम्हारा सारा तक्र मिट्टीमें मिल गया और हँस रही हो तुमको इस तक्रका कोई फिक्र नहीं है तुम्हारी छाती पत्थलकी हैं रानीने लड़केसे लगायत चिता तकका बयान कही कि इतने कर्म्म मैं अप ने शरीरसे किया तो मुझे अफशोस नहीं हुआ आज तक्रपर कौन अफसोस करें ५-६ रुपयेका माठा होगा संसारमें परमात्मा जो करते हैं अच्छा ही करते हैं जीव धारियोंको देखनेमें सुखकारी हों अथवा दुखकारी हो परमात्माने जो पूर्वसे कार्य नियत किया हैं उसीके अनुसार कार्य संसारमें करना पड़ता है जैसे बीज जमीन खोदकर बोया जाय तो अंकुर पैदा होगा चिकनी जमीनपर बोनेसे निष्फल हो जायगा उसी तरीकेसे जिस मनुष्यके भागमें जो लिखा रहता है उसीके मुताबिक उसकी बुद्धि आगे आगे दौड़ती है और उस कार्यको कराती है सुकार्यमें सुन्दर बुद्धि होती है अपकारमें खराब कहा भी है।—विनाशकाले विपरीत बुद्धिः—मनुष्योंको चाहिये कि सुखमें हँसेन और दुःखमें रोवेन सुख-दुख बराबर रूप में साथ रहता है दोनोंके आने पर भी परमात्माका ध्यान नहीं छोड़ना चाहिये जो कुछ परमात्मा करते हैं वह अच्छा ही करते हैं।

———

आमके आम और गुठलीके दाम

का किस्सा

पूरा करनेके लिये आज ही आयुर्वेदोद्धारका संकल्प कीजिये एवं अपने अनुभवोंको जनताके समक्ष रखनेके लिए हर महीने ५ परीक्षित योग भेजकर अपनी कीर्ति व यश वृद्धिके साथ २ वैद्य का प्रमुख हथियार औषधि पेटिका उपहार स्वरूप प्राप्त कीजिये।

प्रबन्धक
आयुर्वेद-गौरव
६० नं० पाथुरिया घाट स्ट्रीट
कलकत्ता—६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकसिरे सुर्ख

लेखक—के० पी० ठाकुर M. B. H.

मेरा अकसिरे सुर्ख जो रोजाना सैकड़ों मरीजोंपर इस्तेमाल होता है। ये नुसखा महज़ छोटा और हर जगह आसानीसे मिलने वाला है। इसे देखकर लोग समझेंगे कि इस नुसखेमें ऐसी कोई चीज नहीं जो बड़ा काम करे, पर जो साहब इसे बना कर इस्तेमाल करेंगे, वो इसकी खूबियोंको समझेंगे और खुस होंगे।

नुसखा।

नौशादर ठिकरिया—१ तोला, मिरच स्याह १ तोला, गेरु २ तोला, काले धतूरकी बीज ८ रत्ती। सिर्फ इन दवाओंको कूट कपरछान कर साफ शीशीमें रखकर कड़ा कार्क लगा दें। दवा तैयार है।

गुण—सर दर्द, नजला, बेहोशीके लिये थोड़ी दवा सुंघावें। दांतोंका दर्द, दांतका हिलना, और दांतोंके मैलके वास्ते दांतोंपर मला करें।

पेट दर्द, बदहजमी, पेटका फूलना, कब्जियत पर गर्म पानीके साथ—२ रत्ती मात्रामें १-१ घंटे पर २-३ खोराक दें। दस्त, मरोड़ पर २ रत्ती दवा थोड़े चीनी मिलाकर ठंढे पानी या इसबगोलके लोआबके साथ हरस्तके बाद दें।

आंखोंके धुन्ध, जाला, फोला, रतौंधी पर ३ हिस्से सुरमा १ हिस्सा दवा मिलाकर खूब बारीक खरल कर रक्खें और आंखोंमें दें।

भिर, मक्खि, ततैया आदिके काटेपर डंककी जगह पर दो-चार बून्द गर्मपानी डालकर उपर थोड़ी दवा डाल कर आहिस्ते २ मलें। शोथ भी नहीं होगा।

नोट—नस और आंखोंके इस्तेमालकी जो दवा बनाएं, उसमें धतूरका बीज न दें।

खाद्य समस्या

जब कि उसके पास अपने परिवारकी जरूरत पूरी करने के लिये यथेष्ठ खाद्य सामग्री नहीं उसी समय अचानक उसके यहां अतिथि आ गये। अतिथि भी ऐसे जिन्हें वह टाल नहीं सकती उसने तुरंत ही निश्चय कर लिया कि सबको कुछ कुछ कम खाना दिया जाय।

ऐसी या और कोई भी कठिनाई के समय हरेक को अपना दिमाग ठंढा रखना चाहिये। इसमें उसे कुछ भी दिक्कत नहीं हुई क्यों कि वह हमेशा सुगंधित और औषधियुक्त बाइला आमला केश तैल व्यवहार करती है। यह तैल सदैव मस्तिष्क को ठंढा, दिमागको ताजा रखता है तथा बालों को बढ़ाता है। इतने गुणों के बावजूद भी इसका दाम दूसरे तैलों की अपेक्षा कम है।

बाइ-ला
आमला
सुगन्धित केश तैल

आज ही एक बड़ी बोतल खरीदें

बिड़ला लेबोरेटरीज़ · कलकत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरड़

ले०-श्रीरामेश बेदी, गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार,

(गतांक से आगे)

उपयोगी भाग

फल और गुठली !

ऋतु में स्वयं पककर जमीनपर गिरी हुई, ताजी, ऊपरसे चिकनी, गोल, भारी और पानीमें डूब जाने वाली हरड़ अच्छी समझी जाती है।" पानीमें डूब जानेका गुण जिसमें जितना अधिक होता है वह उतनी ही श्रेष्ठ समझी जाती है। इन गुणोंके साथ-साथ हरड़का भार चार तोला हो तो बहुत उत्तम होता है।

हरड़ कठोर और दृढ़ होना चाहिए। इकट्ठा करके हिलानेसे पके मृतिका पात्रके टुकड़ोंके समान बजनी चाहिये। हथौड़ेसे कुचलनेपर शुष्क पीला बादमी-सा शुष्क, स्वादमें ग्राही, परन्तु अत्यधिक कड़वाया नमकीन स्वाद भी नहीं होना चाहिए। गीला करने हाथमें मसला जाये तो आपसमें मिलकर एक समूह बन जाता है, भुरभुराता नहीं।

अच्छे फल भारी और भरे हुए होते हैं, काले रंगके घ० वों या उमारों और कीट-छिद्रोंसे रहित होने चाहिये अंगुलियोंके बीचमें पीसने या खरल में रगड़ने से यदि यह मैले रंगके चूर्णमें भुरभुरा जाये तो हरड़ घटिया किस्मकी समझनी चाहिये।

कीड़ोंसे खाई हुई, आगसे जली हुई पानीपर तैरनेवाली, ऊपर भूमिमें उगी हुई और टुटी फूटी हरड़को चिकित्सा कर्म में न लें।

मात्रा

पके फलका चूर्ण—दो से तीन माशे तक।

मिलावट

पूरे फल जब मार्केटमें आते हैं तो उनमें प्रायः कर मिट्टी, रेत, अभ्रक कुचला. सुपारी, असन आदि मिले रहते हैं। पिसी हरड़ोंमें कभी कभी दिवीदिवी (सिसेल्पीनिया कौरिएरिया), रद्दी सुमाक (रहस कोंटिनस और जंगली कीट फल मिला दिये जाते हैं। इन मिलावटोंको देखनेके लिये थोड़ा सा चूर्ण एक सफेद कागजपर विरल बिखेर दें और ताल (लेन्स) से परीक्षा करें। यदि दिवी दिवी मिलाई गई है तो इसके चमकीले भूरे चपटे बीजोंके खन्ड अवश्य मिलेंगे। हरड़का बाहिरका छिलका कभी २ रंगमें दिवी दिवी बीजसे मिलता जुलता हो सकता है, परन्तु हरड़के सूक्ष्मतम अंशका पृष्ठ झुर्रीदार दिखाई देगा, जब कि दिवीदिवी बीज चिकने होंगे।

नकली हरड़

अधिक लोग समझते हैं कि हरड़ मामूली चीज है, यह नकली नहीं बनती होगी। पाठकोंको ज्ञात न होगा कि हरड़ यदि दो तोलेसे ऊपर वजन की हो तो यह एक एक नग करके बिकती है और नगका मूल्य दो रुपयेसे लेकर सैकड़ों तक पड़ जाता है तीन-तीन, चार चार तोले भरकी हरड़का एक दाना अस्सी सौ रुपये तक बिकता है। ऐसी भारी मूल्यवान हरड़ोंको खरीदनेकी प्रथा मारवाड़ियोंमें है। मारवाड़ी बड़ेसे बड़े मूल्यकी हरड़ की तालाशमें रहता है। और अपने बच्चोंको इन्हीं मूल्यवान हरड़ोंकी घुंटी देता है। इसीलिये बम्बई, कलकत्ता और बीकानेर आदिमें इन हरड़ोंकी काफ़ी खपत होती है। जब एक हरड़ तीन तोलेसे ऊपर हो, चार पांच तोले की हो तो उसके सैकड़ों रुपये मिल जाते हैं। इसी बातको देखकर आरम्भमें जलापा नामक कन्द, जिसे कहीं कहीं जलापा हरड़ भी कहते हैं। जो भारमें चार पांच तोले का सहजमें मिल जाता है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसकी बनावट रूप रंग भी हरड़से मिलती है, को अमृतसरके कई एक ठग मारवाड़ियोंके हाथ हरड़ बताकर बेचते रहे और अच्छी रकम ऐंठते रहे। कोई कोई ऐसा भी करते थे कि किसी हरड़में बारीक सुराख बना कर उसके बीचमें सीसेके छोटे छोटे छर्रे भरकर इसे और अधिक वजनी बना लेते थे और इसके अच्छे रुपये प्राप्त कर लेते थे। इन हरड़ोंका मूल्य यदि ये दो तोले भार में हों तो दो, अढ़ाई या तीन रुपये तक प्रति नग होता है यदि यह सवा दो तोले की हो जाये तो छह-सात रुपये तक बिक जाती है। तीन तोले हो जाये तो बीस-पच्चीस रुपयेमें बिकती है। इससे अधिक भार की बहुत मूल्यवाली हो जाती है इन्हीं बातों को देखकर हरड़का भार बढ़ाया गया। यह ठगी तो अमृतसर और दिल्ली के ठगों द्वारा होती थी। बम्बई के ठग इनको भी मात कर गये। उन्होंने बिलकुल कृत्रिम विधिसे हरड़ की रचना कर डाली, उनकी हरड़ बनानेकी विधि इस प्रकार है—बड़ी हरड़ की आकृति के लोहेके संचे बनाये। उनमें हरीतकी के बारीक चूर्ण को मिलाकर भर दिया और संचोंको इतना दबाया कि दबकर यह हरड़के रूपमें आ गया। फिर इन्हें हरड़ के रंगमें रंग दिया। इस तरह पांच तोलेसे लेकर दस-दस तोले तक हरड़ें तैयार की गईं और बम्बईके मारवाड़ियोंको खूब लूटा गया।

गुण

हरड़ हलकी, गरम और रुक्ष है। संतर्पण में पैदा होनेवाले रोगोंको नष्ट करती है। कषाय रस प्रधान होने पर भी विपाकमें मधुर है। आयुर्वेदिक लेखकोंने हरड़के गुण बताते हुए निम्नलिखित रोगोंमें इसकी उपयोगिता बताई है।

महास्त्रोतस्

यह दीपक, पाचक, उलटियोंको बन्द करनेवाली, तृषा शामक, अरुचि नाशक, पेटके रोगोंमें हितकर, वायुका अनुलोमन करनेवाली, अफारा, शूल तथा हिचकी दूर करनेवाली, अनुलोमक, स्रोतों की रुकावटको हटाकर कब्ज दूर करनेवाली दोषोंका अनुलोमन करनेवाली, दस्तोंको ठीक करनेवाली और ग्रहणी (स्प्रू) नाशक है। पेट सम्बन्धी नये रोगोंमें विशेष लाभ करती है। वायु गोला (गुल्म) बढ़ी हुई तिल्ली, जिगर के रोग कामला (जौण्डिस) पाण्डु (अनीमिया) और बवासीर में गुणकारी है।

श्वास संस्थान

कफके रोगोंके नष्ट करती है। आवाजकी खराबी, कफ प्रकोपके कारण मुख, आंख तथा नाकसे पानी बहना (जुकाम), छाती तथा फेफड़ोंमें कफ भर जाना खांसी और दमेमें लाभ पहुंचाती है। जमे हुए कफको उखाड़कर निकाल देती है।

मूत्र तथा प्रजनन संस्थान

पथरी, पेशाब रुक रुक कर थोड़ी मात्रामें आना, पेशाब बन्द हो जाना, प्रमेह, नपुंसकता आदि मूत्र तथा प्रजनन सम्बन्धी रोगोंमें लाभकारी है वीर्यको पुष्ट करती है।

त्वक् संस्थान

त्वचाकी विवर्णता और कुष्ठ, खुजली आदि त्वग्रागों को शान्त करती है। ज़ख्मोंको ठीक करती है। सूजन उतारती है। यह कृमिनाशक है।

वात संस्थान

टांगों का लकवा (उरु स्तम्भ) अंगों की ऐंठन (उदावर्त) आदि वायु के रोगों को दूर करती है

जुवर शोथ

हृदय के रोगों में, पुराने मलेरिया बुखारों में तथा अन्य जवरों में, अंगोंमें, पानी भर जाने (शोथ डाप्सी) में और शरीर के सूखने को अवस्थाओं में इसका प्रयोग गुण दिखाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मस्तिष्क

मेघा और बुद्धि को बढ़ाने वाली यह औषधि स्मृतिशक्ति को तीव्र करती है। बुद्धि पर पड़े आवरण को हटा कर ठीक ज्ञानकराती हैं। मूर्च्छा हटाती है। आँखों के लिये हितकर और शिर के रोगों में लाभ दायक है।

रसायन

जिस किसी भी दवा के साथ प्रयोग की जाये यह उसके गुणों को बढ़ा देती है। यह रसायन औषधि अङ्गों का शिथिल होने से रोकती है। मोटापे का छांटती है। विभिन्न कारणों से रसवाही स्त्रोतों (एण्डोक्राइन ग्लैण्ड्स) से रसादिके न बहने को दूर करती है। सब रोगों को शान्त करने वाली। इन्द्रियों को बल देने वाली, पुष्टिदायक आयु को बढ़ाने वाली कल्याणकारी हरड़ में आयु को स्थिर करने का परम गुण है।

हरड़ की गिरी के गुण

गुठली के अन्दर की नरम गिरी वायु तथा पितको हरने वाली, भारी और आंखों के लिये हितकर है।

स्थान भेद से गुणों में अन्तर

वृक्ष के उत्पति स्थान की दृष्टि से कैवदेवने निम्न लिखित तीन प्रकार की हरड़े बताई हैं—१, पानी वाले स्थान पर उगने वाली, २ मैदानी जंगलोंमें उगने वाली, ३, और पहाड़ों पर उगने वाली। इनमें सबसे बढ़िया पहाड़ी, फिर जंगली और उससे उतर कर जलीय स्थान वाली गुणकारी होती है।

हरड़ में पाचं रस

संस्कृत लेखकोंने हरड़में निम्नलिखित पांच रस माने है। कषाय, अम्ल, कटु, तिक्त और मधुर। छ रसों में लवण रस इसमें नहीं होता। २ कषाय रस सब से अधिक होता है। ३

मध्यकालीन संस्कृत लेखकों ने पांचों रसों की फल में अलग २ स्थान पर स्थिति दिखाई है। इसके अनुसार फल के जो पांच स्थान या विभाग बनते हैं उनमें कौन २ सा रस रहता है, इसके सम्बन्ध में विभिन्न लेखकों की सम्मति इस प्रकार दी गई है।?

फल के पाँच विभाग और उनमें रस की स्थिति—

नरहरि	भावमिश्र	कैवदेव
१. अस्थिमेंतिक्त	१. अस्थिमें कषा	१. अस्थिमें तिक्त
२. मज्जामें मधुर	२. मज्जामें मधुर	२. मज्जामें मधुर
३. त्वचामें कटु	३, त्वचामें कटु	३. त्वचामें कषाय
४. मांसमें अम्ल	४. स्नायुमें अम्ल	४. मांसमें अम्ल
५. स्नायुमें कषाय	५. वृन्तमें तिक्त	५. स्नायुमें कटु

त्रिदोषहर होने में रस का कारण

किस दोष को किस रसके कारण हरड़ दूर करती है, इसके बारेमें चिकित्सकों की सम्मतियाँ एक नहीं है। धन्वन्तरि १ के मत में वात को अम्लसे, पित्तको मधुर तथा तिक्त से और कफ को रूक्ष तथा कषाय रस से जीतती है। कैयदेव समझते है किवात को मधुर तथा अम्ल से, पित्त को मधुर तथा कषायसें और कफ को कटु तथा तिक्त रस से नष्ट करती है। २ भावमिश्र ३ ने वात को नष्ट करने में हेतु धन्वन्तरि की तरह अम्ल रस को माना है। भावमिश्र बताते है कि हरड़ पित्तको मधुर, तिक्त तथा कषाय रसके कारण और कफ को कटु, तिक्त तथा कषाय रस के कारण हरती है।

विशेष प्रभाव

यहा शंका उठती है कि हरड़में विद्यमान कटु और अम्ल रस पित्त और वात को क्यों नहीं पैदा करते? क्योंकि रसोंके गुणोंमें बताया जाता है कि ये रस इन दोषों को पैदा करते हैं। इसका उत्तर भावमिश्र देते हैं कि हरड़ में तीनों दोषों को दूर करने की जो क्षमता है वह इसके प्रभावके ही कारण है। रसोंका निर्देश करते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुये दोषों को नष्ट करने की जो बात लिखी गई है वह विद्यार्थियों को समझने के लिये कही है। समान गुणों से युक्त होते हुये भी आश्रय भेद से द्रव्यों के कर्म में भिन्नता देखी जाती है। अम्ल और कटु रस पित और वात के जनक होने पर भी आश्रय विशेष में विशेष प्रभाव करने वाले होते हैं। जैसे कि आँवले तथा बड़हर ये दोनों यद्यपि रस आदि में तुल्य हैं किन्तु इनके गुण भिन्न हैं।?

प्रयोग विधि के भेद से गुणों में अन्त

हरड़ चबाकर खाई जाये तो जठराग्नि की वृद्धि करती है। शिला पर पीस कर खाने से मलका शोधन करती है। गरम वाष्पो में पका कर खाने से मल को रोकती है। भून कर खाई जाये तो वात, पित, कफ तीनों दोषों को नष्ट कर करती है।

भोजन के साथ सेवन करने से बुद्धि, बल तथा इन्द्रियों को विकसित करती है, पित, कफ तथा वायु को नष्ट करती हैं, और मूत्र, शौच तथा शरीर के दूसरे मलों का निर्हरण करती है। यही हरड़ भोजन कर चुकने पर खाई जाये तो खान-पान सम्बन्धी दोषों को और वात, पित, तथा कफ से उत्पन्न होने वाले विकारों को शीघ्र हरती है। २

सेन्धा नमक के साथ खाने से कफ, चीनी के साथ खाने से वात सम्बन्धी रोग और गुड़ के साथ खाने से समस्त व्याधियोंको दूर करती है। १

लहसुन : प्याज़

लेख :—श्री रामेश वेदी। तीसरा परिवर्द्धित संस्करण, मूल्य २॥) रु० डाकखर्च ग्यारह आने।

वानस्पतिक औषधियों में लहसुन सबसे अधिक प्रभावकारी दवा है जो तपेदिक (क्षय) की विभिन्न दुःसाध्य तथा असाध्य अवस्थाओं में सफलता के साथ प्रयोग किया जा सकता है। श्री वेदी ने ढबलिन हास्पिटल से निराश लौटे हुए हड्डियों के क्षय के कुछ ऐसे उदाहरण दिये हैं जिनमें हड्डियाँ गल जाने से हाथ और टांग कटवाने की नौबत पहुंच गई थी परन्तु लहसुन के लगातार प्रयोग ने टांगों को काटे जाने से बचा लिया था। कई शहरों में, जहां बहुत अधिक घनी तथा गन्दी बस्तियों में भी क्षय से मृत्यु संख्या अधिक नहीं होती, वहाँ लोगोंको लहसुन खानेकी आदत उन्हें इस भयंकर रोगसे बचाये रखती है।

श्रीयुत वेदी ने दो हजार साल पहले के एक बूढ़े का उदाहरण दिया है जिसकी लहसुन के सेवन से कायापलट गई थी और कुछ बाँझ स्त्रियों ने भी मनोवांछित सन्तान प्राप्त की थी। पुरुषों और स्त्रियों दोनों ही के उत्पादक अंगों के रोगों को दूर करने की क्षमता इसमें है। निमोनिया, हिष्टिरिया, गठिया, वायु के रोग, पेट तथा आँतों के रोग आदि अनेक रोगों में इस सस्ते पदार्थ से लाभ उठाने के लिए हम इस पुस्तक को अवश्य पढ़ने की सिफारिश करेंगे। अपने देश के क्षय सम्बन्धी आँकड़ों को देखते हुए हम कह सकते हैं कि इस भयंकर रोग से लड़ने के लिए सस्ते और अत्यन्त प्रभावकारी हथियार लहसुन का अधिकाधिक प्रयोग जनता को बताने के लिए इस पुस्तक का प्रचार खूब होना चाहिए।

मिलने का पता—**हिमालय हर्बल इंस्टिट्यूट, गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार-१**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी—

परिवर्तन

लेखक आयुर्वेदाचार्य पं० मदन गोपाल वासोतिया

नार्थार्थं नापि कामार्थमथभूतदयां प्रति (चरक)

बाबू रामप्रकाश लालकी उम्र ४० वर्षकी थी। वे जातिके कायस्थ एवं कुलीन घरके थें। आपने मैट्रिक तक शिक्षा प्राप्त कर मुखतारी परीक्षा पासकी करीब एक डेढ़ वर्ष तक एक विशिष्ट मुख्तारके सहायक होकर कचहरीके सम्पूर्ण कानून कायदोंको जान कर स्वतन्त्र रूपसे प्रैक्टिस आरम्भ करदी। आप इतने सरल एवं सत्यवादी तथा मिलनसार व्यक्ति थे कि प्रैक्टिस शुरु करनेके दो ही तीन वर्ष बाद इतने लोकप्रिय हो गयेकि प्रत्येक व्यक्ति आपको चाहने लगा। आपकी मुख्तारी खूब चल पड़ी और मुख्तारोंकी तरह मुवक्किलोंको उल्टा सीधा समझाकर उनसे मनमाना पैसा ऐसा ऐठना ही आपका कार्य नहीं था आप उचित सलाहही दे देते थे और निर्धनोंसे उनकी आत्मा दुखा कर धन इकट्ठा करना वे पाप समझते थे। इसी कारणसे उन्हें केवल यशही विशेष मिला वे धन इकट्ठा न कर सके। साधारणतः अपनी प्रतिष्ठाके अनुकूल खान पान रहन सहन चला रहे थे। दीन दुःखियों पर भी बराबर दया रखते हुए कुछ न कुछ दिया ही करते थे। यद्यपि उनके घर पर देहात में भी जमींदारी होनेके कारण खाने पीनेकी कोई कमी न थी। परन्तु भाइयोंसे बराबर झगड़ा रहने केकारण अपने बाल बच्चोंको भी वे वहांसे हटाकर अपने ही पास रख रक्ख था। घरवालोंसे इन्होंने सरोकार हटा लिया। वे लोग खुसी होकर जमीन्दारीकी पूरी आमदनी हड़पने लगे। अब इनको जमीन्दारीकी आमदनीसे कुछ सरोकार न रहनेके कारणके बस मुख्तारीकी ही आमदनी रहीं इसीसे इनका सब गृहस्थ सम्बन्धी काम चलता रहा। इनकी स्त्री बड़ी सुन्दरी एवं पतिव्रता तथा साधारण पढ़ी लिखी सीधे स्वभावकी थी। उसका नाम सुशीला था। सुशीलाको १ लड़की सयानी थी जिसका विवाह भी निक भविष्यमें होने वाला था। लड़का करीब ८-१० वर्षका था। लड़कीकी नाम कात्यायनी एवं लड़केका नाम विनोद कुमार था। दोनों क्रमशः स्कूलमें पंचम एवं अष्टम वर्गमें पढ़ते थे। दोनों को घर पर पढ़ानेके लिये शिक्षकभी आते थे। सुशीला ने एक दिन मुख्तार साहबसे कहा कि कात्यायनी अब सयानी हो चली है इसके लिये बर ढूढ़ कर विवाह इसी वर्ष कर देना उचित है। मुख्तार साहबने उत्तर दिया कि मुझे स्वयं इसकी पूरी चिन्ता है मैंने कई इष्ट मित्रोंसे इस विषय की चर्चा करदी है तथा स्वयं भी चेष्टा कर रहा हूं दो एक जगह लड़कोंका पता भी लगा है। परन्तु आजके जमानेमें अच्छे घरका सुयोग्य लड़का मिलना बड़ा कठिन है यदि मिल भी जायतो लड़केके पिता वगैरह तिलकमें दहेज इतना मांगते है कि साधारण व्यक्ति पर विपत्तिका पहाड़ही टूट पड़ता है तथापि बच्चीके विवाह लायकतो रुपये हमारे पास निकलही आवेंगे। इसकी कोई चिन्ता नहीं। इतनी चर्चा होनेके बाद कुछ दिन और इसी तरह बीत गये। इनके नौकरका नाम सोहन था, यह बड़ा स्वामीभक्त एवं इमानदार तथा सच्चरित्र था। मुख्तार साहबका भी इस पर पूर्ण विश्वास था। मुख्तार साहबके घरसे थोड़ीही दूर पर पं० बैकुण्ठ मिश्र वैद्य रहते थे। वैद्यजी आधुनिक बनावटी वैद्यकी तरह आडम्बरी नहीं थे। हां यशस्वी एवं दयावान् सिद्धहस्त थे। नित्य १०-५ गरीबोंको बिना मूल्य दवा दिया करते थे। वैद्यजीके सद्व्यवहार एवं निर्लोभी होनेके कारण आस पासके सभी लोग इनको चाहते थे वैद्यजी भी दिन या रातका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ ख्याल न कर जब कोई बुलाने आता तभी चले जाते एवं उसकी समुचित चिकित्सा कर देते। फीस एवं दवाका दाम जोभी अपनी हैसियतके मुताबिक देता उसीमें वे सन्तुष्ट थे। मुख्तार साहबसे भी उनकी पूर्ण घनिष्टता थी मुख्तार साहबके घर पर भी आवश्यकता पड़ने पर वैद्यजीकी ही चिकित्साके लिये बुलाहट होतीथी और इनकी चिकित्सासे प्रायः लोग आरोग्य हो जाते थे। संयोगवश मुख्तार साहबको एक दिन कुछ सर्दी लगी मुख्तार साहबने सोचा कि दो चार दिनमें स्वयं ठीक हो जायगी अतः कुछ दवा नहीं की। ५-७ दिनके बाद इन्हें तीव्र ज्वर हो गया और सर्वाङ्गमें पीड़ा होने लगी बेचैनी बढ़ गई। मुख्तार साहबके परिचित लोग देखने आने लगे। इनके मित्र रामनाथ सहायने डाक्टरी चिकित्साकी सलाह दी कि आयुर्वेदिक इलाजसे देरीसे लाभ होता है एलोपैथिकसे शीघ्रही आराम हो जायगा। मित्र महोदयके आदेशानुसार डा० शिवनाथ शरणको बुलाया गया। डाक्टर साहबने अपने भरसक अच्छी तरह देख भाल कर निमोनियाको केस बता कर नुक्सा लिख दिया खाने पीनेकी सब व्यवस्था बताकर शीघ्र आरोग्य होनेका आश्वासन देकर अपनी फीसके १६) रु० वसूल कर चले गयें। दवा खरीदने एवं पथ्यादिकी व्यवस्था पर १०) रु० दैनिक खर्च होने लगे। दूसरे तीसरे दिन ज्वर कुछ कम हुआ परन्तु कुछ श्वांसकी शिकायत एवं छाती में दर्द तथा रात्रिमें खांसीभी शुरु हो गई। मुख्तार साहबके नौकर सोहनसे डाक्टर साहबने सारा हाल सुन पुनः देखनेकी आवश्यकता बताने पर उन्हें बुलाया गया डाक्टर साहबने इन्जेक्शन देनेकी तथा एक्सरे, एवं थूक पखाना, मूत्र, खून वगैरह क्रमशः जचवानेकी रायदी एवं १ सप्ताह तक नित्य आकर देखनेकी आवश्यकता बताकर चले गये। दूसरे दिन पुनः आकर इन्जेक्शन देना शुरु किया। एक कम्पौण्डर एवं एक नर्स

बिड़ला
कटेली चम्पा
केश तैल

अनुपम गन्ध एवं केश-शोभा केलिये

आप की
सभी आवश्यकतायें पूरी होंगी :—

हर तरह के सुगन्धित तैल, साबुन, स्नो, क्रीम, पाउडर, नाखून पालिश, बिन्दी आदि प्रत्येक शृङ्गार के सामानके साथ साथ कम दामों में अच्छा कपड़ा धोने का साबुन मिलने का एक मात्र स्थान :—

शक्ति स्टोर्स
६०, पाथुरिया घाट स्ट्रीट, कलकत्ता—६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को भी मुख्तार साहबकी परिचर्य्या के लिये रखा गया। सैकड़ों रुपयाकी और भी साधन सामग्री मंगाई गई। इस तरह दैनिक खर्च २५-३० रु० रोज होने लगा कुछ अन्य डाक्टरोंको भी बुलाकर उनकी सम्मतिसे भी दवाकी गई इस तरह ३ महीने बीत गये परन्तु रोग उत्तरोत्तर बढ़ताही गया। इधर मुख्तार साहबकी बिमारी एवं घर खर्च पर काफी रुपैया खर्च होता रहा तथा आमदनी बिल्कुल बन्दहो जानेसे इनके घरकी आर्थिक अवस्था विचारणीय हो गई। इतने पर भी पतिव्रता सुशीला अपने जेवरोंको बेच कर डाक्टरोंकी फीस चुकाती, एवं बहुमूल्य दवा खरीद कर देती रही परन्तु कुछ भी लाभ न हुआ। अब मुख्तार साहबको बराबर ज्वर रहनेके कारण कमजोरी बहुत हो गई। शरीर दुर्बल हो गया सुशीला चिन्तित हो गई। तथा बड़े कातर स्वरमें डाक्टर साहबसे बोली कि मेरे पास जो भी कुछ था सो खर्च हो चुका अब आप मुझ पर दया कर इन्हें निरोग करदे इनके निरोग होनेपर मैं आपकी फीस वगैरह सब दे दूंगी तथा पुरस्कार भी दूगी। डाक्टर साहबने कहा कि मुख्तार साहबको टी० बी० शुरू हो गई हैं अतः अब साधारण दवाओंसे काम नहीं चलेगा अब अधिक खर्चकी आवश्यकता है। और मुझे इतना समय फालतू नहीं मिलता कि मैं बिना फीस मरीज देखता चलूं। सुशीला डाक्टर साहबका रूखा उत्तर सुनकर बहुत दुःखी हुई उसके नेत्रोंसे आंसुओंकी धारा बह चली। मुख्तार साहबकी दशा और भी चिन्तीय हो गई। अपनी मालकिनी को दुःख सागरमें डूबती देख नौकर सोहनको भी हार्दिक वेदना हुई उसने बड़े नम्र स्वर से कहा कि मालकिनी जी, डाक्टर साहबकी दवासे मुख्तार साहबको कुछ भी फायदा न हुआ इतने दिन बीत गये रुपये भी बहुत खर्च हो गये और डाक्टर साहब ने जवाब भी दे दिया। पं० वैकुण्ठ मिश्र वैद्य अपने यहां बराबर आते रहे तथा उनकी दवासे अपने यहां सबोंको बराबर फायदा ही होता देखा गया है मेरा तो विश्वास है कि यदि वैद्य जी को दिखलाकर इलाज शुरू किया जायगा तो निश्चय ही मुख्तार बाबू निरोग हो जायेंगे। सोहन की यह उचित सलाह सुशीलाके हृदयमें बैठ गई। दूसरे ही दिन सुबह सुशीलाने सोहनको वैद्यजीको बुला लानेके लिये भेजा। वैद्यजी एवं मुख्तार साहबका परस्पर घनिष्ट प्रेम होनेके कारण बुलावा पहुंचनेपर वैद्यजी यथाशीघ्र मुख्तार साहबके घर आकर उन्होंने मुख्तार साहबके रोगकी अच्छी तरह परीक्षा की। सुशीलाने वैद्यजीके दोनों चरण पकड़ लिया और फूट फूटकर रोने लगी अपनी माताको इस तरह दुःखी देखकर अपने पिताकी चिन्तनीय दशा जानकर कात्यायनी, एवं विनोद भी रोने लगे तथा वैद्यजीसे बड़े कातर स्वरमें कहने लगे वैद्यजी किसी तरह आप हमारे पिताजीको आरोग्य कर दें अन्यथा हमारा कौन रक्षक होगा। सोहन नौकर भी कम दुःखी न था। मुख्तार साहबके परिवारकी यह दशा देखकर वैद्यजीको भी मार्मिक वेदना होने लगी। वैद्यजीने सब को धैर्य्य रखनेका आदेश देकर कहा कि तुम लोग ईश्वरपर भरोसा रखकर परमेश्वरकी प्रार्थना करो मुख्तार साहब अवश्य अच्छे हो जायगे। मैं इनकी दवा शुरू करता हूं १ ही सप्ताह में तुम लोगोको मालूम जायगा कि कितना फायदा हो रहा है। सुशीला ने जाते समय वैद्यजीको बड़ी नम्रता पूर्वक फीस देती हुई बोली कि वैद्यजी हम लोगोंसे आपकी सेवा कहां तक बन सकेगी यह तो ईश्वर ही जानें। आप इन्हें आरोग्य कर दें तो आपका एहसान मैं कभी न भूलूंगी। हमारी इस दशामें ईश्वर तथा आपके सिवाय और कोई भी रक्षक नहीं दीख पड़ता आप सोहनको साथ लेजाकर इसे औषध अनुपान, पथ्यादि सब बातें अच्छी तरह समझाकर भेज दें। मैं आपकी आज्ञानुसार सब औषध वगैरह देती रहूंगी। वैद्यजीने कहा कि मुझे फीस एवं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दवाके दाम देनेकी आवश्यकता नहीं है। मुझे रोज दोनों वक्त इनका हाल कहवा दिया करो। मैं जब आवश्यकता समझूंगा तब ही इन्हें देख जाया करूंगा। मैं तो सन्तुष्ट तब होऊँगा जब कि मुख्तार साहब आरोग्य होकर स्वयं मुझे फीस, एवं दवाका दाम तथा पुरस्कार भी देंगे। यह कहते हुए वैद्यजी सोहन नौकर को साथ लेकर चले गये। मुख्तार साहबका रोग असाध्य रूपमें था तथा इनकी आर्थिक अवस्था भी वैद्य जी से छिपी हुई न थी। वैद्यजीने निम्नलिखित नीतिका श्लोक 'न संशयमनारुह्य नरो भद्राणि पश्यति संशयं पुनरारुह्य यदि जीवति पश्यति। का स्मरण करते हुए निम्नलिखित औषधियोंकी व्यवस्थाकर सोहन को सारी बातें समझाकर वापस भेज दिया।

—नं० १—

बसन्त मालती स्वर्ण०	१ र०	प्रातः सायं मधुके साथ
चौसठ पहरी पीपल	४ र०	
गुरुच सत्व	४ र०	
	१ पुड़िया	

—नं० २—

वासावलेह	१ तो०	मधुके साथ प्रातः ८बजे एवं रातमें ८ बजे चाट कर बकरीका दूध थोड़ा गर्म किया हुआ आधा पाव पीना। भोजनोत्तर दोनों वक्त पीना।
सितोपलादि चूर्ण	½ तो०	
प्रवाल भस्म	१ र०	
नं० ३ अमृतारिष्ट एक एक तो० सम भाग जल मिला कर		

यद्यपि दवाईयां अधिक मूल्यवाली थी और इनका उचित दाम मिलनेमें भी सन्देह ही था तथापि वैद्यजी ने उत्साह एवं धैर्य्यके साथा मुख्तार साहबकी चिकित्सा शुरू कर दी। खान पानके लिये बकरीका दूध, बार्ली एवं बेदाना अनारका रस दिनमें २ बार दो दो तोला बताया गया। दूसरे दिन सुबह वैद्यजी ने मुख्तार साहबको पुनः देखा तथा तीसरे दिन सांझको भी देखा कोई न्यूनाधिक्य न जान पड़ा। रोगकी साम्यावस्था देखकर वैद्यजीका उत्साह कुछ बढ़ा। तथा चौथे दिन सुबह आकर उन्होंने 'दर्शन स्पर्शन प्रश्नैस्तं परीक्षेत रोगिणम् इस सिद्धान्तानुसार परीक्षाकी और सन्तोष जनक अवस्था जानकर प्रसन्न हुए। वैद्य जीने मुख्तार साहबसे पूछा कि आपकी तबियत अब कैसी है जैसी भी मालूम पड़ती हो स्पष्ट कहें मुख्तार साहबने कहा कि कुछ ठीक मालूम पड़ती है। बेचैनी उतनी नहीं है तथा नींद भी कुछ ठीक हो आई वैद्यजीने कहा कि अब मुझे पूर्ण विश्वास हो गया कि आप शीघ्रही स्वस्थ हो जांयगे चिन्ता बिलकुल न करें प्रसन्न रहें। सुशीलासे वैद्यजी ने कहा कि अभी ३ दिन तक और यही दवा चालू रहेगी। यह कहकर वैद्यजी सोहन नौकरके साथ चले गये और पुनः ३ दिनकी दवा दे दी। इसी प्रकार तीन२ दिनकी दवा १५ दिन तक देते रहनेपर मुख्तार साहबको चौथाई फायदा मालूम हुआ। अब वैद्यजीने मुक्ता भस्म नं० १ दो पुड़िया प्रतिदिन एवं च्यवनप्राश एक एक तोला दोनों वक्त देना आरम्भ कर पुराने चावलका भात, एवं गेहूंकी रोटी, परवलका साग, मूंग की दाल अल्प मात्रामें देना शुरू किया। १ मास बीतनेपर मुख्तार साहबका बारह आना रोग चला गया तथा अब ताकत भी मालूम पड़ने लगी थोड़ा २ घूमने फिरने लगे। अब शनैः २ और भी फल, एवं खाद्य पदार्थ दिये जाने लगे। मुख्तार साहबका ज्वर, श्वास, कास एवं अन्य उपद्रव सभी दूर हुए तथा पूर्ण स्वस्थता लाभ की। वैद्यजीने २ मास तक पूर्ण विश्राम करते हुए साधारण दवा एवं पथ्य परहेजसे रहनेकी सलाह दी। दो मास बीत जानेपर मुख्तार साहबको किसी प्रकारकी शिकायत न देखकर वैद्य जीने प्रैक्टिस शुरू करनेकी सलाह दी। मुख्तार साहब सपरिवार वैद्यजीके चरणोंमें पड़कर प्रेमके आंसू बहाते हुए बोले कि डाक्टरोंकी चिकित्सा में ६ मास तक सर्वस्व खो दिया एवं रोग जटिल हो गया आपकी चिकित्सासे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३ ही मासमें पूर्ण स्वस्थ हो गया मै आपके इस उपकार के लिए बड़ा आभारी रहूंगा और मै इसका बदला कैसे चुकाऊँगा। वैद्यजीने सब ईश्वरकी कृपा कह कर अपना रास्ता लिया मुख्तार साहबकी चिकित्सामें वैद्य जीने अपने करीब ५००) रु० के लगभग की दवा दी जिसकी कुछ भी चर्चा मुख्तार साहबसे नहीं की। मुख्तार साहबने ज्योतिषीजीसे शुभ मुहूर्त पूछ कर प्रैक्टिस आरम्भ कर दी। पुनः इनकी प्रैक्टिस ऐसी चली कि कुछ ही मासमें इन्होंने प्रचुरधन उपार्जन कर स्वास्थ्य लाभके उपलक्षमें सत्यनारायण भगवानकी कथा का आयोजन किया। आस पास के सभी परिचित एवं इष्ट मित्रोंको निमन्त्रण देकर खूब धूम धामसे सत्य-नारायण भगवान्की पूजा एवं कथा कराकर ब्राह्मणों एवं आगन्तुक लोगोंको प्रसाद खिलाकर विदा करते हुए अपने यहां आयुर्वेदिक चिकित्सा ही करानेकी दृढ़ प्रतिज्ञाकी। पं० बैकुण्ठमिश्र वैद्यजीको विदा करते समय एक जोड़ा धोती एवं १ दुपट्टा १ लिफाफामें कुछ रखकर बड़ी नम्रता, कृतज्ञता प्रकट करते हुए देकर विदा किया। वैद्यजीने घर पर जाकर लिफाफा खोला तो उसमें ११०१) के नोट पाकर अति प्रसन्न हुए। मुख्तार साहबने कुछ दिनोंके बाद और द्रव्य इकट्ठाकर कुलीन एवं शिक्षित परिवारके सुयोग्य वरके साथ कात्यायनी का विवाह खूब धूम धाम से कर सानन्द रहने लगे।

———

गर्मी का बहार शर्बत

बिड़ला लेबोरेटरीज़ द्वारा तैयार किया हुआ दिमाग को तरोताजा चित्त को प्रफुल्लित रखनेवाला **फलों का शर्बत** व्यवहार कीजिये। हमारे यहां सभी प्रकार का शर्बत आपको उचित मूल्य में मिलेगा।

नियो-ज्वरान्तक सुधा

कैसा भी नया, पुराना, तीजरा, चौथिया, मलेरिया बुखार हो, बिड़ला लेबोरेटरीज द्वारा प्रस्तुत **नियो-ज्वरान्तक सुधा** के सेवन से बिल्कुल ठीक हो जाता है। इसके सेवन से मलेरिया के कीटाणु जड़मूल से नष्ट हो जाते हैं और कुछ दिनों के लगातार सेवन से शरीर पूर्ण स्वस्थ हो जाता है। परीक्षा प्रार्थनीय है।

बिड़ला कटेली चम्पा (केश तैल)

यह तैल गरमी के दिनों में अपनी मनोहर गन्ध से आपके चित्त को प्रसन्न और दिमाग को ताजा रखेगा। कृपया व्यवहार कर देखें। सभी जगह मिलता है।

पैकिंग—१ पौ०, ८ औंस, ४ औंस, २ औंस

बाइ-ला मेडिकल हाल, १५६डी, हरिसन रोड, कलकत्ता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आसव और अरिष्ट

ले० आयुर्वेदाचार्य पं० माधवप्रसाद शास्त्री साहित्यालंकार
वैद्य बिड़ला लेबोरेटरीज,—कलकत्ता २०

संसारमें प्रचलित नानाविध चिकित्सा पद्धतियोंमें नाना प्रकारकी औषधियोंका व्यवहार होता है। आयुर्वेद शास्त्रमें भी इसी तरह रस, भस्म, गुग्गुल, वटी, पाक, अवलेह, चूर्ण, फाण्ट, हिम, क्वाथ, आसव, अरिष्ट प्रभृति का उपयोग होता है। इनको निर्माण विधिके अनुकूल कई नामोंसे सम्बोधित किया जाता है तथा कई भागोंमें विभक्त किया जाता है। जैसे आसव अरिष्टको सन्धान वर्गमें गिना जाता है। इस अतीव प्राचीन प्रक्रियाका कौन आविष्कर्ता हुआ ? इसका पता लगाना कठिन है क्योंकि भारतके प्राचीनसे प्राचीन आप्त एवं आर्ष ग्रन्थ वेदों व पुराणोंमें भी इस प्रक्रियाका उल्लेख बड़े ही प्रभावशाली ढंगसे मिलता है। अतः आजके इतिहासवेत्ता अभी तक कोई भी सर्वमान्य सिद्धान्त निर्णय नहीं कर सके है कि इस महत्वपूर्ण प्रक्रियाका जन्मदाता कौन महापुरुष था। किन्तु यह निर्विवादपूर्ण सत्य है कि हमारे भारतमें इस प्रक्रियाका ज्ञान बहुत प्राचीन कालसे है। जब यह प्रश्न उठता है कि इस प्रक्रियाका निर्माण क्यों हुआ तब यही कहना पड़ता है कि भारतीय चिकित्सा पद्धतिमें प्राचीन कालमें काष्ठादि औषधियोंका रोग निवारणके लिये बहुल्यतासे प्रयोग होता था। जैसा कि महर्षि चरक व सुश्रुत आदिके अमर ग्रन्थोंके अवलोकन से ज्ञात होता है।

उस समय भस्मोंका शायद इतना प्रचार नहीं था या इनसबके प्रति तत्कालीन आचार्योंकी उदासीनता थी। यह कुछ भी निर्विवाद कहना प्रायः असम्भव है किन्तु यह कहा जा सकता है उस समय रसों की जगह क्वाथ, रस, काष्ट चूर्ण घृतपाक इत्यादिका प्राचीन ग्रन्थों के आधारसे प्रचार की बाहुल्यता प्रदर्शित होती है। जिनमें कि काष्ठादि औषधियां ही उपयुक्त थी। अतः हर ऋतुमें एवं हर जगह ताजी औषधियोंके अभावको निर्मूल करनेके उद्देश्यसे ही यह प्रकिया आविष्कृत हुई जान पड़ती है क्योंकि काष्ठौषधियां ज्यादा समय तक टिकाऊ न होनेसे उनके गुणोंको टिकाऊ रखनेके लिए यह सर्वोत्तम तरीका है क्योंकि आसवारिष्ट जितने पुराने होंगे उतनी ही उनके गुणोंमें तदनुरूप वृद्धि होगी दूसरा यह भी हो सकता है कि द्रव सत्व निकालनेके लिये की गई हों किन्तु यह मानना पड़ेगा कि दोनों ही आवश्यक अंग है, अतः दोनोंके सम्पादनार्थ ही इस प्रकियाका निर्माण हुआ है क्योंकि आयुर्वेदिक चूर्ण गुटिकादि प्रक्रियाओंकी अपेक्षा आसवारिष्टकी प्रक्रिया विशेष गुणकारी एवं उपकारी सिद्ध हुई क्योंकि यह द्रव सत्व है तथा इसकी मात्रा कम होते हुए भी आशु एवं प्रचुर गुणकारी है। जब जीर्ण व्याधिसे पीड़ित व्यक्ति की इन्द्रियां निष्क्रिय हो जाती है शरीर कृश एवं धातुएं क्षीण होने लगती है। अन्नका पाचन नहीं होता है ऐसी संगीन स्थितिमें आसवारिष्ट अपना चमत्कारिक जादूका प्रभाव दिखाते हैं एवं नष्ट होनेवाले जीवनीय परमाणुओंको मृत्युपाशसे मुक्ति दिलाकर बल व वीर्य व शक्तिका संचार करके ओज व बल पुञ्जको प्रगट कर देते हैं, यह मेरा अपना भी अनुभव है।

हमारे आधुनिक शासकों या नेताओंने इस प्रक्रिया को आबकारी घोषित करनेका प्रयास भी किया किन्तु यह उनकी भूल थी क्योंकि मद्यमें मादक पदार्थ अधिक एवं तेज होते हैं किन्तु आसव अरिष्टोंमें मादकताकी तरफ ध्यान न देकर यह ध्यान दिया जाता है कि औषधियोंका द्रव सत्व इस आसवके तरल भागमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खिंच आवें। अतः यह मादक या मादक पदार्थ नहीं है और न आजतक आसव अरिष्टोंका उपयोग मादकताके लिये किया ही गया है।

परिभाषा और भेद

आसव और अरिष्टका दीर्घकाल तक अवस्थित रहनेका एवं उनमें गुणोंकी वृद्धिके श्रेय का कारण इनमें उपस्थित मद्यार्क (Absolute Alcohol) को ही है इस मद्यार्ककी उत्पत्ति आसुत प्रक्रियासे होती है। अंतः आसव अरिष्टको मद्य या मादक पदार्थ न कहकर मद्य का भेद कहा जा सकता है क्योंकि प्राचीन व आधुनिक आचार्योंके मतसे मद्यके निम्नांकित ६ भेद माने गये हैं। यथा आसव, अरिष्ट, सिंधु, वारुणी, सुरा और मैरेय।

(१) आसव :—औषधियोंको बिना पकाये हुए उपयुक्त मात्रासे जलमें मिला शर्करा प्रभृति मधुर द्रव्यों का प्रक्षेप डालकर पात्रमें रखके मुख सन्धान करके जो मद्य पैदा करके द्रव्य तैयार किया जाये उसको आसव संज्ञा दी गई है यथा :—

"यदपक्वौषधाम्बुभ्यां सिद्धं मद्यं स आसवः"

(२) अरिष्ट :—औषधियोंको पकाकर अर्थात् क्वाथ करके मधुर पदार्थों व प्रक्षेपणीय द्रव्योंका प्रक्षेपण करके मुखमुद्रा करके जो द्रव्य तैयार किया जावे उसको अरिष्ट संज्ञा दी जाती है यथा :—

"अरिष्ट-क्वाथसिद्धःस्यात् सम्पक्वौ मधुर द्रव्वैः"

(३) सीधु :—ईखके रसको उबाल कर या बिना उबाल कर जो संधान क्रिया द्वारा द्रव्य तैयार किया जावे उसको सीधु संज्ञा दी जाती है यथा :—

"सीधुः इक्षुरसैः पक्वै"

(४) वारुणी :—जो ताल या खर्जूरके रसको वर्तन में एकत्रित करके उसमें खमीर आकर मद्योत्पत्ति पर्यन्त रख देते हैं। इसको तथा चावलोंको पीसकर जलमें मिश्रित करके मद्योत्पत्ति की जाती है इन दोनोंको ही वारुणी संज्ञा दी जाती है यथा :—

"यत्ताल खर्जूररसै रासुतं सैव वारुणी"

(५) सुरा :—चावल आदि धान्य विशेषको पका कर एवं उनमें मधुर द्रव्योंका सम्मिश्रण करके खमीर उठाकर जो द्रव्य तैयार किया जाता है उसको सुरा (शराब) कहते हैं यथा :—

"परिपक्वान्न संधानसमुद्भूता सुरामता"

इस सुराके भी गौड़ी, माध्वी, पैष्टी एवं निर्यास नामक ४ भेद है।

* आवश्यक सूचना *

"आयुर्वेद गौरव" के प्रेमी लेखकों, विज्ञापन दाताओं एवं सम्वाददाताओं से विनम्र निवेदन है कि वे अपने लेखों, विज्ञापनों एवं सम्वादों को यथा समय भेजने का कष्ट करें जिससे कि उपयुक्त स्थानों में उनका प्रकाशन हो सके एवं पत्रके सौन्दर्य के साथ साथ उनके लेखों आदि का भी गौरव बढ़ सकें।

समय पर न मिलनेके कारण हमारे बहुत से हितैषियों की रचनायें इस अङ्कमें प्रकाशित नहीं की जा सकी हैं। अतः उन महानुभावों से सादर क्षमायाचना से साथ साथ उनको सूचित किया जाता है कि आपकी रचना एवं विज्ञापन अगले अङ्कमें प्रकाशित कर दिये जायेंगे।

—"सम्पादक"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A. गौड़ी :—गुड़से तैयार की जावे उसको गौड़ी नामक सुरा कहते हैं।

B. माध्वी :—महुआके फूलोंका मिश्रण करके निर्मित की गई को माध्वी सुरा नामसे पुकारते हैं।

C. पैष्टी :—चावल आदि धान्यकी पिष्टीसे तैयार होनेसे इसको पैष्टी नामक सुरा कहते हैं।

D. निर्यास :—फल व ईखके रसों द्वारा तैयार की जाती है भिन्न-भिन्न नामवाली इन सभी सुराओंको नलिका (वाष्प) यन्त्र द्वारा खेंचकर उपयोगमें लाई जाती है। ये स्वच्छ एवं वर्णरहित एवं एक प्रकारकी गन्ध युक्त होती है।

(६) मैरेय :—आसवीय द्रव्यों एवं सुरा द्रव्यों (चावल आदिकी पीठी या फलरस) दोनोंके संमिश्रण से जो वस्तु तैयार की जावे तथा बबूल या बेरकी छाल इनके संयोगसे ये सम्मिश्रण बनाई जावे उसको मैरेय कहते हैं यथा :—

आसवस्य सुरायाश्चद्वयोरेकत्र भाजने।
संधानं तद्विजनीयात् मैरेय मुभयात्मकम्॥

क्रमशः

प्रश्नोत्तर

प्रश्नकर्त्ताः—शिवनारायण पाण्डेय—कलकत्ता २०

श्री माधव प्रसादजी शास्त्री वैद्य बिड़ला लेबोरेटरीज़ कलकत्ता आपके लेख व रचना प्रभृति आयुर्वेद गौरवके हरएक अंकोंमें पढ़नेको मिलती है। जिससे आपकी कार्य कुशलता व योग्यता झलकती रहती है। मैं भी एक देहातका छोटा सा अपरिचित वैद्य हूं तथा मेरे अन्य देहाती वैद्य भाइयोंकी तरह पाक, चूर्ण व आसव अरिष्ट एवं सुलभ काष्ठादि औषधियोंके छोटे-छोटे योगोंका निर्माण शास्त्रोक्त विधिसे अपने पूर्वजों के पद चिन्होंपर चलता हुआ अपनाये हुए हूं अर्थात् अपने घर ही पर निर्माण कर लेता हूं किन्तु मेरे अन्तस्थलमें हमेशा एक अभिलाषा लगी रहती है वह मैं आज इस मेरे छोटेसे प्रश्न द्वारा व्यक्त कर रहा हूं कि मेरी इच्छा है कि आप उपरोक्त बृहद् प्रतिष्ठानमें आसवारिष्टोंका निर्माण किस विधिसे करते हैं इससे मुझे सविस्तार अवगत करानेका कष्ट करें। जिससे कि मैं मेरी अपनी निर्माण विधि व लेबोरेटरीज़ की निर्माण विधिका तुलनात्मक मनन करके देखूं कि कौन विधि हमारे देश-भारतके निवासियोंके लिए स्वास्थ्य संरक्षणमें उपयुक्त है। आशा है आप निःसंकोच मेरे प्रश्नका मित्रतापूर्वक उत्तर देकर मेरे संकल्प विकल्प को हटाकर पथप्रदर्शन करेंगे।

नोटः—अशोकारिष्टकी निर्माणविधि ही उत्तरका माध्यम होनी चाहिए।

"प्रश्नकर्त्ता"

प्रश्नकर्त्ता—दामोदर शर्मा शीला पाड़ा कलकत्ता

एक लड़की की उम्र २॥ वर्ष की है, दांत ऊपर और नीचेके करीब करीब आधे निकल चुके है और निकल रहे हैं। लड़की रोती भी है, तथा प्रसन्न होनेपर हँसती है। बोलती कुछ नहीं, तथा ऊठ-बैठ नहीं करती है। दिनमें कई बार स्वयं जमीन पर उलथो खाकर लुढकती रहती है, बुखार नहीं है। दस्त कड़ा बंधा हुआ होता है कभी नहीं भी होता खांसी कभी २ आती है। चेहरे की आकृति ठीक है। ग्लैक्सो सुबह शाम पिलाया जाता है। बहुत थोड़ी अन्नकी चीजें खाती है। शरीर बहुत दुर्बल है। अस्थिमात्र ही शेष है। डाक्टर वैद्य लोग सुखैनी (बालशोष) बतलाते है। चिकित्सा से अभी तक कुछ भी लाभ नहीं दीख पड़ा। अतः वैद्य महानुभावोंसे प्रार्थना है कोई स्वकीयानुभूत ऐसा सफल प्रयोग 'आयुर्वेद गौरव' में प्रकाशित करावें जिससे लड़की स्वास्थ्य लाभकरे चलने फिरने, एवं बोलने लगे। इस रोगमें यदि कोई टोटका, या यन्त्र मन्त्र जानते हो तो उसे भी पूर्ण विधि के साथ लिखनेकी अवश्य कृपा करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुभूत—योग

(१) खाँसीकी अपूर्व दवा—

काकड़ा सिंगी १ तोला, नये बहेड़ाका छिलका १तो० सफेद चन्दनका बुरादा Sandal wood dust १ तो०, अकर करा १ तो०, काली मिर्च १ तो०, कूठ १ तो०, बबूरका गोंद १ तो०, लौंग २ तो०, मुलैठीका सत ३तोला, साफ कत्था ४तोला। सब दवाओंको कूट वारीक चूर्ण करो। फिर १ सेर बबूरका छिलका ८ सेर पानीमें डालकर कलईदार वर्त्तनमें पकावे जब २ सेर पानी रह जावे तब कड़ाहीमें गाढ़ा कपड़ेसे छान कर फिर पकावे जब शहदकी तरह हो जावे तो वे सब औषधियाँ इस में मिलाकर खूब घोटे जिसमें सब एक दिल हो जावें। फिर चनाके बराबर गोलियाँ बनाकर रख छोड़े और दिनमें ३ या ४ बार एक एक गोली मुखमें डालकर रस चूसता जावे। ५ या ६ दिनमें दवा खानेसे कितनी ही पुरानी खाँसी होवे लाभ होना प्रारम्भ हो जावेगा और एक महीनामें खाँसीका नामोनिशान भी नहीं रहेगा।

(२) दवा खाँसी और क्षय रोगकी—

अडूसाकी जड़का छिलका (वासकमूल) आधासेर, मुलहटी १पाव, काकड़ा सिंगी १०तोला, तालीसपत्र १०तोला भटकटैयाकी जड़ १०तो०, लौंग १०तो०, पोस्ताकी डोडी ५ तो०, कायफल ५ तो०, कूठ ५ तो०, गिलपसार बूटी ५ तो०, इन सब दवाओंको कूट कर १२ सेर पानीमें डाल कर दिन भर भीगा रहने देवे फिर इसके बाद धीमी-धीमी आंचमें पकावे जब सात सेर पानी जलकर ५ सेर रह जावे तब दवाको आगसे उतार लेवे। ठंडा होनेपर सब दवाओंको मलकर छानलेवे और इसमें १॥सेर मिश्री डालकर फिर पकावे जब चासनी हो जावे तो उसमें असली वंशलोचन ४ तो०, काली मिर्च २ तो०, छोटी इलायचीके बीज २ तो०, भीमसेनी कपूर १ तो०। इन सब दवाओंका चूर्ण मिलावे और बोतलमें भर छोड़े। रोगीको ३ मासेसे ६ मासे तक दिनमें ४ बार और रात में २ बार खिलावे। यह दवा खाँसी और क्षय रोगके लिए रामबाण है। क्षय रोगमें इसीके साथ स्वर्ण मालिनी वसन्त रसका भी प्रयोग करनेसे वैद्यको पूरा यश मिलता है।

नोटः—मैं इन प्रयोगोंको अपने औषधालयमें लगभग २० वर्षसे बराबर तैयार कर रहा हूँ और सहस्रों रोगियोंपर परीक्षित हैं।

वैद्यशास्त्री पं० प्रतापनारायण बाजपेयी
आयुर्वेदाचार्य, प्रताप औषधालय
६६।१०४ कछियाना, कानपुर

(१) बाजी करण

सालम मिश्री ३ मा०, गाजरके बीज ३ मा०, दोनों वस्तुएं बारीक पीसकर ऽ। भर भैंसके दुग्धमें उबाले तत्पश्चात् उतार कर ये दवाये मिलावे। दालचीनी—१ मा०, रंजील १ मा०, सकाक्तिल मिश्री १ मा०, वहमन सफेद १ मा०, वहमन सुर्ख १ मा०, शलजमके बीज १ मा०, खुलजान १ मा०, बनात सफेद ३ तो०, मिलाकर ठण्डा होने पर १ तो० प्रातः १ तो० सायं सेवन करे शक्ति बर्धक है, भोजन सादा तथा तैल गुड़ मिर्चा मना है।

(२) अजीर्णकी दवा

मुनक्का बिना बीज ३मा०, किशमिश ३ मा०, शाहपसन्दके बीज ३ मा०, शक्कर समान १ तो० प्रातः सायं सेवनसे सर्व प्रकारके अजीर्ण दूर हों साग सबजी अधिक खावे।

(३) अर्शकी दवा

निबूका सत १ मा०, मक्खन ३ तो०, मिलाकर ३ दिन सेवनसे हर प्रकारके अर्शको लाभ करता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(४) पेट फूलना (आफरा)

सोडा मीठा ५ तो०, रंजील ५ तो०, शकर १० तो० बारीक करके मिलाकर रक्खे २ मा० प्रातः सायं सेवन कर बहुत लाभ करेगा।

(५) अर्कुल निसां

अजवायन खुरासानी १तो०, जाफरान १ तो०, फिल फिल दराज़ १ तो०, दालचीनी १ तो०, कुल वस्तुएं घृत-कुमारीके लुआवमें १ सप्ताह खरल करके चने बराबर गोली वना ~~कर २ से~~ ४ गोली वलाबलके' अनुसार गो-दुग्धमें सोते समय सेवन करनेसे अर्कुल-निसांका दर्द दूर होता है सोते समय मोमके तेलकी मालिश करें।

महाराजस्वरूप पाठक, रजिस्टर्ड वैद्य
मु० पो० गोला गोकरननाथ जि० खीरी

(१) मंजन दांत

फिटकरी १तोला; जायफल १तोला, गुलनार १ तो० तवाशीर ६ मा०, इलायची ६ माशा, सुपारी ६ मा० छिलका हड़ ६माशा, समुन्दर फेन ६माशा, नागर मो० ३ माशा, माजू ३ माशा हर वस्तुको कूटकर वारीक पीसकर दांतों पर मले दर्द सूजन दांत मोतीके समान साफ मज़बूत होंगे।

(२) खूनके फ़िसाद पर

उन्नाव ऽ= शाहतरा ऽ। गुरुचहरी ऽ। सफूका ऽ। मेहन्दी की पत्ती ऽ। नीमकी पत्ती ऽ। नीमकी छाल ऽ। बुरादा शीशम ऽ। म्योढ़ी हड़ ४ छटांक चन्दन सफेद ४ तोला लाल चन्दन सब वस्तुओंका भवका द्वारा अर्क निकालर रक्खे मात्रा ऽ= प्रातः सायं शरवत उन्नाव मिला ले हर प्रकार फिसाद खून को लाभ करता है।

(३) वात विकार पर

सोंठ—पिपलोमूल, चव्य, काली मिर्च, भुनी हींग, अजमोदा, सरसों, जीरा स्वेत, जीरा श्यामा, रेणुका इन्द्र जौ पाढ़ा, वायविडङ्ग गजपीपर, कूठ, कडुआ, रासना—नागर मोथा सेंधा नमक बहेड़ा आंवला तज खस यवा-

नियो-च्यवनप्राश
(विटामिन और कैल्शियम मिश्रित)

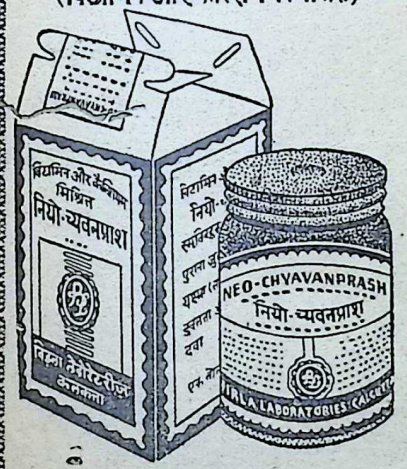

कास, श्वास व क्षय नाशक

भण्डू एवं बिड़ला लेबोरेटरीज़

द्वारा प्रस्तुत सभी तरह की दवाओं एवं तैलों व साबुनों के साथ साथ सभी तरह की विलायती दवायें तथा आधुनिक सुन्दर डिजाइन के स्टेशनरी का सामान उचित मूल्य में प्राप्त करने का एक मात्र स्थान।

लखोटिया ट्रेडिंग एजेन्सी
चूरू (राजस्थान)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वार, बड़ी इलायची गोखरु, हर्रे, धनिया, कुंटकी, अतीस भारंगी, बच, मोरबा, तेजपात, देवदारु, पीपल, गुगुल और सब वस्तुएं समान १ तो० गुगुल पानीमें डालकर आग पर रख साफ करके अन्य वस्तुएं कूटकर गुगुलमें मिलाकर मरदन करके कूटकर लुगदी बनावे फिर १ मा० की गोली बनावे ऊपर दूसरे १ गोली प्रातः सायं सेवन करनेसे हर प्रकारका दर्द वात विकार दूर हो।

(४) मलेरिया ज्वर

नीमके पत्ते ६ माशा, तुलसीके पत्ते ६ मा०, सनाये ६ माशा, करंजबीजका चूर्ण ६ मा०, कालीमिर्च ४॥ मा० अदरखके स्वरसमें २ रत्तीकी गोली बनावे प्रातः सायं गर्म जल से १ गोली खाने विषम ज्वर जावे।

(५) जीर्ण प्रदर

इन्द्र जौ मीठा ३ माशा चूर्णकर १५ दिन तक ताजे जलसे सेवन करे जीर्ण से जीर्ण प्रदर दूर हो

शान्तिस्वरूप पाठक
पो० मोहम्मदी
जि० खीरी

परीक्षित प्रयोग

१ जीभ पर टेसू—ढाकके फूलोंको टेसू कहते हैं। इनको पीसकर जले स्थानपर लेप करनेसे लाभ होता है। अन्डकोष बढ़े जाने पर इनको पीसकर गरम कर लेप करे लाभ होगा।

२ आंखकी फूलीपर—ढाकके बीजोंको (पलाश पापड़ा कहते हैं इसे घिसकर आंखोंमें लगावे ४० दिन में लाभ होगा।

३ मूत्रके साथ सफेदी आनेपर—दोनों समय खानेके साथ राई की बनी हुई कांजी पीनेसे मूत्रमें फास फेट जाने रुक जाते इस प्रयोगसे मैंने इस रोगके कई मरीज ठीक किये।

४ प्रदर एवं अधिक स्रावके लिये—वह खाली बोरी जिसमें २-३ साल तक गुड़ भरा गया हो ले इस खाली बोरीको आग लगा दे और बोरीकी भस्मको सम्भालकर रखे रोजाना प्रातः ६ माशे स्त्रीको खिलावे स्त्रीके सफेद पानी और मासिक धर्मके समय अधिक स्राव आने केवल १ सप्ताहमें ठीक करती है।

५ विसूचिका हर वटी—भुना हुआ जीरा, अफीम बूका के पत्तेका रस इन तीनोंको समान भाग लेकर खरलमें डालकर १ पहर तक खूब घोटे। गोली बनाने योग्य हो जानेपर मूंग बराबर गोली बना ले प्रयोग—दस्त व कै प्रारम्भ होने पर १-१ गोली ताजे पानी के साथ थोड़ी थोड़ी देर बाद दें। गुण—विसूचिकाके लिये उत्तम प्रयोग है। पेशाबका मार्ग तुरन्त खोल देता है।

अनिरुद्ध प्रसाद पाण्डेय
(सहायक वैद्य)
गवर्नमेंट डिस्पेन्सरी (वरनाहल)
मैनपुरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य समीक्षा

भस्म विज्ञान

लेखक—स्वामी हरिशरणानन्द जी वैद्य प्रकाशक—आयुर्वेद विज्ञान माला कार्य्यालय अमृतसर मूल्य १०)

पुस्तक हिन्दी भाषामें छपी है। यत्र तत्र आयुर्वेदिक ग्रन्थोंके संस्कृत श्लोकोंके प्रमाण भी दिये गये हैं। सुयोग्य लेखक ने प्राचीन एवं आधुनिक भस्म निर्माणादि विधि, तथा अपनी अनुभूत अनेक विधियां स्पष्ट लिखकर आयुर्वेद समाजका बड़ा उपकार किया है। क्योंकि भारत वर्षमें रस विद्या एवं रासायनिक क्रिया निर्माण सम्बन्धी विशिष्ट क्रियाओंका लोप होनेका कारण यही है कि प्रायः वैद्य लोग प्रकट नहीं करते यह आयुर्वेद समाजके लिये दुर्भाग्यका विषय है। स्वामी जीने निःस्वार्थ एवं निःसंकोचभाव से रहस्यमय योगोंके प्रकाशनसे जो आयुर्वेदकी सेवा की है तथा कर रहे हैं वह केवल प्रशंसनीय ही नहीं अपितु अनुकरणीय भी है। आपने सर्वथा स्वार्थ त्यागकर निःसंकोच भावसे सम्पूर्ण भस्म सम्बन्धी विधियां स्पष्ट लोककल्याणकी भावनासे लिख दी है। पुस्तक भारत प्रसिद्ध आदरणीय विद्या वयोवृद्ध वैद्यराज श्री यादवजी त्रिकमजी आचार्य के कर कमलों में समर्पित की गई है। वैद्य समाजको इस अत्युपयोगी पुस्तकको अपना कर स्वामीजीके कठिन परिश्रमको सार्थक करते हुए उत्साह बढ़ानेमें सहायक होना चाहिये। यद्यपि पुस्तकका आकार देखनेपर १०) रु० कुछ अधिक मालूम पड़ता है परन्तु पुस्तककी उपयोगिता देखनेपर मूल्य नगण्य वस्तु है।

"धन्वन्तरि चिकित्सा समन्वयाङ्क" विशेषांक पत्र

विशेषांक सहित उक्त मासिक पत्रका वार्षिक मूल्य ५॥) है प्रकाशक-धन्वन्तरि कार्य्यालय विजयगढ़ (अली[illegible]) सम्पादक—देवी शरण गर्ग वैद्योपाध्याय, ज्वाला प्र[illegible]द मिश्र बी० एस् सी हैं। इस विशेषांक के सम्पादक आयुर्वेदाचार्य पं० श्री तारा [illegible]जी मिश्र वैद्य उपप्रधानाचार्य्य अर्जुन आयुर्वेद [illegible]पालय काशी हैं। इनकी योग्यताका वर्णन करना तो सूर्य्यको दीपक दिखानेके समान है। [illegible] सम्पादक महोदय का कठिन परिश्रम इस विशेषांकमें 'गागरमें सागर' की लोकोक्ति चरितार्थ कर रहा है। अनेक उपयोगी चित्र भी विशेषांक की उपयोगिता एवं सुन्दरताको बढ़ानेमें सहायक हो रहे हैं। आयुर्वेदके सुप्रसिद्ध एवं सुयोग्य सफल चिकित्सकों तथा अनेक विद्वानों, जैसे वैद्यराज श्री यादवजी त्रिकमजी आचार्य्य बम्बई, पं० शिवशर्म्मा आयुर्वेदाचार्य्य, अध्यक्ष महा सम्मेलन, आदिके उत्तम लेख मननीय तथा पठनीय होनेसे वैद्य समाजके लिए ज्ञान वर्द्धक, एवं नूतन [illegible]के लिए पथ-प्रदर्शक होनेके नाते आदरणीय एवं संग्रहणीय है, वैद्य समाज तथा आयुर्वेद हितैषियों द्वारा इसे अप[illegible] कर प्रकाशक एवं सम्पादकके कठिन परिश्रमको सार्थक बनाते हुए उत्साह को बढ़ाना चाहिये। यह अङ्क निःसन्देह अपने "चिकित्सा समन्वयाङ्क" नामक नामको साथक[illegible]में पूर्ण सफलीभूत हुआ है।

"आयुर्वेद चिकित्सक" मासिक पत्र वार्षिक मूल्य ४) सम्पादक—वैद्य पं० चन्द्रशे[illegible] जी जैन शास्त्री लाखा भवन, जबलपुर हैं।

उक्त पत्रका प्रकाशन करीब १॥ वर्षसे हो रहा [illegible] सम्पादक महोदय आयुर्वेद शास्त्रके प्रकाण्ड विद्वान् होते हुए [illegible] शास्त्रमें विशेष प्रगति होनेके नाते "सोनेमें [illegible] कर रहे [illegible]" की [illegible]वत चरितार्थ हो रही है। य[illegible] पत्र [illegible] सम्पादक द्वारा आयुर्वेद विषयके उत्तम लेख [illegible] है॥ शतशोऽनुभूत प्रयोगोंसे युक्त वैद्य समाज [illegible] प्रेमियोंके हितार्थ प्रकाशित हो [illegible]युर्वेद [illegible] एवं संग्रहणीय [illegible]। वैद्य समा[illegible]

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को उक्त पत्रको अपनाकर आयुर्वेदके प्रचार एवं संपादक के उत्साहको बढ़ानेमें सहायक होना चाहिये।

आयुर्वेद विज्ञान

यह एक पत्र वार्षिक मूल्य ३) सम्पादक-स्वामी हरि शरणानन्दजी वैद्य अमृतसर हैं।

स्वामीजीकी योग्यता एवं त्यागशीलता वैद्य समाज से छिपी नहीं है। उक्त पत्र महत्वपूर्ण लेखोंसे युक्त आयुर्वेद के प्रचार, वैद्य समाज, एवं आयुर्वेदके प्रेमियों के लाभार्थ प्रकाशित हो रहा है। इसके कई अङ्क हस्तगत हुए जिनको देखनेसे पत्र आदरणीय एवं संग्रहणीय है। वैद्य समाज एवं जनताको इसके प्रति श्रद्धा रखकर आयुर्वेदके प्रचारमें सहायक होते हुए सम्पादक महोदय के उत्साहको बढ़ानेमें निरन्तर सहयोग देना चाहिये।

इधर उधर से कुछ समाचार व सूचनायें

झुन्झनू जिलेके मंडावा नगरमें ता० ५ से ७ अप्रेल तक वहां की श्री नवयुवक सभाके तत्वावधानमें स्वांस रोगको चिकित्सार्थ एक शिविर लगाया गया। इसमें २०० रोगियोंकी सफल चिकित्सा की गई।

रोगियोंके निवास, भोजन और परिचर्याकी व्यवस्था श्री नवयुवक सभा की ओर से निशुल्क की गई। थी

दमा जैसे कठिन रोगकी अचूक चिकित्साके शिविर का यह चौथा आयोजन मारवाड़ी रिलीफ सोसाइटी की ओरसे किया गया था। इससे पूर्व बीकानेर; श्री महावीरजी, और धोबलाई में बड़े २ शिविर किये जा चुके हैं। इन चिकित्सा शिविरोंकी सफलताका एक मात्र कारण सीकरकी माधव सेवा समितिके प्रधान चिकित्सक वैद्य श्री प्रलादरायजी शर्माकी स्वांस रोगके लिये निकाली गई एक विशेष दवा है दवा केवल ३ दिन दी जाती है और हरेक प्रकारका नया या पुराना दमा दूर हो जाता है। वैद्यजी दवा निःशुल्क वितरण करते हैं।

वैद्य मोहनलाल आचार्य

बिड़ला लेबोरेटरीज़ द्वारा निर्मित

साबुन, सुगन्धित तैल, नारियल तैल के टिन, सुन्दर बोतलों एवं आकर्षक पैकिङ्ग में स्नो, क्रीम आलता आदिके साथ-साथ मार्टन की सुन्दर मिठाइयां खरीदते समय इनको न भूलें।

दार्जिलिङ्गके सोल एजेण्ट :—

बालकिशनदास श्यामरतन

कालिम्पोंग (दार्जिलिङ्ग)

हिमालय (ट्रान्सपेरेन्ट) ग्लिसरीन सोप

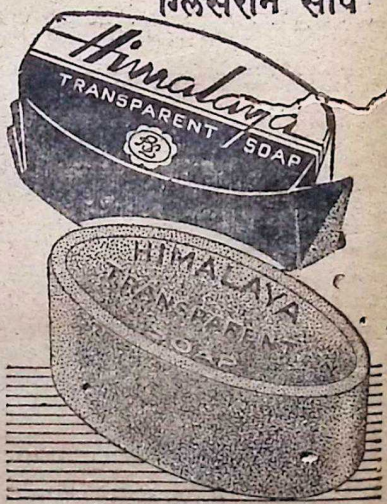

सभी ऋतुओं में त्वचा के रूप व लावण्य को बढ़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वतन्त्र भारत में एक महत्वपूर्ण बृहत रसायनशाला

का

निर्माण करके स्वास्थ्य संरक्षण में पूर्ण सहयोग।

एलोपैथिक औषधियाँ :—

जिसमें सभी प्रकार के इन्जेक्शन, टिंचरस्पीरिटस्, एक्सट्रैक्टस् एवं अमूल्य पेटेण्ट औषधियाँ :—हारमोशोका, तुलसोल गैस्ट्रोसोल आदि।

आयुर्वेदिक औषधियाँ :—

आसव, अरिष्ट, चूर्ण, रसभस्म, वटी, पाक, अवलेह आदि शास्त्रोक्त योग तथा बीर-बच्चा (बालामृत), नियो च्यवन प्राश (च्यवन प्राश का नवीन वैज्ञानिक रूप), नियो ज्वरान्तक सुधा आदि।

शृङ्गार प्रसाधन :—

देशी जड़ी बूटियों के योग से निर्मित सुगन्धित तैल, स्नो, पाउडर, क्रीम आलता, नेल पालिश एवं नहाने व कपड़े धोने के उच्चकोटि के साबुन आदि।

इस विभाग की अनुपम भेंट :—

कटेली चम्पा केश तैल — मनोहर गन्धयुक्त

बा-इ-ला आमला केश तैल — देशी जड़ी बूटियों द्वारा निर्मित

युडीकोलन (डी ओड़)

एक पहले अ...

बिड़ला लेबोरेटरीज़ कलकत्ता—२०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल-पत्रिका

सामयिक चेतावनी

बरसातका मौसम नजदीक आ गया है। मलेरिया बुखारका उत्पात भारतवर्षके सभी भागोंमें इन दिनोंमें बढ़ जाता है और हमारे देशवासी हजारोंकी संख्यामें प्रति वर्ष इसके शिकार होते हैं।

इस विपत्ति एवं बचनेके लिये आप आज ही बिड़ला लेबोरेटरीज द्वारा प्रस्तुत "नियो-ज्वरान्तक सुधा" की कमसे कम १ शीशी मंगाकर अपने पास रख लें।

"नियो-ज्वरान्तक सुधा" सभी प्रकारके मलेरिया बुखार इकतरा, तिजारी चौथिया तथा इससे उत्पन्न तिल्लीकी परीक्षित दवा है। इसके ३-४ खुराक पानेसे ही बुखार आना रुक जाता है। इसके कुछ दिनों तक निरन्तर सेवनसे खूनकी कमी, भूख न लगना, कब्जियत आदि दोष नष्ट हो जाते हैं।

यह जीर्ण ज्वर इन्फ्लुएञ्जा, कफ-ज्वर आदिमें भी समान रूपसे लाभ करता है।

बिड़ला लेबोरेटरीज़

कलकत्ता।

प्रचार को बढ़ाने के लिये "आयुर्वेद गौरव" में विज्ञापन दीजिये :—

—: विज्ञापन का दर :—

टाइटिल का प्रथम पेज	१२५)
द्वितीय पेज	७५)
" तृतीय पेज	७५)
" चतुर्थ पेज	१००)
साधारण पेज	५०)
" आधा पेज	३०)
" चौथाई पेज	२०)

[illegible] ३०, पाथुरियाघाट स्ट्रीट द्वारा प्रकाशित तथा जेनरल प्रिण्टिंग वर्क्स लि०, ८३, पुराना चीनाबाजार स्ट्रीट, कलकत्तामें मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

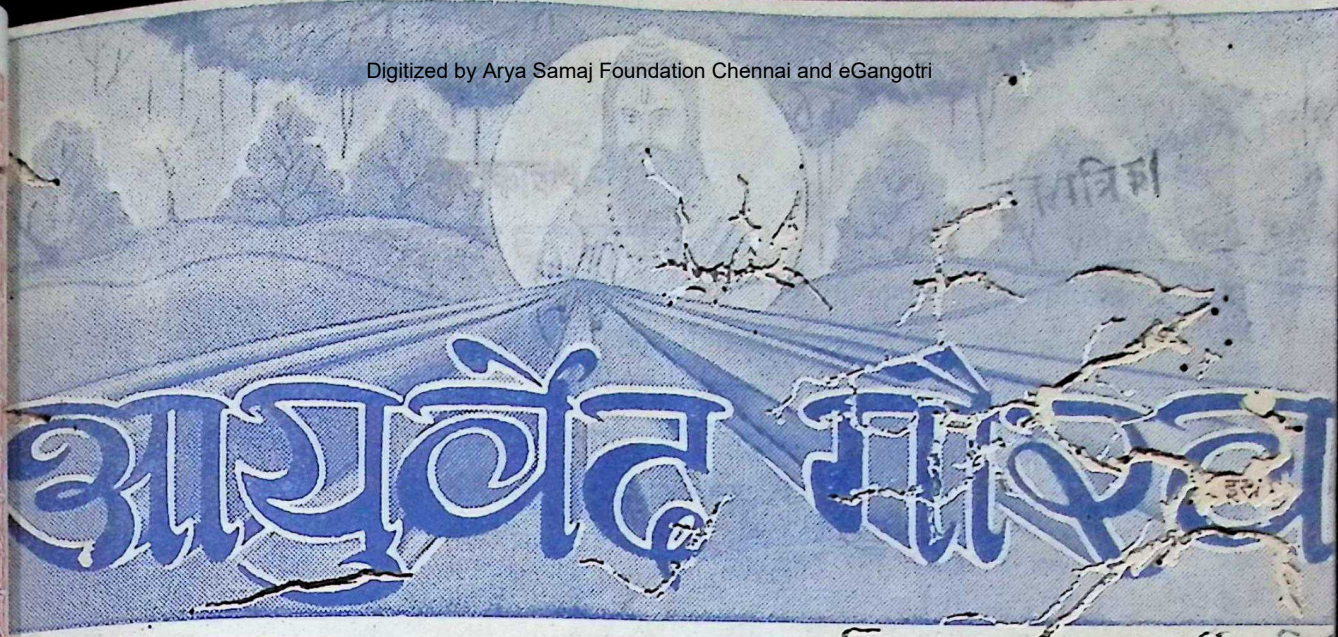

आयुर्वेद का एकमात्र सर्वोत्तम मासिक पत्र

प्रथम वर्ष
संख्या १२
सितम्बर
१९५४

वार्षिक मूल्य
३)
एक प्रति ।)

मंगल कामना

श्री मदनगोपाल बागोतिया आयुर्वेदाचार्य, कलकत्ता

यावत् सूर्य्यनिशाकरावुदयतोनित्यं वियन्मण्डले
भोगीशो धरणीधरं हि धरते यावन्निजे मस्तके ॥
यावद्रोगविनाशकर्म्मपटवो वैद्या जनास्सन्ति वै ।
तावद् भारतमण्डले प्रचरतु पत्रं प्रियं मासिकम् ॥१॥

भावार्थ—जब तक आकाश मण्डलमें नित्य सूर्य्य और चन्द्रमा उदय होते हैं, जबतक शेषनाग अपने मस्तक पर पृथ्वीका भार उठाते हैं। जबतक रोग नाश करनेवाले चतुर वैद्य लोग वर्त्तमान हैं तबतक इस भारतवर्ष में प्रिय मासिक पत्र 'आयुर्वेद मौक्तिक' का प्रचार हो।

प्रकाशक—प्रकाशचन्द्र गुप्त M.Sc. सह-सम्पादक—मदनगोपाल बागोतिया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

विषय		पृष्ठ
१	आयुर्विज्ञान—डा० एम० पी० रंजन—सहरिया सराय	३४५
२	आयुर्वेदोत्पत्ति—कविराज प्यारेलाल शर्मा, आयुर्वेदाचार्य ...	३४६
३	विषरोगों में आवश्यक उपचार—कविराज अशोककुमार आयुर्वेदालङ्कार ...	३४९
४	ज्वर-बुखार-हुम्मा—पं० गंगाचरण शर्मा, आयुर्वेदाचार्य भिवानी ...	३५४
५	हमारा प्राचीन नेत्र विज्ञान—डा० आर० एस० अग्रवाल	३५७
६	एपेण्डि-साइटिस् (आन्त्रपुच्छ)—ले० डा० भ्रमरदत्त मिश्र पो० केकड़ी अजमेर	३६१
७	पोलकी (ट्रकोमा)—वैद्य इन्द्रभान सी भटनागर सीधपुर (उ० गु०) ...	३६४
८	संक्रामक रोग—पं० श्री ठाकुरदत्त शर्मा वैद्य—देहरादून	३६७
९	कुचला—ले० श्री चन्द्रभानु शर्मा, वैद्य खखौदा (मेरठ)	३६९
१०	बेचारा आयुर्वेद—ले० स्वामी वंशीधर शर्मा, वैद्य ...	३७२
११	सरकार द्वारा आयुर्वेद के साथ विश्वासघात—ले० श्री ताराशङ्कर वैद्य (बनारस)...	३७३
१२	आयुर्वेद श्रेष्ठ आरोग्य विज्ञान है—सन्मार्ग से उद्धृत	३७५
१३	अनुभूत योग—	३७५
१४	साहित्य समीक्षा ...	३७६
१५	स्टेट फैकेल्टी आफ आयुर्वेदिक मेडीसन के चुनाव का फल	३७६

उद्देश्य:—

- आयुर्वेद का प्रचार करके उसको उन्नति के शिखर पर पहुंचाना।
- आयुर्वेद की लुप्त प्रायः साहित्य की खोज करके प्रकाशन करना।
- सिद्धहस्त वैद्यों द्वारा स्वयं अनुभूत योगों का संकलन करके जनता के समक्ष पेश करना।
- प्रश्नोत्तरों द्वारा आयुर्वेद के गूढ़ तत्वों पर विचार-विनिमय करना।
- आयुर्वेद से सम्बन्धित विविध प्रसंगों का संकलन करना।

—"सम्पादक"

व्यापारको बढ़ानेके लिये "आयुर्वेद गौरव" में विज्ञापन दीजिये :—

—: विज्ञापन का दर :—

टाइटिल का प्रथम पेज		१२५)
,,	द्वितीय पेज	७५)
,,	तृतीय पेज	७५)
,,	चतुर्थ पेज	१००)
साधारण पेज		५०)
,,	आधा पेज	३०)
,,	चौथाई पेज	२०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ॐ

प्राच्यं प्रतीच्यं यत्किंचिद् आयुर्वेदात्मकं हि तत्।
तद्गौरवो विजयते, विश्वस्मिन् व्याधिसंकरे ॥ १ ॥

नोट—१-"यदिहास्तितदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्", इति चरक वचनात्।

आयुर्वेद-गौरव

वर्ष १ | सितम्बर १९५४ | संख्या १२

आयुर्विज्ञान

रचयिता—साहित्यभूषण डा० एम० पी० रंजन, गीता पुराण-व्याकरण शास्त्री

सम्पादक :—'कुशवाहा क्षत्रिय बन्धु' लहेरिया सराय

भारतीय गौरव प्रतीक, आयुर्विज्ञान हमारा है।
सभी भांति सम्पूर्ण शास्त्र यह, सारे जग में न्यारा है॥
भारतीय औषधियां औ, जलवायु हमको प्यारा है।
भारतीय गगनांगन का आयुर्वेद ध्रुवतारा है॥
ब्रिटिश ने अपने शासन में, इसकी सदा सताया है।
कठिन परीक्षा लेने को, पावक में इसे तपाया है॥
मगर परीक्षा लेने पर भी, इसे नहीं अपनाया है।
सदियों से पददलित देश को, इसी भांति ठुकराया है॥
मिटी दासता तो अवश्य पर, बदला हुआ जमाना है।
प्रभुता के हो वशीभूत, शासन करता मनमाना है॥
वैद्यों के समाज ने तो अब, अपने को पहचाना है।
खोया हक वापस लेने को, आज बना दीवाना है॥
हीन भावना को तज मानव, जब ऊपर उठ जाता है।
विकट शत्रु भी उसके सम्मुख, आने में घबराता है॥
सकल विश्व के प्राणी पर जो दया भाव दरशाता है।
धन्य वही, उसका जीवन, यह 'आयुर्वेद' बताता है॥

जड़ी-बूटियों से देखो, भारत उपवन लहराता है।
सभी भांति परिपूर्ण इसे लख, सारा जग ललचाता है॥
भारतीय जलवायु भी क्या चमत्कार दिखलाता है।
जिसके सेवन से असाध्य रोगी नवजीवन पाता है॥
नियति का वरदान अनोखा, पा कर वर्त्य तराता है।
स्वाभिमान के आगे इसके, नहीं कोई टिक पाता है॥
यही देख जनता के मन, में, जोश नया लहराता है।
आज पुनः सर्वत्र जगत में, विजय [illegible]
कल्प वृक्ष के तुल्य इसे ऋषियों ने सदैव बताया।
कभी नहीं मुर्झाने पाया, यद्यपि गया सताया है॥
सत्य सनातन और पुरातन, यह सबके मन भाया है।
मृतक राष्ट्र को पुनः जिलाने, संजीवन ले आ[illegible] कर रहे
सभी चिकित्सा पद्धतियों का करना ह[illegible]
उन्हें हटाये बिना हमारे पास नहीं क[illegible] है॥
कोटि कोटि कण्ठों से निकली, आज [illegible] धारा है।
'मिले राज्य का संरक्षण, आयुर्विज्ञान [illegible] है॥'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेदोत्पत्ति (एकांकी नाटक)

लेखक—कविराज प्यारेलाल शर्मा (D. I. M., B. I. M. S. आयुर्वेदाचार्य्य, भिषक्रत्न)
चिकित्सक इन्चार्ज इन्डोर विभाग श्रीविशुद्धानन्द सरस्वती मारवाड़ी अस्पताल, कलकत्ता।

पट प्रथम

(रात्रिका प्रथम प्रहर—शरद राकामें पूर्ण प्रस्फुटित [illegible] की चारु रश्मियां हिमराज की सघन उपत्यिका में [illegible] रात्री देवी भगवती प्रकृति से अठकेलियां कर रही है। ऐसे प्रशान्त समय में "पार्श्वे हिमवतः शुभे" में तपोपवासाध्ययन ब्रह्मचर्य्य व्रतायुषदिव्यतेज युक्त अंगिरा, आत्रेय जमदग्नि, भारद्वाज वशिष्ठ विश्वामित्र नारद प्रभृति अनेकानेक महर्षि गम्भीर मुद्रा में विराजमान है।")

(पट आवर्तन (परदा उठता है) नारद उदबोधन करते हुये।

नारद—आज आप सभी को एकत्रित करने का क्या विशिष्ट प्रयोजन हैं इस पर मुझे प्रकाश डालने की आवश्यकता नहीं। आप सभी परिचित हैं कि वर्तमान में तपश्चर्य्या उपवास, अध्ययन, ब्रह्मचर्य्य व्रतयम नियमादि उतमोत्तम कार्यों में जीवन व्यतीत करने वाले पुरुषों में भी नाना प्रकारे के विघ्नों को पैदा करने वाले अनेकानेक रोग उत्पन्न हो रहे है अतः आप सभी पुण्यकर्मा महर्षियों को इस सभा का आह्वाहन इसी निमित किया गया है कि सभी संगठित हो इन व्याधियों का प्रतिकार निर्णय करें।

व्यास—महर्षि नारद ने आज के एकत्रित होने के [illegible] पर प्रकाश डाला है वस्तुतः यह विचार [illegible] कर है। निश्चय ही धर्मसाधनमें यह व्याधियां [illegible] विघ्नस्वरूप उपस्थित हो गई हैं अतः इनकी [illegible] का उपाय अवश्य सोचना चाहिये क्यों कि धर्मार्थ काममोक्षाणामोराग्यं मूलमुत्तमम्।

रोगास्तस्यापहर्त्तारः श्रेयसो जीवितस्य च ॥

भारद्वाज—"कःस्यात्तेषां शमनोपाय" यही विचारणीय है।

(उक्त कथनोपरान्त सभी ध्यानावस्थित हो गये। पट परिवर्तन हुआ और दिव्यचक्षुओं द्वारा महर्षियों को दृष्टिगत हुआ कि इस समस्या के समाधान के निमित्त देवराज श्रीइन्द्र की शरण में जाये।

अथते शरणं शक्रं ददृशु र्ध्यानचक्षुषा।
स वक्ष्यति शमोपायं यथावदमर प्रभुः ॥ (अन्तरध्वनि)

(पटपरिवर्तन :—पुन : सभा स्थल का दृश्य)

(पुन महर्षि भारद्वाज कथन करते हुये)

मुनियों—इस समस्या का समाधान देवराज इन्द्र के अतिरिक्त और कोई नहीं कर सकता अतः उन्हीं की शरण में हमें जाना चाहिये वही हमें रोग शान्ति का यथावत् उपाय बतायेंगे।

नारद—परन्तु महाभाग; देवराज इन्द्र के पास रोग शान्ति का उपाय पूछने जाय कौन ?
"कः सहस्राक्षभवनं गच्छेत्प्रष्टुं शचीपतिम्"

भारद्वाज—" अहमर्थं नियुज्येयमत्रेति" आप सभी निश्चिन्त हो मैं स्वयं इस कार्य्य के लिये जाने को प्रस्तुत हूँ।

जमदग्नि—क्योंकि महर्षि भारद्वाज ने स्वयं अग्रसर हो कर देवराज इन्द्र की शरण में जाने की इच्छा प्रगट की है अतः मेरा अभिमत है कि हम सभी एकमत हो कर इस शुभ प्रस्ताव का समर्थन करें जिसमें महर्षि भारद्वाज शीघ्र ही इन्द्रलोक को प्रस्थान कर सके।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(सब ओर से ध्वनि "साधु साधु" यवनिकायात

पट द्वितीय

इन्द्रलोक—इन्द्र भवन में देवताओं एवं ऋषियों से घिरे हुये देवराज इन्द्र कनकमणि विभूषित रत्न-गठित सिंहासन पर देवराज इन्द्र विराजमान है)

(महर्षि भारद्वाज का प्रवेश।)

भारद्वाज—महाराज की जय हो

देवराज—देव आगमन का कारण प्रतीत होता है कि आप मुनिवर का मानस कुछ कष्ट में है। इस कष्ट का कारण प्रकट करे भगवन्।

भारद्वाज—महाराज का कथन ठीक है आज आपकी शरण में मैं एक विशिष्ट प्रयोजन से आया हूं। वस्तुतः मुझे महर्षियों ने आपकी सेवा भेजा हैं। इस समय अनेकानेक व्याधियां धर्म कर्म में विघ्न स्वरूप उपस्थित हो गयी है और उनके शमन का उपाय भगवन आपको ही विदित है अतः उसी उपाय को जानने के लिये मैं प्रभु की सेवा में उपस्थि हुआ हूँ।

"व्याधयो हि समुत्पन्नाः सर्व प्राणि भयङ्कराः।
तद्ब्रूहि मे शमोपायं यथावदमरप्रभो॥

इन्द्र—महर्षि, लोक-कल्याण की इच्छा रखने वाले आपको मैं उस दिव्यशास्त्र का निर्देश करूंगा जिससे व्याधियां शान्त होंगी और प्राणिमात्र स्वास्थ्य-लाभ करेगा।

भारद्वाज—महाराज, वह गुह्य गोपनीय विशद शास्त्र क्या है?

इन्द्र—मुनिवरः

हिताहितं सुखं दुःखमायुस्तस्य हिताहितम्॥
मानं च तच्च यत्रोक्तमायुर्वेदः स उच्यते॥"

उस परम गोपनीय लोक-कल्याणकारक शास्त्र का नाम आयुर्वेद है।

भारद्वाज—प्रभु, इस पुनीत शास्त्र के अनाम पर प्रकाश डालें।

इन्द्र—मुनिश्रेष्ठ शीघ्रता न करें मैं सम्पूर्ण विशद रूप से आपको बताऊंगा। सर्व प्रथम इस शास्त्र की उत्पत्ति स्वयंभू ब्रह्मा ने की और उन्होंने एक लक्ष श्लोकों की ब्रह्मसंहिता निर्मित की। ब्रह्मा से इस ज्ञान को उनके ज्येष्ठ पुत्र दक्षप्रजापति ने इस लोकोपकारी शास्त्र का पूर्ण अध्ययन किया और इस विशद वर्णित शास्त्र को सूत्र रूप प्रदान कर दश सहस्र श्लोकों की दक्ष-संहिता निर्मित की दक्षप्रजापति से ऋषिकुमार अश्विनी कुमारों ने इस शास्त्र का पूर्ण अध्ययन किया और वे इस उभय लोकोपकारी शास्त्र में पूर्ण उद्भट एवं पारंगत हो गये। और इन्हीं अश्विनी कुमारों से मैंने इस शास्त्र को ग्रहण किया। मुनिश्रेष्ठ, मैंने जो कुछ अश्विनी कुमारों से ग्रहण किया है समग्र मैं आपको बताऊंगा। आप धैर्य्य धारण करें।

भारद्वाज—प्रभो! मैं कृतकृत्य हुआ।

पटाक्षेप

(इस प्रकार कुछ समयोपरान्त महर्षि भारद्वाजने देवराज इन्द्र से गहन एवं विशद आयुर्वेद शास्त्र का पूर्ण अवलोकन किया।)

पट तृतीय

[पट परिवर्तन]

(पर्वतराज की विशीर्ण शृङ्खलाओं की उपत्यिका में मुनि भारद्वाज के आश्रम में महर्षि-मण्डल विराजमान है। ऋषि भारद्वाज निर्देश कर रहे हैं।)

भारद्वाज—

महर्षि मण्डली,

अन्तर प्रेरणा तथा आप सभी की आज्ञा से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने इन्द्रलोक जाकर देवराज इन्द्र से उस पवित्र शास्त्र का पूर्ण अध्ययन किया और अब उस शास्त्र को जो "स्वस्थस्यौजस्कर" एवं "आर्त्तस्य रोगहर" दोनों प्रकार से स्वास्थ्यदायी है आपके समक्ष पूर्ण रूपेण यथोक्त वर्णन करूंगा और मुझे पूर्ण आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि इस शास्त्र का ज्ञान कर आप इन घोरतम व्याधियों पर जो धर्म-कर्म में बाधक हैं विजय प्राप्त कर सकेंगे। इस शास्त्र में वर्णित मार्गों का अवलम्बन कर प्राणि मात्र दीर्घजीवी एवं स्वस्थ रहेंगे। इसकी भित्ति दर्शन तथा अध्यात्म पर है अतः आप सभी के लिये यह शास्त्र सरल एवं बोधगम्य होगा। मैं क्रमानुसार इस शास्त्र का वर्णन आपके समक्ष प्रतिदिन करूंगा।

आत्रेय—मुनिश्रेष्ठ, निर्देश करें हम सभी नियमित रूप से इस शास्त्र के अध्ययनार्थ आश्रम में आयेंगे।

—: पटाक्षेप :—

(इस प्रकार महर्षि भारद्वाज से उनके प्रधान शिष्य पुनर्वसु आत्रेय ने इस शास्त्र को ग्रहण किया और तदुपरांत उन्होंने अपने शिष्यों को इस शास्त्र का उपदेश दिया)

—: पट चतुर्थ :—

(पुनः पट परिवर्तन)

(तृणाच्छादित वनस्थलीय पर महर्षि पुनर्वसु आत्रेय विराजमान हैं। पार्श्व में प्रधान शिष्य अग्निवेश, अन्य शिष्य—भेल, जतुकर्ण, पाराशर, हारीत, क्षारपाणि विराजमान हैं।)

आत्रेय—भगवन् अब हम सभी उस पवित्र शास्त्र का अध्ययनार्थ प्रस्तुत हैं जो लोकोपकारी एवं दीर्घायु प्रदान करनेवाला है।

आत्रेय—मैं तुम सभी को उस पुनीत शास्त्र आयुर्वेद का निर्देश करूंगा। इस शास्त्र के अध्ययन करने का मुख्य ध्येय प्रत्येक प्राणि के दैहिक, मानसिक और नैतिक कष्टों के निवारण के साथ साथ उनको दीर्घजीवी और स्वस्थ बनाना है। इस शास्त्र को जानने वाले को निम्न सिद्धान्त पर ही चलना होगा तभी यह शास्त्र उनके लिये सिद्ध होगा। अतः सर्व प्रथम तुम सभी को इसे प्रतिज्ञा रूप में दुहराना पड़ेगा। प्रतिज्ञा के उपरांत मैं सम्पूर्ण शास्त्र का यथावत निर्देश करूंगा। वह प्रतिज्ञा निम्न है।

"प्रणि मात्र पर दया की भावना से, स्वयं निज का कोई स्वार्थ न रखते हुए मैं इस चिकित्सा शास्त्र को अपनाता हूं।"

(सभी ने इस प्रतिज्ञा को दुहराया और महर्षि आत्रेय ने शास्त्र का निर्देश किया।)

(इस प्रकार कुछ समयोपरान्त)

(महर्षि आत्रेय अन्य ऋषि-महर्षियों सहित अपने आश्रम में स्वच्छ मृगचर्म पर विचारमान हैं) इसी समय अग्निवेश तथा अन्य शिष्य प्रवेश करते हैं। पुनर्वसु आत्रेय (अग्निवेश तथा अन्य शिष्यों से) वत्स, बैठो।

अग्निवेश—आपके निर्देश के अनुसार हम सभी ने आपके उपदेशों को लिपिबद्ध किया है।

भेल—प्रभु सर्व प्रथम अग्निवेश ने ही ग्रन्थ पूरा किया है, इसके उपरान्त हम सभी ने लिखा है।

आत्रेय—मैं तुम सभी के लेखों को सुनूंगा। प्रथम अग्निवेश अपना ग्रन्थ सुनाये।

(इस प्रकार अग्निवेश ने अग्निवेश संहिता, भेल ने भेल संहिता, जतुकर्ण ने जतुकर्ण संहिता,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हारीत ने हारीत संहिता और क्षारपाणि ने क्षारपाणि संहिता क्रमशः सुनाई)

आत्रेय—मैं तुम सभी के ग्रन्थोंको श्रवण कर अत्यधिक प्रसन्न हूं। इस प्रकार शिष्य परम्परागत सम्बन्ध से यह विद्या सभी लोकों में प्रसारित होगी और प्रत्येक लोक के प्राणि इसमें निर्दिष्ट मार्ग का अनुसरण कर पूर्ण स्वास्थ्य लाभ करेंगे। तुम सभी अपनी प्रतिज्ञा का ध्यान रखना कि लोक-सेवा ही इस शास्त्र का मुख्य ध्येय है। प्रभु तुम सभी का कल्याण करे।

उपस्थित मुनिमण्डली—साधु साधु।

(इस प्रकार हमें यह आर्ष शास्त्र आयुर्वेद प्राप्त हुआ)

—:(०):—

विषरोगी में आवश्यक उपचार

कविराज : अशोककुमार आयुर्वेदालङ्कार

विषरोगी के लिये उपचार की शीघ्रता की इतनी आवश्यकता होती है जितनी कि दूसरे केसों में नहीं होती। चिकित्सक चाहे निजी कार्य में व्यस्त हो, चाहे दूसरे रोगी देखने में—जब कभी भी उसे किसी किसी विषरोगी के लिये बुलावा आता है, उसे सब काम छोड़ कर शीघ्र ही जाना पड़ता है। उस समय मानव स्वभाव वश ही चिकित्सक को प्रायशः यह सुधि नहीं रहती कि उसे अपने साथ क्या क्या सामान ले जाना चाहिये और क्या नहीं? इसलिए प्रत्येक चिकित्सक को विष-रोगियों के लिये पृथक एक "आवश्यक उपचार पेटिका (इमर्जेंसी वाक्स) रखना चाहिये, जिसमें विषरोगियों के लिये आवश्यक उपकरणों का संग्रह हो—(१) अस्त्र-आमाशय नलिका (स्टमक ट्यूब) फनल सहित, मुखप्रेक्षक, सूचीवेध नलिका, लवणघोल उपकरण (सैलाइन इन्फ्यूजन आपरेटस), कैथेटर, चाकू, जिह्वा दाबक (टङ्गफार सैप्स), वेधक सूचिका (पंक्चर नीडल) तथा संधानक (लिमेचर) आदि।

(ख) वामक औषधियां

औषधियों की पुड़िया यथोचित मात्राओं में बांधी हुई या गोलियों के रूप में—जिंक सल्फेट ३० ग्रेन आदि। साधारण राई या एपोमार्फीन हाईड्रो क्लोराइड १/६० ग्रेन गोली अधित्वक सूचीवेध के लिये।

(ग) शामक औषधियां

क्लोरल हाईड्रेट २० ग्रेन, अहिफेन ½ ग्रेन, पोटाशियम ब्रोमाइड ६० से १२० ग्रेन मात्रा में पुड़ियों में बांध कर रखें।

(घ) उत्तेजक औषधियां

ब्राण्डी, काफी, (काफी का एकस्ट्रैक्ट, मादक औषधियों के विषों में गुदा द्वारा देने के लिये)। कैफीन-(अधस्त्वक सूचीवेध द्वारा शीघ्र कार्य के लिये लगाया जाता है।) पिटयुटरी एकस्ट्रैक्ट ([illegible] अवस्था में) तथा लवणोदक (सन्यासावस्था में) सूचीवेध द्वारा दिया जाता है।

(ङ) बहुप्रतिरोधक (एण्टिडोर मल्टियल)

चारकोल, सूक्ष्म पीसा हुआ १ छटांक पानी में घोल कर, स्टार्च आफेडाइड।

(च) स्थिर प्रतिरोधक (स्पैसिफिक एण्टिडोट)

पोटाशियम परमैंगनेट १० ग्रेन १ पाइण्ट पानी में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अफीम तथा मर्फिया के विष में आमाशय प्रक्षालन के लिये।

डायलाइस्ड लोह—संखिया विष में।

गुरु मैग्नेशियम आकसाइड—अम्लविषों में।

सोडियम तथा मैग्नेशियम सल्फेट—१२० ग्रेन की मात्रा में संखिया तथा बेरियम की विषों के लिये।

टैनिक एसिड—क्षारजन्य विषों में ६० ग्रेन की मात्रा।

क्लोरल हाईड्रेट—(शर्बत या गोलियां) २०-३० ग्रेन की मात्रा में स्ट्रिकनीन विष में

हाईड्रोजन पर आक्साइड—प्रस्फुरक विष में।

क्लोरोफार्म (बन्द ट्यूबों में) आक्षेपक रोकने के लिये सोडियम आयोसल्फेट तथा बूट्स कम्पनी का B. A. L. या शोडियम एनिटोक्स—धातुजन्य विषों के लिए।

(छ) अधस्त्वक सूचीवेध

इसके लिये साधारणतः गोलियां प्रयुक्त की जाती हैं। गोलियों से तत्काल सूचीवेध तैयार कर सकते हैं। एपोमार्फीन हाईड्रोक्लोराइड १/१० ग्रेन वामक रूप में तथा १/१०० ग्रेन अतिविषा, अहिफेन आदि विषों के लिए।

मार्फीन सल्फेट—१/६ से १/४ ग्रेन शामक डिजिटैलिस १/१०० ग्रेन, स्ट्रोफैन्थस १/१८० ग्रेन, स्ट्रिकनीन सल्फेट १/६ ग्रेन तक—श्वास प्रश्वास की गति शिथिलता में कैफीन सोडा बैंजोएट—२ ग्रेन।

पिच्यूटरी एक्सस्ट्रेक्ट—५ यूनिट की शीशीयों में लवणोदक आदि सूचीवेध।

(ज) वस्त्र आदि

पट्टियां, एण्टिसेप्टिक के साधन, मूत्र परीक्षण यन्त्र कण्डम तथा अन्य साधन।

चिकित्सक को उपरोक्त इमर्जेंसी बाक्स के साथ बुलावा आते ही शीघ्र चल देना चाहिये। आलस्य वा प्रमाद में एक क्षण भी गंवाना नहीं चाहिये। यह न भूलिये कि आपका एक क्षण का भी आलस्य दूसरे रोगियों के लिये जीवन-मरण का सवाल बन सकता है।

रोगी-गृह पहुंच कर शीघ्रता से विष के कारण को जानने का प्रयत्न कीजिये अगर आप कुछ भी निश्चय न कर पावें तो भी आमाशय का प्रक्षालन तो कर ही देना चाहिये—अगर रोगी मूर्छित हो तो कटिसूचीवेध-द्वारा रस निकाल कर उसकी परीक्षा कर सकते हैं।

अगर कुछ सामान आप के बाक्स में कम हो तो शीघ्रता से उसे मंगवा लीजिये। अगर कमरे में रोगी के परिचितों की भीड़ लगी है तो आप उन्हें कुछ कुछ काम देकर हटा सकते हैं।

रोगी के मल-मूत्र तथा वमन द्रव्य को इकट्ठा करके सीलबन्द कर लें तथा अगर रोगी के आस पास कोई बोतल मिले तो वह भी सम्भाल लीजिये। चाहे वह खाली भी हो।

जितना भी शीघ्र हो सके रोगी के विष के निर्णय का प्रयत्न करना चाहिये—इसमें व्यर्थ में एक मिनट भी गंवाना नहीं चाहिये। लेकिन इसके लिये अधीर होने की आवश्यकता नहीं है। बिलकुल शांतचित्त से निर्णय करना चाहिये। दूसरी व्याधियों की तरह रोगी के मां-बाप को गलत आश्वासन नहीं देना चाहिये। अगर दुर्भाग्यवश आपके प्रयत्न करने पर भी रोगी का जीवन नहीं बच सका तो चिकित्सक की प्रतिष्ठाको बड़ा धक्का लगने की सम्भावना रहती है। इसलिये अगर आपको विष-निर्णय में जरा सा भी शक है तो आप किसी दूसरे डाक्टर को बुला कर उसकी सलाह ले सकते हैं।

साधारण विष-निर्णय के पश्चात् चिकित्सक के लिये निम्न सिद्धान्तों का पालन करना चाहिये।

(१) शरीर से अपचित मल का हटाना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) एण्टिडोट्स का प्रयोग।

(३) संस्थान में पचित मल का बहिनिष्कासन।

(४) अन्य लक्षणों की चिकित्सा।

(क) अपचित मल का निष्कासन

अगर कोई विष किसी जहरीले कीड़े, बिच्छू आदि के काटने के क्षत द्वारा शरीर में फैला है तो तत्काल दष्टस्थान से ऊपर मजबूत कपड़े से बांध कर क्षत में चाकू द्वारा चीरा दिया जाता है।

अगर श्वास संस्थान द्वारा कोई विष सूंघा गया है तो शुद्ध ओषजन सुंघानी चाहिये।

यदि कोई विष आमाशय में पहुंच गया है तो आमाशय ट्यूब द्वारा उसको साफ करना चाहिये। स्टमक ट्यूब को खौलते गर्म पानी में पहिले कृमिहीन करके किसी स्निग्ध पदार्थ से स्निग्ध करना चाहिये। फिर जिह्वा को दबा कर गले की दीवार के सहारे अमाशय नालिका में प्रवेश कराना चाहिये। इसे तब तक नीचे जाने दीजिये जब तक कि ट्यूब पर चिन्हित स्थान सामने न आ जाये। यह इस बात का प्रतीक है कि ट्यूब आमाशय तक पहुंच गई है। तब फनल को रोगी के सिर से ऊपर उठा कर उसमें शोधक द्रव या गर्मजल डाल दीजिये जिसकी मात्रा करीब एक पाइण्ट हो—जब फनल बिलकुल खाली हो जाए तो इस ट्यूब को धीरे से आमाशय के लेवल से नीचे ले जाइये। शीघ्र ही आमाशय से विषद्रव उस ट्यूब से फनल द्वारा बाहिर निकल आयेगा। इसे किसी बर्तन में सुरक्षित ले लीजिये। इसी क्रिया को एक दो बार करने से सब विष-द्रव्य बाहिर निकल जाएगा। गर्म पानीके स्थान पर उपयुक्त एण्टिडोरका प्रयोग और भी अच्छा रहता है। अगर आमाशय में विष के बड़े बड़े टुकड़े हैं तो ट्यूब का प्रयोग करने से पूर्व किसी वामक औषधि का प्रयोग बहुत अच्छा रहता है।

अगर ट्यूब का प्रयोग करने में कठिनाई हो तो मुख खोलने के लिये मौथभाग (मुख विस्तारक) का प्रयोग अच्छा रहता है।

अर्धमूर्च्छित या मूर्च्छित रोगी में आमाशय प्रक्षालन बड़ा कठिन तथा खतरनाक होता है, क्योंकि तब विष पदार्थ के आमाशय से ट्यूब में आने के बाद श्वासनलिका में जाने का खतरा रहता है। जिससे श्वासनालिका में अवरोध से मृत्यु हो जाती है। इसलिए ऐसे केसों में यह प्रयत्न किया जाता है कि मुख तथा मुखगह्वर—कण्ठ नालिका (.Larynx) से नीची रहे। इसके लिये कंधों के अन्दर छोटे-छोटे तकिये रख कर सिर को दाहिनी ओर पीछे की तरफ घुमा दिया जाना चाहिये या बिस्तर के सिरे पर सिर तथा कन्धों को नीचे की ओर लटका दिया जाना चाहिये।

स्टमकट्यूब—कार्बोलिक एसिड को छोड़ कर अम्ल (एसिड) जन्य अन्य किसी केस में प्रविष्ट नहीं करनी चाहिये, क्योंकि तब आमाशय का भोजन (Oesophagus) के फटने का डर रहता है। क्षोभक विषों में भी स्टमक ट्यूब सावधानी से डालनी चाहिये।

जब स्टमक ट्यूब प्राप्त न हो सके तथा रोगी चेतनावस्था में हो और स्टमक ट्यूब से अमाशय न धुलवाना चाहे तो वामक औषधियों तथा अन्य विधियों का प्रयोग करना चाहिये। इसके लिये उंगलियों से तालू दबाने या दातून, पंख आदि से भी यह कार्य हो सकता है। निम्न वामक औषधियों का भी प्रयोग हो सकता है।

(१) काफी गर्म पानी पीने से।

(२) चम्मच भर पिसी हुई राई या २ चम्मच नमक एक पाइण्ट भर जल में मिला कर पीने से।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) ½ ड्राम जिंक सल्फेट गर्म पानी में मिला कर १५-१५ मिनट बाद से।

(४) इपिकाक पाउडर २० से ३० ग्रेन या टिंचर इपिकाक २ से ६ ड्राम लेने से। बच्चोंको आधा चम्मच से दो चम्मच शर्बत इपिकाक दे सकते हैं।

(५) १५ से ३० ग्रेन अमोनिया कार्ब पानी में घोल कर पीने से।

(६) ५ से १० ग्रेन कापर सल्फेट (नीला तोतिया) पानी में घोल कर—परन्तु इसे सिर्फ प्रस्फुरक (पास्फोरस) के विष में ही देना चाहिये।

(७) ¼ ग्रेन एपोमार्फीन हाइड्रोक्लोराइड का अधस्त्वक सूचीवेध देने से। इससे २-४ मिनट में ही उल्टी होने लगती है जो कि बहुत देर तक रहती है—इसलिये इसे बहुत हीं सावधानी से देना चाहिये।

(ख) प्रतिशोधक द्रव्यों का प्रयोग

यह उन द्रव्यों को कहते हैं जो कि विषों क्रियाओं को उदासीन, शिथिल या क्रियाहीन कर देते हैं। उनके मेकानिकल, रासायनिक तथा शारीरिक (Physiological) ये तीन भेद हैं।

मेकानिकल

ये वे द्रव्य हैं जो मेकेनिकल क्रिया से विषों को निर्वीर्य कर देते हैं। उदाहरणत :—सूक्ष्म पीसा चारकोल मेकानिकल क्रिया से अपने सूक्ष्म छिद्रों द्वारा खनिज विषों को चूस लेता है वसा, तैल तथा अण्डे आमाशय की आन्तरिक झिल्ली पर एक ऐसा आवरण पैदा कर देते हैं कि उन पर विषों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

रासायनिक

ये विषों के साथ मिल कर हानिरहित अघुलनशील योग बना लेते है जिससे विषों का कुछ भी असर नहीं रहता जैसे क्षार के निये अम्ल, खनिज द्रव्यों के लिए मैग्नेशियम् तथा अन्य द्रव्यों के क्षारीय कार्बोनेट, आकसालिक एसिड के लिए चूना, सीसक के लिए सोडसल्म आदि। इन द्रव्यों का चुनाव इस प्रकार करना चाहिये कि अगर गलती से प्रतिरोधक द्रव्य अधिक भी दे दिए जायें तो कुछ नुकसान न पहुंचायें जैसे दाहकक्षार में नीम्बू रस या सिरका दे सकते हैं लेकिन कोई अन्य उद्रहरिकाम्ल या गंधकाम्ल नहीं दे सकते जो अधिक भाग में जाकर खुद आमाशय की दीवार को जला दे।

परीक्षणों द्वारा देखा गया है कि एड्रिनलिन के प्रयोग से स्ट्रिकनीन, साईनाईड तथा एकोनाइट आदि विषों का असर जल्दी से नहीं होने पाता।

सब से उपयोगी रासायनिक द्रव्य पोटाशियम परमैंगनेट है। एक पाईन्ट पानी में १० से १५ ग्रेन पोटाशियम परमेगनेट मिलाकर अहिफेन विष में दिया जा सकता है। इसे वमन होने से पूर्व या बाद में इच्छित मात्रा में पीने को दिया जा सकता है या स्टमकटयूब द्वारा आमाशय प्रक्षालन भी किया जा सकता है परन्तु इससे रासायनिक विश्लेषक को बाद में विष परीक्षण करने में कठिनाई हो सकती है जो कि कानूनी दृष्टि से वैध नहीं होता इसलिए इसका प्रयोग तब करना चाहिये जबकि हम पोलिस की जांच के लिए विष द्रव्य का नमूना इकट्ठा कर ले।

अगर हमें विष निश्चय न हो पाया हमें शक हो कि एक से अधिक विषें दी गई है तो निम्नयोग देने से बहुत लाभ होता है।

पीसा हुआ चारकोला २ भाग
टैनिक एसिड १ भाग
मैग्नेशियम आकसाइड १ भाग

इस चूर्ण को पानी घोल लीजिये और थोड़ी २ देर बाद देते रहें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिजियोलिजिकल (शारीरिक) ये वे द्रव्य हैं जो शरीरके तंतुओं पर विषके बिलकुल भिन्न लक्षण पैदा करते हैं। वास्तविक द्रव्य वही हैं जो विष के प्रत्येक बुरे परिणामको हटाता है न कि कुछ भागको या देने पर अन्य कोई लक्षण पैदा करता है जैसे कि एट्रोपीन जो कि कमशः मार्फीया (अफीम) के विष में दिया जाता है शरीर की संज्ञाकारी तथा क्रियाकारी नसों का क्रिया हीन कर देती है जिससे मृत्यु का डर रहता है इसलिए इसे देते हुए सावधानी रखनी चाहिये। एट्रोपीन तथा फिसोस्टिगमीन यही दो शारीरिक प्रतिशोधक द्रव्य है। इनमें से एट्रोपीन हृदय की गति बढ़ा देता है और संज्ञावाहिनियों को क्रियाहीन कर देता है जब कि फिसोस्टिगमीन हृदय की गति क्षीण करता है और संज्ञावाहिनियों को उत्तेजित करता है। इसी तरह ये दोनों शरीरमें विभिन्न क्रियाएँ करते हैं।

इनके अतिरिक्त पाइलोकार्पीन, स्ट्रिकनीन पोटाशियम ब्रोमाइड, क्लोरल हाईड्रेट, डिजिटैलिस क्लोरोफार्म, एकाइल नाईट्रेड आदि दूसरे द्रव्य भी हैं।

(ग) पचित मल का निष्कासन

ये शरीर के मलद्वारों से उष्णस्नान मूत्रल तथा स्वेदक औषधियों द्वारा निकालते हैं परन्तु यह ध्यान रखना चाहिये कि कही ये विषों के विरोधी न हों।

(घ) अन्य लक्षणों की चिकित्सा

यद्यपि चिकित्सक का खास ध्यान विषों को हटाने में रहता है फिर भी तज्जन्य लक्षणों को भी हटाना चाहिये तथा अगर आमाशयश्लेष्मकला प्रदाह से पेट में दर्द होता है तो किसी वेदना शामक औषधि को देना चाहिये या तीव्र वेदना हो तो मार्फिया का अधरत्वक सूचीवेध दे दें।

मूर्छा तथा शीतांग में उष्णता देनी चाहिये। गर्मपानी की बोतलों का सेक, गर्म कपड़े से लपेटना कमरे में गर्मी देना आदि या उत्तेजक औषधियां स्ट्रिकनोन, डिजिटैलिस, कैफीन आदि के सूचीवेध देने चाहिये।

अगर अधिक वमन वा अतिसार से घबड़ाहट बढ़ जाए तो १ पाईन्ट पानी में ४० ग्रेन साधारण नमक वा ग्लुकोज मिला कर थोड़ा २ देर बाद पीने को देते रहें। अगर पानी न पचे तो गुदा द्वारा नमक जल की बस्ती देनी चाहिये। अधिक शीतांग में शिरा द्वारा लवणोदक का सूचीवेध देना चाहिये।

श्वास संस्थान की क्षीणता में एट्रोपीन या स्ट्रिकनीन का इन्जेक्शन करना चाहिये या कृत्रिम श्वास संचार तथा औषजन को सुघांना चाहिये।

मूर्छा में $\frac{1}{6}$ ग्रेन स्टिकनीन का सूचीवेध दे दे या ५ से १५ सीसी २५% कोरामीन का शिरा सूचीवेध, कटि सूचीवेध या अधस्त्वक् सूचीवेध आवश्यकतानुसार दें। अगर मूर्छा लम्बी हो तो लवणोदक का शिरा सूचीवेध बून्द २ कर के देना चाहिये।

आक्षेप क्लोरोफार्म बारबेटयूरिक ग्रुप की औषधियों के प्रयोग से सम्भाले जा सकते हैं।

विषों के निर्वीर्य करने के बाद भी बचे हुए शेष लक्षणों का उपचार अवश्य करना चाहिये जैसे संखिया के बाद नाड़ी शोथ या दाहक विषों के क्षत आदि।

रोगी के तात्कालिक उपचार के बाद रोगी की मानसिक चिकित्सा आवश्यक हो जाती है क्योंकि अधिकतर जो विष रोग के केस पाए जाते है उन के से ९५% आत्महत्या प्रेरित होते है। आत्महत्या का यह विचार साधारण घरेलू झगड़े जीवन के संघर्ष में असफलता, प्रेम या रोमांस में भयंकर मानसिक चोट, बेकारी तथा अर्थाभाव की चिन्ता से उत्पन्न होते हैं। इसलिए एकबार विष खाकर आत्महत्या से बच जाने पर भी व्यक्ति दुबारा उस राह पर चल सकते हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसलिए सुयोग्य चिकित्सक का यह आवश्यक कर्तव्य है कि वो विष रोगी के मानसिक संतुलन को व्यवस्थित रखने में अपने स्नेह तथा सहानुभूति युक्त व्यवहार और उपदेश से आवश्यक सहायता पहुंचाये क्योंकि मानव जीवन की रक्षा सुयोग्य वैद्य का परम कर्तव्य है। ऐसे अवसरों पर ही रोगी के हृदय पर जो विचार अंकित हो जाते हैं वे उसके निराश हृदय में संवल का काम देते हैं।

ज्वर-बुखार-हुम्मा Fever-Pyrexia

पण्डित गंगाचरण शर्म्मा, आयुर्वेदाचार्य्य : "वैद्य-मार्त्तण्ड" भिवानी

शरीरके तापका स्वाभाविक परिमाण 98.4 Farm heat से बढ़ जाना ज्वर कहलाता है।

ज्वरके सामान्य लक्षण—ज्वर उस अस्वाभाविक तापवृद्धिको कहते हैं जो दोष वैषम्यसे आमाशय में उत्पन्न हुए विषाक्त परमाणुओंसे या किसी उपसर्गज व्याधिमें उपसर्गके शरीर या रक्तमें मिश्रित हो जानेसे होती है। तापका स्वाभाविक परिमाणसे बढ़ जाना, धमनी और श्वास गतिका तीव्र होना ज्वरके सामान्य लक्षण हैं।

ज्वरका परिणाम—शरीरान्तर्गत अस्वाभाविक रासायनिक परिवर्तनोंके कारण शरीरका क्षय होना। नवीन धातु निर्माण व जीर्ण अर्थात् मलमूत्रादि द्रव्योंके निर्हरण कार्यमें वाधा उपस्थित होजानेसे अनेक प्रकार के अन्यान्य रोगोंका उत्पन्न होना।

प्राचीन यूनानी हकीम और योरोपीय डाक्टर ज्वर को रोग या रोगका लक्षण मानते थे मगर आयुर्वेद शास्त्रमें ज्वरको शरीरान्तर्गत उपसर्ग जनित विष और दोष वैषम्य जनित विष का नाशक माना है। दोषोंका परिपाक हो जानेसे ज्वर स्वयमेव शान्त हो जाता है और यदि कीटाणु विष जनित ज्वर हो तो कीटाणु जन्य विषका भी ज्वरके वेगसे शमन होता है। यही सिद्धान्त वर्तमान कालीन विशेषज्ञों ने स्थिर किया है। जब किसी उपसर्गज व्याधिके कीटाणु शरीर या रक्त में प्रविष्ट होते हैं तो शरीरस्थ रोग प्रतिरोधिनी शक्ति (vital Force) उनके विनाशके लिये जो प्रयत्न करती है उनमें एक प्रयत्न ज्वर भी है।

श्वसनक सन्निपात ज्वर फुफ्फुसावरणशोथ आदि में रोगका वेग शान्त करनेके लिये ज्वरकी तीव्रता आवश्यक है ताकि दोषजन्य विष या उपसर्गजन्य विषका शीघ्र निराकरण होकर रोगी स्वस्थ हो इसी लिये इस प्रकारके रोगोंमें ज्वरको आवश्यक ज्वर अर्थात लाज़िमी ज्वर भी कहते हैं।

उत्ताप—उत्ताप या हरारत यह एक ज्वरसे भिन्न वस्तु है। यूनानके हकीम उत्तापके कई भेद मानते थे मगर हमें यहां वे अभीष्ट नही हैं। हमतो शारीरिक उत्तापको ही ग्रहण करते हैं जिसे यूनानी हिकमतमें हरारत ग़रीजी और अंग्रेजीमें (anenal heat) कहते हैं जो शरीरमें जीवन रक्षा करती तथा अनेक प्रकारके उपसर्ग व उपसर्गजन्य विषोंको नष्ट करने एवं उन्हें शरीरसे वाहिर निकालनेमें सहायक होती है।

तापकी उत्पति—हमारे शरीरमें प्रतिक्षण रासायनिक प्रतिक्रियाएं होती रहती हैं जिनके फलस्वरुप शरीरमें उत्तापकी उत्पति होती रहती है। उत्ताप यद्यपि श्वासयंत्र हृदय, यकृत, वृक्क, आमाशय व रक्त संचारादि क्रियाओं के रासायनिक परिवर्तनसे उत्पन्न होता है मगर सबसे अधिक उत्तापोत्पादक मांस पेशियां हैं कारण सर्व शरीरकी क्रियाएं प्रायः मांस पेशियों पर ही निर्भर हैं क्योंकि प्रत्येक कार्यमें मांस पेशियोंका संकोच प्रसरण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनिवार्य है अतः तापोत्पादनका कार्य मांस पेशियों पर ही निर्भर है ऐसा मानना भी कोई अनुचित न होगा।

उत्तापका निर्हरण—अखराज़ हरारत

ऊपर जो तापोत्पत्तिका वर्णन किया गया है उसके अनुसार यदि तापोत्पत्ति तो होती रहे और उत्ताप का निष्कासन न हो तो शरीर जल भुन कर भस्म हो जाये इसी लिये प्रकृति ने तापोत्पति के साथ उत्तापको बाहिर निकालनेका काम सम्भाल रक्खा है जिससे शारीरिक उत्ताप अपनी नियमित अवधिसे बढ़कर मनुष्यों को रोगी न बना सके। शारीरिक उत्ताप प्रायः त्वचा के द्वारा हमारे शरीरसे निकलता रहता है और वहाँसे निकलकर सूर्य रश्मियोंकी भाँति अनंतमें फैलता रहता है। इसक्रिया को अंग्रेजीमें (Radiation) कहते हैं दूसरे जो शीतल पदार्थ हमारे शरीरसे स्पर्श करते हैं वे भी उत्तापका आकर्षण करते हैं यह प्रवाहक क्रिया है जिसे अंग्रेजीमें Conduction रहते है तीसरे स्वेद श्वासक्रिया, और मूत्र तथा मल के साथ जो शरीर का उत्ताप निकलता है इसे एकेपेरेशन कहते हैं यही कारण है कि हमारे शरीरका उत्ताप प्रतिक्षण सभानावस्थामें रहता है।

संसारमे दो प्रकारके पाशवीय शरीरधारी जीव हैं। एक शीतल रक्त वाले Cold blooded और दूसरे ऊष्णरक्त वाले Hot blooded शीतलरक्त वालोंमें सर्प, छिपकली, मेंढक और मछली आदि हैं जिनके शरीरका उत्ताप उनसे सम्बन्धित जल या वायुके समान होता है यदि उक्त जन्तुओंसे सम्बन्धित जल या वायु ऊष्ण होंगे तो उनके शरीरका उत्ताप भी ऊष्ण वायु या जलके उत्तापके अनुसार होगा और यदि उनसे सम्बन्धित जल या वायु का उत्ताप घट जावेगा तो उनके शरीरका उत्ताप भी घट जावेगा मगर ऊष्ण रक्तवाले पाशविक शरीर धारियोंमें (जिनमें मनुष्य भी सम्मिलित है) यह बात नहीं है प्रकृतिने उन्हें ऐसी शक्ति दी है कि अत्यन्त गर्मी या अत्यन्य सर्दी कैसा भी मौसिम हो उन के शरीरका तापमान सदा ९४.४ फार्नहाईट या ३७ दर्जा सेन्टीग्रेड ही रहेगा।

जब हम परिश्रम करते हैं दोड़ धूप करते हैं तो श्वास की गति बढ़ जाती है। इसके साथ साथ ही नाड़ी की गति और उत्ताप भी बढ़ जावे हैं। उस समय यदि थर्मामीटर से टेम्परेचर को जाँच की जावे तो सामान्य अवस्था से कई गुना बढ़ा हुआ उत्ताप अर्थात् टेम्परेचर मिलेगा मगर उसे ज्वर नहीं कहा जा सकता। उस उत्ताप का निर्हरण कार्य भी प्रकृति साथ साथ ही पसीने द्वारा करती जाती है। यदि पसीना न आये तो ऐसी अवस्था में श्वास की गति तीव्र होने से श्वास मार्ग के द्वारा कार्बन शीघ्रता पूर्वक बाहिर निकलता रहता है उससे भी उत्ताप का निर्हरण होता रहता है। हां यदि दोनों क्रियायें ही सुस्ती से होंगी तो उत्ताप की उत्पत्ति के साथ साथ उसके निर्हरण कार्य अर्थात् अखराज़ की समानता न होने से तापमान धीरे धीरे घटेगा और फिर कुछ विश्राम करने के बाद उत्ताप प्रकृतिस्थ होगा मगर यह ज्वर नहीं कहलाएगा।

वास्तव में उत्ताप की उत्पत्ति, निर्हरण और उत्ताप की प्रकृतिस्थ अवस्था मस्तिष्क स्थित नाड़ी मण्डल के भी आधीन हैं। जो केन्द्र उत्ताप की उत्पत्ति करता है उसे थर्मोजेनेटिक या मौतिल्दे हरारत कहते हैं जो मस्तिष्क में स्थित है और जिस केन्द्र से उत्ताप का निर्हरण होता है वह पश्चात् कपाल के उस भाग में स्थित है जहाँ सुषुम्ना आकर मिलती हैं। जिस स्थान को अंग्रेजी में Medulla कहते हैं तथा जो केन्द्र उत्ताप को स्वाभाविक अवस्था में स्थित रखता है वह मस्तिष्क के वाह्य भाग Casticle .partion में स्थित है। जब इन मस्तिष्कीय केन्द्रों के कार्य में किसी कारण से वैपरीत्य हो जाता है तो शारीरिक उत्ताप भी अपनी सीमा उल्लंघन कर जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शारीरिक उत्ताप की वृद्धि दो प्रकार से होती है। यथा—उत्ताप की उत्पत्ति तो अधिक हो मगर उसका निष्कासन कम हो दूसरे उत्पत्ति तो नियमित रूप से हो मगर उस उत्ताप का निर्हरण कार्य धीरे धीरे हो।

ज्वर के कारण—पहिले बताया जा चुका है कि औपसर्गिक कीटाणु और दोष वैषम्य जनित विष ही ज्वरोंके कारण होते हैं तथापि इसके अतिरिक्त जो कुछेक अन्य भी कारण हैं। उनका वर्णन नीचे दिया जाता है।

(१) प्रायः आभ्यन्तरीय रक्त स्राव के परिणाम स्वरूप शिराओं और केशिकाओं से निकले हुए रक्त के दूषित हो जाने से।

(२) किसी आभ्यन्तरीय अंग से तरल का रिस रिस कर इकट्ठा हो जाना—इस प्रकार की अवस्था किसी अस्थिका भग्न होने पर प्रायः हो जाया करती है।

(३) किसी आभ्यंतरीय अंग में शोथ हो जाना।

(४) किसी उत्तापोत्पादक औषधि का सेवन यथा कुचिला आदि।

(५) तीव्र धूप में फिरना या कसरत करना।

ज्वरके परिणाम स्वरूप शरीर के विविध अंगों की विकृति।

ज्वर की अवस्था में अस्वाभाविक रासायनिक परिवर्त्तनों के कारण धात्वंश अधिक परिमाण में स्रवित होते हैं और मल मूत्र व स्वेद आदि न्यून परिमाण में शरीर से बाहर निकलते हैं इसलिये शरीर के भिन्न भिन्न भागों पर ज्वर का निम्नलिखित प्रभाव पड़ता है:—

शारीरिक उत्ताप—ज्वर से शारीरिक उत्ताप बढ़ जाता है और इसके साथ साथ नाड़ी और श्वास की गति भी बढ़ जाती है। स्वस्थावस्था में शरीर का उत्ताप ९८.४ फार्न हाईट होता है और जब यह ९९ से १०१ तक बढ़ जाता है तो इसे सामान्यज्वर और जब १०१ से १०३ तक बढ़ जाता है तब तीव्र ज्वर तथा १०३ से १०६ तक अतितीव्रज्वर और १०६ से ऊपर सांघातिकज्वर अर्थात् Hyper pyrexia कहते हैं।

त्वचा—साधारणतया ज्वर में त्वचा गर्म और शुष्क रहती है। मगर कतिपय ज्वर जैसे आमवात ज्वर Rheumedic Fever में स्वेद अधिक आता है तथा किसी किसी ज्वर में सुर्ख दाने या फुंसियां या मण्डल निकल आते हैं।

हृदय—रक्त में ज्वर के कारण गर्मी और जोश होता है। जिससे हृदयस्पन्दन बढ़ जाता है तथा किसी किसी ज्वर की अन्तिम अवस्था में हृदय की रचना में विकृति होकर रक्त में स्कन्दित रक्त के टुकड़े घूमने लगते हैं।

नाड़ी मण्डल—ज्वर में नाड़ी मण्डल विकृत हो जाने के कारण अंग मर्द, मांस पेशियों में वेदना, कम्प, अनिद्रा, आक्षेप, शिरः शूल, बेचैनी, प्रलाप आदि लक्षणों के अतिरिक्त किसी किसी ज्वर की अन्तिम अवस्था में धमनी अति दुर्बल चलने लगती और तन्द्रा आदि लक्षण हो जाते है।

पाचन क्रिया—जिह्वा शुष्क, मुख शुष्क होठों पर पपड़ी, तृषाधिक्य, अंतड़ियों और आमाशय में तरल न रहने के कारण अग्निमान्द्य आनाह तथा कभी कभी अंतड़ियों और आमाशय में औपसर्गिक कीटाणु जन्य विष या विकृत दोषों के प्रभाव से प्रदाह होकर उत्क्लेद वमन और अतिसार भी हो जाया करता है। कतिपय ज्वरों में यकृत और प्लीहा बढ़ जाने तथा अपनी स्वाभाविक क्रिया उचित रूप से वहन नहीं करते हैं।

वृक्क—ज्वर की अवस्था में वृक्कोंकी क्रिया स्वाभाविक रूप में न रहने के कारण मूत्र की मात्रा घट जाती तथा मूत्र कई रंग का दुर्गन्ध युक्त आता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूत्र में यूरिया बढ़ जाता है। अत्यन्त तीव्र ज्वर अर्थात् सान्निपातिक अवस्था वाले ज्वरों में बेहोशी हो जाने से मूत्र बन्द भी हो जाया करता है तथा कभी कभी वृक्कों की अकर्मण्यता से मूत्र का उत्पादन ही नहीं होने पाता है।

जननेन्द्रिय—तीव्र ज्वरों में पुरुषों की गुप्तेन्द्रिय सिकुड़ कर छोटी हो जाती तथा स्त्रियों के गर्भाशय से रक्तस्राव होने लग जाया करता है, यही नहीं बल्कि गर्भवती स्त्रियोंके गर्भपात की सम्भावना हो जाती और कभी कभी गर्भपात भी हो जाया करते हैं।

ज्वर की अवस्थाएँ

जिस समयसे दोषसंचय होने लगते हैं या कीटाणुओं का विष शरीरमें प्रविष्ट होकर रोगोत्पादन की क्षमता प्राप्त करने के लिये बढ़ना प्रारम्भ होता है तबसे लेकर ज्वर मुक्ति और ज्वरमुक्तावस्था की दुर्बलता तक ज्वर की अवस्थाएं ६ भागोंमें विभक्त की जा सकती हैं :—

१—दोषसञ्चय काल या कीटाणुविष संचयकाल अर्थात् ज्वर का गुप्त रूपसे शरीरके भीतर रहना इसे अंग्रेजी में Stage of latency और period of Ineulation कहते हैं।

२—दोषप्रकोपकाल या कीटाणुजन्यविषका रोगोत्पादन क्षमता काल अर्थात् हमलाएमर्ज़का जमाना या Stage of invasion.

३—ज्वरकी वृद्धिका काल Stage of advence or stage of on set.

४—ज्वरका शिखरमें चढ़ना या जमानाए इन्तहाय मर्ज़ अथात् Eastigium

५—ज्वर वेग का शिथिल होना—ज्वर के घटने का समय या ज्वरके ढलने का समय stage of Defewescence

६—ज्वरके बाद की दुर्बलता, Stage of Conualescence इस अवस्थामें ज्वर तो चला जाता है मगर दुर्बलता छोड़ जाता है जिसकी भी बड़ी होशियारीसे चिकित्सा करने की आवश्यकता है। इस अवस्थामें रोगी का तापमान ९६ या ९७ रहता है।

हमारा प्राचीन नेत्र विज्ञान

लेखक—डा० आर० एस० अग्रवाल

सहायक : कविराज ओमप्रकाश वैद्यवाचस्पति

ऐसा प्रायः कहा जाता है कि भारतीय चिकित्सा विज्ञानमें आरोग्यता प्रदान करने की पर्याप्त शक्ति है, परन्तु इसके विपरीत कई आलोचक यह भी कहते नजर आते हैं, कि इससे अच्छे परिणाम प्राप्त नहीं होते। जिस विज्ञानकी आधार शिला अपने ठोस सिद्धान्तों पर आधारित हो, निश्चय ही उसे मानवकी सभी आधि व्याधियों के नष्ट करनेमें समर्थ होना चाहिए। यह माना जासकता है भारतीय चिकित्सा शास्त्रने भूतकालमें अत्यन्त सफलता प्राप्त की है, किन्तु इसे, निरन्तर उन्नविशील, बुद्धिवादी युगकी नवीन जांचमें भी पूरा उतरना पड़ेगा। आयुर्वेदकी अवनति के बहुत से कारणोंमें से एक कारण यह भी है कि आयुर्वेदके आचार्योंने समयकी बदलती हुई गतिके साथ अपने आपको नहीं बदला।

पाश्चात्य मस्तिष्कमें यह बात बैठ चुकी है कि भारतीय चिकित्सा शास्त्रमें जीवन आयु और त्रिदोषके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिद्धान्त इतने गहन और आध्यात्मिक हैं कि आम मनुष्य की समझमें नहीं आते। उनके विचारमें यह सिद्धान्त उत्कृष्ट होते हुए भी वैज्ञानिक नहीं है।

किन्तु यह एक गलत धारणा है। भारत पश्चिमसे सदैव महान् रहा है किन्तु एक भिन्न ही दृष्टिकणों से। इसका औषधि विज्ञान अपनी ही मौलिक और अद्वितीय खोजका परिणाम है। यही कारण है कि यह समझनेमें कुछ कठिन है और लोगों को इसके विषयमें भ्रान्ति भी हो जाती है।

इस लेखमें मैं भारतीय चिकित्सा शास्त्रके अनुसार जीवनकी विस्तृत व्याख्या करने का प्रयत्न करूंगा और मुझे आशा है कि इससे त्रिदोष सिद्धान्तको भी समझने में सहायता मिलेगी।

आयुर्वेद अथवा भारतीय चिकित्सा शास्त्र क्या है ?

आयुर्वेदका शब्दार्थ है आयु का ज्ञान, अर्थात् जिससे स्वस्थ पुरुष की स्वास्थ्य रक्षा और रोगोंसे बचने के उपाय तथा रोग हो जाने पर उनको शमन करने तथा मृत्युसे बचने के विविध उपाय बतलाये हों उस शास्त्रका नाम आयुर्वेद है। पुरातनकाल वैदिकयुगमें, जब आश्रमोंमें रहकर तपस्यामें जीवन बितानेवाले ऋषियों को रोगोंने आ दबाया, तो उन्होंने तत्कालीन ऋषियों की एक कान्फ्रेन्स बुलवाई। उसमें यह बिचार किया गया कि इन रोगों को शान्त करनेके लिए उपाय ढूंढ़ने चाहिये। महर्षि भारद्वाज जो कि उस समयके ऋषियोंमें सबसे अधिक बुद्धिमान् और विद्वान् थे, वे परम साधना और गम्भीर समाधि द्वारा, इस सच्चे ज्ञानको प्राप्त करनेके लिए देवराज इन्द्रके पास प्रस्थान किया। तथा अपनी कुशाग्र बुद्धि द्वारा अल्प समयमें ही जीवनके मूल भूत सिद्धान्तों, स्वस्थावस्थाके चिन्हों और रुग्णावस्थाके लक्षणोंका ज्ञान प्राप्त किया और पुनः प्राणिमात्रके लाभके लिए अपने ६ शिष्योंको वह सभी ज्ञान दे दिया।

यह सभी ज्ञान अन्तःप्रेरणा और आत्मिक ज्ञानपर आधारित है। इसलिए इस चिकित्सा-प्रणाली आयुर्वेदको समझनेके लिये चरक संहिता तथा सुश्रुत संहिता का अध्ययन, सहायक हो सकता है। इन शास्त्रोंको समझने और इनकी गहराई तक पहुंचनेके लिए केवलमात्र हमारी अन्तः आत्मिक प्रवृत्ति और परिश्रम ही फलदायक हो सकता है।

महर्षि चरकने अपनी संहिता में मानव, की विवध प्रवृत्तियों, स्वस्थावस्था और भिन्न २ व्याधियों, में रुग्णावस्थाके लक्षणों, रोग के कारणों और उनकी चिकित्सा का बड़ा ही सुन्दर विवेचन किया है। किंतु यदि हम इसे हो सम्पूर्ण समझकर निश्चित हो जावें तो यह हमारी मूल होगी। मनुष्य आदि कालसे, दिन प्रतिदिन उन्नति की ओर जा रहा है। उसकी नई २ खोजे तथा आविष्कार इस बातके प्रत्यक्ष प्रमाण है। अतः हमें थोड़ा उदार होना पड़ेगा। तथा जो वस्तु किसी भी सिस्टम में ग्राह्य होगी उने आत्मसात करते हुए आगे बढ़ना होगा।

प्रत्येक चिकित्सा प्रणाली अपने २ कुछ आधारभूत सिद्धांतों पर आधारित है और यदि हम किसी प्रणाली विशेष की अवहेलना करे और उसमें स्थित सत्य को मानने से इन्कार करदे तो यह हमारे अज्ञान और संकुचित हृदयता का परिचायक होगा।

प्रत्येक चिकित्सा प्रणाली और उसके सिद्धान्त समय और उस देशके अनुसार मानव की निरंतर खोज का परिणाम है। प्रत्येक प्रणालीके दो प्रकारके सिद्धांत होते हैं। एक तो नित्य जो कि अपरिवर्तनशील हो, और दूसरे परिवर्तनशील अथवा अनित्य जो समयके अनुसार बदलते रहे। उदाहरणके रूपमें चरककी चिकित्सा प्रणाली त्रिदोष सिद्धांत पर अवलम्बित है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा औषध रूपमें उसने सभी औषधियां काष्ठादि जड़ी-बूंटियां प्रयुक्त की है। किन्तु महर्षि चरकके बादके आचार्योंसे जब यह पाया कि धातुओंकी भस्में और रस चिकित्सा काष्ठौषधियोंसे अधिक तथा आशुलाभकारी है और इनकी मात्रा भी अपेक्षया बहुत कम देनी पड़ती तो उन्होंने काष्ठौषधियों से निर्मित काढ़े, चूर्ण आदिको छोड़कर रसचिकित्सा को अपनाया किन्तु इस चिकित्साका भी आधार त्रिदोष सिद्धांत पर ही अवलम्बित रहा। उपर्युक्त विवेचन से यह तथ्य निकला कि चरक कालीन काष्ठौषधियों द्वारा चिकित्सा करना आयुर्वेद प्रणालीका एक अन्तिम सिद्धांत था, जो कि समयकी गतिके अनुसार रसचिकित्सामें बदल गया और त्रिदोष सिद्धांत एक निश्चित अथवा नित्य सिद्धान्त है, जिसे कि हम आयुर्वेद चिकित्सा प्रणाली का आधारभूत सिद्धान्त है।

अस्थाई सिद्धान्त समयकी गतिके अनुसार अब भी बदलता चला जा रहा है। आयुर्वेदिक फार्मेसियोंने भी औषधियोंके इन्जेक्शन भी जो कि पाश्चात्य मस्तिष्ककी उपज है आज आयुर्वेदिक चिकित्सकों द्वारा प्रयोगमें लाये जा रहे है, किन्तु उनके प्रयोग करने का आधार वही त्रिदोष सिद्धांत है।

मनुष्य क्या है? यदि हम साधारण रूपमें यह कहे कि मानव प्रकृतिकी एक उपज है तो अत्युक्ति न होगी। संसारकी प्रत्येक वस्तु मानव समेत उत्पतिके समय प्रकृतिमें चेतना उत्पन्न हुई और उसी चेतनामें मनका आविर्भाव हुआ। मानवके अन्दर भगवानका निवास है और भगवान् का अंश जीवात्मा शरीरका संचालन करता है जोकि रोग और रोगीके बारेमें सब कुछ जानता है, किन्तु स्वयं निर्लिप्त है।

मेरे विचारमें मानवके अन्दर स्पष्ट रूपसे तीन पृथक २ व्यक्तित्व अथवा विशेषताएं है। जिन्हें हम मोटे रूपमें मन, चेतानाशक्ति और शरीर कह सकते हैं। मनके द्वारा यह विचारता और इच्छा करता है, चेतना शक्ति द्वारा यह अपने विचारों और इच्छाओंको क्रियात्मक रूप देता है, तथा शरीर द्वारा उन्हीं इच्छाओं अथवा विचारोंका प्रदर्शन करता है।

कुछ समय हुआ, एक रोगी आया और उसने कहा कि उसे दाई आंखसे दिखाई नहीं देता। डाक्टर द्वारा परीक्षा करने पर यह पता लगा कि इस आंख में सफेद मोतिया उतर आया हैं। डाक्टर ने इसकी शल्यक्रिया करने का फैसला किया। आपरेशन वाले दिन डाक्टर ने अपनी शक्तियों को हाथों और औजारों के द्वारा आपरेशन करने के लिये प्रयोग किया, तथा आपरेशन सफल रहा।

डाक्टर का एक निश्चित निदान पर पहुंचना तथा आपरेशन करने का फैसला करना, उसके मन का कार्य कर रही थी, उसे हम चेतना शक्ति कह सकते हैं और आपरेशन रूपी कृत्य किया गया उसे शारीरिक कार्य कह सकते हैं। मन, चेतना शक्ति और शरीर के पारस्परिक सहयोग ने आपरेशन को सफल बना दिया।

मनुष्य की प्रकृतियाँ अथवा गुण

उपर्युक्त मानव के भागों मन, चेतना शक्ति और शरीर को हम क्रमशः सत्व, रज तम में बांट सकते हैं।

१ सत्व—प्रकृति में प्रकाश और ज्ञान के सामंजस्य को सत्व कहते हैं। मनुष्य में यही गुण हम मन रूपी तत्व में पा सकते हैं।

२ रजस्—प्रकृति में इस गुण को हम इच्छाओं क्रियाओं और उत्तेजना में पाते हैं। तथा मानव शरीर में यही गुण चेतना शक्ति के रूप में विराजमान है।

२ तमस्—प्रकृति में यह गुण अन्धकार और जड़ता का प्रतिनिधि है और मानव शरीर में इसे हम स्थल शरीर कह सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन और चेतना शक्ति शरीर के अन्तर्निहित रहते हैं और इनकी वृद्धि धीरे धीरे होती है। उदाहरणतया शैशव काल में सत्व गुण प्रधान होने से मानसिक शक्ति की अत्यन्त वृद्धि होती है और अपेक्षया चेतना अर्थात् क्रिया शीलता रूपी शक्ति की वृद्धि बहुत कम हो पाती है। धीरे धीरे यौवन आता है, चेतना शक्ति शरीर में प्रधान होती जाती है। रजस गुण प्रधान होने से बच्चा फुर्तीला और शरारती होता जाता है, उसमें इच्छायें काम और उत्तेजना आदि भाव बढ़ने आरम्भ हो जाते हैं। तथा वह अपने नाम और यश प्राप्ति का प्रयत्न करता है। इससे यह प्रतीत होता है कि शरीर में रजस गुण प्रधान होने लग गया है।

उपर्युक्त गुणों का शरीर पर प्रभाव

उपर्युक्त गुणों के अनुसार ही मनुष्य की सात्विक राजसिक और तामसिक प्रकृतियाँ हो जाती हैं। इन प्रकृतियों वाले पुरुषों के लक्षण महर्षि सुश्रुत ने बड़े ही सुन्दर अपनी संहिता में दिए हैं। मनुष्य इन्हीं प्रकृतियों के आधीन हुआ भिन्न भिन्न प्रकार की इच्छायें करता है और उन्हें पूरा करने का प्रयत्न भी करता है।

मानव शरीर में इन सबसे ऊपर भी एक शक्ति विशेष है, जिसे हम आत्मा अथवा जीवात्मा के नाम से पुकारते हैं। यही शुद्ध ज्ञान तथा दैवी शक्ति का प्रतीक है।

मनुष्य में दो प्रकार के चक्षु होते हैं।

मनुष्य में दो प्रकार के चक्षु होते हैं। एक को हम बहिर्चक्षु के नाम से पुकार सकते हैं। बाह्य चक्षु हमारी दो आँखें हैं जो हमें नजर आती है। इनसे हम बाह्य संसार को देख सकते हैं। अन्तर्चक्षु हमारी आत्मा में हैं, इनसे हम साधना द्वारा उन वस्तुओं का ज्ञान भी कर लेते हैं जो बाह्य चक्षुओं द्वारा नहीं देखी जा सकती है।

बाह्य चक्षु—बाह्य चक्षु दो हैं। देखने की क्रियां तीन नियमों से होती है।

१—शारीरिक अथवा यान्त्रिक—इस अवस्था से किरणें तृतीय पटल छायापट, पुतली अथवा (Retina) पर छाया के रूप में केन्द्रित हो जाती है, जिस प्रकार कि फोटो लेने वाले कैमरे में होता है।

२—चेतन अथवा नरवस—छायापट पर बने हुए प्रतिबिम्ब को मस्तिष्क के पिछले हिस्से में दृष्टिकेन्द्र पर फेंक दिया जाता है।

३—मानसिक—उस छाया की व्याख्या मन करता है। मन की विचारी हुई चीज को दृष्टि प्रगट करती है। मन जिस आकार को देखता है, वह छायापट पर केन्द्रित छाया चित्र नहीं है प्रत्युत उसे हम मन की व्याख्या कहते हैं।

उदाहरण के रूप में प अक्षर के मध्यवर्ती श्वेत स्थान को देखिए। यह मध्यवर्ती सफेदी बाकी के कागज की सफेदी मालूम होगी, जबकि सारे कागज की सफेदी एक जैसी है।

देखने का कार्य स्वयंमेव होता रहता है। सांसारिक वस्तुयें, जैसा कि हम अनुभव करते हैं अथवा जैसा हमने सुन रखा है, उसी रूप में, बिना किसी प्रयत्न के हमें दिखाई देती है। प्राकृतिक दृष्टि (Sight) होते हुए आँख को देखने में कुछ भी प्रयत्न नहीं करना पड़ता।

आन्तरिक चक्षु का स्थान दोनों भ्रुवों के बीच में है। साधारणता मनुष्योंमें यह आँख बन्द रहती है, किन्तु त्राटक, साधना, तपस्या तथा योगके द्वारा इसे खोला जा सकता है। इस अन्तर्चक्षु का कार्य उन आवश्यक वस्तुओं और शक्तियोंको देखना होता है जिन्हें हम भौतिक आँखसे नहीं देख सकते। जो कुछ अन्तर्चक्षु देखते है, वह मन द्वारा प्रगट किया जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आन्तरिक चक्षु किसी वस्तुकी सत्ता तथा उसी क्रियाके बारेमें वास्तविक ज्ञान प्राप्त करनेमें सहायता देता है, जब कि बाह्य चक्षु केवल वैज्ञानिक खोजों और भौतिक उपायों से ही ज्ञान प्राप्त कराते है। आन्तरिक चक्षु की दृष्टि भी उतनी ही स्पष्ट है, जितनी कि बाह्य आँख की। आन्तरिक चक्षु के विकास से अन्तर्ज्ञान अथवा सहज ज्ञान की वृद्धि होती है। इस अन्तर्ज्ञान से बाह्य चक्षुओं को शारीरिक कार्य और नए अनुसन्धानों को पूर्ण करने के लिए अत्यन्त सहायता मिलती है।

उन महर्षियों ने जिन्होंने कि भारतीय चिकित्सा शास्त्र की खोज की थी। अपने अन्दर इस अन्तर्ज्ञान का पूर्ण रूपेण विकास कर लिया था और इसी एकमात्र कारण से ही उन्होंने जीवन, आयु और औषधियों के इस महान् सत्य को समझा।

धन्वन्तरि महाराज ने अनेक वस्तुओं के गुण दोष का विवेचन अपनी संहिता में किया है। उन दिनों गुण दोषों की परीक्षा करने के लिए कही भी प्रयोगशालाएं नहीं थी तो उन्होंने ऐसा किस प्रकार किया? यह सब कुछ जो उन्होंने लिखा, उनके अन्तर्ज्ञान का फल है।

ऐसा कहा जाता है कि जब उन्हें किसी वनस्पति विशेष के गुणों को जानने की इच्छा होती थी तो वह उसके समीप जाकर विनीत भाव से कुछ मन्त्र पढ़कर थोड़ा सा जल उस वनस्पति पर छिड़क दिया करते थे। ऐसा करने के पश्चात् वह वनस्पति स्वयंमेव उनकी आन्तरिक चक्षु को अपने सभी गुण दोष बतला दिया करती थी।

उपर्युक्त लेख में तो पाठकों ने मनुष्य, उसकी प्रकृति और उनकी क्रिया प्रतिक्रिया को पढ़ा है। अब अगले लेख में आयुर्वेद के मूल-भूत सिद्धांत त्रिदोष पर प्रकाश डालने का प्रयत्न किया जायेगा।

—:(०):—

एपेण्डिसाइटिस (आन्त्रपुच्छ)

ले० राजवैद्य डा० भ्रमरदत्त मिश्र एच० एम० डी० एस०
मंत्री—आयुर्वेद कांग्रेस कमेटी पो० केकड़ी (अजमेर)

मानव के उदर गह्वर में छोटी और बड़ी दो प्रकार की आंते होती हैं छोटी आंत की लम्बाई लगभग २० फुट के होती है और बड़ी आंत की लम्बाई ५ फुट और शरीर रचना शास्त्र के आधार पर छोटी आंत ३ भागों में विभक्त है यथा—

(१) प्रथम भाग छोटी आँत का जिसे (Duodenum) ड्यूडेनम कहते हैं यह द्वादश अंगुल आंत है यह पाकस्थली के मुख से २० इञ्च लम्बी होती है।

(२) द्वितीय भाग छोटी आंत इसे जेजूनम (Jejunum) कहते हैं यह खाली आंत हैं और द्वादश अंगुल आंत से उसके प्रान्त भाग से प्रायः ८ फुट लम्बी होती है और यह नाभी के चारों ओर लिपटी रहती है।

(३) तृतीय भाग छोटी आंत के इलियम (ibum) शून्यान्त्र यह खाली आंत से लगभग ११ फुट लम्बी होती है और नाभी के नीचे सारे उदर स्थलमें फैली रहती है।

इसी प्रकार बड़ी आंत छोटी आंत के मत से ३ भागोंमें विभक्त है यथा (१) बड़ी आंतके प्रथम भागको (Caeciim) (अन्त्रपुट) यह प्रायः २॥ इञ्च लम्बी है और ३ इञ्च मोटी इनका नीचे का मुख बन्द रहता है और ऊपर का मुख खुला रहता है इस कारण से इसका नाम अंध अंत्र है यह उदर में इलियो सिकल वैल्व के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुख के नीचे अवस्थित है। इस सिकम (अंध अन्त्र) के शरीर से लगी हुई ठीक पीछे के भाग से केचुए की शक्ल की ३ इञ्च लम्बी एक नाड़ी है जिसका अंधोभाग का मुख बन्द रहता है और ऊपरिभाग का मुख खुला रहता है वह मुखइलियो सिकल वैल्व के मुख से जुड़ा हुवा है उसीका नाम एपेण्डिक्स (Vemidorm opp riaix) है अन्ध अन्त्र से मिली रहने से ही इसे हिन्दी में अन्ध अन्त्र पुच्छ कहते हैं।

(२) बड़ी आंत का दूसरा भाग (Colo) कोलन यह भी ४ भागों में बटी हुई हैं।

(१) (Ascondeidcobon) ऊर्द्धगामी बृहयन्त्र यह अंत्रपुट (सीकम) से ऊपर की तरफ यकृत के निम्न प्रांत तक चढ़ गई है।

(२) (Tronsucro colon) अनुप्रस्थांत्र बृहदंत्र है यह आडी यकृत के दाहिने तरफ के निम्नप्रान्त से बायीं तरफ प्लीहा के निम्नप्रान्त तक चली गई हैं।

(३) डिसेण्डिङ्ग कोलन (Descending Colon निम्नगामी बृहदंत्र यह प्लीहा के नीचे के हिस्से से उदर के नीचे उतर जाती है।

(४) (Rectum) रेक्टम् अन्त्रान्त्र यह ८ इञ्च लम्बी है बृहद्अन्त्र का अन्तिम भाग है—इसे सरलान्त्र या मलान्त्र कहते हैं—इसका अन्तिम मुख मलद्वार (Auns) से प्रायः १ इञ्च ऊपर रहता है।

अब पाठकों को यह देखना है कि अन्त्रात्रपुच्छ प्रदाह कहां होता है यहां थोड़ा सा अंधांत्र का विवरण भी पाठकों को समझा देना चाहता हूं संक्षेप से तो अंत्र विभेदी करण में आही जाता है परन्तु कुछ स्पष्टीकरणार्थ यहां भी देना ठीक हैं—लघु आंत का तीसरा भाग जिसे इलियम का अन्तिम मुख कहते हैं जहां पर कोलन (बड़ी आंत) के साथ मिला है वहां पर एक द्वार है (Door) उसका नाम इलियो सिकैल वैल्व (IlioCoceool volvd) है और इस दरवाजे का मुख सिकम (Coecumn) (अंत्र पुट) बड़ी आंतका प्रथम भाग और एपेण्डिक्स का खुला मुख मिलता है इस स्थान की रचना इस प्रकार है कि छोटी आंत से जो पदार्थ बड़ी आंत में प्रवेश करता है वह पदार्थ पुनः वापस नहीं लौट सकता है अतः इसस्थान परही उपांत्र प्रदाह नाम तीन व्याधियों की शंका होती है टिफ्लाइटिस (Typhlitis Typlitis) **पेरिटिफ्लाइटिस** उपांत्र प्रदाह (Peritiipltitio) अन्त्रपुटप्रदाह (Appendicitls) अंत्रपुच्छ प्रदाह और एपेण्डिसाइटिस हिन्दी में इन्हें कहा है। यह तीनों व्याधियां वहां पर ही होती हैं जहां पर बड़ी आंत और छोटी आंत आकर मिलती है अतः पीडित अवस्था में रोग निर्णय निदान (Deoguosis) इन तीनों व्याधियों में से कौनसी व्याधि है एवं मूल रोग का निर्णय कठिन सा हो जाता है अतः यहां तीनों की अवस्थाएं पृथक् पृथक् बतला कर मूल व्याधि का सही निर्णायक विषय को पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करता हूं।

प्रथम उपान्त्र प्रदाह (Typhltis) टिफ्लाइटिस यह व्याधि बड़ी आंतके आवरक पर्दे (Membrance) का प्रदाह मात्र है इसमें तलपेट और उदर गह्वर के दाहिने पुट्ठे के ऊपर के भागमें असह्य वेदना होती है। बद्ध कोष्ठता आध्मान आदि लक्षण होते हैं, किन्तु अंत्रपुच्छ प्रदाह (एपेण्डिसाइटिस) के सामान ठीक बंधे समय पर स्थायी वेदना नहीं रहती है कभी कभी कमर की तरफ वेदना होती है और आतों में हवा भर जाती है। बड़ी आंत में बड़े जामुन की गुठलियां जैसा कड़ा पदार्थ या मल कड़ा होकर बृहदन्त्र में फंस जाता है अतः वहां गतिरोध से प्रदाह हो जाता है और शनैः शनैः प्रदाह उर्द्धगामी बृहदन्त्र का कुछ अंश उपांग पेशी में प्रसरित होकर क्षत हो जाता है तदनन्तर आंतों में छेद होकर पेरिटोनाइटिस हो सकती है न कि एपेण्डिसाइटिस।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) पेरिटफ्लाइटिस (Peritephitis)

वृहदन्त्र का प्रथम भाग सिकम (Caceum) (अन्त्रपुट) के चारों तरफ जालवत् जो तंतु होते हैं उन्हें (Areolor tissue) कहते हैं इन तंतुओं पर आघात होने से यह व्याधि होती है रोगारम्भ काल से पूर्व रोगग्रस्त स्थान पर सुरसुराहट होती हैं पेट फूलता है और वेदना भी होती है यह उपान्त्र प्रदाह टिफ्लाइटिस के समानता रखनेवाली व्याधि है।

(३) (Appendicetis) अंत्रपुच्छ प्रदाह

आँतों की उक्त दो प्रकार की व्याधियों में इस तीसरे प्रकार की व्याधि जिसे अन्त्रपुच्छ प्रदाह एपेण्डिसाइटिस कहते हैं अधिकतर यही होती है यह व्याधि छोटी आँत् और बड़ी आँत के संगम स्थल पर होती है यह व्याधि दो प्रकार की होती है स्थानीय प्रदाह और (Localisd) और पुनरावृत्त प्रदाह Relap sing

स्थानीय प्रदाह प्रायः पक कर पीव के रूप में परिवर्तित होता है यह पीव बाहर नहीं निकल पाता है और अन्त्रावरक झिल्ली के नीचे संचित होकर सारे अन्त्रावरक झिल्ली के क्षेत्र पर प्रदाह पैदा हो जाता है यह (Peritonetes) का रूप धारण कर लेता है।

बाहर होने वाला प्रदाह कभी मिथ्याहार बिहारसे हो जाता है और फिर सात्म्य अहार विहारसे पुनः शान्त होता है और रोग शनैः शनैः जीर्णावस्था प्राप्त कर लेता है किन्तु यह न पकता ही है और न पीव ही उत्पन्न कर सकता है यह व्याधि मिथ्याहार बिहारके कारण होता है या आघातसे कब्ज, जी मिचलाना, पेटका फूलना, इसमें दाहिने पुट्ठे के ऊपर तलपेटमें शूलके समान दर्द होता है कभी धीमा २ दर्द भी रहता है और यह सदाही बना रहता है। दर्द तलपेटसे मलद्वार तक रहता तथा अण्डकोषों तक फैल जाता है। दर्द थोड़ासा हिलने पर दबाने पर बढता है एवं पैर फैलाने पर भी दर्द बढता है रुग्णस्थल आगकी तरह गरम गरम लगता है रोगी सदा दाहिने पार्श्वसे सोता है बायें पार्श्वसे सो नही सकता है। इस व्याधिमें प्रायः कै (वमन) नहीं रहती है यदि रहती भी है तो २।४ दिन बाद शुरु होती हैं किन्तु प्रारम्भमे नहीं रहती है रोगकी कठिनताके साथ हिक्का भी रहती है और तृष्णा अधिक रहती है और जिह्वा सदा सूखीसी नहीं रहती है किन्तु फटी हुई रहती है और बद्धकोष्ठता इस रोगका प्रधान लक्षण है यदि यह व्याधि बालकोंको है तो कभी कभी उन्हे कब्ज के स्थान पर अतिसार हो जाता है। ज्वर होता है दर्द के साथ साथ यदि ज्वर न हो तो भ्रम हो सकता है कि अन्य व्याधि तो नही है ओर ताप १०२ डिग्रीसे अधिक नहीं होता है बालकोंको १०३, १०४ तक भी हो जाता है। नाड़ीकी गति तेज और स्पर्श सहन रोगस्थल पर नहीं होता है मूत्रमें अण्डलाल एलब्यूमेन होता है और मूत्र परिमाणमें थोड़ा होता है इत्यादि संक्षेप लक्षण इस व्याधिमें होते हैं।

अब पाठकों को वेदनानिर्णायक लक्षणोंका दिग्दर्शन कराना है जिससे मूल रोगके निर्णयमें कठिनाईयां न आवें। रोगनिर्वाचनका सहज विधान निम्नानुसार है रेक्टसमसल (Rectus Muscle) सरलांत्रपेशी में बहुत खीचन रहता है मैकबार्निसप्वायेण्ट Moc Busneys Point अर्थात तलपेटसे दाहिने भागकी तरफ ऊपरी ओर पर अस्थिकोण और विशिष्टकोण से नाभी प्रदेश तक कोना कोनी एक लाइन काटकर उस लाइन के ऊपर प्रथम अस्थिपटल का कोना विशिष्ट स्थान से २ इञ्च जगह पर स्पर्श सहन न होगा और न दर्द सहन होगा और दाहिने कुचकी के कुछ ऊपर अर्द्ध चन्द्र की तरह टेढे तौर से जननेन्द्रिय की जड़ के हाड़ से तलपेट के दाहिने ओर के ऊपरी अंशके हाड़ के खास स्थान तक के ऊपर दाहिने इलिपैक फसा में २ इञ्च जगह फूली रहती है यह लक्षण रहनेपर सहज ही में एपेण्डिसाइटिस रोग का निर्णय हो जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पोथकी (ट्रकोमा)

लेखक—वैद्य इन्द्रभान, सी. भटनागर, आयुर्वेदभिषक् नेत्र, अर्श, विशेषज्ञ,
धन्वन्तरि चमत्कार औषधालय सीधपुर, [उ० गु०]

पोथकी यह नेत्र के वर्त्म (पलक) रोगों में से एक रोग है। इसे एलोपैथी में ट्रमोका गुजरात में खील, मारवाड़ में वरोडे और हिन्दी भाषा में इसे रोहें के नाम से पुकारते हैं।

यह बहुत कष्टदायक रोग है, इसकी चिकित्सा न करने पर पलक के अन्य रोग पैदा हो जाते हैं, जैसे पक्ष्मकोप, पक्ष्मशात तथा शुक्र (Cornial ulcer) जो कभी दृष्टि-हीन कर बैठता है। एलोपैथी सिद्धान्तानुसार औषध चिकित्सा करने पर बहुत समय लेता है, यहां तक कि चार माह बराबर आंखों में दवा का प्रयोग करते रहें तो कुछ बहुत शांति मिलती है, लेकिन हमारी आयुर्वेद की सुश्रुत पद्धति ने इसे जड़मूल से नष्ट करने का इससे बढ़ कर उपाय बतलाया है।

इस रोग के तीन भेद हैं—(१) कृच्छोन्मीलन, (२) कुकूणक और (३) पोथकी। पाश्चात्य विज्ञान में ट्रकोमा के दो भेद बतलाये हैं।

१—ग्रेन्यूलर कन्जेक्टीवाइटिसश २—फेलीक्यूलर। फेलीक्यूलर नीचे की पलक में होता है और ग्रेन्यूलर ऊपर की पलक में नीचे के भाग में पाया जाता है।

यह रोग शिशु अवस्था तक पाया जाता है।

कारणः—वातादि दोषों के कारण व शिशु में उनकी माता के दोषी दुग्ध के कारण तथा बच्चों के दांत निकलते समय पलकों की शिराएं दोषी होकर अपनी पलक के नीचे लाल-पीली, सफेद, सरसों व राई के समान पिटिकाए (फुन्सियां) पैदा कर देती है। देखिये वाग्भट्ट, उत्तर तन्त्र, अ० ८ श्लोक १-२

सर्व रोग निदानोक्तैरहितैः कुपितामलाः।
अचक्षुष्यैर्विशेषेण प्रायः पित्तानुसारिणः ॥१॥
शिराभिरुर्ध्वं प्रसृता नेत्रावयवमाश्रिताः।
वर्त्मसंधिं सितंकृष्णं दृष्टिं वा सर्वमक्षि वा ॥
रोगान् कुर्युः ॥२॥

पूर्व रूपः—कज्जियत, आंखें जलना, नाक और आंखों को बार २ मलना, पानी झरना, आंखें आना आदि लक्षण होते हैं।

रूपः—जब वातादि दोष पलकों की शिराओं में आश्रित होते हैं तब सोकर उठने पर उनकी पलकें स्तम्भ हो जाती हैं उसमें वेदना होती है और ऐसा मालूम पड़ता है कि आंख की पलकों में रेत पड़ी हुई हो—पलकें कठिनता से खुलती हैं। छोटे बच्चे इसी दुख से उल्टे मुंह सोये पड़े रहते हैं। पलकों पर शोथ हो जाता है—आंखों से पानी गिरता रहता है मल निकलता है, पलकें चिपक जाती हैं। प्रकाश असह्य हो जाता है, पलकों के नीचे लाल, पीली सफेद पिटिकायें नजर आती हैं। वही पोथकी हैं।

देखिए वाग्भट्ट उ० अ० ८ श्लोक ३-६-२३

—चलस्तत्र प्राप्य वर्त्माश्रयाः सिराः।
सुप्तोत्थितस्य कुरुते वर्त्मस्तम्भं सवेदनम् ॥
पांशुपूर्णाभनेत्रत्वं कृच्छोन्मीलनमश्रु च।
विमर्दनात्स्याच्च शमः कृच्छोन्मीलं वदन्तितम् ॥३॥
पोथक्यः पिटिकाः श्वेताः सर्षपाभा घनाकफात्।
शोफोपदेह रुक्कण्डुपिच्छिलाश्रु समन्विताः ॥६॥
कुकूणकः शिशोरेव दन्तोत्पत्ति निमित्तजः।
स्यातेन शिशुरुच्छूनस्ताम्राक्षो वीक्षणाक्षमः।
सवर्त्म शूल पैच्छिल्य कर्ण नासाक्षि मर्दनः ॥२३॥

सुश्रुत आधार पोथकी के लक्षणः—उ० तन्त्र, अ० ३, श्लोक ११।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्राविण्यः कण्डुरागुर्व्यो रक्तसर्षपसन्निभाः।
पिडकाश्च रुजावत्यः पोथक्य इति संज्ञिता ॥११॥

यों तो पलक के और भी दूसरे रोग हैं जिनमें पिटिकाएं होती है पर वे अन्य नाम से पुकारी जाती हैं।

चिकित्सा—पोथकीकी प्रथम अवस्था कृच्छ्रोन्मीलन और कुकूणक है ये अधिकतर शिशु और बच्चों में पाया जाता है यों तो युवा और वृद्ध अवस्था वालों में भी पोथकी के प्रारम्भ में होता है। उस समय ऐसे रोगी को वमन, विरेचन अवश्य करा कर पलक उलट कर मिश्री की डली की तेजधार अथवा फिटकड़ी की तेज धार तथा चाकू द्वारा ये पिटिकायें खुरच कर उनमें से रक्त निकाल दें। फिर जब रक्त बन्द हो जाय तब उस पर शहद रगड़ कर पट्टी बांध दें। रोज गरम पानी से आंख धोवे और मधु रगड़ते रहें। स्वेद देते रहे अथवा पलक पर दुग्ध की गरम मलाई की पट्टी बांधते रहें तो पांच सात रोज में यह रोग शमन हो जायगा। दुग्ध के कारण हो तो उसकी मां को दुग्ध शुद्ध करने की दवा देवें और बच्चों को त्रिदोष-नाशक त्रिफला मधु के साथ कुछ दिन चटाने से दोष शमन हो जाता है और सर्वथा नष्ट हो जाता है।

लेखन क्रिया करने पर शिशु की पलकों में जस्त-भस्म व काला सुरमा मिश्रित कर रगड़ने से भी रोग दूर होता है। परीक्षित।

अथवा हल्दी, दारुहल्दी, पठानी लोध, मुलहठी, हरीतकी और निम्बपत्र तथा ताम्रभस्म मिला कर जल में पीस कर वर्त्ता बना कर आंजने से भी कुकूणक रोग दूर होता है। (वाग्भट्ट)

लेकिन जब यह पोथकी रूप में आ जाता है तब सुश्रुताधार निम्न चिकित्सा बतलाई है वह सर्वश्रेष्ठ है, देखिये सु० उ० तन्त्र अ० १३, श्लोक ४ से ८।

"स्वेदयेद्वर्त्म निर्भुज्य वामाङ्गुष्ठाङ्गुलिस्थितम्।
..... स्वेदावपीड प्रभृतींस्त्र्यहा दूर्ध्वं प्रयोजयेत्॥

रोगी को स्नेहन, बमन विरेचन कराके वायु और धूप रहित घर में बैठाकर विश्वस्त सहायकों से पकड़वा कर रोगी को पीठ के भार चित्त लिटा देवें, फिर सुहाते गरम पानी में गरम किये वस्त्र को अति सावधानी के साथ वाम हाथ की अंगुली और अंगूठे से वर्त्म (पलक) को इस प्रकार पकड़े कि वह कपड़े के अन्दर लिपटी अंगुली और अंगूठे से न तो हिले न खिसके। फिर शस्त्र से पलक पर पाछ कर वस्त्र से साफ करके शस्त्र से या हरसिंगार आदि पत्तों से लेखन करे। रक्त के रुक जाने पर स्वेदन करके मैनसिल, कासीस, त्रिकटु, रसांजन, सैंधव इनको बारीक पीस कर मधु में मिला कर रगड़े। फिर गरम पानी से धोकर घी से सेक देकर व्रण की भांति चिकित्सा करे। तीन दिन के पीछे स्वेदन अवपीड़न आदि बरतें।

चिकित्साकाल में नेत्र रोग में बतलाये हुए अपथ्यों का त्याग करें।

इस रोग पर एलोपैथी चिकित्सा अपनी हार मानती है वह अधूरी है। यदि दोषों को दूर करने का ध्यान रक्खे तो अवश्य सफलीभूत हो सकती है।

इस रोग में Silver nitrate. Copper snlpset Castie Lotion आदि रोहों पर Touch करते हैं Vellow oncide of Mucury ointment तथा Muncury lotion का Drop हैं। इतना करने पर भी पोथकी नष्ट नहीं होती। यह चिकित्सा बहुत दिनों तक चलती है यहां तक की चार माह तक का अवकाश लेना पड़ता है। फिर भी पूर्ण शांति नही मिलती।

पोथकी पर Tuch करनेवाली औषधियां बहुत सावधानी के साथ लगाई जाती हैं यदि थोड़ी भी गलती हुई और नेत्र के कोए Eye Ball पर लग गई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो ध्यान रहे Cornial Ulcer का होना सम्भव है यहां तक कि कभी कभी यह Ulcer मनुष्य व बच्चे को नेत्रहीन कर बैठते हैं।

इस रोग के लिये दैनिक प्रयोग में आनेवाली मेरी अनुभूत चिकित्सा :—

प्रथम ऐसे रोगी को वमन विरेचन करा कर रोगी को चित्त लिटा कर पलक उलटा कर Booic Acid Powder के गरम पानी से ट्रकोमा को धोकर साफ कर डालो। फिर ट्रकोमा को नीला थोथा, कपूर और फिटकड़ी से बनी हुई वर्ती को ट्रकोमा पर जहां जहां पिटिकाएं हैं, दो तीन बार रगड़ो। इससे ट्रकोमा की पिटिकायें फूट जायंगी और उसमें से रक्त निकलने लगेगा। अब रक्त को पानी से बराबर धोते जावो और शुद्ध रूई से पोछते जावो जब रक्त निकलना बन्द हो जाय तब उस पर Yellow oxcide का मरहम रगड़ दो और नेत्रो में Murcury का टीपा डाल कर Murcury से भिगोये हुए रूई को आंख पर रख कर पट्टा बांध दो। दो कला के बाद Murcury की रूई हटा कर उस पर गरम गरम दूध की मलाई रख कर ऊपर रूई रख कर पट्टा बांध दो। दो चार रोज इस प्रकार दोनों टाइम यह क्रिया करने पर पट्टा छोड़ दो जब देखो कि अब आंख में रेत पड़ी हुई सी मालूम नही पड़ती है तो फिर इसके साथ प्रथम गरम पानी से से आंख धोकर जस्ते के फूले की बनी हुई ट्रकोमा पिल्स जो मेरे वंशपरम्परा के अनुभव की है उसका अञ्जन करो—मरहम और मरकरी डालते रहो। दस पन्द्रह दिन डालने से पलक निरोग हो जावेगी पानी झरना आदि सब बन्द होकर रोगी निरोग हो जावेगा पर ध्यान रहे जिस दिन से उसके खील फोड़े गये हैं उस दिन से त्रिफला, वंशलोचन, मुलहठी और मिश्री का चूर्ण मधु के साथ १ महीना तक चटा देवें नेत्र रोगों के पथ्यापथ्य को पालते रहें।

एक सच्ची घटना

पालनपुर जिले में छापी एक रेलवे स्टेशन है। इसकी पूर्व दिशा में दो कोश की दूरी पर बावलचूडी करके मुमन मुसलमानों का गांव है। वहां पर मुझे आयुर्वेद पद्धति द्वारा घर बैठे मोतिया के आपरेशन करने के लिए बुला कर ले गए। दो चार मनुष्यों के लिंगनाश करने पर सफलता देख कर एक राजू नाम का मुमन अपनी लड़की फातमा को लेकर आया। जिसकी उम्र १० वर्ष की थी। उसकी आंखों में पक्ष्मशात था। उसने कहा कि डाक्टर साहब हमने इसका ६ माह बम्बई सिविल २ माह पाटण और १ माह पालनपुर सिविल में इलाज कराया पर यह रोग नहीं जाता है। हमारी लड़की की जिन्दगी बिगड़तीं है। आप कोई प्रयत्न करें जिससे उसकी जिन्दगी सुधरे।

मैंने कहा कि यदि तुम्हें मुझ पर विश्वास हो तो मुझ से दो मास की दवा ले लो जिस प्रकार बतलाऊ उस प्रकार डालते रहो।

मैंने लड़की के Tracoma (ट्रकोमा) फोड़ कर साफ करके Yellow orsedde का मरहम लगा कर Marcary का टीपा आंख में डाल कर Murcnry को रूई में भिगोकर आंख पर रख कर पट्टा बांध दिया दो कलाक बाद मलाई का पट्टा बांधने को कहा इस प्रकार चार रोज दोनों टाइम पट्टा बांधने को कह दिया। हमेशा पट्टा बांधने के पूर्व Borie Acid के गरम पानी से धोने को कहा गया। पट्टा खुलने पर जस्ते के फूले की वर्ती आंजने के लिए विशेष रूप में दी गई। खाने के लिए एक रात अश्वकंचुकी रस की पांच गोलीये दी गई जिससे उसे वमन और विरेचन हो जाय बादमें रोज रात्रि समय चाटने के लिए त्रिफला चूर्ण मधु के साथ में ३ माह के लिए दिया गया। और विशेष दवा लगाने के १ कलाक बाद Zick-oxcide सिर्फ अकेला आंजने को कहा गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दर्दी के पिता ने कहा साहिब लाल दवा पीला मरहम आदि तो हमने बहुत डाला है उससे तो नहीं मिटा खाने की दवा नहीं दी गई थी अब अब आपकी बतलाई चिकित्सा अवश्य करूंगा आप अपने दवा का बिल दीजिए मैंने सिर्फ उससे पांच रुपये मांगे। उसने कहा साहिब आप पचास लीजिए पर ऐसी मामूली दवाईएं मत दीजिए। मैंने २००) इस पर बिगाड़ दिये है। मैंने उत्तर दिया मुझे पचास की आवश्यकता नहीं। जब ठीक हो जाय तब जो भी इनाम के देने हो देना दवा की तो यही कीमत है और तुम विश्वास रक्खो अवश्य यह रोग जाता रहेगा।

भगवान् धन्वन्तरि की कृपा से यह रोग चार माह में जड़मूल से नष्ट हो गया। लड़की के फिर से दोनों पलकों के बाल पूर्ण रुप से आ गए। और अब उसकी आंखों में कोई रोग नहीं है। आज इस बात को चार वर्ष हो चुके हैं। आज भी लड़की निरोग है। इति

संक्रामक रोग

लेखक—कवि विनोद, वैद्यभूषण पंडित ठाकुरदत्त शर्म्मा वैद्य, [अमृतधारा] देहरादून

संक्रामक रोग वे कहलाते हैं जो एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में संक्रमण करें। कुछ लोग इन्हें छूतवाले रोग कहते हैं। प्रायः इनकी छूत का कारण एक प्रकार के अति सूक्ष्म—नेत्रों से न दिखायी देने वाले-जीवांणु अथवा कीटाणु होते हैं जो एक रोगी से दूसरे रोगी में चले जाते हैं। इनको अंग्रेजी में जर्म्ज (Germs) बैक्टीरिया (Bacteria) माइक्रोब (Microbes) आदि नामों से पुकारते हैं। इस सिद्धान्त के मानने वाले कुछ लोग तो यहाँ तक कहते हैं कि समस्त रोग किसी न किसी जीवाणु के कारण ही होते हैं। आयुर्वेदिक, ग्रन्थों में थोड़े से ही रोग संक्रामक अथवा सांसर्गिक माने गए हैं। प्रायः रोग शरीर में संचित हुए दोषों के कारण होते हैं भले ही तद्नन्तर इनके अन्दर कीटाणु भी उत्पन्न हो जाते हैं। जैसे-मोरी जब गन्दी हो जाती है तो इसमें कई प्रकार की कृमियां उत्पन्न हो जाती हैं।

(२) संक्रामक रोग कई प्रकारसे लगते हैं। कोई तो रोगीके छू देनेसे लगते हैं, कोई रोगीके पहने हुए वस्त्र पहनने, साथ भोजन करने, जूठा जल पीने, जूठा अन्न खाने और रोगी की प्रश्वास वायु सूंघने से लग जाते हैं जैसे—कुष्ठ, त्वक रोग, शीतला, विसर्प, दुष्ट व्रण, नेत्राभिष्यन्द, प्रतिश्याय इत्यादि। ऐसे रोगों में चाहे तो कीटाणु अन्य व्यक्ति में प्रवेश करें चाहे रोग से स्रावित कोई अंश दूसरे को लग जाय।

(३) कई रोग रोगीके भीतर से निकले हुए मल द्वारा अन्य व्यक्ति में पहुंचते हैं क्योंकि इस मल में उस रोग के जीवाणु होते हैं, जैसे—विषूचिका (हैज़ा) में रोगी के मल का कोई अंश किसी प्रकार से स्वस्थ मनुष्य में चला जाय तो वह रोग उसको भी हो जाता है। कभी कभी कुंवें या पीने के पानी में रोगी के मल का अंश मिल जानेसे बहुत से लोग रोगी हो जाते हैं। यह भी होता है कि मल पर मक्खी बैठकर अपने पंजों में मल का अंश ले जाकर दूसरे की खाद्य वस्तु पर बैठ कर मल वहाँ डाल दे और उसके खाने से रोग उत्पन्न हो जाय। मन्थर ज्वर (टाइ-फाइड) भी दूषित जल के पीने से होता है।

(४) एक रोगीके जीवांणु दूसरेके रक्त में पहुंचने से कई रोग हो जाते हैं और उनको एक दूसरे के अन्दर ले जाने वाले कई प्रकार के मच्छर जूं, खटमल, पिस्सू आदि होते हैं, जैसे कि मलेरिया के रोगी को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मच्छर काटता और खून चूसता है। उसके अन्दर कीटाणु होते हैं। वे उसके अन्दर जाकर और बढ़ते हैं। फिर वह स्वस्थ मनुष्य को काटता है तो वहाँ से जर्म्ज़ (कीटाणुओं) को स्वस्थ मनुष्य के रक्त में भी डाल देता है। प्लेग के कीटाणु चूहे के ऊपर रहनेवाले एक प्रकार के पिस्सूके द्वारा एक मनुष्य से दूसरे मनुष्य के रक्त में पहुंच जाते हैं।

(५) क्षय (तपेदिक़) के जीवाणु सीधे ही मनुष्य के भीतर प्रवेश कर जाते हैं। रोगी थूकता हैं, वह थूक सूखता है, वहाँ कीमिट्टी किसी प्रकार उड़ती है। कोई स्वस्थ मनुष्य उस मिट्टी में साँस लेता है और उसके द्वारा कीटाणु फेफड़े में जाकर उस स्वस्थ मनुष्य को भी बीमार करते हैं। एक रोगी बालक हाथ में थूक लगा कर पुस्तक के पन्ने उलटता है, दूसरा भी वही पुस्तक पढ़ता हुआ यदि वैसा ही करता है तो पहले व्यक्ति के थूक के जर्म्ज़ दूसरे के अन्दर जाकर रोग उत्पन्न कर देते हैं। रोगी खांसता है, मुंह को सबके सबके सामने खुला रखता है, निकट खड़े हुए दूसरे मनुष्य के अन्दर उसके कीटाणु मिश्रित थूक के परमाणु जाकर रोग उत्पन्न कर देते हैं।

६—संक्रामक रोगों से बचने का पहला उपाय यह है कि अपने शरीर को स्वस्थ रखा जाय। प्रत्येक रोग के दूर करने के लिये प्रकृति सहायक होती है। रक्त के भीतर के श्वेत परमाणु प्रत्येक शत्रु पर आक्रमण कर के उसे दूर करने का यत्न करते हैं। अतएव स्वस्थ, स्वच्छ शरीर में रोग के कीटाणु भी जाकर व्यर्थ हो जाते हैं। यदि ऐसा न हो तो फिर कोई भी स्वस्थ न रहे। गुंधा हुआ आटा रख देने से खमीर पैदा करनेवाले जर्म्ज आकर खमीर उत्पन्न कर देते हैं, किन्तु यदि आटा सूखा ही पड़ा रहे तो उसमें खमीर नहीं उत्पन्न होता है। रोग के कीटाणुओं के बढ़ने के लिये भूमि चाहिये, तभी जाकर वे प्रभाव जमा सकेंगे।

७—मानसिक शक्ति भी रोग-निवारण का भय-भीत मनुष्य के रक्त परमाणु क्षीण हो जाते हैं। हैज़ा, प्लेग आदि के दिनों में कई लोग भय खाकर ही, रोगाक्रांत हुए बिना किसी साधारण-से चिन्ह के प्रकट हो जाने पर अपने को रोगी समझ कर कष्ट पाते हैं। सावधानी रखिये, परन्तु भय से पराभूत होकर मृत्यु की ओर न लपकिये।

८—रोगी की सुश्रूषा करते हुए न तो रोगी के प्रश्वास को अपने अन्दर आने दें और न उसकी किसी वस्तु को खायें पीयें। रोगी से स्पर्श किया हुआ हाथ अपने मुख के अन्दर न डालिये और वहाँ से आकर कार्बोलिक अथवा अमृतधारा साबुन से भली प्रकार अपने हाथ धो डालिये। रोग यदि भयानक है तो (रोगी के पास से) आकर वस्त्र उतार कर दूसरे वस्त्र पहन लीजिये। मच्छर आदि के काटने से अपने को बचाये रखिये। बाजार में धूल उड़ती हो तो मुंह और नाक के सम्मुख रूमाल कर लीजिये। पुस्तक को थूक लगा कर पढ़ने का बुरा अभ्यास न डालिये।

९—कभी जलवायु और पृथ्वी में इस प्रकार के परिवर्त्तन होते हैं कि संक्रामक रोग स्वयमेव फैलते जाते हैं। हैजा फैलता है तो खान-पान की असावधानी से अजीर्ण होकर स्वयं ही उसके कीटाणु (जर्म्ज) पैदा होकर हैजा हो सकता है। इन्फ्लुएन्जा भी अपने आप फैलता जाता है। शीतला फैलती है तो दूर दूर के घरों में स्वयमेव हो जानी आरम्भ हो जाती है। ऐसी दशा में स्वल्प आहार खुली वायु में रहना, व्यायामादि करना, मन को प्रसन्न रखना और बन्द कमरों में न सोना, भारी सभाओं में सम्मिलित न होना तथा स्वास्थ्य के नियमों को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यथावत् पालन करना चाहिये। खाने-पीने, सोने जागने में सावधान रहना उचित उपाय हैं।

१०—सब रोगों से बचने का उपाय स्वच्छता है। शरीर, वस्त्र, कमरा, गृह, गली, बाजार, मुहल्ला, ग्रामादि सबकी स्वच्छता का पूरा यत्न करना चाहिये। जलवायु की शुद्धि के लिये प्रत्येक गृहस्थ को प्राचीन काल में दैनिक हवन यज्ञ करना पड़ता था। अब भी घर घर में होम होने लगें तो संक्रामक रोग इस प्रकार न फैलें। जिनके घर में हवन नहीं होता, वे इस प्रकार के रोग फैलने पर कीटाणुनाशक औषधियां पीस कर घी में मथ कर अग्नि में वैसे ही जला दिया करें। वे औषधियां इस प्रकार की हों:—

चन्दन बूरा, धूप लकड़ी, गुगल, बालछड़, मुश्कबाला, श्वेत सरसों, नीम के पत्ते, गिलोय, लोबान, अगर, तगर, छड़ीला, नागर मोथा, जायफल इत्यादि।

——*——

कुचला

चन्द्रभानु शर्मा वैद्य राजगुरु आयुर्वेद भवन खखौदा (मेरठ) उत्तर प्रदेश

हमारे भारतीय स्वाभिमानी नवयुवक वर्तमान युग के चकाचौध में आकर अपने धन स्वास्थ्य को मिट्टी में मिला रहे हैं उनको खबर नहीं है कि मनुष्य जिस भूमि में पैदा होता हैं वह उसी जलवायु में पलता हैं अतः उसी देशकी प्राकृतिक औषधियां विशेष कर जड़ीबूंटियां हितकारी हो सकती हैं जो औषधिया सहस्रों मिलों से बन्द पैक में आती है जो कि उस जगह की जलवायु से ही परिपुष्ट हुई हैं हमारे अनुरूप कैसे हो सकती हैं महर्षि चरक के कथनानुसार—

"यस्य देशस्ययो जन्तुतज्जं तस्यौषवं हितम्"

मैं एक उदाहरण उन आविष्कारो का देता हूं जिसके चकाचौंध में हम भारतवासी इस समय आ रहे हैं आयरलैन्ड व इङ्गलैन्ड में कुछ मीलका अन्तर है परन्तु वहांके चिकित्सक कहते हैं कि अमुक औषध आपके लिये लाभ दायक नहीं हैं क्योंकि दोनों की जलवायु में अंतर हैं अतः अपने ही शहर की बनी औषध आपको हितकारी हैं।

संस्कृत पर्य्याय—किम्पाकः विषतिन्दु—विषद्रुम करद्रुम—कुपीलु—कालकूट।

अन्यभाषा पर्य्याय—कुचला (हिन्दी) कुचिला (बंगला) कुचिलाह (मराठी) टनटिका कोतडी (तामिल) मुस्ति वितल्लू (तेलगु) कनि-एक-कुरा (मियामल) विषवीज़ (कन्नड़) स्ट्रिकनोस नबस वमिका (लेटिन) क्षेर कोचलूं (गुजराती)

उत्पत्ति स्थान—न्यूनाधिक प्रमाण सम्पूर्ण भारत में ऊत्पन्न होता है मद्रास में अधिक और बंगाल में कहीं कहीं उत्पन्न होता है रीवांराज्य में भी मिलता है।

यह एक शिखि जातीय बिल्कुल सपाट सीधा ३५-४० फीट लम्बा झुरमुरा वृक्ष है इसकी जड़ मोटी और त्वक तन्तुजाल पीताभा वाला होता है।

त्वक—इसकी त्वक पतली घनी श्वेत कृष्ण या पीत कृष्ण और मसहूर होती है।

लकड़ी—ताजी २ काटते हुये उसकी लकड़ी श्वेत दीखती है और टुकड़े होने पर पीत कृष्ण भासित होने लगती है लकड़ी कठिन धनी और हल्की होती है।

पत्र—इसके पत्र चिकने—दीर्घ-वर्तुलाकार—हरिद्रावर्ण-स्पष्ट शिरावाले और वृन्तवाले होते हैं।

पुष्प—इसके पुष्प छोटे श्वेत पीताभामय कोमल बहुसंख्य छोटे २ पत्रों के साथ निकलने वाले होते हैं।

फल—इसके फल छोटे २ वृत्ताकार नारगी के रंग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के चिकने मसृण श्वेत गूदे से भरे इस गूदे में २ से ५ तक वीज़ दवे हुये होते है।

वीज़—इसके वीज़ ।। वृत्त के गोलाकार चमकीले रेजताभा वाले रेशम से एक ओर से उठे और दूसरी ओर से चिपटे तथा मध्य में दवे हुये होते है।

उपयोग

कुचले वृक्ष की लकड़ी का चूर्ण वनाकर ज्वर अतिसार और अजीर्ण में देना चाहिये।

फोडों पर—जब फोडो के अन्दर मवाद जम कर गाँठ सी हो जाय इसके पत्तेकी पुल्टिस से फोडा की वृद्धि को रोकते है और जो गहरे फोडे होते है वे इसके प्रलेप से नष्ट हो जाते है और इसीके पत्ते पुल्टिस रुप मे फोडों को पकाने या उससे मवाद को निकालते है।

विषूचिका व अलसक—इसके मूलकी त्वचा का चूर्ण करके उसे नीम्बू के रस में सात भावना देकर चने प्रमाण वटीबना ले और प्रयोग में लावें।

गुण कुचला—कडवा बातनाशक मदकारक हल्का वातकी पीड़ा को दूर करता है कफ पित्त रुधिर विकार दूर करने वाला कंडू कफ ववासीर और व्रणको दूर कनने वाला है पान्डुकामला कोढ़ बात, अर्जीण नाशक है विशेषता यह है कि पौष्टिक पाचक वायुनाशक और काम देव को वढ़ाने वाला तथा विषैले जानवरो के विष को नष्ट करने वाला है।

शोधन विधि—इच्छानुसार कुचले को लेकर प्रथम भैंस के गोवर में तीन दिवस रक्खे वाद मे धोकर तीन दिन केले के रस में जोश दे पुनः त्रिफले के काढ़े में २४ घंटे जोश दे फिर गाय के मट्ठे में मिला दे फिर धोकर ऊपर के छिलका उतार और वीच की हरीपत्ती अलग कर गाय के घृत में भूनले और पीस कर काम में लावे।

द्वितीय शोधन विधि—आधा सेर मुल्तानी मिट्टी दो सेर पानी में घोलकर एक हांडी में भरदे फिर उसमें एक पाव कुचला छोड़ दे और हांडी को चूल्हे पर रखदे फिर मन्द २ चारघन्टे आग जलाये तव हांडी से कुचले निकाल गर्म पानी से धो डाले ऊपर का छिलका और बीच की हरीपत्ती निकाल अलग करदे फिर गाय के घी में भूनकर वारीक पीस काम में लावे (अनुपान भेद से अनेकों रोगों में गुण करता है) घी से भूना शुद्ध कुचला काली मिर्च सोठ नमक जीरा समान भाग कूट छान ले यह आम और वायु की प्रधानता—उदर भारी आदि में लाभकारी है।

शुद्ध कुचला १ तोला पीली सरसों १ तोला पुराना गुड़ १ तोला तीनों को पीस चना प्रमाण बटी बना ले १-१ गोली सुबह शाम गर्म पानी के साथ सेवन करें १०-१५ दिनमें पागल सियार का विष दूर हो जायगा पथ्य में मूंग की दाल गेहूं की रोटी और दूध देते रहना चाहिये।

शुद्ध कुचला २ रत्ती शहद और मलाई में जिसकी जांघ की जड़ में असह्य पीड़ा हो सेवन करावें।

पथ्य-साबूदाना चावल दूध नमकका परहेज़ करें।

गौमूत्र में शुद्ध कुचला में इक्कीस भावना गौ मूत्र को देकर वटी बना सेवन करें इससे पैरों का तनाव निर्बलता दूर होकर बल बढ़ता है।

शुद्ध कुचला करने से बहुत से बालक रातको शय्या पर ही पेशाब कर देते है उनको मालूम तक नहीं होता यह रोग शारीरिक निर्बलता या मेरुदण्ड गत ज्ञानतन्तुओं की निर्बलता से होता या मसाने की कमजोरी से बार २ पेशाब होने लगता है ऐसी हालत में शीघ्र लाभ होता है।

अगर अधिक स्त्री प्रसंग से हस्त मैथुन या अन्य कारणों से वीर्य क्षय होकर शरीर में कमजोरी बहुत अधिक हो गई हो शरीर की नसे ढीली पड़ गई हो और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद श्रेष्ठ आरोग्य विज्ञान है

आयुर्वेद विश्व विद्यालय की स्थापना का प्रशंसनीय प्रयास उपराष्ट्रपति का भाषण

हरिद्वार। भारत के उपराष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन् ने ऋषिकेश में भाषण करते हुए कहा कि आयुर्वेदका जो महत्व है वह किसी अन्य चिकित्सा प्रणाली में नहीं है। उपराष्ट्रपति सर्व पल्ली राधा कृष्णन आत्म विज्ञान भवन रामनगर ऋषिकेश में १२ अगस्त को पधारे। वेद पाठियों द्वारा प्रधान द्वार और सत्संग भवन में आपका स्वागत हुआ।

स्वामी दयानिधि जी आचार्य आयुर्वेद विद्यालय ने संस्कृत में अभिनन्दन पत्र पढ़ा। उसका यथा तथ्य अनुवाद रायबहादुर पं० श्री दत्तजी ने कहा कि बाबा काली कमली क्षेत्र की सेवाओं का वर्णन किया और अखिल भारतीय विद्यापीठ द्वारा आयुर्वेद विश्व-विद्यालय की स्थापना की योजना पर प्रकाश डाला। तदनन्तर काली कमली क्षेत्र से श्री शान्ति प्रपन्न जी एम्० एल० ए० ने गंगोत्री जल व माला आदि तथा ऋषि केश व्यापार समिति की ओर से अभिनन्दन पत्र और ५०१ रु० विहार बाढ़ पीड़ितों की सहातार्थ भेंट किए।

माननीय उपराष्ट्रपति ने मान पत्र के उत्तर में कहा कि इस आत्म विज्ञान भवन को देखकर बड़ा हर्ष हुआ। इस समय देश की मांग है कि देश की सतत शिक्षा से शिक्षित किया जाय। आशा है कि यह संस्था वास्तव में आत्स ज्ञान कराकर मनुष्यों तथा जगत् का कल्याण करेगी। आयुर्वेद विश्वविद्यालय की स्थापना के सम्बन्ध में बोलते हुए आपने कहा कि आयुर्वेद वर्त-मान के विज्ञानों जैसा नहीं। वरंच यह तो आरोग्य शास्त्र है। आयुर्वेद केवल शरीर की चिकित्सा ही नहीं विद्या बुद्धि और बल को बढ़ाने वाला है। प्राचीन ऋषियों ने आयुर्वेद का जो महत्व किया है वह दूसरी पद्धतियों में नहीं मिल सकता।

अन्त में पं० दत्तजी ने माननीय उपराष्ट्रपति का स्वागत करते हुए आपको व अन्य आगन्तुक महानु-भाओं को धन्यवाद दिया। उन्होंने आयुर्वेद विश्व-विद्यालय संबंधी योजना के कागज पत्र उपराष्ट्रपति को दिये कि आप इस सम्बन्ध में अपने परामर्श द्वारा द्वारा हमारा पथ दर्शन करें।

———

(सन्मार्ग से उद्धृत)

अनुभूत योग

नं० १ श्लेष्म ज्वर पर

एक रोगी ३५ वर्षीय युवक जंगल के निकट रहनेके कारण जुकाम तथा श्वासके वेग से बहुत पीड़ित था जु-काम खुश्क होकर कफ सीनेपर जम गया जिसके कारण श्वास का अधिक वेग यदाकंदा जूड़ी-ताप भी आजाता अनेक उपचारो के उपरांत निम्नाङ्कित योग से पूर्ण लाभ हुआ गुलबनफ्शा ६ मा०, गाज़ुवाँ ६ मा०, मुलहठी ६ मा०, मुनका १ तो०, ख़त्मी ६ मा०, ख़ाकसीर ६ मा० अडूसे के पत्ते, १ छ० गुरुच, ।।० लहसोड़ा ५ तो कुल सामान ।।। सेर जल में पकावे जब ।= शेष रहे उतारकर ।- मिश्री मिलाकर प्रातः सेवन करे सायंकाल उसी जोशान्दा को पुनः ।।। जल मे पकाकर उसी भांति पिलानेसे पूर्ण लाभ होगा साधारण भोजन मूंग की दाल दलिया गेहूं का साग टमाटर आलू गर्म वस्तुएं निषेध।

नं० २ कायाकल्प

जंगी हरड़े जिसे झीटी हरड़े कहते हैं १-१ प्रति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिन बढ़ाता जावे ४० दिन तक ४० हरड़े तक सेवन करे पुनः १-१ करके ४० दिन मे कम करे इससे शरीर का कायाकल्प हो जावेगा। याद रहे ८० दिन तक कोई भी भोग-विलास न करे चने की रोटी घी से खावे साग सबज़ी खावे चने छिलके सहित चने के मोटे आंटे की रोटी खाना चाहिये वेसन मना है इसके द्वारा कल्प हो जाता है।

नं० ३ खाज खुजली

हल्दी ।। सरसो का तेल ।१ मदार का स्वरस ।२ उपरोक्त वस्तुएं कढ़ाई मे डाल कर आग पर पकावे जब गाढ़ा हो जावे उतार कर कुछ ठंढा होनेपर छान कर शीशी में रख ले कैसा ही खाज खुजली छाजन उकौता सब को ठीक करता है।

नं० ४ बालरोग पर

कटेली के फूल २ मा० अजवाइन २ मा० पान बंगला१ सब को पीस कर उड़द बराबर गोली बनाले बच्चों के दस्त एवं पेट फूलने मे लाभ करता है माता को परहेज़ रखना ज़रूरी है।

नं० ५ बच्चों के दाँत के समय दस्तों मे

छुहारा ४ भाग जायफल १ भाग दक्षिणी अफीम मसूर भर सब को पीसकर मसूर के समान गोली बनावे दिन मे ४ वार खिलाने से दस्त एवं दूध डालना बन्द हो जाता है।

आपका—रजि० वैद्य शान्तिस्वरूप पाठक
मु० पो० मोहम्मदी जि० खीरी

साहित्य समीक्षा

'गुरुदेव'

मासिक पत्र—सम्पादक एवं प्रकाशक—आचार्य्य श्री सूर्य्यदत्त शास्त्री, प्राप्ति स्थान—'गुरुदेव' कार्य्यालय विनोद-कुटीर धर्मशाला घाट पटना सिटी (बिहार) वार्षिक मूल्य ६) एक प्रति ६ आना

आचार्य्य श्री सूर्य्यदत्त शास्त्री के सम्पादकत्व में प्रकाशित होने वाले 'गुरुदेव' मासिक पत्र के १ वर्ष का ७-८संयुक्ताङ्क हस्तगत हुआ। वर्तमान काल में सुयोग्य सम्पादक ने 'गुरुदेव' को प्रकाशित कर एक अत्यावश्यक अभाव की पूर्ति की है। आधुनिक कालमें भारत वर्ष एवं धर्म्म संकटापन्न परिस्थिति में हैं। ऐसी अवस्था में विना किसी साम्प्रादायिक भेदभावके पूर्व पुरूषों का चरित्र एवं सद्विचार का प्रकाशन अति प्रशंसनीय है। जनता से मेरा सादर अनुरोध है कि इस आदरणीय पत्र को अपना कर सम्पादक के उत्साह को बढ़ाते हुए मानव जन कल्याणार्थ प्राचीन गुरुदेवों की कीर्ति प्रकाशित करने में सहयोग दें। मैं 'गुरुदेव' की हार्दिक उन्नति चाहता हूं।

—सम्पादक

स्टेट फैकल्टी आफ् आयुर्वेदिक मेडीसिन

सन् १९३८ में संस्थापित जनरल कौंसिल एण्ड स्टेट फैकल्टी आफ् आयुर्वेदिक मेडिसन पश्चिम बंगाल के चुनाव के फल की घोषणा विगत १७ अगस्त को हुई। उसमें बड़ावाजार अंचल की धन्वन्तरि परिषद् के मनोनीत कविराज श्री नारायण शर्मा सर्वाधिक मतों से से विजयी घोषित हुए। नियमतः बृहत्तर कलकत्ता से ५ ही व्यक्ति चुने जाते हैं। १२०० मतदाताओं में से ८०० ने मत दिये।

(१) कविराज श्री नारायण शर्मा—४६०
(२) कविराज-शिवरंजन सेन—४५०
(३) कविराज-रवीन्द्रनाथ चक्रवर्ती—३५५
(४) कविराज-फणिभूषण राय—३४५
(५) कविराज-रामावतार शर्मा—३२५

उक्त सज्जनों को हार्दिक बधाई देते हुए भगवान् धन्वन्तरि से प्रार्थना है कि इन्हें ऐसी शक्ति दें कि आयुर्वेद समाज का अधिकाधिक हित कर सकें।

—सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वतन्त्र भारत में एक महत्वपूर्ण बृहत् रसायनशाला

का

निर्माण करके स्वास्थ्य संरक्षण में पूर्ण सहयोग।

एलोपैथिक औषधियां :—जिसमें सभी प्रकार के इन्जेक्शन, टिंचरस्पीरिटस्, एक्सट्रैक्टस् एवं अमूल्य पेटेण्ट औषधियां :—हारमोशोका, तुलसोल गैस्ट्रोसोल आदि।

आयुर्वेदिक औषधियां :—आसव, अरिष्ट, चूर्ण, रस, भस्म, वटी, पाक, अवलेह आदि शास्त्रोक्त योग तथा तथा वीर-बच्चा (बालामृत), नियो च्यवनप्राश (च्यवनप्राश का नवीन वैज्ञानिक रूप), नियो ज्वरान्तक सुधा आदि।

शृङ्गार प्रसाधन :—देशी जड़ी बूटियों के योग से निर्मित सुगन्धित तैल, स्नो, पाउडर, क्रीम, आलता, नेल पालिश एवं नहाने व कपड़े धोने के उच्चकोटि के साबुन आदि। इस विभाग की अनुपम भेंट :—

बिड़ला कटेली चम्पा केश तैल — मनोहर गन्धयुक्त

बाइ-ला आमला केश तैल — ३६ देशी जड़ी बूंटियों द्वारा निर्मित

युडीकोलन (डी लक्स)

बिड़ला लेबोरेटरीज़ कलकत्ता—२०

प्रकाशित हो गया !

'जय आयुर्वेद' का अभूतपूर्व विशेषांक

पथ्यापथ्य चिकित्साङ्क

पृष्ठ संख्या ३५०

शीघ्र ही ३ रुपये १३ आने भेजकर प्राप्त करें प्रतियां सीमित छपी हैं।

प्राप्ति-स्थान:—

जय आयुर्वेद कार्यालय, मोती चौक

जोधपुर (राजस्थान)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नियो-च्यवनप्राश
(विटामिन और कैल्शियम मिश्रित)

कास, श्वास व क्षय नाशक

झण्डू एवं बिड़ला लेबोरेटरीज़

द्वारा प्रस्तुत सभी तरह की दवाओं एवं तैलों व साबुनों के साथ साथ सभी तरह की विलायती दवायें तथा आधुनिक सुन्दर डिजाइन के स्टेशनरी के सामान उचित मूल्य में प्राप्त करने का एक मात्र स्थान।

लखोटिया ट्रेडिंग एजेन्सी

चूरू (राजस्थान)

बिड़ला
कटेली चम्पा
केश तैल

अनुपम गन्ध एवं केश-शोभा केलिये

आप की

सभी आवश्यकतायें पूरी होंगी :—

हर तरह के सुगन्धित तैल, साबुन, स्नो, क्रीम, पाउडर, नाखून पालिश, बिन्दी आदि प्रत्येक शृङ्गार के सामानके साथ साथ कम दामो में अच्छा कपड़ा धोने का साबुन मिलने का एक मात्र स्थान :—

शक्ति स्टोर्स

६०, पाथुरिया घाट स्ट्रीट, कलकत्ता—६

प्रकाशचन्द्र गुप्त ६०, पाथुरिया घाट स्ट्रीट द्वारा प्रकाशित तथा जेनरल प्रिण्टिंग वर्क्स लि०, ८३, पुराना चीनाबाजार स्ट्रीट, कलकत्तामें मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुकुल पत्रिका

आयुर्वेद का एकमात्र सर्वोत्तम मासिक पत्र

४२५१६
२४.७.५५

* विकार क्रम *

श्रीपति प्रसाद पाठक "श्रीश" पो० बक्सर (शाहाबाद)

जब जन मन प्रकृति के साथ
मिथ्या हार और विहार—
का अतियोग और अयोग,
समता की वहीं पर हार।

और हुए विकृत सम दोष,
दैहिक विकृति बनी सरोष,
कायिक मानसिक गति से—
सहज आगन्तुक क्रम चार।

क्षुधा वार्द्धक्य मृत्यु सुषुप्ति,
संहज विकार में आते—
तितीर्षा, क्रोध, लोभ, प्रमोद;
की गति मानसिक, पाते।

पुनः शारीर जन्य हुए,
ज्वरातीसार पाण्डु विकार।
क्षणिक घटनादि से उद्भूत,
क्षतज विकार हो जाते।

भयंकर यातना मय रूप,
मानव का बना पाते,
वही संघातिक क्रम—
का अचानक नाम, दोष विकार।

वार्षिक मूल्य
३)
एक प्रति ।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

सम्पादक—श्री प्रकाशचन्द्र गुप्त M.Sc सह-सम्पादक—श्री मदनगोपाल बासोतिया आयुर्वेदाचार्य

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

विषय	लेखक का नाम	पृष्ठ सं०
१ आयुर्वेद (कविता)—डाक्टर एम० पी रञ्जन, आसनसोली	....	९७
२ मस्तिष्क शोथ (Encephaletis)—कविराज श्री जनार्दन भारद्वाज	...	९८
३ रतिज-रोग (Yenerial Diseases)—डा० श्री श्यामदास प्रपन्नाश्रमी आयुर्वेदाचाय		१०२
४ वैद्य तथा उपवैद्यों में अन्तर—वैद्य श्री सुन्दरलाल जोशी (कांवट) आयुर्वेद दातव्य औषधालय जुगसलाई (बाजार) टाटानगर	....	११०
५ आर्ष च्यवनप्राश – कविराज, पं० श्री सुधाकर त्रिवेदी, सिमडेगा (राँची)	...	११२
६ टमाटर—डाक्टर एम० पी० रञ्जन. आसनसोली	...	११३
७ हमारा स्वास्थ्य और राष्ट्र—कविराज श्री राजकिशोर सिंह वैद्यशास्त्री	....	११६
८ आयुर्वेद विज्ञान परिषद् कलकत्ता—कविराज श्री केशवदेव शास्त्री	...	११९
९ श्वास रोग और इसकी चिकित्सा—कविराज श्री केशवदेव शास्त्री	....	१२१
१० साहित्य-समीक्षा—	...	१२३
११ अनुभूत –प्रयोग—	...	१२४

T. B. तपेदिक

और पुराने ज्वरों के निराश रोगियों—क्या आपने भारत विख्यात महौषधि "जवरी" का सेवन अभी तक नहीं किया है। जो इस दुष्ट और भयंकर रोगसे तड़प रहे हैं। तो यह आपकी भारी भूल है। और स्वयं अपने जीवन को मृत्यु के मुख में ढकेल रहे हैं। अब भी समझें, और तुरन्त जवरी का सेवन शुरू करके इस दुष्ट रोग से अपने जीवन को बचावें। अन्यथा फिर वही कहावत होगी—कि अब पछताये क्या होता है, जब चिड़िया चुग गई खेत। 'जवरी' भारत के पूज्य ऋषियों की अद्भुत खोज और आयुर्वेद विद्या का अनोखा रहस्यमय चमत्कार है, जिसने भारत के कोने कोने में हजारों रोगियों के प्राण बचाकर एक हलचल सी मचा दी है यदि आप सब तरफ निराश हो चुके हो तो भी परमात्मा का नाम लेकर एक बार "जबरी"की परीक्षा जरूर करें। परीक्षार्थ ही नमूना रक्खा है, जिसमें तसल्ली हो सके, तुरन्त आर्डर देकर रोगी के प्राण बचावें। मूल्य 'जबरी' नं० १ (स्पेशल) सोना, मोती वाला पूरा ४० दिन का कोंस ७५) रु० नमूना १० दिन २०) रु० तथा जबरी नं० २ मूल्य पूरा कोंस २०) रु० नमूना १० दिन ६) रु० महसूल अलग है।

पता—रायसाहब के० एल० शर्मा एण्ड सन्स रईस जगाधरी। E. P.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ॐ

प्राच्यं प्रतीच्यं यत्किंचिद् आयुर्वेदात्मकं हि तत् ।
तद्गौरवो विजयते, विश्वस्मिन् व्याधिसंकरे ॥ १ ॥

नोट—१-"यदिहास्तितदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्", इति चरक वचनात् ।

आयुर्वेद-गौरव

वर्ष २ | जनवरी १९५५ | संख्या ४

आयुर्वेद

[रचयिता :—डाक्टर एम० पी० रञ्जन, आसनसोली]

जगत में आयुर्वेद महान् !
निखिल विश्व में गूंज रहा है, इसका गौरव - गान !
विविध विषय से भूषित है यह, भारत का अभिमान !
भ्रमवश पर हम भूल गये थे, हीरे की पहचान !!
सदियों से सब ने ठुकराया, छाया था अज्ञान !
देखा - देखी हम ने भी तो, किया बहुत अपमान !!
पर, ठोकर खाने पर हमको, मिला दिव्य यह ज्ञान !
आयुर्वेद समर्थ जगत में, कर सकता कल्याण !!
दुःख सागर से तरने का है, एक यही जल-यान !
संकट की इस बेला में यह, बन आया भगवान !!
इसके पुनरुद्धार हेतु हम, हो जावें बलिदान !
मिटें सहर्ष स्वयम् पर इसकी, मिटे न अनुपम शान !!
अपने गौरवमय अतीत की, छेड़ पुरातन तान !
हम मृतकों को आज मिले, फिर नवजीवन का दान !!
अस्त - व्यस्त पीड़ित मानवता के संकट में प्राण !
विश्व शान्ति के हेतु चलाओ, संकट - मोचन बाण !!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मस्तिष्क शोथ (Encephaletis)

लेखक—कविराज जनार्दन भारद्वाज,
अध्यक्ष-भारद्वाज आरोग्य निकेतन, हाजीनगर, २४, परगाना (बंगाल)

इस वर्ष १८ अगस्त को "अमृत बाजार पत्रिका में उन्हीं दिनों पटना में हुए मस्तिष्क शोथ के मरक का समाचार प्रकाशित हुआ था। मेरे एक मित्र जो कि उसी दिन समीप बैठ उक्त समाचार को पढ़ रहे थे, पूछ बैठे कि क्या आयुर्वेद पद्धति से भी इस रोग की चिकित्सा हो सकती है ? और मुझे उनका समाधान करना पड़ा। और उसी समय इस लेख के विचारने जन्म लिया।

इस लेख में मस्तिष्क शोथ के, पाश्चात्य पद्धति से, निदान-संप्राप्ति लक्षणोंका वर्णन प्राच्य विवेचना एवं चिकित्सा सूत्र के साथ किया जायगा। हमें ऐसा नहीं सोचना चाहिये जैसा कि अन्य नवीन पद्धतियोंके चिकित्सक कहते हैं जिन्हें अंगो की रचना, क्रिया, विकृति एवं विकारकारी जीवाणुओं का ज्ञान नहीं वे उसकी चिकित्सा कैसे कर सकते हैं। इसका सीधा सा उत्तर यही है कि वात, पित एवं कफ के विकृत होने पर जो जो लक्षण उत्पन्न होते हैं, उन लक्षणों के अतिरिक्त लक्षण वाला यदि कोई रोग हो तो हम उसकी चिकित्सा करने में असमर्थ माने जा सकते हैं। और यदि उन लक्षणों के अतिरिक्त लक्षणों वाला कोई रोग ही नहीं है तो नित्य उत्पन्न होनेवाले इन नये नामों के भय से बचने का उपाय चरक ने लिख दिया है।

विकारनामाकुशलो न जिह्रीयात् कदाचन
न हि सर्वविकाराणां नामतोऽस्ति ध्रुवा स्थितिः॥

आयुर्वेदीय चिकित्सा, उन वात, पित्त एवं कफके वृद्धि या ह्रास के प्रति समता के लिये प्रयास का ही नाम है। इस "धातु साम्यक्रिया चोक्ता" को सांगोपाङ्ग समझने पर कोई भी हमारी वास्तविकता को नहीं ठुकरा सकता।

प्रारंभिक (Primary) स्वरूप का मस्तिष्क शोथ बिषाणुओं द्वारा होता है, जैसे समोह मस्तिष्क शोथ, (Encephalitis Lethargica) तथा तीव्र प्रसृत मस्तिष्क मज्जाशोथ, Acute (diffused) (Encephalomyelitis) आदि उपद्रव-स्वरूप (Secondary Tpe) का मस्तिष्क शोथ या तो सीधा मस्तिष्क धातु (Brain Tissuo) पर किसी एक संक्रमित स्थानसे जीवाणुओंका आक्रमण होकर मस्तिष्क विद्रधि के रूप में यथा दोषमयता, (Septicaemia) पूयमयता (Pyaemia) आदि के द्वारा अथवा विशिष्ट संक्रा-

Dread 'Encephalitis'

Victims Of Mystery Malady In Patna City

It is learnt that over a dozen cases of the mystery disease have been reported recently in Patna. Of these about half a dozen cases proved fatal.

It is further learnt that in the Children Hospital alone adout half a dozen cases of this disease were admitted from different parts of the town of which three or four cases proved fatal.

The mystery disease, which is known as encephalitis, has claimed as its victims children upto the age of 14 or little above.

The first few cases were reported from Jamshedpur.

An eleven year old young boy died in central Patna in Kadamkuan yesterdy of virus encephalitis after a few hours' illness. The boy was said to have been quite half and hearty and played games with his friends the previous day. —(UPI.)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मक ज्वरों के द्वारा यथा मसूरिका, शीतला, मस्तिष्कावरण शोथ, यक्ष्मा और फिरंग द्वारा होता है।

परिभाषा—वह रोग जिसमें मस्तिष्क धातु में प्रदाह (Inflamation) या शोथ हो जानेके कारण शिरः शूल, वमन, मोह, (Lethargy) मूर्च्छा यदा कदा प्रलाप तथा अंग विशेष में प्रतिक्षोभ (Irritation) या स्थान विशेष का घात (Paralysis a particular area) आदि लक्षण पाये जाते हैं।

वर्गीकरणः—(१) पूयज मस्तिष्क शोथ या मस्तिष्क विद्रधिः इसमें विशेष कर स्तवक, गोलाणु माला गोलाणु (Staphylo—Strepto—Coccus)-आंत्र दंडाणु (B. Coli) या फुफ्फुस् गोलाणु (Pnuemo-Coccus) का उपसर्ग प्रधान है।

(२) निस्यन्दनशील (Filterable or Virus) जीवाणु जन्य मस्तिष्क शोथ :—इस विभाग में समोह मस्तिष्क शोथ, तीव्र प्रसृत मस्तिष्क मज्जा, शोथ, अलर्कविष (Rabies)

शैशवीय अंगघात (Poliomylitis) विसर्प तथा संक्रामक ज्वरजन्य मस्तिष्क शोथ आदि आते हैं। इस लेख का प्रयोजन 'समोह मस्तिष्क शोथ या जानपदिक (Epidemic) मस्तिष्क शोथ से है।

यह रोग शीतकाल में, भारत में विशेषकर वर्षा से शिशिर ऋतु में किसी एक नगर या किसी विशिष्ट क्षेत्र में जानपदिक या मरक के रूप में फैलता है। किसी भी आयु के व्यक्ति में विशेषकर दो से चौदह वर्ष की आयु में तथा स्त्री-पुरुष दोनों में समान भाव से होता है। रोग का प्रसार विन्दु क्षेत्र (Droplet) से स्वस्थ वाहक के द्वारा होता है। विषाणु (Virus) नासोग्र सनिका (Nasopharyngeal) के नाड्याओं से मस्तिष्क तक पहुंचते हैं।

संप्राप्ति (१) मस्तिष्क में पहुंचे हुए विषाणु निम्न अंगों को आक्रान्त करते हैं। मध्यमस्तिष्क का परिसुरंगीय विभाग (Periaqueductal region of mid brain) उष्णीषक (Pons) तथा सुषुम्ना शीर्ष [किन्तु समीपस्थ बृहद् मस्तिष्क एवं धम्मिल्लक की धुसर वस्तु (Cortex) विकृत नहीं होती। (अ) तीव्र प्रकार में विकृत स्थान पर शोफ (Oedema) रक्ताधिक्य (Congestion) तथा नीलोहांकित रक्तस्राव (Petechial haemorrhages) हो जाता है। (आ) जीर्णावस्था (Chronic stage) में श्याम पत्रिका (Substania nigra) के रंजित कोषाओं (Pigment cells) का अपजनन एवं लोप होने लगता है तथा शुक्ति गर्भ (Globus pallidus) के कोषाओं का भी अपजनन (Degeneration) होने लगता है। (२) रक्तवाहिनियों में रक्ताधिक्य हो जाता है जो कि परिवाहिनीय लसकायाणुक (Perivascular bymphoeytic) के अन्तः प्रसार (Infiltration को प्रकट करता है। यह परिवर्त्तन मस्तिष्क मूल में विशेष रूपसे पाया जाता है। (और यह परिवर्तन पलितमज्जा शोथ (Polomylitis) या फिरंग के समान ही होता है। किन्तु उन रोगों में बव्हाकारी (Poeymorph) श्वेत कण पाये जाते हैं, और इसमें वे नहीं पाये जाते। आक्रान्त स्थान की नाडी धातु (Nerve tissue) अति सूक्ष्म (विकृत) नाडी धातु कोषाणु (Microgliacells) से भर जाती है जिसमें भक्षकायाणुओं द्वारा भक्षित नाडी कन्दाणुक (Neuronophagia) बहुतायत से पाये जाते हैं। तथा धुसर कोषा (Ganglion cels) नष्ट होने लगते हैं।

(३) इस रोग में मस्तिष्क के श्वेत पदार्थ—(Night matter) में कोई विकृति नहीं होती।

(४) मस्तिष्क सुषुम्ना जलका भार (Pressure) बढ़ जाता है। लसकायाणु (Tymphocytes) अधिक बढ़ जाते हैं। प्राटीन तथा क्लोराइड साधारण मात्रामें ही रहते हैं किन्तु शर्करा कुछ बढ़ जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोगका आक्रमण प्रकार, विकार कारिता, रोगावधिमें अनेक रूपता पाई जाती है।

तीव्र प्रकार—(या जानपदिक प्रकार)

पूर्व रूप—अंगमर्द, अरुचि (इच्छाद्वेष) शिरशूल स्तैमित्य (Shivering) लिप्तजिह्वा, गाढबिट्कता यदा कदा तीव्र ज्वर भी पाया जाता है (ज्वर तो होता ही है किन्तु कई बार प्रारम्भ में ही तीव्र ज्वर पाया जाता है जिससे श्लेष्मज्वर (इन्फ्लुएञ्जा) का भ्रम हो सकता है) और धीरे धीरे युग्मदृश्यता (Diplopia) तन्द्रा तथा कंपवात (Parkinsonian Syndrome) आदि लक्षण प्रगट होने लगते हैं।

लक्षण—१ रोगका सर्व प्रथम तथा महत्वपूर्ण लक्षण समोहावस्था है। यह समोहावस्था (Lathargy) दिनों दिन बढ़ती जाती है। दिन के समय रोगी निद्रित के समान पड़ा रहता है किन्तु रातको रोगी को चैन नहीं पड़ता एवं निद्रा बिलकुल नहीं आती और कभी कभी रोगी प्रलाप भी करता है। दिनमें रोगी इतना अधिक निद्रित के समान हो जाता है कि मुखका ग्रास तक चबाते चबाते रुक जाता है और निद्रितके समान झूमने लगता है। मल मूत्र का त्याग भी विस्तर पर ही कर देता है।

कभी कभी जानपदिक स्वरूप के रोगमें समोहता के स्थानपर रोगी अधिक क्षुब्ध हो जाता है और बहुत अधिक बकझक करता है। इस अवस्थाके रोगी अल्प तथा असाध्य प्राय होते हैं। २—नेत्रघात (Ophthalmoplagia) यह कई प्रकार का हो सकता है इसमें निम्नलिखित विकृतियां पाई जाती हैं। कनीनिका विषमाकार हो जाती है निमीलनोन्मीलन तथा प्रकाश प्रत्याक्षेप (Reflex) क्रिया क्षीण या नष्ट हो जाती है। बातहतवर्त्म (Ptosis), वक्र दृष्टि) Squint) युग्मदृश्यता (Diplopia) हो जाती है। नेत्रद्वयकी सह चालन क्रियामें अन्तर आ जाता है। आगे चलकर नेत्रके विकार और भी बढ़ जाते हैं। नेत्रगति नष्ट या विकृत हो जाती है। और देखने की दिशामें ग्रीवा या गात्र भी मुडने लगते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य शीर्ष नाड़ियोंके विकृत होनेसे अर्दित, हिक्का, भ्रम तथा कम्पवात आदि हो जाते हैं। (Parkinsonism) तथा मांस पेशियां क्षीण होने लगती हैं।

जीर्ण प्रकार—इस अवस्था के रोगियोंमें रोग का आक्रमण एवं प्रसार धीरे २ तथा गुप्त होता है। अस्तु कई दिनों तक तो रोगी कोई ध्यान भी नहीं देता। लक्षणों में सर्व प्रथम ग्लानि (इच्छाद्वेष) हो जाता है, युग्म दृश्यता (Diplopia) हो जाती है किन्तु रोगी के दैनिक कार्य में व्यवधान नहीं पड़ता, तथा अंगोंके कार्यमें शिथिलता आ जाती है। जैसे किसी रोगीका दक्षिण हस्त आक्रान्त हो रहा हो तो सीने लिखने आदि की क्रियाएं मन्द तथा कठिन होती जाती है। मांसपेशियां क्षीण एवं कठिन होने लगती हैं, तथा पेशियों की गति मन्द और उनमें कम्प होने लगता है आगे चलकर नेत्रों के बन्द करनेपर पलकों में कम्पन होने लगता है। अनैच्छिक पेशियोंकी गति अनियंत्रित अनियमित तथा मन्द हो जाती है। तीव्र प्रकार में वर्णित नेत्र सम्बन्धि अन्य बिकार आगे चलकर उत्पन्न होने लगते हैं। चर्म चिकना एवं म्लान हो जाता है।

उपद्रव एवं अनुगामी रोग (Sequetae):—जानपदिक प्रकारमें निम्न विकार उपद्रव तथा अनुगामी रोगके रूपमें पाये जाते हैं। उन्माद दृष्टिमन्दता (Dimnessfrision), सुषुप्तता (Sleep rhythm पेशीक्षय एवं पेशियोंकी कार्य मन्दता, समवर्तीक विकार (Matabolic disturbeneos) मोटापा अवटुका स्रावाधिक्य (Hyperthyroi dism), दुस्वास्थ्य (Cachaxia) लालास्रावाधिक्य आदि। इनके अतिरिक्त कम्पवात (Parkinsoniasm) नैतिक पतन (Moral degenaration)मानसिक अशान्ति आदि।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साध्यासाध्यता तथा रोगावधि :—जानपदिक प्रकारमें ४० प्रयिशत रोगी बच पाते है। जिनमें भी २५ प्रतिसत ही पूर्ण स्वास्थ्य लाभ कर पाते है अवशिष्ट में उपद्रव स्वरूप कुछ न कुछ विकार रह जाता है। रोगकी अवधि कोई निश्चित नहीं। तीव्र प्रकार में एक से दो सप्ताह रोगावधि मानी जाती हैं किन्तु कई बार कुछ घण्टों में भी रोगी समाप्त हो जाता है। जीर्ण प्रकार कई वर्षो तक चल सकता है। निदानः—अधिकतर जानपदिक रूप से व्याधि का प्रसार पाया जाता है। किंचित् ज्वर, प्रलाप मानसिक क्षोभ, समोहता तथा नेत्र संबंधि विकार निदानमें सहायक हो सकते हैं। ब्रह्मवारी की रासायनिक परीक्षा में ब्रह्मवारी लगभग स्वच्छ पाया जाता है। सापेक्ष निदाना (Differential Diagnosis) मस्तिष्क सुषुम्न ज्वर, क्षयज मस्तिस्कावरणशोथ, शीर्षण्य रक्तवाहिनियोंके रोग, मस्तिष्कगत अर्बुद, पलित मस्तिष्क मज्जा शोथ (Poliomy litis), पलित मस्तिष्क शोथ (Polioence phalitis), तीव्र संक्रामक रोग मूत्र विषमयता (Ureania) औषध विष, खाद्य बिष (Batulism)।

प्राच्य विवेचना

यह व्याधि तीनों दोषों के सन्निपातसे होती है। तीव्र प्रकारमें ज्वरका रहना निश्चित है। यह ज्वर सन्निपातज होते हुए भी वायु प्रधान लक्षणोंवाला होता है। अन्य दोनों दोष मध्य अल्प की अवस्थामें साथ साथ रहते हैं। इस रोगमें अधिकतर पित्त का वायु के उपरान्त द्वितीय स्थान रहता है। कफ तो यदा कदा ही द्वितीय स्थान ग्रहण करता है। शास्त्रमें संक्षेपमें सन्निपात के १३ भेद करनेके उपरान्त भी अनेकों नाम के भिन्न २ संहिताओंमें भिन्न लक्षणोंसे युक्त, अन्य कई सन्निपातों का वर्णन मिलता है। इसके अतिरिक्त चरक एवं सुश्रुत में वर्णित सन्निपातके लक्षणोंमें साम्यता नहीं है। वस्तुतः शास्त्रमें जो ज्वरों का या सन्निपात ज्वरोंका वर्णन है वह अति सूक्ष्म है। शास्त्रमें जो ज्वरोंका वर्गीकरण किया गया है (यथा—ज्वरस्त्वेक एव सन्तापलक्षणः तमेवाभिप्राय विशेषाद् द्विविधमाचक्षते निजागन्तु विशेषाच्च। तत्र निजं द्विविधं चतुर्विधं पञ्चविधं सप्तविधञ्च जगुः) उन विभागोंके प्रत्येक ज्वरके लक्षणोमें शुद्ध उन उन उन विभागों के अन्तर्गत आनेवाले लक्षणोंको ही लिखा गया है। अस्तु हमें किसी ज्वराक्रान्तके ज्वरका निदान करते समय प्रत्येक विभागमें उसका कौन सा कौनसा स्थान है (यथा कौन दोष प्रधान है किस धातुको आश्रय करके है आदि। इसका पूर्ण ज्ञान करना होगा। समोह मस्तिष्क शोथ की सुश्रुत संहिताके निम्न सन्निपात लक्षणोंके साथ बहुह साम्यता है।

निद्रोपेतमभिन्यासं क्षीणमेनं हतौजसम्।
सन्यस्तगात्रं सन्यासं विद्यात्सर्वात्मके ज्वरे॥
ओजो विस्रंसते यस्य पित्तानिलसमुच्छ्रयात्।
स गात्रस्तम्भशीताभ्यां शयनेस्याद (प्सुर) चेतनः॥
अपि जाग्रत् स्वपन जन्तुस्तन्द्रालुश्च प्रलापवान्।
संहृष्टरोमास्रस्ताङ्गो मन्द सन्तांप वेदनः॥

किन्तु जीर्ण प्रकार का समन्वय 'वातव्याधि' में किया जायगा। मस्तिष्क मज्जक्षय के लक्षणों का मज्जा क्षय के लक्षणों से साम्य है।

चिकित्सासूत्र—आयुर्वेद पद्धति से किसी भी रोग की चिकित्सा करने से पूर्व प्रत्येक चिकित्सक को श्रीयुत कविरत्न गङ्गाधर के निम्न बचनों का अनुसरण करना ही पड़ता है :—"विकार प्रकृतीव्याधीनां समवायिकारणानि वातादिदोषान् रसरक्तादिदूष्यांश्च तेषां कार्य्यं दृष्ट्वाऽधिष्ठानान्तराणि च बुद्धा कर्म्मचिकित्सितं समाचरेत्।" चरक सूत्र० अ० २८ श्लोक सं० ३९ की जल्पकल्पतरूसमाख्यया टीका। अर्थात् व्याधि की बिकार प्रकृति एवं समवायिकारण वातादि दोष,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रस रक्तादि दूष्य और उनका कार्य तथा अधिष्ठान आदि का पूरा ज्ञान करने के उपरान्त चिकित्सक को चिकित्सा करनी चाहिये।

इस रोग में बात प्रधान सन्निपात की चिकित्सा से लाभ होता है किन्तु पित्तल द्रव्य नहीं होने चाहिये क्योंकि पित्त द्वितीय प्रकुपित दोष है।

प्रमुख औषधियां कषाय—चरकोक्त ज्वरहर कषाय, गुडुच्यादि क्वाथ, पटोल पत्रादि क्वाथ। रस कस्तूरी भैरव कृष्ण चतुर्मुख, सन्निपात भैरव, चिन्तामणि चतुर्मुख, महालक्ष्मी बिलास, चतुर्भुज रस, रस राज रस, बृ० बात गजांकुश, सहस्रपुटी अभ्रक भस्म गोदन्ती हरताल भस्म, रस माणिक्य गुडुची सत्व इन मेंसे जो जो आवश्यक हों लक्षणोंके अनुसार उनको यथा आवश्यक निम्न अनुपान द्रव्यों के साथ व्यवहार करना चाहिये। दशमूल क्वाथ, आर्द्रक स्वरस, बला-क्वाथ, रास्नादिक्वाथ ताल जटा, जटामांसी पुरातन घृत एरण्डमूल स्वरस में से किसी एक के साथ। अभ्यंगार्थ बलातैल, नारायण तैल तथा अन्य बातहर तैल में से किसी का व्यवहार कर सकते हैं।

जीर्णावस्था के रोगी में उपरोक्त के साथ साथ योगराज गुग्गुलु, त्रयोदशांग गुग्गुलु, रसोन पिण्ड तथा बांतहर घृतों का उपयोग भी बिशेष लाभप्रद है।

प्रमाण ग्रन्थ

(१) चरक संहिता
 (क) आयुर्वेद दीपिका टीका
 (ख) जल्प कलातरू टीका
(२) सुश्रुत संहिता
 (क) आयुर्वेद संदीपनी टीका
 (ख) निबन्ध संग्रह टीका
(३) अष्टांग संग्रह
(४) प्रत्यक्ष शारीर (तृतीय भाग)
(५) माधव निदान (आतंक दर्पण, मधुकोष)
(६) Savills System of Clinical Medicine.
(७) Bed side Medicine-Mazumdar.
(८) Text Book of Pathology (Dr. D. N. Banerjee.
(९) औपसर्गिक रोग—डा० भा० गो० घाणेकर।
(१०) शिरो रोग विज्ञान--वैद्य जगन्नाथप्रसाद शुक्ल
(११) कौमार भृत्यम्—वैद्य रघुवीर प्रसाद त्रिबेदी
(१२) The Antiseptc (Golden Jubilee Issue)

रतिज-रोग-Venerial Diseases.

ले०-डा० श्री श्यामदास प्रपन्नाश्रमी आयुर्वेदाचार्य, सर्वोदय औषधालय, दोगवां (बुलन्द शहर)

संसर्गज या औपसर्गिक प्रमेह (Gonorrhaea)

औपसर्गिक प्रमेह यानी गिनोरिया अत्यन्त तीव्र संक्रामक व्याधि है। पाश्चात्य चिकित्सकों के सिद्धान्तानुसार यह "गानोको कस" Gonococcus नाम के रोग-वीजाणुओं के संसर्ग से उत्पन्न होता है। इस रोग द्वारा स्त्री-पुरुष दोनों ही आक्रान्त हो सकते हैं।

गिनोरीया द्वारा ग्रसित रमणी के सहबास से पुरुष और ऐसे पुरुष से स्त्री को यह भीषण यन्त्रणादायक रोग प्रायः ही दबोंच लेता है। जननेन्द्रिय सम्बन्धित होते हुए भी यह रति-क्रिया के कु-परिणाम से उद्भूत है इसलिये प्राणाचार्यों ने इसका नाम दिया है "रतिज-रोग" ऐसे तो यह संसर्गज तथा शोणितादि सप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वारा आक्रान्त स्त्री-पुरुष के साथ होना कहां तक सम्भव हो सकता ? इसका समाधान यह है—मान लीजिए, स्वामी और स्त्री दोनो में स्त्री सती साध्वी होती हुई भी उसके पतिदेव वारांगना गृह में जाने लगा और वही से व्यभिचारिणी वेश्या के शरीर के दूषित विष अपने शरीर में प्रविष्ट कराकर वही काल-कूट अपनी सती-रमणी को प्रसाद के रूप में सेवन करा दिया। इसी प्रकार कोई एक पत्नीव्रतपरायण' पुरुष जिसकी पत्नी पर-पुरुषानुरक्ता होकर उस दुश्चरित्र के शरीर के घृणित विष द्वारा संक्रमित हो पड़ी हो तो उस कुल-कलंकिनी से क्या उसके पति का सत्यानाश नहीं होगा ?

पुरुषों के मूत्रनली के एक इंच पीछे जो उत्खात होता है वहाँ गिनोरिया की उत्पत्ति होती है। रोग की प्राथमिक दशा में अगर कोई भी चिकित्सा सफली भूत नहीं हुई तो इसका विष धीरे धीरे गहराई तक पहुंच कर अन्त में मूत्रनली, मूत्राशय तथा अंडकोष आदि को विगाड़ डालेगा ही। स्त्रियां जब इस विष से संक्रमित हो पड़ती है तो पहले उनकी जननेद्रिय और उसके निकटवर्ती यन्त्रादि जैसे—मूत्रनाली, मूत्राशय, जरायु, काल्ल-नल (Felopian tube) आदि यानी वस्ति-गह्वर के प्रायः सारी मशीनरी का काम विगड़ने लगता। गिनोरिया का मवाद शरीर की श्लैष्मिक कलाओं के सम्पर्क आते ही वह सर्व स्थान के रक्त को दूषित कर सकता है।

प्रदाह के तारतम्यानुसार प्रमेह की अवस्था तीन प्रकार की होती है।

प्राथमिक दशा

प्रथमतः मूत्रानाली के मुख पर क्षत और उसके अन्दर खुजली पड़ने लगती है। प्रदाहित स्थान खूब लाल और गरम हो जाता है। प्रस्राव-द्वार सूजन के कारण मूँद जाया करता है। प्रस्राव निकालना मुश्किल का काम तो हो ही जाता, फिर मूँदी हुई हालत में मूत्र मार्ग में से दूध जैसा स्राव और मवाद सी चीज़ निकलने लगती। ऐसी दशा एक सप्ताह से अधिक दिन पर्यन्त स्थाई नहीं होती है।

द्वितीय दशा—

प्रमेह की तीनों दशाओं में यह बहुत ही दुख दायी अवस्था समझना चाहिएं। इस दशा में, प्रस्राव कालीन तीव्र यन्त्रणा के बारे में रोगी और चिकित्सक दोनों ही भली-भांति परिचित होंगे। मूत्र त्याग करने की बात याद आते ही रोगी रो पड़ता है। मूत्रनाली के अन्दर में से रंग बेरंग का मवाद और कभी-कदा रक्त भी आने लगता है। यह दशा सात से इक्कीस रोज तक स्थाई हो सकती है। इसे तरुणावस्था (Acutestage) कहते हैं।

तृतीय दशा पुरानी दशा (Gleet stage)

इस अवस्था में सूजन और दर्द धीरे धीरे समाप्त हो जाता है और प्रस्राव भी आसानी से आना शुरु हो जाता है। आस्राव आदि के रूप-रंग भी बदल कर कम हो जाते हैं। रोग अधिक दिन पर्यन्त स्थायी रहा तो प्रस्राव के साथ एक प्रकार तरल पदार्थ धारा बन्ध कर चलना शुरु हो जाता है। फिर किसी किसी रोगी के शौच समय ताकत लगाते ही राँधे हुए साबूदाना जैसा पदार्थ आ गिरता है।

प्रमेह के उपसर्ग

इसका प्रदाह मूत्रनली के अन्दर जब तक बना रहेगा, तब तो क्रमानुसार निम्नलिखित उपसर्गों का रहना जरूरी है, जिसमें ये कई प्रमुख है। (क) लिंगोद्गम (Chordee) (ख) लिंग-मणि प्रदाह (Balanitis); (ग) मुद्रित-लिंग (Phimosis (घ) विपरीत मुदित-लिंग (Para-phimosis); (ङ) सीवन-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विद्रधि (Perinial abscess); (च) मूत्रावरोध (Retentio of urine), (छ) मूत्रनाली की संकोचनावस्था (Strictu re of the urethra) आदि।

(क) लिंगोद्गम या लिंगोच्छ्वास— (Painful erection of the penis—इसमें पुरुषांग की कठोरता उसके अन्दर रक्त-भार अधिक से अधिक मात्रा में होने के कारण हमेशा, खासकर रात्रि-काल में आ जाती है। अधिक रोगियों में यह उपसर्ग दिखाने में आता है। इस उपसर्ग की मौजूदगी हालत में रोगी को परेशानी उठानी पड़ती है। पर जो रोगी इस बुरी हालत का मुकाबिला कर चुका हो, उसका रोग पुनराक्रमण करने पर उतना कष्ट उठाना नहीं पड़ता।

(ख) लिंग-मणि-प्रदाह— गिनोरीया के भोग-कालीन या स्वतन्त्र रूप से किसी समय पुरुषांग के अगले हिस्सा और उसके ऊपर का चर्म ही प्रदाहयुक्त तथा शोथयुक्त हो पड़ता है। प्रदाहित स्थान पर अधिक रक्ताधिक्य के कारण यह रक्तवर्ण धारण करता है। सूई चुभने की तरह दर्द और पके फोड़े में होनेवाली टीस् मारती है। प्रदाहित व शोथयुक्त रहते हुए भी अन्दर में से प्रचुर परिमाण में पीले या हरे रंग का पतला मवाद निकलने लगता है। कभी कभी लिंग-मुण्ड के ऊपर मामूली घाव भी दिखाई देता है। १५-२० दिन पर्यन्त इस घाव में कोई परिवर्तन नहीं होता, फिर धीरे धीरे ठीक होने लगता है। लिंग-मुण्ड के ऊपर इस प्रकार का क्षत जिसके साथ उपदंश में होने वाला क्षत (Chancer) का भ्रम होना एक मुसीबत चिकित्सक के सामने आ सकती है। बहुधा शिशुओं में यह पीड़ा खासकर जो शिशु जन्म से रुग्ण तथा जिनके लिंगाग्र-भाग का चर्म अस्वाभाविक बढ़ा हुआ होता है, उन्हें अवश्य हो सकता है।

(ग) मुद्रित-लिंग— लिंग-मुण्ड के ऊपर ढका हुआ चमड़ा सिकुड़ा हुआ रहता हो या बड़ा हुआ हो तो यह और भी सिकुड़ कर एकदम बन्द हो जाता है; ऐसी अवस्था को मुदित-लिंग कहते हैं। ऐसी हालत में वहां के चमड़े लिंग के जड़ की ओर खींच कर लाना यानी लिंग-मुख को खोलना बड़ी भारी मुश्किल का काम बन जाता है। लिंग के आबरक चर्म के भीतर-बाहर क्षत, कभी कभी लिंग मुखोपरि भाग में सूजन के साथ क्षत दिखाई देते हैं। उसके अन्दर मवाद का जम जाना—जिससे भीतर से होनेवाला आश्राव तथा प्रस्राव भी निकल नहीं पाता। अन्दरूनी मवाद इकट्ठी होते रहने के कारण लिंग-मुण्ड फूलकर ऐसी बेढङ्गी शक्ल में आ जाता है, जिसे देखने पर घृणा और भय दोनों ही का एकाएक मनमें उदित होना स्वाभाविक है।

(घ) विपरीत मुदित-लिंग— यह उपरोक्त अवस्था से भयंकर शोचनीय समझना चाहिए। लिंग-मुण्ड-चर्म प्रदाहित होने के पूर्व या पश्चात् अगर उसे किसी कारण लौटा दिया गया हो तो उसमें शोथ उत्पन्न होना स्वाभाविक है और इसी शोथ के कारण पुनः उस आवरणीय चर्म को अपने स्थान पर लाना असम्भव हो पड़ता है। इसमें यन्त्रणा तथा प्रदाह आदि अत्यन्त प्रबल आकार धारण कर लेते हैं। शोथ धीरे धीरे बढ़कर लिंग को किम्भूत-किमाकार सा बना देता है। समुचित चिकित्सा यथा समय नहीं हुई तो ऐसी अवस्था में गलाव पड़ जाना स्वाभाविक है।

(ङ) सीवन-विद्रधि— अण्डकोषों की जड़ के पीछे नीचे की ओर मलद्वार के सामने ठीक बीचो-बीच वाले स्थान जिसको सीवन कहते है, यह प्रायः डेढ़ इञ्च के लगभग होता है। गिनोरिया का संक्रमण आगे चलकर यदि मूत्र नाली के पिछले हिस्से में फैल जाय तो प्रथमतः उक्त सीवन स्थान आक्रान्त होगा,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर उसमें प्रदाह, यन्त्रणा आदि जो फोड़े के साधारण लक्षण हैं, सभी क्रमशः उपस्थित होंगे। उक्त अवस्था में रोगी के मल-मूत्र त्यागने का बड़ा कष्ट होता है। प्रदाह व यन्त्रणा का अन्त नहीं हो जाय तो यह विद्रधि पककर क्षत के रूप में आ जाती है - terminating in Frequent urinary Fistulae.

(च) मूत्रावरोध—मूत्र नाली का अवरोध जो मूत्र-संचय के कारण प्रायः ही होता है और वह चाहे किसी प्रकार की रुकावट से पैदा हुआ हो या मूत्रनाली के अन्दर अधिक समय पर्यन्त संचित रहकर हुआ हो तो ऐसी हालत, प्रमेह से ग्रसित रोगियों में देखने में मिलेंगी। गिनोरिया से उत्पन्न पूयः द्वारा मूत्रनली अवरुद्ध रहकर यह उपसर्ग आ जाय तो गिनोरिया ही इसकी उत्पत्ति का कारण है, समझ लेना चाहिए। इसके अतिरिक्त मूत्र-भाँड यानी मूत्राशय—Bladder किम्बा मूत्रनली—urethra की संकीर्णता—stricture, पौरुषग्रन्थि की बिवृद्धि, मूत्रस्थली का पक्षाघात, पथरी आदि द्वारा मूत्रनली व प्रस्राव का मार्ग बन्द हो सकता और ज्वर किम्बा आघात आदि आकस्मिक दुर्घटनाओं के कारण भी मूत्रावरोध हुआ करता है।

(छ) मूत्रनाली की संकुचितावस्था—गिनोरिया के उपसर्गों में यह एक दयनीय दशा समझी जाती है। मूत्रनाली के अन्दर एक या एकाधिक स्थान की संकीर्णता जनित ऐसी परिस्थिति हो सकती है। गिनोरिया के प्राथमिक आक्रमण कालमें अथवा उसके पश्चात् जो संकीर्णता आ जाती है, वह प्रायः दो-तीन सप्ताह के अन्दर ही आरोग्यावस्था में आ सकता है।

लक्षण—चिकित्सा द्वारा अगर गिनोरिया का मूलोच्छेद नहीं हुआ हो तो आप देखेंगे कि—मूत्रनली का स्वभावतः पूयः या कफ जैसे पदार्थ द्वारा बन्द रहता और रोगी के वस्त्र में पीले रंग के धब्बा पड़ना एक प्रमुख लक्षण है। इन धब्बों को बनानेवाला आन्तरिक आस्राव का परिणाम विषाक्त न होने पर भी, इसी अवस्था से मूत्रनाली के संकोचन का सूत्रपात होने लगता है। प्रस्राव का वेग रहते हुए भी उसकी धारा क्षीण तथा बिन्दु के रूप ले लेती है यानी प्रस्राव का निर्गमन ताकत लगाने पर भी बूँद बूँद गिरने लगता है। रात्रिकालीन कष्ट जो रोगी को अनुभव होता है, उसमें बार बार मूत्रत्याग की इच्छा भी शामिल है। आसानी से मूत्र-निःसरण न होना और उसके लिए रोगी जो हरकत किया करता है, उसका परिणाम अन्त्रावरुद्धता—Hernia आदि कठिन बीमारी भी उसे आ घेर लेती है। पुनः पुनः मूत्र-त्याग की निष्फल चेष्टा से बचने के लिए रोगी जल पीना कम कर देता है। पर इससे लाभ के बजाय नुकसान ही अधिक होने लगता है, क्योंकि शरीर की आर्द्रता—liquidification के स्थान पर उसकी उष्णता वृद्धि के कारण पहले से अधिक बेचैनी, उत्तेजना तथा पुनः पुनः यन्त्रणा देनेवाली मूत्र-त्याग की इच्छा बढ़ती ही जाती है।

प्रस्राव बूँद बूँद करके टपकता रहता है या बिलकुल आना बन्द हो जाता है। जो थोड़ा बहुत प्रस्राव निकल आता है उसमें अधिक परिमाण यवक्षारीय तत्व की प्रचुरता और पूयः तथा श्लैष्मिक तन्तु भी रहती है। प्रस्राव-परीक्षा की जाय तो उसकी तलछट आसमानी रंग जैसी प्रतीत होगी। प्रस्राव का वेग धारण करना रोगी के लिए कष्टसाध्य प्रतीत होने लगता। यदि मूत्र-वेग धारण क्षमता आंशिक रूप से ह्रास हुई हो तो मूत्रत्याग के अन्त में बूँद बूँद करके टपकता ही रहेगा और अक्षमता यदि सम्पूर्णतया आ चुकी हो तो बूंद टपकना सदैव जारी रहेगा। इस हालत में रोगीको मजबूर होकर रबड़ की थैली का स्तैमाल करना पड़ता है।

रोगी को यदि ऐसे संकट का सामना रोग काबू कि हर प्रकार के उपाय उपचार द्वारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में नहीं आया और उसके मूत्रनली का मार्ग सम्पूर्ण रूप से बन्द भी हो जाय तो कोई बड़ी बात नहीं। पर हाँ—यह रुकावट यदि मूत्रनाली के अगले हिस्से यानी मूत्र द्वार के सन्निकट उत्पन्न हुआ हो तो रोग काबू में आ सकता और अधिक गहराई में होने पर किम्बा धातुगत दोष का शमन न होने पर पीड़ा का परिणाम भयावह होगा ही।

गिनोरिया का प्रदाह मूत्रनाली के अन्दर सीमित अवस्था में रहते हुए भी किसी उपाय द्वारा आरोग्य न होने से यह प्रदाह शनैः शनैः मूत्रनाली के पिछले हिस्से में फैल जाता और उसका परिणाम कतिपय नवीन रोग व उपसर्गों का आविर्भाव होता है।

प्रदाह मूत्रनाली के पिछले हिस्से में फैल जाने से :—

पुरुषों के—(१) पौरुष ग्रन्थि की बिवृद्धि (Prostatitis); (२) रेतः रज्जु-प्रदाह (Epididymitis); (३) मूत्राशय की श्लैष्मिक कलाओं का प्रदाह (Cystitis)

स्त्रियों के—(१) कालल-नल प्रदाह (Stlpingitis): (२) कटी-पित्तोद (Pelvic-Peritonitis) (३) जरायु-पेशी प्रदाह (Metritis) (४) जरायु व डिम्ब कोष के आवरक झिल्लियोंमें रसोत्सृजन तथा पूयोत्पत्ति (Pelvic-Cellulitis) ; आदि आदि।

संसर्गज-प्रमेह द्वारा ग्रसित रोगी के मूत्रनली की ग्रन्थि प्रदाहित होने पर निम्नलिखित उपसर्गों का आविर्भाव अवश्य ही होगा—

(१) लसिका ग्रन्थिका प्रदाह (Lymphangitis)

(२) वंक्षण-ग्रन्थि प्रदाह (Bubo);

(३) प्रमेह-विष द्वारा दूरवर्ती श्लैष्मिक विधान प्रदाहित होने पर कतिपय रोगोपसर्गों की उत्पत्ति हो जाती है—

(१) नेत्राभिष्यन्द (प्रमेह-विष सम्भूत)—Gonorrhoeal Opthalmia);

(२) नज़ला—(Nasal Cattarh)

(३) सरलान्त्र की पीड़ा—(Diseases of therecum.

प्रमेह विष द्वार रक्त-विषाक्तता के कारण निम्नलिखित रोगोपसर्ग उत्पन्न हो सकते हैं :—

(१) वात-वेदना (प्रमेह-विष सम्भूत)—(Gonorrhœal Rheumatism):

(२) रक्त-विषाक्तता—Septicœmia);

(३) पूयमयता—Pyœmia ;

गिनोरिया के साथ मूत्रनली-प्रदाह का प्रभेद-बिचार—

प्रमेह पीड़ा के साथ मूत्रनली-प्रदाह का भ्रम होने की सम्भावना अधिक रहती हैं क्योंकि इन दोनों रोगों में ही मूत्रनली में से पूयस्त्राव हुआ करता है। दोनों में ही मूत्रनली का प्रदाह होना और तज्जनित कष्ट-यन्त्रणा बराबर देखने में आती है। इसके अतिरिक्त मूत्रनली-प्रदाह के कारण भी नेत्राभिष्यंद, जानु-सन्धि प्रदाह (Synovitis) बृक्क-प्रदाह (Nephritis) आदि कई रोग उत्पन्न हो सकते हैं! पर उक्त दोनों में विशेष पार्थक्य यह है कि, संसर्गज प्रमेह यानि गिनोरिया—संक्रामक विशिष्ट रोग होनेके कारण यह प्रमेह-विष-दुष्ट सहवास द्वारा उत्पन्न है मूत्रनाली की पीड़ा साधारणतः मूत्राशय में आघात, मूत्रनली के अन्दर मूत्र-शलाका (Cathete;r) डालना, वात-व्याधि, कृमि-कीटों का मूत्रनली के अन्दर प्रविष्ट हो जाना, अधिक मादक द्रव्यों का सेवन, श्वेत-प्रदर का आस्राव मूत्रनली में पहुंच जाना, आदि कारणों से उत्पन्न हो सकती है। रोगी-परीक्षा के समय उपरोक्त सारी बातों का पता लगा लेने से रोग के ठीक निर्णय में संशय नहीं रहेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सा—आयुर्वेदिक चिकित्सा के बारे में संक्षिप्त रूपसे इस निबन्ध के पहले ही बताया गया है। डाक्टरी चिकित्सा का उल्लेख यहाँ सामान्य रूप से किया गया है। पिछले जमाने में डाक्टरों का एकमात्र ब्रह्मास्त्र गानोकोकस टैक्सोन" का ही अधिक प्रयोग होता था। और उसके साथ लाक्षणिक चिकित्सा में शीतल चीनी का तेल, चन्दन का तेल, कोपैवा, पोटाश आयोडाइड, मैन्डेलिक एसीड, टार्पिन, कैन्थारिस; गांजा का अरिष्ट, हाईड्रास्टिस और पलसेटिला के टींचर आदि आभ्यन्तरिक सेवनार्थ दिया जाता था, स्थानिक चिकित्सा के लिए पोटाश परमैंगनेट, मर्क्यूरोक्रोम, मर्क्यूरिक क्लोराईड, थूजा आदि को शक्तिकृत द्रव्य के रूप में पिचकारी की सहायता से पहुंचा कर मूत्रनाली और उसके आने का हिस्से का जन्तु-दोष विदूरित करना पड़ता था।

अब कुछ समय के पहले से सुल्वौषधियों का प्रचार जब से हुआ हैं इन्हीं में से सलफा पाईरिडिन, एम० बी० ६९३, सिवाजोल आदि का प्रयोग बहुत होने लगा है। फिर पेनि सीलिन आदि एन्टीवायोटीक औषधियों से इस रोग का खास इलाज हो रहा है। यह लाभ शत प्रतिशत ही होने लगा है।

विधि-निषेध :—

इस रोग से आक्रान्त होते ही काम-काज करना तथा परिश्रम करना अधिक घूमना-फिरना बिलकुल बन्द कर देना चाहिये। साइकिल, घोड़ा आदि पर सवार होना भी मना है। क्योंकि गिनोरियों का रोग यद्यपि किसी प्रकार से ठीक भी हो जाय तो फिर उघाड़ भी आता है।

मांस मछलियां, पियाज-लहसुन, मिर्च, मसाले, उड़द की दाल, अड़हर की दाल दही, खटाई, गुड़ और शराबादि उत्तेजक पानीय, सोडा, लेमनेड, बीड़ी, सिगरेट आदि का सेवन सर्वतोभावेन परित्याग देना चाहिये।

प्राकृतिक ढंग से जीवन व्यतीत करना एक उत्तम उपाय है जिससे यह रोग आरोग्य होने में अधिक कुछ सफलता मिल जायगी। पेट पर गीली मिट्टी की पट्टी जिसे प्रत्यह वस्ति और उत्तर वस्ति द्वारा मल व मूत्र मार्ग साफ करने के बाद दी जाय तो लाभ अधिक होगा। प्रत्यह टींचर आर्णिका के २० बून्दे अन्दाज आधी छटांक ईषदुष्ण जल के साथ मिला पुरुषांग का बाहरी हिस्सा धो डालना फायदेमन्द होता है। यह काम दिन-रात भर में १०-१२ बार करना चाहिए। लंगोटा का स्तैमाल २४ घण्टे के लिए रखना चाहिए। मूत्राल्पता किम्बा विषमयता अवस्था में दो तोले अलसी लेकर डेढ़ सेर जलमें उत्तम रूप से ओटाकर अर्द्धावशेष उतार छान कर उस पानीयमें से आधा पाव के हिसाब से लेकर उसमें मिश्री डालकर दिनमें ४।५ बार पिलाना अच्छा है।

पथ्य—पुराना चावल का अन्न और दूध, दलिया-दाल, मूंग-मसूर व चने की तीन तिहाई लेकर उसकी, दाल, गेहूँ और चने की रोटियां तथा पूरी, परौठा, हलुवा और घी का सेवन अत्यावश्यक है पर यह सारी चीजों का उपभोग रोगीकी भिन्न-भिन्न दशा पर विशेष विवेचना के साथ होना चाहिए। साग सब्जी और फल-फूल भी उचित परिमाण में लेना अत्यावश्यक है। इससे रोगी की कोष्ठ-शुद्धि आसानी से होगी और शरीर में नवीन रक्त के निर्माण द्वारा रोगारोग्य का सहायक होगा। साग-सब्जियों में परवल, वेताग्र, गूलर, केले की कच्ची फलियां, कच्चा पपीता, करमकल्ला आदि उत्तम हैं।

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैद्य तथा उपवैद्यों में अन्तर

ले० वैद्य श्री सुन्दरलाल जोशी (कावँट) आयुर्वेद दातव्य औषधालय जुगसलाई (बाजार) टाटानगर

आयुर्वेदाचार्यों ने आयुर्वेद में जैसे रोग एवं व्याधि दो प्रकार की कही है। वैसे ही रोग तथा व्याधि को शमन करने के लिये वैद्य तथा उपवैद्य के भेद से चिकित्सक भी दो ही प्रकार के कहे हैं। इनमें वैद्य अमरेश्वर (वरुण) के उपासक होने से अध्ययन शील एवं विवेकी होते हैं। वे अपने अनुभव के द्वारा रासायनिक धन द्रव इसके अन्शाशों की कल्पना करते रहते हैं। क्योंकि रसों में गुण वीर्य विपाकादि रहते हैं। जो अदृश्य है। दृष्टिगोचर नहीं होते वे अनुभव के द्वारा ही दृष्टिगोचर होते हैं। इसी से वैद्य विकृत हुए वातादि दोषों से उत्पन्न होनेवाले रोगों को रासायनिक रसों द्वारा शमन करके निरोगता देते हैं। जिससे आयु आनन्द उत्साहादि की वृद्धि होती है। या यों समझिये कि मिथ्या आहार के करने से जन रासायनिक सूक्ष्म द्रव के साथ में रहने वाली वायु विकृत होकर के द्रव के साथ में रहनेवाले पित्त को तथा धन द्रव रसके साथ में रहनेवाले कफ को विकृत करके रोगों को उत्पन्न करते हैं। तब वैद्य रासायनिक धन द्रव के अन्शांशो का मिश्रण करते हुए बातादि दोषों का शमन करके निरोगता देते हैं।

इसी प्रकार उपवैद्य इन्द्र के उपासक होने से अध्ययनशील नहीं होते मनोवैज्ञानिक होते हैं। क्योंकि वे शरीर के अङ्ग प्रत्यगों की थोड़ी सी तोता रटन करके क्रियाशील हो जाते हैं। इसीसे वे अपने कर्तव्यों के द्वारा शरीर के अंग प्रत्यगों में होनेवाली व्याधियों को शमन करके स्वास्थ्य देते हैं। या यों समझिये कि मिथ्या विहार से द्रव के साथ में रहने वाला रजोगुण तथा धन द्रव के साथ में रहने वाला तमोगुण दूषित होकर के जब व्याधियों को उत्पन्न करते है तब उपवैद्य क्रिया कुशल होने से व्याधियों को शमन करते हुए स्वास्थ्य को देते हैं। क्योंकि रोगों में रासायनिक रस एवं व्याधियों में रासायनिक क्रिया प्रधान है। इसीको स्पष्ट करते हुये चरकाचार्य ने चरक को प्रारम्भ करते ही इस प्रकार से कहा है कि—

दीर्घ-जीवितमन्विच्छन्भरद्वाजमुपागमत्।
इन्द्रमुग्रतपा बुध्वा शरण्यममरेश्वरम्॥

अर्थात्—जप, तप, यज्ञ, व्रतादि के ताप से संतप्त एवं कृश हुए भारद्वाज विशेष दिन जीवित रहने की इच्छा से जब स्वर्ग में गये तब इन्द्र को रजोगुण तथा तमोगुण के उग्रताप से संतप्त हुआ देखकर इन्द्र की शरण में न जाकर के अमरेश्वर (वरुण) की शरण में जाकर आयुर्वेद के रसायन तन्त्र का अध्ययन किया। क्योंकि अमरेश्वर रसों का अधिपति है। रसोंके गुण आदि धर्मों को जानने वाला है। परन्तु जब भारद्वाज के विकृत हुये रजोगुण तथा तमोगुण से उत्पन्न हुई व्याधियों से जन समुदाय को पीड़ित देखा तब भगवान इन्द्र के पास जाकर आयुर्वेद के शरीराध्याय का अध्ययन किया। इसी से चरकाचार्य ने चरक में उसी क्षण में फिर से इस प्रकार कहा है कि—

व्याधयोहि समुत्पन्ना सर्वप्राणिभयंकराः।
तद् बूहि में शमोपायं यथावदमर प्रभो॥
तस्मै प्रोवाच भगवानायुर्वेदं शतक्रतुः।
पदैरल्पै र्मतिं बुध्वा विपुलां परमर्षये॥

अर्थात्—हे अमर प्रभो! व्याधियों के उत्पन्न होने से सम्पूर्ण प्राणी भयंकर (कूरूप) हो गये है। अतः उन व्याधियों के शमन करने का उपाय मुझ को कहो। ऐसा वचन भगवान इन्द्र सुन करके भारद्वाज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को विशेष बुद्धि वाला जानकर थोड़े से शब्दों में आयुर्वेद का शरीराध्याय कहा है। इसी युक्ता-युक्ति को देखकर आयुर्वेदाचार्यों ने आयुर्वेद के चिकित्सा खण्ड को दो भागों में विभाजित किया है। जिसमें रोगों को शमन करने के लिये रसायन तन्त्र एवं व्याधियों को शमन करने के लिये काय चिकित्सा प्रधान है। क्योंकि शारीरिक कर्मों द्वारा रोग एवं मानसिक कर्मों द्वारा व्याधि उत्पन्न होती है। इसी से रोग में रासायनिक रस एवं व्याधि में रासायनिक क्रिया प्रधान है।

अतः क्रिया नाम और रूपके आधार पर तथा रस गुण वीर्य विपाकादि के आधार पर निर्भर करता है। इसीसे आचार्य ने चरक में इस प्रकारसे कहा है कि—

औषधं ह्येन विज्ञातं नामरूपगुणैस्त्रिभिः।
विज्ञातमपि दुर्युक्तमनर्थायोपपद्यते ॥

अर्थात्:—यह निश्चय करके कहा जाता है कि जिस चिकित्सक ने औषधियों के नाम रूप को ही जाना है, किन्तु गुणादि तीन को नहीं जाना वह वैद्य नहीं उपवैद्य है, क्योंकि वह औषधियों के योगायोग को नहीं जानता। इसीसे वह दुर्युक्त (युक्ति हीन) अर्थ को प्राप्त करनेवाला अनर्थ कारी है, जैसा कि बन में विचरने वाली गाय, भैंस भेड़, बकरियों को चराने वाले गोपाल औषधियों के नाम और रूप को ही जानते हैं। इसीसे वे जंगल में चरने वाली गाय, भैंस, भेड़, बकरियों के अंग प्रत्यंगों में रस रक्तादि धातुओं में होने वाली व्याधियों को रासायनिक क्रियाओं द्वारा शमन करते रहते है। अगर वही व्याधि मनुष्य के अंग-प्रत्यङ्गों में एवं धातु उपधातुओ में हो जाती है। तब भी वे शमन कर सकते हैं। क्योंकि उपवैद्य क्रियाशील होते हैं। या यों समझिये कि व्याधि नाम और रूप के आधार पर होने से दृष्टिगोचर होती रहती है। इसीसे व्याधियों को शरीर की थोड़ी सी तोता रटन को करने वाली क्रिया शील उपवैद्य शमन कर सकते हैं। किन्तु रोगों को शमन नहीं कर सकते।

इसी को स्पष्ट करते हुये चरकाचार्य ने फिर से इस प्रकार कहा है कि—

योगविन्नाम रूपज्ञस्तासां तत्वविदुच्यते।
किं पुनर्यो विजानीयादौषधिं सर्वथा भिषक् ॥

अर्थात्:—जो चिकित्सक औषधियों के योगा-योग को नही जानता केवल नाम और रूप को जानता है। उसको आयुर्वेदाचार्यों ने औषधियों के तत्व को जानने वाला उपवैद्य कहा है। क्योंकि औषधियों में गुण वीर्य, विपाकादि से भिन्न प्रभाव रहता है। जो व्याधि शामक है। किन्तु जो चिकित्सक नाम और रूप के साथ-साथ गुण वीर्य विपाकादि को जानते हुए औषधियों के परस्पर के मिश्रण को जानते है। वे सर्वथा भिषक है वैद्य है भिषगाचार्य है।

क्योंकि रोग वातादि दोषों के आधार पर उत्पन्न होते हैं। जिनमें गुण वीर्य विपाकादि विद्यमान रहते रहते हैं। जो अदृश्य है। देखने में नहीं आते जो अनुभव के द्वारा ही देखे जा सकते हैं। किन्तु आज तो अनुभव प्रायः करके लुप्त सा प्रतीत हो रहा है। जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि जिन रोगों को आयु-र्वेदाचार्यों ने आयुर्वेद में हजारों वर्ष पहले कहा था। उन रोगों का उपवैद्य अभी तक नाम नहीं जानते! इसी से आये दिन शिलालेखों पर एवं पवन तनय के द्वारा भेजे हुए लेखों में देखे जाते हैं। अमुक रोग वा अमुक औषधि की खोज हो रही है। या यों सम-झिये कि मलेरिया को मच्छर की उपज एवं ज्वर पीड़ित रोगी के रक्त में कृमि बता रहे हैं। क्या यह बात सत्य है। अतः अनुभवी वैद्यों से मेरा नम्र निवेदन है कि इसपर अपने अपने अनुभव द्वारा प्रकाश डालने की कृपा करेंगे। क्रमशः—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आर्ष च्यवनप्राश

(लेखक—कविराज, पं० श्री सुधाकर त्रिवेदी, सिमडेगा (राँची)

च्यवनप्राश, च्यवन मुनि के वृद्धत्व नाशार्थ, अश्विनी कुमारों के द्वारा आविष्कृत महा रसायन है। यद्यपि इसकी प्रशंसा में असाधारण गुणों का नामोल्लेख किया जाता है, तथापि वृद्ध से युवक कोई भी नहीं बना। यद्यपि च्यवनप्राश में 'अष्टवर्ग' युक्त होने की गारण्टी भी दी जाती है तो भी सर्वगुण सम्पन्न नहीं बनने पाता। निःसन्देह "झण्डू च्यवनप्राश" श्लाघ्य कहा जा सकता है तथापि च्यवन मुनि वाला वह "च्यवनप्राश" आज तक बना ही नहीं। बिड़ला-लेबोरेटरीज़, कलकत्ता ने जो 'नियो च्यवनप्राश' नाम से "कैल्सियम एवं विटामिन्स" युक्त प्रस्तुत किया है वह भी श्रेष्ठ है। आजकल जो च्यवनप्राश बनता है, उसमें आँवलों की लुगदी को दो भागों में विभक्त कर एक भाग को तिल तेल में भूंज लेते हैं और एक भाग को घी में पर इतने ही से आँमले का गुण न्यून हो जाता है।

'च्यवनप्राश' का प्राण है आमला। जब आमलों के संग्रह करने में ही खलल है तो उसका पूर्ण गुण कैसे प्राप्त होगा? "च्यवनप्राश" की यह निम्नोक्त विधि नई नहीं है, प्रत्युत महर्षि चरक की है पाठकगण चरक संहिता में देख सकते हैं। 'चरक संहिता' में तो आवले की परीक्षा करने की विचित्र विधि बतलाई गई है। आंवले के किसी पेड़ के नीचे की मिट्टी को सूंघकर दोनों मुट्ठों में लेकर मुठ्ठी बन्द कर मुठ्ठी के ऊपर का हिस्सा सूंघने से आँवलों की गन्ध साफ प्रतीत होती है। मगर इतनी खटपट कौन करे यदि आँवले का प्रत्यक्ष अनुभव करना हो तो इस प्रकार करें।

जिस व्यक्ति की आंख में पुराने से पुराना फोला हो, उसको अपने साथ आंवले के वृक्ष के नीचे ले जाइये और पेड़ पर लगे हुए किसी पके आमले पर जरा सी सूई भोंक दीजिए। जब रस निकले तब उसे सुरमें की सलाई पर लगाकर उसी वृक्ष के नीचे एक सलाई रोगी की आंख में लगा दीजिए। पश्चात् घर चले आइए इस प्रकार तीन दिनों तक आँमले के वृक्षके नीचे जाकर यही विधि करिये। तीन दिन के पश्चात आँमले का प्रत्यक्ष प्रभाव देखिए, आपको यह भी नहीं प्रतीत होगा कि फोला कहां था। काँच के माफिक स्वच्छ आंख हो जायगी। रोगी तीन दिनों तक लाल मिर्च, तेल, खटाई, गुड़ न खाय तथा ब्रह्मचर्य से रहे यदि आमले का रस निकाल कर घर पर रोगी को लाकर लगाया जायगा तो एक मास में भी आंख नहीं ठीक होगी। यह प्रभाव तो वृक्ष के नीचे रस लगाने से ही होगा। खैर, यह तो आमले का चमत्कार हुआ। अब आमलों को संग्रह करने की विधि भी जान लीजिए। आंमलों को संग्रह करते समय ऐसे वृक्ष का ध्यान रक्खें जो एक या दो वर्ष का हो अथवा नया वृक्ष हो। जिस वृक्ष में सर्व प्रथम फल लगे हों ऐसा वृक्ष सर्वोत्तम होगा। फल बड़ा हो तथा वृक्ष पर चढ़कर तोड़ा जाय। एक २ फल तोड़कर किसी कपड़े की थैली में रखता जाय तथा थैली कामुँह बन्द कर तागे से बांध पेड़ से नीचे लटकाया जाय। नीचे दूसरा आदमी धीरे से आमलों को निकाले तथा दूसरी थैली में ढक कर रखता जाय। इस प्रकार अधिक से अधिक २०० आँमले ही तोड़े जाय। धूप से बचाकर उन आमलों को तनजेब के कपड़े में पोटली बांधकर अंधेरे घर में पानी के बरतन के ऊपर लकड़ी की खपच्चियां रख, उनपर पोटली रख दें और नीचे आग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जलावें ताकि भाफ से आवले पक जाय। फिर एक अन्धेरे मकान में हाथ से आमलों की पोटली को खूब मलें, जिससे उसके रेशे और गुठलियां कपड़े पर ही चिपके रह जांय। तदनन्तर लकड़ी के चम्मच से आंमलों का उम्दा गुदा पोटली से निकाल लें और प्रकाश में गाय के पांच सेर दूध को कड़ाही में डालकर उबालिए। दूध, उबलते उबलते जब मलाई बनने लायक हो जाय तब उस खोये में वे आंमले डाल दें और पकावें। उस समय इस प्रकार की मनोमुग्धकारिणी तीव्र सुगन्धि फैलेगी कि मुहल्ले भर में मालूम हो जायगा कि आज क्या नई चीज बन रही है। बाजार से खरीद कर बनाये हुए आंमलों में यह उपरोक्त गुण कहां।

प्रक्षेपणीय द्रव्य—

बेल, अरनी, अरलू, गम्भारी, पाढ़ल, इनकी छाल ५-५ तोला। खरेंटी, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, मुग्दपर्णी, माषपर्णी, छोटी पीपल, पहाड़ी गोखरू, कण्टकारी, कटीला, काकड़ासिंगी, मुनक्के, जीवन्ती, पोहकरमूल, अगर, हर्रे, गिलोय, कचूर, मोथा, पुनर्नवा, इलायची के बीज, सफेद चन्दन का चूरा, कमल के फूल, विदारीकन्द, बांसे की जड़, काकनाशा, सालब मिश्री, वंशलोचन, शकाकुल मिश्री, स्याह मुसली, सफेद मुसली, सब पांच २ तोले लेकर अलग २ कूट छानकर रख लें। २५० तोला मिश्री की चाशनी करके उसमें प्रक्षेपणीय द्रव्य तथा उपरोक्त खोये को भी चाशनी में डाल दें। सबको सम्यक् मिलाकर एक जीव कर दें तदुपरान्त—वंशलोचन २० तोले; पीपल छोटी १० तोले, दालचीनी, कोलम्बोवालो ५ तोला; इलायची दाने ५ तोले, तेजपात ५ तोले, नागकेशर ५ तोले; कूट कपड़छान कर और मिला दें तथा ३० तोला शहद भी मिला दें। किसी चीनी या कांच के भाण्ड में रख दीजिए। एक सप्ताह के पश्चात् सेवन करें **नोट**—इस विधिमें खोया घी में नहीं भूना जा जाता है और न औषधियों का क्वाथ ही बनाकर डाला जाता है। मात्रा—१ तोला, अनुपान गाय का दूध।

इस प्रकार "च्यवनप्राश अवलेह" की नई विधि पाठकों के लाभार्थ दी गई है। इस विधिके अनुसार बने हुए 'च्यवनप्राश' को "आर्ष च्यवनप्राश" कहा जा सकता है क्योंकि यह चरकोक्त विधि है। आशा है कि वैद्य महानुभाव इसे निर्म्माण कर परीक्षा करें फलाफल आयुर्वेद गौरवमें प्रकाशित करावें।

टमाटर

(लेखक :—डाक्टर एम० पी० रंजन, आसनसोली)

परिचय :—हमारे देश में अत्यन्त प्रचलित शाकभाजियों में इसका स्थान प्रमुख है। सच पूछिये तो आलू के बाद शाक-सब्जियों में इसी का नम्बर आता है। इससे प्रायः सभी व्यक्ति पूर्ण-परिचित हैं, अतः इसके सम्बन्ध में विशेष परिचय देने की आवश्यकता नहीं जान पड़ती। अब तो इसका प्रचार सारे संसार में है, विशेष कर अमेरिका में तो यह खाद्य रूप में ही प्रयुक्त होता है।

निःसन्देह, अन्य तरकारियों की अपेक्षा हमारे देश के लिये यह एक नई फसल है। चूंकी इसका पौधा बैंगन की तरह होता है, अतः इसे हम 'बिलायती बैंगन' भी कहते हैं। 'टमाटर' शब्द अंग्रेजी का है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसकी गणना फल और तरकारी दोनों में की जाती आरम्भ में फल हरे होते हैं पर पीछे पकने पर लाल हो जाते हैं।

वस्तुतः यह एक अत्यन्त गुणकारी भोज्य पदार्थ है। पूर्व धारणा के विपरीत, यह एक सर्वथा निर्दोष फल है जिसके निरंतर सेवन से भी किसी रोग की सम्प्राप्ति का भय नहीं रहता। अपनी सुन्दर एवं आकर्षक आकृति, विशेष महक तथा बिटामिन का प्रचुर भण्डार होने के कारण यह तो अब बहुत ही लोक प्रिय हो गया है फिर भी भ्रान्तिवश कहिये अथवा कारण विशेष से यह निरामिषों को ना पसन्द है।

इतिहास :—सच पूछिये तो इसकी उत्पत्ति एवं प्रसार का इतिहास बड़ा ही मनोरंजक है। प्राचीन मैक्सिकन इसे बड़े शौक से खाते थे। 'टोमाटी' नाम उन्हीं का दिया हुआ है।

इसका प्रचार काल अनुमानतः ४०० वर्षों से भी कम है। सर्व प्रथम अमेरिका के उष्ण प्रदेशों में, मक्का के खेतों में ही इसकी खेती की जाती थी। सन् १७८१ ई० में टमाटर वहां पहले पहल पैदा किया गया। सन् १८८८-९९ ई० के स्वाधीनता संग्राम में इसका व्यवहार सेना के राशन रूप में हुआ। उसके ५० वर्ष बाद तो इसका प्रचार आहार रूप में व्यापक रूप से होने लगा। इसके प्रचार की पराकाष्ठा सन् १८१२ ई० में हुई। धीरे धीरे समग्र विश्व में इसका प्रचार हो गया।

सन् १६२८ ई० में सर वाल्टर रैलो को यह फल अमेरिका के रौल को नामक द्वीप में मिला था। वहां के निवासी इसे जहरीली वस्तु समझते थे किन्तु दक्षिणी अमेरिका में इसका प्रचलन उस समय भी था। सर वाल्टर रैले ने ही तत्कालीन इंग्लैण्ड की महारानी एलिज़ावेथ को टमाटरों का उपहार भेंट किया था।

सोलहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में यह यूरोप में लाया गया। शोभा और सुन्दरता की भावना से इसे बागों में लगाया गया। वे इसे 'लव एपेल' कहते थे। सत्रहवीं सदी तक इसका उपयोग यूरोप में सिर्फ सजावट के लिये ही होता था।

सन् १७४३-१८२६ टामस बैफर्सन ने वर्जीनिया में पैदा किया। अठ्ठारहवीं सदी के अन्त में, इटली में इसकी खेती व्यापक रूप से की जाने लगी।

भारतवर्ष में आज से ६० वर्ष पूर्व विदेशियों द्वारा प्रचारित हुआ। कैन्सर एवं उपदंश होने के भय से लोग इसका सेवन नहीं करते थे परन्तु शीघ्र ही यह भ्रम निर्मूल सिद्ध हुआ। फलतः इसका समावेश यहां भी खाद्य द्रव्यों में किया गया। विगत २५ वर्षों से हमारे देश में इसका प्रचलन बहुत अधिक बढ़ गया है।

विशेषता—मानव शरीर के पालन-पोषण एवं रक्षा के लिये जिन आवश्यक तत्वों की जरूरत रहती है, वे सभी तत्त्व प्रायः इसमें पाये जाते है।

अकेले इस फल में पांच प्रकार के विटामिन (खाद्योज) मिलते हैं। विटामिन ए०, बी० और सी का तो यह प्रचुर भण्डार है ही। इसका खट्टापन 'आक्ज़ेलिक एसिड वाला नहीं बलिक 'साइट्रिक एसिड' वाला होता है जो कि दांतों और मसूढ़ों के लिये बड़ा ही हितकारी है। इसके अतिरिक्त सब से बड़ी खूबी तो यह है कि इसमें पाये जाने वाले विटामिन साधारण ताप से नष्ट भी नहीं होते। प्रयोगों से सिद्ध हुआ है कि जो विटामिन ताजे टमाटरों में मिलते हैं, वे ही सूखे तथा डब्बों में बन्द अचार, मुरब्बे या चटनी के रूप में सुरक्षित भोज्य पदार्थों में भी अतः इसकी उपयोगिता निर्विवाद है।

इनके अतिरिक्त अन्य खनिज लवणों में लोहा, कैल्शियम (चूना), प्रोटीन, पोटाश, फास्फोरस, गन्धक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्लोरिन एवं मैंगनेशिया आदि भी अधिक परिमाणमें मिलते हैं।

गुण:—स्वाद में कुछ खट्टा मीठा, रुचिवर्द्धक, अग्निदीपक, पाचक एवं शान्तिप्रद। थकावट मिटाता है, भूख बढ़ाता है एवं पाचन-शक्ति तीव्र करता है।

यह स्नायुओं का रसायन है। खून साफ करता है, कब्ज को मिटाता है तथा दांतों को मज़बूत बनाता है। हलका होनेके कारण ज्वर, उपवास एवं मधुमेह में व्यवहृत होता है।

शरीर की स्थूलता, उदर रोग, अतिसार अपेंडिसाइटिस (अन्त्र पुच्छ प्रदाह), बेरी-बेरी, गठिया, सूखा रोग हृदय-दौर्बल्य, पाण्डु रोग (रक्ताल्पता), एक्ज़िमा तथा यकृत एवं वृक्क रोगों में गुणकारी है।

विशेष-प्रयोग:—मधुमेह—विशेष लाभकारी। इस रोग में इसकी तुलना में कोई भी पदार्थ अधिक गुणकारी नहीं। मूत्र में शक्कर की मात्रा घटाने में अद्वितीय।

२ रक्त विकार:—टमाटर के रस से ज्वर जन्य रक्त विकार एवं अन्य उपद्रवों की शान्ति। शरीर में पैदा होनेवाले हानि कारक पदार्थों की उत्पत्ति बन्द।

३ नेत्र-विकार :—विटामिन 'ए" की कमी से रतौंधी तथा अल्प दृष्टि जैसे रोगों की उत्पत्ति होती है। टमाटर के नियमित प्रयोग से वे दूर हो जाते हैं।

४ चर्म रोग :—लाल टमाटर का रस (२ तोले) दिन में ४ बार देनेसे दांतों या मसूढ़ोंसे खून बहना, त्वचा पर लाल चट्टों का उगना, मुंह का सूज जाना तथा 'स्कर्वी' रोग का समूल नाश होता है। एक्ज़िमा में तो रामबाण ही समझिये।

५ जीभ पर मैलापन या सफेद छा जाने पर १ या २ टमाटर सेंधे नमक के साथ अवश्य सेवनीय है। बड़ा ही चमत्कारिक प्रभाव दिखाता है।

आहार-तत्व:—ताजे टमाटरों में, प्रति पौन्ड, निम्नांकित पोषण तत्व मिलता है—

१ आहार की शक्ति की		६१ कैलोरी (उष्णांक)
२ कार्बोहाइड्रेट	...	१६ ग्राम
३ प्रोटीन	....	४ ग्राम
४ फैट (बसा)	...	१.२ ग्राम
५ कैल्सियम	....	४४ मिलिग्राम
६ फास्फोरस	...	१०८ ,,
७ लौह	....	२.४ ,,
८ एस्कार्बिक एसिड	...	६३.०० ,,
९ थायोनिन	....	२४ ,,
१० नायासिन	....	२.५ ,,
११ रिबोफ्लेविन	....	०.१६ ,,
१२ विटामिन 'ए'	...	४३८० इण्टर नेशनल यूनिट

विश्लेषण :—

१ पानी	...	९२.८ प्रतिशत
२ कार्बोहाइड्रेड	....	४.५ ,,
३ प्रोटीन	....	१.९ ,,
४ खनिज पदार्थ	...	०.७ ,,
५ स्टार्च	...	०.१ ,,
६ कैल्शियम	...	०.०२ ,,
७ फास्फोरस	...	०.०४ ,,
८ लोहा	....	२.४ मिलिग्राम
९ विटामिन 'ए'	...	३२० प्रतिशत मिलिग्राम
१० ,, 'बी०'		२३ ,, ,,
११ ,, 'सी०'		३१ ,, ,,
१२ साइट्रिक एसिड		प्रचुर मात्रा में।
१३ आक्ज़ेलिक एसिड		नाम-मात्र
१४ मैलिक एसिड		नाम-मात्र

दोष:—बात प्रधान या बात-पित्त प्रधान व्यक्ति के लिये हानिकारक है। यह खुजली पैदा करता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेष कर उनके लिये यह बड़ा कष्टप्रद है जो इसे बेसन के साथ मिलाकर तेल में छौंक पकाकर खाते हैं। बवासीर से पीड़ित रोगियों को भी हानि पहुंचाता है।

सेवन-विधिः—१ छोटे २ गोल टमाटर उतने गुणकारी नहीं होते, अतः टमाटर हमेशा बड़ी जाति के और सुडौल देखकर ही लेना चाहिये।

२ उबाल कर खानेसे विटामिनों के नष्ट होने की सम्भावना रहती है। अतः यथा सम्भव कच्चे टमाटरों का उपयोग करना विशेष लाभप्रद है। रोगियों को तो हमेशा लाल लाल टमाटरों का रस ही देना चाहिये विशेषकर कमजोर बच्चों को!

विविध व्यंजनः—१ सलाद (रायता) अच्छा ताजा लाल २ कतरा हुआ टमाटर, पालक शाक का पत्ता, अदरख, पातगोभी, गाजर, चुकन्दर तथा प्याज ले लें। सबको एक में मिलाकर ऊपर से भूना हुआ, पीसा हुआ जीरा, नमक और नीबू का रस मिला दें। उम्दा रायता बन जायगा। बड़ा ही स्वादिष्ट होता है। प्रतिदिन सुबह शाम खाली पेट में) ३ से ४ छटांक तक अवश्य सेवनीय है। इसे 'अद्भुत रसायन' समझिये।

२ शीरा (क) सामग्री बड़े आलू ६:, पके हुए टमाटर ४, प्याज के टुकड़े २, धनियां की हरी पत्ती थोड़ी सी, पीसी हुई धनियां आधी चम्मच, हल्दी एक चम्मच, घी नमक और हल्दी अन्दाज से।

(ख) विधि टमाटरों को साफ पानी में धोकर दो २ टुकड़े कीजिए। आलुओं को भी धो, छील कर, काट लीजिए। मसालों को जरा सा पानी में पीस लीजिए। घी में प्याज भून डालिये। लाल २ हो जाने पर मसाला मिलाकर खूब चलाइये। पक जाने पर आलू के साथ २ दो प्याले पानी और अन्दाज से नमक छोड़ दीजिये। आलुओं के सीझ जाने पर ही टमाटर डालकर दस मिनट तक पकने दें। टमाटर पक जाने पर उतार लें।

३ काश्मीरी शीराः—(क) सामग्री टमाटर का गूदा २ प्याले, प्याज ५ (पतले २ टुकड़े किये हुए), हरी मिर्च ६ (पतले २ कटे हुए), बेसन आधी छटांक, घी आधी छटांक नमक।

(ख) विधि सबसे पहले प्याज को घी में भून डालिये। उनके लाल २ हो जाने पर टमाटर का गूदा मिला दीजिये। मिर्च और नमक भी मिला दीजिये। गूदा पक जाय तो उसमें आधा प्याले ठंढे पानी में बेसन मिलाकर डाल दीजिये। बेसन को खूब चलाते रहिये। जब अच्छी तरह से पक जाय तो उतार लीजिये।

उपसंहारः—उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि टमाटर एक अत्यन्त उपयोगी एवं सस्ता खाद्य पदार्थ है। प्रत्येक व्यक्तिके लिये यह समान रुप से हितकारी है, अतः इसे अपनी रसोई में स्थान अवश्य दीजिये।

---

* हमारा स्वास्थ्य और राष्ट्र *

ले०—कविराज श्री राजकिशोर सिंह वैद्यशास्त्री पो० जौनपुर यू० पी०

मनुष्य के लिये सबसे पहिले सुन्दर स्वास्थ्य की आवश्यकता है क्योंकि इसके बिना उसका जीवन ही व्यर्थ है। रोगी पुरुष परिवार के लिये बोझ और कूड़ा करकट के समान है जिसका न धन के रुप में व्यवहार हो सकता है न खाद्य के ही रूप में। यह पुरुष राष्ट्र के लिये भी भारस्वरूप है। रोग से जर्जरित देश के लिये ऊँची शिक्षा की उतनी आवश्यकता नहीं है। जितनी उसको स्वास्थ्य बनाने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के साधनों की है। आज के ५० फीसदी शिक्षा प्राप्त व्यक्ति घर में या अस्पतालों में रुग्णावस्था में पड़े देश की समृद्धि में बाधक स्वरूप हो रहे है। जिस प्रकार कच्ची ईंटों से बना हुआ घर खतरनाक है। ठीक उसी प्रकार रोगियों से भरा राष्ट्र भी कब ढह जायगा निश्चित नहीं। जो पिता रोगी संतान पैदा करता है वह नरक भोग तो कर ही रहा है आगे भी नरकगामी ही होगा। उसी तरह जिस राज्याश्रय में रोगियों की भरमार होगी वहाँ का शासक वर्ग भी नरकगामी ही होगा। अतः हम यदि अपने राष्ट्र को समुन्नत देखना चाहते हैं तो देश के हर व्यक्ति किस प्रकार स्वस्थ रह सकते हैं, यह विषय प्रथम विचारणीय है।

आज का अस्वस्थ समाज विदेशी सभ्यता के नकल की बहुत कुछ देन है। हम अपने पूर्वजों की स्वास्थ्य कर रीति रस्मों और सुसंकारो को भूलते जा रहे हैं। यह समाज के लिये खतरनाक दिशा है। हमारे पूर्वजों के रस्म रिवाज, खान-पान, वस्त्र धारण त्योहार पर्व, स्नान ध्यान पूजा पाठ और शादी ब्याह आदि सभी कृत्य स्वास्थ्य की बुनियाद पर बने थे। इसी कारण उनका पालन कर वे दीर्घजीवी और निरोग थे। बाप के सामने बेटे की मृत्यु एक आश्चर्य-जनक घटना होती थी। दैववशात् यदि कोई पुत्र बाप के सामने मर भी जाता था तो देश के शासक से प्रजा जवाब तलब करती थी, कि "ऐसा क्यों हुआ ? कहीं तुम्हारे किसी दोष से तो ऐसा नहीं हुआ ?"

उत्तम स्वास्थ्य मांगने या चाहने मात्र से नहीं मिलता। उसे मनुष्य अपने नियमित जीवन से ही प्राप्त कर सकता है। नियमित जीवन बिताना भी एक तपस्या है जो बिना संस्कार के नहीं प्राप्त हो सकता। जनता में ऐसे स्वास्थ्यकर संस्कार डालने के लिये नैतिक व पवित्र स्वस्थ जीवन बिताने वाले माता-पिता और गुरुओं की आवश्यकता है और आवश्यकता है ऐसे ही शासकों की। रोटी कमाने वाली विद्या सिखना जहाँ आवश्यक है। वहाँ उससे भी बढ़कर आवश्यक है स्वस्थ रहने का ज्ञान प्राप्त करना। आज जितने स्कूल कालेज चल रहे हैं वे प्रायः रोटी कमाने की ही विद्या हमे सिखाते हैं। वहाँ पवित्र नैतिक स्वास्थ्यकर जीवन बिताने की रंचमात्र भी कोई शिक्षा नहीं दी जाती। जो खेल कूद वहाँ किये जाते हैं वे पाश्चात्य ढंग के होने के नाते इतने मंहगे हैं कि सभी विद्यार्थियों को खेलने के लिये कोई कालेज स्कूल इतनी सामग्री इकट्ठा ही नहीं कर सकता। अतः ये खेल कूद इस गरीब देश के लिये अनावश्यक हैं और अनुपयुक्त हैं। स्कूलों में कबड्डी, तुतुलूमतूल, सुटुर तथा गुल्ली डण्डा आदि सस्ते स्वास्थ्यकर तथा शिक्षाप्रद खेलों का समावेश आवश्यक हैं। इनसे सब विद्यार्थी लाभ उठा सकते हैं और इन पर कुछ खर्च भी न पड़ेगा। परन्तु नई रोशनी में पले बहुत से हमारे राष्ट्र कर्णधार इन देशी खेलोंमें देशकी अप्रतिष्ठा समझेंगे। वे तो देशमें इङ्गलैंड व अमरीका का नक्शा उतारना ही अच्छा समझते हैं। परन्तु देशी खेलों को सुसंस्कृत कर यदि खेले तो देश का गौरव भी बढ़ेगा साथ ही व्यवहारिक होने व सस्ते स्वास्थ्यकर और मनोरंजक होने के कारण अन्य देश भी इनका अनुकरण कर लाभ उठायेंगे।

अधिक भोजन और आराम तलबी तथा परिश्रम का अभाव ही रोगों के कारण हैं। इसलिये मिताहार और व्यायाम तथा अन्य गृहस्थी के श्रमसाध्य कार्य करके स्वस्थ रहने का प्रयत्न आवश्यक है। विषयों के भोग में फँसा व्यक्ति स्वस्थ नहीं रह सकता। भोगी सदा रोगी ही रहेगा। नियमित मिताहार-विहार ही स्वस्थ रहने के साधन हैं और वास्तविक स्वस्थ वह है जिसका शरीर मन व आत्मा तीनों स्वस्थ व रोग रहित हों। कहा भी है:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"प्रसन्नात्मेमिन्द्रयमनः स्वस्थ इत्यभिधीयते ।।"

उत्तम शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक स्वास्थ्य का निम्न श्लोक अच्छा पथ प्रदर्शन करता है :—

नित्यं हिताहारविहारसेवी,
समीक्ष्यकारी विषयेष्वसक्तः।
दाता समः सत्यपरः क्षमावान्,
आप्तोपसेवी च भवत्यरोगः ॥

अर्थात् जिसका आहार विहार शुद्ध है, जो प्रत्येक कार्य विचार पूर्वक करता है, जो विषयों में आशक्त नहीं है, जो प्राणी मात्र में समान भाव रखता है, जो सत्य परायण है, जो क्षमावान है, जो आप्त पुरुषों का सत्संग करता है; वह पुरुष कभी रोग पीड़ित नहीं होता। इस प्रकार जीवन व्यतीत करनेवाले समाज और देश के लिये अधिक अस्पताल और अधिक धन संग्रह की आवश्यकता ही नहीं प्रतीत होगी।

मशीन युग लाने से देश सुखी नहीं हो सकता। यह तो मनुष्य समाज को अपाहिज बनाने वाला है। पाश्चात्य देशों में उन्नति की जो चकाचौंध है वह वास्तविक है। वास्तव में मशीन प्रधान देश तेजी से अवनति की दिशा में चले जा रहे हैं। वहां की जनता मशीनों के भरोसे काहिल होती जा रही है। उनकी अतुल धनराशि उन्हें भोगी विलासी बनाती जा रही है। उन देशों में मानसिक शान्ति नहीं है और धन वृद्धि की होड़ में अध्यात्मवाद वहां लुप्तप्राय है। फिर ऐसा खतरनाक मार्ग क्यों अपनाया जाय, विचारने की बात है। समाज के स्वास्थ्यकी उन्नति स्वावलम्बी उद्योग धन्धों के सीमित परिश्रम द्वारा ही प्राप्त हो सकती है। और इससे हर व्यक्ति को काम भी मिलेगा। मशीने तो देश में बेकारी बढ़ाने का साधन ही सिद्ध हो रही है। यदि इन पर लगाम न लगी तो इसका कुपरिणाम देश को बहुत दिन तक भोगना पड़ेगा। बेकारी का भी स्वास्थ्य पर मारक प्रभाव पड़ता है।

यदि हमारे देश में गल्ला आदि इकट्ठा कर मण्डियों में सड़ने न दिया जाय और उसका देश में समान वितरण होता रहे तो यदा कदा अकाल पड़ जाने पर भी देश भूखों न मरे और न मशीन युग लाने की आवश्यकता ही प्रतीत हो। समाज में नाजायज़ आमदनी करने की भावना तभी जायगी जब हम अपनी पुरानी सभ्यता को अपनायेंगे। यदि हमारा समाज आयुर्वेद में प्रदर्शित शारीरिक, मानसिक आत्मिक और सामाजिक स्वस्थता की तरफ अग्रसर हो तो फिर हमारा देश वास्तविक उन्नति प्राप्त कर सकता है। रोगों पर विजय पाने के लिये आज के कृत्रिम उपाय व्यर्थ सिद्ध हो रहे हैं और आगे भी होते रहेंगे। पूर्ण स्वास्थ्य तो आत्मसंयमसे ही प्राप्त हो सकता है। शरीरके आदर्श स्वास्थ्य के लिये नया तुला सादा सात्विक भोजन, शक्ति के अनुसार नियमित परिश्रम वा व्यायाम और मन को स्वस्थ रखने के लिये विषय रहित सदाचार का पालन तथा आत्मिक स्वास्थ्य के लिये आत्म-परमात्म-ज्ञान तथा सत्संग की परम आवश्यकता है। यह सब तभी होगा जब देश का सारा वातावरण, जो पापाचारों से दूषित हो गया है, बदला जा सके। इसके लिये स्कूल पाठशालाओं और कालेजों में प्राचीन गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का प्रबन्ध करना होगा। और एलोपैथिक चिकित्सा के स्थान पर शुद्ध आयुर्वेदिक चिकित्सा प्रणाली को ही पूर्ण राज्य मान्यता देनी होगी। गन्दे चलचित्रों पर तो अविलम्ब ताला ही लगाने की आवश्यकता प्रतीत हो रही है। इन चलचित्रों द्वारा जो गन्दे कामोत्पादक गाने गाये जाते हैं और भद्दे कामुक चित्र विज्ञापनार्थ दीवालों पर चिपकाये जाते हैं उनसे समाज की बड़ी हानि हो रही है। हम पर और हमारे बच्चों पर इनका कैसा कुसंस्कार पड़ रहा है वह किसी से छिपा नहीं है। सरकार को इन चित्रों से कर रूप में भारी लाभ होता है। यदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गन्देचित्रों पर रोक लग जाय तो संचालकों को आर्थिक हानि होगी साथ ही सरकार को भी भारी घाटा लगेगा। इसी भय से सरकार सब कुछ जानते हुए भी इनपर प्रतिबन्ध नहीं लगा पा रही है। परन्तु सरकार यह नहीं सोचती कि इन चित्रों द्वारा समाज का पतन होकर रोगों की जो भरमार हो रही है उस दुष्परिणाम का निवारण करना तथा उसकी क्षति पूर्ति करना सरकार के ही मत्थे पड़ेगी। सरकार को घर घर गांव २ अस्पताल खोलना पड़ेगा और चित्रों से हुई आमदनी के अतिरिक्त और भी खर्च कर देना पड़ेगा। फिर आप सोचें लाभ क्या होगा। इसी प्रकार नशा विभाग पर भी प्रतिबन्ध न लगा कर जन स्वास्थ्य की हानि बढ़ाई जा रही है। अतः समाज का नैतिक पतन करके पैसा कमाने की भावना हमारे लक्ष्मीपतियों तथा स्वदेशी सरकार दोनों के लिये बहुत लज्जास्पद है। सरकार घर में बिजली लगाना और सब को साक्षर बनाना आदि स्वर्गीय काम चाहे बन्द कर दे, वह ठीक है, परन्तु वह जहन्नुम में ले जाने वाली अनैतिक-आमदनी को तो अविलम्ब बन्द कर दे तभी देश का कल्याण है। कीचड़ पोतकर धोने से कोई लाभ नहीं है। अनैतिक जीवन में करोड़पति बनकर भी सुख शांति नहीं है परन्तु नैतिक जीवन में मनुष्य आधा पेट खाकर भी स्वस्थ स्वर्गीय सुख भोग सकता है।

इस प्रकार आप देखेंगे कि हमारे लाख चाहने पर भी हमारे बच्चे नैतिक जीवन तब तक नहीं बिता सकते जब तक कि उपरोक्त सामाजिक और राष्ट्रीय खामियां रहती हैं। अतः जनता और सरकार को बड़े बड़े अस्पताल और अतुल उपभोग सामग्री जुटाने के बजाय समाज को आत्म संयम और इन्द्रिय नियन्त्रण करना सिखलाना विशेष आवश्यक है। पाठशालाओं कालेजों में आयुर्वेदीय सद्वृत, दिनचर्या, ऋतुचर्या आदि के पाठ अनिवार्य रूप में पढ़ाना चाहिये। स्कूली शिक्षा मात्र से सबको रोटी मिलना असम्भव है परन्तु वहां की नैतिक शिक्षासे सारे जन जन समूह को लाभ होगा। अतः सरकार और जनता से अपील है कि वे जहां अन्य राष्ट्रीय विषयों के हल करने में लगे हैं वहीं उपरोक्त आयुर्वेदीय स्वास्थ्य पालन के नियमों की शिक्षा को भी महती राष्ट्रीय समस्या समझ कर शीघ्र देश पर लागू करने कराने पर जोर दें।

आयुर्वेद विज्ञान परिषद् कलकत्ता

ले० पं० श्री कविराज केशवदेव शास्त्री तीर्थत्रय आयुर्वेदाचार्य

आयुर्वेदिक चिकित्सा की अवनति के कारणों में चिकित्सास्तर का एक रूप न होना भी एक मुख्य कारण है। कठिन रोगों के रोगियों को नाम मात्र की दवाओं से लाभ नहीं पहुंचाया जा सकता। इसी तरह लोगों की अल्पज्ञता का दोष भी किसी पद्धति का दोष नहीं कहा जा सकता। सुयोग्य आयुर्वेदिक चिकित्सक आज भी कठिन से कठिन रोगों को जिनमें अन्य पैथि वाले कुछ नहीं कर पाते—मिटानेमें सक्षम होते हैं। लेकिन यह मानना ही पड़ेगा कि आयुर्वेद की यह विशिष्टता धीरे धीरे २ ह्रास होती जा रही है। दूसरी तरफ नूतन एलोपैथिक दवाओं की बाढ़ सी आ रही है और जनता बड़े धड़ल्ले के साथ इन दवाओं के प्रचार के चकाचौंध में फँसती जा रही है। हमारी केन्द्रीय राष्ट्रीय सरकार भी करोड़ों के बजट बनाकर चिकित्सा सुविधा के नाम पर एलोपैथिक चिकित्सा को संरक्षण दे रही है। आयुर्वेद के नाम का निर्देश कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहीं कुछ किया भी जा रहा है तो वह यही कि किस तरह देशी औषधियों को विलायती ढांचेमें ढाला जा सके। हमारी सरकार के कई उच्चाधिकारी केवल वैद्यों-को कर्त्तव्य का पाठ पढ़ाकर या उलाहना सुनाकर अपने कर्तव्य की इति श्री समझ लेते हैं।

अस्तु, इससे इन्कार नहीं किया जा सकता है कि आयुर्वेद के लिये यह जीवन मरण का समय है। हम आयुर्वेद सेवियोंको अब सर्वतोभावेन अवश्य ही जागरूक और सचेष्ट होना चाहिये। अब जैसी स्थिति आयुर्वेद के सामने कभी नहीं आई थी। सरकार की उपेक्षा गुरु परम्परा प्राप्त ज्ञान ह्रास एवं अरबों की पूंजी के बल से फैलाई जानेवाली विदेशी चिकित्सा पद्धतिका मुकाबला ये बातें सम्मिलित रूपमें इस पद्धति के सामने कभी नहीं आईं। लेकिन हमें हताश नहीं होना होगा। सर्व प्रथम हमें अपनी त्रुटियों को हटाना चाहिये। आयुर्वेद शाश्वत विज्ञान है। यदि हमने अपना परिमार्जन कर लिया तो आयु-र्वेद के चमकने में किसी तरह सन्देह नहीं करना चाहिये। ऊपर कहा जा चुका है कि हम आयुर्वेद सेवियों के चिकित्सा स्तर का एक न होना हमारी बड़ी त्रुटियों में से एक है। इसे हमें दूर करना ही चाहिये। सरकार की तरफ मुंह ताकने से इस दिशा में शीघ्र कुछ नहीं हो सकेगा। इस पथ में हमें आगे बढ़ना चाहिये। यह दावे के साथ कहा जा सकता है कि प्राचीन आयुर्वेद साहित्य को साथ रखते हुए अखिल भारतीय रूप से आयुर्वेद चिकित्सा का संकल न हो सके तो ऐसा कोई रोग न बचेगा जिसकी चिकि-त्साका आज भी हम बेजोड़ दवाओं को जो स्थान प्राप्त है वही एक अनुभूत मुष्टियोग को प्राप्त है। अनुभव में आये हुए बाह्य उपचार भी अच्छे लाभप्रद सिद्ध होते देखे जाते हैं।

इस पुनीत एवं दुष्कर कार्य को सम्पादन करने के लिये हम लोगों ने आयुर्वेद विज्ञान परिषद कलकत्ता के जरिये प्रयत्न आरम्भ किये हैं। आयुर्वेद के इतिहास में बङ्गप्रान्त का एक विशिष्ट स्थान रहा है। किसी-किसी रूप में आज भी यह प्रान्त अपनी कुछ विशिष्टता रखता ही है। पूर्णाङ्ग चिकित्सा व्यवस्था की परिपाटी आज भी कुछ रूप में यहां जीवित मिलती है। इसी तरह कुछ प्राचीन विशिष्ट विद्वान् भी बचे हुए हैं ही। परिषद् ने स्थिर किया है कि स्थानीय विशिष्ट विद्वानों के अनुभव संग्रह करने का सर्वोत्तम पहिला तरीका यह होगा कि आयुर्वेद व्याख्यान माला के अधिवेशन कराये जांय। इस तरह की पाक्षिक व्याख्यान मालाके चार अधिवेशन श्वास रोग और इसकी चिकित्सा के ऊपर हो भी चुके हैं। आयुर्वेद के प्रकाण्ड विद्वान् वयोवृद्ध कविराज योगेन्द्रनाथ दर्शन शास्त्री, तर्क षड्दर्शन तीर्थ, आयुर्वेद केशरी कविराज रामचन्द्र मल्लिक दर्जनों आयु-र्वेदीय पुस्तकोंके लेखक कविराज प्रभाकर चटर्जी एम० ए०, श्यामा दास वैद्य शास्त्रपीठके प्रिन्सिपल कविराज विजय काली भट्टाचार्य एम० ए०, कविराज कृष्णदत्त शर्मा प्राणाचार्य, आयुर्वेद महामहोपाध्याय पं० भागी-रथ स्वामी रसायनाचार्य आदि महानुभाव इन अधि-वेशनों के सभापति एवं प्रधानवक्ता के पद को सुशोभित कर चुके हैं। स्थानीय अन्य सभी विशिष्ट विद्वानों का सहयोग इस व्याख्यान माला को प्राप्त हो चुका है। अन्य सज्जनों से भी उक्त विषय के प्रबन्ध प्राप्त किये जा रहे हैं। अब हम अन्य प्रान्तों के विशिष्ट विद्वानों के लेख प्राप्त करने का आयोजन कर रहे हैं। इतना ही नहीं हमारा तो बिचार यह है कि भारत के प्रत्येक आयुर्वेद चिकित्सक अपने अपने अनुभव उक्त रोग के बारे में भेजें। एक केन्द्रीय चिकित्सा संकलन समिति का संगठन भी किया जा चुका है। जिसमें आयुर्वेद की चोटी के विशिष्ट विद्वान् सम्मिलित हैं। उक्त विषय के निबन्ध प्राप्त होने पर यह समिति चिकित्सा संकलन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का कार्य आयुर्वेद के सिद्धान्तों को सामने रखते हुए तदनुकूल रूप में करेगी। इसके अलावा जिन आधार तथ्यों को हम भूल बैठे हैं उन आयुर्वेदीय सूत्रों पर भी समिति गहरा अध्ययन एवं अन्वेषण करेगी।

प्रस्तुत विषय श्वास रोग में ही—

तमके तु विरेचनम्, ऊर्ध्वाधः शोधने शक्ते दुर्बले शमनं हितम्: आदि बचनों के अनुसार चिकित्सा करने का आज आम रिवाज नजर नहीं आता। हमें इनकी उत्तमता को सामने रखकर इन्हें फिर से चालू करना है।

इस कार्य में प्रत्येक आयुर्वेद सेवीका सहयोग हम हृदय से चाहते हैं। आयुर्वेद गौरव के अध्ययन शील प्रत्येक पाठक से हमारी प्रार्थना है कि वे इस ज्ञानयज्ञ में अपनी हिस्से की आहुति प्रदान करें। अभी प्रस्तुत विषय श्वासरोग ही है। इसके बारे में आप जो कुछ भी भेजेंगे उसका स्वागत किया जायगा। अपने प्रबन्ध या अनुभव नीचे लिखे पते से हमारे पास भेजें। आपकी कोई विशेषता होगी तो आपके नाम के साथ प्रकाशन में उसका उल्लेख होगा। समिति द्वारा प्रकाशित साहित्य आयुर्वेद का सार संग्रह होगा इसमें सन्देह नहीं है।

लेखादि भेजनेका पता—
मन्त्री आयुर्वेदविज्ञानपरिषद
५१, काटन स्ट्रीट, कलकत्ता—७

श्वास रोग और इसकी चिकित्सा

ले० कविराज श्री केशवदेव शास्त्री, तीर्थत्रय आयुर्वेदाचार्य कलकत्ता

मानव शरीर के मध्य भाग में उरोगुहा है। जिसमें दो फुफ्फुस, श्वास नलिका, अन्न नलिका, हृदय इनसे सम्बन्ध रखनेवाली धमनियाँ और शिराएं होती हैं। इनमें से दो फुफ्फुस, श्वास नलिका तथा श्वास नलिका के ऊपर रहा हुआ स्वरयन्त्र इन सबको मिलाकर श्वास यन्त्र कहा जाता है। इस श्वासयन्त्र के द्वारा ही जीवित मानव शरीरमें श्वास क्रिया का सम्पादन होता है। जब वायु श्वास रूपसे भीतर आती है, तब उरोगुहा का विस्तार होनेसे फुफ्फुस कोष फूलते हैं और निःश्वास रूपसे वायु बाहर निकलती हैं। तब निश्वास कालमें उरोगुहा का संकोच होनेपर फुफ्फुसों के वायु कोषोंको संकुचित होना पड़ता है। श्वास यन्त्र S.P. से निकलनेवाली सूक्ष्म शाखाओंका प्रवेश फुफ्फुसोंमें होता है। इन सब शाखा प्रशाखाओंके भीतर श्लेष्म स्रावी कलाका आच्छादन लगा होता है। उसमेंसे अवलम्बक कफ का निरन्तर स्रवण होता है। श्वास यन्त्र से गृहीत वायु इन कोषों में प्रवेश करती है और बाहर निकलती हैं। परन्तु कफ की विकृति होनेपर श्वास वाहिनी और अन्न जल वाहिनियों के स्रोतसों में दूषित कफके भर जानेसे वायुके आवागमन करनेका मार्ग अवरुद्ध हो जाता है फलतः प्राणवायु प्रकुपित होकर फैल जाती है और श्वास रोग की सम्प्राप्ति करा देती है।

आयुर्वेद ने श्वास रोग को पांच तरह का माना है। इनमें महा ऊर्ध्व एवं छिन्न श्वास आशु प्रतिकारी एवं व्यक्त लक्षण होनेपर असाध्य माने गये हैं। तथ्य तो यह है कि जब जीवन दीप बुझने लगता है एवं जीवनी शक्ति नष्ट हो जाती है तब ये दिखलाई देते हैं अतः इनकी स्थिति क्षुद्र एवं तमक श्वास से अलग मान ली गई है। तमक श्वास के आचार्य चरक ने भी प्रतमक और संतमक ये दो और भेद किये हैं। इनमें क्षुद्र एवं नूतन तमक श्वास साध्य माने गये हैं। पुरातन तमक श्वास याप्य माना गया है। यह रोग वंशगत भी होता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। स्त्री की अपेक्षा पुरुष को एवं युवावस्था की अपेक्षा वृद्धावस्थामें ज्यादा होता है। जिन स्त्रियों को वात विकृतिसे अन्त्रं मण्डलीय विकार या हिष्टीरिया आदि वातज प्रकोप हों ऐसे स्थलोंमें भी कभी २ श्वास की सम्प्राप्ति देखनेमें आती है। तमक श्वास के कारणोमें विकृत वायु के कारण बार २ पीनस का होना भी एक मुख्य कारण माना गया है। इसी तरह उत्तेजक कारण श्वास रोग की शीघ्र सम्प्राप्ति के हेतु माने गये हैं। कफ के सूख जाने पर विकृत वायु की वजह से श्वास यन्त्रों में आक्षेप पैदा होकर जो श्वास होता है उसे खुश्क श्वास कहा जाता है। जिसमें कफ निकलता रहता है उसे आम तौरपर गीला श्वास कहते हैं।

श्वास रोग की चिकित्सा प्रारम्भ करने के पहिले यह लक्ष्य करना चाहिये कि रोग सम्प्राप्तिका मुख्य सहायक कारण क्या है। इस रोग में कफ एवं वायु नाशक चिकित्सा करने का आदेश आयुर्वेद ने दे रक्खा है। जैसे—

यत्किंचित्कफवातघ्नमुष्णं वातानुलोमनम्।
भेषजमन्नपानंवा हिक्काश्वासेषु तद्धितम् ॥ चरक

इस रोग की चिकित्सा के तीन भाग किये जा सकते हैं। रोगीकी वेदना की तत्काल शान्ति, दौरे का दमन एवं पुनराक्रमण का निवारण। क्षुद्र श्वास या कफ प्रधान श्वास बलाधायक एवं कफ निवारक औषधियों के सेवनसे कफकी निवृत्ति होकर मिट जाता है। इसी लिये श्वास शब्द से आज जिस रोगका ग्रहण होता है वस्तुतः वह तमक श्वास ही होता है। तमक श्वासके दौरेमें रोगीको असीम कष्ट होता है। अतएव इसके दौरे को मिटाने की क्रिया सर्व प्रथम करनी होती है। आज के इस लेखमें इसी क्रमसे विवेचन किया जायगा।

१—रोगी को सुविधा पूर्ण तरीके से बैठाकर उसकी छाती और पीठपर नमक मिला गाय का पुरातन घृत अच्छी तरह से मालिश करें। फिर एक बर्तन में दशमूल क्वाथ सहित जलको औटावें, ऊपर चलनीसे ढक दें उसमें से जो वाष्प निकले उससे फलालेन के टुकड़ों को गरम करके रोगी की छाती तथा पीठ में सेक करे। इस तरह १५—२० मिनट तक सेक करनेसे रोगीको शान्ति मिल जाती है। घृत की जगह वासा चन्दनादि तैल या साधारण सरसों का तैल भी लिया जा सकता है। स्वर्गीय कविराज ज्योतिर्मय सेन सरसो के तैल में नवसादर मिलाकर इसकी मालिश करवाया करते थे।

(२) सहने लायक गरम जलमें रोगी के पैरों को रखकर थोड़ा २ गरम जल ओर मिलाता रहे। इस तरह १५—२० मिनट करने से भी दौरे का वेग घटने लगता है।

(३) उबलते हुए १० तोला जलमें एक मासा सोम चूर्ण को डालकर १ तोला मिश्री मिलाकर नीचे उतारकर रख दें। जब कोष्ण रह जाय तब छान कर रोगी को थोड़ा २ पिलावे। इससे रोगका वेग तत्काल शान्त हो जाता है।

(४) श्वास कुठार रस ३ रत्ती के साथ आधा माशे सोम चूर्ण को मिलाकर गरम जल से खिलानेसे भी दौरेमें तत्काल लाभ मिलता है।

(५) एक भाग रससिन्दूर के साथ दश भाग सोम चूर्ण को अच्छी तरह घोंट लें। इसमें से ५ रत्ती चूर्ण को शहतसे चटानेसे दमेमें तात्कालिक अच्छा लाभ होता है।

(६) आधा सेर जल में एक तोला मिश्री डालकर गरम करें। जब एक छटांक रह जावे तब उतारकर उपरोक्त रससिन्दूर मिश्रण के साथ पिलानेसे घबराहट मिटती है और कफ निकलकर दौरा शान्त होता है।

(७) इस रोग के दौरे की निवृत्ति में धूम्रपान भी अच्छा लाभप्रद माना गया है। आचार्य वाग्भट ने कहा है।

CC-0. In Public Domain, Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जत्रूर्ध्वं कफवातोत्थ विकाराणामजन्मने।
उच्छेदाय च वातानां पिवेद् धूमं सदाऽत्मवान्॥

इस रोगमें धतूरा पंचांग का धूम रोग के दौरे को तत्काल मिटाता है। लेकिन इससे खुश्की पैदा होती है उसे मिटानेके लिये रोगी को गरम घृत का सेवन कराना चाहिये।

(८) सूखे अडूसेके पत्ते सूखे धतूरे के पत्ते, भांग एवं काली चाय इनको कलमी शोरेमें भिगोये कागज में रखकर बीड़ी बनाकर पीनेसे दौरे की तत्काल शान्त होती है।

(९) मनःशिला, देवदारु, जटामांसी, हल्दी, तेज, पात, लाख और लाल एरण्ड की जड़ इनको किंचित् घृत मिश्रित करके उपरोक्त तरीके से धूम्रपान करवाने से रुके हुए कफ के स्रोत खुल जाते हैं और कफ की निवृत्ति होकर दौरे का वेग शान्त होता है।

क्रमशः—

साहित्य समीक्षा

वैद्योद्बोधनः।

(लेखक पं० श्री गिरिजादत्त पाठक वैद्य साहित्यायुर्वेदाचार्य्य, प्रकाशक श्री कालिकेश्वर कार्य्यालय पो० बक्सर (शाहाबाद) पृष्ठ सं० ३० मूल्य ।।।)

प्रस्तुत पुस्तक पद्यमय संस्कृत भाषा में है। प्रथम भाग में ११२ एवं परिशिष्ट भाग में ५३ सुललित पद्य हैं। लेखक महोदय आयुर्वेद शास्त्र के विशिष्ट विद्वान् होते हुए अन्य विषयों में भी पारंगत हैं। इस ग्रन्थमें भारत वासियों के लिये पाश्चात्य चिकित्सा (एलोपैथी) को अनुपयोगी तथा अपूर्ण सिद्ध करते हुए आयुर्वेदिक चिकित्सा प्रणाली को सर्वाङ्ग पूर्ण तथा उसके महत्व को ग्रन्थकार ने अच्छी तरह प्रदर्शित किया है। अतः यह पुस्तक केवल वैद्य समुदाय के लिये ही नहीं अपितु संस्कृतज्ञोंके लिये भी उपयोगी है। आशा है कि विद्वज्जन इस पुस्तक को स्वीकार कर लेखक के उत्साह को बढ़ाते हुए अपनी गुणग्राहकताका परिचय देंगे। यदि पुस्तक हिन्दी भाषा के पद्ययुक्त होती तो इससे हिन्दीके ज्ञाताओं को भी लाभ पहुंचता।

आयुर्वेद सुलभ विज्ञान

लेखक—डा० कमल सिंह एम० डी० एस्० एच० आयुर्वेदभिषक् साहित्य विशारद प्रकाशक डा० कमल सिंह देवास गेट उज्जैन पृष्ठ सं० १५१ मूल्य २।।) रु०

प्रस्तुत पुस्तक हिन्दी भाषा में लिखी गई है। लेखक महोदय सुयोग्य एवं सफल चिकित्सक हैं। यद्यपि डा० साहब होमियोपैथिक चिकित्सक हैं तथापि आयुर्वेद विज्ञान पर इनकी श्रद्धा एवं प्रेम प्रशंसनीय ही नहीं अपितु अनुकरणीय भी है। पुस्तक सर्वसाधारण बालक युवक वृद्धसभी के पढ़ने लायक है। यदि इस पुस्तक का अच्छी तरह मनन किया जाय तो आयुर्वेद शास्त्र का सुलभ ज्ञान प्राप्त हो सकता है। आयुर्वेद के प्रारम्भिक छात्रों के लिये यह पुस्तक विशेष उपयोगी है। चरक, सुश्रुत, माधव निदान, भावप्रकाश, शार्ङ्गधर इत्यादि आयुर्वेद के प्रामाणिक ग्रन्थों के आधार पर लिखी जाने के कारण इसकी उपयोगिता और भी बढ़ गई है आयुर्वेद प्रेमियों को चाहिये कि इस पुस्तक का अधिकाधिक प्रचार कर लेखक के उत्साह को बढ़ावें ताकि वे अन्य उपयोगी पुस्तकें प्रकाशित कर आयुर्वेद की उत्तरोत्तर सेवा कर सकें। यद्यपि पुस्तक का मूल्य कुछ अधिक मालूम पड़ता है पर पुस्तक की उपयोगिता के सन्मुख मूल्य नगण्य वस्तु है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुभूत प्रयोग

(१) स्वादिष्ट जीराः— जीरा ऽ॥ साफ करके नींबू के स्वरस में गला दीजिए, २४ घंटे कम से कम गलाना आवश्यक है। बाद में निम्नांकित चीजों का चूर्ण कर उपरोक्त-जीरा चूर्ण में डालकर हल्के हाथ से मिला दें-नीम्बू के रस में जीरा गीला होने के कारण चूर्ण चिपक जाता है।

चूर्ण का योग—अनारदाना, ऽ= सोंठ, १। तो० काली मिर्च २ तोला, पीपर २॥ तोला, सेंधा नमक, ७॥ तोला, पीपरामूल २॥ तोला, काला नमक ऽ-, जीरा १। तोला, नागकेशर, २॥ तोला, तालीस पत्र २॥ तोला, समुद्र नमक १२॥ तोला, अम्लवेंत, २॥ तोला, दालचीनी ८ माशा, बड़ी इलायची ८ माशा तेजपात २॥ तोला, धनियां २॥ तोला।

गुणः—१ से ३ माशे तक लेने से—मन्दाग्नि, अपच, पतले दस्त शूल, आफरा, उदर विकार दूर होते हैं, यह जीरा स्वादिष्ट होने के नाते थोड़ा २ दिन में कई बार लिया जा सकता है। यह प्रत्येक घर के दैनिक आवश्यकता की चीज़ है, पाचक के शोकीन इसको निरापद समझ वेधड़क—बालक, युवा, स्त्री, वृद्ध एवं गर्भिणी स्त्री भी उपयोग कर सकती है। वायु शमन एवं पेट में गुड़ गुड़ाने आफरा आदि में गरम जल से लेवें।

(२) हैज़ा नाशक बटीः—कपूर देशी ऽ- हींग असली ऽ=, मोम असली ऽ।, तीनों औषधियां लेकर सील पर पीस घोटकर रख लेवें, आवश्यकता होने पर २ रत्ती दवा लेकर गोली बना लेवें, हैजे में १ से २ रत्ती की मात्रा में लौंग के उबले पानी के साथ देवें, हैजे में एक २ घण्टे से रोग शमन होने तक देते रहे, और पीने के लिये लौंग का उबला हुआ पानी देवें।

अतिसार रोग पर भी एक से २ रत्ती की मात्रा में देनेसे दस्त बंद होते हैं। इसलिये इस गोली का नाम अतीसार नाशक बटी रख सकते हैं। अजीर्ण से वमन होती हो तो यह दवा देने से उल्टी अवश्य बन्द हो जाती है।

दांत डाढ़ शूल होने पर इस गोली को रखने से लाभ होता है।

इसके अलावा—बच्चों के अपचन से दस्त वमन पेट दर्द अपच दूध फेंकना आदि रोगों में योग्य मात्रा में देना बहुत ही हितकर है

(३) खांसी हरण पौडर :— (चुटकीला) लौंगों को तवे पर फुलाकर चूर्ण कर कपड़छान कर लेवें, बड़े आदमियों एवं औरतों को योग्य मात्रा में पान में देवें, बच्चों को शहद में देने से साधारण खांसी, एवं वमन वाली कुकर खांसी में भी देना बहुत ही हितकर है।

(४) श्रेष्ठ दन्त मंजनः—गेरू, ऽ=, से लखड़ी ऽ=, कपूर ऽ-, चाक मिट्टी ऽ१।, फिटकरी का फूल ऽ= कंकोल ऽ= छोटी इलायची दाना ऽ=, माजूफल, ऽ= कत्था, ऽ। तुत्थ भूना हुआ, ६ माशा, पंतग लकड़ी ऽ=, तगर ऽ=, खैरसार ऽ। टंकण खार :—ऽ- लवंग २ तो०

सबको कूट पीस छानकर मंजन तैयार कर लेवें, इस मंजन को व्यवहार करनेसे पायरिया रोग दूर होता है, एवं दांत साफ स्वच्छ हो जाते हैं, और दांतो के विविध रोग नाशक है।

(५) मृदु विरेचन चूर्णः—सनाय एक सेर भूनी हुई सौंफ एक सेर मुलेठी ऽ॥ शुद्ध गंधक ऽ॥ ऽ३ मात्रा एक से ३ माशा तक देने से पेटका दर्द तथा कब्ज भी दूर होता है।

(६) नयनामृत बटीः—(लेप की) हरड़ एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेर रसोत ʃ≡ अफीम २ तोला फिटकरी का फूल ʃ= लौंग ऽ। इन सब दवाइयों को पीस घोटकर झड़बेरी बराबर गोली बनावें। इस गोली को पानी में घिस कर मामूली गरम कर सुहाता २ आंखों पर लेप करने से आंखों का दुखना, खुजली, एक्जीमा, सूजन रोग अवश्य दूर होते हैं।

कविराज सूरजमल डोशी, आयुर्वेद वाचस्पति

श्री संजीवन औषधालय मक्सी (उज्जैन)

(१)—श्वासान्तक वटी-(साँस-दमापर अत्युत्तम योग)

सांस की बीमारी बड़ी परेशान करती है। इसके कष्ट को मुक्तभोगी ही जान सकता है। उसपर एक सज्जन से निम्नलिखित प्रयोग प्राप्त हुआ। यह साधारण प्रारम्भिक श्वास पर फौरन फायदा दिखाता है। प्रयोग यह है—

अंफीम एक माशेः आक (अर्क, आकड़ा या अकौआ) की ताजी कोंपलें ढाई तोले, देशी अजबायन सवा तोले। इन्हें रूसे (अडूसा वासा) के पत्तों के रस में खूब घोंट लें और फिर अर्ध भाग कालीमिर्च और सबसे दूना गुड़ मिलाकर तीन-तीन माशे की गोलियां बना लें।

यह प्रयोग श्वासपर शानदार तरीके से काम करता है। प्रारंभिक मात्रा ही सत्वर लाभदर्शक होती है। यह देहात से प्राप्त हुआ प्रयोग बढ़िया असर करता है।

प्रायः इस रोग में तंगी पैदा होकर घबराहट-सी होती है। गले से एक तरह की सांय सांय की आवाज निकलती है, रोगी खांस ने लगता है और तब तक उसे चैन नहीं पड़ता जबतक कि वह खांस कर कफ बाहर निकाल ले। जब कभी कफ निकलने में देरी होती है या वह अटक जाता है तो रोगी के प्राणों पर बन आती है। किन्तु इस प्रयोग के करते ही यह कठिनाई फौरन दूर होती है। 'श्वास-रोग चिकित्सा' नामक एक पुस्तक ही हम अलग से लिखेंगे। विशेष-परिज्ञान आप वही से करें। हाँ, दो-एक अत्यन्त काम की बातें यहाँ भी लिख देता हूँ।

१—रोगी को एक गोली प्रातः निराहार मुंह अवश्य दें।

२—रोगी को गरम करके ठण्डा पानी पिलावें। ध्यान रखें कि वह पानी भी इकट्ठा न दें। थोड़ा-थोड़ा करके दिन में कईबार दें। खूब तेज प्यास लगने पर भी थोड़ा ही पानी दें और रोगी से हिदायत कर दे कि वह उसे गटागट न पी जाय, किन्तु स्वाद लेता हुआ पीवे।

३—रोगी दिन में २० से २५ बार नाक अवश्य साफ करे। नाक आती है या नहीं, इसकी कोई चिन्ता नहीं; किन्तु रोगी को हर आध घंटे बाद नाक साफ करनी ही चाहिये।

४—कफ को सरलता से बहा देने के लिये सबसे पहला-प्रयोग जो इस पुस्तक का प्रारम्भिक योग 'प्रतिश्यायहर' है, बड़ा ही उत्तम है। अपना असर दूसरे मिनट पर ही बता देता है, फौरन काम में लाइये।

५—रोगी को भोजन इकट्ठा खूब भर पेट न दें। रोगी प्रायः थोड़ा खाली पेट ही रहे। भोजन के बाद पानी थोड़ा ही पिलावें। नाक साफ करना न भूलें; क्योंकि भोजन के बाद नियमित-रूप से कफ बढ़ता ही है।

(२)—श्वास-रोग पर सरल-प्रयोग

हमारे यहा के एक चिकित्सक श्वास एवं कास पर यह प्रयोग काम में लाते हैं। वह प्रयोग कुछ नहीं ग्वारपाठे (घीक्वार-या-कुमारी) के गूदे में रखकर फूंकी गई (भस्म की गई) 'मोती सीप' 'मुक्ताशुक्ति' है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसे अदरख के या पान के रस में घोंटकर काबुली चने के बराबर गोलियां बनालें। प्रातः निराहार मुंह एक गोली एवं एक-एक गोली दुपहर एवं सायंकाल में दें। इस उपाय से सरल श्वास-रोग सरलता से ठीक होगा। शेष आवश्यक हिदायते भी (नं० १ में लिखी हुई) अवश्य दे देनी चाहिये।

(३)—दाढ़-दर्दनाशक योग

जो लोग बचपन से दांतों के प्रति लापरवाह रहते हैं, उनके दांत उनकी जवानी में ही कष्टप्रद हो जाते हैं, बुढापे की बात तो बहुत ही दूर जाने दीजिये। दाढ़ साफ न होने से उसमें कीड़े लग जाते हैं। और एक छेद सा हो जाता है। आज तक मैंने कोई भी ऐसा रोग न देखा, जिसकी दाढ़ में तो दर्द हो, किन्तु वहां छेद न हो। कभी-कभी तो दाढ़ खूब सूज भी जाती है। इसके लिये कतिपय सरल-योग नीचे लिख रहा हूँ। जिसके अन्त में एक सुपरीक्षित योग भी दिया जा रहा है। अवश्य लाभ उठाइये।

दाढ़-दर्द पर काम लेने योग्य सरल-उपचार—

डेढ़ पाव पानी में ५-७ लौंगे डालकर खूब उबालिये। फिर उसी पानी से कुल्ला करिये। दिन में ३-४ बार ऐसे ही करना चाहिये।

२—यदि दाढ़ में दर्द हो और सूजन भी आ गई हो तो सोंठ को पीसकर तवे पर गरम करो और एक कपड़े में पोटली सी बांधकर उससे दाढ़ की ऊपर से सिकाई करो। बाद में सोंठ को गरम पानी में चन्दन की तरह घिसकर ऊपर से दर्द पर लेप कर दो।

(३)—दाढ़-दर्द में तमाकू का पत्ता धरकर दबाओ और लार टपकाओ। इससे प्रायः सभी प्रकार के दांत-दाढ़ दर्द ठीक हो जाते हैं। हजारों बार का सुपरीक्षित है।

४—'लौंग का तेल' फुरेरी से लगाओ, दाढ़-दर्द मिट जायगा।

५—दाढ-दर्द पर यह सुपरीक्षित-प्रयोग है। कि एक रत्ती अफीम और एक रत्ती खपरिया नौसादर (डंडेवाला नौसादर न लें) दोनों को घोट-पीस कर गोली-सी बनालें। पहिले लौंग के पानी से कुल्ला कर ले और बाद में दाढ में जिस जगह दर्द हो उस छेद में यह गोली रखदें। फौरन दर्द बन्द हो जायगा। ५-७ बार, १-१ दिन के अन्तर से यह उपाय करने पर प्रायः छेद भर भी जाता है। इस सरल एवं गुणकारी योग को आवश्यकता पर अवश्य काम में लाइये।

(४) कखियारी नाशक प्रयोग

कांखमें जो गांठ निकल आती है, गिल्टी-जैसी; उसे 'कखियारी" कहते हैं यह बड़ा दर्द देती है। देर होनेपर यह पकने लगती है और तब पकाकर फोड़नी पड़ती है। हम यहाँ पर आपको अपना वह अनुभूत उपाय बता रहे हैं, जो 'कखियारी' होनेके प्रारम्भ में ही करनेसे आपको तमाम झंझटों से मुक्त रखेगा।

देखिये, वह सरल प्रयोग इस प्रकार है—

उत्तम मधु लें (मधु उत्तम ही लें, बाजारू 'गुड़का सीरा" कहीं भूल से न ले लें) इस मधु से आधा बढ़िया कलई का चूना लें। पानके चिकने वाले भाग पर पहिले आधा तोला मधु रखें और ऊपरसे तीन माशेसे कुछ कम कलईका चूना उसपर भुरक दें और फिर मिला कर मरहम बना लें। याद रखें कि मिलाते ही वह बहुत पतला और गरग सा हो जायगा। इसे फौरन ही मय पानके 'कखियारी पर लगा दें। थोड़ी ही देर में पान अपने आप वहां चिपट जायगा। वह तभी दूर करना चाहिये, जबकि 'कखियारी' पूरी तरह बैठ जाय।

'कखियारीके हजारों-रोगियों पर सुपरीक्षित है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्यान्य गिल्टियों पर भी उत्तम काम करता है। इस सरल-प्रयोग को मैंने 'बैलेडोना की पट्टी' आदि अनेकों योगोंसे अत्युत्तम पाया।

वैद्य पं० चन्द्रशेखर शास्त्री

सम्पादक—आयुर्वेद चिकित्सकजबलपुर।

(१) वात रोगों में रामबाण परीक्षित :—Rheumatoid Arthritis, Neuralgia. यथा-शृंग भस्म ६ मासा, अमृता सत्व १ तोला, मोठा सुराझा २ तोला, ऐस्प्रीन ६ मा० विशेष गुणी बनाना हो तो रस सिन्दूर भी ५/४ तो मिलावे—विधि- सब को घोंटे ४।४ रत्ती पुड़िया गर्म पानी से १।४, आमवात-सर्ववात में उपर्युक्त है—Gout.

(२) पशीना लाकर ज्वर दूर करे—Feyr—Encephalitis मष्तिस्क शोथ ऐस्प्रीन A. P. C. ६ मासा, प्रवाल १ तोला, शृंग भस्म ६ मासा, अकीक भस्म ६ मासा, सब मिला ४।४ रत्ती प्रमाण-मलाई आदि अनुपान से दे :—Heart Disease. हृदय के पूरे प्रभाव पर हर प्रकार के ज्वर विषमें —Rheumatism. आम बात।

(३) Heart Disease हृदय रोगों में—अर्जुन त्वक्, बलामूल, गोक्षुरु समान ले गो दुग्ध से पाक का प्रयोग में लावें धड़कन अधिक हो तो शाल-पर्णी भी डालें।

(४) वृक्क दोष Renal :—विकारे—आरोग्य वर्धनी ४ रत्ती, पुनर्नवा क्षार ४ रत्ती, शरपुंखा क्षार ४ रत्ती ३ मात्रा पुनर्नवाष्टक क्वाथ व पुनर्नवा रस से दें।

(५) आन्त्रिक ज्वर :—Typhoid Fever. इन्दुकला १ गोली, अभ्रक १ रत्ती, प्रवाल १ रत्ती, ज्वरहर १।४ मासा, ३ मात्रा-खूब कला क्वाथ व रससे।

आयुर्वेदाचार्य—

S. P. निर्भीक M. A.-M. S, H.M.I.)

चिकित्साधिकारी राजकीय (आ० यु०) चिकित्सालय नागथात (देहरादून)

(१) रोग प्रदर (LEUCORROHEA)

योग १—प्रदरान्तक लोह २ बटी पुष्यानुग चूर्ण १ मा० प्रवाल पिष्टी ४ र० ३ मात्रा अनुपान—मधु, अंजीर क्वाथ।

२—अशोकारिष्ट आधा तो० पत्रंगासव आधा तोला द्राक्षासव चौ० तोला जल एक तोला २ मात्रा भोजनोपरान्त।

१ शु० स्फटिका ४ र० बंशलोचन पिष्टी ३ र० प्रदरारि रिपु २ बटी अमृतासत्व ४ र० ३ मात्रा अनुपान—धारोष्ण दूध।

२ लोध्रासव आधा तो० सारिवाद्यरिष्ट आधा तो० पत्रांगासव चौथाई तो० जल एक तोला ३ मात्रा

योग १—चन्द्र प्रभा बटी २ व० सितोपलादि चूर्ण आधा मा० प्रवाल पिष्टी ६ र० २ मात्रा प्रातः सायं दूध से।

२ अश्वगंधारिष्ट आधा तो० पत्रांगासव चौ० तो० द्राक्षासव चौ० तो० जल १ तो० ३ वार

अन्य चिकित्सा—यह सम्पूर्ण योग (श्वेत तथा रक्त प्रदर) दोनों में अत्यन्त लाभप्रद है। यदि पूय-मेहज और उपदंशज प्रदर हो तो ऐसी दशा में इनके साथ "चन्दनासव" का भी प्रयोग कर सकते हैं। यदि आधुनिक चिकित्सा के उपलब्ध सूचिका भरण" Pehicillih पेनिसेलीन Seclomycih स्क्लोमाइसिन और "Sioloh" 5 c. c. मात्रा में पेशीगत सूचिका भरण तथा "Calcium-with-iodihe" io C. C. को शिरागत प्रवेश प्रति तीसरे दिवस तक करते रहना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) श्लीपद Filaria

योग १—महायोगराज गुग्गुल २ व० नित्यानन्द रस २ व० प्रवाल पिष्टी ४ र० २ मात्रा अनुपान—दूध घी।

२ महामंजिष्ठाद्यरिष्ट ५ ड्राम पुनर्नवारिष्ट ५ ड्राम जल १ तो० २ मात्रा भोजन के बाद।

३ शुष्कमूलादि तैल—इस तैल को जिस २ स्थान पर शोथ हों वहां पर प्रयोग करना चाहिये।

नोट—मैंने अभी तक १५ रोगियों पर इसका प्रयोग किया जिसमें शत प्रतिशत लाभ हुआ है। उन रोगियों पर प्रयोग किया गया है जो इस रोग की ख्याति प्राप्त औषधि" Hetrazohtab" का प्रयोग कर चुके थे। इस चिकित्सा के साथ में रोगी की रक्त परीक्षा भी करवाते रहना चाहिये, जिससे रोगमुक्ति का पूर्णतया ज्ञान होता रहे। चिकित्सा का पूर्ण लाभ होने के लिये ३ माह का समय ले।

(३) कुक्कुर कास Cwitoopime-Conehii

योग १—लक्ष्मी विलास रस नारदीय २ व० शृंग्यादि चूर्ण ६ र० ४ मात्रा मधु से।

२ दशमूलारिष्ट १० से १५ बूंद जल ५ ड्राम दिन में ८ बार दो।

(४) बालशोष Ricketsi

१—कुक्कुटाण्डत्वक् भस्म ३ र० मुक्ताशुक्ति भस्म २ र० ३ मात्रा अनुपान—मधु शंखपुष्पी रस

२—कुमार कल्याण रस १ व० प्रवाल पिष्टी ३ र० ३ मात्रा मधु से अरविन्दासव ५ ड्राम ४ बार

शरीरपर मालिश करने के लिये चन्दनादि तैल और लाक्षादि तैल मिलाकर लगाना चाहिये। साथ ही यदि अन्य औषधियां देना हो तो—Adeotlihe-Super, Heoccd आदि भी देते हैं।

५ श्वास Astyma

योग १—श्वास कुठार रस २ रत्ती सितोपलादि चूर्ण १ माशा प्रवाल पिष्टी ३ र० २ मात्रा मधु।

२ अर्जुनारिष्ट ४ ड्राम कनकासव २ ड्राम जल ५ ड्राम ३ मात्रा।

नियो-च्यवनप्राश
(विटामिन और कैल्शियम मिश्रित)

कास, श्वास व क्षय नाशक

झण्डू एवं बिड़ला लेबोरेटरीज़

द्वारा प्रस्तुत सभी तरह की दवाओं एवं तैलों व साबुनों के साथ साथ सभी तरह की विलायती दवायें तथा आधुनिक सुन्दर डिजाइन के स्टेशनरी के सामान उचित मूल्य में प्राप्त करने का एक मात्र स्थान।

लखोटिया ट्रेडिंग एजेन्सी

चूरू (राजस्थान)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिंतित क्यों ?

कुछ ही महीनों बाद

भीनी सुगंधयुक्त तथा बालोंको बढ़ाने वाला बिड़ला कटेली चम्पा कैश तैल अपने अनमोल नुस्खे से बालों को मुलायम तथा चमकीले बनाता है।

आज ही एक बड़ी बोतल खरीदें

बिड़ला कटेली चम्पा

केश तैल

बिड़ला लेबोरेटरीज़ · कलकत्ता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकाशक पं० पुत्तूलाल, मथुरिया चार स्ट्रीट द्वारा प्रकाशित तथा जनरल प्रिंटिंग वर्क्स लि०, ८३, पुराना चीनाबाजार स्ट्रीट, कलकत्तामें मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद गौरव

आयुर्वेद का एकमात्र सर्वोत्तम मासिक पत्र

* विश्व पुरुष *

श्रीपति प्रसाद पाठक "श्रीश" पो० बक्सर शाहाबाद

ये महान,
के उदात्त ज्ञान पुञ्ज,
एक सूत्र की व्याख्या नीचे है।
भाव और भाव का विकार शेष,
मानव में जगती के कण कण में।
जग में है वात ताप (सूर्य रूप)
चन्द्र शीत शीकर के आकार से।
मानव में वात, पित्त रूप अग्नि,
कफज शीत शीकर का एक पुञ्ज।
वात, ताप, शीत, दोष कारक,

जग—
मानव में,
दोष नास सार्थक बन जाता है;
तीनों का।
तीनों में पंच महाभूत साथ,
क्षिति, जल, पावक, नभ के साथ पवन
इस प्रकार,
जग में है पुरुष,
और,
पुरुष में समस्त विश्व का
प्रसार।

वार्षिक मूल्य ३)
एक प्रति ।)

सम्पादक—श्री प्रकाशचन्द्र गुप्त M.Sc सह-सम्पादक श्री मदनगोपाल व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

	विषय	लेखकका नाम	पृष्ठ
१	उद्बोधन शतपदी (कविता)—रचयिता-साहित्यायुर्वेदाचार्य पं० श्री महाबीर प्रसाद जोशी		१६१
२	बृक सन्न्यास—श्री हरस्वरूप शर्मा. बी० ए० (ऑनर्स) आयुर्वेदाचार्य	....	१६
३	चरक का भोजन विज्ञान—श्रीपति प्रसाद पाठक "श्रीश"	...	१६५
४	आंत्रिक ज्वर (Typhaid-Fever) – शास्त्री श्री धीरेन्द्र मोहनभट्ट G.A.M.S.A.C.		१६७
५	स्वप्नदोष का निदान और चिकित्सा—वैद्य श्री रघुनन्दन मिश्र आयुर्वेदाचार्य	....	१६८
६	शीतकालीन आहार बिहार—आचार्य श्री नित्यानन्द पिलानी	....	१७१
७	विषूचिका रोगके उपद्रव और उनकी चिकित्सा—श्री चन्द्रभानु शर्मा वैद्य	...	१७३
८	अस्वाभाविक क्षुधा—श्री बसन्त प्रसाद अग्निहोत्री ए० एम० एस०	...	१७५
९	वृश्चिक (बिच्छू) एवं दंशोपचार—पण्डित रामप्रसाद शर्मा वैद्य शास्त्री	....	१७७
१०	"मन्त्रपूत-जल" Magne tizedwater—डा० श्री श्यामदास प्रपन्नाश्रमी आयुर्वेदाचार्य		१७९
११	प्रदर रोग और उसकी सफल चिकित्सा—श्री माधवप्रसाद वैद्य, कलकत्ता	...	१८०
१२	कासनी—श्री दलजीत सिंह वैद्य चुनार यू० पी०	...	१८३
१३	मुलहठी—श्री दामोदर प्रसाद शर्मा "आयुर्वेद भिषक्" "चुरू निवासी"	...	१८५
१४	भारत की सरल चिकित्सा—वैद्यराज पं० परशुराम जोशी	...	१८६
१५	तुलसी का उपयोग—पं० ललिता प्रसाद पांथरी	....	१८७
१६	देवी के आंसुओं से पैदा हुआ फल आंवला—श्री रामेश बेदी	...	१८९
१७	अनुभूत—योग—	....	१९२
१८	साहित्य-समीक्षा	....	
१९	समाचार		

नियो-च्यवनप्राश
(विटामिन और कैल्शियम मिश्रित)

श्वास व क्षय नाशक

झण्डू एवं बिड़ला लेबोरेटरीज़

द्वारा प्रस्तुत सभी तरह की दवाओं एवं तैलों व साबुनों के साथ साथ सभी तरह की विलायती दवायें तथा आधुनिक सुन्दर डिजाइन के स्टेशनरी के सामान उचित मूल्य में प्राप्त करने का एक मात्र स्थान।

लखोटिया ट्रेडिंग एजेन्सी

चूरू (राजस्थान)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ॐ

प्राच्यं प्रतीच्यं यत्किंचिद् आयुर्वेदात्मकं हि तत् ।
तद्गौरवो विजयते, विश्वस्मिन् व्याधिसंकरे ॥ १ ॥

नोट—१-"यदिहास्तितदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्", इति चरक वचनात् ।

आयुर्वेद-गौरव

वर्ष २ | मार्च १९५५ | संख्या ६

उद्बोधन शतपदी

रचयिता—साहित्यायुर्वेदाचार्य पं० श्री महावीरप्रसाद जोशी, काव्यतीर्थ कविरत्न,
प्रधान चिकित्सक श्री मोहता दातव्य औषधालय, साहुलपुर ।

वाणी, वीणापाणी, सहज वाणी में बल दे ।
वरदे, सन्तत परम अनुग्रह उर्वर वर दे ॥
सदा शारदा गुण-विशारदा मति को कर दे ।
सरस्वती भाषा में सुरसवतीपन भर दे ॥
दिव्य-अमरता का सन्देश सुनाने याले ।
सुधा कलश में वसुधा को सरसाने वाले ॥
धन्वन्तरि की चरण-रेणु अभिनन्दनीय है ।
जिसके वल से वैद्यक-विद्या वन्दनीय है ॥
आयुर्वेद-महत्व किसी से गुप्त नहीं है ।
इसके पूर्व प्रभाव की कथा लुप्त नहीं है ॥१०॥
जरासन्ध की सन्धि जराने कर दिखलाई ।
वृद्ध च्यवन ने लोचन और तरुणता पाई ।
साक्षी यों इतिहास बना इसके वैभव का ॥
डंका गूञ्ज उठा दुनियां में गुण गौरव का ॥
किन्तु हुआ जब पराधीन यह भारत प्यारा ।
तव से हुआ निराश्रय आयुर्वेद हमारा ॥
यवन शासकों ने तों कुछ ध्यान दिया था ।
यूनानी के साथ इसे भी मान दिया था ॥

अंगरेजों ने किन्तु मार दी मेख रेख में ।
इसकी जड़ काटी शासन की देख रेख में ॥२०॥
दाग लगाया निर्मल आयुर्वेद-रत्न में ।
भारतीय-संस्कृति उन्मूलन के प्रयत्न में ॥
किन्तु काल ने करवट बदली, पलटा खाया ।
जो स्वतन्त्रता-सौख्य देशको आज दिखाया ॥
हर्ष शोक, सुख दुःख, उदय या अस्त निरन्तर ।
आते रहते स्वयं एक के एक अनन्तर ॥
राष्ट्र पिता गांधी के त्याग-तपस्या बल से ।
राष्ट्रनियन्ताओं के राजनीति-कौशल से ॥
एक सहस्राब्दी के बाद हुआ है निश्चय ।
शुचि स्वातन्त्र्य सहस्र-रश्मिका सुखकर समु[illegible]
आयुर्वेद-सरोज न अब भी किन्तु खि[illegible] हाव[illegible] [illegible]
हन्त ! सूर्य की प्रबल किरण का बल [illegible] मिला [illegible]
क्यों कि जो न होता है अपना स्वयं सहायक [illegible]
ईश्वर भी उसके लिये नहीं सौभाग्य विधायक [illegible]
अतः स्पष्ट है जब कि न [illegible] उद्योग करेंगे ।
राष्ट्र प्रमुख अभिमुख न प्रबल [illegible] धरेंगे ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कौन भला तब स्वयं करेगा ध्यान हमारा।
बिना रुदन क्या स्तन पायेगा शिशु भी प्यारा॥
किन्तु हमें इस झंझट का अवकाश नहीं है।
मन में आयुर्वेद-महत्त्व-प्रकाश नहीं है॥४०॥
एकमात्र है ध्येय स्वार्थ का साधन करना।
किसी तरह से पैसे का आराधन करना॥
उदर भरण के अर्थ रहा पुरुषार्थ हमारा।
पद मर्दित हो चाहे आयुर्वेद बिचारा॥
स्वयं सोचते हैं न भविष्य कभी हम अपना।
क्षण भंगुर है यह सारा सोने का सपना॥
किन्तु समय की माँग न ठुकराई जा सकती।
पद्धति अवनति दशा न विसराई जा सकती॥
सबको हो सङ्गठित यत्न अब करना होगा।
निज विरोधियों से यह मोर्चा लड़ना होगा॥५०॥
किन्तु परस्पर जब प्रबल विरोध हमें है।
एक दूसरे से लेना प्रतिशोध हमें है॥
अनुशासन या सहिष्णुता का नाम नहीं है।
स्नेहशील कार्य परता काम नहीं है॥
सभी चाहते प्रमुख-पदों में ही आ जाना।
सेवा बिना किये ही उसका फल पा जाना॥
यदि सेना में सेनापति सब ही बन जाते।
कौन भला तब सैनिक बनकर लड़ने पाते॥
है महत्त्व सेना में सैनिक का उतना ही।
निज पद्पर खुद सेनापति का है जितना ही॥६०॥
आपस की तूं तूं मैं मैं में समय बितावें।
[illegible] विरोधियों से कैसे मोर्चा लड़ पावें॥
कौन आत्मघाती होगा हमसे बढ़कर।
काट रहे हैं स्वयं मूल जो ऊपर चढ़कर॥
निर्भर जिसके ऊपर आज हमारा जीवन।
[illegible] रूप से [illegible]कुल सिद्धियों का जो साधन॥
वह ही आयु[illegible] चिकित्सा पद्धति प्यारी।
अन्य [illegible]यों से कुचली जाती [illegible]॥

और आप अपनी ही धुन में व्यस्त बने हैं।
धिक धिक है जो बिना नशे के मस्त बने हैं॥७०॥
अब भी जो यह नशा न उतरा तो अनर्थ है।
हम लोगों का यह सारा ही यत्न व्यर्थ है॥
समझ से न जो काम ले सकेंगे तो निश्चित है।
सभी नष्ट होगा जो अब तक भी संचित है॥
बिना समर्थन पद्धति योंही रह जावेगी।
अन्य पैथियों के प्रवाह में बह जावेगी॥
सुश्रुत और चरक का नाम न कहीं मिलेगा।
भाव मिश्र वाग् भट्ट का पता नहीं चलेगा॥
नागार्जुन का नाम भी न जन जान सकेगा।
'धन्वन्तरि थे यहीं' न कोई मान सकेगा॥८०॥
यह कटु सत्य समय ने सम्मुख कर दिखलाया।
प्रबल यत्न आवश्यक है यह स्पष्ट बताया॥
एक सूत्र में अतः सङ्गठित होना होगा।
चिर निद्रा को पूर्ण रूप से खोना होगा॥
जागरूकता सतर्कता अपनानी होगी।
अन्यों की घातक प्रवृत्ति पलटानी होगी॥
प्रबल प्रचार प्रथम ही साधन है समयोचित।
जिसके बल से हो जाता अनुचित भी समुचित॥
इस प्रचार युग में असत्य सत्य बन जाता।
दृढ़ता से जन विरोधियों में आदर पाता॥९०॥
आयुर्वेद समुन्नति ही अतएव ध्येय हो।
सुसङ्गठन हम लोगों का आदिम विधेय हो॥
आवश्यक है इसे राजसत्ता का आश्रय।
बिना मूल के वृक्ष न बढ़ सकता है निश्चय॥
जो कि यत्न करने पर सचमुच ही है सम्भव।
पराक्रमी के लिये न कुछ भी कार्य असंभव॥
आदि देव धन्वन्तरि से है विनय हमारी।
आयुर्वेद विभासित हो यह पृथ्वी सारी॥
हो स्वतन्त्र भारत की यह आदर्श चिकित्सा।
स्वास्थ्य समृद्धि सिद्धि में रहे न कुछ विचिकित्सा॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वृक्क सन्न्यास

लेखक—श्री हरस्वरूप शर्मा, बी०ए० (ओनर्स) आयुर्वेदाचार्य्य, धन्वन्तरि, सम्पादक—आरोग्य-दर्पण

सन्न्यास शब्द से ही स्पष्ट हो जाता है कि इस रोग में वृक्क अपनी क्रिया त्याग देते हैं अर्थात् जिस रोग में वृक्क अपनी क्रियाओं को त्याग दें, उसका नाम वृक्क सन्न्यास है। यह रोग वृक्क के अंतर्तन्तुओं के शोथ के कारण होता है। यह शोथ सान्निपातिक होता है अतः वृक्क सन्न्यास सान्निपातिक रोग स्वाभाविक ही मानना पड़ता है।

वृक्क सन्न्यास क्यों और कैसे होता है यह जानने के लिये प्रथम वृक्क की क्रिया से परिचित होना पड़ेगा। वृक्क रक्त और मेद से निर्मित सेम के बीजाकार के दो भाग हैं जो नाभि के दोनों ओर स्थित रहते हैं। इन अंगों की क्रिया रक्त में से दोषों को छानकर निकालना और उपयोगी द्रव्यों को रक्त में मिश्रित कर शरीर में पुनः प्रविष्ट कराना है।

रक्त खाद्यका सार है। खाद्य प्रकृति भेदसे ३ प्रकार के होता है। १—वातल २—पित्तल ३—श्लेष्मल। वात प्रधान खाद्यके सेवनसे रक्त में वात का प्राधान्य होता है, पित्तल खाद्य के उपभोग से रक्त पित्त प्रधान बनता है और श्लेमल प्रधान अन्न से रक्त भी श्लेष्म दोष प्रधान बनता है। यह रक्त शरीर के अणु २ का पोषण करता हुआ उन स्थानों या अंगोंसे दूषित द्रव्यों को ग्रहण करता हुआ अपने पूर्ण परिभ्रमण काल में वृक्कों में दोष नाश के लिये प्रवेश करता है। ये वृक्क अनेक सूक्ष्म, सूक्ष्मतर और सूक्ष्मतम कोषों तन्तुओं, कुप्पियों, प्रकुप्पियों, नलिकाओं, नलिकावाहिनियों से निर्मित होते हैं। जब रक्त इनमें प्रवेश करता है तो ये इस रक्त को अपनी कुप्पियों द्वारा छानते हैं और जो द्रव्य अनुपयोगी या मल रूप होता है उसे मूत्र रूप में मूत्र नलिकाओं द्वारा मूत्राशय में पहुंचा देते हैं और रक्त को उसके पोषण द्रव्यों से पुनः संयुक्त कर शरीर भ्रमणार्थ फिर चक्र में प्रविष्ट करा देते हैं।

यह पहिले ही कहा जा चुका है कि खाद्यके सारों को लेकर रक्तका संवर्द्धन होता है, यदि खाद्य के ये सार दूषित होते हैं या अधिक काल तक अजीर्ण रहने के पश्चात् अथवा केवल कफ प्रधान उत्कट शीत, क्षारीय कटुतिक्त, कषाय और मधुर द्रव्यों का सेवन किया जाता है तो उन्ही गुणोंयुक्त खाद्य का सार अर्थात् इन इन दोषों वाला खाद्यका सार रक्त में प्रविष्ट होता है। ऐसे दूषित द्रव्यों वाला रक्त अपने साथ में जिन दोषों को वहन करता है वे यदि वृक्क के निर्माण के समान होते हैं अर्थात् कफ और पित्त प्रधान होते हैं और मूत्र के साथ सरलतया छनकर बाहर नहीं होते तो वे वृक्क के आंतरिक भागों में धीरे २ स्थायित्व प्राप्त करने लगते हैं। वृक्क अनेक सूक्ष्म यन्त्रों से खचित है। वृक्क में वाह्य द्रव्यों के प्रविष्ट होने से वृक्क के सूक्ष्म यन्त्र अपनी क्रिया सुचारुरूपसे नहीं कर पाते और क्योंकि दोषों का पहले से ही यहां संग्रह होता है अतः वृक्क के इन सूक्ष्म यन्त्रों में शोथ उत्पन्न हो जाता है। यह शोथ अधिकतर श्लेष्म प्रधान होता है और यह रोग सान्निपातिक होता है।

वृक्क के किसी एक अन्तर्तन्तु में शोथ होनेसे वृक्क फिर सदोष हो जाती है और रक्त द्वारा लाए हुए दोषों को वहिर्स्राव नहीं होता और न शोथ [illegible] होता [illegible] रक्त के इन दोषों को अपने अन्दर स्थान प्रदान करता है। परिस्थिति यह होती है कि दोष सहित सम्पूर्ण रक्त शिराओं द्वारा हृदय की ओर प्रयाण करता है और यहां (हृदय में) पहुंचकर हृदय की क्रिया में विकृति उत्पन्न करता है जिससे रक्तचाप की वृद्धि हो जाती है। पूर्ण-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा शुद्ध न होने के कारण एवं पुनः शरीर चक्र में भ्रमण करने के कारण यह सदोष रक्त यत्र तत्र विकृतियां को जन्म देता है और क्योंकि यह रक्त श्लेष्म प्रधान होता है अतः श्लेष्मकला प्रधान अवयवों पर इसका प्रभाव शीघ्र पड़ता है। यही कारण है कि वृक्क के इस विकार में मुख पर सर्व प्रथम शोथ उत्पन्न होता है।

वृक्कों की क्रिया आंशिक या सम्पूर्णतया बन्द होने पर रक्त का परिशोधन मन्द या बन्द हो जाता है इससे इस रोग में मूत्र बहुत ही कम मात्रा में आता है और जो दुष्ट द्रव्य मूत्र द्वारा बाहर नहीं निकल पाते वे रक्त द्वारा शरीरमें भ्रमण करते रहते हैं तथा शरीरके प्रत्येक स्थान में शोथ उत्पन्न करते हैं। यही कारण है कि इस रोग में सर्वाङ्ग शोथ होता है। अधिकतर श्लेष्मकलाए शोथयुक्त हो जाती हैं, संयुक्त शिरा अन्न द्वारा उत्पन्न हुए रस को दोषों से बचा नहीं सकतीं अतः या तो ये रस अन्त्र और उदरच्छदा कला में व्याप्त हो जाते हैं या दुष्ट शोषण से अंत्र और उदरच्छदा कला जड़ होकर जलीयांशयुक्त और आध्मानयुक्त हो जाती है।

वृक्क सन्न्यासका रोगी सर्वाङ्ग शोथ के कारण भीमकाय दीखने लगता है। इस रोगीके उदर, हृदय, मुख, चक्षु, यकृत्, प्लीहा और उदर अन्य ग्रन्थियां न्यूयाधिक मात्रामें विकृत हो जाती हैं। वह अधिकतर कोष्ठबद्धतासे पीड़ित रहता है और मूत्र तो बहुत ही [illegible] मात्रामें या बिल्कुल ही नही होता। शोथके कारण [illegible] रक्तहीन सफेद दीखने लगता है, पेट भारी और [illegible]रा हुआ लगता है।

चिकित्सा

वृक्क सन्यासमें मूत्र पिण्डों (वृक्कों) को जितना ही अधिक सक्रिय किया जा सके उतना ही यह रोग नष्ट होता है। ऐसे रोगीको शीतसे बचाकर रखना चाहिए, मादक द्रव्योंका सम्पूर्ण निषेध करना चाहिये और आहारमें अन्य कुछ न देकर दूध देना चाहिये। जौका पानी, वरुणाका क्वाथ, पुनर्नवा क्वाथ, आदि मूत्रल द्रव्योंका प्रचुर मात्रामें सेवन कराना चाहिए।

औषधोंमें ऐसे रोगोको पुनर्नवासव, पुनर्नवादि मण्डूर, चन्द्रप्रभा, वरुणादि, शिलाजीत और स्वर्ण भस्म, अभ्रक भस्म, तथा लौह भस्मके सूक्ष्मतर, प्रमाण के मिश्रण को वरुणादि क्वाथमें मिश्रित कर दिनमें ३-४ बार पिलाना चाहिए। स्वर्ण, अभ्रक, और लौह भस्मों का मिश्रण $\frac{1}{2}$, $\frac{1}{3}$ और $\frac{1}{3}$ के अनुपातसे मिश्रित कर वरुणादि क्वाथके साथ मिश्रित कर अनेक बार प्रयोग में लाया जाता है और यह सर्वदा ही उत्तम और अचूक औषध सिद्ध हुआ है। स्थानिक शोथके लिए शुष्कमूलादि तैलका मर्दन और मकोयके रसका प्रलेप लाभकारी सिद्ध होते हैं। उपरोक्त औषधों के दीर्घकालके प्रयोगसे यह रोग धीरे धीरे मिटता जाता है। जितना ही अधिक मूत्रस्राव होगा उतना ही शोथ कम होगा। जब सर्वांग शोथ नष्ट हो जाय और वृक्क सक्रिय हो जाय तब रक्त वर्द्धक और वृक्क पोषक चिकित्सा प्रारम्भ करनी चाहिए। मण्डूर भस्म, मधु मण्डूर भस्म, त्रिफला लौह ओषधों को रक्तवर्द्धनके लिए सेवन करावें। इस रोगीको शिलाजीत या शिलाजीतके अन्य निर्माण सतत वर्षों तक प्रयोग करावें।

एक बार जिसे यह रोग हुआ हो उसे सर्वदा आहार बिहारमें सावधानी रखनी चाहिए। साधारण विकारसे वृक्क पुनः दूषित हो सकते हैं और इस रोगका अनेक बार पुनरावर्तन भी हो सकता है अतः सर्वदा ऐसे रोगियोंकी सावधानी रखनी आवश्यक है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चरक का भोजन विज्ञान

श्रीपति प्रसाद पाठक 'श्रीश" आयुर्वेदाचार्य श्रीकालिकेश्वर कार्यालय, बक्सर-(शाहाबाद)

आजका जन स्वास्थ्य अपनी उन्नति क्रमके दौड़ान में इतना आगे बढ़ गया है कि हम केवल शास्त्र और स्मरणके रूपमें उसका दर्शन कर पाते हैं। हम अन्य सभ्यताके चाक-चक्यमें अपने शाश्वत जीवन शास्त्र के आदर्श वाक्यों और मूल मन्त्रोंका तिरस्कार कर अपने अमूल्य स्वास्थ्य को बहुत पीछे छोड़ आए हैं। चेतना विवेक धैर्य एवं स्मृतिपर अधिकार जमाकर बलपूर्वक अपने आचार विचारका क्रम डालकर उन आक्रमणकारियोंने हम में और हमारे वायु मण्डल में कृत्रिम आवरणमें चढ़ानेमें सफलता प्राप्त की है।

यही कारण है कि हम आज उनकी देनको आचार विचारको उनके अपूर्ण चिकित्सा विज्ञानको, "यस्य देशस्य यो जन्तुः तज्जं तस्यौषधं हितम्" जैसे अमर सूत्र का अतिक्रमण कर अपने नित्यके व्यवहारका रूप दे रखा है, और पा रहे हैं उससे क्षयः TB जैसे भयंकर रोग समूहों को। यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय तो हमारी उपयोगी सामाजिक शृंखलामें क्षयका विकार हो गया है और स्मृति, का क्रम है इस क्षयका फलतः समाजके किसी भी अङ्ग की वृद्धि रुक सी गई है और यह सब प्रकार अदूर दर्शिताकी देन हीं तो है, नहीं तो आज भी हमारी सरकार यक्ष्मा जैसे रोग राजका प्रतिकार बी० सी० जी, मेक्सीन, जैसे निकम्मे शस्त्रों द्वारा करनेका दुःसाहस कभी नहीं करती। तब तो वह प्रकृति, देश काल निदान, वय आदि का सम्यक् परीक्षण कर आयुर्वेदके अमूल्य प्रयोग निदान परिवर्जनम्, का व्यवहार अल्पमूल्यमें कर सर्वदाके लिए यक्ष्माका निर्मूलन कर देशको किसी भी रोगोंके आक्रमणका सामना करने योग्य बना देती। सम्प्रति इस समयका निदान परिवर्जन मात्रानुसार पौष्टिक आहार, विहार और विचार ही हैं। नीचे लिखे विचारोंको देखने एवं तदनुकूल व्यवहार करनेसे हम आजके चलते रोगोंके आक्रमणसे त्राण पा सकेंगे। भगवान पुनर्नवसु आत्रेयने आपके भोजन विज्ञान पर वैज्ञानिक विवेचना करके यह सिद्ध कर दिया है कि यदि अपने जीवनको सुदृढ़ और चिरकालीन बनाना है तो सबसे पहले हमें अपने आहार विज्ञान पर ध्यान देना परमावश्यक होगा।

उष्ण भोजन करो :—

आचार्य पुनर्वसु कहते हैं :—

क्योंकि उष्ण भोजन करनेसे भोजनका वास्तविक स्वाद मिलता है, भोजनके बाद अग्नि सबल होती एवं किए गए भोजनका पाक शीघ्र हो जाता है। वायु आदि दोषोंका अनुलोमन होता और भोजनोत्तर बढ़े कफका शोषण करता है उष्ण-भोजन। फल यह होता है कि हमारे शरीरमें रस रक्तादि सप्त धातुओंकी वृद्धि अभिष्ट मात्रा में होती है। अतः सर्वदा उष्ण भोजन करना चाहिए।

स्निग्ध भोजन करो :—

स्निग्ध भोजन रुचिकारक है और उदरस्थित अग्निको (घृतमग्निमेधे करोति के अनुसार) बढ़ा देता है, फल यह होता है कि भोज्य पदार्थ शीघ्र पचकर दोषोंका अनुलोमन करते हुए शरीरस्थ सम्पूर्ण इन्द्रियों को दृढ़ बनाता है। और बल, वर्ण, [illegible] होता है, इसके प्रदान कर दीर्घ जीवन प्रदान करता है। अतः [illegible] जनों में स्निग्ध भोजन करो।

मात्रानुसार भोजन करो :—

मात्रानुसार भोजन करनेसे वात, कफ, पित्त विना प्रकुपित हुए भोजन पदार्थ [illegible] पचकर मल,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूत्रके, रूपमें शरीरसे गुदमार्ग द्वारा बाहर निकल जाते हैं अतएव अग्नि क्षीण नहीं होती, और शरीरस्थ अवयवों की शक्ति अव्यर्थ परिपाकमें न होकर सबल सक्षम बने रहते हुए शरीरको रोग रूपी शत्रुसे सर्वदा रक्षा किए रहती है। अतएव सर्वदा मात्रानुरूप ही भोजन श्रेयस्कर होता है।

प्रथम भोजन पच जाने के बाद दूसरा भोजन करो :—

क्योंकि अजीर्णमें किया गया भोजन पहले किए गए आहारका सम्यक् रूपसे परिपाक नहीं होने देता और स्वयं भी अर्धपक्वावस्थामें शरीरके दोष धातुओं को दूषितकर विसूचिका (हैजा) अलसक, बिलम्बिका (हैजेका भेद) का कारण बन जाता है। वही जीर्ण आहारके बाद दोष अपने प्रकृतावस्थामें हो जाते हैं— फलतः अग्नि स्वयं प्रबृद्ध हो क्षुधाको बलवती बना उद्गार और हृदय को शुद्ध करते हुए वायुकी गतिका अनुलोमन करती है। वात, मूत्र, मलका वेग निकल जानेके बाद शरीर पुनः आहार ग्रहण करनेमें सक्षम हो जाता है। और तब भोजन करनेसे बिना आयास शरीरके यन्त्रोंको अविकृत किए बिना भोज्य पदार्थ पचकर आयुबर्द्धक होता एवं शरीरके रस रक्तादि धातुओंकी वृद्धिका कारण होता है, अतएव प्रथम भोजन पचने पर ही भोजन करना लाभप्रद है।

वीर्य विरूद्ध द्रव्योंका भोजन मत करो :—

[illegible]योंकि विरूद्ध द्रव्य और वीर्यवाले पदार्थोंका भोजन [illegible]सका [illegible]र मनपर अविघातकर प्रभाव उत्पन्न करता अ[illegible] अनूपदेशका मांस दूधके साथ कदली फल तक्र, श्रीफल, बने हुए भोजन और कषायको पुनः गर्मकर सेवन परस्पर विरूद्ध कहे जाते हैं) अतः इनका ध्यान रखते हुए भोजन करना चाहिए अन्यथा शरीरमें प्रकृति के स्थानमें विकृतिका निवास हो जाता है।

देशकाल और भोज्य पदार्थोंके मनोनुकूल रहने पर भोजन करो :—

क्योंकि मनोनुकूल प्रदेशमें किया भोजन अपने अनुकूल गुणोंको यथा समय प्रकट करता है, और इसके विपरीत भोजन विपरीत गुण कारक होता है। यही बात भोज्य पदार्थों के बिषयमें होती है। इसका प्रभाव सम्पूर्ण इन्द्रियों पर पड़ता है, क्योंकि इन्द्रियोंको विशेष रूपसे संचालित करनेका कार्य मन करता है।

अति शीघ्र भोजन नहीं करना चाहिए :—

क्योंकि शीघ्र भोजन करनेमें किए गए भोजनमें समुचित मात्रामें चर्वण नहीं हो पाता और न उसमें पर्याप्त मात्रामें अम्लरसका मिश्रण ही हो पाता है फलतः पचन कियामें विकृति आ हीं जाती है और अन्नका रस यथावत् नहीं बनता और उसका प्रभाव शरीरके लिये ह्रासकर ही होता है। अतएव शीघ्र भोजन करना स्वास्थ्यके लिये हितकर नहीं।

देरसे भोजन करना भी श्रेयस्कर नहीं :—

देरसे भोजन करनेसे तृप्ति नहीं होती अतएव मात्रा का उलंघन होता है और विपाक विषम हो जाता है, फल भी इसका विषम होता है जो शरीरके लिए उत्तम नहीं कहा जा सकता।

बिना बोले और हंसे उस भोज्य पदार्थों में तन्मय होकर भोजन करें :—

बोलते हंसते एवं अन्यमनस्क होते हुए भोजन करने से, शीघ्र भोजन करनेसे होनेवाले प्रायः सभी विकार हो जाते हैं और सम्भवतः भोजन करते समय ही अन्न नलिकाके स्थानमें भोजन पदार्थ दूसरी प्रणालियोंमें प्रवेश कर भयंकर विकारका जनक हो जाता है अतएव उपरोक्त बातों पर ध्यान देते हुए भोजन करना अत्यावश्यक है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी प्रकृतिका निरीक्षण करते हुए भोजन करना चाहिए :—

कौन पदार्थ हमारे लिए हितकर और कौन हमारी प्रकृतिके विपरीत होगा किसका व्यवहार स्वास्थ्यप्रद एवं कौन रोगकर होगा का विचार एक आवश्यक अंग माना गया है लोकोक्ति यह है किसीका बैगन बैरी किसीका पथ्य यह सोलहो आने सत्य है।

इस प्रकार रस, द्रव्य, दोष, विकार और प्रभाव को सम्यक् प्रकारसे जानते और उसका यथार्थतः सम्यक् योग करते हुए जो मनुष्य भोजन करता है वह देश कालज रोगोंके प्रभावमें न आकर स्वस्थ शरीर धारण करता है।

———

आंत्रिक ज्वर (Typhaid-Fever)

लेखक—शास्त्री श्री धीरेन्द्र मोहनभट्ट G,A,M,S, A,C,

प्रधान चिकित्सक-राजकीय आ० चिकित्सालय बतौली, सरगुजा (म० प्र०)

(प्रस्तुत लेखकमें शीर्षक का आधुनिक विकृति विज्ञान का कारण ही स्पष्ट किया जायेगा—लेखक)

यह बैसिलस टायफोसस (Bacillus Typhosus) नामक जीवाणुके उपसर्ग से होनेवाला एक तरह का ज्वर है, जिस ज्वरमें प्लीहावृद्धि, आंतमें व्रण, उदर पर गुलाबी रंगके दाने पतले दस्त, आदि लक्षण होते हैं। वाहकोंके द्वारा इसका प्रसार होता है और उस वाहकके स्वस्थ होते हुए भी उसके पिताशयमें कीटाणु आश्रय लेते हैं और मलके साथ बराबर अनेक वर्षोंतक वाहर निकलते रहते हैं। इसके दूषित होनेके कारण अंगुली आदिके संसर्गसे पेय एवं खाद्य पदार्थ भी दूषित होते हैं। मक्खी एवं दूषित धूल कण भी रोग के प्रसार एवं प्रचार में सहायक होते हैं। इसके कीटाणु डिग्री तापपर भी जीवित रहते हैं। अतः परीक्षण के द्वारा यह पता चला है कि दूषित दूधसे बना हुआ आइस्फ्रीम भी प्रसार का मुख्य कारण है।

साधारणतया इस रोगकी अवधि तीन से चार सप्ताह तक की होती है जिस अवधि में ज्वर क्रमशः चढ़ता और उतरता रहता है।

कारण—दूषित खाद्य पेय पदार्थोंके संसर्ग के कारण कीटाणु क्षुद्रांत्रमें पहुंच जाता है। यहां पर आमाशयिक अम्ल का इन कीटाणुओंके ऊपर घातक प्रभाव पड़ता है। रोग के कारण या अधिक जल पीनेके वजह से अम्लकी तीव्रता कम हो जाती है। इस अवधि में कीटाणु आमाशयसे बचकर क्षुद्रान्त्रमें पहुंचता है और पित्त युक्त आमाशयके क्षारीय पदार्थोंमें इन कीटाणुओं की वृद्धि होती है और पेयर की लसीका ग्रन्थियों के द्वारा प्लीहामें पहुंचता है; जहां इसकी वृद्धि होती है प्लीहा से रसायनियों और रसप्रभा से माध्यम बनाकर रक्त में पहुंचकर समस्त शरीर में फैलता है—ज्वर के तृतीय सप्ताह के आदि में और द्वितीय सप्ताह के मध्य में मूत्र में मिलता है। द्वितीय सप्ताह में यह यकृत में पहुंच कर यकृत से पित्ताशयमें और पित्ताशय से आंत में आता है। अधिकतर कीटाणुओं का नाश रक्त प्रवाह के समय हो जाता है जिसका कारण विष स्वतन्त्र होकर लक्षण पैदा करता है।

इसका हेर-फेर पेयर की ग्रन्थियोंमें होता है, इसके अतिरिक्त यह भी देखा गया है कि अधिकांश जनों में यह विकृति क्षुद्रान्त्र के तृतीय भागके नीचे और [illegible] के आदि भाग में होती है।

अंत्र सम्बन्धी विकृतिकी अवस्थायें—

(क) पेयर के क्षेत्र में रक्त संचय तथा सेलापरण के कारण व्रण शोथ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(ख) अपूर्ण रक्त प्रवाह तथा कीटाणु विषके कारण धातुओं की निर्जीविता जो आंत्र की पेशी स्तर तक ही सीमित रहती है। किन्तु यदा-कदा उदरावरण तक भी पहुंच जाती है।

(ग) इस अवधि में दूषित धातु अलग होने लगते हैं और व्रण बन जाते हैं।

(घ) इस कालमें रोहण का कार्य आरम्भ होता है और तृतीय सप्ताह के अन्त तक गला भाग अलग हो जाता है और रोहण कार्य आरम्भ होता है।

सुविधा की दृष्टिकोण से उपरोक्त चारो अवस्थाओं का नाम क्रमशः Swellinb, Saloubhinb, Sepa rotinb और Scarrinb रखा गया है जिनमें सभी शब्द अंग्रेजी के S अक्षर से आरम्भ होते हैं और प्रत्येक की अवधि प्रायः एक सप्ताह की होती है।

अंत्र सम्बन्धी विकृति के अतिरिक्त और भी विकृतियां इस रोग में पायी जाती है। यथा प्लीहावृद्धि, यकृतवृद्धि, पित्ताशयका व्रणशोथ, अन्त्रनिवन्धनी ग्रन्थियों का शोथ, श्वास मार्ग में व्रण शोथ, रक्त के लालकरण एवं रंजक करण आदि का ह्रास।

निम्नलिखित अवधि में निम्नलिखित वस्तुओं में रोगी के जीवाणु प्राप्त होते पाया गया है। यथा—

१. प्रथम सप्ताह—रक्त
२. द्वितीय सप्ताह—पुरीष
३. प्रथम सप्ताह के अन्त में—मूत्र
४ — राजिकायें
५. — निष्ठ्यूथ (Sputaum)

(लेखके सहायक अङ्ग पेथौलौजी डा० बनर्जी और प्रोफेसर मिश्रा की नोट)

स्वप्नदोष का निदान और चिकित्सा

लेखक—वैद्य रघुनन्दन मिश्र आयुर्वेदाचार्य, जय श्री, अपर बाजार, रांची

आज के लोग और पाश्चात्य चिकित्सकों से सुनता हूं कि स्वप्नदोष कोई रोग नहीं है, और उनके देखादेखी पूर्वीय चिकित्सक भी कहने लगे हैं, ति स्वप्नदोष कोई रोग नहीं है, खास कर जब महीना पन्द्रह रोज में हो तो उसकी चिकित्सा ही नहीं करनी चाहिये बताइये यह कैसी गलत धारणा है। अगर मनुष्य शारीरिक और मानसिक बृत्तियो से स्वस्थ है तो वर्ष तो कम है जीवन में एकबार भी स्वप्नदोष नहीं होना चाहिये। क्योंकि मानसिक विकार ही भौतिक यन्त्रों को उत्क्लेशित करके वीर्य को बाहर कर देता है और मानव दिन दिन सूखते जाता है। अतः स्वप्नदोष एवं भयंकर मधुर रोग है जिसे स्वयं रोगी और चिकित्सक दोनों उपहास समझते हैं एवं उसकी उपेक्षा भी करते हैं। इसीलिये चिकित्सक को स्वप्नदोष जैसे भयंकर रोग से बीमार को त्राण दिलाना ही कर्त्तव्य है, अन्यथा जीवन स्नेह तो चूकता जाता ही है जो पीछे मन्द वायु के झोकेसे बुझ जाता है।

कारण स्पष्ट यह है कि, इस रोग से पीड़ित आज स्वतन्त्र भारत के नौजवान ही है जिनके कन्धे पर राष्ट्र ऐसा पवित्र उद्देश्य रखा है, सुन्दता से ढोने के लिये और उनका जीवन मक्खियों की तरह भीन भीना रहा है, यह बात नहीं की विदेश में यह रोग नहीं पर मेरा दावा तो यह है यहां की अपेक्षा नब्बे प्रतिशत कम ही हैं। क्योंकि उनके सामने ध्येय है हमारे युवकों के सामने सौन्दर्य प्रसाधन और सिनेमा ही वास्तविक ध्येय है। तो उनमें और हम में बराबरी कैसे हो सकती है। साथ ही इस रोगसे बीमार भी हुए तो चिकित्सक यह कह कर टाल देते हैं कि जवानी में स्वप्नदोष होना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वाभाविक है। विचारा रोगी स्वतन्त्र हो जाता है। अतः स्वप्नदोष मानसिक अस्वस्थता एवं मानसिक विकार की प्रतिक्रिया ही है जो जवानी में बुढ़ापा अनुभव मनुष्य को करा देता है। इससे स्त्रियां वंचित नहीं हैं खास कर कुमारी युवतियों को तो युवकों सा ही यह रोग उनमें घर कर गया है। पर उन पर युवकों के तरह शीघ्रही असर नहीं होता कारण प्रकृति की बनावट ही उनकी इस प्रकार है। जन्मजात बच्चों से लेकर जवान बूढ़े सभी नित्य प्रति सिनेमा देखते है। अश्लील उपन्यास पढ़ते हैं। और अश्लील भावनाओं के पंजे में जकड़ते जाते हैं और उसमें अनुकूल ही आहार विहार स्वाभाविक और अप्राकृतिक करते रहते है जिससे मानसिक उत्तेजना बढ़कर शरीर (यन्त्रों) को उत्क्लेशित कर अपनी स्थिति स्थापन शक्ति खोता जाता है। परिणामतः मनुष्य, नपुंसक यक्ष्मी गठिया पीड़ित, मूत्रकृच्छ्र, उपदंश, सूजाक, ग्रहणी, अतिसार, अजीर्ण, अम्लपित्त और अनेक औपसर्गिक व्याधिग्रस्त हो जाता, तो सोचना यह है कि क्या यह रोग नहीं है, जवानी के स्वाभाविक गुण है। नहीं ऐसा कहना जीवन को खतरे में डालना है। यों तों चिकित्सकों की डायरी अनेक रोगों की कहानी, अजीब अजीब ढंग से भरी पड़ी रहती है, जो उनमें कोई कोई विशेष स्थान रहता है। इस रोग सम्बन्धित विवरण यह है। एक पति पत्नी चिकित्सा के लिये साथ आये। उम्र २०-२५ लगभग होगी, तृष्णा की शान्ति नहीं, यह शिकायत दोनों की थी, तीन साल से वे बीमार थे, पहले गांव के रहने वाले थे अपने काम से सदर में व्यापार करना पड़ा और पड़ोसियों के सहारे सिनेमा देखने लगे, हिसाब बढ़ता गया अब दोनों साथ जाने लगे, मस्तिष्क वासना के तरफ जोर लगाने लगा, वे बढ़ती गई, स्वप्न में सिनेमा ही चलता है, अभिनेत्रियां ही आती हैं, उसको स्त्री को अभिनेता ही सूझता। वह अपने पुरुष को अभिनेता सा बराबर देखना चाहती है और डूब जाना चाहती हैं। पुरुष भी अभिनेत्री के तरह देखना चाहता है और उसकी तरह प्यार भी करता है। जीवन इसी तरह दोनों का चलने लगा वासना से शान्ति न मिलने के कारण, व्यापार कार्य में अलग रहने से अन्तर पड़ने लगा, तो शान्ति के लिये हस्तमैथुन की आदत हो गयी जो कुछ रोज तक चलता रहा, अब रतिक्रिया में दोनों को तकलीफ होती है। पर इच्छा रुकती नहीं, स्वप्नदोष लगातार नित्य होता है, कभी कभी दोबारा, खाली समय उपन्यास से कटता है, दोनों के रात कुछ घण्टे सिनेमा में, नीन्द की कमी हो गयी है, शिर दर्द हमेशा रहने लगा है। श्वेत प्रदर से वह पीड़िता है और लालास्राव में अब उनकी इच्छा है कि रोग भी ठीक हो जाय और उन क्रमों में बाधा न पड़े, इस तरह की औषधि और चिकित्सक की आवश्यकता है। उत्तर स्पष्ट था मानसिक भावनाओं को कुचलना एवं सौंदर्य प्रसाधनकी वस्तुओं पर लात मारना होगा तभी जीवन सुखकर होगा और औषधि एवं चिकित्सक तभी मिलेंगे और सहायता देंगे। उन्होंने जवाब दिया, उसके बिना। (वासना, सिनेमा, सौंदर्य प्रसाधन बिना) हम रह नहीं सकते जीवन सूना सूना लगता है उत्तर स्पष्ट था न तो ऐसा चिकित्सक है और न ऐसी औषधि, पर आपको मदद मिलेगी, वे खुश होकर चले गये कि दूसरे समय औषधि लेने आऊंगा, अभी सिनेमा जा रहा हूं। समय शाम के ५॥ बज रहे थे। मैं देखता ही रहा उनको और उनका भविष्य।

इसलिये कहना ही पड़ेगा कि मानसिक वृत्ति में का ह्रास और अनैतिकता ही स्वप्नदोष का कारण है और उन कारणों को छोड़ना ही स्वप्नदोष से त्राण होना है अन्यथा स्वप्नदोष से बहुत रोगों की उत्पति होती है। जिससे जीवन खतरे में पड़ जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वप्नदोष होने का समय ठीक बारह बजे के बाद और दिनमें सोने से अथवा पेशाव लगा हो आलस्य बश नहीं उठने से उसी समय में स्वप्न द्वारा वीर्य स्खलन हो जाता है। स्वप्नदोष के रोगियों की अवस्था लक्षण के साथ इस प्रकार हो जाती है।

अजीर्ण, मन्दाग्नि, ग्रहणी, अतिसार, यक्ष्मा, सामान्यतया, बहुमूत्र, मूत्राघात, रुक रुक कर पेशाब आना, पेशाब में वीर्य का आना लालास्राव, कमर, पीठ, छाती पार्श्व, शिर घुटना, जांघ और इन्द्रिय (लिंग) में दर्द होना, हाथ पैरोंमें जलन, दुबलापन, पेटका फूलना, गठिया, आमवात, श्वेतप्रदर, योनिरोग, सूजाक उपदंश, मुख से दुर्गन्धी बराबर सर्दी और भयंकर नपुंसकता वस्ति ग्रन्थि (प्रोस्टेड ग्लेन्डस की वृद्धि। की वृद्धि, और स्वप्नदोष पराकाष्ठा पर पहुंच कर इससे मृत्यु तक हो जाती है। स्वप्नदोषी अकेले में रहना चाहता है। इससे हस्त मैथुन की आदत भी लग जाती है, जिससे उसे क्षणिक शान्ति मिलती है। भीड़, सभा, में जाना पसन्द नहीं करता, सामने आँखे मिलाकर बाते नहीं कर सकता, हर हमेशे अपने को छोटा समझता है। कभी कभी जीवन भार सा मालूम होता है, इसकी प्रति क्रिया में स्वप्नदोषी को आत्महत्या करते भी देखा गया है। वृक्क ग्रन्थियों को अधिक काम करना पड़ता है अतः ज्यादा पेशाब होता है। इस तरह का उनका जीवन असुख कर अप्रीति कर और कष्टमय हो जाता है। अतः जीवन के लिये अनुकूल वस्तुओं को अपना कर और प्रतिकूल वस्तुओंको सदा त्यागना ही उत्तम है।

त्याज्य वस्तुओं में 'सिनेमा उपन्यास, अश्लील विचार धारायें, उत्तेजक पदार्थ, दिन का सोना, सूर्य उगने तक सोना, चटपटी चीजों का सेवन, वेगों को रोकना, कड़वी, नीम, उत्तेजक, शोधक औषधियों का सेवन मना है—

परिश्रम, हलके भोजन, सायं प्रातः घूमना, आध्यात्म अध्ययन, धार्मिक कहानियाँ पढ़ना, शीतल जलसे स्नान, मनोवृत्तिका हमेशा साफ रखना समयानुसार सोकर उठना, प्राणायाम, पत्तिशाक का सेवन, रोग होनेवाले कारणोंका त्याग, व्यायाम, और सोते समय आँख, पैर, शिर को शीतलजलसे पोछकर सोना आदि नियम ही इस रोग को हटाने में सहायक है। सीधे दवाइयां मनुष्यको पथ्य नियम के बिना कुछ नहीं कर सकतीं—

इन तथ्योंको ध्यान में रखकर निम्न प्रकार से चिकित्सा करनी चाहिये स्वप्नदोष वाले रोगीको भौतिक चिकित्सा से मानसिक चिकित्सा उत्तम हैं, इस विधि को रोगी के अनुकूल चिकित्सा को बना लेना चाहिये। उसके साथ ही औषधियों को विधानवत प्रयोग कराना चाहिये।

(१)

अशगन्ध, विधारा, शतावर, नया नीम, दरियाई मखाना, इसफगोल, कवाव चीनी, प्रत्येक १-१ तोला।

त्रिफला ३ तोला।

विधिः—सभी औषधियोंको चूर्ण करके कपड़े से छानकर शीशी में रखके और प्रातः सायं शीतल जलसे तीन तीन माशाकी मात्रा सेवन करें सभी तरहके स्वप्न दोष नष्ट हो जाते हैं और मनुष्य बलवान हो जाता है।

(२)

कवावचीनी, अशगन्ध, शिलाजीत, बंग भस्म अनन्त मूल, बंशलोचन, आँवला समभाग।

विधि—सभी औषधियों का कपड़छान चूर्ण करके वंगभस्म को अच्छी तरह मिला कर १॥ १॥ माशा की खुराक एक दिनमें तीन बार मधुसे खाना चाहिये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुणः—सभी तरहके प्रमेह, मूत्र विकार श्वेत प्रदर योनिरोग, और स्वप्नदोष जन्य विकार नष्ट हो जाता है।

(३)

चोपचीनी कवावचीनी आंवला सम भाग का कपड़छान चूर्ण करके प्रातः सायं जल से सेवन करने से सब तरह के प्रमेह, स्वप्नदोष अच्छे हो जाते हैं—

स्वप्नदोष के रोगी को दूध, तैल, घी, नहीं खाना चाहिये, क्योंकि इससे वीर्य बढ़कर बाहर निकल जाता है, और शरीर के यान्त्रों में विकृति आ जाने से स्मरण शक्तियां नष्ट हो जाती है। स्वप्नदोषी को प्रायः दोनों करवटों के सहारे ही सोना चाहिये, चित्त सोने (सामने सोने) से वृक्क, वस्ति अस्वस्थ होने के कारण स्वप्न-दोष होने में सहारा मिलता है—इसके साथ ही संयम और नियम यह सबसे उत्तम चिकित्सा है एवं स्त्रियों के प्रति सुन्दर धारणा रखना ही कल्याणकर पथ है। अतः अपने भविष्य को देखकर स्वयं अपने रोग का प्रतिकार करना ही महानता है और देश की एवं अपनी उन्नति है और युवतियों को भी इसी प्रकार का नियम पालन करना चाहिये।

शीतकालीन आहार बिहार

लेखक—आचार्य नित्यानन्द पिलानी (राजस्थान)

प्रत्येक ऋतु में जलवायु बदलती है, अतः हमको उसी ऋतु के अनुसार अपने आहार विहार में परि-वर्तन करना जरूरी है। इनमें से कुछ परिवर्तन तो प्रकृति की कृपा से अपने आप हो जाते हैं तथा कुछ की ओर हमें ध्यान देना पड़ता है। साल के परिवर्तनशील मौसमों में गर्मी या सरदी की मात्रा के अनुसार चारों तरफ के वातावरण में और उसके फलस्वरूप मानव-शरीर में अनेक परिवर्तन होते रहते है। उन्ही परि-वर्तनों के अनुसार मनुष्यको अपने रहन-सहन में परि-वर्तन करना पड़ता है। इस अदलाबदली के द्वारा मनुष्य ऋतु परिवर्तनजन्य आपत्तियों से अपने को सुरक्षित रख सकता है।

उत्तर भारत में जाड़े का मौसम मार्गशीर्ष से ही चालू हो जाता है और माघ में जाड़ा अपनी चरम सीमा पर पहुंचता है। एक कहावत है :—

धन के पन्द्रह, मकर पचीस।
जाड़े के हैं दिन चालीस॥

अर्थात् मकर संक्रान्ति से १५ दिन पहले और पच्चीस दिन बाद तक शीत अपनी युवावस्था में रहता है। इन दिनों कड़कड़ाती ठंढ पड़ती है। पेड़, पौधे और वनस्पतियां तक जाड़े के मारे मुरझा जाती है। उसी तरह जरा भी लापरवाही करने से मनुष्य की जान पर आ बनती है, इसलिये जाड़े के मौसम में सब से अधिक सावधानी की जरूरत है।

जीवन शक्ति बढ़ावें

शीत ऋतु उचित परिचर्या के अभाव में जहां खतरे की घण्टी है, वहां संजीवनी शक्ति का स्रोत भी है। खान पान और रहन सहन में उचित परिवर्तन कर हम जाड़े के मौसम में अपने स्वास्थ्य को सुन्दर बना सकते है। इन दिनों जो शक्ति संचित कर लेंगे, उससे वर्ष भर बेखटके कड़ी मेहनत कर सकते हैं।

इस ऋतु में ठंढ के कारण हमारी त्वचाके स्रोत संकुचित हो जाते हैं और शरीर के तापमान को स्थिर रखते हैं। शरीर की उष्णता बाहर न निकलने से इन-दिनों हमारी जठराग्नि तीव्र हो जाती है। इसलिए हम पौष्टिक और गरिष्ठ भोजन भी पचा सकते हैं। भूख

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी खुलकर लगती है। इस अवस्था में हमें पूरा लाभ उठाने के लिये ऋतुचर्या के प्रत्येक निमम का पालन दत्तचित्त होकर करना चाहिये।

आहार कैसा हो ?

शौच आदि के बाद नास्ते का प्रश्न प्रातः ही हमारे सामने आता है मेरे विचार से नास्ते में दूध का प्रयोग वाँछनीय है। मैं चायके पक्षमें नहीं हूं, फिर भी जिनको दूध सुविधापूर्वक उपलब्ध न हो सके, वे केवल जाड़े की ऋतु में थोड़ो चाय से ले सकते हैं। दूध या चाय के साथ मेवे का खाना भी लाभप्रद है। आज से १३ वर्ष पहले मैंने जाड़े में किसमिस का अविरत प्रयोग किया था और मुझे अपूर्व लाभ मिला था। आजकल किसमिस मंहगी होनेके कारण खजूर का उपयोग करता हूं। इसी प्रकार बादाम, अखरोट, पिस्ता और अंजीर आदि का प्रयोग भी किया जा सकता है। इनके साथ ही मूंगफली के कुछ दाने अवश्य लेने चाहिये।

कुछ लोग सवेरे हलुआ भी बना लेते हैं। अगर शुद्ध घी डाला जा सके, तो यह पदार्थ भी स्वास्थ्य और स्वाद दोनों ही दृष्टियों से अच्छा है। विभिन्न ताकत की दवाओं से बने लड्डू, पाक आदि मीठी चीजों का नम्बर सब के बाद में है। जिन्हें ये चीजें माफिक हों वे भी मात्रा से अधिक न लें। इनसे मन्दाग्नि होनेका डर तो है ही, साथ में भोजन के समय भूख का मजा भी जाता रहेगा।

भोजन हलका और सुपाच्य होना चाहिए। हां, घी की मात्रा अलबत्ता बढ़ा देना ठीक है। शाकों में घीया, टमाटर पालक बथुआ, मूली, ग्वारपाठा आदि का प्रयोग उत्तम है। जो कच्चा खा सकें, वे सलाद का उपयोग करें। शाम के भोजन में थोड़ा गुड़ भी लें, तो अच्छा है। अच्छी शक्कर भी घी के साथ ली जा सकती है।

दोपहर के नाश्ते में फलों को लिया जा सकता है। फल प्रायः मंहगे पड़ते हैं। हां, गाजर सस्ती है। गुणों में अच्छे फलोंको भी मात देती है। गाजर में "ए" बी और "सी' विटामिन उपयुक्त मात्रा में रहते हैं। इसके रस में पर्याप्त पोषण तत्व हैं। महात्मा गांधी गाजर का रस पिया करते थे। गाजर को सलाद की विधि से कच्चा खाना चाहिए। जिन्हें कब्ज रहता हो, वे इसकी कांजी बनवा लें, ऐसा पौष्टिक विरेचन दूसरा पदार्थ नहीं हो सकता। मधुर रस के प्रेमी मुरब्बे के तरीके से चासनी में डालकर भी खाते हैं। कुछ तो सुखा भी लेते हैं। यह उत्तम रक्तवर्द्धक है। गुण की दृष्टि से इसे "धरती का अमृत कन्द" कहना चाहिए। गाजर को किसी भी तरह के उत्कृष्ट मानव खाद्यके रूपमें ग्रहण करें।

व्यायाम करें

टहलना ठंढी हवा में भी लाभप्रद है। शीतल वायु से डरिये मत। किन्तु टहलने के समय सरदी से बचने के लिये पर्याप्त गरम कपड़े पहने रहिए। स्वच्छ और मैदान की हवा हमारी जीवन शक्ति को बढ़ाने में पर्याप्त सहायता देती है। जो किन्हीं कारणों से टहल न सकें वे खुली हवा में व्यायाम करें। व्यायाम से पहले सरसों के तैल की मालिश भी की जा सके, तो अत्युत्तम है।

जाड़ों में धूप भी बड़ी सुहावनी होती है। कपड़े उतारकर निर्वात कर स्थान में बैठ जाइये और शरीर पर सूर्य की किरणें पड़ने दीजिये। रोजाना इस प्रकार धूप का सेवन किया जा सकता है, किन्तु रविवार को तो थोड़ी अधिक देर तक भी धूप में बैठिए। धूप में बैठते समय यह ध्यान में रखिये कि आपकी पीठ सूरज की ओर रहे।

स्नान कहां करें

धूप में बैठने के बाद नहा लेना और भी उपयोगी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है जिन्हें ठण्डे पानी से नहाने की आदत है, वे जाड़े में भी ऐसा कर सकते हैं, बाकी को स्नान में गरम पानी का ही प्रयोग करना चाहिए। स्नान की व्यवस्था बन्द स्नान घर में हो, तो सर्वोत्तम है। बम्बई के प्रसिद्ध वैद्य यादवजी आचार्य ने मुझे बताया था कि जिन प्रदेशों में विना कमरे के गरम जल से स्नान करने का रिवाज है, उन प्रदेशों में ही दमे और बवासीर की बिमारियां अधिक होती हैं।

कड़ी से कड़ी सर्दी में भी स्वयं स्नान कीजिए और अपने बच्चों को कराइये। यदि व्यवस्था ठीक हो तो सूर्योदय से पहले ही स्नान कर डालिए।

कपड़े कम और निर्मल हों ?

स्नान के बाद जो कपड़े पहनें, वे स्वच्छ हों। अक्सर जाड़ों में मैले कपड़े पहने जाते हैं, भले ही वे मैले दिखाई न पड़ते हों। रंगीन कपड़ों में मैल दीखता नहीं है। मैले कपड़ों के सम्पर्क से स्वच्छ और ताजी हवा भी दूषित हो जाती है। ऊनी कपड़े प्रायः रंगीन ही आते हैं, फिर भी इनके नियमित समय पर धुलाने का प्रबन्ध आवश्यक है। मैंने तो रंगीन कपड़ों में मैल न दीख पड़ने के कारण किसी भी प्रकार का रंगीन कपड़ा ही प्रयोग में लाना बन्द कर दिया है।

कुछ लोग जाड़ों में बहुत अधिक कपड़े डाटे रहते हैं। मेरा अनुभव है कि कम कपड़ों में भी मजे से काम चल जाता है। थोड़े अभ्यास की जरूरत है। मैं पहनने के कपड़ों में सूती कुर्ते और बनियान का ही प्रयोग करता हूं। जब जाड़ा अधिक हो जाता है तो सफेद ऊनी स्वीटर और मफलर भी काम में लेता हूं। जिस स्थान पर मैं रहता हूं, वहां पहाड़ी स्थानों को छोड़कर भारत में सबसे अधिक जाड़ा पड़ता है, किन्तु जिनका शरीर कमजोर है, उनको कपड़े बिल्कुल कम करने की सलाह नहीं दी जा सकती।

इस प्रकार जाड़े भर नियमित रहनेसे मेरे ख्याल में वर्ष भर के लिए पर्याप्त शक्ति संचित हो जाएगी। ताकत के लिये आप को किसी दवा की जरूरत नहीं पड़ेगी। सही बात तो यह है कि जो स्वास्थ्य उचित आहार विहार से प्राप्त होता है, वह दवाइयों के बल से मिल ही नहीं सकता। फिर भी जो लोग दवाओं का सेवन करना चाहें वे सौम्य औषधियों का सेवन करें। आंवले का प्रयोग "च्यवनप्राश" आदि के रूप में श्रेयस्कर है। तीव्र औषधियों से बचे रहने में ही कल्याण है।

सहकार भारती, पिलानी : राजस्थान

विषूचिका रोगके उपद्रव और उनकी चिकित्सा

श्रीचन्द्रभानु शर्मा वैद्य, राजगुरु आयुर्वेद भवन खरखौदा (मेरठ) उत्तर प्रदेश

वमन—हैजे में वमन कफ प्रकोप या पित्त प्रकोप के कारण से होती है।

कफ—प्रकोप से जो वमन होती है उसका कारण कफ विकृति है इस विकृति से लसेदार दुर्गन्ध युक्त वमन होती है यदि वमन इस रोग में कफ प्रकोप से बार बार होती है तो इस वमन में अग्नि कुमार रस देना चाहिये।

पित्त विकृति—से खट्टी और गर्म वमन होती है पित्त प्रकोप से बार बार वमन होने पर शंख भस्म वराटिका भस्म और शुक्ति भस्मादि का प्रयोग विचार से करना चाहिये।

चटनी—स्वर्णमाक्षिक भस्म १ रत्ती बड़ी इलायची की जली राख ८ रत्ती शहद ६ माशे मिलाकर बार २ चटाने वमन शान्त होने पर चटाना बन्द कर दे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तृष्णा—शरीर में अप धातुकी बृद्धि होने से तृष्णा बढ़ती है। दाह और पेट में विकार होता है। इन सब लक्षणों से वात पित्त प्रकोप का निश्चय करना चाहिये वात पित्त प्रकोप के लिये वात पित्त नाशक सूत शेखर रस उत्तम और निर्भय उपाय है।

(२) सौफ का अर्क, पुदीना का अर्क, गुलाब का अर्क, केवड़े का अर्कों में से कोई अर्क जल में मिला कर एक एक चमच दें।

(२) नीम्बू का रस जल में मिला कर एक २ चमच देने से प्यास शान्त होती है।

(४) दस पन्द्रह लौंग पानी के साथ पीसकर दो सेर पानी में मिलाकर ओटावें वे खूब औट जाने पर मिट्टी के नये बर्त्तन में रख दें हैजा और रोगों की प्यास में बहुत लाभ करता है।

(५) पुराने पीपल के वृक्ष के सूखे छिलके को जलाओ जब अङ्गार हो जाय तब पानीमें डाल दो थोड़ी देर बाद दूसरे बर्त्तन में छान कर काम में लावें प्यास के लिये विशेष गुणकारी है।

कपूर—कोष्टस्थ पित्त दोष शामक अब धातु बृद्धि का नाशक है। इसके बहुत से योग हैं।

(१) कपूर, पिपरमेन्ट, अजवायन, सत्व तीनों सम भाग लेकर शीशी में डाल दें कुछ ही समय में तरल पदार्थ बन जायगा इसकी ५ से १० बूंद चीनी या बताशे के साथ खिलावें हैजे की उत्तम दवा है कय दस्त पेट दर्द जी मिचली बदहजमी आदि में बहुत ही शीघ्र लाभ होता है।

(२) लौंग का तैल दालचीनी का तैल और यूलक्लिप्टस तैल प्रत्येक ५-५ बून्द मिलाकर खांड़ या मिश्रीमें मिलाकर देने से उपरोक्त उपद्रवों को शान्त करता है।

शीताङ्ग—जब भयंकर शक्तिपात के साथ नाड़ी क्षीण हो रही हो हाथ पैर ठण्ढे हों तथा शरीर पर काले लाल मण्डल दिखाई दे रहे हों, आंख अन्दर धस रही हो आदि असाध्य लक्षण दिखाई देने पर हेमगर्भ पोटली १ रत्ती आर्द्रक स्वरस १ चमच और शहद १ चमच में मिलाकर १०-१५ मिनट के अन्तर से चटाना चाहिये ऐसी स्थिति में यह रस उत्तम है और असाध्य रोगियों को इससे पुनः जीवन मिलता है।

मकरध्वज—कस्तूरी और कपूर मिलाकर शहदमें चटाने से बहुत यश मिलता है।

कायफल—और सोंठ का चूर्ण हाथ पैरों पर मलना चाहिये।

ऐंठन—हाथ पैरों की ऐंठन दूर करने के लिये अर्क कपूर की मालिश करनी चाहिये।

(२) तैल में कपूर मिला कर मालिश करें।

(२) गर्म पानी को बोतल में भरकर सेकना भी लाभदायक हैं।

पसीना—स्वेद अधिक आता हो तो उपले की राख और सोंठ मिला कर शरीर पर मर्दन करना चाहये।

पेशाब बन्द—होने पर इसमें रोग जलांश कम होने से मूत्रोत्पत्ति कम होती है अथवा सर्वथा उत्पत्ति होती ही नहीं ऐसी अवस्था में कई रोगियों को वात विकृति से झटके आते हैं। सब से पहले इस बात की परीक्षा करनी चाहिये कि पेशाब की थैली में पेशाब जमा है या नहीं यदि पेशाब जमा है तो सलाई द्वारा पेशाब निकाल देना चाहिये। अगर पेशाब नहीं है तो इस अवस्था में चन्द्रप्रभा वटी १ रत्ती प्रवाल १ रत्ती और हजरुलयहूद १ रत्ती मिलाकर चावलों के धोवन २ तोला में जरा मिश्री मिलाकर देनी चाहिये।

(२) बेलपत्र नग ३ काली मिर्च ७ नग घोंट कर पिलाने से पेशाब हो जाता है।

(३) पलाश पुष्प ५ से १० तोला पोटली बान्ध पानी में उबाल कर उदर के निचले भाग को सेक देने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से मूत्र सरलता से आकर वात की शान्त हो जाती है।

इस रोग में अनेक उपद्रव होते हैं जिनमें कृमि जन्य आनाह-आध्मान कोष्ठशूल ये त्रास दायक उपद्रव हैं।

कृमिजन्य शूल—में संजीवनी बटी १ से ३ बटी नींबू के स्वरस से दें।

कोष्ठ शूल—शंखवटी १-२ गोली नीम्बू स्वरस में खांड मिलाकर देने से तुरन्त लाभ दिखाई देता है।

तीव्र शूल—रहने पर विषूचिका वटी ४ रत्ती शंखवटी ४ रत्ती मिला कर ४ मात्रा बना २-३ घन्टे बाद नीम्बू स्वरस आर्द्रक स्वरस शहद मिला प्रयोग करें बहुत ही उत्तम प्रयोग है।

आनाह—रहने पर पीपर लवंग इलायची सोंठ जावित्री इन सब को जला काली राख बनाकर २ से ६ रत्ती शहद में बार बार चटाना चाहिये।

पेट में आध्मान—अधिक रहने से उदर पटल में विकार आ जाता है। तब उदर में तनाव शूल पेट वायु से पूर्ण होजाने पर बजता है। ऐसी अवस्था प्रायः भयंकर होती है इस अवस्थामें क्रव्यादरस १ से ४ रत्ती नीम्बू स्वरस और शहद मिला कर बार बार चटाना चाहिये।

गर्म—पानी में तारपीन तेल मिला कर उसमें कपड़ा भिगों निचोंड़ कर रोगीके पेटको सेकना चाहिये।

हिक्का—इस रोग के उपद्रवों में हिक्का भी भयानक रोग है आमाशय विकृति और रक्त में स्वांदुता की कमी होने से इस रोग में गम्भीर हिक्का देखी जाती है। इस हिक्का में वमन के पीछे लिखी हुई चटनी शहद के साथ ८ रत्ती बार बार चटाने से हिक्का शीघ्र शान्त होती है। ब्रांडी एक उत्तम और अचूक महौषधि है।

चिन्तामणि रस—गंम्भीर हिक्का प्रायः असाध्य रोग है पर फिर भी इस पर चिन्तामणि रस का प्रयोग करें मात्रा आधी से १ रत्ती शहद से बार बार दे और रोगी के भाग्य की परीक्षा करनी चाहिये।

रक्त में जल की कमी—स्वर्ण भस्म १ रत्ती दुग्ध शकरा १० रत्ती में मिलाकर इसकी १० मात्रा बनावें १०-१५ मिनट के अन्तर से बार बार पुड़िया जल से दें। इससे रक्त में आनेवाली जल की कमी पूर्ण होने में बड़ी सहायता होती है।

नोट—१, आयुर्वेद गौरव द्वितीय वर्ष संख्या २ नवम्बर १९५४ ई० के पत्र में शरीर में लवण जलका प्रक्षेपण, शीर्षक लेख में रक्त में जल की कमी पूरी होती है। नोट—२, शेष उपद्रव दूसरे अंक में आप को पढ़ने के लिये मिलेंगे इति।

———

अस्वाभाविक क्षुधा

ले० श्री बसन्त प्रसाद अग्निहोत्री ए० एम् एस् अध्यक्ष राजकीय रसायनशाला वि० प्र० रीवां

मानव शरीर यन्त्रवत् है जिस प्रकार एक मशीनके सम्पादन हेतु किसी शक्ति की आवश्यकता प्रतीत होती है उसी भांति मानव शरीर के दैनिक कार्य के लिये भी शक्ति की जरूरत पड़ती है शक्ति के उत्पादन के लिये विविध सामग्रियां हुआ करती हैं एक मशीन कोयला अग्नि से कार्य करती है तो दूसरी पेट्रोल के सहायत पर निर्भर होती है फिर भी इन सभी यन्त्रों की सामग्रियों से एक प्रकार की गैस शक्ति उत्पन्न होती है जो उनके संचालन का कार्य सम्पादन करती है।

इसी प्रकार मानव शरीर में भी विविध खाद्य सामग्री की सहायता से शक्ति उत्पन्न होकर शरीर के कार्य वहन के कार्य पूरा करती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानव शरीर एक ऐसा यन्त्र है जिसकी बहुत सी क्रियायें अनैच्छिक भी जन्म से मृत्यु पर्यन्त हुआ करती है इन्हीं विविध कार्य के सम्पादन हेतु शक्ति की माँग जो मानव शरीर में प्राकृतिक रूप से खाद्य सामाग्री के रूप है इच्छित होती है उसी को हम व्यवहारिक भाषा में क्षुधा ऐसे शब्द से प्रकट करतें हैं।

प्रत्येक व्यक्ति के शरीर की बनावट गठन एवम् दैनिक कार्य की भिन्नता के मुताबिक क्षुधा की भावना पर विषमता पायी जाती है शारीरिक श्रम करने वाले किसान की भोजन सामग्री की मात्रा मानसिक कार्य ज्यादा करने वाले व्यक्ति की भोजन मात्रा में विषमता होना स्वाभाविक है।

किन्तु कभी कभी शारीरिक क्रियाओं के विकृति स्वरूप एक कृषक अथवा कार्यालय बाबू के दैनिक भोजन मात्राओं में भी विषमता आने लगती है और ऐसी अवस्था में वह व्यक्ति चिकित्सक के पास पहुंचता है अतएव अस्वाभाविक क्षुधा के कारणों का ज्ञान होना एक चिकित्सक के लिये अत्यन्त आवश्यक है।

अब मैं ऐसी अवस्थाओं का वर्णन करूँगा जब कि शरीर में अस्वाभाविक क्षुधा की प्रतीत हो सकती है।

क्षुधा की तीन अस्वाभाविक अवस्थाएं हो सकती है।

(१) तीव्र (२) मन्द

(३) ( ) विलोमाभासता

तीव्र क्षुधा की अवस्थाएं

१—मधुमेह—इसकी प्रारम्भिक अवस्था में क्षुधा की अधिकता मालुम होती है। हर समय कुछ खाने की इच्छा मालुम हुआ करती है फिर भी इतना खाते हुए भी रोगी दिन व दिन दुबला होता जाता है। मधु मेह का निदान उसके और लक्षणों यथा मूत्र की अधिकता एवम् शर्करा का उसके द्वारा निष्कासन, प्यास की अधिकता आदि मुख्य लक्षणों द्वारा आसानी से किया जा सकता है।

२—आमकृमि की उपस्थिति—कतिपय रोगियों में "राउण्ड-वर्म" तथा टेपवर्म की आम उपस्थिति के फल-स्वरूप क्षुधा की अधिकता देखी जाती है क्रिमियों के उपस्थिति का निदान मल परीक्षा से भली भाँति किया जा सकता है।

३—स्त्रियोन्माद की अवस्था—युवास्त्रियों में अधिकतर "हिस्टीरिया" के समय क्षुधा की अधिकता का होना देखा जाता है और स्त्रियोन्माद के अन्य लक्षण भी उनमें पाये जाते हैं।

४—पाचकाम्ल की अधिकता—कभी कभी आमाशय में पाचक अम्ल ( ) की अधिकता के कारण भी क्षुधा अधिक मालुम होती है ऐसे रोगियों में भोजन के दो-तीन घण्टे पश्चात उदर में शूल या अन्य बेचैनी के लक्षण प्रकट होते हैं जो कि किसी प्रकार के भोजन करने पर दूर हो जाते हैं।

मन्द क्षुधा की अवस्थाएं

इस तरह की शिकायत करने वाले रोगी अधिकतर मिला करते हैं मन्दाग्नि उत्पन्न करने वाली व्याधियों में क्षुधा की मंदता देखी जाती है। आमाशय में जब पाचक अम्लका उत्पादन न्यून मात्रामें होता है उस समय भीभूख कम हो जाया करती है श्लेष्मा जन्य व्याधियों में क्षुधा का कम हो जाना सदैव पाया जाता है।

मूत्र संस्थान के व्याधियों में तथा हृदयविकार एवम् क्षय और यकृत् के रोगों में क्षुधा की मन्दता देखी जाती है। शराब या तम्बाकू का अधिक व्यसन एवम् मुख के अन्दर पूय श्राव आदि अवस्थाओं भी क्षुधा की मंदता हो जाया करती है।

एक युवावस्था वाले व्यक्ति में यदि क्षुधा की न्यूनता पायी जाव तो क्षय सम्बन्धी विचार सब से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहिले ध्यान में लाना चाहिये। यदि स्पष्ट लक्षण किसी खास व्याधि के न दृष्टिगोचर होते हो इसी प्रकार यदि चालीस वर्षकी अवस्थासे ऊपर के व्यक्ति में क्षुधा हीनता पायी जावै तो उदर कर्कटार्बुद का ध्यान अवश्य रखना चाहिये क्योंकि यह उसका प्रारम्भिक लक्षण है।

उन्माद के रोगियों में भी क्षुधा की न्यूनता पायी जाती है।

क्षुधा की विलोमाभासता—

ऐसी अवस्था गर्भ धारण के समय मिलती है किन्तु विशेष महत्व की बात नहीं रहती है इसी भाँति क्षीण रक्त न्यून बालकों में भी क्षुधा की विलोमाभासता देखी जाती है जिसके फलस्वरूप उनमें मिट्टी खाने की रुचि पायी जाती है। उन्माद की प्रारम्भावस्था में भी कई रोगियों में क्षुधा की विलोमाभासता प्रकट होती है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि एक चिकित्सक के लिये क्षुधा की विकृति वाले रोगी के निदान के लिये विविध व्याधियों की जानकारीका होना आवश्यक है। इसलिये क्षुधा विकृति वाला कोई रोगी आता है तो उसकी लाक्षणिक चिकित्सा कभी भी न करनी चाहिये क्योंकि कभी कभी यह क्षय, उदर कर्कटार्बुद, मधुमेह आदि घातक व्याधियों का प्रारम्भिक लक्षण होता है अतः इसका पूर्णतः निदान के पश्चात् चिकित्सा प्रारम्भ करनी चाहिये।

———

—: वृश्चिक (बिच्छू) एवं दंशोपचार :—

लेखक-पण्डित रामप्रसाद शर्मा वैद्य शास्त्री C/o श्री सुखदायक आयुर्वेद भवन खेतड़ी (राजस्थान)

वृश्चिक:—इसे साधारणतया बोल चाल की भाषा में बिच्छू कहते हैं। ये तीन प्रकार के होते हैं। (१) मंदविष (२) मध्यविष (३) महाविष। मन्दविष—जो वृश्चिक गो के गोबर व मूत्र के सड़े गले स्थानों से उत्पन्न हो मन्दविष कहलाता है।

मध्यविष—जो वृश्चिक कुछ हलके विषैले जानवरों को मूत्र पुरीष या अस्थियों द्वारा व स्थावर बिषैले पदार्थों के सड़ गल जाने से पैदा होता है वह मध्यविष कहलाता है।

महाविष—सर्पके मूत्र पुरीषादि व हड्डियों के स्थान से उत्पन्न वृश्चिक महाविष कहलाता है।

मन्दविष वाले वृश्चिक १२ प्रकार के व मध्य विष वाले तीन प्रकार के और महाविष वाले १५ प्रकार के होते हैं। इस प्रकार कुल ३० प्रकार के होते हैं। किसी किसी के मत से ये २७ प्रकार के भी होते हैं। कृष्ण, श्याव, कर्बुर, पीत्त, गौमूत्राभ, कर्कश, नेचक, श्वेत, लाल, रोमश, शाद्वलाभ और रक्त में बारह प्रकार के मन्दवीर्य (विष) होते हैं। इनके काटने से पीड़ा कम्प देह का स्तम्भ काले रुधिर का निकलना आदि लक्षण होते हैं।

रक्तोदर, पीतोदर और कपिलोदर ये तीन मध्य-विष वाले होते हैं। इनके काटने से जीभ में शोथ, भोजन में अनिच्छा आदि लक्षण होते हैं।

श्वेत, चित्र, श्यामल, लोहिताम, रक्तश्वेत, रक्तोदर नीलोदर, पित्त रक्त, नीलपीत, रक्तनील, नील शुंक, रक्त वभ्रु, एक परवा और उपर्व्वा ये पन्द्रह घोर विष वाले बृश्चिक होते हैं। इनके काटने से सर्प विष के समान वेग होता है। फफोले की उत्पति हो जाती है। भ्रान्ति दाह, ज्वर, हो जाता है। नाक कानादि से रक्त बहने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगता है और कई कई बार तो रोगी प्राण भी त्याग देता है।

बृश्चिकोत्पत्ति—बृश्चिक की उत्पत्ति सर्पों के मूत्र स्थान की मिट्टी या अन्य कीटों की सड़ी गली मिट्टी अथवा सर्पों व अन्य विषैले जीवों की अस्थि पुरीष के द्वारा व अन्य स्थावर सड़े हुये विषों के पड़े हुये स्थानों में होती है।

सर्पों की विष्ठा मूत्र में जो बृश्चिक पैदा होते हैं उन्हें कीटज कहा जाता है।

बृश्चिक दंश—बृश्चिक की पुच्छ के अन्त में सूई की नोक वाला एक कांटा लगा होता है। उस कांटे में एक अदृश्य छिद्र होता है। जब बृश्चिक काटता है तो वह कांटा दंश स्थान पर चुभा देता है। इसी कांटे के पीछे एक विष की थैली लगी होती है। बृश्चिक ने ज्यों ही कांटा चुभाया त्यों ही विष की थैली में से विष उस छिद्र वाले कांटा द्वारा रोगी के रक्त में प्रवेश कर जाता है।

बृश्चिक के डंक का विष सर्व प्रथम जिस प्रकार अग्नि जलाती है उस प्रकार जलन पैदा करता है। फिर छेदने की की सी पीड़ा होती है। इसका विष अधिक ऊपर शरीर में नहीं चढ़ता बल्कि दंश स्थान की पीड़ा के साथ मस्तिष्क में खटका पहुंचता है। दंश स्थान पर फटने की सी पीड़ा भी होती है। दंश स्थान लाल या नीला हो जाता है। सूई चुभने के समान चर्म में छिद्र भी हो जाता है। पीड़ा के साथ कभी कभी खुजली भी चलती हैं जो पीड़ा शान्त होने के पश्चात भी कुछ देर तक चलती रहती है।

—बृश्चिक विष चिकित्सा—

(१) राई को कपास के पत्तों के रस में पीस कर दंश स्थान पर लेप करनेसे बिच्छू का विष दूर होता है।

(२) वत्सनाभ को पानी में पीस कर दंश स्थान पर लेप करने से पीड़ा शान्त होती है।

(३) रविवार को दिन उखाड़ी हुई सफेद पुनर्नवा की जड़ को पानी में पीसकर दंश स्थान पर लेप करने से बिच्छू पीड़ा शान्त होती है।

(४) कपास की जड़ को रोगी के मुख में रखवा कर चबवावें। बिच्छू पीड़ा शान्त होगी।

(५) अमृत धारा को दंश स्थान पर लगाने से पीड़ा शान्त होती है।

(६) जमाल गोटे को पानी में पीस कर जहां पर बिच्छू ने काटा हो लेप करने से तुरन्त बृश्चिक पीड़ा शान्त होती है।

(७) हंस पदी (छुई मुई) की जड़ को रविवार को उखाड़ लावें तथा उसको चबा कर रोगी के कान में थुकवा देवें। दर्द शान्त हो जायगा।

(८) मैंनसिल, कूठ, कंजे के बीज, सिरस के बीज केशर इनको बारीक पीसकर पानी में घोंट कर चने के समान गोली बना लेवे। और एक गोली रोगी के मुखमें रखवायें तथा दूसरी चन्दन के समान घिस कर दंश स्थान पर लेप करवायें। तुरन्त बृश्चिक पीड़ा शान्त होगी।

(९) नमक ४ ग्रेन, पानी १ तोला उक्त औषधियों के बिलयन की ५ बून्द दंश स्थान पर, ५ बून्द कान में ५ बून्द नाक और ५ बून्द आंखों में डाल कर १० बूंद रोगी को पिला दे। इससे विष और बेचैनी दूर होकर रोगी को आराम का अनुभव होता है।

(१०) काष्टिक सोड़ा ४ से ६ रत्ती तक और नृसार (डंडे का नौसादर) पीस कर एक शीशी में रखे। ऊपर से ४ बून्द पानी की डालें और शीशी की काक बन्द कर देवे। औषध उफनेगी। बस शीशी को काक खोल कर फौरन रोगी को सुंघा दीजिये। करीब १०-१२ दफा सुंघाने से कैसा भी बृश्चिक काटे का दर्द क्षणों में ही शीघ्र शान्त होगा। प्रयोग परीक्षित है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मन्त्रपूत-जल" Magnetized water.

ले०-डा० श्री श्यामदास प्रपन्नाश्रमी, आयुर्वेदाचार्य L. M. F., M. D. M. S. आत्मिक-चिकित्सक

"मन्त्रपूत जल" द्वारा बाल व्याधि और जादू-टोना आदि के बुरे असर शान्त करने के लिए दुनियां की हर जगह पर हर एक सभ्य और असभ्य जाति के मज़हब में बहुतेरे ऐसे मनुष्य पाये जाते हैं, जिनके द्वारा कभी कभी खतरनाक बीमारियां भी जल्दी से जल्दी ठीक हो जाती हैं।

अक्सर पेट की सभी बीमारियां जैसे—कब्जियत, दस्त का दौरा, पेचिस, बदहजमी, मृगी-वाय, फालीश, वातरोग, कोट, दमा, शूल आदि हर किस्मकी बीमारियां आराम करने में मन्त्रपूत जल का असर जादू जैसा मालूम होता है।

मैं खुद इसी तरीकों के जरिए ऐसे ऐसे लाइलाज मरीजों को ठीक कर चुका हूं ओर किसी किसी मरीज के ऊपर इसका कमाल देखकर ज्यादा तज्जुब हो जाता हूं।

मन्त्रपूत जल द्वारा गाय, भैंस आदि पालतू जानवरों की हर तरह की बीमारियां ठीक हो सकती हैं। जो सब दूध देनेवाली गाय-भैंसे किसी कारण से दूध नहीं देती—वह कारण चाहे कुदरती पैदा हुआ हो या दुष्ट मनुष्यकी करतूत से हर हालत में ही मन्त्र-पूत जल जादू सा काम करता है।

उचित ढंग से बनाया मन्त्रपूत जल रोगी के लिए औषधि से भी बढ़कर फायदा करता है। यह जल नित्य तीन या चार वार सेवन कराना तथा पीड़ित स्थान पर बाहरी प्रयोग करना होता है, अगर किसी के कहीं पर चोट लग गई हो तो उसकी जखम पर इस जल की पट्टी—Bandage बांधकर से रोगी के नहाने के पानी में मन्त्र-पूत जल मिलाकर बहुत से रोगी को ठीक किया जा सकता है।

मन्त्रपूत जल सिर्फ दो या तीन रोज तक ही काम लायक रहता है क्योंकि ज्यादा समय पर्यन्त रख छोड़ने से उसमें कीड़े पैदा हो जाते हैं। पर अगर गंगाजल को मन्त्रपूत करके काम लिया जाय तो महीनों तक यह खराब नहीं होता। इसलिये बहुत दूर रहनेवाले मरीज जिन्हें रोजाना जल को मन्त्रपूत करा लेने को दिक्कते उठानी पड़ती है को अगर गंगा-जल उपलब्ध हो तो मन्त्रपूत कर देना नहीं तो दुग्ध-शर्करा आदि मन्त्रपूत जल प्रस्तुत करने की विधि से शक्ति सम्पन्न करके बना दिया जाय तो ये भी बराबर काम करेंगे। जल तथा दुग्ध शर्करा आदि मन्त्रपूत करने की प्रणाली इतनी सरल है कि नवीन शिक्षार्थी (चिकित्सक) भी इसकी सहायता से विभिन्न प्रकार के रोगारोग्य करने में समर्थ होगा। खासकर होम्योपैथिक मतानुसार चिकित्सा करनेवाले अगर इस मनोवैज्ञानिक प्रणाली को अपनी औषधियों के साथ अपनावें तो मेरे मतसे उनकी सफलता "सोनेमें सुगन्ध" लोकोक्ति चरितार्थ करने की भांति प्रतीत होगी।

मेरा सानुनय निवेदन हैं; कि होम्योपैथी के अतिरिक्त अन्यान्य पैथीवाले भी अगर इस "मन्त्रपूत जल" का प्रयोग अपने अपने रोगियों पर करेंगे तो उन्हें भी "दिन दूना-रात चौगुना" लाभ दिखाई देगा। इससे उनको एक पंथ दो काज होगा। जल आदि मन्त्रपूत करने की विधि :—

अपने दोनों हाथ निर्मल जल द्वारा धो डालने के बाद स्वच्छ रूमाल या तौलिए से पोंछ डालिए। अब दोनों तलुवे एक साथ मिलाकर खूब जोरसे घिसते रहिए जिससे उसमें आग पैदा हो जाय; चूंकि जब तक उसके अन्दर बिजली की शक्ति न आवेगी तब तक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इससे कुछ भी लाभ नहीं होगा। घिसती हुई हालत में खूब एकाग्र चित्त होकर यही चिन्ता करते जाईये कि ;—"मेरे शरीर की 'आकर्षणी-शक्ति' इसी प्रणाली द्वारा मेरी उंगुलियों में आकर इकठ्ठी हो रही हैं।" कम से पांच-सात मिनट समय पर्यन्त दोनों तलुवे को घिसती हुई हालत में उनमें बिजली पैदा कर लेने के उपरान्त पहले से निश्चित स्थान पर पवित्र निर्मल जल से भरा हुआ गिलास को वायें हाथ की हथेली पर रखकर या बायें हाथ से पकड़ कर दाहिने हाथ की अंगुलियों के अग्रभाग यानी पोरूवे को एक जगह करके उन्हें जल के ऊपर पांच मिनट पर्यन्त रखिए। पर यह ध्यान में रहना चाहिए कि जल के साथ उंगुलियों का स्पर्श न हो सके। अपने शरीर की बिजली अंगुलियों के सहारे गिलास के जल में प्रविष्ट कराने के लिए गंभीरता के साथ यह चिन्ता करें कि,—"इस प्रक्रिया द्वारा मेरे शरीर की "आकर्षणी-शक्ति" इस पवित्र जल के अन्दर प्रविष्ट हो रही है (जल के स्थान दुग्धशर्करा हो तो उसका नाम लेकर) और इस जल या दुग्ध-शर्करा को "रोगारोग्य दायिनी शक्ति" से ताकतवर बना रही है। यह शक्ति सम्पन्न मन्त्रपूत जल "अमुक" (रोगी अथवा आवश्यकी प्राणियों के नाम लेकर) को निश्चित रूप से आराम पहूंचायगा।" इस प्रकार मन्त्रपूत जल या दुग्ध-शर्करा-Sugar of milk आदि रोजाना तीन-चार बार पीड़ित स्थान पर प्रयोग तथा आभ्यन्तरिक सेवन कराना चाहिए। नजदीक रहनेवाले रोगियोंके लिए रोज ताजा स्वच्छ जल तथा दूर में रहनेवालों को गंगाजल या दुग्ध-शर्करा आदि ही मन्त्रपूत करके दे देना चाहिए। सभी पद्धति के चिकित्सकों के लिए यह "मन्त्रपूत जल" उनके अपने अपने चिकित्सा-क्षेत्र में "तिनके के सहारे समुद्र पार लगाने वाला साबित होगा।"

———

प्रदर रोग और उसकी सफल चिकित्सा

लेखक—श्री माधवप्रसाद वैद्य, कलकत्ता

आज कल के नवीन वातावरण में लालन पालन व शिक्षा दीक्षादि के प्रभाव से, दूषित नमकीन व चरचरे पदार्थों के उपभोग से, उत्तेजक चलचित्र देखने से अश्लील साहित्य के पढ़ने से अन्तस्थल में जागृत काम वासना का चक्र अहर्निश मस्तिष्क में चक्कर काटता रहता है। जिससे अतृप्त इन्द्रियां व मन हमेशा ही एक प्रकार की आकांक्षा करती रहती है। रजोवाहक शिरा में प्रतिपल प्रेरित रहने लगती है और उनकी शक्ति कुछ क्षीण होने से रज अनियंत्रित होकर परिवहन करने लगता है जिससे महिलाओं की शक्ति का ह्रास हो जाता है क्योंकि शरीर के सभी पोषक तत्व इस रज के साथ में शरीर से वहिर्गत होने लगते है। सर्व शरीर व्यापी रज विकृतावस्था में प्रकृत न स्रावित होकर योनि मार्गसे निकलनेके परिणाम स्वरूप महिलायें क्षीण-बल, ओज व आयु हो जाती हैं। आयुर्वेदज्ञ इसी पोषक तत्व रूप रज के अधिक प्रवाह को "प्रदर" रोग के नाम से इंगित करते है।

साधारणतया रज और आर्तव में कोई अन्तर नहीं माना जाता है किन्तु सूक्ष्म दृष्टि से विश्लेषण करने पर इन दोनों में बहुत ही भेद है। क्योंकि रज एक सम्पूर्ण शरीर में संचार करने वाला एक ऐसा पोषक तत्व है जिसके ज्यादा नष्ट होने पर या बहने पर उसके रोकने बढ़ने के लिए हर सम्भव उपायों का अवलम्बन किया लिया जाता है एवं साथ ही साथ नष्ट वीर्य पुरुष को वीर्य वर्द्धक उपादानों के सेवन की तरह स्त्रियों को भी रजोवर्द्धक उपादानों का सेवन कराया जाता है। यदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रज में अशुद्धियाँ व अन्य दोष भी आजायें तो उनके भी प्रतिकार या निवारण के यथेष्ट औषधिद्रव्यों का नियोजन करके रजोगत विकृतियों का उन्मूलन किया जाता है। अतः उपरोक्त सभी प्रधान-प्रधान विचारणीय प्रश्नों पर विचार करने पर हम इसी निष्कर्ष या सिद्धान्त पर पहुंचते हैं कि "रज" एक शरीर पोषक तत्व है।

ऋतुकाल में जो वस्तु या द्रव्य श्राव होता है उसकी संज्ञा "आर्तव" है। वह रक्त के सदृश होता है तथा प्रत्यक्ष में भी रक्त दिखाई पड़ता है किन्तु वास्तव में वह श्राव शील तत्व "रज" नहीं होता है क्योंकि आर्तव में महिलाओं के शरीर में होने वाली विकृतियाँ व दोष भी मिश्रित रहते हैं जैसा कि शास्त्रकारों ने लिखा है—

"रजः प्रसेकान्नारीणां, मासे-मासे विशुध्यति।
कृत्स्नं शरीरं दोषांश्च, नप्रमेहन्त्यतः स्त्रियः॥

इस "आर्तव"को शास्त्रकार बहुत ही अस्पृश्य बताते हैं क्योंकि यह अत्यन्त ही विषैला पदार्थ है! इसपर बैठनेवाली घरेलू मक्खी या खाने वाला श्वान शीघ्र ही पंचत्व को प्राप्त होते हैं। यदि श्वान खाने पर मृत्यु को प्राप्त न होवे तों पागल तो अवश्य ही हो जाता है। इन्हीं कुछ उदाहरणों से यह स्पष्ट ज्ञात होता है कि यह कितनी भयावह वस्तु है इसको इतनी हेय समझकर ही हमारे ऋषियों ने धर्मशास्त्र के नाम पर या स्वास्थ्य रक्षा के नाम पर उस समय यानि ऋतु काल में स्त्री मात्र को स्पर्श करना पूर्णतया निषिद्ध बताया है एवं स्त्री के शरीर से निकलनेवाले दूषित रक्त के साथ में दूषित दोषों का या रक्तवाहिनी धमनियों का बन्धन कुछ कमजोर होने से स्त्री को कुछ हानि होने का भय बराबर ही बना रहता है। उपरोक्त लक्षणों से पूर्णतया स्पष्ट हो गया कि आर्तव एवं रज एक समान होते हुए भी सूक्ष्म विश्लेषण से उनके गुण धर्म में महान् अन्तर है।

प्रदर को दूसरे शब्दों में असृग्दर भी कहा जाता है। माधवाचार्य्य, भाव मिश्र आदि ने प्रदर को ही असृग्दर के नामसे अपने ग्रन्थों में (माधव निदान व भाव प्रकाश) में सम्बोधित किया है।

प्रदर किसको कहते हैं (सामान्य लक्षण)

असृग्दरं भवेत्सर्वं साङ्गमर्दं सवेदनम्॥मा० नि०॥

दूषित हुआ रक्त ज्यादा स्राव होना, अंगों का टूटना एवं शूल की तरह पीड़ा होना इसके मुख्य लक्षण शास्त्र कार बताते हैं। असृक (दूषित रज) इस रोग में अधिक गिरता है इसलिये इस रोग को असृग्दर (प्रदर) नाम से पुकारते हैं।

प्रदर रोग के होने के कारण

जिन २ मिथ्याहार विहारों से इस व्याधिका प्रादुर्भाव होता है उसका शास्त्रकारों में निम्नाङ्कित वर्णन किया है।

विरुद्धमद्याध्यशनादजीर्णाद्गर्भ प्रपातादति मैथुनाच्च।
यानाध्वशोकादतिकर्षणाच्च भारामिघाताच्छयना
दिवा च॥ तं श्लेष्म॥

अर्थात् विरुद्ध भोजन करने से, मद्य के सेवन से, अध्यशन करनेसे, अजीर्ण से, गर्भपात होने से, अधिक मैथुन से, घोड़ा, हाथी, ऊंट की अधिक सवारी से शोक या अधिक चिन्ता करने से, ज्यादा मार्ग चलनेसे, व्रत उपवास से शरीर का ज्यादा कर्षण करने से, गेंडू, योनि आदिपर चोट के लगने से, दिन में अधिक सोने से स्त्रियों को यह व्याधि हो जाती है। इसके अलावा कब्जा रहने से योनि की सफाई न करने से गन्दे या दूषित लिङ्ग से सम्बन्ध स्थापन से भी यह रोग होते देख जाता है। अतः इस रोग से बचने के लिये हमेशा ही इन कारणों से बचे रहना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रदर के भेद और उनके लक्षण

हमारे प्राचीन आचार्य यह रोग ४ तरह का बताते हैं जैसे—

तं श्लेष्म पित्तानिल सन्निपाताच्चतुष्प्रकारं प्रदरं वदन्ति ॥ मा० नि० ॥

अर्थात् यह कफज, पित्तज, वातज और सन्निपातज भेद से ४ तरह का होता है। किन्तु आधुनिक विद्वानों के मत से प्रदर रोग श्वेत प्रदर, व रक्त प्रदर भेद से केवल दो ही प्रकार का होता है जिनके सामान्य लक्षण मस्तिष्क में चक्कर व सिर में दर्द बना रहना, शरीर का बराबर टूटते रहना यानि हड़फूटन होना, हाथ पैरोंमें जलन होना, मासिक कम व ज्यादा के साथ साथ उस कालमें वेदना का होना, गर्मी का प्रकोप रहना इत्यादि लक्षण है।

कफज प्रदर के लक्षण

इसको पाश्चात्य विद्वान् (Leucorrhoea ल्यूकोरिया कहते हैं इस प्रदर में कच्चे रस वाला सेमरकी गोर की तरह चिकना, कुछ पीले वर्ण का, पुलाक धान्य के धोवन के सदृश रक्त (दूषित रज) बहता रहता है। यथाः—

आमं सपिच्छाप्रतिमं सपाण्डु पुलाकतोयप्रतिमंकफात्तु ॥

पित्तज-प्रदर के लक्षण :—

इसको पाश्चात्य चिकित्सक "Menorreagia" मेनोरेजिया याकेट्रोरेजिया कहते हैं। इसमें पीला, नीला सांवला, लाल, तथा गर्म रक्त (दूषित रज) पित्तजन्य दाह प्यास, भ्रम, मोह, ज्वर, प्रभृति, लक्षणों के साथ बार २ बेग से बहता रहता है। यथाः—

सपीत नीलासित रक्तमुष्णं पित्तार्तियुक्तं भृशवेगिपित्तात्

वातज-प्रदर लक्षण—

इसको पाश्चात्य विद्वान् साधारणतया (Dysmenorrhoea) डिस्मेनोरिया कहते हैं किन्तु आर्तव कम मात्रा में तथा आराम के साथ होता हो तो उसको डिस्मेनोरिया नहीं कहते हैं। इस प्रदर में रुखा, कालिमा लिए लाल, झागदार, मांसरस के धोवन के रंग का थोड़ा २ सूई कोंचने सी पीड़ा के साथ होता है। एवं कभी कभी कमर, वंक्षण, हृदय, पसली एवं नितम्ब भाग में भी पीड़ा दर्द होता है ये सभी उपद्रव वायु की प्रबलता से होते हैं यथाः—

रुक्षारुणं फेनिलमल्पमल्पं वातात्सतोदं पिशितोदकाभम् ॥ मा० नि० ॥

कटी वंक्षण हृत्पार्श्व पृष्ठ श्रोणिषु मारुतः। कुरुते वेदनां तीव्रामेतद् वातात्मकं विदुः (चरक)

(क्रमशः)

'आयुर्वेद—चिकित्सक'

(जनता का व्यवहारोपयोगी, चुनिन्दा सामग्रीवाला मासिक-पत्र)

यह प्रति मास नियमित प्रकाशित होता है। प्रतिवर्ष दो-विशेषाङ्क (१ छोटा, १ बड़ा) देता है। इस वर्ष ढाई-सौ पृष्ठ के बड़े-डिमाई साइज में पुरुषरोग-चिकित्साङ्क महत्वपूर्ण विशेषाङ्क भेंट करेंगे। वार्षिक मूल्य ४॥), एक अङ्क का ।), नमूना के लिये पांच आने भेजिये। तत्काल फलप्रद प्रयोग (चारों भाग) का मूल्य ८)

—वैद्य पं० चन्द्रशेखर जैन शास्त्री। लाखा भवन, पुरानी चरहाई, जबलपुर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कासनी

ले०—श्री दलजीत सिंह वैद्य पो० चुनार यू० पी०

उत्पत्तिस्थान—पहले प्रकार की कासनी उत्तर-पश्चिम भारतवर्ष में ६००० फूट की ऊँचाई पर तथा कुमाऊ, संयुक्त प्रान्त और अवध, बजीरिस्तान, बलूचिस्तान, फारस, पश्चिमी एशिया और यूरोप में होती हैं। भारतवर्षमें विशेषकर पंजाब और काश्मीरमें इसकी खेती की जाती है। पंजाब के बाजारों में इसकी जड़ और बीज सामान्यतया उपलब्ध होते हैं। हिन्दुस्तान में अच्छी कासनी पंजाबके उत्तरी भागों में तथा काश्मीर में होती है।

नाम—(हिं०, पं० गु०) कासनी; (अ) हिंदबाड, (फा०) कासनी, कसनाज; (यू०) किखोरियोन Kikhorion किखोरी Kikhore सेरिस Seris; (रू०) इन्तुबस Yntubus इन्तुबम Yntubum; (पं०) कास (सि) नी, सूचल, गुलहंद,, (ले०) सिकोरिअम् इंटीबस Cichorium Yntybus, Liun (अँ) एण्डिह्व Endive चिकोरी Chicory वाइल्ड सिकोरी (सकोरी) Wild Cicory (Succory),

कासनी के उपर्युक्त नाम इसके तिक्त-वन्य भेदके है। खेती किये जानेवाले मधुर भेद के नाम नीचे दिये जाते हैं।

(हिं०,) कासनी; (काश०) सजेहंद; (ते०) कोशी, सिकोरिअम् एण्डिह्विया Cickorium Enduia Lmn, (अँ) दी गार्डेन एन्डिह्व The Garden Endive;

वक्तव्य—अज्जुमन आराए नासिरी के मतसे कासनी कासानसे, जो समरकन्दके निकट एक नगर है, व्युत्पन्न है। क्योंकि वहां यह बहुतासे होती है, इस लिये कासनी अर्थात् कासान में प्रचुरता से होनेवाली इस नाम से अभिधानित हुई।

वर्णन—यह प्रसिद्ध बहुवर्षायु क्षुद्र वनस्पति जो अनेक देशों में होती है। यह बोई जाती है और स्वयंभू (वा जंगली) भी होती है। इनमें से प्रथम को कृषिकृत वा उद्यानारोपित (बुस्तानी वा बागी) और द्वितीय को वन्य (दश्ती वा बर्री) जंगली कहते हैं। इनमें बागी (बुस्तानी के भी ये दो भेद होते हैं। (१) इसका पौधा एक-दो गज वा अधिक ऊँचा; शाखाएँ ढीली वा कोमल, पत्ते अपेक्षाकृत अधिक लम्बे-चौड़े, खुरदरे, और स्वाद में किंचित् तिक्त; फूल बड़ा, नील वर्ण का एवं प्रियदर्शन, इसको-हिन्दबाड शामी, हिंदबाड हाशमी वा हिंदबाड वलरबी और अरबी यूनानी में मासरानतानिया एवं अकतरानिया कहते हैं।

(२) पत्ते और फूल छोटे-छोटे, फूल नीलवर्ण के स्वाद में अत्यन्त तिक्त होते हैं। जलवायु, स्थान और ऋतु-भेदसे इसके स्वाद, रंग और प्रकृतिमें भेद उत्पन्न होता है। कभी-कभी ग्रीष्म ऋतु में इसमें कुछ कडुआहट अधिक उत्पन्न हो जाती है। उस समय यह कुछ उष्ण हो जाती है जिससे शीतल वीर्य का पूर्ण प्रकाश नहीं होता। इनमें बागी को 'कासनी' और जंगली (बर्री) को 'तरख़श्कूक' कहते हैं।

उपयुक्त अंग—इस पौधे की जड़, डंटल, फूल, पत्र, बीज सब औषधके काम में आते हैं। इसके बीज छोटे-छोटे खाकस्तरी सफेद रंगके, वजन में हलके और स्वाद में तिक्त (वा फीका कुस्वाद) होते हैं। कालाई लिये मोटे और भारी बीज उत्तम समझे जाते हैं। जड़ गोपुच्छाकार (गावदुमी), गुदार, किसी प्रकार सशाख लंबाई की एक बुरीदार, बाहर से हलकी भूरी और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भीतर से सफेद होती है। इसके ऊपर की त्वचा पतली होती है। स्वाद फीका कुछ तिक्त एवं लबाबदार होता है।

इतिहास—गमलों में लगाई जानेवाली वनस्तपति की भांति कासनी का व्यवहार अत्यन्त प्राचीन कालसे होता आ रहा है। पुराकालीन मिश्र, यूनान तथा रोम निवासियों को यह ज्ञात थी। यूनानी वैद्य सावफरिस्तुस (Theophrastus) ने किखोरी और किखोरियोन नाम से इसका उल्लेख किया है। दीलकूरीदूस (Dioscorides) इसके इन दो भेदों का उल्लेख करते हैं—(१) वन्य और (२) कृषिकृति वा आरोपित। इनके मतसे प्रथमको 'किखोरियोन' और द्वितीय को 'सेरिस' कहते हैं। वह इन दोनों को संग्राही, शीतल तथा दीपन (Stomachic) लिखते हैं। शीतल गुण के कारण प्रादाहिक रोगों में इसके बाह्य प्रयोगका भी वे उल्लेख करते हैं। रोमनिवासी इसके पौधे को इन्तुबस (Intnbus) वा इन्तुबम (Intudum) कहते थे। इसके जंगली पौधे को प्लाइनी ने लिकोरिअम् (bichorium) क्रेस्टैन (bhreston) उपयोगी), पनक्रेशन (Paucration) सर्वशक्तिसम्पन्न और अबूबया (Ambrebaia) इन नामों से अभिधानित किया है। कासनी के बीज (Endive seeds) रोम में इर्रेटिकम् (Ervaticum) तथा अंबूबया (Ambubaia) वा अंबूबिया (Ambubeia) नाम से बिकते थे और उनमें प्रेमको दृढ़ बनाये रखने का अनुमान किया जाता था। उन सीरियन (Syrien नर्तकी कन्याओं को भी जिन्हें क्रेइअस मन्लिअस bneius Manlus सर्व प्रथम रोम ले आया उनके मनोहर सौन्दर्यके कारण उसी प्रकार अंबूबया (कासनी बीज) कहते थे, जिस प्रकार भारतवर्ष में भी ऐसे व्यक्तिको प्रायः इलायचीदाना कहने का प्रचलन है। इन दोनों का कारण और अभिप्राय एक है। अंबूबया यद्यपि सीरिअन भाषाका शब्द है, तथापि इसके दोनों खण्ड इन अर्थोंमें प्राचीन फारसी में मिलते हैं; जैसे—अंबूऽ=सुगंधि वा सौरभ, बया=पूर्ण वा मोहक। जंगली कासनी (Wild Endive) को फारसी में 'तरख़स्कून" कहते हैं। इब्नसीना ने इसी नामसे उसका उल्लेख किया है। ऐचीसन (Aitchison) ने खुरासानमें इसे सर्वत्र सामान्यतः स्वयंभू रूपमें तथा उद्यानों तथा गमलों में उक्त नाम (कासनी) से आरोपित रूप में भी, पाया। जर्मन निवासी जंगली कासनीको वेगेवार्टे (Wegeworte = मार्गरक्षक), वेगेलांख्टे (Wegeleuchte = मार्गदीप), सोन्मेन क्रांट (Sonnenkraut = सूर्यक्षुप) और वर फ्लुख्टे जंग्फर (Verflnchte jungfer= अप्रसन्न युवती कन्या) प्रभृति नामों से अभिधानित करते हैं। इसके सम्बन्ध में यह आख्यायिका प्रसिद्ध है कि यह वनस्पति प्रारम्भ में एक सुन्दर राजकुमारी थी, जो अपने पतिदेव वा प्रेमी के त्याग देनेपर अपनी इच्छा से उक्त वृक्ष रूप में परिणत हो गई। यह आख्यायिका ठीक ऐसी ही है, जैसी भारतवर्ष में तुलसी की है।

रासायनिक संगठन—बीजों में एक प्रकारका तेल (Bland oil) होता है। जलाई हुई कासनीमें शर्करा, स्वतन्त्र निष्कर्ष (Free extractires), काष्ठोज (bellulose), भस्म, वसा और नत्रजनीय पदार्थ आदि होते हैं। जड़ में नत्रेत और सल्फेट आफ पोटाश, लवाब, कतिपय तिक्त सत्वादि और इन्यूलीन (Enulin ३६ % होते हैं। फूल में एक प्रकार का वर्णरहित क्षार विलेय, उष्णजल विलेय एवं सुरासार स्फटिकीय ग्ल्यूकोसाइड होता है।

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुलहठी

(लेखकः—श्रीदामोदर प्रसाद शर्म्मा "आयुर्वेद भिषक्" "चुरू निवासी"

यह एक बहुत ही उपयोगी औषधि है। इसकी वेल (लता) भारतवर्षमें कई जगह होती है। यह दक्षिण यूरोप में भी होती है। इसके उगने के लिये पहाड़ी और तर जमीन तथा गरम हवा की आवश्यकता है। ये दो जाति की है। इसका क्षुप छोटा और फैलने वाला होता है जिसकी ऊँचाई दो हाथ की होती है। सतारा जिले में माहूली के पहाड़पर यह पेड़ बहुत है। यह गर्मी में सूख जाता है, यह मीठी होती है। विलायतवाले इसकी जड़ का अर्क निकाल कर लम्बी लम्बी सलाई या बत्तियां बना कर भारत भेजते हैं। जिनको हम बड़े शौक से बर्तते हैं। परन्तु बड़े दुःख की बात है कि भारत वर्ष में मुलहठी बहुत उत्पन्न होने पर भी भारतीयों का ध्यान इसका अर्क निकालने की ओर नहीं जाता।

नाम :— संस्कृत में मधुक, यष्टीमधु, यष्टीमधुक, क्लीतनक, क्लीतक, यष्टिका, मधुयष्टिक आदि कहते हैं, तथा—गुजराती में जेठीमधु, हिन्दी में मुलहठी, बंगला में—यष्टीमधु कहते हैं।

गुणः—यह शीतल, भारी, नेत्रों को हितकारी, बल वर्ण को उत्तम करनेवाली, स्निग्ध, वीर्यवर्द्धक, केशों और स्वर के लिये हितकारी है। पित्त, वात, रुधिर विकार, व्रण, शोथ, विष, वमन, तृषा, क्षय को नष्ट करती है। पानी और जमीन में होनेवाली जाति की यष्टी का, मधुर, रुचिकारी, बलकारक, गुरु, रक्तपित्त नाशक, व्रणशोधक, सूजन, विष, वातरक्त ग्लानि, रक्तदोष, एवं वातपित्त नाशक है।

औषध प्रयोगः—मुलहठी का सत निकालने की क्रिया—चार पांच वर्ष से कम उम्र की मुलहठी सत निकालने के योग्य नहीं होती। १०० पौण्ड मुलहठी में से १६ पौंड सत निकलता है। मुलहठी की जड़के २-४ अंगुल लम्बे टुकड़े कर पानी से अच्छी तरह धो फिर कूटकूटकर बड़े बरतन में आग पर चढ़ा देना चाहिये और २४ घन्टे तक मन्दाग्नि पर रखना, फिर स्क्र अर्थात् पेचमें दबाकर रस निकलना, इस तरह उसको दो बार आग पर पकाना चाहिये और रस निकाल लेवे। इसको छान कर आग पर चढ़ाना चाहिये और ऊपर से हिलाते रहें। जब गाढ़ा हो जावे तब उतार लेना चाहिये। इसको सांचे में डाल कर लम्बी लम्बी सोटें कर लेवे। यही सत है और इस प्रकार तैयार हो जाता है। मुलहठी का प्रयोग भी कई रोगों पर लाभप्रद सिद्ध हुआ है जैसेः—

१ खांसीपर—इसका टुकड़ा मुंह में दाढ़ के नीचे रखने में खांसी मिट जाती है।

२ तृषाशमन के लिये :—मुलहठी की जड़ डाढ़ के नीचे रखकर रस निगलना अथवा इसका क्वाथ पीना चाहिये।

४ ओकाई परः—मुलहठी का चूर्ण शहद में देने अच्छा फायदा करता है।

५ वमनपरः—इसके काढ़े में ३ माशे राईका चूर्ण डालकर देने से वमन शान्त होती है और विष दोष, अजीर्ण तथा कफ शमन होता है।

६ वीर्य वृद्धि और बल प्राप्ति परः—मुलहठी का चूर्ण घी और शहद में मिलाकर देना चाहिये और दूध पीना चाहिये।

७ मुंह में छाले पड़ने परः—रातको मिश्री कवाव चीनी डाढ़ के नीचे रखना और सवेरे मुलहठी का क्वाथ मिश्री घी डालकर पीनेसे सारे छाले एक दम ठीक हो जाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८ पित्त प्रदर परः—मुलहठी १ तोला पीस कर चावलोंके धोवन में कल्क करना और शक्कर ४ तोला डालकर पीना चाहिये।

९ उरःक्षत क्षयपरः—मुलहठी और खिरेंटी की जड़का काथ पीपर और वंशलोचन डालकर लेना चाहिये।

१० बच्चों के त्वचा बिकार परः—गाय का मक्खन कुछ गरम करके अर्थात् पिघलाकर उसमें मुलहठी का सत पीस ले थोड़ा सफेद कत्था डालकर घोट कर लेप करे।

११ गरमी से छातीमें कफ सूख गया हो उसपर—मुलहठी काथ मिश्री मिलाकर दें।

१२ अपस्मार परः—पेठेके गुदे में मुलहठी घिस कर देवे।

१३ गलगंड परः—मुलहठी का सत स्त्री के दूधमें पिलाना लाभप्रद है।

१४ मूत्रकृच्छ्र परः—मुलहठी चूर्ण दूध में पिलाना लाभप्रद है।

१५ हृद्रोग परः—मुलहठी और कुटकी गरम पानी में देना अच्छा है।

१६ हैजे में :—मुलहटी का काथ देना चाहिये।

१७ रक्तजनितवान्तिपरः—मुलहठी और सफेद चन्दन दूध में पीवे।

१८ स्वरभंगपरः—मुलहठी का चूर्ण घी शक्कर में देना लाभप्रद है।

भारत की सरल चिकित्सा

लेखकः—वैद्यराज पं० परशुराम जोशी अध्यक्षः—श्री महावीर औषधालय भीलवाड़ा

अतिसारः—(१) इस बगोल की भूस्सी दिन में ३ वक्त ४-४ माशा गाय के दही में दें।

(२) सौफ, विल्वफल, इन्द्रजौ मरोड़फली समान भागका चूर्ण दिनमें ३ वक्त ३-३ माशा छाछके साथ दें।

(३) नागकेसर, सौफ, इसवगोलकी भूस्सी, रूमी मस्तगी, राल, सब समान का चूर्ण दिन में ३ वक्त २-२ माशा ताजी छाछ के साथ या अनार के रस के साथ दें।

(४) सौंफ, हरड़ काली, समान भाग लेकर भून ले पश्चात् वारीक चूर्ण कर ३-३ माशा की मात्रा दिन में ३ वक्त दें।

अतिसार नाशक शास्त्रीय प्रसिद्ध औषधियांः—

गंगाधर चूर्ण, लवण भास्कर चूर्ण, हिंग्वाष्टक चूर्ण, लशनादि वटी, कर्पूर वटी, चित्रक वटी, लाई चूर्ण, कुटजारिष्ट, अहिफेनासव, अर्क सौफ, अवस्थानुसार दी जा सकती हैं।

अजीर्णः—(१) चित्रक, सेंधा नमक, काली मिरच, जीरा ताजे मट्ठे में मिलाकर पिलावें।

(२) अद्रक का रस १½ माशा नीम्बू का रस ३ माशा जीरा १ माशा २॥ तोला पानी में डाल कर पिलावें।

(३) नारङ्गी का रस ग्लास में पीपल, जीरा, सेंधा नमक मिश्रण कर पिलावें।

(४) नीम्बु का रस निचोड़ कर उसमें जरा सा सेंधा नमक मिश्रण कर पिलावें।

अजीर्ण नाशक शास्त्रीय प्रसिद्ध प्रयोग

शान्ति वर्धक चूर्ण, अग्नि संदीपन चूर्ण, दाडिमाष्टक चूर्ण, दडिमाऽवलेह, अग्निवर्धक अवलेह, गंधक वटी, सौवर्चल पाक वटी, हिंग्वष्टक चूर्ण, लवण भास्कर चूर्ण हितकर है।

अर्धावभेदक (आधा शिर दुखना) (१) ब्राह्मी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से नाक में जिस तरफ का शिर दुखता हो उस तरफ ३ बून्द सरसों का तैल डाले जोर से ऊपर श्वास के साथ खींचें।

(२) केसर को घी में खरल कर गरम कर नास लें।

(३) पुरानी रूई को जलाकर धूवाँ सूंघे।

(४) पुरातन गुड़ऽ-कपूर १ तोला कूट पीस कर मटर प्रमाण गोली बना लें। सूरज निकलने से पहले ताजा पानी के साथ ४ गोली खिला दें।

(५) शिर पर याने पीड़ित स्थान पर दाल चीनी, सोंठ, लौंग, अजवायन, कपूर को समान पानी में घोल कर लेप करें।

(६) अजवायन की पोटली गरम कर पीड़ित स्थान पर सेके एवं सूंघे।

पीड़ित स्थान पर लौंग का तैल या दालचीनी का तैल लगावें।

(८) खाली पेट सूर्योदय होने से पहले दही चावल खिलावें।

आफराः—(१) अजवायन १ माशा काला नमक ३ रत्ती भूनी हींग २ रत्ती गर्म पानी में घोल कर पिलावें।

(२) दस्त की कब्ज हो तो पञ्चसकार चूर्ण ४ माशा देकर उदर साफ कर दें।

(३) पेट पर एरण्ड तैल मालिश कर सेंक दें।

(४) नवसादर पुष्प १ तोला, भूनी हींग १ तोला शुद्ध कुचिला घृत कुमारी के स्वरस में घोट कर मटर प्रमाण वटी बनावें १-१ गोली गर्म पानी के साथ ३-३ घण्टे से दें।

(५) खाने का सोड़ा १½ माशा ३-भर पानी में घोले १ नीम्बू का रस निचोड़ के तुरन्त पिला दें।

आध्यमान (आफरा) में शास्त्रीय औषधियांः—

हिंग्वादि वटी, चित्रकादि वटी, शंख वटी, लशुनादि वटी, हिंग्वष्टक चूर्ण, शिवाक्षार पाचन अति हितकर है।

तुलसी का उपयोग

पं० ललिता प्रसाद पांथरी

तुलसी का पौधा समग्र भारतवर्ष में प्रसिद्ध और सभी हिन्दू समाज के घरों में पाया जाता है अपितु विशेष प्रकार से लोग इसको गुणों को नहीं जानते बड़ी बड़ी धर्म शास्त्र की पुस्तकों और पुराणों में तुलसी के सम्बन्ध में इस प्रकार लिखा गया है कि जिस घर के सामने अथवा आंगन में तुलसी का पेड़ हो वह घर देव स्थान के समान है यह पौधा इतना पवित्र है कि उस घर में यमदूत तथा दूसरी प्राणघातक व्याधियां नहीं आ पाती जिस घर में तुलसी हो वे लोग अधिकांश अकाल मृत्यु के पञ्जे में नहीं आते।

तुलसी दो प्रकार की होती है सफेद और काली

तुलसी सुरमा ग्राम्या-सुलभा बहुमञ्जरी।
अपेत राक्षसी गौरी-शूलघ्नी देव दुन्दुभी॥
तुलसी कटुकातिक्ता-हृद्योष्णा दाहपित्तकृत्।
दीपनी कुष्ठ कृच्छास्र-पार्श्वार्तिकफ वातजित्॥
शुक्ला कृष्णा च तुलसी-गुणै स्तुल्या प्रकीर्तिता।

अर्थात् तुलसी के नाम सुरमा, ग्राम्पा, सुलभा, बहुमञ्जरी- अपेत, राक्षसी, गौरी, शूलघ्नी, दुन्दुभी, श्यामा, तीव्रा, गन्धहारणी, वल्लभा, विष्णु, पञ्चपुष्पा, वैष्णवी,

तुलसी, चरपरी, कड़र्क, हृदय को हितकारी, गरम दाह कारक पित्तजनक, दीपन, पाचन, तथा कुष्ठ, मूत्रकृच्छ्र, रक्तविकार, पार्श्व पीड़ा कफ और वात को नाश करने वाली है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्यान्य रोगों पर प्रयोग—बुखार, तुलसी, १तोला अडूसा (वासा) ३ तोला इनको पीस चने के बराबर गोली बनावे सहद से खाय तो ३ दिन में ज्वर जाता रहे; मलेरिया हो तो ऊपर-लिखी औषधि दूनी दिन को ३ टाइम ७ दिन सेवन करें और तुलसी के स्वरस का सारे शरीर में मालिस करें।

तुलसीके पत्तों की चाय कालीमिर्च के साथ खाने से पसीना आकर ज्वर उतर जाता है, इसके साथ चिरायता भी फायदा करता है शरीर में शान्ति आती है भूक को बढ़ाता है।

खाँसी—तुलसी की हरी हरी टहनी लेकर पीसकर सहद मिलाकर धीरे धीरे पीने से या चाटने से खाँसी में फायदा होता है।

सूखी खाँसी हो तो—तुलसी के बीज, पीपली, सोंठ जायफल, समभागले चूर्ण बनावे सहद के साथ चाटे तो खाँसी दूर हो।

वायु—तुलसी ६ तोला वायविडिंग, भांगरा ४।४ तोला, मालकांगनी, की जड़ निर्गुण्डी, पीपली ३।३ तो० वच, नीलकण्ठी १।१ तोला सबको कूट छान चूर्ण करे ४ माशे के बरावर दूध से खाय तो ७ प्रकार का वायु रोग दूर हों, अर्धांग वायु हो तो तुलसी के काढे में सहद मिला दवा खाने से लाभ हो और उस तरफ तुलसी के काढ़े का लेप करें।

अन्न में अरुचि हो तो तुलसी का पञ्चांग ४ तोला सोंठ, कालिमिर्च जीरा सफेद, अजवायन काला नमक २॥ तोला ले चूर्ण बनावे सायं-प्रातः गुनगुने पानीसे खाय तो अपची दूर हो।

कोढ़ रोग—कुष्ठ पर भी तुलसी अत्यन्त लाभ प्रद है, तुलसी अग्निमन्थ, (अरणी) वांस, कलिहारी समभाग रोज गौमूत्र से खाया जाय तो अच्छा रहे तुलसी रस को वदन पर लगावे ब्रह्मचर्य से रहकर नमक न खाय तो निश्चय ही कुष्ठ आराम हो।

नेत्र—आँख दुखती हो तो तुलसी स्वरस रोज आँख में डाले ३।४ दिन में आराम हो आँख में फूला हो तो तुलसी स्वरस ४ माशा सहद ४ माशा घी सबको निस्य प्रति आँख में डालै फूला आराम हो, शोथ हो तो तुलसी के पत्ते और गोबर का लेप करें।

प्लीहा—तुलसी के पत्तों का काढ़ा खांड मिलाकर पीने से यकृत दोष दूर हो प्लीहा की वृद्धि रुके।

उदर जन्य वायु रोग पर—पेट में (मेदे में) कहीं भी दर्द हो या कोई शिकायत हो या बादी से पेट फूल गया हो तो उसको तुलसी काढ़ा नमक से दें।

मूत्र कृच्छ—तुलसी, अशगन्ध, इन्द्रयब, गोक्षुर ४।४ तोला सालम मिश्री, सेमर मुसली, २।२ तोला सबको कूट चूर्ण बनावे मखन से खाय तो इन्द्री के सब दोष दूर हो।

रक्तविकार—तुलसी, मिश्री, इलायची, वंशलोचन अतीस, ब्राह्मी, खरेंटी सब मिलाकर चूर्ण बनावे गाय के कच्चे दूध से खाय तो अथवा सहद मिलाकर वासा स्वरस से पान करे।

पार्श्वपीड़ा—तुलसी का कल्क बना गरम कर पीड़ा वाले स्थान पर लगावे तो या सहद मिलाने से पसली का दर्द दूर होता है।

कर्णशूल—तुलसी का रस गरम कर कान में डाले से कान फौरन आराम हो कान बहना कान के अन्दर छोटी छोटी ओभि आराम हों कान में शोथ हो तो तुलसी के पते और गोबर इनका लेप करें।

रतौंधी—तुलसी का रस अनार के पत्तों का रस सेंधा नमक मिलाकर नाक में डालने से रतौंधी दूर होकर दृष्टि भी खुल जाती है।

दांत—तुलसी बज्रदन्ती पीसकर गोली बनावें दांत के नीचे रखे दांत शूल दूर हो दांत हिलते हों तो मजबूत करें दृढ़ हो,

शिशुरोग पर तुलसी पत्तों का शरबत आमगि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलाकर ४ माशे की मात्रा बच्चों को चटवावे तो खांसी, दस्त उलटी पेट का आफ़रा अपची कृमि इत्यादि रोग दूर हों।

गर्भ निरोध—रजोधर्म के समय तुलसी के पत्तों का काढ़ा गुड़ मिलाकर ४ दिन शाम सुबह खाय तो उसको गर्भ न रहे।

तुलसी का रस सहद मिला सेंधा नमक से खाने से छाती का कफ शान्त हो।

मलेरिया—मच्छरों के आघात से होता है जिस स्थान में मच्छरों की ज्यादा उत्पत्ति हो वहां मलेरिया ज्यादा होता है तुलसी का सेवन करने से मलेरिया का अन्त हो जाता है इसका रस सरसों का तेल मिलाकर लेप करने से मच्छर पास नहीं आते रात को तुलसी पौधों के समीप सोने से मच्छर नहीं आते तुलसी नित्य सेवन करने से मल साफ रहता है और पेट की कृमि मर जाती हैं।

देवी के आंसुओं से पैदा हुआ फल—आंवला

श्रीरामेश वेदी

भगवती और लक्ष्मी एक बार तीर्थयात्रा को निकलीं। भगवती ने लक्ष्मी से कहा—देवि! आज मैं स्वकल्पित किसी नवीन द्रव्यसे हरि की पूजा करना चाहती हूं। लक्ष्मी ने उत्तर दिया कि त्रिलोचन को भी किसी नये पदार्थ से पूजने की मेरी इच्छा है। फिर दोनों की आंखों से निर्मल अश्रुजल भूमिपर गिरा। उसीसे माघ मास के शुक्लपक्ष की एकादशी को आंवले की उत्पत्ति हुई। संस्कृत में इसे आमलक कहते हैं जिसका अर्थ है। निर्मल पानी से उत्पन्न। इस वृक्ष को देखकर देव और ऋषि आनन्दोल्लसित हो उठे। तुलसी और बिल्व के समान ही यह पवित्र माना जाने लगा इसके पत्तों से शिव और विष्णु दोनों की पूजा होने लगी। माघ मास की एकादशी को इसकी उत्पत्ति होने से उस दिन विशेष रूप से आंवले के द्वारा पूजा करने से देव प्रसन्न होते हैं।

माघ में विशेष महत्व क्यों?

पुराण की इस कथा में माघ मास के साथ आंवले का विशेष सम्बन्ध स्थापित किया है। मैंने उस पर आयुर्वेदिक दृष्टि से विचार किया और माघ मास में आंवले के महत्व को जानना चाहा। करीब नवम्बर में आंवला बाज़ार में बिकने आ जाता है। प्रायः मार्च के अन्त तक बिकता रहता है उसके बन्द ताजे आंवले का मौसम समाप्त हो जाता है। मौसम के अन्तिम दिनों के आंवले को चेती आंवला कहते हैं। मौसम के आरम्भकाल नवम्बर में जो आंवला बिकता है वह रस और वीर्य से सम्यक्तया भरपूर नहीं होता। माघ में जाकर यह पकने लगता है और आधे चैत्र तक इसी अवस्था में रहता है। यही काल है जिसमें आंवले के अन्दर रसायन और शक्ति देने वाले गुणों का बाहुल्य होता है। माघ मास में आंवले के अन्दर गुणों का परिपाक होने लगता है। हमारी सम्मत्ति में इसीलिये पुराणकार ने इस मास के साथ आंवले के विशेष महत्व का प्रतिपादन किया है। वृक्ष के प्रति पूज्य भाव होने से लोग इसको भलीभांति सींचते रहेंगे जिससे फलों के लिये आवश्यक पोषण उन्हें मिलता रहे।

सामान्य उपयोग

जंगलों में आंवलों के वृक्ष काट कर लकड़ी ले ली जाती है। जड़ से इसकी फिर नई शाखायें निकल आती हैं, बड़ा होने पर इन्हें फिर काट लिया जाता है। इस प्रकार ईंधन के लिए उसमें से पर्याप्त लकड़ी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निकल आती है। लकड़ी की बल्लियां अच्छी बनती हैं। कृषिके ओज़ार और उपस्कर (फ़र्निचर) बनाने के लिये यह उपयोगी है। इमारती कामों के लिए यह घटिया लकड़ी है। सुखाते हुए मुड़ जाती है और इसमें दरारें पड़ जाती हैं। पानी में यह टिकाऊ होती है। इसलिए कुएं सम्बन्धी प्रयोजनों में काम लाई जा सकती है। लकड़ी की छोटी कतरने और छोटी शाखाएं गदले पानी में डालने से पानी साफ हो जाता है। इसलिए, कूप वृत्तों को बनानेमें इसका उपयोग बहुत किया जाता है।

टेनीन के उत्पादन के लिए वृक्ष का विशेष महत्व कहा जाता है। परन्तु लकड़ी की दृष्टि से यह निश्चित रूप से कम मांगवाला वृक्ष है। रंगने और कमाने के लिये छालकी मांग बढ़ सकता है। वृक्ष से अधिक लाभ होने की विधि यह है कि कुछ बड़ा होने पर वृक्ष को काट दिया जाय। तब जड़ से नई शाखाएं निकलेंगी। उनसे छाल और ईंधन दोनों प्राप्त किया जाय।

फल, पत्ते और छाल रूप में टैनीन होने से ये भारत के विभिन्न भागों में चर्म कर्म के लिए प्रायः हरड़ आदि किसी पक्के टैनीन पदार्थ के साथ मिलाकर प्रयुक्त होते हैं। बंगाल के चमार कमाने के लिए पत्तों को बहुत अच्छा समझते हैं। त्रावन्कोर में छाल चमड़ा कमाने के काम आती है।

कपड़ा रंगने में भी आंवले के विविध भागों का उपयोग होता है। फलों से प्राप्त रंग काला या भूरा होता है। हौंक-कौंग में चीनी लोग पत्तों को रंगने के लिए इस्तेमाल करते हैं। जावा में इनसे चटाइयां रंगी जाती हैं।

खाद्योज सी का प्रचुर स्रोत

आंवले में जितनी अधिक मात्रा में खाद्योज (विटामीन) सी रहता है उतना सम्भवतः किसी अन्य फल में नहीं ताजे आंवले के रस में नारंगी के रस की अपेक्षा बीसगुना अधिक सी रहता है। एक आंवले में डेढ़ दो सन्तरों के बराबर सी रहता है प्रति सौ ग्राम आंवले में छह सौ मिलिग्राम खाद्योज सी रहता है।

फलों और सब्जियों को गरम करने, पकाने या सुखाने से उनके खाद्योज का अधिकांश या प्रायः सम्पूर्ण अंश नष्ट हो जाता है। परन्तु आंवला इस विषय का अपवाद है। पकाने पर भी इसका सब खाद्योज नष्ट नहीं होता। इसके तीन कारण हैं। एक तो आंवले में इतना खाद्योज सी रहता है कि कुछ नष्ट होने पर भी काफी खाद्योज बचा रह जाता है। दूसरे, आंवले में खटास होता है और खटास खाद्योज सी की बहुत कुछ रक्षा करती है, उसको नष्ट नहीं होने देती। तीसरे, आंवले में कुछ अन्य पदार्थ भी हैं जो खाद्योज सी की रक्षा करते हैं। इसीलिए आंवले के मुरब्बे में भी कुछ खाद्योज सी बच रहता है। आंवले को सुखा कर रखने से भी बहुत कुछ सी बचा रहता है।

सुखाने की अच्छी विधि

सुखाने की एक रीति यह है कि इसे हलके हाथ कूट कर छोटे-छोटे टुकड़ों में कर लिया जाय और धूप में डालकर झटपट सुखा लिया जाय। इस प्रकार बनावे चूर्ण में प्रतिग्राम दस से सोलह मिलिग्राम खाद्योज सी रहता है। विशेष रीतियों से सुखाने पर सी की और अधिक मात्रा सुरक्षित रह जाती है। चूर्ण के रखे रहने पर धीरे-धीरे खाद्योज नष्ट होता रहता है, विशेषकर चूर्ण नमी वाले या गरम स्थान में पड़ा रहे। परन्तु फिर भी साधारण रीति से रखा रहने पर आंवला चूर्ण महीनों तक उपयोगी सिद्ध होता है चूर्ण को यथा सम्भव सूखे और ठण्ढे स्थान में रखना चाहिए।

आंवले को रखने की एक और विधि यह है कि इसमें नमक मिला दिया जाय। इसके लिए आंवलों को पहले खौलते पानी में छह सात मिनिट तक डुबो देना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिए। इस रीति से आंवले का खाद्योज सी बहुत कुछ सुरक्षित रह जाता है। जब आंवलों को बहुत देर तक उबाला जाता है फिर घी या तेल में तला जाता है और नमक-मसाला डाला जाता है तो अधिकांश खाद्योज नष्ट हो जाता है।

युद्धकाल का आवश्यक पदार्थ

आंवला चूर्ण से बनी टिकियें फौजी सिपाहियों को दी जाती है। १६१४-१८ की लड़ाई में मेसोपोटामिया तथा अन्य क्षेत्रों में, जहां हरी साग सब्जियों की कमी थी या जहां वे मिल ही नहीं सकती थी, अनेक सिपाहियों को स्कर्वी रोग हो गया था। गत समर में आंवला चूर्ण की टिकियों के प्रयोग के कारण कहीं भी स्कर्वी न हो पाया। और इस प्रकार सैनिकों का स्वास्थ्य सुरक्षित रहा। सन् १६४० में जब हिसार के दुर्भिक्ष से आक्रान्त क्षेत्र में स्कर्वी प्रचण्ड रूप धारण कर रहा था। तब ताजा आंवला इस रोग का अचूक इलाज सिद्ध हुआ था।

भोजन सम्बन्धी उपयोगिता

भारत सरकार की रिपोर्ट में आंवले की भोजन सम्बन्धी उपयोगिता को बताते हुए इसमें निम्नलिखित द्रव्यों का संघटन बताया गया है—

प्रोटीन	०-५	प्रतिशतक
वसा	०-१	प्रतिशतक
खनिज पदार्थ	०-७	प्रतिशतक
रेशे	३-४	प्रतिशतक
कर्बोदित (कार्बोहाइड्रेट्स)	१४-१	प्रतिशतक
चूना (कैल्शियम)	०-०५	प्रतिशतक
प्रस्फुरक	०-०२	प्रतिशतक
जलीयांश	८१-२	प्रतिशतक

प्रति सौ ग्राम में लोहा १-२ मिलिग्राम होता है। प्रति सौ ग्राम में उष्मा उत्पन्न करने की क्षमता उनसत है। प्रति औंस में उष्मा इकाइयां सत्रह हैं।

———

सर्पगन्धा

[चमत्कारी जड़ी पर नई पुस्तिका]

लेखक—श्रीरामेश बेदी

रक्त का ऊँचा दबाव (हाई ब्लड प्रेशर) नींद का उचाट हो जाना, विचारों में खोये-खोये रहना, मानसिक विलोम, पागलपन—और न जाने ऐसे कितने ही रोग हैं जो आज के संघर्षमय जीवन ने मानव जाति को दिये हैं। भारत, योरोप और अमेरिका में सभ्यता के इन रोगों के विरुद्ध जो लड़ाई जारी थी उसमें चिकित्सकों को सफलता प्राप्त हो गई है। इस सफलता का रहस्य वही चमत्कारी जड़ी है जिसे भारतमें कई सदियों से प्रयोग में लाया जा रहा है। इस ख्याति प्राप्त जड़ी 'सर्पगन्धा' के गुण और विस्तृत उपयोगों को जानने के लिये श्री बेदी की यह नई पुस्तिका आज ही मंगाइये। मनी-आर्डर से बारह आने भेजने पर रजिस्ट्री से पुस्तिका भेज दी जाती है। मिलने का पता—

हिमालय हर्बल इंस्टिट्यूट, गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुभूत—योग

वासकाद्य मधु

वासा (सिंहास्य, अडूसा, अटरूस, रूसा) की पके पत्तों वाली टहनियें मय पत्तों और पुष्पों के पांच सेर लेकर बारीक काट लो। बाद १ छटांक मुलहठी, १। सेर बहेड़े की छाल (फल की बुकली), १ छटांक हल्दी, १ छटांक पीपली, १ छटांक काकड़ा सिंगी लम्बो वाली, १ छटांक पोहकरमूल असली, १ छटांक कानपुरी पपड़िया कत्था, १ छटांक अजवाईन, १ छटांक सोंठ, १ छटांक मरिच, १ पाव गुडुची ताजी, १ छटांक पित्त पापड़ा (मध्यप्रदेशीय) केला बीज १ छटांक सबको कूटकर अडूसा के पत्तों साथ एक बड़े बरतन (कलईदार) गंज में डालो, सोलह सेर पानी में पकालो २ सेर शेष रहने पर छानो, ३ सेर शक्कर डाल गाढ़ी चासनी करो (जलेबी की चासनी से कुछ ही गाढ़ी) उतार कर असली शहद १ सेर डालो और चलाकर मिला दो। २-२ औंस की शीशी में भर कर लेबल लगा कार्ड बोर्ड बक्समें सुरक्षित रख दें।

गुण—पुरानी से पुरानी वातज, पित्तज, कफज, द्वन्दज खासी, श्वास रोग, क्षय (फुप्फुसीय) की प्रथमा और द्वितीय अवस्था, फुप्फुसीय जल संचय (प्युरसी) न्यूमोनिया (फुप्फुसीय सन्निपात—श्वसनक) श्वास नलिका प्रदाह, क्षयज ज्वर, मन्थर ज्वर में रहनेवाली को पूर्ण विकृत हुई खांसी पर अचूक और आशुगुण-कारी औषधि है।

मात्रा—पूर्ण वयस्क को ३-३ मासे दिन-रात में, ४-६ बार, शिशु को १ बूंद से ४-६ बूंद तक, बड़े बच्चे को १-१।। मासा, दिन मर्यादा १४-२१ दिन कठिन दुसाध्य रोगों में १।।-२-३ मासा तक।

आवश्य—पं० रामगोपाल मिश्र आयुर्वेदाचार्य (विटामिन गोंदिया)

(१) ग्रहणी-मरोड़—Sprue, Tenesmus:-

हरीतकी सोंठ-शतपुष्पा समान भूनकर फकी बनावे रंग कुछ कालिमा लिया हो १।१ मासा ३ बार तक्र व दाडिम पत्र व छाल के रस से दें—साथ में नागकेशर भी मिलावे :—

(२) नेत्र कनीनिका व्रण-फूला-सद्यस्क-

अम्ल लूनक ताजा ले साथ में काकजंघा मिला हथेली पर मल रोगी को धूप में लिटा आंख धूप पर कर २।३ बून्द टपकावें—बिना धूप के दिन न डाले।

(३) बच्चों के जोक पर-मरोड़ मारना-बच्चा मुड़रहा हो और उल्टी हो रही हो तो-

शु० कुचला बीज १ चावल प्रमाण घिस अकेले व कडुवी भी घिस माँ के दूध से २।३ बार चटावे—आवश्यकतानुसार चटावें।

(४) Tooth-Ache दन्त शूले :—

अपामार्ग जड़ व आडू जड़ छिपा त्रिगुण सूत से लपेट पाँच गांठ मार लावे पिठाई व धूप दे उसी ओर के कान पर बांध दे—वः अपामार्ग जड़ से दन्तुन करावे—

(५) चैत्र आदि महीनों में आँख दर्द व आवे ही नहीं—

शतावरी की जड़ की छाल निकाल अन्दर की श्वेत डोरी सी को त्रिगुणी कृत तागे से रोली और धूप कर बांध दे—१ साल कम से कम आंख न दुखे—

आयुर्वेदाचार्य S. P. निर्भीक M. A. M. S, H, M. D. चिकित्साधिकारी राजकीय (आ० यु०) चिकित्सालय नागनाथ (देहरादून)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्न

(१) ब्लड प्रेसर (रक्तचाप) का निदान क्या है।
(२) उसका लक्षण क्या है।
(३) उसकी आयुर्वेदीय महौषधि कौन-कौन सी है।
(४) यह महाव्याधि में है कि नहीं है।
(५) सर्वदा के लिये अच्छा होता है कि नहीं यदि होता है तो एलोपैथिक अथवा आयुर्वेदिक से।
(६) इसका पथ्यापथ्य क्या है।

पं० अयोध्यानाथ मिश्र आयुर्वेदाचार्य
सांठी डिस्ट्रिक्ट बोर्ड औषधालय चम्पारन।

साहित्य समीक्षा।

अनुभूति—लेखक वैद्य श्री रघुनन्दन मिश्र आयुर्वेदाचार्य्य प्रकाशक—"जयश्री" आयुर्वेद विभाग, अपर बाजार पो० रांची (बिहार) पृष्ठ सं० १६६ मूल्य २) रु०

प्रस्तुत पुस्तक को विद्वान् लेखक ने लिखकर आयुर्वेद प्रेमी जनता का बड़ा उपकार किया है। आलोच्य पुस्तक में अति सरल, प्रायः सर्वत्र प्राप्त होनेवाली औषधियों का प्रयोग संग्रह है। संग्रहीत प्रयोग सस्ते एवं रोग नाश करने में समर्थ हैं। कुछ प्रयोग तो शास्त्रीय, तथा कुछ स्वानुभूत पेटेण्ट हैं। साधारण हिन्दी पढ़ा लिखा व्यक्ति भी इस पुस्तक का मनन कर समय पर रोग निवारण करने में समर्थ हो सकता है। स्वास्थ्य सम्बन्धी तथा औषध सम्बन्धी अनेक आवश्यक विषयों का समावेश होने के कारण पुस्तक उपयोगी है। आशा है कि जनता इस पुस्तक का प्रचार कर लेखक के उत्साह को बढ़ावे ताकि भविष्य में आयुर्वेद प्रेमी जनता की अधिकाधिक सेवा कर सकें पुस्तक का आकार देखने पर मूल्य कुछ अधिक मालूम पड़ता है।

—सम्पादक

प्राणाचार्य्य-काम विज्ञानाङ्क

इस विशेषाङ्क के सम्पादक वैद्यरत्न कविराज श्री प्रताप सिंह रसायनाचार्य्य, इन्दौर तथा वैद्यभूषण पं० रामनारायण दूबे बमोरा हैं। प्रकाशक—प्राणाचार्य्य भवन विजयगढ़ (अलीगढ़) हैं। पृष्ठ सं० [illegible] वार्षिक मूल्य ४॥=)

आयुर्वेद शास्त्र साङ्गोपाङ्ग होते हुए भी समयानुरूप हिन्दी में काम विज्ञान पर विश्लेषणात्मक रचनाएं व विकृतियां नगण्य हैं। अतः आयुर्वेद शास्त्रमें महत्वपूर्ण विज्ञान का प्रायः प्रति दिन ह्रास ही होता जा रहा है। इसे दृष्टिमें रखकर वैद्य बांकेलालजी गुप्तका यह प्रयत्न काम विज्ञान अङ्ककी कमीको पूर्ण करनेमें सार्थक हुआ है क्योंकि आधुनिक बिकनेवाले असली कोकशास्त्र प्रभृतिकी तरह यह अङ्क केवल यौवनाक्रान्त मानवों की चित्त वृत्तियोंको आकर्षित कर मुद्रार्जन करनेका साधन न होकर इस विज्ञानके प्रत्येक गूढ़ रहस्य का पूर्ण रूपसे वर्णन करने में सफल हुआ है। इस विज्ञानके जानकार स्त्री पुरुषोंका जीवन सुखमय होगा। इसका जानकार प्रमेह, नपुंसकता आदि रोगोंसे ग्रस्त होनेपर भी ललनाओंका प्रिय हो सकता है। अतएव इस अङ्ककी प्रत्येक रचना मनन योग्य होनेसे अङ्ककी पूर्ण उपादेयता प्रस्फुटित हो रही है। आशा है, पाठकगण, प्रकाशक व सम्पादकका उत्साह बढ़ाते हुए इस शास्त्रकी पूर्ण उपयोगिताका रसास्वादन करते रहेंगे।

—सम्पादक

समाचार

आचार्य नित्यानन्द अभिनन्दन ग्रन्थ

बड़ागांव, झूंझनूं (डाक से) आयुर्वेद के सतर्क प्रहरी आचार्य नित्यानन्दजी (पिलानी) की आयुर्वेदिक सेवाओं—विशेषकर वैदिककालीन आयुर्वेद के अनुसन्धान—के उपलक्ष में श्री वैष्णव आयुर्वेद शोध संस्थान की ओर से आचार्य जी का अभिनन्दन करने का निश्चय किया गया है। इस अवसर पर उनको अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट किया जायगा। "आचार्य नित्यानन्द अभिनन्दन ग्रन्थ" में आयुर्वेदीय विषयों के ठोस लेख रहेंगे। ग्रन्थ के सम्पादन की स्वीकृति वैद्यराज विश्वनाथ जोशी साहित्य व्याकरणायुर्वेदाचार्य साहित्यरत्न ने दे दी है।

आचार्य जी के अभिनन्दन सम्बन्धी समग्र कार्य को सुचारु रूप से सम्पन्न करने के लिए [illegible] संयोजकत्व में एक [illegible] बना दी गई है।

बाबाजयरामदास

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या आप शिक्षित हैं ?

हरएक शिक्षित मनुष्य यह जानता है कि शरीर को स्वस्थ रखने के लिये शुद्ध एवं प्रचुर मात्रा में खून की आवश्यकता है। खून बढ़ाने वाले द्रव्यों में अंगूर सर्व श्रेष्ठ समझा जाता है।

किन्तु हर ऋतु में, हर जगह अंगूर नहीं मिल सकते।

इस कमी को पूरा करने के लिए ताजे अंगूरों से एवं रक्त-शोधक व वर्द्धक औषधियों के योग से निर्मित "नियो-प्राप्पा" औंस उतनाही लाभ करेगा जितना की एक पौंड अंगूर।

नियो-प्राप्पा

(ताजे अंगूरों से बना हुआ)

बिड़ला लेबोरेटरीज़
कलकत्ता

यह तुरन्त लाभ क्यों करता है ?

१—इसको शहत (मधु) के योग से तैयार किया गया है। मधु ६ मिनट में रक्त के साथ मिश्रित हो जाता है। अतः यह तुरन्त दुर्बलता को हटाता है एवं रसायनका काम करता है।

२—यह ताजे अंगूरों के रस से तैयार किया गया है।

३—इसमें उन उपादानों का सम्मिश्रण किया गया है जो इसके गुणों को स्थायी रखने में पूर्ण रूपसे समर्थ हैं। यह जितना पुराना होता है इसके गुणोंमें तदनुरूप वृद्धि होती है।

हर मौसम में यह एक अद्वितीय आयुर्वेदिक "टानिक" है।

प्राप्ति स्थान :—भारतवर्ष के प्रत्येक औषधि विक्रेता से मांगिये।

व्यापारको बढ़ाने के लिये "आयुर्वेद गौरव" में विज्ञापन दीजिये :—

—: विज्ञापन का दर :—

टाइटिल का प्रथम पेज	१२५)	साधारण पेज	५०)
" द्वितीय पेज	७५)	" आधा पेज	३०)
" तृतीय पेज	७५)	" चौथाई पेज	२०)
" चतुर्थ पेज	१२०)		

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

प्रकाशचन्द्र गुप्त ६०, पाथुरिया घाट स्ट्रीट द्वारा प्रकाशित तथा जेनरल प्रिण्टिंग वर्क्स लि०,

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद का एकमात्र सर्वोत्तम मासिक पत्र

ब्रह्मचर्य्य का महत्व

मृत्युव्याधिजरानशो पीयूषं परमौषधम् ॥
ब्रह्मचर्य्यं महद्रत्नम् सत्यमेव वदाम्यहम् ॥ १ ॥

शान्तिं कान्तिं स्मृतिं ज्ञानमारोग्यं चापि सन्ततिम् ॥
य इच्छति महद्धर्म्मं ब्रह्मचर्य्यं चरेदिह ॥ २ ॥ धन्वन्तरि

भावार्थ—मृत्यु, रोग तथा बुढ़ापे का नाशक, अमृत के समान उत्तम औषध तथा उपाय ब्रह्मचर्य्य है। यह मैं सत्य ही कहता हूं ॥ १ ॥

शान्ति, तेज, स्मृति, ज्ञान, आरोग्यता और सन्तान की जो अभिलाषा रखता है उसे उत्तम धर्म ब्रह्मचर्य्य व्रत का पालन करना चाहिए।

वार्षिक मूल्य ३)
एक प्रति ।)

सम्पादक—श्री प्रकाशचन्द्र गुप्त M.Sc. सह-सम्पादक—श्री मदनगोपाल बासोतिया आयुर्वेदाचार्य्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

	विषय	लेखकका नाम	पृष्ठ
१	चिकित्स्य रोगी तथा अचिकित्स्य रोगो के लक्षण	...	
२	मनुष्य—ले० कविराज हरिकृष्ण सहगल बागीची अलाउद्दीन देहली	...	१९४
३	धनुस्तम्भ (Tetanus) की स्वानुभूत सफल चिकित्सा—ले० शिवनारायण देव पाण्डेय		१९६
४	निद्रा का महत्व—ले० श्री भागचन्द्र जैन	...	१९९
५	(ड्राइ जिञ्जिवेर) सोंठ, अदरकके चमत्कार—ले० वैद्यराज पं० परशुराम जोशी		२०१
६	अधिमन्थ Gloucoma (ग्लोकोमा)—ले० वैद्य इन्द्रभानसी भटनागर आयुर्वेदभिषक्		२०३
७	प्रतिश्याय (सर्दी-जुकाम)—ले० मधुसूदन जोशी "वैद्यविशारद"		२०६
८	आयुर्वेदिक इन्जैक्शन और वैद्य समाज—ले० डा० ओंकार शर्मा, आयुर्वेदाचार्य,		२०८
९	कासनी—ले० दलजीत सिंह वैद्य पो० चुनार यू० पी०	...	२१२
१०	आज का भयंकर रोग प्रमेह ले० केदारमल शर्मा	...	२१३
११	सम्पादक के नाम पत्र	...	२२४
१२	साहित्य समीक्षा	....	

———

'आयुर्वेद—चिकित्सक'

(जनता का व्यवहारोपयोगी, चुनिन्दा सामग्रीवाला मासिक-पत्र)

यह प्रति मास नियमित प्रकाशित होता है। प्रतिवर्ष दो-विशेषाङ्क (१ छोटा, १ बड़ा) देता है। इस वर्ष ढाई-सौ पृष्ठ के बड़े-डिमाई साइज में पुरुषरोग-चिकित्साङ्क महत्वपूर्ण विशेषाङ्क भेंट करेंगे। वार्षिक मूल्य ४॥), एक अङ्क का ।), नमूनाके लिये पांच आने भेजिये। तत्काल फलप्रद प्रयोग (चारों भाग) का मूल्य ८) पृष्ठ संख्या प्रायः ५५५, प्रयोग संख्या १ हजार से अधिक।

—वैद्य पं० चन्द्रशेखर जैन शास्त्री। लाखा भवन, पुरानी चरहाई, जबलपुर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ॐ

प्राच्यं प्रतीच्यं यत्किंचिद् आयुर्वेदात्मकं हि तत् ।
तद्गौरवो विजयते, विश्वस्मिन् व्याधिसंकरे ॥ १ ॥

नोट—१-"यदिहास्तितदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्", इति चरक वचनात् ।

आयुर्वेद-गौरव

वर्ष २ | अप्रैल १९५५ | संख्या ७

चिकित्स्य रोगी तथा अचिकित्स्य रोगी के लक्षण

निजप्रकृतिवर्णाभ्यांयुक्तः सत्वेन चक्षुषा
चिकित्स्योभिषजांरोगीवैद्यभक्तोजितेन्द्रियः ॥१॥
आयुष्मान्सत्ववान्साध्यो द्रष्यवान्मित्रवानपि ॥
चिकित्स्योभिषजारोगीवैद्यवाक्यकृदास्तिकः॥२॥

जिस रोगी की स्वाभाविक प्रकृति तथा शरीरका वर्णन न बदला हो तथा सत्वत्बल युक्त चक्षु (नेत्र) आदि इन्द्रियकी देखने आदि की शक्ति बनी हो, वैद्यका भक्त एवं जितेन्द्रिय हो, इन लक्षणों से युक्त रोगी की वैद्य चिकित्सा करे। पुनः जो रोगी-आयुष्मान् हो, बलवान् हो, साध्यरोग युक्त हो, धनवान् हो, मित्रवान् हो वैद्यके आदेशानुसार काम करनेवाला, तथा आस्तिक हो ऐसा रोगी भी चिकित्सा करने योग्य है।

चण्डः साहसिकोभीरुः कृतघ्नो व्यग्र एव च।
शोकाकुलोमुमूर्षुश्च विहीनः करणैश्च यः ॥
वैरी वैद्य विदग्धश्च श्रद्धाहीनश्च शङ्कितः ॥
भिषजामविधेयाः स्युर्नोपक्रम्या भिषग्विधाः ॥

जो रोगी अतिक्रोधी, विचारहीन, भीरु (डरपोक) वैद्य के उपकार को न माननेवाला व्याकुल, तथा नेत्रादि इन्द्रिय शक्ति हीन, शत्रु, वैद्य के साथ धूर्तता करनेवाला, स्वयं वैद्य बनने वाला इन लक्षणों से युक्त रोगी की चिकित्सा न करनी चाहिये।

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनुष्य

(ले० कविराज हरिकृष्ण सहगल बागीची अलाउद्दीन देहली)

मानव शरीर निर्माण, कार्बन, हाईड्रोजन' औक्सीसीजन, गंधक, कैलिशयम, फास्फोर्स, मैंगनीज़, सिलिक्न और नाईट्रोजन के मिलाप से हुआ है।

लाल कणों के कारण रक्त होता है। लाल कणों से अन्य श्वेताणु भी इसमें होते हैं। वैज्ञानिकों ने रक्त में ६० पदार्थों की खोज की है। रक्त के वर्ण विहीन द्रव को प्लाज्मा कहते हैं। रक्त की कमी होने पर इसी रक्त प्लाज़मा को स्टिन्ड वाटर के साथ शरीर में इन्जैक्ट किया जाता है। अमेरिका में प्लाज्मा को कुछ प्रोटीनों को सुखाकर इंजेक्शन लगाने से देखा गया है कि चेचक मम्पस तथा इन्फ्लूएंजा का आक्रमण नहीं होता। आज विज्ञान की उन्नति में रक्त बैंकों का बनना सम्भव कर दिया है। जीवित शरीर से रक्त लेकर उसे सुरक्षित कर लिया जाता है और कमी व शल्य कर्मकाल में इसे मानव जीवन बचाने के लिये रक्त धमनियों में चढ़ाया जाता है।

एक तरीका इलाज का नाम आटो हिमोथिरेपी है, इसमें शरीर से रक्त को निकाल कर उसे ही अन्य स्थान पर शरीर में इंजेक्ट कर दिया जाता है। श्वास रोगियों को विकोटेनिक एसिड और उसके साथ पांच से दश सीसी तक शिरा से रक्त लेकर उसके नितम्ब प्रदेश में सूचीवेध दिया जाता है यह श्वास की विशेष चिकित्सा है। यूरोप में व्रणों को भरनेके लिये रक्तमें प्रोटीन मिक्सचर प्रवेश किये जाते हैं।

रक्त की रक्ता हेमोग्लेबिन को शास्त्रमें ओज माना है और कहा है रक्त गुणों में स्निग्ध, गुरु, चल, स्वादु और सितोष्ण होता है।

विज्ञान में रक्तता की जिन ६० वस्तुओंकी खोज की है उनसे सर्जिकल अस्पंज बनाये गये हैं, जो स्वतः ही रक्त में विलीन हो जाते हैं। इससे एक ऐसी औषधि तैयार की गई है जो खसरा को रोकती है। बच्चों की काली खांसी की दवा भी विशेष इससे बनी है। दुष्ट व्रण नाशक झिल्ली का निर्माण भी रक्त से हुआ है।

रक्त से बनी फाइब्रोजन नामक औषध प्रसूता स्त्रियों के अधिक रक्तस्राव द्वारा होनेवाली रक्तकी कमी को पूरा करती है। इसी अभिप्राय से बनी दूसरी औषध का नाम प्लाज्मिनोजन है यह औषध डूबते हुए दिलको बचाती है। रक्तकी चीजोंसे एक प्रदा तैयार हुआ है, जिसे खोपरी के ओप्रेशन के बाद दिमाग पर चढ़ा देते हैं, धीरे २ यह प्रदा दिमाग का ही एक भाग बन जाता है।

स्त्री के मासिक स्राव में पुरानी शराब मिलाकर आंखमें लगानेसे फूली कट जाती है। उष्ण मासिक स्राव को आंख में लगाने से लाली कटती है। अपने रज को छातियों पर लगाने से उनकी कठोरता बनी रहती है। बाबले कुत्ते के काटे स्थान पर रज लगानेसे विष दूर होता है। श्वेत कुष्ठ पर रज का लगाना लाभ करता है। आर्तव के स्पर्श मात्र से शराब खट्टी हो जाती है। दर्पण स्पर्श मात्र से दर्पण का पारद फट जाता है, बीज पर रज गिरनेसे उसकी उगने की शक्ति नष्ट हो जाती है। मधु मक्खी रज पीनेसे मर जाती है कुत्ते के पेट में रज पहुंच जानेसे वह पागल हो जाता है, इसीलिए आचार्यों ने ऋतुकाल में स्त्री स्पर्श का निषेध किया है।

मनुष्य बाल एक प्रकार के प्रोटीन से बनते हैं। रक्त बन्द करनेके लिये बालोंको जलाकर लगाने का आम रिवाज रहा है खाने में गर विष हैं, गुणों में सर्द खुश्क हैं, खाने पर बलवान बनाते हैं। जालीनूस का कथन है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि मनुष्य बालों को जलाकर गुलाब में मिलाकर गर्भवती के शिर पर लेप लगानेसे प्रसव शीघ्र होता है। बालों को सिरका में पीसकर बावले कुत्ते के व्रण पर लगाने से लाभ होता है। गले स्थान पर जैतून के तैल में मिलाकर लगाये जाते हैं। बालों की राख को आंख में लगाने से आंख के व्रण दूर होते हैं। कान के दर्द में रोगन गुल में मिलाकर, कान में डाला जाता है। काले बालों को अष्टमांश नीला थोथा के साथ मिलाकर तैल निकालें इसे श्वेत कुष्ठ को खुर्च कर लगाने से श्वेत दाग दूर होते हैं।

मनुष्यका थूक सर्प के लिये विष है, तीन बार सर्प के मुख में थूकने से सर्प मर जाता है। दाद मुहासों, आंख की मुहांजनी आदिमें बासी थूक लगानेका रिवाज है। निराहार मुंह गेहूं चबाकर शोथ पर बांधे तो वह बैठ जाती है अगर फोड़े पर लगायें तो वह फट जाता है। प्राचीन काल में जो राजा विष कन्यायें पालते थे उनकी लार में इतना विष होता था कि तत्काल पुरुष की मृत्यु हो जाती थी। नमक न खानेवालों की लार में भी विष होता है। थूक व्रण रोपक है, गुजरात में थूक में लवण डालकर व्रण में भरते हैं। कुछ वर्ष पूर्व बम्बई में आधा चबाया पान, व्रणों को भरने के लिये उनमें दबाया जाता था।

कर्णगूथ—पित्त की उष्णता से कान में मैल जम जाता है इसे अङ्गरेजी में वैक्स आफ़ सैरेमन कहते हैं। कान के सूक्ष्म भाग में बहुत सी सूक्ष्म ग्रंथियां होती हैं, इनमें से एक प्रकार का चेपदार पदार्थ निकलता है इसे कर्णगूथ कहते हैं। इस कर्ण गूथ को पशमीना स्याह के ऊपर रखकर स्त्री के गले में बांधे जब तक बंधा रहेगा गर्भ स्थिति न होगी।

अस्थियां—बच्चे का वह दांत जो सर्वप्रथम गिरे कपड़े में सीकर ताबीज की तरह पास रखनेसे स्त्री गर्भवती नहीं होती। मनुष्य अस्थि भस्म में ऐलवा मिलाकर लगाने से नाक के अन्दर की फुन्सियां दूर हो जाती हैं। इसी की नस्य नकसीर के रक्त को बन्द करती है।

नर कपालस्थि भस्म—१ रत्ती घृत में देने से मृगी दूर होती है। समभाग चीनी के साथ खिलानेसे आम वात गंठिया व गृध्रसी में लाभ होता है। 'अस्थि' की भस्म को बुरकाने से व कज्जली के साथ घृत में मरहम बनाकर लगाने से घाव भरते हैं। मनुष्य अस्थि गर्म कर पानी में बुझा, पानी पिलाने से तृषा शान्त होती है, च० चि० टायफाइड ज्वर में १ से २ गुंजा तक ठंडे जल के साथ दोपहर को एक मात्रा देने से बहुत लाभ होता है। हल्वा में १ से २ रत्ती तक खिलाने से भी व्रणों को भरती है। अस्थि भस्म को जात्यादि तैल में मिला व निम्ब तैल में मिश्रण कर नासूर पर रखने से लाभ होता है। मनुष्य का दन्त जलाकर पीस लें, इसे सर्प काटे स्थान पर बुरकनेसे लाभ होता है। नर कपालस्थि भस्म, अभ्रक और सितोपलादि चूर्ण का सेवन यक्ष्मियों को लाभ करता है।

ओस्ट्रो कैलिसमम में चूना और अस्थि भस्म है, इसके स्थानपर १० पुट की कुमारी स्वरस से निर्मित मनुष्य अस्थि भस्म समान गुणों की है। यह भस्म बाल शोष, दन्तोद्गम कष्ट, राजयक्ष्मा, विटामिन डी की कमी गर्भवती स्त्री के लिये उपयोगी है एक दो रत्ती की मात्रा में माखनके साथ लेने से सर्व प्रकार का रक्त स्राव दूर होता है। यही भस्म उन्माद और अपस्मार में भी हितकर है। नर कपालस्थि भस्म कम मात्रा में बकरी के दूध से दें और ऋतु स्थान के बाद सम्भोग करें तो गर्भ स्थिति हो। परन्तु इसे अधिक काल तक न खिलाना चाहिए आंख का पानी शुष्क करके अन्धा भी कर सकती है।

नाखून—हाथ पांव के नाखून जलाकर धूनी लेने से अर्श दूर होती है। नाखूनों की राख में ३ रत्ती अफीम मिलाकर नासूर में भरने से वह भर जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनुष्य पित्ता—मैडिकल जर्नल के अनुसार चूना, मग्नीशिया, कोलेस्ट्रोल, क्लोराईड आदि पदार्थ इसमें रहते हैं। मनुष्य पित्ता घोर विष है। परन्तु आंखों पर लगाने से उसके ऊपर आनेवाले श्वेत प्रद को काट देता है। पित्ते को गेहूं के आटे में मिलाकर कृष्ण वर्ण कुक्कुर को खिलायें और फिर उसके मांस रस का सेवन करें तो मोटा करता है।

मनुष्य वृक्कों को धोकर पिलायें तो ज्वर, यकृत शोथ दूर हो जाते हैं।

मस्तिष्क—मनुष्य के मस्तिष्क की खाद बनाकर खरबूजे आदि बोयें और इनके फलों को सेवन करें तो बुद्धि और स्मृति में वृद्धि होती है।

चमड़ा—बच्चे के खितना कराने से जो चमड़ा कट जाता है, वह बारीक पीस लें, थोड़ी मात्रा में मुश्क ओर गुलाब मिलाकर कुष्ठी को पिला दें तो उसका रोग नहीं बढ़ता, इसी की भस्म को श्वेत कुष्ठ के रोगी को खिला दें तो यह रोग चला जाता है।

नाल—बच्चे की नाल का एक टुकड़ा कलाई पर बांधने से हाथ का दर्द जाता रहता है। स्त्री के कमल का सूखा भाग कर्म के साग के शुश्क पत्तों में लपेटकर अगर प्रसूता के योनि भाग में धूनी दें तो कमल बाहिर निकल आती है। शिशु काल का वह भाग जो नाल काटने के पश्चात् तागे से बांध दिया जाता है, थोड़ा लेकर अंगूठी के नग के नीचे रखें तो, इससे पहनने से पेट की घोर पीड़ा नहीं होती। मनुष्य पसीने को आटे में मिलाकर छातियों पर लगानेसे शोथ दूर होता है।

मनुष्य वीर्य—अमेरिका में ईस्ट टूयूब बेबीज उत्पन्न करनेके लिये इसका व्यवहार होता है। एक अमेरिकन डाक्टर की धारणा है कि मनुष्य वीर्य को बनमानस मादाओं में प्रविष्ट कर एक अच्छी नसल पैदा की जा सकती है। वीर्य स्त्रियों में देर तक युवावस्था कायम रखता है। कुष्ठ पर लगानेसे दाग दूर होते हैं। वीर्य में पारद मिलाकर नस्य देने से, पक्षाघात में लाभ होता है, डिप्थीरिया रोगी के गले से बाहिर शहद से लगाना चाहिए।

धनुस्तम्भ (Tetanus) की स्वानुभूत सफल चिकित्सा

शिवनारायण देव पाण्डेय

विधाता की सृष्टि में जनसमूह के लिए एक यह भी अत्यन्त ही कष्टकर एवं प्राणहर रोग है। जिसकी भयानकता से चिकित्सक-वर्ग अपरिचित नहीं। यहां इस दुःखकर व्याधि का निदान आदि अंकन करना केवल पृष्ठरञ्जन हीं होगा—क्योंकि वर्तमान कालिक अनेक आयुर्वेदीय-पत्रों में नानाविध चिकित्सक विशेषज्ञों के लेखों से पूर्ण रूपेण निश्चित हो चुका है। अतः यहां पर जो कुछ मेरे अनुभव-सिद्ध प्रयोग जो उन ग्रसित व्यक्तियों पर प्रयुक्त होकर मुझे यश का भागी बना सके हैं, उन्हीं का वर्णन करता हूं।

यूँ तो इसकी अनेक प्रणाली चिकित्सा ग्रन्थों में नात्यल्पतम अनेकविध योगों से वर्णित है। जो कि आज के देश, काल, तक, अवस्था के नानुकूल, बहुद्रव्य साध्य, दैर्घकालिक एवं जटिलतम हैं।

खेद के साथ उन महानुभावोंके अविरल तरलायित लेखनी से अभिरंजित पृष्ठ-कलेवरों को देख होता है, जिन्होंने अपने को आयुर्वेद-सागर के सफल-पनडुब्बे, अन्वेषक, एवं सफल चिकित्सक होने का गर्व, उस संघर्ष-काल में जब कि चिरकाल प्रतिष्ठा लब्ध-आयुर्वेद अचंचल-पथ्य लालायित नेत्रों से उनकी ओर देख रहा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है—जिनके प्रत्येक वूड़ान में निष्कास—उस सीवारा-च्छन्न तलैया से सगर्वित-इषत्स्मेरोन्मुख होता है जहां से इस वैसिलस- टिटेनाई जन्य रोग के लिए अणु-बांम की तरह A. I. S. आदि ही प्राप्त कर पाते है। आयुर्वेद-प्रशान्तमहासागर के अविरल अवाधित नातिविकंपित लहरियों पर हीं प्रभासित स्फुराग्नि नार की तरह द्रव्यों का संचयन नहीं कर पाते। जिसमें उन्हें सागर के अन्तस्थल गमन श्रम से भी वंचित रहना पड़ता क्या कहा जाय समय हीं का तो फेर है। भारतवर्ष की ऋषि सन्तान आज ऋषि-सन्तान हो रही है। हैं तो आयुर्वेदाचार्य पर वेश डाक्टराचार्य, वैद्यराज कहने पर उलट-कमल की तरह लज्जावनत मुख, डाक्टर साहिब के मधुर-कलरव गुंजार कर्ण-कुहर में प्राप्त होते हीं प्रस्फुटित-कमलोन्मुख-प्र—स—न्न—वदन।

धन्य रे युग—जो कुछ हो जाय थोड़ा है।

यह तो रही उड़ान-पुड़ान की बातें—अब मैं अपने मूल विषय पर आप महानुभावों का ध्यान आकर्षित करता चाहता हूं।

एक दिनकी बात है—भाद्रका महीना—गगन मंडल मेघमालाओं के प्रतिक्षण गंभीर गर्जन एवं विद्युल्लता के विताडन से चंचलित एवं दिशाएं क्षण क्षण पर प्रकाशित हो उठती थीं। प्रबल जल वर्षण होने ही वाला था। भोजनोपरान्त औषध-कुटीर में मित्रों के साथ बैठा हुआ प्रकृति के इस भयंकर-मनोहर क्रीडन को देखने में तल्लीन हीं था कि एक व्यक्ति अस्त-व्यस्त नैराश्यपूर्ण मुखाकृति से हम लोगों को हठात् अपनी ओर आकर्षित करते हुए चीख पड़ा। भैया वैद्यजी शीघ्र ही उठिए घर का दिया बुझना हीं चाहता है—समय बहुत थोड़ा है। वह व्यक्ति मेरे संबंधियोंमें से था। सब लोग घबड़ा उठे। मैंने शान्तिपूर्वक धैर्य धारण एवं उस जगन्नियता शक्ति शाली ईश के प्रति उसकी चित्त वृत्ति आकर्षित न करते हुए पूछा—है क्या? यह तो कहो। ऐसी अवस्था में धैर्य एवं प्रभु दोनों ही विस्मृत हो जाते हैं! उसने करुण स्वरसे कहा—रामचन्द्र भैया को बड़ा भारी भूत लग गया है—लकड़ी की तरह हो गए हैं रह रह कर चारपाई से बाहर फेंका जाते हैं। आज ४ दिन बीत गए—रोने लगा।

मैं ही नहीं बैठे लोग भी तरुण विंश-वर्षीय उस रुग्ण-व्यक्ति के आकर्षित स्वास्थ्य और बल से परिचित आश्चर्य-चकित हो उठे।

बढ़ती हुई वर्षा कालीन भयानकता सहित प्रकृति अवरोध उपस्थित कर रही थी। बून्दे पड़ने लगी, और कर्तव्य भी सम्मुख था। किया क्या जाता—सैनिक आगे बढ़ा। एक तो सम्बन्ध दूसरा कुछ लेना भी न था। इस समय से भयभीत कि यह धारणा न जग उठे कुछ मिलना मिलाना तो है नहीं इसलिए चलनेमें आनाकानी कर रहे हैं" धीरे से अपने चुने हुए प्रयोगों को ले बैठे हुए मित्रों से चलने के लिए उत्कंठित एक मित्र के साथ चल पड़ा सायंकाल से।

किसी तरह से कूदते फांदते ३॥ मील का पंकावृत-मार्ग तै हो पाया। क्रंदन महाक्रन्दित हो उठा। उसे रोष-स्नेह स्तंभित करता भीड़ को चीरता हुआ पास पहुंचा। किं कर्तव्य-विमूढ़ मै उन कारण-नयन यमकिंकरों को विकट अंग संचालन प्रज्वलित दीप-मालिकाओं, अर्ध खंडित विखरित-लवंग पुंजों के साथ साकुंचना क्षेप दीन हीन आनन को देखा। कभी कभी चेतना शून्य काष्ठ पट्टिका की तरह आक्षेप-विहीन हो जाया करता था। मूत्रावरोध, गूटिकाजन्य कण्ठावरोध, निगरण काठिन्य और वांयटे अत्यन्त कष्टकर थे।

यह विश्वास दिलाते हुए कि १२ बजे रात तक व्याधि-ह्रास होगी—औषध-व्यवस्था प्रारम्भ की गई। आगे के लिए औषध-प्रदान व्यवस्था एवं समय में सतर्कता बरतने के लिए आदेशित, रुकने के प्रबल आग्रह को "पहुंचने पर और उपाय सोचूंगा" से दूर करता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ—चल पड़ा। प्रकृति के स्नेह सिंचन से सवस्त्र सिंचित सायंकाल कुटीर में पहुंच हीं गया। क्रमानुकूल कार्य अग्रसर हुआ।

अन्धकार के निविड़ राज्य में ऊषा मेघ मालाओंसे अच्छादित-गड़ गड़ाहट, मेघों की टरटराहट से प्रक्षुब्ध चिर संगिनी प्राची को जैसे छोड़ना नहीं चाहती थी—मैं भी शय्या से चिपका हुआ था।

किसी ने पुकारा—शब्द परिचित सा प्रतीत हुआ। शीघ्र हीं बाहर आया—उसका आनन प्राची की तरह कुछ प्रत्याशित सा दीख पड़ा। सहर्ष प्रणाम-ध्वनि कानों में गूँज उठी। मेरा भी मन-मयूर नाच उठा।

पुनः पूर्ववत् ओषध-व्यवस्था की गई। इसी क्रम से ५ दिन में वह रोग से मुक्त-प्राय हो चला। कृशता शेष थी। खाने के लिए सुपाच्य पथ्य की योजना की गई। १५ दिनों में पूर्ण स्वस्थ होकर आज भी जीवन-संग्राम में एक सूर सैनिक की तरह तल्लीन है।

इसी तरह १६ वर्षीय लल्लू अहीर एवं १२ वर्ष-वयस्क मेवालाल अहीर भी नगर के ख्याति-प्राप्त डाक्टरों एवं नगर-अस्पताल से बहुसूची प्रक्षेपण-जर्जरित, १०,१० दिन पश्चात्-सेवा करने का अवसर प्राप्त हुआ। क्रम से १०, १३ दिन में रोग मुक्त हुए। इन्हें क्रम से ६ और ८ सूची वेध भी किए गए थे।

ऊबते हुए पाठकों का ध्यान—अब औषध-निर्माण एवं प्रयोग की ओर लाना चाहता हूं। आशा हीं नहीं पूर्ण विश्वास है—इस विलंब के लिए अवश्य हीं क्षमा प्राप्त कर सकूंगा।

हाँ—तो प्रयुक्त-प्रयोग ये हैं :-

सूची के लिए :—निष्तुष एक पुतिया रसोन ५ भर उत्तम मृतसंजीवनी सुरा २० भर रसोन को स्वच्छ जंतुविरहित-खरल में खूब घोटना चाहिए। घुट जाने पर किसी स्वच्छ जंतुविरहित बोतल में रखी हुई सुरा में घोल देना चाहिए। सुदृढ़ मुख मुद्रा देकर १ सप्ताह घाम में नित्यशः २ ३ बार हिलाते हुए रखना चाहिए। जब सुरा में द्रव्यांश पूर्ण रूपेण विघुलित हो जाय—निचोड़ते हुए किसी पूतिकृत फला लैनसेप्छान, १ सप्ताह स्थिर होने के लिए रख छोड़े। पुनः स्थिर स्वच्छांश भाग को हो सके तो पातन-पत्र से पातित कर ले। इसकी यथा काल मात्रा १५ से २० बून्द तक नितंब-मांस पेशी गत प्रयुक्त करै। सुकुमार व्यक्ति या अवस्था के लिए यदि आवश्यकता हो तो द्वयाग्नेय परिश्रुतवारी सम-भाग मिश्रित कर जात-उत्तेजकत्व औषध प्रयुक्त करै। बहुत बार प्रयुक्त होने पर भी अभी तक फोस्का, प्रदाहाद्रि नहीं देखे गये। जैसा फिर सोन के बारे में लेखों से भयानकता प्रकट की गई है यहां निराधार सी प्रतीत होती है।

मौखिक प्रयोग :—विशुद्ध विषमुष्टिका ५ भर जल उबला ५ भर में भिगो फूलने पर खरल में कूटते हुए सूक्ष्म पत्राकृति बना लीजिए। उन्हें काच पात्र स्थित तीव्र मधूकमद्य में १५ दिन तक मुख मुद्रित कर घाम में रखें दिन में २ ३ बार औषधांश को विघुलित होने के लिए खूब हिला दिया करें। पुनः निचोड़ते हुए छान कर स्वच्छ कर लेना चाहिए मात्रा १५ बून्द से ३० बून्द तक। नाना विधयोगों में व्यवहृत।

इसी तरह रसोन स्वरस १० भर मद्य २० भर में संयोजित कर प्रस्तुत कर ले। मात्रा ३० बून्दसे ६० बून्द तक। मर्दनार्थ तैल योग :—नारायण तैल अभाव में एरंड तैल १० भर, वाराहवसा ५भर, दारु तैल २॥ भर, कर्पूर १॥ भर सत्व अजवायन ॥=> भर पिपरमेन्ट ।< भर मिश्रित कर प्रयुक्त करें।

मैं १५ बून्द रसोन की सूची प्रतिदिन, प्रत्येक ६-६ घंटे पर १५ बून्द विष सुरा, ३० बून्द रसोन सुरा, एक औंस अजवायन का अर्क जो ऽ भर में ४ सेर जल से ४ बोतल परिश्रुत मिश्रित कर देता हूं। सिर को छोड़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वाङ्ग में उपरोक्त मिश्रित तैल का मर्दन। मूत्रावरोधादि तत्तल्-क्षण प्रयुक्त भेषज-कल्पना हितावह होती है। अभी तक उस जगन्नियंता ईश की कृपा से सफलता ही मिली। उपरोक्त मिश्रित प्रयोग एवं एकैक स्वमत्यानुसार नानाविध स्थलों तथा यावतीय वात-विकारों में श्रेष्ठता पूर्वक व्यवहृत आशुफलप्रद है।

निद्रा का महत्व

ले० श्री भागचन्द्र जैन

रेल, गाड़ी, मोटर, जहाज, चक्की, मिल इन सबके इन्जनोंको मजबूत बनाये रखने के लिये कोयला, पानी, तेल, मोविलआयल आदि आवश्यक पदार्थों की जरूरत रहती है। जिससे एञ्जिन सुचारुरीत्या अपने कार्य में लगे रहें। एवं उनके हिस्से जल्दी न घिसने पाये। क्षण मात्र भी ये एञ्जिन तैल के बिना नहीं चल सकते हैं।

उसी तरह से इस पंचतत्वमय शरीर में जीवन शक्ति कायम रखने के लिये सन्तुलित भोजन, पानी, आहार, बिहार शारीरिक एवं मानसिक व्यायाम की आवश्यकता प्रतीत होती है। आहार बिहारादि साधनों से हम चलते फिरते एवं कार्य करते हुए दिखाई देते हैं सभी प्राणी अपने शरीर रूपी एञ्जिन को चलाने के हेतु आहार बिहारादि की व्यवस्था में निरन्तर जुटे रहते हैं। दैनिक आर्थिक साधनों के उपलब्धि हेतु तन, मन, धन लगा देते हैं। ऐसे मौके पर विश्राम लेना या निद्रा लेना स्वाभाविक सा प्रतीत होने लगता है।

दिन भर की थकावट दूर करने के लिये, शरीर में नई स्फूर्ति तथा नया बल पैदा करनेके लिये दिमाग को शक्तिप्रद बनाये रखने के लिये, शारीरिक निरन्तर क्रियाशीलता के लिए आराम करना नींद लेना अत्यन्त आवश्यक है। बिना निद्रा के हम दिन भर के थके हुए अपने अंगोंपांगों को यथोचित आराम नहीं दे सकते हैं। भक्ष्य पदार्थों का पूर्ण पाचन नहीं कर सकते हैं। शारीरिक एवं मानसिक परिश्रम से उत्पन्न खून की उष्णता नींदके बिना कभी भी शान्त नहीं हो सकती अतः सिद्ध होता है कि शरीर के लिये दिनचर्या में नींद व आराम का स्थान सबसे अधिक महत्व पूर्ण है। गहरी नींद लेना जीवन शक्ति बढ़ाने का सर्वोत्तम उपाय है।

सुप्तावस्था में अनेक महत्व पूर्ण कार्य होते रहते हैं। जागृत अवस्था में जितनी जीवन शक्ति खर्च होती है निद्रावस्था में उससे आधी ही जीवन शक्ति खर्च होती है। जीवनशक्ति को बचाने में नींद का सबसे बड़ा हाथ है। निश्चिन्त नींद ही स्वास्थ्यदायक है।

जीवन शक्ति ही आत्म शक्ति है। अथवा जीवन ही आत्मा का दूसरा नाम है। संसारावस्था में यह आत्मा इस पौद्गविक शरीर के साथ कार्य करती रहती है। जीवनशक्ति आत्मा (चेतना) का एक स्वाभाविक गुण है। जो कि प्रत्येक जीव शरीरधारी प्राणी में विद्यमान है। शक्ति भी कोई प्रत्यक्ष पकड़ लेने वाली या वजनदार वस्तु नहीं है बल्कि शक्ति शरीर की स्वाभाविक क्रिया है। वह शक्ति ही जीवन शक्ति के नामसे छोटे बड़े सभी प्राणियों में स्वतः विद्यमान रहती है। शरीर अपने सब कार्यों के लिये शक्ति पर ही निर्भर रहता है।

परन्तु यह शक्ति आती कहां से है? हमें इस शक्ति का ज्ञान न होनेपर भी हम जानते हैं कि सर्व प्रथम शक्ति जन्म जात ही मानी गई है। इसके अलावा जल वायु आहार विहार जन्य सभी पदार्थों एवं खाद्य पदार्थों से यह शक्ति शरीर के कण कण में प्रवाहित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होती रहती है। अपने सम्पूर्ण दैनिक कार्यों में हमें इस शक्ति का व्यय करना पड़ता है अतः आवश्यक हो जाता है कि व्यय की गई जीवनशक्ति को पुनः वापिस लाने के लिये समय पर उचित नींद लेना योग्य विश्राम लेना अतिलाभकारी है। यह भी निर्विवाद सिद्ध है कि जीवन शक्ति आत्मा का एक गुण है और शक्ति शरीर की स्वाभाविक क्रिया है।

यदि निर्धारित समयपर हम विश्राम न करें व नींद न लें तो हमारा चेतन मस्तिष्क पागल हो जाये। हमारी विचारधारायें नष्ट हो जांय तो हमें अपने कर्तव्याकर्तव्य का भी ध्यान न रहेगा। हमारा नाड़ी संस्थान कमजोर हो जायगा। प्रत्यक्ष देखने में आता है कि जो व्यक्ति निद्रा कम लेते हैं। शरीर को जरा भी विश्राम नहीं देते। घोड़ों की तरह दिन व रात्रि में अनेक तरह के कार्यों में जुटे रहते हैं। कुछ ही समय पश्चात् उनकी जीवनशक्ति कमजोर हो जाती है। स्मरण शक्ति नष्ट होने लगती है। थोड़ी थोड़ी सी याददास्ते भूलने लगते हैं। स्वभाव में चिड़चिड़ापन आ जाता है। पाचनशक्ति निर्बल हो जाती है। कब्जियत से परेशान रहते हैं। वातपित्ताधिक्य होनेसे शारीरिक रक्त में उष्णता बढ़ जाती है। नेत्र सुर्ख (लाल) हो जाते हैं। चेहरे में सूखापन सा झलकता है। सारे शरीर में थकावट भर जाती है। कभी कभी ऐसे व्यक्ति ही पागल हो जाते हैं। यह सब लक्षण अनिद्रालु व्यक्ति के ही पाये जाते हैं। अधिकांश यही कारण पाये जाते हैं कि वर्तमान कालिक जनता सिनेमा, नाटक, थियेटर, ताश, चौपड़ आदि दुर्व्यसनों में रात्रि जागरण करते हैं। एवं दिनमें भी अपने अपने कार्यों में संलग्न रहते हैं। शरीर को पूर्ण आराम नहीं देते हैं। जिससे असमय में ही नाना रोगों के शिकार बन जाते हैं। कतिपय रात्रि जागरित जनता दिन को नींद भी लेती है तो मन्दाग्नि से पीड़ित हो जाती है। अतएव समयोचित नींद लेना व विश्राम करना ही शारीरिक मानसिक रोगोंकी एक अव्यर्थ महान औषधि है।

सुनिद्रा आने में सहायक एक विचारणीय बात और भी है कि हमारा मस्तिष्क सोते समय चिन्ता से परेशान न रहे। सोते समय दिन की चिन्ताओं को हम एक खूंटी पर टांग दें। और ईश्वर का भजन कर आराम पूर्वक सुखद निद्रा लें। यदि चिन्ता से दिमाग को परेशान करते रहेंगे तो कभी भी हमारी नींद पूरी नहीं हो सकती। प्रातः जागने पर हमारी शारीरिक थकावट ज्यों की त्यों बनी रहेगी। चिन्ताग्रस्त व्यक्तियों का नाड़ी मंडल दुर्बल ही बना रहता है। चिन्ता नींद की दुश्मन है जिन लोगों ने चिन्ताओं को अपने दिमाग में स्थान दिया है उन्हें चाहिए कि सोने से पहिले स्वच्छ ठंडी वायु में टहलें। सोते समय सामाजिक धार्मिक एवं नीति पूर्ण ग्रन्थों का अवलोकन करें। मनोरंजनीय कार्यों में थोड़ा सा समय व्यतीत करें। ऐसा करनेसे सुप्तावस्था में सुखद गहरी नींद का अनुभव करेंगे। व किसी प्रकार के भी गन्दे दुःस्वप्नों से मुक्त रहेंगे। गहरी नींद से ही स्वास्थ्य अति उत्तम बनता है तथा जीवनशक्ति दूसरे दिन के लिये मजबूत बनती है। जिस तरह शारीरिक परिश्रम करने वालों को वार बार विश्राम हितकारी है उसी तरह नाड़ी मंडल से दुर्बल व्यक्तियों को नींद अतिहितकारी मानी गई हैं।

बहुत से व्यक्ति रात्रि में ही नींद लेना उचित समझते हैं उनका कहना है कि दिन में सोना सुस्ती का द्योतक है। यह लोगों की गलत धारणा है। दिन में यदि हम नित्य कार्यों से थोड़ा सा समय आराम व नींद के लिए निकाल सकें। तो सुन्दर स्वास्थ्य बनाने में उपादेय सिद्ध है। भोजन के १०-१५ मिनट पश्चात् आराम करना सदैव आरोग्यप्रद माना गया है। एवं भोजन के एक घंटे बाद हलकी सी नींद ली जाय तो स्वास्थ्य को अति उत्तम है। जिन्हें दिन में सोनेका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभ्यास हो गया हैं वे दिन में सोने से पुष्ट होते हैं। स्नायु मंडल से दुर्बल मनुष्यों को दिन में नींद लेना जरूरी हो जाता है।

गरमियों में रात्रियां बहुत छोटी होती हैं अतः दिन में प्रायः सभी व्यक्ति नींद लेना पसन्द करते हैं। अन्य ऋतुओं में नींद लेना अपनी अपनी दिनचर्या के अनुसार ही होता है विश्राम का समय भी भिन्न भिन्न चर्या के अनुसार भिन्न भिन्न होता है फिर भी दोपहर में आराम करना और रात्रि के दूसरे पहर में सो जाना उपयोगी माना गया है। आयुर्वेद शास्त्र में बताया गया है। कि अर्ध रात्रि के पहिले एक घण्टा सो जाना, अर्धरात्रि के पश्चात् के दो घण्टे नींद लेने के बराबर हैं अर्थात् रात्रि का द्वितीय पहर ९-१० बजे सोनेका समय उपयोगी माना गया है तथा ६ से ८ घण्टे तक नींद लेना बहुत जरूरी है। आठ घण्टे से अधिक नींद लेनेवाले व्यक्ति ही आलसी एवं रोगी होते हैं। अधिक नींद लेना या कम नींद लेना या असमय (प्रातः सायं) सोने से मनुष्य की आयु क्षीण हो जाती है।

अतिमानसिक श्रम करनेवाले, अति शारीरिक काम करनेवाले, रात्रि जागरण करनेवाले, कमजोर, वृद्ध बच्चे एवं थके हुए व्यक्तियों को दिन में सोने से भी लाभ बताया है। ऐसे व्यक्ति सभी ऋतुओंमें नींद ले सकते हैं।

जिन मनुष्योंको नींद कम आती है वे प्रातः सायं स्वच्छ वायु में १-१ घंटा घूमा करें। हरी दूब एवं ठण्ड के दिनों में ओस पर घूमना अत्यन्त हितकारी होता है सुबह शाम दोनों समय ठंढे जल से स्नान करें घी, दूध दही, मक्खन, शर्बत एवं ताजे फलों का सेवन करें। प्रतिदिन तेल मालिस एवं मधुर नींद आवश्यक है। प्रगाढ़ निद्रा आने के लिये प्रतिदिन कुछ न कुछ शारीरिक श्रम जरूर ही करना चाहिये।

जिन व्यक्तियों को उपर्युक्त किन्हीं कारणों से पूर्ण नींद न आती हो या जिनकी दिमागी (स्मरणीय) शक्ति कमजोर हो। अनिद्रा के कारण स्नायविक एवं हृदय सम्बन्धी विकार समुत्पन्न हो गये हों। वे व्यक्ति 'बिड़ला लेबोरेटरीज' द्वारा निर्मित विटामिन युक्त 'नियोच्यवन प्राश" का अविलम्ब कतिपय काल सेवन करें। जिसके सेवन से सुन्दर सुपुष्ट स्वास्थ्य के अधिकारी बनें। एवं भीनी भीनी मतवाली नींद को प्राप्त करें। क्योंकि गहरी नींद अपनी आयु को बढ़ानेमें मुख्य सहायक होती हैं।

(ड्राइ जिञ्जिवेर) सोंठ, अदरक के चमत्कार

वैद्यराज पं० परशुराम जोशी व्यवस्थापकः—श्रीमहावीर औषधालय भीलवाड़ा (राजस्थान)

परमब्रह्म परमेश्वर ने अनेक ऐसी वस्तुएं उत्पन्न की है जिन्हें लोग प्रतिदिन व्यवहार में लाते हैं किन्तु उनके वास्तविक गुणों से अपरिचित रहते हैं। अद्रक को ही लीजिये साधारण मसाले की तरह काम में आने वाली वस्तु है। किन्तु इसके वास्तविक गुणों को जान लिया जाय तो निःसन्देह अनेक रोगों का उपचार किया जा सकता है।

अद्रक के उत्पादन के लिये किसी विशेष प्रकार की जलवायु अथवा भूमि की आवश्यकता नहीं पड़ती। वह उन सभी स्थानों में उत्पन्न की जा सकती है जहां आलू, मूली, शकरकंद आदि वस्तुएं पैदा की जाती हैं। अद्रक का कोई बीज नहीं होता उसके छोटे २ टुकड़े आलू की भांति गाड़ दिये जाते हैं। अद्रक के सूख जाने पर हम उसे सोंठ के नामसे पुकारते हैं।

अदरक को खूब साफ कर पानी या दूध में उबाल कर सुखाते हैं। सोंठ दो प्रकार की होती है एक लाल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरी सफेद। जिसमें रेशे बहुत कम होते हैं, वह अच्छी समझी जाती हैं।

आयुर्वेद के मतानुसार अद्रक (सोंठ) के गुणः-

रुचिकारक, आमवातनाशक, पाचक, कटु रस-युक्त, लघु पाकी, स्निग्ध, उष्ण वीर्य, विपाक में मधुर रस युक्त, कफ, वात और विबन्ध को दूर करनेवाली, वृष्य, स्वर के लिये हितकारी, वमन, श्वास, शूल, कास हृद्रोग, श्लीपद, शोथ, बवासीर आनाह और उदरकी वायु इन सबों को दूर करती है और जो द्रव्य अधिक-तर अग्नि सन्बन्धी गुणों से युक्त होने से जलीय अंश को सुखाने वाला तथा मल का संग्राहक अर्थात् पतले मल के जलीय भाग को सुखा कर गाढ़ा करने वाला होता है वह ग्राही कहलाता है। जिह्वा तथा कण्ठका शोधन करनेवाली हैं।

कोढ़, पाण्डु रोग, मूत्रकृछ्र, रक्तपित्त, व्रण, ज्वर, दाह, इन रोगों में एवम् ग्रीष्म तथा शरद् ऋतुओं में अदरख खाना हितकर नहीं हैं।

कुछ चमत्कारी प्रयोग

(१) श्लेष्म ज्वर अर्थात् इन्फ्लुएञ्जा, ऋतु परिवर्तन वर्षा के पानीं में भीगना, रोगीके संसर्ग में रहने, शीतल वस्तुओं के अधिक सेवन करने से उत्पन्न हो जाता है। शरीर में दर्द, सिर तथा नेत्रों में भारीपन, गले में दर्द, नेत्र तथा नासिका में पानी बहना खांसी ताप-मान १०२ से १०३ डिग्री तक बढ़ जाना आदि इस रोगके लक्षण हैं। इस रोग में ६ माशा अद्रक के रस में ६ माशा शहद के साथ प्रयोग करने से रोगी की दशा में आश्चर्यजनक परिवर्तन होता दीख पड़ता है।

(२) भोजनके पहले अद्रक में सैन्धव नमक मिश्रण कर चबा लेने से पाचनशक्ति के लिये लाभप्रद हैं।

(३) ६ माशा अदरक के रसमें ६ माशा उत्तम मधु मिलाकर दिन में तीन वक्त चाटने से बलगमी खांसी दूर होती है।

(४) अदरक को घृत में तल कर सैंधव नमक मिश्रण कर खानेसे सर्दी और वायु से होनेवाली दिल की धड़कन और दमा (श्वास) के लिए बहुत उत्तम हैं।

(५) अदरक का रस ६ माशा नीम्बू का रस ६ माशा सैंधव नमक ३ रत्ती जीरा भूना ३ रत्ती पानी २ तोला में मिश्रित कर दिन में २ वक्त लेने से अजीर्ण अग्निमांद्य, अरुचि, पेट दर्द में हितकर हैं।

(६) अद्रक का मुरब्बाः—६ माशा से १॥ तोला तक दिन में तीन वक्त सेवन करने से ऊपर बकरी का दूध पीनेसे कफ युक्त खांसी नष्ट होती है।

(७) उदरामृतः—अद्रक का रस ।ऽ२ ग्वार पाठे का रस ।ऽ२ नीम्बू का रस ।ऽ२ हींग भूनी ६ तोला नोसादर ऽ।≡ १ तो० सांभर नमक ऽ।≡ १ तो० सैंधव नमक ऽ।≡ १ तोला समुद्र नमक ऽ।≡ १ तो० सबको बड़े चीनी के पात्र में डालकर १५ दिन धूप में रक्खे। बाद में छानकर बोतलों में भर लें। मात्रा :—३ माशे से १ तोला तक दिन में २ बार भोजन के बाद सम भाग जल मिला कर लें।

उपयोग—यह मुख उदर रोग, प्लीहा, यकृत दोष, पाण्डु स्त्रियों के गर्भाशय के दोष, मन्दाग्नि, कब्ज और शूल आदि रोगों को थोड़े ही दिनों में दूर करता है।

(८) रुचिकर चटनी :—अदरक ऽ१ मुनक्का बीज रहित ऽ१ किसमिश ऽ१ नीम्बू का रस ऽ५॥ में २ दिन तक भिगो दें। पश्चात् तीसरे दिन सिलापर पीस कर ऽ५ शक्कर मिला कलईके पात्र में अवलेह सिद्ध करें। अवलेह सिद्ध होने के पश्चात् निम्नलिखित वस्तुओं का वारीक चूर्ण मिश्रण करें। इलायची दाना ३ तोला अकर करा असली ३ तोला दोनों जीरा ६ तोला दालचीनी ३ तोला सेंधा नमक १२ तोला केशर १ तोला। मात्राः—१। तोला से ३ तो० तक भोजन के बाद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपयोग—अन्न पर अरुचि रहना, जी मिचलाना, पेट दर्द, पेट में वायु से गुड़ गुड़ाहट होना, अजीर्ण, पेट फूलना, बार बार बार दस्त की हाजत रहना आदि उपद्रवों को शान्तकर भूख को बढ़ाती है अत्यन्त स्वादिष्ट एवं पाचक हैं।

प्राणदा गुटिकाः—सोंठ १२ तोला काली मिरच ४ तो० पीपल ६ तोला चव्य ४ तोला तालीस पत्र ४ तो० नाग केशर २ तोला पीपला मूल ८ तोला तेजपत्ता ६ माशे छोटी इलायची १ तोला दाल चीनी ६ माशा और खस ६ माशे लें। सबको कूट पीस छान कर पुराना गुड़ ऽ१। सेर मिला २-२ माशे की गोलियां बनावें। मात्राः—१ से २ गोली भोजन के पहले या पीछे शराब, मांस रस यूष, दूध या जल के साथ देना चाहिये।

उपयोगः—इस बटी के सेवन से वातज, पित्तज, कफज, सन्निपातज, रक्तज और सहजार्श नष्ट हो जाते हैं। मदात्यय, मूत्रकृच्छ्र, वातरोग, गलग्रह, पाण्डू, शूल, श्वास, कास आदि रोगियों को भी यह गुटिका प्राण देने वाली होने से इस गुटिका को प्राणदा कहा है।

(१०) सौभाग्य शुण्ठी पाकः—१६२ तो० सोंठ के चूर्ण को सम भाग घृत मिलाकर भूनें। फिर ७६८ तो० दूध मिलाकर उबाले। आधा दूध शेष रहे, तब ३८४ तोला मिश्री डालकर पाक करें। पाक तैयार होने पर जायफल, त्रिफला, जीरा श्वेत स्याहजीरा; धनियां सौंफ, इलायची, पीपल, नागरमोथा, नेत्रवाला, मुनक्का, मुनक्का, विदारी कन्द, सफेद चन्दन और छुआरा; सब २-२ तोला ताजी नारियलकी गिरी ३२ तोला शिलाजीत शुद्ध और लोह भस्म ८-८ तोला सोवा १६ तोला चिरौंजी १६ तोला निसोथ ३२ तोला का बारीक चूर्ण डाले केशर २ तोला को केवड़ा जलमें घोटकर मिश्रण करें। मात्रा—२ से ४ तोला तक सुबह खाकर ऊपर से दूध पीवें।

उपयोगः—इस पाक के सेवन से बल, कान्ति, सौभाग्य, बुद्धि, स्मृति, बाणी, सौंदर्य, सुकुमारता की प्राप्ति होकर योनि शिथिलता दूर होती हैं। स्त्रियों के स्तन दृढ़ होते हैं, ८० प्रकार के वात रोग, ४० प्रकार के पित्त रोग, २० प्रकार के कफ रोग, ८ प्रकार के ज्वर, १८ जाति मूत्र रोग एवं नाक; नेत्र, कर्ण, मुख, मस्तिष्क रोग, वस्तिशूल; योनिशूल और अन्य सब प्रकार के रोग नष्ट होते हैं।

(११) स्वादिष्ट पाचक वटीः—सोंठ ऽ। जीरा ऽ— स्याह जीरा ऽ— सेंधा नमक ऽ॥ पीपल ऽ— अकर करा ऽ— काला नमक ऽ= नीम्बू सत ऽ≡ कूट पीसकर बारीक करें अदरक के स्वरस की भावना देकर चने प्रमाण गोली बनावें। मात्रा—दिन में ३ से ६ गोली चूसनार्थ।

उपयोग—पेट दर्द, पाचक रस का अभाव, यकृत प्लीहा शूल, आम वृद्धि, मुखका जायका, अजीर्ण अरुचि आदि रोगों को शान्त कर क्षुधा बढ़ाती हैं।

———

अधिमन्थ Gloucoma (ग्लोकोमा)

लेखक-वैद्य इन्द्रभानसी भटनागर आयुर्वेदभिषक् नेत्र अर्श विशेषज्ञ पो० सीधपुर, उत्तर गुजरात

यह मनुष्य की दृष्टि नष्ट करने वाला महान् भयंकर रोग है। इसे गुजराती में झामर राजस्थान में बेग अथवा घोवे और हिन्दुस्थानी में इसे अधिमंथ और अंग्रेजीमें Gloucoma (ग्लोकोमा) के नामसे पुकारते हैं

बाहरी दृष्टि से इसके दो भेद माने गये हैं :—

१ मीठा झामर— २ कड़ुवा झामर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मीठे झामर में शिर में थोड़ी थोड़ी वेदना हमेशा बनी रहती है जिसके कारण नेत्र की देखने की शक्ति सर्वथा नष्ट होती देखी गई है उस समय उसकी आंखों में नील बिन्दु अथवा काला मोतिया होता नज़र आया है जो असाध्य रोग है।

२ कडुवा झामर—इस रोग में शिर के दारुण रोग बातादि दोषों के कारण नेत्राभिष्यन्दों के साथ वाताधिः मन्थ और हताधिमंथ उत्पन्न होकर दृष्टि को सर्वथा के लिए नष्ट कर देते हैं। इसमें मनुष्य तीव्र पीड़ा सहन करते हुए भी अपनी दृष्टि को सर्वदा के लिए खो वैठता है।

एलोपैथी में इसके भी निम्न भेद बतलाये हैं।:—

१ प्राइमरी — २ स्टेशनरी

Conjestive — Simple

Acute — Chronic — Acute — Chronic

हमारे यहां इस रोग का कारण वातादि दोष वतलाये हैं लेकिन एलोपैथी में कारण न बतलाकर उसका लक्षण ही बतलाया गया है कि Eye Ball में Tenson बढ़ जाता है। श्रीमान जी Tenson बढ़ने का कारण भी हमारे वातादि दोष ही हैं। जिस प्रकार पानी के नलों में वायु का Force होने पर पानी बेग से निकलता है। रबड़ के फूंगे में पानी भर कर हवा भर कर फूला तो उसका कितना Tenson वढ़ जावेगा उसी प्रकार इस आंख रूपी पानी के गोले में जब वायु का प्रकोप हो जाता है कि आंखके Aques Romour को वायु Cornia की ओर आगे तीव्र वेग से ढकेलता है। Posterior chamber का Aques homerus pupil द्वारा Antesior chamber में प्रवेश होता है तो वायु के Force से Pupil का छिद्र छोटा होने से एक साथ पानी Antesior chamber में नहीं पहुंचा और तीव्र प्रवाह से Pupil Dilate विस्तृत हो जाती है और Cornia के अग्र भाग को फूला देती है। चूंकि वायु को वाहर निकलने का मार्ग नहीं मिलता तब ऐसा मालूम होता है कि जैसे आंख निकल कर वाहर पड़ रही हो। वायु के अधिक प्रवाह से Slism of canal के छिद्र वन्द हो जाने से आंख में स्थित पानी का बहाब नियमित रूप से वन्द हो जाने के कारण तीव्र पीड़ा करते हैं। यही कारण है कि एलोपैथी में Sridocsomy कर कुछ Aques homour निकाल देते हैं उसके साथ कुछ वायु का भाग भी निकल जाता है और Iris काटकर Pupil का वृत बड़ा कर देते हैं जिससे वायु का वेग कम रहे यही कारण है कि दर्द कम हो जाता है। इस पर भी दर्द कम नहीं होता है तो सर्जन Eye Ball को वातवाहिनी शिरायें काटकर बाहर करके पुरुष को कुरूप बना देते हैं।

लेकिन हमारे ऋषि मुनियों ने आयुर्वेद शास्त्रों में इस कुरूपता को मिटाने के लिप अनेक उपाय बतलाये हैं जिनके प्रयोगों द्वारा यह रोग सर्वदा के लिए नष्ट किया जा सकता है।

इसके पूर्व में अधिमंथों के भेद बतला देना चाहता हूं जो नेत्राभिष्यन्दों की चिकित्सा न करने पर उत्पन्न होते हैं।

अधिमंथो भवेत्तत्र कर्णयोर्नदनं भ्रमः। वाग्भट्ट

(१) अरण्येव च मथ्यन्ते लालाटाक्षिभ्रुवादयः॥४॥

अ. यदि इस वाताभिष्यन्द की चिकित्सा न की जाय तो अधिमंथ रोग हो जाता है। इस रोग में दोनों कानोंमें शब्द होना भ्रम होना, तथा मस्तक, अक्षि और भ्रुकुटियां आदि मथानी से मथी हुई सी प्रतीत होने लगती है इसे वाताधिमंथ कहते हैं।

ब. और फिर यदि इस वाताधिमंथ की चिकित्सा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने में विलम्ब हुवा तो यह हताधिमंथ बन जाता है जिनके निम्न लक्षण हैं :—

(स) वाताधिमंथ की चिकित्सा न करने पर नेत्रों में अनेक प्रकार की पीड़ा बढ़ जाती है और दृष्टि को नष्ट करनेवाले दृष्टि में व्रण उत्पन्न हो जाते हैं। उसे हताधिमंथ कहते हैं।

(द) यदि वायु मन्या की नाड़ियां कनपटियां और नेत्रों में अथवा ऊर्ध्वगत अन्य स्थानों में प्रवृत्त होकर नेत्रों में तीव्र पीड़ा को उत्पन्न करे और नेत्रों में क्लेद, लालिमा और सूजन न हो तथा नेत्रों का संकोच हो और अश्रुपात हो इस रोग को "अन्यतोवात" कहते हैं।

(च) इस प्रकार यदि वायु से नेत्रों में टेढ़ापन आ जाय तीव्र पीड़ा हो नेत्र छोटा हो जाय तो उसे वातविपर्यय कहते हैं।

२ पित्ताधिमंथ—लक्षण

आंख लाल रेखाओं से भरी, श्राव युक्त अग्नि की भांति जलती है यह नेत्र यकृत पिण्ड के समान (लाल, काली जलन युक्त व्रण पर जैसे नमक मल दिया हो जलती है, पकी हुई किनारे सूजे हुये पसीना युक्त पीला दिखाता है रोगी को मूर्च्छा और शिर में दाह रहता है।

३ कफाधिमंथ—के लक्षण

आंख सूजी हुई, बहुत अधिक लाल नहीं श्राव एवं कण्डूयुक्त, शीतल, भारी पिच्छलता मैल, हर्ष रूप होती है। रूप कठिनाई से देखती है। धुंधला, धूल से भरा मैला देखती है इसमें नासा का आध्मान, शिरमें वेदना रहती है।

४ रक्ताधिमंथ के लक्षण

आंख दुपहरिया फूल के समान लाल, धुंधियाली सी देखने में असमर्थ आंसू में लाली चुभने की दर्द चारों ओर आग लगी सी देखती है। आंख का काला भाग अग्नि लाल किए हुये या रीठे की भांति दीखता है किनारों पर लाली रहती है।

५ कफ जन्य अधिमंथ सात दिन में, रक्त जन्य पांच दिन में, वातजन्य छै दिन में और पित्ताधिमंथ में मिथ्या आचार से तुरन्त ही दृष्टि नष्ट हो जाती है।

६ सशोफ पाक के लक्षण

जिस नेत्र में कंडु गीड, अश्रु श्राव, गूलर के समान आंख लाल हो आंख में जलन, रगड़ लाली, सूजन, चुभने की दर्द वह नेत्र पाक सशोफज है।

७ जिसमें पलक सिकुड़ी हुई कठिन, रुक्ष होती है देखने में धुंधलापल हो आंख खोलनेमें वेदना हो उसको शुष्काक्षिपाक कहते हैं।

८ खटाई एवं विदाही भोजन के खानेसे आंख सम्पूर्ण रूपमें शोफ युक्त, सुर्खी व थोड़ी नीलेपन से ढ़प जाती है उसे अम्लाध्युषित कहते हैं।

९ वेदना के बिना व वेदना के समय जिसकी आंख की रेखायें ताम्र वर्ण हो जाती है ये रेखाएं बार बार चारों ओर से सुरखी रहित हो जाती हो उसे शिरोत्पात कहते हैं।

१० जब अक्षान वश सिरोत्पात रोग की उपेक्षा की जाती है तो सिराग्रहण रोग होता है जिसमें आंख ताम्र वर्ण, निर्मल गाढ़ी अश्रुश्राव वाली होती हैं इसमें भी रोगी देख नहीं सकता।

इस प्रकार नेत्रों के १६ रोग हैं इनमें से हताधिमंथ और अक्षिपाकात्यय में दो रोग असाध्य हैं।

उपाय

शिरकी पीड़ा के साथ अधिमंथों में वमन विरेचन नस्य शिराभेदन तथा कषायों के प्रयोग से अधिमंथ मिटाये जा सकते हैं। यदि किसी भी प्रकार दर्द मिटे तो भ्रुकुटी ललाट और कनपटी पर दग्ध करना अनिवार्य है। और भी अनेक लेप अंजन आदि हमारे वाग्भट्ट और सुश्रुत आदि में बतलाए गए हैं, जिनका प्रयोग विधिवत् करने पर वैद्य को सफलता मिलती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिश्याय (सर्दी-जुकाम)

वैद्य मधुसूदन जोशी "वैद्यविशारद" श्री सूर्य प्रकाश औषधालय, तराना (म० प्र०)

प्रतिश्याय को ही बोल चाल की भाषा में (सर्दी या जुकाम) होना कहते है। आजकल लोगों को प्रतिश्याय अत्यधिक मात्रा में होता हुआ दिखाई देता है अतः इसका मूल कारण क्या है ?

महर्षियों ने इसके २ प्रकार के हेतु बताये हैं १ तात्कालिक अपथ्य (सद्योजनक) २ पूर्व संचित दोष (कालान्तर जनक) औ इन्हीं २ हेतुओं के अन्तर्भूत ही महर्षियों ने उन्हीं में दोषों की अंशांश कल्पना करके ५ प्रकार बताये हैं। १ वातज़ २पित्तज़ ३ कफज़ ४ रक्तज़ ५ सन्निपातज़।

१—तात्कालिक अपथ्य (सद्योजनक) वर्षा जल में भींगना, भींगे हुए वस्त्रोंसे रहना, मल मूत्रादि अधारणीय वेगों को रोकना दिन में सोना, रात्रि में जागरण करना, अजीर्ण, कड़ी धूप में घूमना, अधिक मैथुन करना, अधिक भाषण करना, ओस तुषार, वर्फीली वायु में घूमना, विभिन्न स्थानों की यात्रा या प्रवास में पानी जगह जगह का पीने में आना, अत्युपात, व पसीने का रोकना, एवं कड़ी धूप से चलकर आना, या दौड़कर परिश्रम करके तत्काल ही शीतल जल का पीना। रजकण धूल, धूम्र युक्त वायु में अधिक रहना—आजकल शहरों कस्बों में, कल कारखाने के दूषित धुएं एवं रजकण; मिश्रित वायुमें लोगोंका कार्य करने पड़ते है, उसी वजह से लोगों को शुद्ध वायु के अभाव के कारण भी प्रतिश्याय अधिक रूप में पाया जाता है। देहात में प्रतिश्याय बहुत कम इसी कारण से होता है। क्योंकि उन्हें शुद्ध वायु शहरों और कस्बों की अपेक्षा अधिक मिलती हैं। इन समस्त कारणों से ही वायु कुपित होकर नासागत श्लैष्मिक कला में शोथ उत्पन्न कर प्रतिश्याय रोग उत्पन्न करता है।

२ पूर्व संचित दोष (कालान्तर जनक)—श्वास रोग, पेट की खराबी (कब्ज) तुण्डिकेरी टांसील का बढ़ना—दुर्वलता आदि अनेक कारणों से मस्तिष्क में वातादि दोष-रक्त आदि संचित होकर कोधादि अनेक प्रकार के कारण थोड़े से प्रकोप के कारण रोगकी उत्पत्ति कर देते हैं।

वास्तव में प्रतिश्याय पूर्व संचित और तात्कालिक अपथ्य के कारण श्वासनलिका के कुछ हिस्सों की श्लैष्मिक का प्रदाह होकर जुकाम उत्पन्न होता है।

लक्षण—प्रतिश्याय होने पर छींक आना, नाक में सुरसराहट होना।

सम्पूर्ण शरीर में पीड़ा, बेचैनी, नाक और आँखों से जल बहना, मुंह से लार बहना मुंह कफ से चिपटा, रहना, सिर में पीड़ा शिर का भारी रहना, मन्द ज्वर, स्वरभंग, अरुचि. गले में कांटे पड़ना, आदि लक्षण व उपद्रव उत्पन्न होते हैं।

आधुनिक वैज्ञानिक युग में लोगों की वृत्ति भी उतावली बन गयी है, रोगावस्था आरम्भ होते ही सद्य चिकित्सा पर उतारु हो जाते हैं। एवं इस पेटेन्ट मेडीसीन युगने तो सबको ही डाक्टर और वैद्य बना दिया है, जिन्हें देखिये वे ही-जुकाम-सिर दर्द के लिये चट कह देते हैं कि रामघी भलपाडायूक्तीग कोडा पायरिन, स्प्रो, एनासीन सारीडोन् प्रभृति औषधियों को ले लेते हैं, एवं ये औषधियां यद्यपि लाभ जनक है, किन्तु जैसे जुकाम हुआ है तो उक्त औषधियां गर्म और खुश्क है, इनसे जुकाम बिगड़ने का अंदेशा रहता है। क्योंकि जुकाम ३ दिन में स्वतः ही शांत हो जाता है, फिर यदि उग्र अवस्था हो तभी औषधि लेनी चाहिये। किन्तु हम तो तत्काल लाभ के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हेतु गर्म खुश्क और उग्र दवाओं का लेना तुरन्त ही शुरू कर देते हैं फलस्वरूप जुकाम कुछ समय के लिये रुक जाता है, एवं इसका प्रति विष हमारे शरीर में फैलता रहता है जिससे भयंकर रोग होने की संभावना रहती है, इस सम्बन्ध महर्षियों ने निम्न वचन कहे हैं।

प्रश्यायादथो कासः कासात्संजायते क्षयः
क्षयोरोगस्य हेतुत्वे शोषश्चाप्युप जायते ॥
बाधिर्यमान्ध्यमघ्रत्वं घोरांश्च नयनामयान्
शोथाग्नि सादकासादीन्वृद्धाः कुर्वन्ति पीनसः ॥
(मा० नि०)

जुकाम से कास, (खाँसी) से ओज प्रभृति धातुओं का क्षय होनेसे राजयक्ष्मा (टी.बी.) रोग होता है। प्रतिश्याय बिगड़ने से दुष्ट पीनस रोग-बाधिर्य, (बहरापन) दृष्टि मंद होना, घ्राण शक्तिका नष्ट (गन्ध नहीं आना) सिर दर्द होना, मन्दाग्नि कास, श्वास आदि भयंकर व्याधि उत्पन्न हो जाती है। अतः प्रतिश्याय की उपेक्षा न करते हुए निम्न चिकित्सा करना चाहिये।

चिकित्साः—प्रतिश्याय-की सामान्य चिकित्सा-रोग के मूल कारण ध्यान में रख कर करनी चाहिये यदि श्वास, पेटकी खराबी या टान्सील वृद्धि—नासारोग कमजोरीके कारण बार बार जुकाम होता हो तो, जुकाम की चिकित्सा करते हुए मूल रोगों की चिकित्सा करना चाहिये कारण कि जब तक मूल रोग रहेगा तब तक जुकाम की दवा से लाभ न होगा।

तात्कालिक-कारणों से होने बाली जुकाम में गर्म जल का पीना उपवास करना सबसे अच्छा इलाज हैं। यदि रोगी को कब्ज हो तो साधारण-दस्तावर दवा दे देनी चाहिये। साधारण जुकाम ३ दिन में स्वतः ही परिपक्व होकर आप ही ठीक हो जाता है। जुकाम के आरम्भ में कोई गरम खुश्क औषधि का सेवन नही करना चाहिये। नहीं तो अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं जिसका उल्लेख कर चुके हैं।

प्रयोग १ :—वनफशा-मुलहठी, सौंफ, सोंठ, को ३-३ माशे लेकर आधा सेर पानी में क्वाथ करे आधा पाव (चतुर्थांश) शेष रहने पर २॥ तोला मिश्री मिलाकर रात को सोते वक्त पीना चाहिये। इससे प्रतिश्याय दूर होकर सब उपद्रव शांत हो जाते हैं परीक्षित हैं।

प्र० २:- तुलसी पत्र-सोंठ-काली मिर्च, दालचीनी को ३-३ माशा लेकर आधा सेर पानी में उबाल कर चतुर्थांश शेष रहने पर ३ तोला मिश्री मिलाकर सुबह-शाम शेष आधा २ पीना चाहिये शाम को थोड़ा गर्म करके पीना हितकर है। यह उग्र प्रतिश्याय ज्वर सबको शमन कर देता है।

प्र० ३:—शुभ्रा भस्म ४ रत्ती की मात्रा गर्म जल से दिन में ३ बार जल से देने से प्रतिश्याय ठीक हो जाता है।

प्र० ४:—दूध में सोंठ और छुहारे डालकर औटा कर पीनेसे प्रतिश्याय शमन हो जाता है।

प्र० ५:—रसोन की एक गांठ को भूभर में साफ कर रात्री को छीलर उन (लहसुन) की कलियों का सेवन करके सो जाना चाहिये। इसे खाकर २ घण्टे तक जल नहीं पीना चाहिये। यह हमारे मालवे की सुप्रसिद्ध और प्रिय औषधि है, एवं यह पौष्टिक शीतवायु जुकाम को नष्ट करने में अद्वितीय है, इसी से इसे मालवेकी कस्तूरी कहकर पुकारते हैं।

प्र० ६:—देशाटन करते वक्त यदि किसी को पानी के दोषों से बार बार प्रतिश्याय हो जाता है तो वे प्रातः काल उठते ही शोचादिसे निवृत होकर ५-७ काली मिर्च मुख बन्द किये चबाना चाहिये। इस प्रयोग से पानी कही का भी नहीं लगेगा परीक्षित है।

७:—नीलगिरी तैल को रूमाल में छोड़कर प्रतिश्याय रोगी को सुंघना हितकर है क्योंकि प्रतिश्याय एक संक्रामक व्याधि है, एवं नीलगिरी तैल वायुशुद्धिकारक संक्रामक रोग नाशक हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८ शास्त्रोक्त प्रयोगः—कतिपय योगः—लक्ष्मी विलास रस श्वासकुठार रस, अभ्रक भस्म, शृङ्ग भस्म, मृत्युञ्जय रस, संजीवनी वटी, व्योषादि बटी, चित्रक हरीतकी, द्राक्षासव, चव्यकासव, दशमूलारिष्ट इत्यादि प्रयोग रोग दशानुसार चिकित्सक के आदेशानुसार करना चाहिये।

९:—शिरो विरेचन के लिये किसी तपकीर को सूंघना या श्वासकुठार रस का सूंघना भी हितकर है।

१०—:सिर पर मोटा वस्त्र लपेट कर ढक रखना चाहिये। रूक्ष अन्न का सेवन गर्म जल पीना चाहिये। रोगी को आराम करना चाहिये पथ्य भोजन करना हितकर हैं!

११:—१ शीतल जल पीना २ स्त्री प्रसंग करना ३ शीतल जल का स्नान करना ४ अधिक चिन्ता करना ५ पूरीष मूत्र प्रभृति अधारणीय वेगों को रोकना ६ शोक करना ७ नये अन्न का सेवन करना, ८ मद्य का सेवन करना-प्रतिश्याय रोगी को छोड़ देना चाहिये।

———

आयुर्वेदिक इन्जेक्शन और वैद्य समाज

लेखकः-डा० ओंकार शर्मा, आयुर्वेदाचार्य, आयुर्वेद वाचस्पति, एम० एस० सी०

अपने वैद्य वर्ग में प्रचलित पद्धति का जोर शोर से प्रचार देख कर मैं इन्जेक्शन विज्ञान की प्राचीन और अर्वाचीन रिसर्च अपने चिकित्सक बन्धुओं के सामने रख रहा हूं। इङ्गलैण्ड और अमेरिका आदि पाशचात्य देशों के अन्दर जो इन्जेक्शन प्रणाली का प्रादुर्भाव हुआ उसका इतिहास इस प्रकार से है। पैरैरा Perrira १८५४ ने अपनी पुस्तक दा ऐली मेन्टस आफ मैटीरिया मेडिका एण्ड थैराप्युटिल्स The Elements of Mereria Medca and Theraputics में औषधियों का शिरा में इन्जेक्शन देने का वर्णन किया है। तथा उसने सर क्रिस्टोफर वेर्नू (१६४६) जिसने सर्व प्रथम शिराओं द्वारा शरीर में दवा पहुंचाने का तजुरबा किया था, उसका और बोयले Boyle आदि अन्य विद्वानों का भी वर्णन किया है, तथा अन्य लोगों की बड़ी २ शंकाओं का स्पष्ट उत्तर देकर उनका भ्रम निवारण किया, जैसे वायु का शिरा में प्रवेश करने से भय और अधिक मात्रा में दवाओं को दवाओं में भरना आदि मोयिर अपनी पुस्तक "हिस्ट्री आफ फार्मेसी" में डा० सी० पी० परावज द्वारा हाइपोडरमिक सिरिंज का परिचय दिया और अफीम के स्थान पर मारफीन का प्रयोग करने का वर्णन सन् १८५५ में किया। चार्लस हन्टर ने सन १८६३ में प्रैक्टीकल रिलार्कस ओन दा हाइपोडरमिकल टीटमेंन्ट आफ डिसीज Practical Remarks on the Hypodermical Treatment of disease नामक पुस्तक लिखी, जिसमें उसने सूई द्वारा पिक्चर किये गये स्थान प. शोथ आ जाने तथा फोड़ा बन जानेकी सम्भावना आदि प्रश्नों के प्रकाशित लेखों पर आरोप लगाते हुए उत्तर दिये। उस समय में प्रायः त्वचान्तर्गत तथा सब ही प्रकार के इन्जेक्शनों से शोथ हो जाता था परन्तु फिर भी किसी वैज्ञानिक ने औषधियों में प्रयोग किये जाने वाले मिश्रण को कृमि रहित करने का कोई प्रयास नहीं किया।

सन् १८६४ ई० के ब्रिटिश फार्मोकोपिया में किसी भी इन्जेक्शन का वर्णन तक नहीं मिलता इससे स्पष्ट है कि उस समय में इन्जेक्शनों का कोई महत्व नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिया गया था। सन् १८९७ ई० फार्मोकोपिया में केवल एक मार्फीन (अफीम सत्व) के इन्जेक्शन का वर्णन देखने को मिलता है (फार्मोकापिया औषधि निर्माण की एक पुस्तक का नाम है) सन् १८७५ के फार्मोकोपिया में एपो मार्फीन Apomorphine Hypodermica. (Ergotin) आरगोटीन ये इन्जेक्शन और जोड़े गये, वहां के वैज्ञानिकों की ओर से कोई भी प्रयास उनको कृमि रहित करने का तब तक भी नहीं किया गया, परन्तु बहुत ही ध्यान देने की और मनोरंजक बात यह है कि अर्गोटिन के इन्जेक्शन में कर्पूर जल का प्रयोग उस दवा को अधिक दिन टिकाऊ बनाने के लिये मिलाया जाना बहुत ही उपयुक्त और आश्चर्यजनक था क्योंकि अर्गोटिन एक बानस्पतिक एक्सट्रेक्ट है उसमें कर्पूर जल का मिश्रण मिल जाने से फुंगी आदि पड़नी रुक जाती हैं। इसलिये इससे यह सिद्ध होता है कि औषध को अधिक दिन तक न बिगड़ने देने के लिये ही कर्पूर जल का प्रयोग किया जाता है।

ये उक्त अनुसंधान और खोज इन्जेक्शन के विषय में इंगलैंड में चल रही थी पर अमेरिका भी इन दिनों खामोश नहीं था उसके भी वैज्ञानिकों के हृदय में लगन थी अपने विज्ञान को उन्नत करने की सच्ची भावना थी। अतः उन्होंने ही औषधियों को कृमिरहित करने का श्रेय इंगलैड से पहिले प्राप्त किया, उसका इतिहास इस प्रकार है कि सन् १८८५ ई० के अमेरिकन फार्मोकोपिया ने अपने एक अध्याय में इंजेक्शनों को कृमिरहित न करने की निन्दा करते हुए बताया कि औषधियों का त्वचान्तर्गत इंजेक्शन खतरेसे खाली नहीं है क्योंकि इंजेक्शन से उस स्थान पर फोड़ा, विसर्प, मवाद आदि हो जाते हैं।

सन् १८९८ ई० के अमेरिकन फार्मोकोपियामें ऐपोमारफीन, कोकेन, अरगोटोक्सीन मोरफीन इन चार इंजेक्शनों का अनुसंधान और कर लिया गया। इस वर्ष अर्थात् सन् १८८९ में ऐम्पुलों और इन्जेक्शनों के मिश्रण को कृमिरहित करने का पूरा पूरा प्रयत्न किया गया इन्हों ने परिश्रुत जल को कुछ मिनटों तक उबाल कर ठंढा किया जिससे उसमें स्थित जीवाणुओं का नाश हो जाय तथा मिश्रण को बहुत दिन तक न बिगड़ने दिया ऐसा करने के लिए उसमें १५% प्रतिशत फिनोल का प्रयोग किया गया इससे बहुत ही सफलता मिली ओर इन्जेक्शन का पकना बन्द हो गया। कुछ दिन पूर्व लार्ड लिस्टर ने भी फिनोल का प्रयोग पूय बनने से रोकने और कृमिनाश करने के लिए सफलता पूर्वक किया था। ऐन्टी सेपटिक्स में सर्व प्रथम फिनोल (कार्बोलिक ऐसिड) का अन्वेषण लार्ड लिस्टर ने किया।

सन् १९१४ ई० के फार्मोकोपिया से विदित होता है कि इस वर्ष में इन्जेक्शन के विषय में मामूली सी और भी उन्नति की गई है इसमें निर्देश दिया गया हैं कि मिश्रण तैयार करते समय परिश्रुत जल को फौरन उबाल कर ठंढा करके प्रयोग में लाना चाहिए। इसके साथ साथ कुचला सत्व (स्ट्रकनीन) का इंजेक्शन और भी प्रयोग में लाया जाने लगा।

सन् १९१६ से १९३२ के बीच में विभिन्न नेशनल फार्मोकोपियाओं ने कृमि रहित करने के बहुत से प्रशंसनीय तरीके निकाले और तरह तरह के इंजक्शनों का निर्माण किया यह ही युग ऐलोपैथिक का युग कहा जा सकता है।

जिस विज्ञान पर ऐलोपैथिक डाक्टर गर्व करके वैद्य बन्धुओं को अपना नक्काल कहता है उसका सारा इतिहास तो आपको आखों के सामने आ ही चुका है कि कब से इन्जेक्शन की एक चीज इनके मस्तिष्क में आई। अब आप अपने घर में देखिए की आपको भारतीय विद्वानों के इन्जेक्शन सम्बन्धी ज्ञान के विषय में जानकर आश्चर्य होगा कि यहां इसका प्रयोग इनसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कई हजार वर्ष पूर्व हो चुका है और ये कमियां जो इन्हों ने सन् १९३२ तक दूर की, आज से ३००० हजार वर्ष पूर्व ही दूर की जा चुकी थी। हमारे इन्जेक्शन कभी पकते नहीं थे, और उनका प्रभाव शीघ्र ही होता था। मार्लिन्द प्रशंन नामक एक बौद्ध धर्म की पुस्तक में भगवान बुद्ध ने जन्मान्ध शिशु को पुनः चक्षु प्रदान करने की चिकित्सा के लिए अपने शिष्यों को कुछ औषधियों का जो उसमें लिखी है शिरा में इन्जेक्शन देने का आदेश दिया है। शार्ङ्गधरसंहितामें लिखित सूचिका भरण रस का अभिप्राय इस प्रकार है।

संलग्नोयो भवेत्सूतस्तं गृह्णीयाच्छनैः शनैः।
वायुस्पर्शो यथा न स्यात्तथा कूप्यां निवेशयेत्॥
यावत् सूच्या मुखेलग्नः कूप्यानिर्याति भेषजम्।
तावन्मात्रो रसो देयो मूर्च्छिते संन्निपातिनि॥
क्षुरेण प्रच्छिते मूर्ध्निस्तत्रांगुल्या च घर्षयेत्।
रक्त भेषज संपर्कान्मूर्च्छितोपि हि जीवति॥

शार्ङ्गधर संहिता अ० १२ द्वि० ख०

इस सूचिका द्वारा शरीर में प्रविष्ट किये जाने वाले रस में पारद और विष द्वारा समिश्रित औषध को सम्यक प्रकार रखने के लिए आदेश दिया है कि औषध को शीशी में भरते समय वायु का स्पर्श नहीं होना चाहिए। जैसा कि आज कल शीशे के स्वच्छ निर्वात स्थान में किया जाता है। जिससे जीवाणु हवा के साथ जाकर औषध को दूषित न कर सकें। अब रही बात औषध को लेकर रक्त में प्रयोग करने की, इसके विषय में सूचिका के मुख पर जितनी औषध आ जाये उसी को रक्त में प्रवेश करना लिखा है, उस समय में औषध एक विशेष प्रकार की सूई द्वारा शरीर के अन्दर दी जाती थी, आज इसका स्वरूप बदल गया है, और प्रति दिन नये नये ढंग की सीरिंज बन रही हैं। पहिले सीरिज लोहे की होती थीं इसके पश्चात् रिकार्ड की बनने लगी, अब तो साधारण शीशे की ही बनने लगी हैं। भारतीय आचार्यों का सिद्धांत स्वच्छता पूर्वक दवा को रख कर रक्त में प्रविष्ट करना था और आधुनिक सिद्धांत भी यही है। पाश्चात्य देशों में पैरेरा ने सन् १८५४ ई० में औषध को रक्त में प्रविष्ट कराने की बात सोची, जब कि हमारे यहां के आचार्यों ने उससे हजारों वर्ष पूर्व इस पद्धति का साधारणतया रोगियों पर प्रयोग निर्विघ्नता के साथ करना शुरू कर दिया था क्योंकि इस सूचिकाभरण रस में जो द्रव्य हैं वे स्वयं कृमिनाशक हैं इसलिए इन्जेक्शन के बाद शोथ, कोथ फोड़ा आदि होना असम्भव था। हां कभी कभी ताप हो जाने पर मधुर द्रव्य, द्राक्षादि द्रव्योंका प्रयोग अवश्य करने का उल्लेख अवश्य आता है। उक्त इतिहास से स्पष्ट है, कि हम इस विज्ञान के जन्म दाता हैं। परन्तु उसके पश्चात् केवल बौद्धकालीन आचार्य नागार्जुन १५०० ई० ने एक दो प्रकार की औषधियां प्रस्तुत की जो रक्त में ही इंजेक्शन रूप में देनी पड़ती थी परन्तु उसके बाद गत सैकड़ों वर्षों तक इन्जेक्शन के विषय में कोई रिसर्च नहीं चल सका, कुछ ही दिन हुए कुछ लोगों ने तरह तरह की औषधियों को फूंक कर उनके क्षार तैयार करके उनको परिश्रुत जल में मिला कर उनके एम्पुलों में भरा। परन्तु वैज्ञानिक दृष्टि से ये बहुत ही हानिकारक और गुण रहित प्रमाणित हुए। जैसा कि हमारे वैद्य समाज ने अनुभव किया, उन्होंने सोंठ, मिर्च, पीपल, गुड़, गोबर, गोखरू, सारी चीजों के कल्पित नाम रखकर इंजेक्शन बना डाले। उन्होंने इस प्रकार के सब द्रव्यों के क्षार बनाकर उनको पानी में घोल दिया, किस द्रव्य का क्या प्रभाव है। और वह शरीर के किस संस्थान पर क्यों पड़ता है। इसकी वहां क्या प्रतिक्रिया होती है, इत्यादि का कोई साहित्य उन्होंने खोज कर तैयार नहीं किया। इससे तो यही प्रमाणित होता है कि ये इस प्रकार के आयुर्वेदिक इंजेक्शन एलोपैथिक इंजेक्शनों की नकल हैं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और एक तरह के अर्क विभिन्न नामों के एम्पुलों में बन्द कर दिये हैं। इस प्रकार के आचरण से डाक्टरों और आयुर्वेद को बहुत ही हानि पहुंची है, इसमें कोई भी शक नहीं है कई बन्धुओं ने तो बिना ही फार्मेस्युटिकल साइंसका अध्ययन किये ही इंजेक्शन बनाने के तरीके और फारमूले दे दिये हैं, और इनकी लटर पटर किताबें भी लिख मारी हैं। मुझे दुःख तो इस बात का है कि हमारे आयुर्वेद के समझने वाले कर्णधारों ने बिना सोचे समझे अपना प्रशंसात्मक मत भी लिख दिया है। सावधान ? इस प्रकार की पुस्तकों के आधार पर चलना और इंजेक्शन आदि बना कर लगाना खतरे से खाली नहीं है।

पाश्चात्य विद्वानों ने जो इंजेक्शनों पर खोज की है, वह इस प्रकार है। उन्होंने पहले किसी औषध को रोग के लिये जांचा और निश्चित किया, फिर तत्वमूल बनाया और उसका इंजेक्शनों में प्रयोग किया, तत्व मूल द्वारा बने इंक्जेक्न कभी भी नहीं बिगड़ सकते, और उनका असर फौरन होता है। औषध का तत्वमूल बनाते समय यह देखना होता है कि वह पेड़ की शाखाओं, पत्तों, पुष्पों, छाल, मूल में से कौनसे अंग में से अधिक निकलता है, और वह जल, अलकोहल, और ईथर में से कौन से में घुलनशील है। वह जिसमें भी अधिक घुलता हो उसको उड़ा कर तत्वमूल निकाला जाता है, और इसी प्रकार कई बार साफ कर लिया जाता है। तत्वमूल तैयार हो जाने पर उसकी मात्रा निर्धारित करनी होती है, जो रिसर्च का मुख्य अंग है। पहिले तो उसकी विभिन्न मात्राओं को चूहों और बिल्लियों, बन्दरों, खरगोशों पर इंजेक्शन द्वारा प्रयोग कर यह निश्चित कर लिया जाता है, कि इसकी कितनी मात्रा घातक है, इससे इनके विभिन्न अङ्गों पर क्या प्रभाव हुए आदि बातें नोट करके फिर रोगियोंपर प्रयोग किया जाता है और उसके परिणामों की सूची बना ली जाती है। इसी का नाम साहित्य है, जीव जन्तुओं के अङ्गों को काट कर देखने से बहुत सी बातों का पता लगाता है इंजेक्शन का पूरा अन्वेषण न हो पावे तब तक वह अधूरा है। उसका प्रयोग कदापि नहीं करना चाहिये, तथा सरकार को इस ओर ध्यान देना चाहिये अन्त में मैं अपने वैद्य बन्धुओं से आग्रह करता हूं कि वे अपने विज्ञान की अगर उन्नति चाहते हैं, दूसरों की नकल करना पसन्द नहीं करते तो परिश्रम करें और अपना शेष समय गपशप में नष्ट न करें तथा कार्य शुरू करें तथा दूसरे लोग जो कार्य कर रहे है, उन्हें सहयोग दें, उनकी कटु आलोचना करें, दूसरी बात यह भी है कि चाहे पुराने विचारोंवाले वैद्य कितना भी कहें परन्तु आज का वैद्य आगे भी इंजेक्शन लगाना नहीं छोड़ेगा, क्योंकि इससे उसे आर्थिक लाभ है, इससे वह दूसरी पैथी के इंजेक्शन प्रयोग करके दूसरों को लाभ पहुंचायेगा, दूसरों को प्रोत्साहन देगा, और अपनी चीज के प्रचार में बाधक होगा, अतः मैं यही राय दूंगा कि आप अपने ही आयुर्वेदिक इंजेक्शनों को प्रयोग करें तथा निर्माताओं को अपने सुझाव भेजें जिससे उनमें सुधार हो इसी में वैद्य समाज का लाभ है।

सूचना

आयुर्वेद चिकित्सक का छोटा विशेषाङ्क 'प्राकृतिक चिकित्साङ्क' मई जून में प्रकाशित हो रहा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कासनी

ले० दलजीत सिंह वैद्य पो० चुनार यू० पी०

(गताङ्क से आगे)

प्रकृति—हरी कासनी के पत्र प्रथम कक्षा में शीतल एवं तर हैं। इसमें सूक्ष्म उष्ण घटक भी वर्तमान होते हैं जो इसके पत्तों पर फैले होते हैं। इनका संगठन इतना विरल (शिथिल) होता है कि धोने मात्र से नष्ट हो जाता है। इसीलिए कासनी पत्र को धोने से मना किया जाता है। सूखी कासनी के पत्र (सूखे पत्ते) शीतल एवं रूक्ष होते हैं। परन्तु उसकी रूक्षता प्रथम कक्षा से अधिक नहीं होती। कोई कोई द्वितीय कक्षा पर्यन्त मानते हैं नफीसी के अनुसार जंगली व छोटी की अपेक्षा बागी व बड़ी अधिक तर एवं शीतल होती है। इसके भीतर तिक्तता फीकापन क्षारत्व और संग्राही गुण होते हैं ओर यह स्पष्ट है कि तिक्तता एवं क्षारत्व उसमें पाये जाने वाले उष्ण वीर्य के परिणाम है और वह अवरोधोद्घाटक (मुफतेह) हैं। फीकापन इसकीजलीय शक्ति और कब्ज पार्थिव शक्ति के कारण से है।

अहितकर—उस खाँसी (कास) के लिए जिसका कारण यकृत के उन्नतोदर भाग की सूजन न हो। यह कासजनक भी है, परन्तु बहुत हानिकर नहीं है, अपितु कतिपय दोषों में तो इससे उपकार ही होता है।

निवारण—शर्करा और शर्वत बनफ्सा। प्रतिनिधि शाहतरा (पित्तपापड़ा) वा हरी खतमी वा खुब्बाजी के पत्र का स्वरस। प्रधान कर्म—यह संताप एवं तृषा को शांत करता (दाह प्रशमन) और रक्त एवं पित्त के प्रकोप को शमन करता है। मात्रा—पत्र स्वरस की मात्रा १४ तोले (अर्ध रतल) है। (मख्जन)।

गुण कर्म—कासनी प्रमाथी (मुफत्तेह सुदद), मूत्रल और रक्तप्रसादन है तथा रक्त की उष्णता और पित्त की तीक्ष्णता को शमन कर देती है आमाशय, यकृत और प्लीहा इत्यादि के उष्ण शोथ को विलीन करती है, इन अंगों की उष्णता (हरारत) को नष्ट करती है और आमाशय और यकृत को शक्ति प्रदान करती है। उष्ण शोथों में वाह्य रुप से प्रलेप करने से ठंढक (शीत) पहुंचाती दोषो को विलोम करती (रदअ) और शांति उत्पन्न करती है।

उपयोग—यह रगों एवं कोष्ठों के अवरोधों का उद्घाटन करती है। इसमें काफी संग्राही गुण (कब्ज) है जिससे यह आमाशय यकृत को बलप्रद है। यह उष्ण यकृत् को बहुत सात्म्य है। यह शीतल यकृत को भी स्वभावज प्रभाव से लाभकारी है। हृत्स्पंदन (खफकान) में इसके स्वरस में सतू मिलाकर लेप करते हैं। कासनी हृदय को बल प्रदान करती है, अमलतास के साथ यह कंठगत सूजन को उतारती है यह नेत्राभिष्यन्द (आंख आने) को लाभकारी है इसका रस नेत्र के जाले को काटता है। (नफीसी)

कासनी रक्तोष्मा एवं पित्त की तीक्ष्णता को शमन करती और प्यास बुझाती है। हरी कासनी के पत्तों का स्वरस अकेले अथवा सिरका और सफेद चंदन के साथ मस्तक पर लेप करने से गरमी एवं पित्त का सिरदर्द आराम होता है। लालचन्दन गुलाब पुष्पार्क और सिरके साथ पित्ती उछलने (शीतपित्त) को लाभकारी है। इसके पत्तों को पीस और रोगन बनफ्शा में मिला कर लेप करने से गरम पित्तज नेत्राभिष्यंद (आंख आना) आराम होता है। (शैशव के अनुसार) इसके पत्तों को जौ के आटा के साथ पीस कर हृदय प्रदेश के ऊपर प्रलेप करने से हृत्स्पन्दन (खफकान) दूर होता है, कठिन सूजन उतरती है और उष्ण हृदय को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शक्ति प्राप्त होती है। इसके अकेले वा उपयुक्त औषध द्रव्य के साथ पीने से यकृत और प्लीहा के अवरोधों का उद्घाटन होता है, कामला और पित्तज जलोदर आराम होते हैं, यकृत को शक्ति प्राप्त होती है और रक्त गत उष्णता, तृष्णा, उत्क्लेश पित्तोद्वेग और आमाशय शोथ, अथवा आमाशय तथा यकृत का दाह एवं संताप मिटते हैं।

यह मूत्रमार्ग और गवीनी का शोधन करता है। खाकसी (रंगेशो) और सादा किंजबीन के साथ पीने से पित्तज वमन, पित्त प्रकोप, शीतपित्त (शरा), पैत्तिक रक्त प्रकोप, मसूरिका (जुद्री), रोमांतिका (हुस्ना) और पित्तजन्य विसूचिका में उपकार होता है। इसके पत्ते सिरका के साथ खाने से पित्त शमन होता है और पित्तातिसार आराम हो जाता है। इसके साथ थोड़ा सा सौंफ एवं कुशूल के बीज पका लेने से अवरोधोद्घाटन की शक्ति एवं अतिसार बढ़ जाता है जंगली कासनी आमाशय को और बागी यकृत् को सात्म्य है। इसके पत्र, पुष्प, बीज और मूल सबको एकत्र अकेले वा कुशूल के बीज के साथ क्वाथकर सादा सिकंजबीन या बजूरी मिलाकर अथवा शर्बत कुशूल मिलाकर वा यथावश्यक उनमें से हर एक बीज के साथ पकाकर पीने से जनपदोध्वंसक चिरकालीन द्वंद्वज विषम ज्वर (हुम्मियात मुरक्किबा कुहना ववाइय्या), जलोदर और प्लीहा के रोग आराम होते हैं तथा यह हस्त पाद शोथ (तहब्बुज) का सिद्ध भेषज है। सिरका और जौ के आटे के साथ इसका प्रलेप करने से उष्ण सन्धिशूल उष्ण (पित्तज) वातरक्त और पित्तजनित सूजन उतरती है। सूजन पर इसका प्रलेप करने से जौ के आटा में मिलाकर लेप करने से विसर्प (हुमरा) आराम होता है और कठिन सूजन उतर जाती है। इसके रस का लेप पित्तज शोथों में उपकारी है।

इसके स्वरस में गुलाब का फूल पीस—मिलाकर दोनों कनपुटियों और मस्तक पर लेप करने से उनमें होनेवाला शूल शमन होता है। इसके रस (पत्र-स्वरस) में अमलताश और शर्बत तूत घोलकर गंडूष करने से प्रारम्भिक कंठशोथ एवं तज्जात वेदना और (खुनाक) आराम होते हैं। कासनी का रस रक्तनिष्ठीवन को लाभकारी है।

कासनी के बिना धोए पत्र प्रकृतिको मृदु करते (और विबंध का नाश करते हैं और अतिशय गुण-कारी हैं, धोने से अहितकर और संग्राही हो जाते हैं।

यदि आमाशयमें गरमी पैदा हो जाय, तो इससे (कासनीपत्र) बढ़कर अन्य औषधि नहीं है। यह गर-मीले हुए जलोदर को आराम पहुंचाती, मूत्रमार्ग और वृक्क के अबरोधों का उद्घाटन करती है। कभी ऐसा करते हैं कि कासनी के विना धोए हुए पत्र लेकर स्वरस निकालकर उसे एक बरतन में रख कर वस्त्र से ढँककर वायु में रख देते हैं। प्रातःकाल इसे छानकर पीते हैं। इसके यकृत के अवरोधों का प्रबल उद्घाटन होता है। इससे पित्तज वमन, विसूचिका और रक्तातिसार आराम होता है। (विजाइन)।

———

आजका भयंकर रोग प्रमेह

लेखक—केदारमल शर्मा आयुर्वेदीय दातव्य औषधालय जुगसलाई बाजार, "टाटा नगर"

आज मानव समाज में जिधर भी देखते हैं उधर घर घरमें प्रमेह रोग ने अपना कब्जा जमा रखा है। यह क्यों होता है। इसके पहले यह जान लेना जरूरी है कि प्रमेह क्या है ? प्रमेह शुक्रक्षय को कहते हैं। जो कि हर समय मलमूत्र के साथ वा ऐसे ही शुक्र का पतन होना प्रमेह है। इसमें हाथ पैरों में जलन, शिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में पीड़ा, नेत्रों के आगे अन्धकार का होना, एवं बुद्धि स्मृति का नाश होता है। इस तरह देखने पर पता चलता है कि प्रमेह पुरुष के पुरुषत्व को मिटानेवाला है। क्योंकि शुक्र ही पुरुष का एक मात्र जीवन है। जिसके नष्ट होने पर पुरुष में कुछ भी नहीं रह जाता। यह बिमारी इतनी प्रचलित हो गई है कि १४-१५ ❀ वर्ष के लड़के को भी हो जाती है और वह कहने लग जाता है कि मेरा मूत्र लाल एवं पीले रंग का आता है और मल की कब्जियत रहती है।

अतः बीमारी कहीं से आती नहीं बल्कि मनुष्य उसे खुद अपने हाथों से बुलाता है। क्यों कि जब मनुष्य अपने आहार बिहार एवं आचार विचार को बिगाड़ता है तब ही बीमारियां अपना कब्जा मनुष्य के शरीरपर जमा लेती है। परन्तु कोई मनुष्य कहे कि मेरा आहर विहार सब ठीक है फिर मुझे प्रमेह क्यों हुआ ? इसके लिये हमें हमारे आयुर्वेद के ग्रन्थ उठाने पड़ते हैं। और जब हम उसके कारण देखते हैं तो पता चलता है कि मनुष्य के विरुद्ध भोजन (भोंजन पचने के पहिले भोजन करना) करने से, खट्टा, तीता, एवं क्षारीय पदार्थों के सेवन करने से, भेड़ बकरी आदि ग्राम्य, मछली कछुआ आदि जलीय, तथा हंसादि आनूप जीवों के माँस रस को खाने से, अत्यन्त चीनी खाने से, सुख मिलने के कारण हर वक्त पड़े रहने से, दिवा स्वप्न (दिन में सोना), से, व्यायाम न करने से अत्यन्त वा विपरीत मैथुन करने से, कुत्सित विचारों के करने से, हर वक्त कामज चित्र वा पुस्तकों के देखने से प्रमेह होता है। साथ ही आज के जमाने में प्रचलित चाय एवं पान दोनों ही प्रमेह के लिये अग्नि में ईंधन का काम करते है। क्यों कि चाय निद्रा, भूख नाशक तथा कब्ज को करनेवाली है। इन कारणों से शरीर में गर्मी बढ़ती है। और वह गर्मी मूत्र को लाल पीला उतारती हुई शुक्र का पतन करती है। इसी प्रकार पान भोजन के उपरान्त खाने से भोजन को पचाता है किन्तु दिन भर पान खाने से शुक्र का क्षय करते हैं। क्योंकि पान उष्ण, तीक्ष्ण एवं क्षार गुण युक्त है इन कारणों से पता चलता है कि हर एक मनुष्य में उपरोक्त गुण अधिकतर पाये जाते हैं। जिससे उन्हें प्रमेह जैसे भयानक रोग का शिकार होना पड़ता है। अगर मनुष्य अपनी प्रकृति के अनुकूल आहार बिहार करता हुआ आचार विचारों को उत्तम रखता है तो उसे प्रमेह होगा ही क्यों ? इसीसे पुरुष के प्रमेह को आयुर्वेदाचार्यों उसके पुरुषत्व को शमन करनेवाला बताया है।

अतः अब हमें यह भी जानना चाहिए कि प्रमेह का पूर्व रूप क्या है और यह कितने प्रकार का है। क्योंकि पूर्वरूप के बिना आदमी किसी रोग की पहचान नहीं कर सकता और रोग बढ़ाता है। परन्तु मनुष्य को पता नहीं चलता कि मुझे क्या रोग हो रहा है। इसीसे किसी भी रोग का पूर्वरूप जान लेना आवश्यक होता है। प्रमेह होने के पहले दांत, जिह्वा, तालु में मैल का बहुत जमना, हाथ पैरों में जलन होना, अंग आपस में चिपकने लगता है। और मूत्र गाढा बहुत ज्यादा बारम्बार उतरता है। तथा उस मूत्र के साथ शुक्र आता है। यह प्रमेह वात पित्त, कफ के भेद से तीन भागों में बँटा हुआ है। परन्तु इन तीन भागों से भी यह २० प्रकार का हो जाता है। जिसमें कफज १० प्रकार का है जो साध्य है। क्योंकि कफज प्रमेह के दोष और दूष्य (रस, असृक्, मांस, मेद, शुक्रादि) समान रहते हैं और इनकी क्रियायें भी समान होती है जैसे कि कटु, तीक्ष्ण एवं उष्ण पदार्थ कफ को शमन करते हुए दूष्यों को भी शान्त करनेवाले

❀ चौदह पन्द्रह वर्ष के लड़के को शुक्र की उत्पत्ति नहीं होती, परन्तु कामोत्तेजक कार्यों को करनेसे शुक्र की उत्पत्ति होकर रोग को पैदा कर देते हैं। जैसे, सिनेमा देखना, साईकिल चलाना, कुसंगति आदि कामोत्तेजक है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। परन्तु पित्तज जो ६ प्रकार के हैं वे कष्टसाध्य (याप्य) है। क्योंकि पित्त को मधुर शीतादि पदार्थ शान्त करते हैं लेकिन दूष्यों को विकृत करते हैं। इसी तरह वातज प्रमेह ४ प्रकार के है जो असाध्य हैं। क्योंकि वातज प्रमेह में मज्जा शुक्रादि मुख्य धातु क्षीण हो जाती है। और सारे शरीर को कृश करने लगती है इसी से वातज प्रमेह असाध्य हैं। परन्तु वातज प्रमेहों में भी मधुमेह बिशेष असाध्य है। लेकिन इनसे अलावा एक और प्रमेह होता है जिसे जन्म जात कहते हैं। जो पिता के कारण से होता है। यह भी असाध्य होता है। और प्रायः करके सभी प्रमेह मधुमेह की प्रतीक्षा करते रहते हैं। क्योंकि जिस तरह एक कमजोर पुरुष हर वक्त बलवान पुरुष से मिलना चाहता है। उसी प्रकार १६ प्रकार के प्रमेह साध्य एवं कष्टसाध्य होने से ये सदा मधुमेह की प्रतीक्षा करते रहते हैं। क्योंकि ये असाध्य हैं।

अतः शुक्र मधुर है, घन है। रस (अमृत) के समान गुणादि धर्मोंवाला होने से रसायन स्वरूप है। यह मधुर होने से जब मधूर रस के साथ मिलता है तब यह (शुक्र) विकृत होता है। और फिर वात, पित्त कफके साथ मिल करके प्रमेह रूप धर लेता है। तथा शुक्र पतला पड़कर मधु के समान मधुर होकर मधुमेह में परिणत हो जाता है। तभी इसकी सभी प्रमेह प्रतीक्षा करने लगते हैं जो कि असाध्य होने से जब प्रमेही के आलस्य, शिथिलता, कफ स्राव एवं शरीर पर मक्खी आदि विशेष बैठने लग जाय। और मूत्र वारम्बार तथा अधिक मात्रा में आने लगे एवं इन्द्री पर पिड़िकायें (फुन्सियां) हो जाय। वे विशेष पीड़ा को देवें तो वह प्रमेह मनुष्य को पंच भूतों से विमुक्त कर देता है। इसीलिये ऐसे रोगों से मनुष्य को हर समय बचते रहना चाहिए एवं उसकी पूर्ण चिकित्सा करवानी आवश्यक है। जिसमें आहार बिहार एवं आचार बिचार को ठीक रखता हुआ औषध को प्रयोग में लेवे।

अतः स्वच्छ एवं सादगी युक्त आहार करें जो कि शरीर में किसी प्रकार के विकार पैदा कर सके। इसी तरह बिहार में ज्यादा मैथुन, विपरीत मैथुन न करते हुए व्यायामादि का प्रयोग करे एवं साथ ही ऐसे कोई कामज चित्र वा पुस्तकों का अध्ययन न करे जिससे मनमें ग्लानि पैदा हो, इस लिये ज्ञानयुक्त विचारों को मस्तिष्क में रखे जिससे ग्लानि दूर हो। और ऊपर से औषध का प्रयोग करे। प्रमेह में घृतकुमारी बहुत उत्तम है इसलिये इसे जिस तरह भी हो वैद्य से पूछ कर सेवन करें। और साथ में वसन्तकुसुमाकर, बृहद् बंगेश्वर, बंग भस्म, प्रवाल भस्म, त्रिवङ्ग भस्म, नाग भस्म, चन्द्रप्रभावटी आदि अन्यान्य उत्तमोत्तम औषधियों का सेवन करें। जिससे वह ठीक हो सके। किन्तु वैद्यों को चाहिए कि वे रोग का पूर्ण निर्णय करके ही चिकित्सारम्भ करें। क्योंकि वात, पित्त कफ समान गुणादि धर्म्मोंवाले नहीं होते। इसलिये जो वैद्य वात पित्त, कफ का निर्णय न कर सके वे रोगीको औषध सेवन करवावें। क्योंकि वह वैद्य औषधि एवं रोगों को नहीं जानता और बिना जानी हुई औषध हानिकारक है। जैसा कि चरक के सूत्र स्थान के पहले अध्याय के १२६ वें श्लोक में कहा है कि मनुष्य के मस्तक पर अगर इन्द्र का बज्र भी गिर जाय तो वह बच सकता है। परन्तु औषध को नहीं जाननेवाले वैद्य से ली हुई औषध जरूर हानिकारक होती है। इसलिये वैद्यों को चाहिए कि वे रोग एवं औषधि का पूर्ण निर्णय करके ही चिकित्सा करें। तब ही वे वैद्य कहला सकते हैं केवल औषधियों के रखने से ही वैद्य नहीं कहला सकते। साथ ही रोगियों को भी चाहिये कि वे वैद्य की अच्छी तरह जांच कर श्रेष्ठ वैद्य से ही इलाज करावें। तब ही वे निरोग हो सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिहार प्रान्तीय वैद्य सम्मेलन विशंतितमाधिवेशन बाढ़ (पटना)

के सभापति आयुर्वेदाचार्य, श्रौतस्मार्तकर्मकाण्डशास्त्री, पं० श्री त्रिपाठी कमलाप्रसाद मणिचिकित्सक,

(बिहारोत्कलगवर्नमेंट डिप्लोमाभूषित, आयुर्वेदिक रिसर्च स्कौलर तथा रिवार्ड प्राप्त, प्रधानाध्यापक, मणिप्रभा आयुर्वेद विद्यालय, व्यवस्थापक अनाथबान्धव महौषधालय, बक्सी महल्ला, पटना सिटी) का

अभिभाषण

मंगलाचरण

योगेन चित्तस्य पदेन वाचां, मलं शरीरस्य च वैद्यकेन।
योऽपाकरोत्तं वरदं मुनीनां, पतञ्जलिं प्राञ्जलिरानतोऽस्मि॥
आविर्बभूव कलशं दधदर्णवाद्यः पीयूषपूर्णममरत्वकृते सुराणाम्॥
रुग्जालजीर्ण जनता जनितप्रशंसो धन्वन्तरिः सभगवान भुविकायभूयात्॥
रागादिरोगान् सततानुषक्तानशेषकाय प्रसृतानशेषान्।
औत्सुक्यमोहारतिदाञ्जघान योऽपूर्व वैद्यायनमोऽस्तुतस्मै।

परमादरणीय भूतपूर्व स्वायत्त मंत्री पं० विनोदानन्द झा, एम० एल० ए० महोदय, श्रद्धेय स्वागताध्यक्ष महाशय एवं स्वागतकारिणी के माननीय सदस्य महानुभाव, पूज्यवर प्रतिनिधिगण एवं मण्डप के समागत बन्दनीय सभ्यवृन्द, श्रद्धेय आयुर्वेदाध्यापक महानुभाव, आदरणीय औषध निर्माताओं, अभिनन्दनीय देवियों उदीयमान भावी आयुर्वेद राष्ट्र के निर्माता आयुर्वेदिक प्रिय छात्र समुदाय तथा मान्य आयुर्वेदानुरागी सज्जनों ?

सर्वप्रथम यहां विनम्रतापूर्वक निवेदन कर देना अप्रासंगिक न होगा कि जिस बिहार प्रान्यी वैद्य सम्मेलन, पटना के आज तक बड़े बड़े ज्ञान वयोवृद्ध तथा अनुभवी एवं कर्मठ विद्वान् सभापतित्व कर चुके हैं, उस महान सम्मेलन के सभापतित्व का गुरुतर भार जब कि प्रान्त में हमारे पुराने कर्णधारों में बैमत्य अधिक बढ़ा हुआ है, मुझ जैसे अकिञ्चन पर सहसा छोड़ना "पिपीलिका चुम्बति चन्द्रविम्बम्" सा मुझे प्रतीत होता है पर आप वैद्य बन्धुओं की सदिच्छा एवं आग्रह से जिस प्रकार भगवान् श्रीकृष्ण ने किंकर्त्तव्य-विमूढ़ अर्जुन को सहसा युद्ध में ठेल उसे लाचार बना दिया उसी प्रकार मैं भी प्रोत्साहित किया गया। प्रान्त में मुझ से अधिक ज्ञान, वयोवृद्ध तथा अनुभवपूर्ण एवं लोक सेवाभाव समृद्ध अनेकानेक विद्वान् हैं। उनमें यहां कई एक आज उपस्थित भी हैं। उन्हीं में से यदि किसी एक महानुभाव की अध्यक्षता में यह अधिवेशन सम्पन्न होता तो विशेष गौरवान्वित होता किन्तु जब मेरी आप सबों के सामने एक न चली तो अन्त में "त्वया हृषीकेश हृदिस्थितेन यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि" या "मुक्ताभावे शंखचूर्णम्" इत्यादि को चरितार्थ करने के लिये आप सबों के बीच आप लोगों की आज्ञा शिरोधार्य कर डरता-डरता आ गया हूं।

अस्तु "अज्ञानात् प्रमादाद्वा" यदि कुछ त्रुटियां मुझसे हो जांय, जिनका पद-पद पर होना सम्भव है तो आप महानुभाव क्षमा करेंगे। आप लोगों ने इस पुनीत स्थान पर मुझे बैठाया है, इस हेतु आपका मैं बड़ा आभारी हूं। इस अवसर पर प्रान्त के उन मान्य विशिष्ट वैद्यों अर्थात् आचार्य पं० कपिलदेव त्रिपाठीजी, भूतपूर्व सभापति १९वां प्रांतीय वैद्य सम्मेलन भागलपुर माननीय सुखराम प्रसादजी, प्रोफेसर राजकीय आयुर्वेदिक कॉलेज, पटना, आदरणीय मित्र आचार्य पं० उपेन्द्रनाथ झा जी मुजफ्फरपुर तथा कविराज आचार्य मन्मथ नाथ वन्दोपाध्याय, प्रिन्सिपल भागलपुर आयुर्वेदिक कालेज के प्रति मैं नतमस्तक हो कृतज्ञता ज्ञापन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करता हूं, जिन्होंने मुझपर विश्वास कर सभापति निर्वाचन में अपना प्रस्तावित नाम वापस लेकर मुझ में अमित प्रेम तथा विश्वास प्रदर्शन किया एवं महानता का परिचय दिया। अस्तु आप सभी से मेरी प्रार्थना है कि जिस प्रकार मुझ पर विश्वास एवं अमित प्रेम प्रदर्शित कर इस महत्वपूर्ण स्थान पर आज मुझे बैठाया है उसी प्रकार पूर्ण सहयोग देकर मुझे कर्मठ बनाने का बल प्रदान करे जिससे मैं वस्तुतः आयुर्वेद के विकासमें समुचित सहायक हो सकूं तथा आपका विश्वासभाजन बना रहूं।

अतीत वन्दनीय विभूतियाँ

महानुभाव !

हम क्या थे और आज किस ओर जा रहे हैं तथा इससे हमारा भविष्य कैसा बनेगा इत्यादि बातों की ओर जब दृष्टिपात करते हैं तो सहसा वे अतीत विभूतियाँ सामने आ जाती हैं जो कुछ ही वर्ष पहले हमारा पथ प्रदर्शक थीं। जिन सबका यदि स्मरण दिलाने लगूं तो एक बहुत बड़ा ग्रन्थ बन जाय और आपका समय भी उसमें नष्ट हो। फिर भी उनमें कुछ स्मरण अनिवार्य है। सर्वप्रथम जगत पूज्य महामना पण्डित प्रवर श्री मदनमोहन मालवीयजी की अमर विभूति, जिनकी सर्वतोमुखी सर्व हितैषिणी लोकोपकारिणी प्रतिभा तथा अविकल कार्यकारिणी शक्ति, शिक्षा प्रसार, जिनका प्रधान फल हिन्दू विश्वविद्यालय और उसमें उच्चस्तर का आयुर्वेद प्रशिक्षण महाविद्यालय, औषध निर्माणशाला औषधवितरण केन्द्र, चिकित्सालय तथा भेषजोद्यान प्रभृति है, किसके स्मरण पथ में न विद्यमान होगा? आपने अखिल भारतवर्षीय वैद्य सम्मेलनका सभापतित्व कर आयुर्वेद प्रचारमें बहुत कुछ जीवन-दान दिया था। ऐसे स्वर्गीय महान विद्वान् लोकोपकारी आयुर्वेदोद्धारक को सर्व प्रथम सहस्रः प्रणाम है। इसी प्रकार आयुर्वेदोन्नायक महामहोपाध्याय विद्यासागरादि पदविभूषित कविराज श्री गणनाथ सेन सरस्वती, एम० ए० एल० एम० एस० के प्रति श्रद्धाञ्जलियां अर्पित हैं जिन्होंने प्रत्यक्ष शारीर, सिद्धान्त निदानादि ग्रन्थोंका प्रणयन कर आयुर्वेद के अष्टाङ्ग में विकलाङ्ग को परिपूर्ण करने तथा संस्कृत के आयुर्वेद भण्डार को भरने में बड़ा योगदान दिया है तथा लाखो रुपये खर्चकर सर्वाङ्गपूर्ण विश्वनाथ आयुर्वेद महाविद्यालय स्थापित किया, जिसमें रोगियोंके प्रत्येक प्रकार के चिकित्सा-साधन बिना मूल्य प्राप्त है। इसी प्रकार कविराज यामिनी भूषण राय, एम० ए० एस० भी हमारे लिये स्तुति के पात्र हैं जिनके सत्प्रयत्न और लाखों रुपये की धनराशि से कलकत्ते में अष्टाङ्ग आयुर्वेद महा विद्यालय अतीव उन्नति का विषय रहा है। कविराज आयुर्वेद प्राण श्री श्यामाचरण वाचस्पति जी भी स्तुतिके पात्र हैं जिनने विशुद्ध आयुर्वेद के प्रशिक्षण में सारा जीवन ही लगा दिया था। इसी तरह रसशास्त्र के प्रवर्तक पं० अमृत शास्त्री जी, पं० त्र्यम्बक शास्त्रीजी, सम्मेलन प्रतिष्ठाता पं० श्री शंकरदा जी पदे, कविराज पं० हाराणचन्द्र चक्रवर्ती प्रभृति भारत के विख्यात विभूतियों को भी मैं नहीं भूल सकता जिनकी अमर पताका आयुर्वेद-गगन में शान से फहरा रही है। भारत के कोने कोने से अनेकानेक स्मरणीय विभूतियां दिवंगत हो चुकीं हैं जिनका अलग-अलग नामोल्लेख करने से आपका अधिक समय नष्ट होगा। वे सभी त्याग एवं तपस्या तथा आयुर्वेद सेवा के लिए वन्दनीय है।

सम्प्रति प्रान्तीय विभूतियों में छपरा भारतेश्वरी मारवाड़ी संस्कृत महाविद्यालय के भूतपूर्व आचार्य अनेकानेक शास्त्रों के मर्मज्ञ विद्वान्, सत्कर्मधर्मधुरीण, अस्मद् गुरुदेव देश सेवाभाव सम्पन्न पूज्यपाद महामहोपाध्याय विद्याभूषणादि पद विभूषित प्रातःस्मरणीय पं० श्यामनारायण चतुर्वेदी जी हमारे लिये परम आराध्य हैं जिन्होंने प्रान्त में अनेकानेक वेदादि शास्त्रों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर अद्भुत-अद्भुत् ग्रन्थों का प्रणयन कर आयुर्वेदादि शास्त्रोंका उद्धार करते हुए आयुर्वेद जगत की बड़ी-बड़ी सेवा की हैं तथा इस सम्मेलन के दशम अधिवेशन, पटना के सभापति पद को भी अलंकृत किया था। रतन माला निवासी पूज्यपाद साहित्य-सेवी पं० चन्द्रशेखर धर मिश्रजी का आयुर्वेद ज्ञान तथा उनका अनुसन्धान तथा उसमें अप्रत्याशित निजधन राशि का व्यय देख कौन उन्हें विस्मृत कर सकता है? आपने मूलर गुण विकास की रचना से आयुर्वेद समाज को चकित कर दिया था एवं त्रयोदश बिहार प्रान्तीय वैद्य सम्मेलन, आरा का सभापतित्व कर सभा को अलंकृत किया था। बिहार-भूषण आयुर्वेद रत्नाकर वैद्यरत्न पं० व्रजबिहारी चतुर्वेदी जी भी मेरी स्तुति के विशेष भाजन हैं जो आयुर्वेद की प्रान्त में बड़ी बड़ी सेवाएं कर बिहार में ही नहीं अपितु भारत प्रसिद्ध हुए और अखिल भारत, वर्षीय वैद्य सम्मेलन, के सभापति पद को सुशोभित किया तथा बिहार प्रान्तीय षष्ठ वैद्य सम्मेलन, डालटेनगंज तथा सोलहवें प्रान्तीय वैद्य सम्मेलन हिल्सा का भी सभापतित्व किया। आपने अनेकानेक पुस्तकों का प्रणयन कर समाज को उपकृत किया। धर्मप्राण भारत प्रख्यात तन्त्रादि शास्त्रों के अद्भुत विद्वान महाराजाधिराज बहादुर सर श्री रामेश्वर प्रसाद सिंह जी अनेकानेक पदविभूषित मिथिलेश महोदय भी मेरी स्तुति के विशेष पात्र हैं जिन्होंने प्रान्त में आयुर्वेद के स्तर को ऊंचा करने का अथक प्रयत्न किया। इसी भांति अनन्य प्रतिभा सम्पन्न संस्कृत एवं आयुर्वेद के असाधारण विद्वान और सुवक्ता तथा लेखक मुजफ्फरपुर राजकीय संस्कृत कालेज के भूतपूर्व आयुर्वेद प्राध्यापक आचार्य पं० शिवचन्द्र मिश्र जी भी मेरे विशेष स्तुति के पात्र हैं जिन्होंने प्रान्त में आयुर्वेद के स्तर को ऊँचा उठाने में अदम्य परिश्रम किया है तथा इस सम्मेलनके नवमाधिवेशन, मुंगेर के सभापतित्व से समाज को कृत-कृत्य किया था। इसी प्रकार इस सम्मेलन के प्रधान संयोजक तथा भूतपूर्व संयुक्त मंत्री पं० विहारभूषण पं० रामवतार मिश्र वैद्यरत्न तथा भूतपूर्व संयुक्त मन्त्री पं० श्रीकान्त शर्मा जी विशेष स्तुत्य हैं जिन्होंने अनेकानेक कठिनाइयों से सुरक्षित रख सम्मेलन को चलाया जिससे भारत में आयुर्वेद रत्न पं० रामावतार मिश्र जी की अमर कीर्ति सदा विद्यमान रहेंगी। आज ऐसे-ऐसे प्रतिभाशाली कर्मठ आयुर्वेद सेवकों की हमें पद-पद पर आवश्यकता महसूस हो रही है। उसी प्रकार पं० श्रीकांत शर्मा जी के प्रति सद्भाव है जिनने इस सम्मेलन के पन्द्रहवें अधिवेशन, विक्रम का सभापतित्व भी किया था। भागलपुर निवासी कविराज नृत्यगोपाल वन्द्योपाध्याय जी, जिनने आयुर्वेद की बड़ी-बड़ी सेवायें प्रांत में की है और इस सम्मेलन के चौदहवें अधिवेशन, पटना का सभापतित्व कर आयुर्वेद समाज में एक नया स्रोत प्रदान किया, हमारे परम स्तुत्य हैं। उसी प्रकार बाढ़ निवासी कविराज यतीन्द्रनारायण वन्द्योपाध्याय जो मेरे चिरवन्दनीय हैं जिन्होंने आयुर्वेद की यश पताका भारत में फहराई तथा मृत सञ्जीवनी सुरा आंदोलन में इसी बाढ़ में रह कर बिहार सरकार को भी एकबार चकित कर आयुर्वेद का गौरव बढ़ाया था। आप अखिल भारतवर्षीय वैद्य सम्मेलन में, जिसका अधिवेशन १९२७ में पटने में हुआ था, यह प्रस्ताव रखा कि उसके नाम से वैद्य शब्द हटा कर आयुर्वेद जोड़ दिया जाय। उसे अखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद महासम्मेलन ने स्वीकार कर लिया। अतः वे विशेष स्तुत्य हैं। उसी भांति गया निवासी आचार्य पं० देवताचरण मिश्र जी वैद्यरत्न तथा कविराज शारदाचरण सेन जी भी विशेष वन्दनीय हैं जिन्होंने आठवें अधिवेशन बाढ़ एवं सातवें अधिवेशन गया का क्रमशः सभापतित्व किया था और अपनी-अपनी अद्भुत प्रतिभा से इसे पल्लवित किया था। स्वनामधन्य सीनियर प्रोफेसर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आक आयुर्वेद, पटना आयुर्वेदिक कालेज पं० हरिनन्दन झा जी, संस्कृत आयुर्वेदिक टोल्स के अध्यापक पं० रामझा जी, पं० वामदेव शर्मा जी, पं० घूरामिश्र जी, पं० महादेव मिश्र जी, आचार्य पं० गोपाल त्रिपाठी, आयुर्वेद वाचस्पति पं० रामानन्द मिश्र जी, पं० नन्दू मिश्र जी, आयुर्वेदरत्न, तथा पं० दुर्गा मिश्र जी, पं० गंगा प्रसाद मिश्र जी, आयुर्वेद प्राण तथा आचार्य पं० सागर जी महाराज, आचार्य पं० प्रसिद्ध नारायण चतुर्वेदी जी एवं पं० जगन्नाथ जी गौड़ प्रभृति प्रांत के आयुर्वेद प्रचारक भी मेरे स्तुति के विशेषपात्र हैं। सम्मेलन के भूतपूर्व सभापतियों एवं मन्त्रियों तथा सहायकों के प्रति भी मैं नतमस्तक हूं जिन्होंने इसका समय-समय पर सभापतित्व तथा मंत्रित्व कर हर प्रकार की सहायता से जीवनदान किया था।

वर्तमान युग के उन्नायक

सज्जनों! सम्प्रति वर्तमान विभूतियों में स्वनामधन्य पं० जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल, जो इस सम्मेलन के जन्मदाताओं में एक हैं तथा सर्वप्रथम सम्मेलन, मुस्तफापुर के सभापति भी रह चुके हैं, एवं कविराज प्रताप सिंह जी, आचार्य पं० यादव जी त्रिक्रम जी, परममान्य पं० शिव शर्मा जी, आदरणीय आचार्य ॐकार नाथ जी, वैद्यशिरोमणि वाई० पार्थनारायण पण्डित (बंगलोर) कविराज लक्ष्मी रामजी (मद्रास), अनेकानेक शास्त्रों के मर्मज्ञ P. S आचार्य सत्यनारायण शास्त्री तथा आचार्य राजेश्वर दत्त शास्त्री प्रभृति विशेषरूपेण वन्दनीय हैं। इसी प्रकार अस्मद् गुरुदेव पूज्यपाद कविराज पं० विधुभूषण सेन जी, जिन्होंने द्वादश वैद्य सम्मेलन, हाजीपुर का सभापतित्व किया था, मेरे परम वन्दनीय हैं। अष्टादश प्रान्तीय वैद्य सम्मेलन के सभापति आचार्य पं० गंगाधर शर्मा जी भी हमारी स्तुति के पात्र हैं जिन्होंने प्राचीन आयुर्वेद के गौरव को अक्षुण्ण रखने में बहुत कुछ योग दिया है। प्रियवर भाई नारायण दत्त जी का सहयोग भी बड़ा प्रशंसनीय रहा पं० विश्वनाथ झा जी, आचार्य पं० लक्ष्मीनारायण झा जी, वैद्यवर पं० हरिश्चन्द्र झा जी, आचार्य पं० भैरव गिरि जी, वैद्यवर आचार्य पं० कृपाशंकर अवस्थीजी, आचार्य पं० सुरेन्द्र मोहन भट्ट, कविराज पं० मन्मथनाथ बन्द्योपाध्याय, वैद्यवर पं० ब्रह्मदत्त शर्मा जी, आचार्य पं० उपेन्द्रनाथ झा जी, आचार्य पं० विश्वनाथ उपाध्याय, आयुर्वेदप्राण आयुर्वेदरत्नाकरागस्त आचार्य पं० नवनीत मिश्र जी, आचार्य पं० उमेशानन्द मिश्र जी, आचार्य पं० शम्भुशरण चतुर्वेदी, आचार्य पं० कपिल देव त्रिपाठी, आचार्य श्रीकृष्ण मिश्र जी, पं० वैद्यवर श्रीधर मिश्र जी तथा प्रान्त के आयुर्वेद विद्यालयों के सभी अध्यापकों, चिकित्सकों तथा औषधि निर्माताओं एवं विक्रेताओं तथा आयुर्वेद पत्रिकाओं के प्रकाशकों ने समय समय पर आयुर्वेद के उत्थान में जो जो त्याग एवं अद्भुत सेवाएं अर्पित की हैं तथा कर रहे हैं उनका मैं बड़ा अभारी हूं।

सम्प्रति प्रान्त में जब कुछ वैमत्य के कारण आयुर्वेद गगन में काले बादल मंडराने लगे, उस समय ईश्वर प्रेदत्त पं० रामनारायण शर्मा तथा पं० रामदयाल जी जोशी सरीखे आयुर्वेदानुरागी का सहसा शुभागमन हुआ और इन महानुभावों ने बिहार में आयुर्वेद की प्रगति एवं वैद्यों के संगठन को सबल बनाने में जो सहायता दी है वह आप सभी जानते हैं। श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन एवं उसके अध्यक्ष श्री जोशी जी तथा उनके सुपुत्र श्री दुर्गाप्रसाद शर्म्मा ने हमारे प्रान्त में आयुर्वेद क्षेत्र में जो सेवा-कार्य किया है उसे कभी आयुर्वेद के इतिहासकार स्वर्णक्षरों में मूल्यांकन करेंगे। बिहार इन महानुभावों का चिरकाल तक आभारी रहेगा। आयुर्वेद प्रदर्शनी, जो बड़े समारोह के साथ सजाकर आपके सामने इसी प्रांगण में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेदध्वज फहरा रही है, आयुर्वेद के सुशिक्षित विद्वानों को भी एक वार चकित कर देने वाली है वह विशेषकर उसी श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन द्वारा आयोजित की गयी है। इसलिये हम आयुर्वेद सेवकों की ओर से एवं सम्मेलत की ओर से उन्हें हार्दिक धन्यवाद देते हैं बिना उपाधिधारी वैद्यों को स्वल्पकाल में आयुर्वेद का प्रशिक्षण कराने का भी श्रेय श्री जोशी जी को ही है जिनके दान से आज आयुर्वेद प्रशिक्षण महाविद्यालय, चिड़ैयाटांड़ में शिक्षा दे रहा है। यह एक ऐसा वन्दनीय कार्य है जिससे आज सारे बिहार का वैद्य समाज उपकृत हो रहा है। क्या हम और आप कभी इस कार्य को भूल सकते हैं? यह एक ऐसा कार्य है जो हमें अंधकार से निकाल कर प्रकाश में लाने की चेष्टा कर रहा है। इसलिये हम आप सवों की ओर से श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन के अध्यक्ष श्री जोशी जी को इस स्तुत्य कार्य के लिए बधाई और धन्यवाद हैं।

कविराज सुखराम प्रसाद जी की सच्ची सेवाएं कदापि नहीं भुलाई जा सकतीं, जिन्होंने इस सम्मेलन के अन्दर रहकर आयुर्वेद के मुख को सतत उज्ज्वल रखा है। आज कविराज जी नहीं होते तो यह सम्मेलन बिलकुल निर्जीव हो गया होता। 'गांव' के सम्पादक भाई श्री जगदीश प्रसाद श्रमिक जी का मैं बड़ा आभारी हूं, जिन्होंने आयुर्वेद उत्थान में समय समय पर बहुत बड़ा योग प्रदान किया है और तरह तरह की उलझनों में इसे सच्चाई के पथ पर चलाने का परामर्श देकर हमें उपकृत किया है। उसी प्रकार आचार्य पं० कपिलदेव त्रिपाठी जी एवं कविराज विद्यानारायण शास्त्री तथा चि० भृगुनाथ पाठक के सत्प्रयास तथा सम्मेलन की प्रतिष्ठा को अक्षुण्ण रखवाने में एवं प्रांतव्यापी संगठन करने में सहायक सिद्ध हुआ है। अतः उन्हे भी धन्यवाद देता हूं। आयुर्वेद महारथी पं० रामरक्ष पाठक जी, आयुर्वेदाचार्य पं० गणेशदत्त सारस्वत जी, आचार्य पं० प्रियव्रत शर्म्मा जी, आचार्य पं० शुकदेव शर्मा जी को भी धन्यवाद दिए बिना मैं नहीं रह सकता जो बिहार के बाहर जा कर आयुर्वेद शास्त्र में बिहार का मुख उज्ज्वल कर रहे हैं।

सम्प्रति यहां के स्थानीय वैद्योंके प्रति शुभकामनाएं हैं, जिनके अदम्य परिश्रम से आज यहां सम्मेलन हो रहा है। उनमें हमारे परम स्नेही आचार्य पं० वासुदेव जी त्रिपाठी, परमवन्दीय वैद्यवर पं० बंगाली द्विवेदी जी, आचार्य पं० प्रमोदशरण जी पाठक, एवं आचार्य पं० रामेश्वर मिश्र जी, तथा स्वागतकारिणी के वैद्य पं० अच्युतानन्द जी त्रिपाठी महानुभाव जिनके नामोल्लेख अलग-अलग करने में मैं स्वयं असमर्थ हूं, सभी वन्दनीय हैं और उनके सहयोग से ही हम आज यहां सम्मेलन कर रहे हैं।

६ बिहार की महिमा

बन्धुओं! आप परम पुनीत आयुर्वेद शास्त्र के प्रचार के लिये तथा भविष्य में इसे राष्ट्रीय चिकित्सा के स्थान पर आसीन करने के हेतु बिहार में निरन्तर उद्योग कर रहे हैं। बिहार चिरकाल से ऐसे ऐसे पुण्य-प्रयत्नोंके लिए प्रसिद्ध रहा है। यह वही विहार है जो पाणिनीय के गुरुवर्ग की तपोभूमि थी। उपवर्ष, वर्ष, व्याड़ी, प्रभृति पाणिनीय सूत्रों तथा वार्त्तिक के रचयिता कात्यायन भगवान का यहीं निवास स्थान था। बिहार ही दर्शन शास्त्र के प्रवर्त्तक गौतम महाराज की पुण्य भूमि थी। ज्योतिष-शास्त्र के सिद्धान्तवेत्ता आर्यभट्ट यहीं के निवासी थे। कौमार भृत्य के रचयिता जीविकाचार्य राजगृह निवासी थे। आप महाराज बिम्बिसार के चिकित्सक थे। कवि सम्राट विद्यापति इसी क्षेत्र में अवतीर्ण हुए जिनकी यश-पताका आज सर्वत्र फहरा रही है। मण्डन मिश्र जी जिस तरह इस मंडल के मण्डन थे, उसी तरह आयुर्वेद शास्त्र के द्वितीय अङ्ग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शालाक्य-तन्त्र के प्रवर्त्तक मिथिलेश्वर जनक और महाराज नीमि इसी देश के प्रसून थे जिनके यश सौरभ से बिहार ही नहीं अपितु समस्त विश्व-मण्डल गौरवान्वित था। आयुर्वेद के रस शास्त्र के अद्भुत चमत्कार किसी से छिपे नहीं हैं जो आज भी पेंसलिन, स्ट्रेप्टोमाइसिन जैसी अमोघ दवाओं को पराजित कर रहे हैं। अन्यान्य पैथियों के लोकोत्तर प्रभाव का अतिक्रमण कर विश्व-विजयी पाश्चात्य विज्ञान भी आज तक आयुर्वेद को नहीं दबा सका। उसी रस-शास्त्र के प्रधान प्रवर्त्तक बौद्ध सिद्ध नागार्जुन प्रभृति इसी पुण्यभूमि की विभूति थे। नालन्दा विश्वविद्यालय, जो किसी समय समस्त भूमण्डल को शिक्षा देता था, इसी विहार में था। इसी बिहार में यजुर्वेद के प्रवर्त्तयिता याज्ञवल्क्य, वैशम्पायन ऋषि थे। भारत के उद्भट उद्भट अनेकानेक शास्त्रों के विद्वानों की शास्त्रीय परीक्षा किसी समय इसी पुण्यभूमि में होती थी। इसे भारत का प्रमुख प्रशिक्षण केन्द्र होने का गौरव था। जनक जैसे जीवनमुक्त, गार्गी जगद्वन्द्या, रमणीरत्न सीता माता का यही स्थान था। गंगेशोपाध्याय जी, पक्षधर मिश्र, वाचस्पति मिश्रादि दर्शनोद्धारक आदि महापुरुषों का यहाँ ही स्थान था। भारत के गौरव स्वरूप अर्थ-शास्त्र के रचयिता, कूटनीति के प्रवर्त्तयिता, युद्ध-विद्या के गूढ़ तत्वों के उद्भावयिता आज की बीसवीं शताब्दी में हो जिनके विचार को देख आश्चर्य से चकाचौंध हो जाते हैं, वे कर्मवीर चाणक्य महाराज बिहार निवासी ही थे। वररुचि ने बिहार में ही आकर अध्ययन किया था। भूषण कवि के निवास से राजगृह कभी भूषित था। लोकमान्य गुरु गोविन्द सिंह का जन्मस्थान, च्यवन ऋषि की तपोभूमि, विश्वामित्र जैसे मेधावी महात्मा का आश्रम सब बिहार के तपोभूमि में ही तो थे। विष्णु भगवान की साक्षात् गज-ग्राह की लड़ाई की कहानी कौन नहीं जानता। वह बिहारकी एक महत्वपूर्ण पौराणिक घटना है। बाबा हरिहर क्षेत्र के समीप ही रामभद्र नामक प्रसिद्ध ग्राम है जिसे भगवान रामचन्द्र ने जनकपुर जाते समय अपने चरण कमल से पवित्र किया था जिस मंदिर में उनके चरण-चिन्ह की उपासना आज भी होती है। उसी के उत्तर-पश्चिम वैशाली ग्राम है जहां पर जैन मत के जन्मदाता महात्मा महावीर स्वामी का अवतार माना जाता है। आधुनिक इतिहास से पता चलता है कि यवन काल में इस स्थान कों कभी राजधानी होने का गौरव प्राप्त था। कुंअर सिंह जी जैसे महान विक्रमशाली वीर इसी विहार में अवतीर्ण हुए थे। बक्सर धाम में भगवान श्रीरामचन्द्र ने राजर्षि विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा निमित्त विघ्नकरी निशाचरी ताड़का का वध कर उस भूमि को सदा के लिए गौरवान्वित किया था। उन्होंने सिद्धनाथ की स्थापना कर महाकाली आरण्य देवी को प्रणाम कर मिथिला के लिए प्रस्थान किया। महाभारत के पूर्व आरा एक चक्रापुरी के नाम से प्रसिद्ध था। किन्तु योगीश्वर श्रीकृष्ण और उनके प्यारे सखा अर्जुन, मानवमुकुटमणि महाराज मयूरध्वज की धर्मनिष्ठा की परीक्षा लेने आए। उसी परीक्षा में नर-रत्न मयूरध्वज ने उसी नगरी में अपने हृदयरत्न प्रिय पुत्र ताम्रध्वज को आरा से आमस्तिक चीरकर दो टुकड़े कर डाले थे। वीरवर ताम्रध्वज की आँखों से एक बून्द भी आंसू न आई, मुख से वेदना की एक आह भी न निकली। उन्हीं महापुरुषों की स्मृति में उस नगरी का नाम आरा पड़ा।

बिहार के प्रत्येक जिला का यदि अलग अलग विवरण प्रस्तुत किया जाए तो कई दिन लग जांय। विहार प्रान्त हमारे सब प्रान्तों में एक विशेष स्थान रखता है। यहां के विद्वानों ने इस प्रान्त के स्तर को बराबर ऊँचा रखा है और आज भी राष्ट्रपति पदपर वर्तमान होकर राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद बिहार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का मस्तक ऊँचा कर रहे हैं। उसी बिहार के आप वैद्य बन्धु 'त्वं चाहं च' तथा व्यक्तिगत अधिकार लिप्सा में अलग अलग डेढ़ चावल की खिचड़ी पका रहे हैं। उससे आयुर्वेद का उत्थान नहीं हो सकता। "संघे-शक्ति" को मूल सूत्र मान बन्धुत्व प्रेम बढ़ाने तथा सभी दलगत भावों को छोड़ एक भंडे के नीचे आने की कृपा करें जिससे आयुर्वेद राष्ट्र निर्माता वैद्यबन्धु कहला सकें तथा आयुर्वेद भण्डार को ऐसा बनावें कि आयुर्वेद के लिए बिहार भारत में एक केन्द्र माना जाए।

बन्धुओं! बंगाल से १९१२ में बिहारोत्कल के पृथक् होते ही १९१५ में बिहारोत्कल संस्कृत समिति की विधिवत् स्थापना हुई। बिहार पण्डित तथा बिहार प्रान्तीय वैद्य सम्मेलन, जो क्रमशः बिहार के विद्वानों एवं वैद्यों की संस्था बनी, उसने आयुर्वेद को मान्यता दिलाने में बहुत सहयोग दिया। यहां यह कहना अप्रासंगिक न होगा कि जब अखिल भारतवर्षीय वैद्य सम्मेलन की नींव १९०६ में आयुर्वेद प्राण पं० शंकरदा जी पदे ने पञ्चवटी में डाली तो उनके ही सत्प्रयास से तथा पं० जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल जी तथा पं० वैद्यरत्न रामावतार मिश्र जी के उद्योग से बिहार में भी इस सम्मेलन की नींव १९१४-१५ में डाली गई। उसी ध्येय से आयुर्वेदिक एण्ड यूनानी कौन्फ्रेन्स १९१५ के मार्च में पटना में हुई जिसके आधार पर आयुर्वेद का पठन पाठन क्रम एवं सामान्य परीक्षायें चालू की गईं। उसी आधार पर संस्कृत समिति में भी १९१८ में आयुर्वेद स्वीकार किया गया जिससे १९१९ से आयुर्वेद का पठन-पाठन विधिवत् प्रान्त में चल पड़ा। विद्वानों की लगन बढ़ी और जगह जगह इसकी उन्नति की प्रबल चेष्टाएं होने लगी। "अन्यानि शास्त्राणि विनोदमात्रम्" किन्तु चिकित्सतं ज्योतिष तन्त्र वादाः पदे पदे प्रत्ययमावहन्ति" तथा धन्वन्तरि भगवान ने भी सुश्रुत के प्रति जो उपदेश दिया है जो सुश्रुत द्वारा सूत्र स्थान के तृतीय अध्याय में निम्न प्रकार वर्णित हैं।"

यस्तु केवलशास्त्रज्ञः कर्मस्वपरिनिष्ठितः
समुह्यत्यातुरं प्राप्य प्राप्य भीरुरिवाहवम्॥
यस्तु कर्मसु निष्णातो धार्ष्ट्याच्छास्त्रबहिष्कृतः
स सत्सु पूजां नाप्नोति वधं चार्हति राजतः॥
उभावेतावनिपुणावसमर्थौ स्वकर्मणि
अर्धवेदधरावेतावेक पक्षाविव द्विजौ॥
ओषध्योऽमृतकल्पास्तु शस्त्राशनिविषोपमाः
भवन्त्यज्ञैरुपहृतास्तस्मादेतान् विवर्जयेत्॥
स्नेहादिष्वनभिज्ञा ये छेद्यादिषु च कर्मसु।
ते निहन्ति जनं लोभात् कुवैद्या नृपदोषतः॥
यस्तूभयज्ञो मतिमान् स समर्थोऽर्थ साधने।
आहवे कर्म निर्वोढुं द्विचक्रः स्यन्दनो यथा॥

इत्यादि से तथा "तस्माच्छास्त्रेऽर्थ विज्ञाने प्रवृत्तौ कर्म दर्शने। भिषक् चतुष्टये युक्तः प्राणाभिसर उच्यते" इत्यादि वाक्यों से चरकाचार्य ने भी अनेक स्थलों पर समर्थन किया है। आयुर्वेद-शास्त्र बहुत कुछ प्रयोगकार्य पर निर्भर है। अपितु प्रयोगात्मक प्रयत्न प्रारम्भ हुआ उधर सर्वाग्रगण्य प्रातःस्मरणीय आयुर्वेद महामहोपाध्याय पं० शंकरदाजी पदे के पवित्र उद्देश्यों को सामने रखकर हर प्रान्त में वैद्य सम्मेलनों की स्थापना होने लगी। समितिके आयुर्वेदाचार्य परीक्षा में एक पत्र रोग परिचय, शरीर परिचय, औषध परिचय, तथा औषध-निर्माण विषयक (Voral) अनिवार्य रक्खा गया और जब तक Practical में उत्तीर्ण न हो तब तक उत्तीर्ण भी नहीं घोषित होता। यहां यह बताना अनुचित न होगा कि किसी पत्र में या टोटलमें तब १० और अब ५ नम्बर से फेल छात्रों पर पुनः विचार कर संस्कृत बोर्ड उन्हें पास करती है पर आयुर्वेदके Practical में इस प्रकार फेल होने पर कोई विचार अद्यावधि तक नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होता। अस्तु उभय परीक्षा में उत्तीर्ण होने पर ही आयुर्वेदाचार्य की उपाधि समिति देती है। फिर भी आचार्यों में समयोचित उन्नति न पाकर अर्थात् प्राचीन आर्षशास्त्रादि विषय जिनको संहिताओं में उपलब्ध पाते हुए भी साधनाभाव से तत्प्रकार समुचित शिक्षा उनकी नहीं होती तथा शासनकालवश शास्त्रों में जो कमी आ गई है उनकी पूर्ति किस प्रकार की जाय एवं समीचीन वैज्ञानिक अनुसन्धान, जो पाश्चात्य विद्वान् चिकित्सकों ने कर समाज को चकित कर दिया है, प्रभृति से आयुर्वेद के विकलाङ्गादि को पूर्ण करते हुए एवं सम्वर्द्धन कर समयोचित तथा सुव्यवस्थित करने का सर्वत्र आन्दोलन किया जिससे सर गणेशदत्त सिंह जी ने ६ मास के कोर्स का Temple Medical School Patna में आयोजन कर पुनः १९२६ में प्राचीन आयुर्वेद के सांगोपाङ्गपूर्ण एवं व्याएक तथा आधुनिक विज्ञान से सुसज्जित करने के निमित्त पटना में अष्टाङ्ग आयुर्वेदिक कालेज खोला जो बृटिश राजनीतिज्ञोंकी आयुर्वेद हड़पन नीति थी। फिर भी कालेज जितने अंशमें भी जिस पवित्र उद्देश्यसे खोला गया, वह पारस्परिक आयुर्वेदिक कालेज और संस्कृत समिति का जो विवाद उठ खड़ा हुआ था उसने आयुर्वेद के विकास में बड़ी-बड़ी बाधाएं उपस्थित कीं। हमारे पथप्रदर्शक महानुभावों के अनस्थिर नीति के चलते यह विवाद बढ़ता गया और आज भी मौजूद है। संस्कृत समिति के द्वारा जो आयुर्वेद की शिक्षा दी जाती थी वह कैसी थी उसके प्रमाण में मैं दो ही नाम यहां लेना चाहता हूं—भारत प्रख्यात वैद्यराज श्री यादव जी त्रिकम जी आचार्य एवं वैद्यरत्न पण्डित व्रजबिहारी चौबे। इन्होंने किसी आयुर्वेदिक कालेज में शिक्षण नहीं प्राप्त किया था। इनके अतिरिक्त मैं सैकड़ों ऐसे प्रख्यात चिकित्सकों ने नाम आपको बतला सकता हूं जो डाक्टरों से टक्कर लेनेवाले चिकित्सक हैं और उन्होंने किसी भी आयुर्वेदिक कालेज में अध्ययन नहीं किया था। आज यदि आयुर्वेद जीवित है और उसे शिक्षित और सभ्य समाज में प्रतिष्ठा प्राप्त है तो उन्हीं विद्वानों के प्रतिभापूर्ण चमत्कार से न कि इन आयुर्वेदिक कालेज के स्नातकों से। मैं आयुर्वेदिक कालेज के स्नातकों की बुराई नहीं करता, क्योंकि उन बेचारों का क्या दोष है। दोष तो है पाठ्यक्रम प्रस्तुत करने वालों और उसके अनुसार शिक्षण देनेवालों का। अतः शोलाक्य एवं अन्य वैज्ञानिक शिक्षा प्रदान करने के नाम पर संस्कृत समिति के शिक्षा पद्धति के साथ खड़ा कर वास्तव में आयुर्वेद की अत्यन्त हानि की गयी है और हमारा यह निश्चित मत है कि सरकार को चाहिये वह दोनों शाखाओं को आयुर्वेद प्रासाद के दो पायों के रूप में देखे और आयुर्वेद के विकास कार्य में दोनों को समान रूप से साहाय्य प्रदान करे। तभी आयुर्वेद का सांगोपांग विकास सम्भव है। जहां तक शल्य आदि आयुर्वेद के अङ्गों की शिक्षा का प्रश्न है मैं यह मानता हूं कि संस्कृत समिति में उसकी शिक्षा नहीं दी जाती पर क्या आयुर्वेद-शास्त्र इसके साँगोपांग शिक्षा से भरा पड़ा नहीं है? मैं कतिपय उदाहरण यहां देना चाहता हूं।—

शुक्राचार्य ने देवासुर संग्राम में अनेक मृत असुरों को पुनर्जीवित किया। दाशरथी लक्ष्मण को वैद्यप्रवर सुषेण ने लंका की युद्ध भूमि में चैतन्य लाभ कराया। कश्यप ने तक्षक के विष से भस्मसात् तरु को हरा भरा किया। "प्रसादादस्य च्यवनः सुवृद्धोऽभूत्पुनर्युवा' "सद्योजंघामायसी विश्वलायैधने हिते सर्तवे प्रत्यधत्तम् अश्विनी कुमार ने अपनी शस्त्र कुशलता से शीघ्र लोहे का दूसरा पैर लगा दिया जिससे दूसरे दिन विश्वला को युद्ध करते भी किसीने पहिचाना तक नहीं। "दध्यङ ह मन्मध्वाथर्वाणा वामश्वस्य शीर्ष्णा प्रयदीमुवाच" ऋ० मं० १ सू० ११६ मन्त्र १२ अर्थात् इन्द्र ने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दधीचि को मधु विद्या इस नियम पर पढ़ाई कि अगर दूसरों को बतावेगा तेरा सिर काट लूंगा। अश्विनी कुमार ने दधीचि ऋषि को अश्व का शिर लगाकर उनसे मधु विद्या सीख ली। जब इन्द्र को ज्ञात हुआ तो उनसे दधीचि के अश्ववाले सिर को काट लिया तथा अश्विनी कुमार ने पहला शिर जो रक्खा था उसे जोड़कर दधीचि को ज्यों का त्यों बना दिया। सुश्रुत में भी यथा "रुद्रेण यज्ञस्यशिरछन्नमिति, ततो देवा अश्विनावभिगम्योचुः; भगवन्तौ नः श्रेष्ठतमौ युवां भविष्यथः, भवद्भ्यां यज्ञस्य शिरः सन्धातव्यमिति तावूचतुरेवमस्त्विति। अथ तयोरर्थे देवा इन्द्रं यज्ञभागेन प्रसादयन्। ताभ्यां यज्ञस्य शिरः संहितमिति' अथवा "स्वयम्भुवः शिरश्छिन्नं भैरवेण रुषाऽथ तत्। अश्विभ्यां संहितं तस्मात्तौ जातौ यज्ञभागिनौ। देवासुररणे देवा दैत्यैर्ये सक्षताः कृता। अक्षतास्तेकृताः सद्यो दस्राभ्यामद्भुतं महत्। वज्रिणोऽभूत्भुजस्तम्भः स दस्राभ्यां चिकित्सितः। सोमान्निपतितस्चन्द्रस्ताभ्यामेव सुखीकृतः। विशीर्णा दशनाः पूष्णो नेत्रे नष्टे भगस्य च। शशिनोराजयक्ष्माऽभूदश्विभ्यों ते चिकित्सिताः। भार्गवश्चवनः कामी वृद्धः सन् विकृतिं गतः वीर्यवर्णस्वरोपेतः कृतोऽश्विभ्यां पुनर्युवा। एतैश्चान्यैश्च बहुभिःकर्म्मभिः भिषजां वरौ। बभूवतुर्भृशं पूज्यौ विन्द्रादीनां दिवौकसाम्।" यह है शल्य शालाक्य की वैदिकी प्रणाली। पर ये विशिष्टतायें केवल वेद-पुराण तथा अब सुश्रुत के पन्नों में ही रह गई। तीसरा अंश काय-चिकित्सा है जिसे नष्ट होते होते भी आज तक कोई पैथी उसे दबा नहीं सकी। अमेरिका के ख्यातनामा सर्वश्रेष्ठ डा० जार्ज क्लार्क एम० ए० एम० डी० ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि "यदि वर्तमान युग के चिकित्सक (डाक्टर) अपने नवाविष्कृत भेषजों को छोड़कर चरक मतानुसार चिकित्सा करें तो संसार से मृत्यु और असाध्य रोगों की संख्या एकदम दूर हो जाय।" (क्रमशः)

सम्पादक के नाम पत्र

श्रीमान् सम्पादकजी

मैं आपके वैद्यप्रिय मासिक पत्र "आयुर्वेद गौरव" द्वारा आयुर्वेद के विभिन्न अंगों पर लेख लिखने वाले वैद्यों तक एक विनीत परामर्श पहुंचाना चाहता हूं। मेरा निवेदन यह है कि हमारे बहुत से लेखकों के सारगर्भित श्रेष्ठ लेख भी एक दो कारणों से महत्वहीन हो जाते हैं। प्रथम कारण है। लेख में पारिभाषिक शब्दों के संकलन का ठीक न होना। हम देखते हैं कि लगभग प्रत्येक लेखक एक ही राय के लिए नवीन शब्द का निर्माण करता है। जब कि उसका बहुमान्य पर्याय भाषा विशेषज्ञों द्वारा पूर्व से ही निर्मित एवं प्रचलित हो चुका है। यदि प्रत्येक विद्वान अपनी अपनी इच्छानुसार एक ही शब्द के लिये नवीन शब्द बनाता रहेगा तो हमारी शब्दावली कभी भी पूर्ण न होगी और यदि बन भी गई तो उसका कोई महत्व ही नहीं। अस्तु जब तक केन्द्रीय सरकार द्वारा संघटित समिति द्वारा संशोधित शब्दावली प्राप्त न हो तब तक हमें बहुमान्य विद्वानों द्वारा निर्मित शब्दों को ही व्यवहार करना चाहिये। चिकित्सा शास्त्र के शब्दों के निर्माण में महामहोपाध्याय श्री गण नाथ सेन सरस्वती, श्रीयुत् भास्कर गोविन्द घाणेकर एवं अन्तरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त भाषा विशेषज्ञ डा० रघुवीरने बहुतसे पारिभाषिक शब्दों का निर्माण कर महान कार्य किया है। अस्तु इन महानुभावों द्वारा निर्मित शब्दों को व्यवहार करना चाहिये। नवीन शब्द का निर्माण वहीं करना चाहिये जहां इन लोगों द्वारा किसी शब्द का निर्माण न हुआ हो अथवा जिसकी सामर्थ्य अपने शब्द को इन लोगों द्वारा निर्मित शब्द से श्रेष्ठ प्रमाणित करने की हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरा कथन यह है कि लेखक को ध्यान रहना चाहिये कि उसका लेख वैद्यों के सामने जायेगा इस बात को सर्वदा सामने रख कर लेख लिखना चाहिये न कि इसलिये ही कि संपादक जी का आग्रह है। संपादक का आग्रह समाज का (वैद्यो का) आग्रह है अतः अवहेलना पूर्वक नहीं अपितु कर्मनिष्ठ होकर उसे संपन्न करना चाहिये। लेख में कुछ न कुछ ठोस सामग्री एवं पुष्ट विचार धारा होना आवश्यक है, जिससे कोई भी विद्वान वैद्य अथवा सामान्य छात्र जो भी पढ़े उसे उससे कुछ लाभ हो। वैद्यों की लेखनी वैद्यक के उत्थान में महान स्थान रखती है। अस्तु इस हेतु पूर्ण प्रयत्नशील होना हमारा कर्तव्य है। —जनार्दन भारद्वाज

साहित्य समीक्षा

उत्तर प्रदेशीय वैद्य सम्मेऊन के मतदाता सदस्यों की नामावली

प्रकाशक श्री अमरनाथ वैद्य संयोजक कार्य्यवाहक समिति वैद्य सम्मेलन वनस्पति भवन, ११ न्यायालय मार्ग पो० देहरादून पृष्ठ संख्या ६१ मूल्य १) रु०।

प्रस्तुत नामावली संवत् २०११ पौष से २०१२ वि० मागशीर्ष पर्य्यन्त तदनुसार सन् १९५५ के लिए प्रकाशित की गई है इस पुस्तकाकार नामावली में उत्तरप्रदेशीय २४५७ वैद्यों के नाम व पूरे पते दिये गये हैं। यह पुस्तक व्यापारी वर्ग एवं सदस्यों के लिए विशेष उपयोगी है। केवल ५०० प्रतियां ही प्रकाशित की गई हैं। यद्यपि उत्तर प्रदेश में वैद्यों की संख्या प्रायः २५ सहस्र के लगभग होगी इतनी बड़ी वैद्यों की संख्या होते हुए भी केवल २४५७ वैद्य सदस्यों का नाम नामवली में प्रकाशित होना सन्तोषजनक नहीं कहा जा सकता। फिर भी संयोजक महोदय के निरन्तर प्रयत्न करने पर इतनी सफलता हुई इसे भी सन्तोषप्रद एवं उत्साह वर्द्धक ही जानकर भविष्य के लिए विशेष चेष्टा करनी चाहिए ताकि अधिकाधिक वैद्य सदस्य बनें। आशा है कि वैद्य सदस्य, एवं व्यापारीवर्ग नामावली का आदर करते हुये प्रकाशक महोदय के उत्साह को बढ़ावें ताकि वे भविष्य में वैद्य समाज की अधिकाधिक सेवा कर सकें।

—सम्पादक

चिकित्सक (मासिक पत्र)

प्रधान सम्पादक श्री ज्वालादत्त शर्मा भिषगाचार्य प्राप्तिस्थान व्यवस्थापक चिकित्सक कार्यालय गंगा शहर रोड़ पो० बीकानेर (राजस्थान) वार्षिक मूल्य ५।) एक प्रति का ।।) है।

चिकित्सक के १ वर्ष का १ अङ्क प्राप्त हुआ। वर्तमान चिकित्सा प्रणाली के विषय में हिन्दी में अधिकाधिक चिकित्सा साहित्य का प्रकाशित होना निःसन्देह समुन्नति का द्योतक है। उक्त पत्र का यद्यपि वर्तमान कलेवर छोटा है तथापि स्वास्थ्य सम्बन्धी एवं रोग विषयक लेख विशिष्ट विद्वानों के होने के कारण पत्र की उपयोगिता स्पष्ट झलकती है। आयुर्वेद हितैषियों को चाहिए कि पत्र का अधिकाधिक प्रचार कर सम्पादक के उत्साह को खूब बढ़ावें ताकि वे भविष्य में स्वास्थ्य सम्बन्धी उत्तमोत्तम साहित्य प्रकाशित कर सकें। —सम्पादक

गोरक्षण (मासिक पत्र)

सम्पादक—श्री महेशदत्त शर्मा, प्राप्ति स्थान व्यवस्थापक गोरक्षण साहित्य मन्दिर पो० रामनगर जिला बनारस वार्षिक मूल्य ३) रु० १ प्रति का ।=)

वर्तमान समय में भारत के अनेक स्थानों पर गोरक्षार्थ कसाईखानों पर सत्याग्रह किये जा रहें हैं ऐसी स्थिति में गोरक्षण, मासिक पत्र की अत्यावश्यकता है। इस पत्र के द्वारा गोरक्षण सम्बन्धी अनेक उपयोगी साहित्य तथा समाचार जाने जाते हैं। जनता को चाहिए कि गोमाता के प्राण रक्षार्थ इस पत्र का अधिकाधिक प्रचार करें। ताकि भारतवर्ष जैसी पवित्र पुण्य भूमि से सदा के लिए गौ हत्या का कलङ्क दूर होकर जनता को शुद्ध घी एवं दूध मिल सके जिससे भारतवासियों का स्वास्थ्य उत्तम हो। —सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकाशचन्द्र गुप्त द्वारा पाण्डुरिया पार्क स्ट्रीट द्वारा प्रकाशित तथा जेमस प्रिण्टिंग वर्क्स लि०, ८३, पुराना चीनाबाजार स्ट्रीट, कलकत्तामें मुद्रित।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद गौरव

आयुर्वेद का एकमात्र सर्वोत्तम मासिक पत्र

रोग की उपेक्षा से हानि

जातमात्रश्चिकित्स्यस्तु नोपेक्ष्योऽल्पतया गदः ।
वह्निशस्त्रविषैस्तुल्यः स्वल्पोऽपि विकरोत्यसौ ॥ १ ॥
यथा स्वल्पेन यत्नेन छिद्यते तरुणस्तरुः ।
स एवाति प्रवृद्धस्तु छिद्यतेऽति प्रयत्नतः ॥ २ ॥

भैषज्य रत्नावली ।

भावार्थ—किसी रोग के उत्पन्न होते ही चिकित्सा आरम्भ कर देनी चाहिये। रोग को साधारण बता कर उपेक्षा करना उचित नहीं। सामान्य रोग भी अग्नि, शस्त्र और विष सदृश थोड़े परिमाण में होने पर भी बड़े विकार पैदा कर देता है। जिस प्रकार नया वृक्ष थोड़े ही प्रयत्न से काट दिया जाता है किन्तु बहुत बड़ा होने पर उसे काटने के ये बहुत प्रयत्न करना पड़ता है। यही अवस्था व्याधियों की भी होती है।

वार्षिक मूल्य ३)
एक प्रति ।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

सम्पादक— श्री प्रकाशचन्द्र गुप्त M.Sc सह-सम्पादक— श्री मदनगोपाल बासोतिया आयुर्वेदाचार्य

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

विषय	लेखकका नाम	पृष्ठ
१ जय आयुर्वेद ?—रचयिता श्री सूर्य्यदत्त शास्त्री	...	३२१
२ सम्मोहात्स्मृतिविभ्रमः—कविराज श्री जनार्दन भारद्वाज	...	३२२
३ शिशु-परिचर्या और प्रारम्भिक चिकित्सोपचार—आचार्य श्री श्यामदास "पीयूषपाणि"		३२४
४ शुक्रमेह की अनुभूत सफल चिकित्सा—वैद्यविशारद हरिप्रसाद शर्मा आयुर्वेदशास्त्री		३३३
५ सूर्य्य चिकित्सा की महत्ता—वेदप्रकाश शास्त्री, प्रभाकर, साहित्यायुर्वेदरत्न बी० ए०		३३६
६ कामविज्ञान और आयुर्वेद—सोमदेव शर्मा सारस्वत साहित्यायुर्वेदाचार्य	...	३४०
७ आयुर्वैदिक कौलेजों में पदार्थ विज्ञान—देवगुप्त	...	३४३
८ आयुर्वेद और सरकारी पंच वर्षीय योजना—कविराज श्री धीरेन्द्रमोहन भट्ट शास्त्री		३४५
९ सोंठ—श्री रामेश वेदी	...	३४९
१० समाचार	...	३५२

सौन्दर्य्य रक्षक—'चम्पा'

नहाने का साबुन

मशहूर बिड़ला कटेली चम्पा केश तैल की मीठी खुशबू से बनाया हुआ "चम्पा" नहाने का साबुन, आपको बहुत पसन्द आयगा। स्नान करते समय इसके लगाने से इसके खुशबूदार झाग से आपका मन खिल उठेगा। इसके व्यवहार से आपके शरीर और त्वचा स्वच्छ, मुलायम आकर्षक और रोग मुक्त रहेंगे। एक बार हमारे "चम्पा" साबुन का व्यवहार करने के बाद आप दूसरा कोई साबुन लगाना पसन्द नहीं करेंगे। एक बार परीक्षा अवश्य करें। यह दो प्रकार की साइजों में मिलता है बड़ी साइज की टिकया का मूल्य ४४) प्रति ग्रास टोकेन और छोटी साइजका मूल्य १६) प्रति ग्रास रखा गया है।

ब्रांच—टोकोबारी रोड,
गौहाटी (आसाम)

बिड़ला लेबोरेटरीज़
२, बीरपारा लेन, कलकत्ता-३०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ॐ

प्राच्यं प्रतीच्यं यत्किंचिद् आयुर्वेदात्मकं हि तत् ।
तद्गौरवो विजयते, विश्वस्मिन् व्याधिसंकरे ॥ १ ॥

नोट—१-"यदिहास्तितदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्", इति चरक वचनात् ।

आयुर्वेद-गौरव

वर्ष २ | अगस्त १९५५ | संख्या ११

जय आयुर्वेद ?

रचयिता—श्री सूर्य्यदत्त शास्त्री (पटना सिटी)

तिमिराच्छन्न गगन-आंगनमें, उदित चिकित्सा राका,
जय आयुर्वेद महान् की, लहरे विमल पताका।

सत् रज तम-त्रिगुणात्मक सृष्टि,
श्रष्टा की जब पड़ती दृष्टि।
महत्तत्व से अहंकार भव,
तन्मात्रा इन्द्रिय गुण दश।
त्रिदोष विषमता से रोगों के, चलते हैं जग चाका,
जय आयुर्वेद महान् की, लहरे विमल पताका।

मन मानव का रूप अनोखा,
सृष्टि में सब से यह चोखा।
अलख अलौकिक चित अनुरूप,
मानव का अनुपम यह रूप।
चला जगत में एलोपैथिक, पैथ होमियो वांका,
जय आयुर्वेद महान् की, लहरे विमल पताका।

विस्तृत वसुन्धरा के पट पर,
वसा मनुज जड़ अण्डज पिण्डज।
तत्व तीन के मिश्रण से ही,
हर जीवों के होते वंशज।
प्रचलित जग में, नूतन नित्य शलाका,
जय आयुर्वेद महान् की, लहरे विमल पताका।

सत् आनन्द मनुज का लक्ष्य,
हो तव सच्चिदानन्द समकक्ष।
व्यर्थ विडम्बना में रमता है,
मृग मरीचि में जग मरता है।
सब पैथों के मूल तत्व में, आयुर्वेद ही नाका,
जय आयुर्वेद महान् की, लहरें विमल पताका।

तत्व वोध का कर अभ्यास,
छोड़ जगत की लम्बी आश।
वात, पित्त, कफ की समता रख,
तनु-मन्दिर में अलख ब्रह्म लख।
व्याधि त्राता स्वास्थ्य प्रदाता, वैदिक पथ है वांका,
जय आयुर्वेद महान् की, लहरे विमल पताका।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्मोहात्स्मृतिविभ्रमः

लेखकः—कविराज जनार्दन भारद्वाज, भारद्वाज आरोग्य निकेतन, पो० कोट-पूतली (जयपुर)

हममें से प्रत्येक वैद्य यह जानता और मानता है कि 'भारतीय दर्शन' पूर्ण विज्ञान हैं। आज के विज्ञान की पहुंच से परे और उससे अधिक गम्भीर और लाभप्रद है। संप्रति इस कथन को संसार के तो क्या भारत के ही अधिकांश व्यक्ति कोरी बिडम्बना मात्र मानते हैं। कारण यह है कि आधुनिकता में स्थूल प्रत्यक्ष को ही चार्वाक के समान सत्य माना जाता है और इसी का ही बोल वाला है। मैं अपने कथन के प्रमाण में लेख के शीर्षक को उपस्थित कर रहा हूं। यह पद (सम्मोहात्स्मृतिविभ्रमः) गीता के द्वितीय अध्याय के ६३ वें श्लोक की पृथक पंक्ति का द्वितीय चरण है।

गीता के द्वितीय अध्याय के ६२ वें तथा ६३ वें श्लोक में बतलाया गया है कि विषयों के चिन्तन करने पर पुरुष उन विषयों में आसक्त हो जाता है। इस आसक्ति से काम, काम से क्रोध, क्रोध से सम्मोह, सम्मोह से स्मृति भ्रंश, स्मृतिभ्रंश से बुद्धिनाश और बुद्धिनाश से सर्वनाश हो जाता है। मानस रोग चिकित्सकों के लिये ये पंक्तियां विशेष महत्व रखती हैं। ये पंक्तियां मानस रोग के क्रम को चरक निदान स्थान में वर्णित कायिक रोगों के क्रम के समान दर्शाती हैं :—

निदानार्थकरो रोगोरोगस्याप्युपजायते ।
तद्यथा ज्वरसंतापाद्रक्त पित्तमुदीर्यते ॥

लेख का विषय स्मृति-भ्रंश की विवेचना है अतः आगे उसी के बारे में लिखा जायेगा।

सम्मोह का अर्थ गीता के रामानुज भाष्यने 'कृत्याकृत्य विवेक शून्यता" किया है। इस प्रकार कर्तव्य ज्ञान के नष्ट होने पर स्मृति भ्रंश (Forgetting) उत्पन्न होता है।

[1]अनुभूत विषय को देख या सुनकर स्मृति उत्पन्न होती है। चरक ने स्मृति के आठ कारण माने हैं। यथा :—

वक्ष्यन्ते कारणान्यष्टौ स्मृतिर्यैरुपजायते
निमित्तरूपग्रहणात् सादृश्यात् सविपर्य्ययात्
सत्वानुबन्धादभ्यासाज् ज्ञानयोगात् पुनः श्रुतात्

(१) निमित्त—(Cause) कारण को देखकर कार्य का याद आना।

(२) [2]रूप या आकार (Shake) किसी बालक को देखकर अपने बालक की याद आना।

(३) सादृश्य (Similarity) पिता के समान सूरत वाले पुत्र को देखकर पिता की याद आना।

(४) सविपर्यय (Dis similarity)—एक वस्तु को देखकर उसके विपरीत वस्तुका याद आना यथा दुख में सुख का याद आना।

(५) सत्वानुबन्ध (Attention)—दत्तचित्त होकर सोचना।

(६) अभ्यास (Prectice) बार बार विषय का दोहराया जाना।

(७) ज्ञानयोग (Enlightmentor Supreme Knowledge) योगियोंसे उन्नत ज्ञानवान् व्यक्तियों को सब संस्कारों की स्मृति रहती है।

(८) पुनः श्रुतः (Recall) दुबारा सुनने पर पुनः याद आ जाना।

इसके अतिरिक्त "न्याय सूत्र" में निम्न २५ [3]कारणों को गिनाया गया है।

१—दृष्टश्रुतानुभूतानां स्मरणात् स्मृति रूच्यते। —चरक
२—रूप—"रूप ग्रहणमाकार ग्रहणम्" —चक्रपाणि
३—आधुनिक विद्वान स्मृति (Memory) के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"प्रणिधान निवन्धाभ्यासलिङ्गा लक्षण सादृश्य परिग्रहाश्रयाश्रितसवम्धानन्तर्यवियोगैककार्यविरोधातिशय प्राप्ति व्यवधान सुखदुःखेच्छाभयार्थित्वक्रियासमधर्माधर्म निमित्तेभ्यः" न्यायसूत्र।

"चरक द्वारा संक्षेप में वर्णित आठ और "न्यायसूत्र द्वारा विस्तारसे वर्णित २५ प्रकारके ये संस्कार के पुनः[४] उपस्थित करने के कारण है इन सब प्रकार के कारणों से संस्कार चैतन्य होते हैं। मन और आत्मा का इस प्रकार चैतन्य हुए किसी संस्कार के संयोग में आने पर स्मृति उत्पन्न होती है—"यथा खल्वात्ममनसोः सन्निकर्षः संस्कारश्चस्मृति हेतुः....."।

स्मृति को [५]ज्ञान या बुद्धि का भेद माना गया है (संस्कारमात्रजन्यं ज्ञानं स्मृतिः) और इसीलिये पहले स्मृतिभ्रंश होता है बाद में बुद्धि नाश होता है।

मानस चिकित्सकों के अतिरिक्त भी साधारण चिकित्सकों के पास कई व्यक्ति स्मृतिभ्रंश की शिकायत लेकर पहुंचते हैं यह एक बहुतायत से पाया जाने वाला मानस विकार है। छोटी उमर में इसका होना बहुत ही बुरा है। स्मृतिभ्रंश में कई बार कुलज प्रवृत्ति भी पाई जाती है चिकित्सा की दृष्टि से इन दो भागों में विभक्त कर सकते हैं—शारीरिक और मानसिक।

(१) शारीरिक—(क) आगन्तुक मस्तिष्क पर जोर से किसी प्रकार चोट लगने से

(ख) निज—तीव्र ज्वर (जैसे—आंत्रिक ज्वर मस्तिष्क सुषुम्ना ज्वर आदि) की अवस्था में मनुष्य के सोचने की शक्ति नष्ट हो जाती है जो कभी रोग शमन के उपरान्त भी स्थायी विकार के रूप में रह जाती है। तीव्र पीड़ा दायक रोगों में भी लोगों को स्मृतिभ्रंश हो जाता है। अवटुका आदि ग्रन्थियों के विकारों में भी स्मृतिभ्रंश पाया जाता है।

२—मानसिक :—रुचि की कमी, संस्कारों की अदृढ़ता, संस्कारों के परस्पर सम्बन्धों की न्यूनता विषय का दुहराया न जाना ये साधारण विस्मरण के कारण हैं। असाधारण विस्मरण उपर्युक्त कारणों से नहीं अपितु स्मरण प्रक्रिया में व्यवधान से होता है। ये व्यवधान है :—संवेग—Emotion की उत्तेजना, संशय (Doub) की उत्पत्ति, मन से किसी भावना ग्रन्थि (Complex) की उपस्थिति, [१]तामसिक भावों की वृद्धि—तामसिक आहार-विहार से, क्रोध, मोह, शोक, काम आदि के धक्कों (Shocks) से।

अतिमैथुन, हस्तमैथुन तथा विपरीत रति (Homosexuality) में भी स्मृतिभ्रंश हो जाता है।

स्मृतिभ्रंश स्वयं रोग का नाम है, रोग का पूर्वरूप है तथा रोग का लक्षण है।

आघात आदि शारीरिक कारणों से उत्पन्न स्मृतिभ्रंश की चिकित्सा शल्य शास्त्रियां तथा कायचिकित्सकों द्वारा ही सम्पन्न होती है। शारीरिक विकृति के ठीक हो जाने पर भी यदि स्मृति ठीक न हो तो मानसि-

---

उत्पन्न होने के चार प्रधान कारण या स्मृति के अंग (Factors of memory) मानते हैं—(१) सीखना या याद करना (Learning) (२) धारण करना (Retention) (३) पुनरावर्तन (Recall) (४) प्रत्यभिज्ञान या पहचान (Recognition)

(४) पुनः उपस्थित करनेवाले—उद्बोध (Recollection)

५-बुद्धि रूपलब्धि ज्ञानं प्रत्यय इति पर्यायाः। प्रशस्तपाद

१—तमोगुण :—एषा वृत्तिर्नाम तमोगुणस्य, शक्तिर्यया वस्त्वव भाषतेऽन्यथा। सैषा निदानं पुरुषस्य संसृते विक्षेप शक्तेः प्रसरस्य हेतुः॥ 'विवेक चूड़ामणिः

तमस्त्वज्ञानजं बिद्धि मोहनं सर्वदेहिनाम्।
प्रमादालस्य निद्राभिस्तन्निबन्नाति भारत॥

गीता अध्याय १४ का ८ वां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पचार किये जाते हैं। ऐसी अवस्था में दोनों उपचारों का साथ साथ किया जाना उचित है।

मानसिक आघातों से उत्पन्न स्मृतिभ्रंश की चिकित्सा से पूर्व चिकित्सक को उसके कारण को जान लेना चाहिये। कारणों के जान लेने से चिकित्सा में बहुत सहायता मिलती है। यदि मन में किसी प्रकार की भावना ग्रन्थि (Complex) हो तो उसके ज्ञान होने पर उसे हटाया जा सकता है। सात्विक आहार विहार का सेवन तथा मन को एकाग्र करनेवाली आसन प्राणायामादि यौगिक क्रियाएँ; नियमित दिनचर्या, ब्रह्मचर्य स्वस्थ मनोरंजन तथा अनुकूल वातावरण आदि चित्त की वृत्तियों की स्थिर करने के उपायों का प्रथम अवलम्बन करना चाहिये। पश्चात् विगत स्मृति के संस्कारों को उत्पन्न करने के लिये पहले कहे गये चरकोक्त (अथवा न्यायसूत्रोक्त) कारणों का आश्रय लेना चाहिये।

आधुनिक काल के मानस चिकित्सा शास्त्र Psccgchiatry—में वर्णित प्रायोगिक Experimental पद्धति द्वारा भारतीय प्रक्रियाओं को व्यवहार में लानेसे निश्चय ही अधिक सफलता प्राप्त होगी।

आयुर्वेद में स्मृतिभ्रंश के लिये निम्न योगों को सफलता पूर्वक व्यवहार में लाते हैं।

ब्राह्मी घृत, ब्राह्मी तैल, शिवाघृत सारस्वतचूर्ण, सारस्वतारिष्ट, स्वल्पचेतसघृत शंखपुष्पी के योग। मनुष्य की कपालास्थि की भस्म या चूर्ण विशेष रूप से लाभप्रद हैं।

—०—

शिशु-परिचर्या और प्रारम्भिक चिकित्सोपचार

(पाश्चात्य मतानुसार)

लेखकः—डा० श्री श्यामदास प्रपन्नाश्रमी 'पीयूषपाणि' आयुर्वेदाचार्य

सद्यःजात शिशु

गर्भ में से भूमिष्ठ होनेके पहले (On full-term) बच्चे की धड़ की लम्बाई लगभग २०-२१ ईन्च (पश्चिमीय) और १६ इंच (भारतीय) औसत पर होती है। उसी क्रम से उसका शारीरिक वजन ७ पौंड व ६ पौंड तक बैठता है। दोनों प्राणियों (प्रसूत व शिशु) की पारस्परिकविच्छिन्नता के पूर्व से कई रोज तक शिशु का शारीरिक वजन धीरे धीरे कम होकर फिर सप्ताह के पश्चात् कुछ बढ़ना शुरु हो जाता है। नाखून बढ़कर उंगुलियों से ऊपर आ जाते है। केश भी एक दो इंच तक बढ़ हो जाते है। इसके बाद होता है उसका माया-मेदिनी पर अवतरण। अवतीर्ण होने के कई घन्टे में जाकर मूत्र त्याग हो पाता और मल काली चीट् का सा होता है। मल का स्वाभाविक वर्ण जो पीले-पित्त-मिश्रित होना चाहिए, सो आपको दो तीन रोज में ही देखने मिलेगा। नाभि-नाल यानी नाड़ी सूख कर कम से कम ८।१० दिन से १५।२० दिन में जाकर अपना नामो निशान मिटा देगा। गर्भ से बाहर आते समय उसकी खोपड़ी की हड्डी पर दबाव पड़ने के कारण आई हुई खराबी भी धीरे धीरे ठीक होने लगेगी। चमड़े व चेहरे की सुर्खी भी एक सप्ताह के बाद कम होने लगती है। इसी समय बहुत से बच्चे के जिगर की गड़बड़ी से सुर्खी के बदले में चेहरा पीला पड़ जाता है। पर इसमें भेद यह है कि शरीर का वर्ण पीला होते हुए मूत्र का भी वर्ण पीला होना चाहिए। ऐसा हुआ तो समझना चाहिए कि शिशु को "कामला (Jaundice) रोग हमला कर बैठा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रसवोत्तर शिशु-परिचर्या

प्रायः देखनेमें आता है कि भूमिष्ठ होते ही शिशु को कपड़े के कत्तरों से लपेटा जाता है। सर्दी से बचाने के लिए कोई-कोई शिशु को स्नान करानेमें एतराज करता है और बजाय स्नान के पकाया हुआ तेल की मालिश ही कर देता है। प्रसव-कालीन अस्वाभाविक परिस्थिति के कारण शिशु के शरीर पर आवो हवा का कोई असर नहीं हो गया तो तो उसके शरीर-संस्कार अवश्य कर देना चाहिए, इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए निम्नलिखित उपकरणों तथा उपचारों की आवश्यकता होगी;—(१) तापमान-यन्त्र (Bath Thermometer), यह अप्राप्य होने पर जन्तु-नाशक औषधि मिश्रित जल द्वारा अपने हाथों का सुसंस्कृत करके जल का ताप निर्णय करना पड़ता (२) त्रिकोण-लंगोटी (apron) यह चाहे खड़ का हो या कपड़े का या दोनों ही का होना चाहिए, तिपाई (Stool) गमला, गर्मजल, हलका सा तौलिया, रूई, पाऊडर, साबुन, केश संस्कारार्थ मुलायम बुर्श। कमर-बंध, नाभी के ऊपर बांधने की पट्टी और ड्रोसींगस्, कपड़े कुर्त्ता, गमछा, तौलिया आदि।

नहलाने का तरीका

जल का तापमान ९५० डिग्री होना चाहिए। गर्म तौलिए से लपेट देकर शिशु की आँखें, नाक, कान आदि रूई के कतरे भींगोकर पोछना और कार्बोलिक साबुन (लाइफ़बाय) के झागों से आहिस्ता आहिस्ता धोकर सूखा तौलिए से उसका शरीर खुश्क कर देना होगा। बाद में शरीर के ऊपर से लपेटा हुआ तौलिया हटाकर अपनी गोद पर लेटाकर शरीर के अन्यान्य अवयवों का पूर्वोक्त रीति से संस्कार करना पड़ता है। साबुन के झागों से मलकर धो लेने के बाद जल के टब में केवल शरीर डुबो लेना फिर गोद में लेटाकर शरीर को खुश्क करने के लिए गर्म तौलिए से काम लेना चाहिए। इसके बाद पाउडर (क्यूटी क्यूरा किम्वा अन्य किसी प्रकार का टैलकम पाउडर) उसके शरीर पर अच्छी तरह छिड़क देना होगा। शरीर के किसी स्थान का चमड़ा अस्वाभावि अवस्था प्राप्त हुआ हो तो उसपर "वोरीक-वेसेलीन" लगा देना चाहिये। नाभि स्थान पर क्षत रहने पर टिंचर आयोडीन लगाकर या तो वोरीक या सल्फा-पाउडर की वुर्की देकर मलहम-पट्टी बांधने के तरीके से ड्रेसिंग कर देना चाहिए। ऊपर से कमरबन्ध और अंगोछा आदि पहिना कर विस्तर पर लेटा दिया जाए। सर्दी के मौसम में मुलायम हल्का कम्बल और गद्दे की जरूरत होती है। विस्तर पर मोम कपड़ा (Oil-cloth और Draw sheet) आडे से दोनों तरफ मोड़ देना चाहिए। शीत-वस्त्रादि उसके शरीर पर ऐसे ढंग से ओढ़े कि हाथ-पैरों को चलाने-फिराने में उसे दिक्कते न हो। गद्दा तो रोजाना दो दफे लोट-फेर से विछा देना और विस्तर का भी दो, तीन बार झाड़ देना चाहिये।

* (१) नवजातक के रोग

साधारणतः सामान्य श्वासावरुधता-(White asphyxia जिसमें जातक के शरीर का वर्ण फीका पड़ जाना और श्वास-क्रिया का विलकुल रुक जाना साथ-साथ शिथिलता इतनी बढ़ जाना मानों शिशु को जीवित दशा की सारी चेष्टायें समाप्त हो चुकी है। ऐसे दिखाई देने लगती हो तो तत्काल ही उसका नाभि-नाल का छेदन करना और गले के अन्दर संचित कफादि निकाल श्वास-मार्ग को खोल देना साथ साथ शिशु के पैरों पर गर्म कपड़ा लपेट कर गर्म जल के गमले में सारा शरीर ही (केवल गले के ऊपरी हिस्सा

* प्रसुति तन्त्र व धात्री विद्या आदि के आधुनिक विवेचनों का सविस्तारिद वर्णन "यौन विज्ञान रहस्य" नामक पुस्तक में किया गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही बचा रहे)। आधा घण्टे तक डुबो रखना चाहिए। इतने समय के अन्दर यदि उसकी श्वास-क्रिया चालू नहीं होती तो इसी दर्मियान में कई बार ऊपर उठा उसकी छाती की दोनों करवट हिस्से पर मुलायमी से थप्पड़ मार मार कर किम्बा उसके मुख नाक के अन्दर फूंक मारके श्वास-क्रिया चालू कराने की कोशीश करना चाहिए। गुदामार्ग के अन्दर अंगुलियां प्रविष्ट करके या छोगनी के चमड़ा पलटाकर भी कहीं कहीं यह उद्देश्य सिद्ध हो जाता है। इसके अलावा तो डाक्टर को बुला कर "लोवेलीन" का सूचीवेध दिलाना पड़ता है। इसी ख्याल से नाड़ी काटने से पहले नाभि-नाल पर एक ऐसी गांठ लगाकर बांधना जरुरी जो कि नाभि मूल से पांच इंच दूरी पर नाड़ी के ऊपर होता है। ऐसी हालत पर डाक्टर को सूचीवेध का प्रयोग नाभि-नाल की शिरान्तर्गत ही करना पड़ता और नाभि-कमल की तरफ से नाल का रक्त सोंत कर नाल की ओर पहुंचाना पड़ता है जिससे औषधि का प्रभाव शिशु के शरीरस्थ रक्त पर शीघ्र आ जाय। इसका इन्तजाम तो पहले से ही ठीक तरीके से होना चाहिए। शिशु को धनुर्वात हुआ तो "नाक-नल" (Nasal-tube) के सहारे दूध पिलाना पड़ता है।

शिशु का क्रम-विकास

शिशु का वजन जन्म से छठे महीने में दूना होता है और साल पूरे होने पर तिगुना। दूसरे वर्ष में छः पौण्ड, तीसरे में चार पौण्ड, चौथे व पांचवे वर्ष में पांच पौंड और छठें से बारहवें वर्ष पर्यन्त छः पौंड करके अधिक भार बढ़ना स्वाभाविक है। शरीर की लम्बाई पहले वर्ष में आठ इञ्च फिर पांच वर्ष पर्यन्त हर साल साढ़े तीन इञ्च करके बढ़ जाती है। सवा साल से डेढ़ साल की उम्र में उसके ब्रह्म-रन्ध्र की हड्डी जुड़ जाती है।

पाचक संस्थान

जन्म काल में उसका आमाशय—Stomach का आनुमानिक भार डेढ़ औंस और छः मास पर्यन्त प्रति मास एक औंस के हिसाब से वर्ष के अन्त तक जाकर नौ औंस का बन जाता है। मातृ दुग्ध परिपाक होने में एक घण्टा से अधिक समय नहीं लगता। गाय का दूध कुछ देर में ही पचता है। दूध पीने के डेढ़ से ढाई घण्टे के बाद ही शिशु का पेट खाली होता रहता। उम्र एक वर्ष से अधिक होनेपर ही श्वेतसारीय भोजन (Starchy Food) देना चाहिए क्योंकि "दूध के दांत" (Milk-teeth) के निकलने के पूर्व पाचन शक्ति उसकी बहुत कमजोर रहती है।

श्वास-क्रिया

भूमिष्ठ होते ही शिशु की श्वास-क्रिया की गति एक मिनट में ४४ बार, दो वर्ष की उम्र में ३५ बार प्रति मिनट और बारह वर्ष की उम्र में २३ बार।

नाड़ी—शिशु के निद्रित होने पर उसकी कपाल मूलिनी धमनी Temporal artery की गति की जांच करने से भी पता लग सकता है। जन्म के बाद प्रति मिनट १४०-१६०, दूसरे महीने में १३०, छठे महीने में १२०, एक साल की उम्र में ११० तीन वर्ष की उम्र में १००, पांच से दस वर्ष की उम्र में यथाक्रम से ९० व ८०

मल—पहले दो महीने में दिन में ३-४ बार पीले रंग के घोल के समान, आठ महीने के बाद दिन में दो बार बंधा हुआ बादामी रंग का मल स्वाभाविक है।

मूत्र—प्रायः कई बार हो सकता है। मूत्राधार का आयतन छोटा होना ही इसका मुख्य कारण है।

ग्रन्थियां—शिशु को पसीना आना उसके जन्म के पहले सप्ताह से ही शुरू हो जाता। नेत्रों में से आंसू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी ३।४ महीने में आने लगते हैं। अण्डकोष का पेट के अन्दर से उतर आना भूमिष्ठ के समय ही स्वाभाविक नियम है। परन्तु कभी कभी महीने में बाद भी दिखाई देता। अधिक समय की देर से उतर कर आवे तो इसके साथ अन्य एक उपसर्ग "अन्त्रावरोध"—Hernia भी हो सकता हैं।

निद्रा—प्रथमतः कई सप्ताह पर्यन्त शिशु तो चौबीस घण्टा ही निद्रित रह कर केवल भूख लगने पर जागता है। एक वर्ष के अन्त में जाकर उसका निद्राका समय पन्द्रह सोलह घण्टा रह जाता है। दो तीन साल में १२-१३ घण्टा। बच्चों को कम से कम नौ घण्टे तक निद्रा की आवश्यकता होती है।

बोध शक्ति—तीसरे महीने में शिशु अपनी माता को पहिचान लेता, पांच छः महीनेसे उसकी बोध शक्ति बढ़ने लगती है। भूमिष्ठ होने के २।३ दिन पर्यन्त शिशु को शब्दादि का ज्ञान तो होता ही नहीं फिर कानों से शब्दादि सुनने में क्रियाशक्ति द्वितीय सप्ताह में उसके कानों में ऊंची आवाज आते ही वह चौक पड़ता है।

अंग-संचालन—तीन चार महीने की उम्र में शिशु अपना सिर थोड़ा बहुत उठा सकता। छः से आठ महीने में बैठने की कोशीश करता। एक वर्ष के बाद बिना किसी के सहारा लेते हुए ही खड़ा हो सकता नौ महीने में घुटनों के बल चलना और डेढ़ साल में चलना फिरना सीखना। डेढ़ साल की उम्र में यदि शिशु चलने फिरने में असमर्थ होता है तो समझ लेना कि उसे कोई न कोई रोग हो गया। ऐसी हालत में प्रायः ही फ़क्क यानी अस्थि-कोमलता, शिशु-पक्षाघात (पोलियो न्यूराइटीस) और जड़ता idiocy, बधिरता किम्वा किसी यान्त्रिक विकार का होना स्वाभाविक है।

वस्त्रादि की आवश्यकता—सर्दी के मौसम में गर्म कपड़ा जैसे फिलानेल, खद्दर और रूई के बने हुए कपड़े, मुलायम ऊनी कपड़ा और गर्मी सूती कपडे कपड़ों की गर्मी के कारण शिशु के सारे शरीर पर पीड़िकायें और चर्मरोग भी हो जाता है ऐसा होने पर रेशमी-वस्त्र का ही प्रयोग होना चाहिये। कपड़े कुर्ता हमेशा ही ढीला रखना चाहिये। शिशु की परिचर्या करनेवालों को यह बात हमेशा याद रखनी चाहिये कि किसी भी हालत में उसके पैरों में अधिक ठंढ न लग जाए।

शिशु का प्राकृतिक व्यायाम—शैशवी-जीवन में स्तन्यपान, हस्त पादादि का विक्षेप संचालन, घुटनों के बल चलना आदि शिशु के लिये व्यायाम ही है।

दन्तोद्गम—पहले अस्थायी यानी दूध के दांत जो कि नीचे की और ऊपर की पंक्ति में दस-दस के हिसाब से कुल बीस बाद में मसूढ़ों के दोनों पंक्ति में पांच पांच के हिसाब से दस दांत अधिक उम्रमें स्थायी दांत और युवावस्था में दो दांत और भी निकलती हैं।

शिशु के दांत निकलने का एक हिसाब है जैसे—उसकी उम्र के जितने भी महीने क्यों न हो उसकी संख्या से चार अंक कम करने से उसके दांत की वर्तमान संख्या मालूम पड़ जायगी मान लीजिए शिशु की उम्र है छः मास तो उक्त ६ अंक से ४ निकाल देने पर २ शेष रह जाता, अतः शिशु की दांत की संख्या २ ही है। साल भर में आठ के हिसाब और दो साल में दस के हिसाब से बीस यानी शिशु के दांत की पंक्ति पूरी होनी चाहिने। यदि अन्यथा हुई तो दन्त चिकित्सक को बुलाकर शिशु का दन्त निदान' कराना उचित होगा। दूध के दांत के हिलाने का दो कारण होता है, एक कारण वह है—जब उसका स्थायी दांत निकलने लगती है तो दांतों में कीड़े लग जाना या उनका क्षय Caries होना अन्य कारण है।

दन्तोद्गम—Dentition कालीन उपसर्गों में हरे-पीले दस्त, तीव्र ज्वर, दूध-डालना आदि होना शिशु के शरीर को जबर्दस्त बिगाड़ने की सूरत बन जाता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहले से सावधानी स्तन दुग्ध के सम्बन्ध में होना चाहिये उसमें उसकी माता के लिए सख्त परहेज रखने के बदले में अनाव-सनाब खाना-पीना और सर्दी गर्मी से बचने से सम्बन्धित है। माता के परहेज के साथ साथ शिशु का दुग्धपान कार्य भी नियमित रूपसे होना चाहिए। जो कुछ भी हो शिशु के दांतों की सफाई हर दफे दूध पिलाने के बाद होनी चाहिए। अपने आप दन्त धावन करने में समर्थ होते ही बच्चों को दातों माजने की बुर्श को स्तेमाल करने का आदत डालना चाहिये।

रुग्ण शिशु की परिचर्या

चिकित्सा-व्यवस्था के साथ परिचर्या करने वाले को ही "नर्स" कहा जाता है चाहे वह स्त्री हों या पुरुष आतुरों या शिशुओं की परिचर्या में निपुण, अनुसन्धानात्मक तीक्ष्ण दृष्टि शक्ति तथा सहानुभूति और बहुमुखी विचारों से भरे हुआ अनुभव की आवश्यकता ही अधिक होती है खास करके शिशु-मनोविज्ञान की अधिक जानकारी उसके परिचर्या करनेवालों को होना महत्वपूर्ण है। बार बार सिर के बाल खींचना और सिर हिलाकर घबड़ाते हुए चीख मारके रोना और अपनी आँखों की भौहें ऊपर चढ़ाकर शिशु अपनी मस्तक सम्बन्धी पीड़ा की सूचना देता है। गले की पीड़ा और काली खांसी हुई तो मुँह में उँगली घुसाकर बैठी हुई आवाज के साथ रोता रहेगा। पेट दर्द होने पर पैरों को मोड़कर पेट की ओर चढ़ा लेता, रोना उसका कतई बन्द नहीं होता पर पेट पर दबानेसे कुछ शान्ति अनुभव करता है।

भूख के मारे भी वेहद रोना खास लक्षण है। जिसमें अंगुली चूसना और आहार कराते ही शान्त हो जाना। नन्हे बच्चों की छाती और प्रेट की गड़बड़ी हालत जैसे—जल्दी जल्दी पसली चलना, दिल की अधिक धड़कन और पेट में वायु जमना देखकर समझना चाहिए कि उसके शरीर में सर्दी का असर हो गया किम्वा पेट की खराबी हुई है। शिशु की पीड़ा की जांच बड़ी सावधानी के साथ करनी चाहिए। बच्चों से घुलमिलकर उनके मन पर प्रभाव डालने के लिये किस्सा कहानी और खेल तमाशे का सहारा लेना पड़ता है। तापमान यन्त्र लाभकर शिशुकी ताप परीक्षा करनी हो तो खूब कम समय में काम बनानेवाली थर्मामीटर की जरूरत पड़ती है क्योंकि अधिक देर तक उसे शान्त करके रखना असम्भव ही होगा। जहाँ तक हो सके निद्रितावस्था में गुदामार्ग के अन्दर थर्मामीटर प्रवेश करके काम लेना चाहिए। ज्यादा पेट चलने यानी दस्त होने के बाद किम्वा अन्त कारणों से यदि शिशु का शरीर शिथिल हो पड़ता है तो उसका ब्रह्मरन्ध्र का बैठ जाना उसका सूचक लक्षण हैं, ऐसी हालत में चेहरा उसका फीका पड़ जाता, होठों पर गहरा नीलापन आ जाता, आँखों में गढ्ढा पड़ जाता और "शिवनेत्र" यानी आंखों की पुतली ऊपर चढ़ी हुई दिखाई देती है।

शिशु के आहार

दूध की खराबीके कारण आन्त्रिक ज्वर, विसूचिका रोहिणी Diphtheria, आरक्त ज्वर Scarlet Fever, क्षय रोग; गलेके क्षत आदि कई रोग "शिशु-रोग" में प्रमुख उपसर्गों की सृष्टि कर सकती।

शिशु का रोना—शिशुके हमेशा रोनेकी आदत बहुत बुरी है। उसका रोना देखकर यदि यह समझ लिया जाय कि वह भूखा है तो ऐसी समझदारी गलत ही सिद्ध होगा। क्षुधा से कातर होकर रोने के अतिरिक्त कई कारण ऐसे होते हैं जिसमें शिशु रोते रोते परेशान हो जाता, जैसे—अधिक सर्दी या गर्मी लगने से, पैरों में ठंढ लगने से, कपड़े-कुर्त्तों की तंगी हालत के वजह से, तिकोनी या जांघिया आदि पेशाब के कारण भीग जाने से; खटमल, चिऊँटी आदि के काटने से, सुइयाँ, पीनें, आदि के चूभ जाने से किम्वा विस्तर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदि की कठोरता से शिशु रो रोकर अपनी अस्वस्ति की सूचना देता है। क्षुधा के कारण रोता हो तो उंगली चूसने लगेगा—दूध पिलाइए, चुप हो जायगा। प्यास के मारे रोता होगा तो जल पिलाइए—उसका रोना बन्द हो जायगा।

शिशु को आहार देने के उपरान्त अगर वह रोता है तो इसका कारण सम्भवतः यह हो सकता है कि उसकी आहार कालीन जल्दीबाजी से पेट के अन्दर वायुका प्रविष्ट हो जाना। इसका उपाय यह है कि शिशु का पेट अपने कंधे पर चिपटा कर धीरे धीरे टहलना और उसकी पीठ पर थपड़ी लगाना। इसी हालत में उसके कमरपर हाथ रख पेट पर दबाव डालते रहने से वायु निकल जाती है, इसी तरीके से लाभ न हो तो लेटा कर पेट पर मालीश या सोंठ का कपड़छान चूर्ण पेट पर बुरक कर खुश्क मालीश कर देना चाहिए।

लिटाने का तरीका—Posture in Bed तन्दुरुस्त बच्चा हमेशा ही करवट लेकर सोता रहता है। अस्वस्थ होने पर ज्यादातर चित होकर ही लेटता है सोती हुई हालत में सिरका पीठ की ओर घूम जाना देखकर "गर्दन-तोड़" का सन्देह करना ठीक ही होगा। पेट में दर्द होने पर घुटनें मोड़कर छाती से चिपटा लेता है। आहार के बाद पैरों की ऐसी हालत देखकर उसकी भोजन सम्बन्धी गड़बड़ीका पता लगाया जा सकता है। शिशु का शरीर दिन प्रतिदिन शीर्ण होता जाय तो उसकी जांघो के भीतरी हिस्से का चमड़ा सिकुड़ा हुआ और मांस शिथिल सा होना जरूरी है। दस्त की बीमारी से ऐसी दशा आ जाती है।

चिह्नित करना—Labelling :— शिशु-सदन किम्वा ऐसी संस्थाओं में जहां शिशुओं की परिचर्या खास तौर से हुआ करती है वहां "चिन्हित करना" प्रणाली की खास जरूरत होती है। इसकी खास जरूरत इसी से होती है कि शिशु को दवा आदि पिलाते वक्त एक की दवा दूसरे को गलती से पिलाया जाना। इस मतलब को हल करने के लिये फीता पर नम्बर डालना जो उसके बिस्तर का लिखकर उसके हाथ या पैर से बांध देना चाहिए। ऐसे तरीका के अपनाने से भूल होने की नौबत ही नहीं आएगी।

दुर्घटना—शिशु सदनों में साधारणतः कई प्रकार की दुर्घटनायें हो सकती है, इनके प्रतिरोध के लिए निम्नलिखित बातों पर अधिक ध्यान देना चाहिये—१ शिशु के शरीरपर "दग्ध-क्षत"-जिसका कारण जल जाने से, गर्म जल की बोतलोंसे, गर्मजलकी धूवां के नाकमुँह के अन्दर प्रविष्ट होनेसे किम्वा अन्य कारणोंसे जो कि शिशु को "उष्ण-स्नान" —Hot-Bath के जल की अधिक उष्णता तथा पलस्तर चढ़ाने के लिए बनाते समय उसमें अधिक उष्णता को ध्यान न देकर झटपट उसका इस्तैमाल करने से किम्वा आवश्यकता पड़ने पर गर्म जल की बोतल के इस्तैमाल करते वक्त उसकी डाट के ढीले हो जाने से उसमें से गर्म जल अगर शिशु के शरीर पर आ पड़े तो उसका चमड़ा जलकर घाव बन सकता है। (२)विषक्रिया-(Poisoning) इसका कारण है कि पीनेवाली दवाओं की शीशी के ऊपर लिखी हुई बातों पर ध्यान न रहना, मालिश के लिए किम्वा आँखों में डालने को लिए दी गई दवाओं को गलती करके पिला देने से या एक ही जगह पर कई रोगी के लिए रखी गयी दवाओं में से एक की दवा दूसरे को दे देनेके कारण उसका परिणाम बड़ा ही दयनीय होता है। इसके उपरान्त औषधियों की मात्रा और परिमाण पर ध्यान न रहनेसे भी वही दशा बन सकती है। जहां तहां दवाईयों को रखना जो कि चलने-फिरने लायक बच्चों के लिए प्राणघात का निशाना ही है। इसलिए दवाईयों का स्थान सुरक्षित व नियन्त्रित होना चाहिए ताकि यह आसानी से शिशु को प्राप्त न हो। (३) अन्त्रावरण प्रदाह (Peritonitis) शिशुको वस्ति-प्रयोग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करते-समय असावधानी, जैसे डुश-नल टोटी में स्नेह पदार्थ न लगाकर ही खूब जोर के साथ गुदा मार्ग में प्रविष्ट कराने से अन्त्रक्षत व अन्त्रावरण प्रदाह हो सकता है। (४) खाट, पलंग पर से गिर जाने के कारण सख्त चोट लगना। (५) श्वासावरोध—खाने पीने की सामग्री किम्बा औषधि आदि के खाते वक्त गले के अन्दर अटक जाना भी एक अस्वाभाविक दुर्घटना का कारण है जिससे श्वासावरुद्ध होकर तत्काल ही मृत्यु हो सकती है।

* शिशु के आहार

दूध की खराबीके कारण आन्त्रिक ज्वर, विषूचिका, कुष्ठ-रोहिणी, आरक्तज्वर, क्षयरोग, गलक्षत, रक्तातिसार आदि कई रोग जो शिशु के शारीरिक विकास को रोक देते हैं।

आनुसंगिक आहार—(Complementary feed) माँ का दूध यदि आवश्यक परिमाण में नहीं मिलता तो पहले-पहल बारह बजे, तीन बजे और छः बजे दिये जाने वाले आहार के बाद एक औंस दूध में एक औंस जल मिला ३० ग्रेन दुग्ध-शर्करा डालकर देना चाहिए। बोतल में भरकर दूध पिलाने की आदत पड़ जाने से माँ का दूध पीना शिशु पसन्द नहीं करता। इसलिए बोतल के मुंह में दुद्धी न लगाकर खड़ के कैथिटर की एक ओर जो बोतल के अन्दर और दूसरी ओर में दुद्धी लगाकर शिशु को पीने दिया जाय तो उसे मजबूत होकर ही जोर-जोर से चूसना पड़ता है जिससे स्तनपान की आदत उसकी बनी रहती है। इसके अतिरिक्त आवश्यकतानुसार गाय का दूध भी दिया जाना चाहिए। माँ का दूध छूट जाने के बाद शिशु के आहार—(Weaning) कुमार तन्त्रों में शिशुओं के आहार सम्बन्धी अनेक बाते लिखी गई है। पश्चिम देश के बच्चों का वजन १५ पौंड का होते ही उन्हें तरह तरह के पौष्टिक भोजन दिए जाते हैं। जौ का मण्ड, अण्डे की जर्दी आदि तो दी जाती है फिर दन्दोद्गम के उपरान्त फुल्किया और यूष आदि भी, शिशु की माँ का दूध छूट जाने के बाद उसकी माता को जलीय आहार कम कर देना और कोष्ठ शुद्धि के लिए विरेचक और स्तनों को कठोर बनाने के उद्देश्य से वाईण्डर या आंगिया लगा रखना जरुरी है।

पश्चिम में १-२ वर्ष की आयु वाले शिशु को रोजाना दस छटाँक दूध, दो ड्राम मक्खन, ७ ड्राम अण्डा, १-२ औंस फलों का रस, एक औंस साग-सब्जी का रस और एक ड्राम मछली का तेल देने का आम तौर से रिवाज है। इसके अतिरिक्त मांस का यूष, मछलियां, शुष्क पनीर, आलू व गुड़ादि भी दिए जाते हैं। सात वर्ष की आयु पर्यन्त दस औंस दूध ही उनके लिए काफी है।

मक्खन का अधिक प्रयोग करने से यकृत पर बुरा असर पड़ता है इसलिए आवश्यकता से अधिक न देकर उसके बदले में खनिज पदार्थों से युक्त आहार ही देना उचित है। बच्चों को गोभी उबालकर खिलाने से अच्छा होता है, सन्तरों का रस, पके हुए केलों को मथकर खिलाना लाभदायक है। केलों का इस्तेमाल जहाँ तक हो सके हमेशा ही कराना चाहिए क्योंकि इसके अन्दर श्वेतसार का परिमाण तो काफी है ही फिर चूना लौह, फास्फरस, ताँबा और ए, वी डी वर्गके खाद्योज भी विशिष्ट मात्रा में मौजूद है।

शिशुओं की विरल व्याधि

शिशुओं को हमेशा होनेवाले रोगों का विस्तारित वर्णन कुमारतन्त्रों में लिखा गया है। इसके अतिरिक्त

* शिशु के आहार सम्बन्धीय विभिन्न तथ्यों का विस्तारित वर्णन लेखक की "यौन-विज्ञान रहस्य" नामक पुस्तक में देखें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यहां उन्हीं सब रोगों की परिचर्या आदि का उल्लेख किया जाता है जो कि वर्तमान काल में व्यापक रूप धारण कर लेते हैं। (१) किम्भूत किमाकृति—Cretinism. यह शिशु को वद सूरत व जड़ता पैदा करनेवाली विमारी है। प्रथमतः कई माह लगातार कब्जियत, सुस्तीपन, हमेशा रोना और ऐसी हालत में माथे का सीकुड़ जाना, जीभ पर सूजन व भारीपन साथ साथ उसका बाहर निकलता रहना, बालों का झड़ जाना, चलने फिरने व सरकने में भी विवश होना, शारीरिक उत्ताप का ह्रास आदि के परिणाम एकदम "जड़-भरत" बन बैठना है इसका लक्षण बताया जाता है कि अवटुका ग्रन्थि—(Thryoid gland) की कमी के कारण ही यह रोग हो जाता है। इस रोग की चिकित्सा यथा समय न होने से आगे चलकर शिशु का जीवन ही बेकार हो सकता है। डाक्टर लोग उक्त ग्रन्थि से बनी हुई औषधियों का प्रयोग करते हैं।

(२) शिशु पक्षाघात Porlio-Myelitis

एक से तीन वर्ष की उम्रवाले शिशु ही विशेषतः इसके शिकार होते हैं। कारणः—एक प्रकार के कीटाणु की करतूत से ही रोग पैदा होता है। रोगका आक्रमण व्यापक तथा एकक दोनों रूप में ही हो सकता है। पहले पहल ज्वर, नासिका व कण्ठनाली के अन्दर पीड़ा, कदाचित उदरामय, वमन आदि पश्चात् पक्षाघात। चिकित्सा तथा परिचर्या रोग का निदान उचित ढङ्ग से होने पर ही आरोग्य होने की सन्भावना रहती है। आजकल डाक्टर लोग सौषम्नीय तरल—Spinhl-Fwid की जांच विशेष विधि से करके ही रोगका पता लगा लेते हैं। सौषम्नीय-तरल के निकाल देने और रक्त रस से विशेष रासायनिक विधि से निर्मित टीके के लगाने से ही रोग का प्रतिरोध हो सकता है। वर्तमान समय अमेरिका के डाक्टर साल्क द्वारा आविष्कृत टीके का प्रचार हो रहा है। इसके पूर्व दूसरा एक टीका प्रचलित हुआ था जिसका नाम गाया-ग्लोव्यूलीन" है। पिछले वर्ष के "आयुर्वेद-गौरव" के अंक में लेखक का एक निबन्ध "शिशु पक्षाघात और उसका प्रतिकार" देखिये।

ऐसी परिस्थिति में शिशु के शरीर पर अधिक दबाव न पड़े इसका ध्यान रखना और उसे आराम पहुंचाना ही है परिचर्या की विशेषता है। गर्म सेक लगाकर शरीर की उष्णता बढ़ाने की कोशीश करना और अवांछनीय रूप से कपड़े-कुर्तोंका भार न पड़े इसलिये शिशु के ऊपर "खांचा"-Credle डाल देना चाहिए। पीड़ित पेशियों को ठीक रखने के लिये सेल्यूलइड से बना हुआ खपाच Splint चढ़ा बांध देना चाहिये। दो चार सप्ताह में जब पीड़ा कुछ कम हो जाए तब ही मालीश आदिसे काम लेना चाहिये। आवश्यकतानुसार शस्त्रोपचार भी करना पड़ता है।

बोध शक्ति का अविकाश

(३) जड़ बुद्धि—Backwardness of mind

शिशु यदि पहले से ही अपना सिर सीधे उठाने को असमर्थ हो या चलने फिरनेमें लड़खड़ाता हो तो समझ लेना होगा कि उसके ज्ञान-तन्तुओं के विकास में रुकावट पैदा हो गयी। ऐसा होने पर वह "बाबा-भोलानाथ के तरह भोला भाला दिखाई देगा। वह न तो कुछ बात ही समझेगा और न कुछ होश हवास ही उसमें आ सकेगा किसी भी प्रकार का शब्द सुनकर वह बेसुध हो जायगा इतना ही नहीं इससे उसका दौरा भी होने लग कर पागल सा हावभाव और भोलापन व विचार-बुद्धि से हीन होने की आदत उसमें बढ़ती ही जायगी। आज कल ऐसे रोगियों की बुद्धि की जांच की मशीन भी निकल गई है जिसके सहारे से बुद्धि के परिणाम आदि का ज्ञान प्राप्त हो सकता है। पूरे अर्सेसे बीमारी भोगने के कारण जो विकार उपस्थित होता है, उसका इलाज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होना कोई कठिन नहीं है पर कस लगाने में कमी रह जाने से असाध्य हो पड़ता है।

श्वास कष्ट—Dyspnxa

शिशुओं को हमेशा जो सांसकी तकलीफ हुआ करती है उसके कई कारण हैं अक्सर सर्दी लगकर नथुनों का बन्द हो जाना, तालुमूल के ऊपरि ग्रन्थि-स्फीति, ग्रसनिका Farynx में स्फोटक आदि के कारण प्रदाह होने से श्वासकष्ट हो सकता है। इसके अतिरिक्त स्वर यन्त्रका विशेष आक्षेप के कारण भी ऐसा हो जाता है। स्वरयन्त्र की पीड़ा जनित श्वास कष्ट में मुंह व गले में ठंडे जल का झापटा और जीभ पकड़कर बाहर की ओर निकालने को कोशीश करना चाहिये। इस उपचार से लाभ न होवे तो डाक्टर की देख रेख पर "क्लोरोफार्म या "एमिल नाइट्रेट" का घ्राण देना आवश्यक है। तालु मूल प्रदाह तथा कण्ठरोहिणी रोग। Diptheria के कारण भी श्वासकष्ट हो जाता है। छूत की बीमारियों से होनेवाले श्वासकष्ट में डाक्टर लोग शस्त्रोपचार ही उचित चिकित्सा मानते हैं।

मूत्र सम्बन्धीय विकार

शिशु को मूत्र त्यागने में जो कष्ट होता है उसके भी कई कारण हैं जैसे—छोटे छोटे लड़कों के लिंगाग्र भाग चर्माच्छादित रहना, लिंग मणि-प्रदाह, छोटी छोटी लड़कियों के भगौष्ठों का प्रदाह आदि कारण से उन्हें मूत्र त्याग कालीन तकलीफ पैदा हो सकती है। मूत्रयन्त्र व भगादि स्थान की अस्वच्छता, कर्कश वस्त्रादि से चमड़े पर घसीट लगना, प्रस्राव से भीगे हुए कपड़ों का अधिक समय पर्यन्त शरीर पर रहना आदि कारणसे शिशु रोता रहता है। गिनोरिया के रोगीके वस्त्रादि के संस्पर्श से लड़कियों के भग व योनि की पीड़ा उत्पन्न हो जाती है। पीड़ितावस्था में शिशु को सबसे स्वतन्त्र एकान्त स्थान पर रखकर उसकी परिचर्या करनी चाहिये। मूत्र मार्ग, भग-योनि के संस्कारार्थ जन्तु नाशक उपाय अपनाना चाहिए—दस प्रतिशत प्रोटार्गल-ग्लिसरीन में पीचु Plug लड़कियों के लिए बहुत लाभदायक है।

शिशु परिचर्या पर मौलिक प्रश्नोत्तर

(१) मुख-गह्वर की स्वच्छता Mouth Hyvine आम शब्द में "मुँह के अन्दर की सफाई" कहते हैं। प्रश्न :—इसका सहज उपाय क्या है? उत्तर :—दांत, मसूढ़े, जीभ और जबड़ों के मुलायम हिस्सों की हिफाजत ही इसका सहज उपाय है।

प्रश्न :—ऐसी सफाई की जरूरत क्यों होती है?

उत्तर :—मुंह की अन्दुरूनी सफाई से ही शरीर पूर्ण स्वस्थ रह सकता है। क्योंकि इस मतलब के हल होने से शिशु के मुख-मण्डल या चेहरे पर खूबसुरती आ जाती है, उसकी बनावट भी अच्छी और गले की आवाज भी रसीली होती है। जल्दी बात करने लायक बन जाता है और गले व तालुमूल आदि स्थान के रोगोपसर्ग तथा छूत की बीमारियों का होना बन्द हो जाता है।

(३) प्रश्नः—दूध के दांत की तन्दुरुस्ती बनी रहने का उपाय क्या है?

उत्तर :—विशुद्ध दूध, हरी साग सब्जी, ताजा फल, हाथ चक्कीका आटा वगैर पालिस के चावलोंका भात, मक्खन और मधु के साथ घातक या खनिज-खाद्योजोंसे भरपूर भोजन ही इसका एकमात्र उपाय है।

(४) दांत मांजने की बुर्श की सफाई और कृमि-नाश का कौन सा तरीका आसान है? शिशु के दांत मांजने का बुर्श जो एक के इस्तेमाल के बाद दूसरे को देना अनुचित है प्रत्येक के लिये अलग अलग होना चाहिए। और दांत मांजने के बाद अच्छी तरहसे धोकर धूप व हवा में खुश्क हो जाने पर साफ जगह रख देवे।

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुक्रमेह की अनुभूत सफल चिकित्सा

लेखक :—वैद्यविशारद हरिप्रसाद शर्मा आयुर्वेदशास्त्री बिड़ला लेबोरेटरीज़ (कलकत्ता)

आज भारतवर्ष में चारों ओर इस भयंकर व्याधि से पीड़ित मानव हा हा कार करते हुए यत्र, तत्र भटक रहे हैं। अपनी इन्द्रियों को वश में न रखनेवाले युवक दूषित वातावरण में फंसकर विषय वासनाओंके प्रवाह में प्रवाहित होते हुए अपना कर्त्तव्य त्याग अश्लील चलचित्रों को देख देख कर तथा अश्लील उपन्यासों को पढ़कर अपने अन्तःस्थलों को कलुषित बना अपने स्वास्थ्य का ह्रास कर दुःखी जीवन बिता रहे हैं। वे मन चले नवयुवक अपने हिताहित को न समझ कर अनुचित मार्गों को अपनाते हैं। जैसे अतिमैथुन, अप्राकृत मैथुन, हस्तमैथुन, अकाल मैथुन आदि २ तथा अहर्निश स्त्रियों का संसर्ग, स्पर्श व स्मरण करते रहना और मल-मूत्रों के वेग को रोकना असात्म्य पदार्थों का सेवन जैसे रुखा, तीखा, कषैला वा अत्यधिक नमकीन खट्टी और गरम वस्तुओं का उपयोग करना अधिक परिश्रम अतिसार आदि कारणों से धातुए दूषित होकर अलग २ जा मिले हुए प्रकुपित दोष शुक्रवाही शिराओं को प्राप्त हो शीघ्र वीर्य को कलुषित कर अत्यन्त कष्ट कारक "शुक्रमेह रोग उत्पन्न कर देते हैं। इस बढ़े हुए रोग की अति प्रवलता में शिश्नेन्द्रिय शिथल हो जाती है। एवं किंचित् उत्तेजित होकर फिर पतित हो जाती है। निद्रा, तन्द्रा "वा" जागृत अवस्था में मानसिक उत्ताप बढ़ते ही वीर्यपात होने लगता है। क्योंकि आजकल प्रायः देखने में आता है कि एक २० वर्ष का युवक अपनी मित्र मण्डली या अन्य कारणों पे सदाचार भ्रष्ट होकर पूर्व कथित दुराचरणों को अपना कर अपने शरीर का नाश कर लेता है। जिस से कि इसका गृहस्थ जीवन सुख शान्ति के बजाय घोर कलह के रूप में परिणत हो जाता है ऐसे कलुषित वातावरण में शुक्र में ही अपनी इस लीला को समाप्त करने की योजना बनाने लग जाता है, इस प्रकार के रोग से पीड़ित या उपरोक्त लक्षणों वाले व्यक्तिको हमारे शारीर शास्त्र वेत्ता आयुर्वेद चिकित्सकों द्वारा शुक्रमेह जन्य ध्वजभंग (नपुंसकता) नाम से इङ्गित किया जाता है। उक्त लक्षणों को महर्षियों ने अपनी सारगर्भित संहिताओं में निम्नप्रकार से प्रकट किया है।

(१) त्रिवारं वा चतुर्वारं दिवारात्रौ पतेत्क्वचित्।
एवं रुढगदोमूढध्वज शैथिल्य मेव च॥

कहीं २ दिन रात में तीन वा चार वार वीर्यपात हो जाता है, इन्द्रियों में शैथिल्यता प्राप्त हो जाती है।

(२) नशक्नुयान्मर्दयितुं कदाचिन्मदस्मर स्मेर विलासिनीनाम्। पतद्ध्वज स्तीव्र विषाद युक्तः कदा चिदिच्छेन्मरणं विरक्तः (अर्थात्) शुक्रमेह से पीड़ित मनुष्य मैथुन करने में असमर्थ हो अत्यन्त दुःखी रहता है, यहां तक कि वह उदासीन होकर आत्महत्या तक कर लेता है। क्योंकि उसका जीवन व्यर्थ सा उसे मालूम देता है, और वह रोगी मृत्यु को ही अपना श्रेष्ठ जीवन मान लेता है। इस रोग के ज्यादा बढ़ने पर नाना प्रकार के उपद्रव होने लगते हैं (जैसे)

ध्वंजभंग प्रतिश्यायस्त्रिकदेशे च वेदना।
विषण्णतागदोद्वेगः कासे यक्ष्मारतिस्तथा॥
कोष्ठावरोधः शिरसश्चघूर्णनं वन्हेर्विनाशस्त्वतिसार एव। ह्रासश्च दृष्टेर्ननु नीलिभा दृशोरजीर्णं मेते प्रभवन्त्युपद्रवाः॥

ध्वजभंग (नपुंसकता) जुकाम त्रिकदेश (कमर) में दर्द विषण्ता (सदा दुःखी रहना) गदोद्वेगं (मिथ्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काल्पनिक व्याधि) कास राज्यक्ष्मा (टी० बी०) अरति (किसी भी कार्य में मन न लगाना) मलबद्धता (कब्ज) शिर का घूमना, मन्दाग्नि, अतिसार, दृष्टि का कम होना, आँखों का नीला हो जाना) आदि नाना उपद्रव होते ही रोगी व्याकुल हो उठता है) उपरोक्त कष्टकारक उपद्रवों से व्यथित गृह कलह से युक्त अपनी सती साध्वी स्त्री से अपमानित वह ईर्ष्यालु प्रकृति का पुरुष प्रतिरोध की भावनाओं से ओत प्रोत होकर हर सम्भव उपायों का अवलम्बन लेकर लच्छेदार शब्दों में लिखे गये विज्ञापनों के चक्कर में आकर अपने नैराश्य जीवन को सफल करने का निराधार स्वप्न देखता है। वह अपनी चिकित्सा के लिये बड़े २ एलोपैथिक डाक्टरोंका दरवाजा खटखटाता है। वे भी उसकी इच्छा के अनुरूप शीघ्र ही मादक व स्तम्भक औषधियोंका प्रयोग कर डालते हैं। क्योंकि उन पाश्चात्य विद्वानों के मत में तड़क भड़क वाले इस बीसवीं सदी के वैज्ञानिक युग में भारतीय बनौषधियों का सेवन करना 'व' करवाना हेय समझा जाता है। इनकी दृष्टि में चरकोक्त 'बला' का सेवन करना नितान्त भूल है। क्योंकि वह एक भारत की बनौषधि है। जो पेट में जाकर फायदे की बजाय हानि ही करेगी। उसकी जगह यदि उसी का सारभूत (एक्सट्रेट) निकाल कर उपयोग में लाया जावे तो आशुफलप्रद, निरापद 'व' सम्पदा का प्रतीक होगा। चाहे वह आयुर्वेदिक दृष्टि कोण से हानिप्रद ही क्यों न हो। उपरोक्त मादक व स्तम्भक औषधियों के प्रयोग से कामोत्तेजना प्रबल होकर शुक्र तारल्यका भयंकर रूप हो जाता है। रोग दूर होने के बजाय और भी भयंकर होकर रोगी की मृत्यु हो जाती है। अतः इस रोग में पूर्ण सावधानी से किसी अच्छे विद्वान वैद्य से चिकित्सा करवानी चाहिये। क्योंकि भारतवासियों को इस देश की औषधियां जितनी अनुकूल व हितकर होगी उतनी अन्यान्य देश की औषधियाँ हितकर नहीं हो सकेगी।

आयुर्वेद महर्षियोंने शुक्रमेह तथा तज्जन्य ध्वजभङ्ग (नपुंसकता) की चिकित्सा अपने वनौषधियों द्वारा बहुत ही सौम्य प्रकार से की हैं। (यथा)

चिकित्सा

शुक्रमेहे प्रथमतः क्रिया संशोधिनी हिता।
रेतसो रक्षणं तत्र कार्यं चाति प्रयत्नतः॥

शुक्रमेह में प्रथम संशोधन क्रियाहित करनेवाली होती है। परन्तु उस क्रिया में वीर्य की रक्षा यत्न पूर्वक होनी चाहिये। प्रथम यह विचारना चाहिये कि रोगी यदि स्थूलकाय, बलवान वो दृढ़ है, तो उसके दोषों का निर्हरण वमन-विरेचन वस्ति कर्मों द्वारा संशोधन करवाना चाहिये। अग्नि बल का विचार कर फिर बृंहणीय द्रव्य जिन्हें संतर्पण कहा जाता है, प्रदान करना चाहिये, अन्य जो दुर्बल रोगी हो उनको संशोधन न कराकर अग्निबल देखकर सीधे संतर्पण से चिकित्सा करनी चाहिये, क्योंकि दुर्बल रोगी का संशोधन वातोत्पत्ति तथा प्राण शक्ति का ह्रास करनेवाला होता है। अतः संशोधन कर्म करते समय बल अग्नि का ध्यान आवश्यक है। मेह की चिकित्सा स्थूलकाय होने से संशोधनोपरान्त बृंहण तथा कृशकाय होने पर संतर्पण जन्य होती है।

यदि संतर्पण जन्य चिकित्सा के स्थान पर असंतर्पण जन्य चिकित्सा की गई तो गुल्म, धातुक्षय, लिङ्गशूल, वस्तिशूल आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं। अतएव यह क्रिया सावधानतया करनी चाहिये। क्योंकि शुक्रमेह की चिकित्सा पंचकर्मों द्वारा किये गये संशोधन के ऊपर सफल 'वा' असफल होगी। इसलिये संशोधन क्रिया चिकित्सा का मूल स्तम्भ है। इस रोग में धातुवर्द्धक, पौष्टिक औषधियों तथा खाद्यान्नों का उपयोग ही श्रेयस्कर है, इस रोग में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वीर्य का बढ़ना शोधन 'व' रक्षण करना परमावश्यक है। इन में एक भी क्रिया अपेक्षित नहीं अपितु तीनों का सामंजस्य होना परमावश्यक है। जिससे कि मनुष्य के भीतर आई हुई कमजोरी व शुक्र के दोष दूष्य निर्विघ्नता पूर्वक नष्ट होकर शरीर बल, वर्ण, ओज 'व' प्रदीप्त अग्नि को प्राप्त कर सके। इन क्रियाओं के पश्चात् हमारी आयुर्वेद संहिताओ द्वारा प्रकट किये गये योगों का व्यवहार करना चाहिये।

(१) प्रथम अपने चरित्र को सुधारना चाहिये।

(२) अश्लील चलचित्रों का 'वा' उपन्यासों का पढ़ना बन्द कर दें।

(३) चित्रों का अधिक अवलोकन व स्मरण न करें।

(४) जिन रोगियों को सोते हुए विस्तरों पर ही वीर्यपात होता है उनको ब्राह्ममुहूर्त (सूर्योदय के पहले ही उठना चाहिये) क्योंकि उस समय निद्रा का स्वाभाविक वेग समाप्त हो जाता हैं। और तन्द्रा का वेग रहता है। जिससे स्वप्न अधिक आते हैं। उस समय मूत्राशय तथा पक्वाशय भरे रहते हैं जिससे वीर्यपात होने की सम्भावना रहती है। देखा भी जाता है की रोगियों को इस समय वीर्यपात प्रायः होता है। अतः इस समय आलस्य को त्याग देना चाहिये। और मल मूत्रादि से निवृत्त होकर अपने नित्यकर्म में लग जाना चाहिये।

(५) शीतल चीनी का चूर्ण सम मिश्री मिलाकर सेवन करने से स्वप्नमेह दूर होता है।

(६) सेमल की जड़ का रस शुक्रमेह व स्वप्नमेहको नष्ट करता है।

(७) आंवला के रस में मधु मिलाकर सेवन करने से स्वप्न में शुक्र क्षरण नहीं होता।

(७) शतावरी, गोखरू, कौंचवीज गंगेरन की छाल और तालमखाना, सबको सम भाग लेकर कूट कर महीन चूर्णकर सम मिश्री मिलाकर लें। मात्रा—३ माशे से ६ माशा तक गौदुग्ध के साथ सेवन करें प्रातः सायं दोनों समय यह चूर्ण शुक्र के सभी दोषों को दूर करके वीर्य को बढ़ाता है। तथा रतिशक्ति वर्द्धक है।

(८) सफेद मूसली, गिलोयसत्व, कौंचका वीज, गोखरू, सेमल की जड़ की छाल, और आंवला, सम भाग लेकर महीन चूर्ण कर लें। फिर चूर्ण के बराबर मिश्री मिला लेवें। मात्रा ६ माशा दिन में दो वार दुग्ध के साथ देवें। यह चूर्ण सब प्रकारकी धातुक्षीणता स्वप्नदोष को दूर करता है तथा थोड़े ही दिनों के सेवन से शरीर में बहुत बल आ जाता है।

(९) बबूल की विना बीज वाली कच्ची फली। बबूल की कोपल। बबूलका गूंद। तीनों को समान भाग लेकर वारीक चूर्ण करें मात्रा—६ माशा मिश्री मिलाकर गौदुग्ध से खावें। यह चूर्ण वीर्य का पतलापन, स्वप्नदोष शुक्रमेह आदि धातु दोषों को दूर कर वीर्य को शुद्ध बनाता है। और बल वर्ण को बढ़ाता है।

(१०) कौंचका बीज ऽ। गोदुग्ध में औंटा लेवे कुछ दुग्ध के जल जानेपर उतार ठंडा कर फिर बीजों का छिलका उतार कर सुखा लेवे फिर कूट छान महीन चूर्ण कर लेवे फिर उसको दूध से सान लेवे फिर १ तोला वजन में १ रुपया के बराबर छोटी टिकिया बना कढ़ाई में घृत डाल अग्नि पर चढ़ा कर मन्द मन्द ताव से उन टिकियों को सेंक. लें। और शर्बत जैसी चीनी की चासनी में गिरा देवे तब निकालकर एक कांच के शुद्ध पात्र में रखकर मधु से उस पात्र को भर दें। प्रातः सायं १—१ टिकिया खाकर दुग्ध पीवे इससे समस्त वीर्यदोष धातुक्षीणता शुक्रमेह तथा ध्वजभंग नपुंसकता नष्ट होती है।

(११) नयी उड़द ऽ३। सेर नया कौंच वीज ऽ३। सेर जीवक, ऋषभक, मेदा, शालपर्णी ऋद्धि शतावरी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुलहठी, और असगंध, प्रत्येक १६—१६ तोला लेकर आठगुना जल डालकर चौथाई शेष रहे तब तक क्वाथ सिद्ध कर ले और उतार ठंडा कर छान लेवे। पुनः उसमें ऽ१ सेर गो घृत तथा ऽ१ सेर गौ का दुग्ध डाले और ऽ१ सेर विदारी स्वरस ऽ१ सेर ईख का रस डाल कर मन्द मन्द अग्नि पर घृत सिद्ध कर ले फिर सिद्ध घृत को एक कांच के पात्र में रख लें और उसमें मिश्री, वंशलोचन, शहद प्रत्येक १६—१६ तोला तथा पीपल ४ तोला पीस चूर्ण कर मिला दें। और प्रातः काल १ तोला खावें। इससे सभी प्रकार के प्रमेह, धातुक्षय ध्वजभंग नपुंसकता नष्ट होती है। तथा बल वर्ण ओज की वृद्धि होती है। यह परम वाजीकरण योग है।

उपरोक्त प्रकरण में मैंने निरापद, आशुफलप्रद योगों का ही उल्लेख किया है, जो कि मैंने मेरे आतुरालय में भिन्न भिन्न रोगियों पर प्रयुक्त किये हैं। इसके अलावा ऋतु, देश, काल, व रोगी की अवस्थानुसार अन्य शास्त्रीय रस, रसायनों व भस्म प्रधान योगों का भी नियोजन किया जा सकता है। और उनसे व्याधि भी उन्मूलन होती है। परन्तु रस, रसायन भस्म, किसी अच्छे विद्वान वैद्य द्वारा निर्मित हो या कोई अच्छी विश्वासी प्रतिष्ठित रसायनशाला जिनका उद्देश्य उचित मूल्य में जन साधारण की सेवा करना तथा शुद्ध रसायन निर्माण करना हो उनसे मँगवा कर लाभ उठावें। शुक्रमेह में। कफजनक, और अति तीक्ष्ण अन्न पान, अग्नि और सूर्य की गरमी, स्त्री प्रसंग, मल मूत्रादि वेगों का अवरोध, रात्रि में जागना क्रोध, शोक, दिन में सोना, उपवास अधिक चिन्ता दुश्चरित्र पुरुषों का संसर्ग परित्याज्य हैं। शुक्रमेह में अच्छी तरह पचनेवाला, शुक्र वर्द्धक अन्न-पान करना, सत्पुरुषोंका संसर्ग, भगवान की कथाओं को पढ़ना ईश्वरोपासना में समय यापन हितकर है।

सूर्य्य चिकित्सा की महत्ता

ले० वेदप्रकाश शास्त्री, प्रभाकर, साहित्य आयुर्वेदरत्न B.A. सत्यौषधालय, बेगमबाजार, हैदराबाद

विश्व की समस्त चिकित्सा पद्धतियाँ एवं साहित्य का आदि स्त्रोत वेद ही है। आयुर्वेद को तो वेद का उपाङ्ग माना ही गया और अथर्ववेद में आयुर्वेद का पर्याप्त वर्णन मिलता है साथ ही आयुर्वेदान्तर्गत विभिन्न चिकित्सा पद्धतियाँ जो आज भिन्न रूप में दिखाई पड़ती है उनका भी पर्याप्त वर्णन वेदों में पाया जाता है। उक्त चिकित्सा पद्धतियों के समान ही "सूर्य चिकित्सा का भी बहुत सुन्दर और महत्वपूर्ण वर्णन वेदों में प्राप्त होता है। यजुर्वेद में "सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च" यजु० ७।४२, आदि मन्त्र में सूर्य को विश्व की आत्मा बताया गया है क्योंकि विश्व का सम्पूर्ण भौतिक विकास सूर्य की सत्ता पर निर्भर है। सूर्य की शक्ति के बिना न पौधे उग सकते, न अण्डे बढ़ सकते, वायु का शोधन और जल की भी उपलब्धि भी नहीं हो सकती। निदान और हमारा जन्म तक भी सूर्य की शक्ति के बिना असम्भव है। प्रकृति का केन्द्र सूर्य है। विश्व की सम्पूर्ण सत्ता सूर्य पर अवलम्बित है। शारीरिक रसों का परिपाक, शक्ति का विकास, अंगों को पोषण, मल निस्सरण आदि कार्य उसी शक्ति पर निर्भर है। स्वस्थ जीवन के लिए सूर्य की अत्यावश्यकता है। कृमि नाशक शक्ति जितनी सूर्य में है उतनी विश्व की किसी अन्य वस्तुए में नहीं यही कारण है कि गांव के किसान बिना पौष्टिक भोजन के भी उन नागरकों से कहीं अधिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वस्थ रहते हैं जो पौष्टिक भोजन पाकर भी नहीं हो सकते। इसका कारण उन्मुक्त आतप का सेवन ही है और कुछ नहीं। डा० सोले का कथन है कि 'सूर्य में जितनी रोगनाशक शक्ति मौजूद है उतनी संसार की किसी वस्तु में नहीं है। कैन्सर नासूर आदि दुस्साध्य रोग जो विजली और रेडियम के प्रयोग से भी अच्छे नहीं किए जा सकते थे वे सूर्य किरणों का ठीक प्रकार से प्रयोग करनेसे अच्छे हो गए। आजकल टी० बी० का बोलबाला है। टी० वी० फेफड़े सड़ने की निशानी है। और फेफड़े सड़ने का कारण गन्दी हवाका सेवन और आतप का सेवन न करना ही है। डा० हतनिच के कथनानुसार उन्होंने कई टी० बी० के रोगियों को केवल सूर्य की किरणों द्वारा स्वस्थ किया। अमेरिका के प्रसिद्ध चिकित्सक कीबो ने कई कृशाङ्ग और ऐसे बालकों को सूर्य किरणों से स्वस्थ किया जिनकी हड्डियां टेढ़ी पड़ गई थी सूर्य सेवन के अभाव में। प्रसिद्ध दार्शनिक न्योची का मत है, जब तक दुनियां में सूर्य विद्यमान है तबतक लोगों का औषधियों की खोज में भटकना व्यर्थ ही है। सौन्दर्य और स्वास्थ्य का केन्द्र सूर्य है। और लोगों को उसी पर आश्रित रहना चाहिए। भारतीय लोग सूर्य के इस अद्भुत चमत्कार पूर्ण रहस्य से अपरिचित नहीं है। योगियों की आतप में तपःसाधना गुरुद्वारा छात्र को धूप में खड़े होने का दण्ड भारतियों के इस रहस्य से परिचित होनें के परिचायक हैं। भारतीयों द्वारा आज भी सूर्य चिकित्सा से कुष्ठ नाश पर विश्वास किया जाता है। सूर्य रश्मियों से विभिन्न रोग के कीट स्वयं नष्ट हो जाते हैं।

उद्यन्नादित्यः क्रिमीन् हन्तु निम्रोचन हन्तु रश्मिभिः। ये अन्तः क्रिमयो गवि" अ० २।३२।१

अर्थात् उदय होता हुआ सूर्य क्रिमियों का नाश करें तथा अस्त होता सूर्य किरणों से पृथ्वी के समस्त क्रिमियों का नाश करे। अर्थात् प्रातः और सायं सूर्य सेवन से रोग जीवाणुओं का नाश होकर दीर्घायु और स्वास्थ्य प्राप्त होता है। ये क्रिमियां कितनी प्रकार की और कैसी होती हैं और इन्हें कैसे नष्ट करना चाहिए इस विषय में कहा है—

विश्वरूपं चतुरक्षं क्रिमिं सारंगमर्जुनम्।
शृणाभ्यस्य पृष्टीरपि वृश्चामियच्छिरः॥ अ० २।३२।२

अर्थात् नाना रंग रूपवाले, चार नेत्रवाले, सारंग वर्णवाले श्वेत क्रिमियों को मैं मारता हूं तथा इसकी पसलियों तथा सिर को तोड़ता हूँ। इस मन्त्र में वर्णित क्रिमियों का नाश कर व्यक्ति को आरोग्य प्राप्त करना चाहिए। साथ ही सूर्य का सेवन कर हर अंग से क्रिमियों को निकाल फेंकना चाहिए जैसा कि कहा है—

अंगे अंगे लोम्नि लोम्नि यस्ते पर्वणि पर्वणि,
यक्ष्मं त्वचस्यं ते वयं कश्यपस्य विबर्हेण,
विष्वंचं वि वृहामसि॥ अ० २।३३।७

अर्थात् हर सम्भव प्रयत्न द्वारा, प्रत्येक अंग, अवयव, और इन्द्रिय की निर्दोषता सिद्ध करनी चाहिए और आरोग्य प्राप्त करना चाहिए। वेद में सूर्य चिकित्सा का पर्याप्त वर्णन मिलता है। और वेद मन्त्रों से सूर्य चिकित्सा की उपादेयता पर पर्याप्त प्रकाश डालता है। सूर्य चिकित्सा की उपादेयता पर प्रकाश डालते हुए कहा गया है—

अपचितः प्रपतत सुपर्णो वसतेरिव।
सूर्य्यः कृणोतु भेषजं चन्द्रमा वापोच्छतु॥
अथर्व ६।८३।८

अर्थात् जिस प्रकार गरुड़ वस्ती से दौड़ जाता है उसी प्रकार अपचन आदि व्याधियां दूर चली जाएँगी इसके लिए सूर्य्य औषध बनावे चन्द्रमा अपने प्रकाश से उसका नाश करे। इस मन्त्र में सूर्य औषध बनाता है। स्पष्ट कहा गया है। सूर्य इस विश्वमें प्राणरूप है और अपनी किरणों द्वारा सकल विश्वका स्वास्थ्य उत्तम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रखता है। परन्तु बहुत से मनुष्य ऐसे हैं, कि वे स्वयं अन्धेरे स्थान में रहकर सूर्यकी प्राण शक्ति से वंचित रहते हैं और अपने शरीर को रोगावास बना "शरीरम् व्याधिमंदिरम्" वाली उक्ति उस पर चरितार्थ करते हैं। रोगों का कारणः—सूर्य चिकित्सा विज्ञान रोगों का कारण रंगों की कमी मानता है। रंग एक वैज्ञानिक मिश्रण है और हमारा शरीर भी रासायनिक तत्वों से बना हुआ है। शरीर के जिस अंग में जिस प्रकार के तत्व अधिक होते हैं वही रंग भी हो जाता है। उक्त मतानुसार चमड़े का रंग गेहुंआ, बालों का काला, आँखों का सफेद, जीभ का गुलाबी नसों का नीला फेफड़ों का पीला आदि रंग होते हैं। शरीर स्थित पदार्थों की न्यूनता या अधिकता की परीक्षा अंग के रंग से की जा सकती है। पीला चेहरा देख कर, रक्ताल्पता दुर्बलता पीले नेत्र पाण्डु नीले-हरे नेत्र कामला आदि रोगों का अपने रंग द्वारा ही परिचय दे देते हैं।

निश्चय ही शरीर में रंग एक विशिष्ट तत्व है और इसका ठीक रहना आवश्यक है रंगों की घटवढ़ रोग का परिचायक है। रोग की दिशा में सूर्य्य की सहायता से तद् रंगों को मानव शरीर में पहुंचाया जाता है। सूर्य्य की किरणों में यह विशेषता है कि उनमें स्वयं रंग होते हैं और इन्हीं रंगों की रूग्ण शरीर को आवश्यकता होती है। इस प्रकार सूर्य रश्मियों द्वारा रोग निवारण समस्त शरीर वैज्ञानिकों द्वारा मान्य है। सूर्य चिकित्सा शास्त्र जिन रंगों की रुग्ण शरीर में कमी देखता है, उन्हें पहुंचाता है। इन रंगों को वह सूर्य किरणों से प्राप्त करता है रंगीन कांच द्वारा आवश्यक रंग प्राप्त कर औषधि रूपमें प्रयुक्त कर स्वस्थता प्रदान कराई जाती है।

अथर्ववेद में भी सूर्य द्वारा वर्ण चिकित्सा का महत्वपूर्ण वर्णन उपलब्ध होता है। सूर्य चिकित्सा के मतानुसार नीले रंग की कमी से आंखों में जलन, मूत्र में पीतता, शरीर में उष्णता आदि लक्षण प्रकट होते हैं। पीले रंग की कमी से खुश्की मन्दाग्नि अन्य कई रोग उत्पन्न होते हैं। लाल रंग की कमी से निद्राधिक्य कब्ज आदि का उत्पन्न होना माना जाता है। अथर्ववेद में उक्त वर्ण विकृति की सुन्दर ढंगसे सूर्य की सहायता से चिकित्सा की व्यवस्था की गई है।

अनुसूर्यं मुदयतां हृद्द्योतो हरिमाचते।
गो रोहितस्य वर्णेन तेनत्वा परिदध्मसि॥

अथर्व १।२१

(तेहरिमा) तेरा पीलापन पाण्डु रोग तथा (हृद्द्योतः) हृदय की जलन हृदय रोग (सूर्य अनु) सूर्य की अनुकूलता से (उतअयतां) उड़जाय। (गौः) गौ के तथा प्रकाश के (तेन) उस (रोहितस्य) लाल (वर्णेन) रंग से (त्वा) तुझको (परि) सब ओर (दध्मसि) धारण करता हूं अर्थात् पाण्डु रोग जिसमें शरीर निस्तेज हो जाता है और हृदय रोग जिसमें हृदय में जलन होती है उसकी चिकित्सा यह है कि सूर्योदय के समय जब कि सूर्य का प्रकाश रक्तिम होता हैं उसमें खुले शरीर बैठे। तथा लाल रंगकी गौ का दुग्ध सेवन करे।

सूर्य के सेवन से इतना ही नहीं होता अपितु रंगों की पूर्ति होने के साथ ही साथ दीर्घायु की प्राप्ति भी होती हैं।

परित्वा रोहितैर्वर्णैं दीर्घायुत्वाथ दध्मसि।
यथायमरया असदथो अहरितो भुवत्॥ अ० १।२२

(दीर्घायुत्वाय) दीर्घायु की प्राप्ति के लिए (त्वा) तुझको (रोहितैः वर्णैः) लाल रंगो से (परि) चारों ओर (दध्मसि) धारण करता हूं। जिससे यह (अ-रयाः) नीरोग (असत्) हो जाए, (अथो) और (अ-हरितः) पीलेपन से रहित (मुक्त) हो जाय। अर्थात् लाल वर्णों के प्रयोग से पीला रोग पाण्डुरोग और फीकापन चला जाता है और निरोगता प्राप्त होकर दीर्घायु की प्राप्ति होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूर्य की लाल किरणों के समान ही लाल रंग की गौओं के दुग्धादिक का सेवन दीर्घायु को देता है इस रोग की महत्ता भी प्रतिपादित होती है। विधाता ने गाय को ही कई रंगों की बताया है भैंस को नहीं। एक प्रकार से ये गौएं रंगीन कांच की शीशियां है जिनसे सूर्य चिकित्सा की पद्धत्यनुसार मानव स्वास्थ्य लाभ करता है।

या रोहिणीर्देवत्या ३ गावो या उत रोहिणीः।

रूपं रूपं वयोवय स्ताभिष्ट्वा परिदध्मसि ॥अ०१।२२

(यादेवत्याः) जो चमकीली (रोहिणी) रक्तिम सूर्य रश्मियां हैं (उत) और जो (याः रोहिणी गावः लाल गौवें हैं उनसे रूप और (वयः) आयु प्राप्त होती है। (ताभिः) उनके साथ (त्वा) तुमको (परिदध्मसि) चारों ओर धारण करते हैं। अर्थात् उदित सूर्य की रक्तिम रश्मियों तथा लाल रंग की गौओं के प्रयोग से उनके दुग्धादि के सेवन से, रोगियों के रूप तथा बल के अनुसार करने से रोग निवृत्ति होकर आरोग्य और दीर्घायु की प्राप्ति होती है।

उपर्युक्त विवेचना द्वारा स्पष्टतया सूर्य चिकित्सा की उपादेयता सिद्ध हो जाती है। सूर्य स्वस्थता और जीवनी शक्ति का भण्डार है। उसकी किरणों द्वारा पृथ्वी पर अमृत बरसता है। जो प्राणी सूर्य के जितने निकट सम्पर्क में रहते हैं वे उतने ही स्वस्थ एवं सजीव पाए जाते हैं। डा० यूरेन सूर्य की दिव्य शक्तियों का वैज्ञानिक ढंग से चिकित्सा में प्रयोग करके अद्भुत सफलता पाई है। उन्होंने लिखा है कि "जिस बालक को धूप से बचाकर रखा जाता है वह सुन्दर और बुद्धिमान बनने के बजाय कुरूप और मूर्ख बनता है। स्विटजर लेण्ड में जहां सूर्य की सीधी किरणें नहीं पहुंचती लोग कई रोगों से पीड़ित रहते हैं। ओस्टोमलेशिया नामक रोग सूर्य की सम्पर्कतासे दूर रहनेसे ही होता है।

भारतीय सभ्यता में शरीर को खुला रखने की प्रथा थी। इसका कारण यह था कि सूर्य किरणों के प्रकाश द्वारा जो अमृत वर्षा होती है उससे शरीर वंचित न रहे। इससे स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत लाभ होता है। रोगके कीटाणु नष्ट हो जाते हैं और टी०बी०आदि भयानक रोग भी साधारणतः नहीं हो पाते। स्वस्थता कायम रखने और बीमारियों से बचने के लिये यह आवश्यक हैं कि हम धूप और प्रकाश से बचकर न भागें सूर्य सेवन के लिये प्रातःकाल २॥ घण्टे और शर्दियों में दोपहर तक का समय ठीक होता है। मध्यान्होत्तर की धूप तो व्यर्थ ही होती है। सूर्य सेवन गुन गुनी धूप में चटाई पर लेट कर हल्के वस्त्रों से गुप्ताङ्गों को ढक कर करना चाहिये। हवाके झोकों से बचना आवश्यक है। आंखों को भी सूर्य के तीव्र प्रकाश से आवश्यकतानुसार बचावे। सूर्य जीवनीय शक्ति का भण्डार है। सूर्य की सीधी किरणों के सम्पर्क से पके हुए पदार्थों में जीवनीय पोषक तत्वों की मात्रा बहुत अधिक रहती है। छिलके में इस तत्व की मात्रा और अधिक रहती है इसीलिए छिलके समेत शाक भाजी, चोकर समेत अन्न के प्रयोग की राय दी जाती है। इसी प्रकार मानव मात्र को निर्विवाद रुपसे कहा जाता है कि धूप से मत डरो। जब अवसर पावें निर्भय होकर धूपमें चले जावें। जब सूर्य की किरणें शरीर पर पड़े तो भावना करें सूर्य रश्मियां मेरे शरीर में प्रविष्ट होकर विकारों का शोधन कर रही है।

जो मनुष्य उचित ढंग से सूर्य का सेवन करता है। उसे अपने शरीर में एक नई शक्ति सञ्चारित होती दिखाई देती है और उसका बढता हुआ बल और सोन्दर्य "सूर्य चिकित्सा की उपादेयता" की अमिट छाप उसके हृदय पटल पर अंकित कर देता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कामविज्ञान और आयुर्वेद

ले० सोमदेव शर्मा सारस्वत साहित्यायुर्वेदाचार्य ए०एम०एस०डी०एस०सी० (आ०) लखनऊ

धर्म, अर्थ काम और मोक्ष रूप 'चतुर्वर्ग' अथवा 'पुरुषार्थ चतुष्टय को प्राप्त करना ही इस मानव जीवन का मुख्य उद्देश्य है। इनमें से प्रथम तीन धर्म, अर्थ, और काम पुरुषार्थ के समुदाय को त्रिवर्ग नाम से भी पुकारा जाता है और इनके द्वारा इस लोक एवं परलोक में सुख[1] प्राप्त होना माना गया है। इस त्रिवर्ग में से तीसरा 'काम' नाम का जो पुरुषार्थ है उसका वर्णन करने वाला शास्त्र 'कामशास्त्र' कहलाता है और इसमें वर्णित विशेष ज्ञान को 'काम विज्ञान' नाम से पुकारा जाता है। इसका विवेचन आचार्य नन्दी, श्वेतकेतु, वाभ्रव्य और वात्स्यायन के कामसूत्रों में विस्तार पूर्वक किया गया है।

काम विज्ञान साहित्य का परिचय—

ऐसा उल्लेख मिलता है कि प्रजापति[2] ने प्रजा की सृष्टि करने के उपरान्त उसकी रक्षा के लिये त्रिवर्ग (धर्म, अर्थ काम) का ज्ञान प्राप्त करानेवाला एक शास्त्र बनाया था जिसमें एक लाख अध्याय थे। उसमें से काम विज्ञान सम्बन्धी प्रकरण को एक प्रकार के महादेव के अनुचर नन्दी[3] ने कामसूत्र नाम का एक शास्त्र बनाया था। कामविज्ञान का स्वतन्त्रतया पूर्ण रूप से विवेचन करने वाला सर्वप्रथम यह ही शास्त्र था। इसमें एक हजार अध्याय थे। इस विशालकाय ग्रन्थ में कामविज्ञान सम्बन्धी प्रत्येक बात का बहुत विस्तार के साथ विवेचन किया गया था। ऐसे बड़े ग्रन्थ का पठन-पाठन कठिनता से होता था यह सोच[1] कर उद्दालक मुनि के पुत्र 'श्वेतकेतु' ने इस नन्दी के सुविस्तृत कामसूत्र को संक्षिप्त कर ५०० अध्याय का दूसरा काम सूत्र बनाया। इस श्वेतकेतु ने ही सर्वप्रथम विवाह की प्रथा मानव समाज में चलाई थी ऐसा महाभारत के पढ़ने से ज्ञात होता है। मुनिवर श्वेतकेतु का बनाया हुआ यह दूसरा कामसूत्र भी एक बड़ा ग्रन्थ था इस कारण वह भी सुविधापूर्वक नहीं पढ़ा जा सकता था, इसलिये पाञ्चालदेश वासी आचार्य बाभ्रव्य[2] ने उसको भी संक्षिप्त कर १५० अध्याय का का तीसरा कामसूत्र बनाया, इसमें निम्निलिखित सात अधिकरण (भाग) थे—

१—साधारण अधिकरण
२—साम्प्रयोगिक अधिकरण
३—अन्यासम्प्रयुक्त अधिकरण

१—एवमर्थं च कामं च धर्मं चोपाचरन्दरः।
इहामुत्र च निःशल्यमत्यनां सुखमश्नुते ॥
(काम सूत्र साधारण अधिकरण २।४६)

२—प्रजापति हिं प्रजाः सृष्ट्वा तासां स्थिति निबन्ध सं त्रिवर्गस्य साधनमध्यायानं शतसहस्रेणाग्रे प्रोवाच

३—महादेवानुचरश्च नन्दी सहस्रेणाध्यायानां पृथक् कामं सूत्रं प्रोवाच।
(काम सूत्र, साधारण अ० १।२।५।८)

१—तदेवतु पञ्चभि रध्यायशतैरौद्दालकिः श्वेतकेतुः संचिक्षेप। (कामसूत्र)

२—मद्यपानान्निवृत्तिश्च ब्राह्मणानां गुरोः सुतात्।
परस्त्रीभ्यश्च लोकाना मुनेरौद्दालकेरपि ॥
ततः पितुरनु ज्ञानादगम्यागम्य व्यवस्थया।
श्वेतकेतुस्तपोनिष्ठः सुखं शास्त्रं निबद्धवान् ॥

* तदेव तु पुनरध्यर्धेनाध्यायशतेन···सप्तमिरधिकरणैबभ्रिभ्यः पाञ्चालः संचिक्षेप।
(कामसूत्र साधारण अधि० १।१।१०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४—आर्याधिकारिक अधिकरण
५—परदायिक अधिकरण
६—वैशिक अधिकरण
७—औपनिषदिक अधिकरण

कुछ समम पश्चात् इन सात अधिकरणों को बाभ्रव्य कामसूत्र से अलग कर उन पर विशेष मनन करके आचार्य चारायण सुवर्णनाभ, घोटकमुख, गोनर्दीय, गोणिकापुत्र, दत्तक और कुचमार इन सात आचार्यों ने कामसूत्र के अपने अपने पृथक् पृथक् ग्रन्थ बनाये। इस प्रकार इन अधिकरणों का अलग अलग स्वतन्त्र रूप से प्रचार हो जाने के कारण, कामसूत्र के एक एक अधिकरण का ही ज्ञान इन आचार्यों के सम्प्रदाय के अनुसार विद्वान पुरुषों को होने लगा।

और कुछ समय पश्चात् पूर्ण कामसूत्र का मिलना *दुर्लभ हो गया। कामसूत्र की यह दुरवस्था देखकर आचार्य वात्स्यायन (मल्लनाग) ने कामसूत्र के उपर्युक्त सात विस्तृत अधिकरणों को संक्षिप्त कर उनके आधार पर ही एक कामसूत्र ग्रन्थ का निर्माण किया। जिसमें ७ अधिकरण, ३६ अध्याय, ६४ प्रकरण और १२५० सूत्र हैं यह कामसूत्र कामविज्ञान का एक सर्वोत्तम प्रामाणिक ग्रन्थ माना जाता है।

वात्स्यायन के इस कामसूत्र के आधार पर ही बहुत समय के पश्चात् वीरभद्र ने कन्दर्प-चूड़ामणि' कल्याणमल्ल ने अनंगरंग, ज्योतीश्वराचार्य ने पंचसायक श्री कोक्कोक ने रतिरहस्य, जयदेव ने 'रतिमञ्जरी देवराज ने रतिरत्न प्रदीपिका, दामोदर ने 'कुट्टिनीमतम्" और अन्य आचार्यों ने 'रति रहस्य' काम कुञ्जलता आदि कामविज्ञान सम्बन्धी अनेक ग्रन्थों की रचना की है जिनमें कामसूत्र के सात अधिकरणों का यथामति विवेचन किया गया है।

* एवं बहुभिराचार्यै स्तच्छास्त्रं खण्डशः प्रणीतमुत्सन्न कल्पमभूतः (कामसूत्र साधारण १।१।१)

कामविज्ञान और आयुर्वेद की घनिष्ठता

कामविज्ञान के प्रामाणिक ग्रन्थ वात्स्यायन के कामसूत्र का सातवां अधिकरण 'औपनिषदिक अधिकरण' कहलाता है जो कि कुचुमार मुनि के कुचुमारतन्त्र के आधार पर आयुर्वेदीय संहिताओं की सहायता से बनाया गया है। इस औपनिषदिक अधिकरण में दो अध्याय और ६ प्रकरण और द्वितीय अध्याय के दूसरे 'वृद्धिविधि' प्रकरण में 'बाजीकरण' का वर्णन किया गया है। जो कि अष्टांग आयुर्वेद का एक अङ्ग है। इस प्रकार से आयुर्वेद के बाजीकरण अंग का कामसूत्र में वर्णन होने से उसके द्वारा प्रतिपादित काम विज्ञान का आयुर्वेद से घनिष्ठ सम्बन्ध स्वयमेव हो जाता है। और इसके बाजीकरण अंश का विशिष्ट ज्ञान प्राप्त करने के लिये आयुर्वेद से सहायता लेना अनिवार्य हो जाता है। वात्स्यायन† मुनि ने भी इसका स्पष्ट निर्देश अपने काम सूत्र में किया हैं।

कामशास्त्र और आयुर्वेद में बाजीकरण।

काम शास्त्र के प्रसिद्ध ग्रन्थ कामसूत्र में 'बाजीकरण' का प्रकरण संक्षिप्त रुप में ही है। उसमें खाने के लिये बाजीकरण के केवल १७ प्रयोग ही लिखे हैं जिनमें कि कुल २७ औषधियों का प्रयोग हुआ है जैसे—

१ उच्चटा (उटंगन) २ चव्य, ३ मुलहठी, ४ शर्करा (मिश्री) ५ दूध, ६ मेढा के अण्डकोष ७-बकरे के अण्डकोष ८ विदारीकन्द, ९ क्षीरिका (खिरनी), १० कौंच के बीज ११ मोरटा (मूर्वा) १२ चिरौंजी १३—सिंघाड़े १४—कसेरु, १५—क्षीरकाकोली, १६—घृत, १७-उड़द, १८—गेहूं, १९—चटक (गौरय्या) के अण्डे, २०—

†आयुर्वेदाच्चवेदाच्च विद्यात्तन्त्रेभ्य एव च।
आप्तेभ्यश्चावबोद्धव्या योगा ये प्रीति कारकाः॥
(कामसूत्र औपनिषदिक अधि १।४

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाल चावल, २१—तिल, २२—शतावरी २३—गोखरु २४- छोटी पीपल, २५—गम्भारी, २६—जौ, २७-मधु इनमें से भी दूध, मिश्री, शहद और घृत अन्य बाजीकरण पदार्थों के सहायक हैं क्योंकि यह उनके सहायक रुपमें प्रयुक्त होते हैं।

परन्तु आयुर्वेद शास्त्रों में बाजीकरण का बहुत विस्तार के साथ वर्णन किया गया है। जैसे चरक संहिता में बाजीकरण के ५० प्रयोग सुश्रुत संहिता में २६ प्रयोग अष्टांग संग्रह में ७० प्रयोग अष्टांग हृदय में १५ प्रयोग और चिकित्सा कलिका में १० आभ्यन्तरिक प्रयोग लिखे मिलते हैं। इनके अतिरिक्त पीछे के संग्रह ग्रन्थों और इस ग्रन्थों में वर्णित अनेक प्रभाव शाली बाजीकरण के प्रयोग भी विद्यमान हैं।

इन प्रयोगों में ७२ औषधियों के लगभग औषधियां प्रयुक्त हुई हैं। इसके अतिरिक्त इन औषधियों का ‡शुक्रजनन (+शुक्रल) शुक्रविवर्धन शुक्रश्रुतिकर शुक्रस्रुतिवृद्धिकर शुक्रशोधन ×शुक्रस्तम्भन भेद बतलाकर बर्गीकरण शब्द की निरुक्ति और परिभाषा बता कर बाजीकरण की पूर्णतया सैद्धान्तिक विवेचना भी की गयी है।

उपसंहार—इस प्रकार कामशास्त्र की अपेक्षा आयुर्वेद शास्त्र में बाजीकरण का बहुत विस्तार से वर्णन होने के कारण कामविज्ञान के इस बाजीकरण प्रकरण को समझने के लिये आयुर्वेद शास्त्रकी सहायता की अत्यन्त आवश्यकता है इसलिये हम आयुर्वेद को काम विज्ञान का पूरक एवं सहायक कह सकते हैं।

---

‡जीवकर्षभक काकोलीक्षीरकाकोली युद्रपर्णि माषपर्णी :मेदा बृक्षरुहा जटिलाकुलिङ्ग इतिदशेमानि शुक्र जनानि भवन्ति। (चरक सूत्र स्थान अ० ४।१६)

+यस्माच्छुक्रस्यबृद्धिः स्याच्छुक्रलं च तदुच्यते
यथाश्वगन्धा मुसली शर्करा च शतावरी ॥
शार्ङ्गन्धर संहिता प्रथमखण्ड

÷कुष्ठैलवालुक कट्फल समुद्रफेन कदम्बनिर्यासेक्षूकाण्डेक्षुरक वसुकोशीराणि दशेमानि शुक्र शोधनानि भवन्ति। चरक सूत्र अ० ४।२०

× जातीफलं स्तम्भकम शार्ङ्गधर प्रथम खण्ड अध्याय ४।१७।

आयुर्वेद में नवीन पुस्तक—चरक संहिता का

सांस्कृतिक-ऐतिहासिक-भोगौलिक अनुशीलन

लेखक—अत्रिदेव विद्यालंकार

इस पुस्तक में चरक और उनकी संहिता, चरककालीन भूगोल, चरककालीन शिक्षा व्यवस्था, चरक संहिता के दार्शनिक विचार, चरक संहिता की भाषा, चरक संहिता के समय की सामाजिक स्थिति, उस समय का हमारा रहन-सहन, वेश-भूषा, स्त्रियों की स्थिति, आदि सब विषयों पर विस्तृत रूपसे विचार किया है। भौगोलिक चित्रों से पुस्तक का महत्व बहुत बढ़ गया है। आज तक इस दृष्टि से चरक संहिता पर इस प्रकार का विचार प्रथम बार किया है। पुस्तक के प्रारम्भमें डाक्टर राजवलीजी पाण्डेय डि-लिट् प्रिन्सिपल भारतीय संस्कृति महाविद्यालय—काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की महत्वपूर्ण भूमिका पढ़ने योग्य है—बहुत सी नई जानकारी इस सम्बन्ध में आपको मिलेगीं। लिखिये—

नरेन्द्र शशि, न्यु कोलौनी—लेडीज होस्टलके पास P.O. बनारस यूनिवर्सिटी—बनारस ५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेदिक कौलेजों में पदार्थ विज्ञान

लेखक—देवगुप्त

कुछ ही दिनों की बात है कि मेरे ऐक मित्र ने मुझ से पूछा कि अमुक प्रकाशक ने जब आप से पदार्थ विज्ञान पर पुस्तक लिखने को कहा था, आपने इसे इन्कार क्यों कर दिया। आपने तो मीमांसा को छोड़कर पाँचों दर्शन गुरु मुख से गुरूकुल में पढ़े हैं उधर अब श्री उदयनाचार्य की न्यायकुसुमाञ्जलि का हिन्दी अनुवाद कर रहे हैं, तब इस विषय पर आप लिख तो सकते थे।

बात उनकी ठीक थी, मैंने उनसे यही कहा कि मेरी मान्यता यही है कि वर्तमान कोर्स पदार्थ विज्ञान का विद्यार्थियों के लिये व्यर्थ ही नहीं बोझ है। मेरी दृष्टि में पदार्थ विज्ञान यदि पढ़ाना ही है उसके लिये आग्रह है तो वे वह श्री रणजीत राय देशाई की पुस्तक से आयुर्वेदीय पदार्थ विज्ञान से पढ़ाना चाहिये। आज से ६ साल पूर्व जब इसके फार्म श्री यादवजी महराज जी ने देखने को दिए थे। मुझे बहुत पसन्द पड़े थे, मैंने उनसे कहा था कि यह पदार्थ विज्ञान विद्यार्थियों के लिये उपयोगी है।

आयुर्वेद का दर्शन (जिसे अशुद्ध नाम पदार्थ विज्ञान दिया है। देखिये स्वामी हरिशरणानन्दजी की पत्रिका) अपना है, वह किसी भी एक आर्ष दर्शन के साथ बंधा नहीं है। आयुर्वेद में चरक में चार्वाक दर्शन, बौद्ध दर्शन आदि नास्तिक दर्शनों का भी उल्लेख है। जिस किसी को इसमें देखना हो वह अत्रिदेव विद्यालंकार की लिखी "चरक संहिता का सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, भूगौलिक अनुशीलन पुस्तक में चरक संहिता के दार्शनिक विचार देख लें। और देखें अष्टाङ्ग हृदय अष्टाङ्ग संग्रह आदि ग्रन्थोंको। जिनमें कि सामान्यदर्शन से ही काम ही नहीं चलाया अपितु बौद्धों के विचार, उनकी मान्यता उनके सिद्धान्त स्थान स्थान पर टांके हुए हैं। इनमें भी सम्पूर्ण चिकित्सा का समावेश है और इनकी भी प्रतिज्ञा है कि इति हस्माह आत्रेयादयो महर्षयः।"

आयुर्वेद के लिये दर्शन ज्ञान अवश्य ही नहीं अनिवार्य है, इससे बुद्धि में प्रौढता प्रगल्भता, प्रत्युत्पन्न मतित्व आता है। सुश्रुत में जो यह कहा है कि एक शास्त्र के पढ़ने से शास्त्र का ठीक निश्चय नहीं होता वह सत्य ही है। जितनी विशाल दृष्टि, विस्तृत ज्ञान, वहुश्रुत होगा उतनी ही उसे सफलता मिलती है। बस, इसी दृष्टि से आप दर्शन पढ़ाये। इसके लिये जैसे मैंने पाठ्य क्रम में निर्देश दिये हैं, उसी प्रकार सांख्य तत्त्व कौमुदी या न्यायमुक्तावली पढ़ानी चाहिये। इसके लिये पदार्थ विज्ञान के नाम से नया ग्रन्थ या संग्रह तैयार करवाना व्यर्थ है खास कर ऐसा ग्रन्थ जिसे न पढ़ानेवाला और न समझनेवाला ही समझे। इस वार उत्तर प्रदेश के बोर्ड के आयुर्वेदिक कौलेजों के विद्यार्थियों से मिलने का असर मिला, उन में से सब का यही कहना है कि अब जो पदार्थ विज्ञानकी पुस्तक आज स्वीकृत है, वह विलकुल समझमें नहीं आती उसकी भाषा विचित्र है, आधी मोजपुरी आधी कहीं की।

प्रकाशक रुपयेवाले हैं, विज्ञापन बाजी खूब की गई बोर्ड के मेम्बरों का सत्यकार किया जाता है, उनसे उद्घाटन करवाया जाता है, और पुस्तक हमारे सिर लाद दी जाती है। यह उन मासूम बच्चों का रोना था, जो दो बार इनमें फँसे हैं, और पढ़ानेवाले स्वयं कहते थे कि यह व्यर्थ की पुस्तक केवल प्रकाशक की कृपा से बेची गई है।

मैं नहीं कहता कि यह कहां तक ठीक है, परन्तु

CC0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतना सत्य है कि कोर्स निश्चित करने में हमने अपने भाई की पुस्तकोंकी भरमार की है, अपनी पुस्तक रक्खी है, इसकी अच्छी पुस्तक निकाली गई है। यह सब दिन के प्रकाश में बारह बजे होता है। यदि रणजीत राय देशाई की पुस्तक पदार्थ विज्ञान पढ़ी होती देखी गई होती तो निश्चित है कि उस जैसी सरल सन्बन्धित पुस्तक का जरूर आदर होता। परन्तु उसका यह दुर्भाग्य है कि वह पीछे निकली।

विद्यार्थी आयुर्वेद के प्रति विश्वास नहीं रखते आयुर्वेद नहीं जानते ठीक ही तो करते हैं, जब आप पुस्तकें अपने भाई की रखते हैं, या मिलनेवालों की रखते हैं, तब वे कहा से योग्य निकलें। अत्रिपुत्र का ठीक कहना है कि—

"शास्त्रमेवमादितः परीक्षेत्"

सबसे पहिले शास्त्र को तो लो, उसे जांचो—तब आगे बात। जहां ऐसी पुस्तक चुनी जाती है, वहां इससे अच्छा परिणाम क्या हो सकता है। सौभाग्य से बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी के आयुर्वेदिक कौलेज के आचार्यों ने बड़ी बुद्धिमानी और सूझ का काम किया कि इस पदार्थविज्ञान विषय को पढ़ाना बन्द किया। बहुत ही अनुभव और विचार कर यह कार्य हुआ है-भगवान करे आगे यह गलती न हो। यदि पढ़ाना ही हुआ तो श्री देशाई का पदार्थ विज्ञान काम दे सकता है। दर्शन के रूप में पदार्थ विज्ञान न पढ़कर-न्याय मुक्तावली पढ़ाना लाख दर्जे अच्छा है।

यह प्रसन्नता की बात है न्यायमुक्तावली पर दो हिन्दी अनुवाद भाष्य बहुत ही उच्च कोटि के प्रकाशित हुए हैं जिनसे सम्पूर्ण विषय स्पष्ट हो जाता है। इनकी सहायता से दर्शन का ज्ञान भली प्रकार करवाया जा सकता है। इसी प्रकार सांख्यतत्व कौमुदी के ऊपर भी दो उत्तम अनुवाद है और तीसरा विस्तृत रूप में तैय्यार हो रहा है। इन दो पुस्तकों में से किसी एक पुस्तकको विकल्प रूप में विद्यार्थी पढ़ सकता है। इनका पढ़ना मैं अनिवार्य मानता हूं। इसकी सत्यता इतनी है कि बंगाल में योग्य वैद्य (कविराज) अवश्य न्याय या सांख्य में तीर्थ परीक्षा उत्तीर्ण करके तब वैद्यक सीखते थे। इसलिये मैं दर्शन शास्त्र का विरोधी नहीं मैंने स्वयं बचपन में न्याय मुक्तावली पढ़कर शेष पांचो दर्शन पढ़े थे मुझे उनसे आयुर्वेद में बहुत लाभ मिला इसलिये दर्शन विषय को मैं जरूरी मानता हूं। मुझे दर्शन विषय के प्रति आदर है।

मुझे वर्तमान पदार्थ विज्ञान नाम से पढ़ाये जाने वाले विषय में ही आपत्ति है, इसका नाम करण ही ठीक नहीं, दूसरा इसमें पढ़ने से विषय की पुनरावृत्ति फिर चरक में होती है। इससे न तो विद्यार्थी दर्शन समझता है न आयुर्वेद ! यह भानुमती का पिटारा चारों ओर से बजता है। आयुर्वेद के लिये जो पदार्थ विज्ञान है वह देशाई की पुस्तक में एक नियम पूर्वक शृंखला में गूंथा है उसके उदाहरण आयुर्वेदीय हैं। सरल है, भाषा मंजी है, छपाई अकर्षक है, वचन सुसंगत एकत्रित हैं।

मेरी यह अपनी धारणा है, सौभाग्य से श्रीहरि शरणानन्द जी के विचार इस बार उनकी पत्रिका में पदार्थ विज्ञान के सम्बन्ध में पढ़कर मुझे बल मिला कि एक-एक ग्यारह हैं। मैं अकेला ही नहीं हूं परन्तु कुछ समझदार मस्तिष्क भी मेरी तरह ही सोचते हैं, इसीसे यह लिखा और लिखा इसलिये कि विद्यार्थियों के सिर आयुर्वेद न जानने का जो इल्जाम आज लगाया जा रहा है, उसके दोषी वे मासूम बच्चे हैं या हम हैं जो कि उनको बनानेवाले या गढ़नेवाले है। हमारी कितनी ईमानदारी उनके प्रति है और क्या हम ईमानदारी उनके साथ बरत रहे है। अन्त में भारवि के वचनों के साथ विदा लेता हूं—न विव्यथे तस्य मनोहि न प्रियं प्रवक्तुमिच्छन्निमृषा हितैषिणः"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयुर्वेद और सरकारी पंच वर्षीय योजना

लेखक—कविराज, श्री धीरेन्द्र मोहन भट्ट शास्त्री, जी० ए० एम० एस०, आयुर्वेदाचार्य
प्रधान चिकित्सक-राजकीय आयुर्वेदिक चिकित्सालय पो० बतौली (सरगुजा) मध्यप्रदेश

यद्यपि नेहरू सरकार ने अपनी चालू पंचवर्षीय योजना में आयुर्वेद के लिये कुछ विशेष स्थान दिया है लेकिन यह उसी तरह कहा जा सकता है। जिस तरह हाथी के दो दातों में खाने के लिये अलग और दिखाने के लिये अलग रहते हैं। उपरोक्त योजना के अनुसार हिन्दुस्तान के हर राज्यों के जिला परिषद् और जनपद सभाओं द्वारा आयुर्वेदिक औषधालय धरल्ले के साथ खोले गये हैं और खोले जा रहे हैं। लेकिन मैं पूछना चाहता हूं। कि इस तरह का औषधालय जिसमें सिर्फ एक वैद्य को रखकर और एक नाम मात्र के लिये भृत्य (अधिकांश औषधालयों में भृत्य भी नहीं दिया गया है) देकर दवा विहीन, भवनविहीन, फर्नीचर एवं सहायक वैद्य के बिना औषधालय खोलने से लाभ क्या? जब कि औषधालय के चिकित्सक के द्वारा दवा भेजने के लिये कई बार पत्र पर पत्र भेजे जाते हैं फिर भी उन पत्रों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता और पत्रों को लाल फीते के अन्दर रख दिया जाता है। ऐसी परिस्थितिमें चिकित्सकोंके सामने विकट परिस्थिति हो जाती है जब उन्हें औषधालय में आये हुये आतुरों को दवा नहीं हैं ऐसा कह कर वापस करना पड़ता है।

साधारणतया सरकारी कर्मचारी एवं आप लोगों का ख्याल है कि आयुर्वेदिक दवाओं में जंगली जड़ी बूटी ही विशेष काम में आती हैं और लाभप्रद होती हैं, जो ख्याल सर्वदा प्रशंसनीय और स्वागत के लायक है। लोगों के इस ख्याल का हर आयुर्वेदिक चिकित्सक स्वागत करता है। लेकिन उस स्थान पर स्थित आयुर्वेदिक औषधालय के वैद्यों के लिये उन जड़ी बूटियों का उपयोग करना भी असम्भव हो जाता है जहाँ पर द्रोणपुष्पी, अमृता (गुरुच) मंदार, यवतिक्ता गोखरू, पुनर्नवा आदि द्रव्यों का मिलना असंभव होता है। यदि मिलते भी है तो खल, लोढ़ा, इमामजस्ता, मूसल, डेग वभका, कड़ाही आदि यन्त्रों के बिना चिकित्सक दवा का निर्माण नहीं कर पाता। और न तो निर्माण करने तक ही दिया गया। यहां ही तक नहीं वल्कि अधिकांश औषधालयों में एक छोटा सा खल भी नहीं दिया गया जिसमें रसौषधियों को खल कर रोगियों को दी जाय और न तो दिया गया है कर्ण प्रक्षालन यन्त्र। इस तरह सरकार की दुरंगी नीति का पता तब चलता है। जब एक एलोपैथिक साधारण दवाखाना खोलने के पूर्व एक ही साथ डाक्टर कन्पाउण्डर, दो नौकर, एक सूईपर को नियुक्त किया जाता है और औषधालय का भवन, डाक्टर के रहने का मकान तैयार कराया जाता है। जब कि एक आयुर्वेद औषधालय के लिये एक वैद्य ही नियुक्त किया जाता है। और वह वैद्य भी सिर्फ ६०) रुपया मासिक वेतन पर जब कि एक एल० एम० पी० डाक्टरका वेतन सवा सौ से कम नहीं होता। (यद्यपि मध्य प्रदेशीय शासन द्वारा मान्य परीक्षोत्तीर्ण वैद्यों का वेतन मान ८०) प्रति माह किया गया है-किन्तु वह अभी तक वैद्यों को दिया नहीं जाता और न तो शासन द्वारा स्वीकृत महगाई भत्ता ही दिया जाता है) यही क्यों एक मैक्सीनेटर और मवेशी अस्पताल के डाक्टरों का वेतन भी वैद्य के वेतन से अधिक है। इससे भी अधिक खटकनेवाली बात यह है कि एक ५ वर्ष तक विदेशी चिकित्सा पढ़ा हुआ व्यक्ति निकलते ही हजार रुपया मासिक वेतन भोगी कर्मचारी को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बीमारी का झूठा या सही सर्टिफिकेट कुछ फीस लेकर दे सकता है वह स्वीकृत होता है किंतु एक बूढ़ा वैद्य एवं जी० ए० एम० एस०, ए० एम० एस० या आयुर्वेदाचार्य जो अपने जिन्दगी भर से चिकित्सा कर रहे हैं और वस्तुतः किसी रोगी की चिकित्सा साल डेढ़ साल से कर रहें हैं फिर भी वे २५०) रु० मासिक वेतन भोगी कर्मचारियों के लिगे सच्चा प्रमाण पत्र नहीं दे सकते। इससे भी अधिक नीचे के शब्दो पर गौर करें तो पता चलेगा। कि सरकार द्वारा आयुर्वेद के सम्बन्ध में किस तरह घातक नीति से काम लिया जा रहा है।

देखना यह है कि विदेशी सरकार के जाने के बाद स्वास्थ्य विभाग में सुधार हुआ है या नहीं। शिक्षा विभाग के दोषों से बच्चों के जीवन को बर्बाद होने से बचाने की ओर जिस प्रकार सम्प्रति शिक्षा विभाग का ध्यान गया है उस तरह स्वास्थ्य विभाग में चले आ रहे अंधकार को दूर करके भारतीय जनता के धन को उसके हित में खर्च करने की ओर स्वास्थ्य विभाग का ध्यान गया कि नहीं। यदि इस सम्बन्ध में कुछ सोचा गया है, तो वह अपने मस्तिष्क से सोचा गया है या दूसरों को मस्तिष्क से ? सोचने के समय भ्रान्त मस्तिष्क से काम लिया गया है या अभ्रांत मस्तिष्क से ? आदि प्रश्न विशेषतया विचारणीय हैं। इन मुख्य प्रश्नों पर विचार करने के लिये केन्द्रीय सरकार द्वारा स्वीकृत १९५४-५५ के स्वास्थ्य विभाग के बजट को सामने रखने की जरूरत है। सामने, बजट के आंकड़े हैं। इस सोलह करोड़, इकतालीस लाख, इकतालीस हजार रुपयों में से सिर्फ पांच लाख रुपये आयुर्वेद के (आयुर्वेदीय रिसर्च जामनगर) लिये दिये गये हैं और ये रुपये देकर ऐसा प्रचार किया गया है कि सुनते सुनते लोग बहरे हो जाय। सरकार आयुर्वेद की इतनी मदद करती है, इसका ढोल खूब पीटा गया है। कुछ भी हो, परन्तु यह बजट भूतपूर्व सरकार के बनाये हुए बजट की प्रतिलिपि मात्र है। यदि स्वतन्त्र मस्तिष्क से काम लिया जाता इस बजट के बनाने में तो विदेशी दवा के मंगाने में इस तरह रुपया बर्बाद नहीं किया जाता (स० आ० मई ५४)। अब जरा स्वास्थ्य मन्त्रिणी राजकुमारी अमृत कौरजी के उन भाषणों पर ध्यान दीजिये जिसे कुछ माह पूर्व हिन्दू वि० विद्यालय काशी के आयुर्वेदिक कालेजों के छात्रों के बीच दिया है। इस भाषण में स्वास्थ्य मंत्रिणी महोदया के इस तथ्यको कि—"आयुर्वेदकी तरक्की सिर्फ वैज्ञानिक ढंग से ही संभव है न सिर्फ आयुर्वेदज्ञ ही बल्कि समग्र संसार ध्रुव सत्य मानता है। किसी भी विज्ञान वैज्ञानिकता, उपयोगिता और अनुपयोगिता की सच्ची परख इतिहास की कसौटी पर हुआ करती है। इतिहास से बढ़कर अलग सत्यांकन होना मुश्किल है। अस्तु !

इतिहास आयुर्वेद की वैज्ञानिकता और उपयोगिता का पूर्ण समर्थन ही नहीं करता है वल्कि वह यह भी घोषित करता है। कि जब से सृष्टि आरम्भ हुई है आयुर्वेद द्वारा ही जनकल्याण सावित होता चला आ रहा है। एवं संसार की समस्त चिकित्सा पद्धतियों के प्रति आयुर्वेद की एक विशेष देन है। अपने भाषण में उन्होंने चित्र के एक रूप को व्यक्त किया है। चित्र दूसरे रूप में यह नियम भी अनिवार्य स्थिर रखता है कि—"किसी भी प्राचीन विज्ञान, कला और संस्कृति को जब तक राज्य संरक्षण प्राप्त नहीं होता तब तक उसका प्रचार और प्रसार सम्भव नहीं हैं।

राजकुमारी अमृतकौर ने अपने भाषण के दर्म्यान में यह भी आश्वासन दिया कि—"भारत सरकार आयुर्वेद के विकास में दिलचस्पी रखती है" मगर उपस्थित श्रोताओं के कर्णपटों में अभी इन शब्दों के प्रकम्पन भी दूर न हुए होंगे कि तत्क्षण ही उन्होंने यह भी कह दिया कि मिश्र और चीन जैसे प्राचीन देशों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में आधुनिक चिकित्सा प्रणाली ही अपनी राष्ट्रीय चिकित्सा सेवा का आधार बनाया है तब भारत में किसी अन्य चिकित्सा प्रणाली का आश्रय लेना एक अक्षम्य अपराध होगा।"

'भारत सरकार आयुर्वेद से दिलचस्पी रखती है' यह अच्छे और लुभावने शब्द हैं। परन्तु इसकी आत्मा का हनन, आपके इस निर्णय से हो जाता है कि 'अन्य चिकित्सा प्रणाली का आश्रय लेना एक अक्षम्य अपराध है।"

उसी सभा में बोलते हुए अमृतकौर जी ने कहा कि "आधुनिक चिकित्सा प्रणाली इस हद तक प्रगति कर चुकी है ओर मानव कल्याण के साधन और तरीके उसके पास इतने अधिक हैं कि उसके स्थान पर आयुर्वेद अन्य किसी चिकित्सा प्रणाली को प्रतिष्ठित करने का तो प्रश्न ही नहीं उठता।" स्वास्थ्य मंत्रिणी महोदया अपने इस विचारों से भले ही सन्तुष्ट हो। परन्तु स्वतन्त्र राष्ट्र और प्रत्येक विषय में आत्म निर्भरता प्राप्त करनेवाले देश भक्तों को सन्तुष्ट नहीं कर सकते।

यह सत्य है कि पाश्चात्य विज्ञान कुछ अंशों में इतनी प्रगति कर चुका है कि उसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता है। लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि प्राचीन विज्ञान (आयुर्वेद) एकदम पीछे है। विज्ञान पर किसी खास व्यक्ति विशेष का अधिकार नहीं है, वह सास्वत सार्वभौम सिद्ध है जिस पर सबों का हक समान है। विदेशी सरकार की नीति आयुर्वेद के विषय में "विषकुम्भं पयोमुखम्" वाली रही है। उसकाल में आयुर्वेद ही क्यों भारत की किसी भी कला या विज्ञान की उन्नति को जानबूझ कर धराशायी बनाने की कूटनीति के हथकंडे प्रयोग में लाये जाते थे। मैं बड़ी नम्रता से स्वास्थ्य मंत्रिणी महोदया से यह पूछना चाहता हूं कि आयुर्वेद की उन्नति की ओर उसे अपने मन माने वैज्ञानिक मंच तक लानेके लिये केन्द्र की ओर से कोन सा मार्ग वा उपाय अपनाया गया है।

अभी हाल में केन्द्रीय स्वास्थ्य विभाग की ओर से एक आदेश निकाला गया है जिसका जिक्र पिछले दिन संसद सदस्यों के बीच राजर्षि टंडन जी ने किया है। वह आदेश है—"केन्द्रीय सरकारी कर्मचारियों के वेतन से कुछ पैसे काटे जांयगे जो उनकी चिकित्सा के लिये जमा रहेंगे।" कर्मचारियों द्वारा यह पूछे जाने पर कि उनकी चिकित्सा आयुर्वेदिक पद्धति से होगी या एलोपैथिक पद्धति से तो जबाब दिया गया कि पाश्चात्य पद्धति से। इस कटौती से कर्मचारियों में क्षोभ है।

आज सरकार अपनी ताकत का इस्तेमाल स्वत्वाधिकार मुक्त वैद्यों के स्वत्व और अधिकार छीनने में लगा रही है, उसका पोडशांस भी उनके पनपने में लगाती तो राष्ट्र के लिये अधिक फायदेमन्द होता। वर्तमान सरकार कम्पाउण्डरों क्वैकों और मूर्खों को सलूश ड्रग्स के उपयोग करने में रोक नहीं पाती लेकिन वैद्यों के लिये डाक्टर शब्द नाम के आगे मत लिखो, इन दवाओं का प्रयोग मत करो पर कुठाराघात करने के किये सबसे आगे कानून निर्माण कर प्रतिबन्ध लगाती है जब कि आज वैद्यों को बीमा कम्पनियां भी स्वीकार नहीं करती स्वास्थ्य विभाग में उन्हें उच्च पद नहीं दिये जाते। पचास रुपये मासिकसे ऊपर के वेतन भोगी कर्मचारी को वे प्रमाणपत्र नहीं दे सकते।

अन्त में माननीय स्वास्थ्य मंत्रिणी महोदया से मैं यह पूछना चाहता हूं कि उपरोक्त शब्दों के कहने के पूर्व या बजट पेश करने के पूर्व फिलाडेलफिया के डाक्टर जोर्ज कनार्क एम० डी० के उन शब्दों पर गौर किया है जिसे उक्त डाक्टर साहब ने एक विशेष चिकित्सा मार्ग को ही लक्षित कर लिखा है "यदि आधुनिक औषधों को हराकर चरक के सिद्धान्तों को ही अपनाया गया तो कब्र खोदनेवालों के लिये काम कम हो जायेगा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और संसार में जीर्ण रोगी कम रह जायंगे इसके अतिरिक्त मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश के राजापाल क्रमशः डा० पट्टाभि सीतारमैया और श्री मुन्शी के उद्गार को व्यक्त करने में मै प्रसन्नता अनुभव करता हूं जिसे उन्होंने हाल में व्यक्त किया है—

"चिकित्सा शास्त्र के रूप में विज्ञान की कसौटीपर आयुर्वेद बिलकुल खरा उतरा है। एलोपैथी के डाक्टर आयुर्वेद की कोई जानकारी नहीं रखते, इसीलिये वे इसे विज्ञान भी नहीं कहते। १९२२ में मद्रास सरकार ने एक रिपोर्ट बनाई थी, उसमें यह सिद्ध किया गया था कि आयुर्वेद अवैज्ञानिक है। उस समय जब मैंने आयुर्वेद की वैज्ञानिकता पर एक टिप्पणी पत्रों में प्रकाशित कर वायी, तो कितने ही डाक्टरों ने मुझे इसके लिये धमकी दी उसके बावजूद भी आयुर्वेद वैज्ञानिक है यह मैंने सिद्ध कर दिखलाया था।" (डा० पट्टाभि सीतारमैय्या)

"भारतीय रोगोंके लिये आयुर्वेदिक औषधियां सबसे अधिक गुणकारी होती है। क्योंकि जड़ी बूटियाँ, जिनसे आयुर्वेदीय औषधें तैयार की जाती हैं, स्वदेशी हैं और यहां के लोगों को शरीर रचना के अनुकूल पड़ती है। अतः आयुर्वेदका विकास होना आवश्यक है।"

(के०एम० मुन्शी)

"आयुर्वेद के नामसे ही ज्ञात होता है कि—यह दीर्घ जीवन विज्ञान है। भारतीय चिकित्सा शास्त्र आयुर्वेद रोग का इलाज करनेके साथ २ रोग के कारण को मिटाने पर भी ध्यान देता है। यह सोचना गलत है कि शरीर विज्ञान को भारत में अधिक महत्व नहीं दिया गया था।" (—उपराष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन)

"सरकार यदि वास्तव में आयुर्वेदिक—चिकित्सा पद्धति की सफलता देखना चाहती है, तो उसे चाहिये कि अपने एक एलोपैथी चिकित्सालय के मुकाबले ५०० विस्तरों का एक आयुर्वेदीय चिकित्सालय खोले और वहीं आयुर्वेदिक पद्धति से मरीजों की चिकित्सा करावे। (—संसद सदस्या कांग्रेसी) आर०वी धुलेकर

"ऐलोपैथी चिकित्सा में अधिक खर्च करना पड़ता है अतएव आयुर्वेदिक औषधियों के प्रचार से जनता स्वस्थ भी होगी और औषधिकार्य में होनेवाले बहुत से द्रव्य को बचा भी सकेंगे। अतएव आयुर्वेदिक औषधियों को लोकप्रिय बनाना होगा।"

(—स्वास्थ्य मंत्री श्री कन्नमवार-मध्यप्रदेश)

आशा है, भावी पंचवर्षीय योजना में आयुर्वेद के लिये केन्द्रीय शासन द्वारा निष्पक्ष नीति वरती जायगी और तदनुकूल काम किया जायेगा।

अन्त में वैद्य बन्धुओं से भी मेरी प्रार्थना है कि वे आपस की दलबन्दी और पदलोलुपता को त्यागकर आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा के रूप में लाने का दृढ़ संकल्प करें।

'आयुर्वेद—चिकित्सक'

(जनता का व्यवहारोपयोगी, चुनिन्दा सामग्रीवाला मासिक-पत्र)

यह प्रति मास नियमित प्रकाशित होता है। प्रतिवर्ष दो-विशेषाङ्क (१ छोटा, १ बड़ा) देता है। इस वर्ष ढाई-सौ पृष्ठ के बड़े-डिमाई साइज में पुरुषरोग-चिकित्साङ्क महत्वपूर्ण विशेषाङ्क भेंट करेंगे। वार्षिक मूल्य ४॥), एक अङ्क का ।), नमूनाके लिये पांच आने भेजिये। तत्काल फलप्रद प्रयोग (चारों भाग) का—मूल्य ८) पृष्ठ संख्या प्रायः ५५५, प्रयोग संख्या १ हजार से अधिक।

—वैद्य पं० चन्द्रशेखर जैन शास्त्री। लाखा भवन, पुरानी चरहाई, जबलपुर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोंठ

श्री रामेश वेदी, गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार

रासायनिक संघटन

सोंठ में गन्धयुक्त हलके पीले रंग का एक उड्डनशील तेल एकसे तीन प्रतिशतक होता है। यह मुख्यतया टर्पीन्स (terpenes) का बना होता है। एक स्थिर तेल करीब तीन प्रतिशतक तथा निशास्ते का एक बड़ा परिमाण होता है।

उड्डनशील तेल जमैं का की सोंठ में लगभग एक प्रतिशतक, अफ्रीका की सोंठ में दो से तीन प्रतिशतक और भारतीय सोंठ में ३.५ प्रतिशतक के लगभग निकलता है। सोंठ की विशिष्ट गन्ध के लिये यह उत्तरदायी है, परन्तु स्वाद के लिये नहीं। सोंठ के चरपरे (तिक्त) तत्व उड्डनशील नहीं हैं। इसलिये वे उड्डनशील तेल में नहीं पाये जाते। उड्डनशील तेल स्वाद में तिक्त नहीं होता। तिक्त क्रियाशील तत्व भी पृथक् प्राप्त किया गया है और इसको जिंजरोल (gingerol) नाम दिया गया है। हलका पीला, गन्ध रहित, स्वाद में बहुत तिक्त, लेसदार-सा यह द्रव कोचीन शुण्ठी में ०.६ प्रतिशतक होता है।

भारतीय सोंठ की अपेक्षा जमैका-सोंठ कम तिक्त होती है। जमैंका-सोंठ में भारतीय सोंठ की तुलना में उड्डनशील तेल निस्सन्देह बहुत कम होता है, परन्तु जमैका सोंठ की सुरभि भारतीय पैदावार की तुलना में बहुत अधिक मृदु मानी जाती है, इसलिये यह अधिक पसंद की जाती है।

सोंठ में बहुत से रेज़िन्स (resins) होते हैं। एक तैलीय रेज़िन (oleoresin) द्रव रूप में निकाला गया है। इसका नाम जिंजरीन (gingerin) रखा गया है। सामान्यतया यह ईथर के साथ खींचा (extract) जाता है। यह सब जैसा गाढ़ा होता है और रंग में भी उस से मिलता है। इसमें सोंठ की सुरभि और उसका तिक्त स्वाद दोनों विद्यमान होते हैं। पूर्वीय भारत की सोंठ में यह लगभग आठ प्रतिशतक और जमैंका-शुण्ठी में प्रायः पांच प्रतिशतक होता है।

ऐलन (Allen) और मूर (Moor) ने कुछ नमूनों के विश्लेषण से निम्नलिखित परिणाम प्राप्त किये हैं—

जमैका-सोंठ के नमूने

	१	२	३	४	५
नमी	११.२	१०.९५	१३.९५	१२.७६	१३.९६
राख			३.९०	३.२९	३.४५
विलेय राख	१.७०	१.४१	३.०५	१.७५	१.७१
ठण्ढे पानी का ऐक्स्ट्रैक्ट	१५.६५	१३.२५	१४.४०	१२.२५	११.८५

कोचीन-सोंठ के नमूने

	१	३	३
नमी		१०.६४	१३.५०	१३.२३
राख			३.८१	३.६२
विलेय राख		१.७१	२.०३	२.०४
ठण्ढे पानी का एक्स्ट्रैक्ट		१३.००	८.६५	११.६५

अफ्रीका की सोंठ के नमूने

	१	
नमी	१५.९७	१३.७०
राख	३.९६	३.९०
विलेय राख	२.२८	२.४१
ठण्डे पानी का ऐक्स्ट्रैक्ट	१०.८०	१०.[illegible]

उपयोगी भाग

पत्ते और ताज़ी तथा सूखी गांठें।

ब्रिटिश फार्माकोपिया में स्वीकृत सोंठ वह है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसका बाहर का मैला छिलका खुरुच लिया गया हो और फिर उसे धूप में सुखाया हो। व्यापार में इसे बिना रंग उड़ाई हुई जमैका सोंठ (Unbleached Jamaika Ginger) कहते हैं। इसका मान (स्टैण्डर्ड) यह होना चाहिये :

१ नब्बे प्रतिशतक मद्यसार (ऐल्कोहल) में विलेय एक्स्ट्रैक्ट साढ़े चार प्रतिशतक से कम नहीं, और

२ जल में विलेय ऐक्स्ट्रैक्ट दस प्रतिशतक से कम नहीं होना चाहिये।

३ राख छ प्रतिशतक से अधिक नहीं और जलीय विलेय राख १.७ प्रतिशतक से कम नहीं होनी चाहिये।

संयुक्त राज्य अमेरिका के मान ये हैं :

१ निशास्ता बयालीस प्रतिशतक से कम नहीं।

२ काष्ठोज (crude fibre) आठ प्रतिशतक से अधिक नहीं।

३ चूना (Cao) एक प्रतिशतक से अधिक नहीं।

४ ठण्डे पानी का एक्स्ट्रैक्टर बारह प्रतिशत से कम नहीं।

५ कुल राख सात प्रतिशतक से अधिक नहीं।

६ ठण्डे पानी में विलेय राख दो प्रतिशतक से कम नहीं।

७ उद्रहरिताम्ल में अविलेय राख दो प्रतिशतक से अधिक नहीं होनी चाहिए।

चूने की [illegible] चढ़ाई हुई सोंठ या रंग उड़ाई हुई सोंठ में [illegible] कर्बोनेट (Calicium carbonate) चार प्रतिशतक से अधिक नहीं होना चाहिए। इस [illegible] कुल राख दश प्रतिशतक से अधिक नहीं होनी चा[illegible] अन्य बातों में इसके मान पहले की तरह हैं।

मात्रा

सोंठ का चूर्ण—दो से तीन माशे तक।

मिलावट

एक्स्ट्रैक्ट निकालने के बाद बचे हुये फोक और निशास्ते को पिसी हुई सोंठ में मिला कर बाजार में बेच लेते हैं। इस से चूर्ण के स्वाद में तीखापन कम हो जाता है। आवश्यक तीखापन पैदा करने के लिये और हल्का पीला रंग लाने के लिये मिलावट करने वाले लाल मरिच और हल्दी का प्रयोग करते हैं।

गुण[1]

सोंठ रुचिकारक, आमवातनाशक, पाचक, कटुरसयुक्त, लघुपाकी, स्निग्ध, उष्णवीर्य, विपाक में मधुर रसयुक्त, कफ, वात और मलबन्ध को दूर करने वाली, वृष्य, स्वर के लिये हितकारी, वमन, श्वास,

---

[1]क शुण्ठी रूच्यामवातघ्नी पाचनी कटुका लघुः।
स्निग्धोष्णा मधुरा पाके कफवातविबन्धनुत्॥
वृष्या स्वर्या वमिश्वासशूलकासहृदामयान्।
हन्ति श्लीपदशोथार्श आनाहोदरमारुतान्॥
भा० प्र०, हरीतक्यादि वर्ग, ४५-५६।

ख नागरं मधुरं पाके स्निग्धोष्णं कटुकं लघु।
रुच्यं मलानां संग्राही हृद्यं वायोविबन्धनुत्॥
दीपनं पाचनं वृष्यं स्वर्यं बातकफापहम्।
निहन्ति शूलहृद्रोगशोफार्शः श्लीपदोदरम्॥
आनाहं श्वासकासवमिहिध्मामपित्तलम्॥
कै० दे०, ओ० व०, १३००-१३०१।

ग सस्नेहं दीपनं वृष्यमुष्णं वातकफापहम्।
विपाके मधुरं हृद्यं रोचनं विश्वभेषजम्॥
च०, सू०, अ० २७; २९१।

घ शुण्ठी कटूष्णा स्निग्धा च कफशोफानिलापहा।
शूलबन्धोदराध्मानश्वासश्लीपदहारिणी॥
रा० नि०, पिप्पल्यादि०, २६।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शूल, खांसी, हृदय के रोग, श्लीपद, शोथ, बवासीर, आफरा, पेट की वायु आदि को दूर करती है।

अदरक मल को भेदन करने वाली, पाक में गुरु, तीक्ष्ण, ऊष्ण वीर्य, अग्नि दीपक, कटुरस युक्त, विपाक में मधुररस युक्त, रूक्ष तथा वात और कफ को नष्ट करने वाले होती है। और जितने गुण पहले सोंठ के कहे हैं वे सब अदरक में भी है।[1]

क शुण्ठी रुच्यामवातघ्नी पाचनी कटुका लघुः।
स्निग्धोष्णा कटुका पाके कफवातविबन्धनुत्॥
वृष्या स्वर्या वमिश्वासकासशूलहृदामयान्।
हन्ति श्लीपदशोफार्श आनाहोदरमारुतान्॥

म० पा० नि, शुण्ठ्यादि०; ३-४।

[1]क आर्द्रिका भेदिनी गुर्वी तीक्ष्णोष्णा दीपनी मता।
कटुका मधुरा पाके रूक्षा वातकफापहा॥
ये गुणाः कथिताः शुण्ठ्यास्तेऽपिसन्त्यार्द्रकेऽखिलाः॥

भा० प्र०, हरितक्यादि०, ४९-५०।

ख तत्तुल्यमार्द्रकं विद्यात् सतीक्ष्णं भेदनं गुरुः।
पाचनं रोचनं वृष्यं कटूष्णं वह्निदीपनम्॥
कफानिलहरं स्वर्यं विबन्धानाहशूलजित्।
अंकुरं शृङ्गवेरस्य रक्तजित् श्लेष्मवातलम्॥

कै० दे०, ओ० व०, १३०४-५।

ग आर्द्रकं नागरगुणं भेदनं दीपनं गुरु।
कटूष्णं दीपनं वृष्यं रुच्यमार्द्रकनागरम्॥
श्वासकासवमीहिक्कावातश्लेष्मविबन्धनुत्।
पाचनं रोचनं वृष्यं कटूष्णं वह्निदीपनम्।
वातप्रकोपशमनं पाचनं शोथहृत्परम्॥

म० पा० नि०, शुण्ठ्यादि०; ५-७।

घ कटूष्णमार्द्रकं हृद्यं विपाके शीतलं लघु।
दीपनं रुचिदं शोफकफकण्ड्यामयापहम्॥

रा० नि०, पिप्पल्यादि०; २९।

—०—

सर्पगन्धा

[चमत्कारी जड़ी पर नई पुस्तिका]

लेखक--श्रीरामेश बेदी

रक्त का ऊँचा दबाव (हाई ब्लड प्रेशर) नींद का उचाट हो जाना, विचारों में खोये-खोये रहना, मानसिक विक्षोभ, पागलपन--और न जाने ऐसे कितने ही रोग हैं जो आज के संघर्षमय जीवन ने मानव जाति को दिये हैं। भारत, यूरोप और अमेरिका में सभ्यता के इन रोगों के विरुद्ध जो लड़ाई जारी थी उसमें चिकित्सकों को सफलता प्राप्त हो गई है। इस सफलता का रहस्य [illegible] जड़ी है जिसे भारतमें कई सदियों से प्रयोग में लाया जा रहा है। इस ख्याति प्राप्त जड़ी [illegible] के गुण और विस्तृत उपयोगों को जानने के लिये श्री बेदी की यह नई पुस्तिका आज ही मंगा[illegible] आर्डर से तेरह आने भेजने पर रजिस्ट्री से पुस्तिका भेज दी जाती है। बिना रजिस्ट्री के [illegible] पोस्ट से मंगाना हो तो सात आने के टिकट भेजिये। मिलने का पता—

हिमालय हर्बल इंस्टिच्यूट, गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समाचार

निखिल भारतीय आयुर्वेद विद्यापीठ स्नातक मण्डल

निखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन ने गत त्रिवेन्द्रम् अधिवेशन में एक प्रस्ताव द्वारा नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ के स्नातकों को संगठित करने का निश्चय किया है। तदनुसार निम्न वैद्यों की एक उप-समिति बनी है।

१ वैद्यराज श्री शिवेकरण जी छांगाणी, नागपुर।
२ वैद्यराज श्री हरनाथ जी त्रिपाठी, कानपुर।
३ वैद्यराज श्री हरीन्द्र दत्तजी आयुर्वेदाचार्य पटियाला
४ वैद्यराज श्री श्रीरामजी शर्मा, बम्बई।
५ वैद्यराज श्री आचार्य नित्यानन्द, पिलानी : संयोजक

अतः असमस्त प्रान्तों के स्नातकों से प्रार्थना है कि वे अपना वर्तमान पता आचार्य नित्यानन्द, संयोजक नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ स्नातक मण्डल, पो० पिलानी : राजस्थान : को भेजने की कृपा करें, ताकि उनसे सम्पर्क स्थापित किया जा सके।

संयोजकः—आचार्य नित्यानन्द

पिलानी में आयुर्वेद शिक्षण की नवीन व्यवस्था

पिलानी में निखिल भारतीय आयुर्वेद विद्यापीठ के पाठ्यक्रम के अनुसार आयुर्वेद शिक्षण की व्यवस्था मनोवैज्ञानिक ढंग से की गई है। आचार्य नित्यानन्द जी आयुर्वेदीय विषयों को इस प्रकार से हृदयंगम कराते हैं कि छात्र को रटने की जरूरत नहीं पड़ती। इस प्रणाली में मृन्मय प्रतिकृतियाँ, विभिन्न यन्त्रों और आर्टों आदि से सहायता ली जाती है, जिससे नवीन विषयों की भी जानकारी आसानी से हो पाती है। पुस्तकालय, वाचनालय, औषधालय रसायन आदि की व्यवस्था है। छात्रों को हिन्दी और अंग्रेजी में योग्य बनाने के अतिरिक्त कथाओं का प्रबन्ध है कुछ सुयोग्य छात्रों को भोजन, वस्त्र आदि का पूरा खर्चा दिया जाता है। छात्रों के लिये नल, बिजली, खेल, छात्रावास में निवास और अध्ययन व्यवस्था निःशुल्क है। छात्रावास में भोजन का व्यय १५ रु० से २० रु० मासिक तक होता है। कालेज १ जुलाई को खुल जाएगा, किन्तु प्रवेश मास के अन्त तक हो सकेगा। परीक्षार्थियों को मन्त्री, विरला आयुर्वेद विभाग, पिलानी : राजस्थान : से पत्र व्यवहार करना चाहिये।

मन्त्रीः—रामनिवाससाह

———

ग्राहकों बढ़ाने के लिये "आयुर्वेद गौरव" में विज्ञापन दीजिये :—

—: विज्ञापन का दर :—

पत्र का प्रथम पेज	१२५)	साधारण पेज		५०)
,, द्वितीय पेज	७५)	,,	आधा पेज	३०)
,, तृतीय पेज	७५)	,,	चौथाई पेज	२०)
,, चतुर्थ पेज	१००)			

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिड़ला लेबोरेटरीज़ द्वारा प्रस्तुत शीघ्र लाभदायक

कुछ विशिष्ट औषधियां

स्वस्ति मलहम

वर्षा ऋतु में लोगों को प्रायः दाद, खाज, खुजली, अपरस, फोड़ा फुन्सी, आदि अनेक चर्म-रोग हुआ करते हैं। उक्त कष्टप्रद चर्म्म रोगों से त्राण पाने के लिये स्वस्ति मलहम का व्यवहार [illegible] लाभप्रद है। इसके दो तीन वार लगाने से ही पुराना से पुराना दाद दिनाय, जड़ मूल से नष्ट हो जाता है। यह आकर्षक रूप से छपे हुए बड़ी और छोटी डिब्बियोंमें हर औषधियों की दुकानों में मिलता है। इस मलहम से कपड़े में दाग नहीं लगता मूल्य बड़ी डिब्बी ।।) छोटी ।)

विक्टोरिया औरिजनल वाम।

सामान्यतः रात में अधिक जागने, परिश्रम, चिन्ता, स्वप्नदोष, अधिक सम्भाषण, तथा सर्दी लगने के प्रारम्भिक अवस्था इत्यादि कारणों से प्रायः शिर पीड़ा हुआ करती है। उक्त कारण जन्य पीड़ा से शीघ्र छुटकारा पाने के लिये विक्टोरिया औरिजनल वाम, एक अमोघ औषध है किसी भी कारण से उत्पन्न दर्द की प्रत्येक अवस्था में पूर्ण लाभदायक है। अधकपाली (आधा शीशी) की पीड़ा को अतिशीघ्र दूर करता है। मूल्य आधा औंस ।।।=) चौथाई औंस ।।)

मोहन मिक्श्चर

शरीर के विभिन्न अङ्गों में उत्पन्न होनेवाले रोगों से रक्षा के लिये आधुनिक वैज्ञानिक प्रणाली द्वारा निर्मित 'मोहन मिक्श्चर" एक निरापद औषध है। शिरदर्द, जल जाना, चोट, दर्द, फोड़ा फुन्सी दाद, खाज खुजली, विषैले जन्तुओं का डंक, कान दर्द, कान बहना, हैजा, ज्वर, वमन, दस्त, अजीर्ण जी मिचलाना, इन्फ्लुएञ्जा, मलेरिया, खांसी, कफ, जुकाम, पेचिस, मरोड़ उदरशूल, कब्ज, आंत्र गिरना, खून के दस्त, निमोनियां, बच्चों की पसली, कुकुर खांसी, सुजाक, बवासीर लकवा, दांत निकलना, मुंह में छाले पड़ना, स्वरभंग, तिल्ली, जिगर, मृगी, हिस्टीरिया, नामर्दी, सुस्ती, इत्यादि समस्त विकारों में बिभिन्न अनुपान के साथ इसका सेवन शीघ्र लाभदायक है। प्रत्येक परिवार को इस औषध की कमसे कम एक शीशी अपने घर में अवश्य रखनी चाहिये। यह समय पर [illegible] करता है। दवा निकालने के बाद शीशी को शीघ्र ही बन्द कर दें। मूल्य आधा औंस [illegible] तथा चौथाई औंस का ।=)

बिड़ला लेबोरेटरीज

कलकत्ता—३०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक विशिष्ट

मलेरिया निरोधक

वर्षा ऋतु आ गई है। मलेरिया बुखार का उत्पात भारतवर्ष के प्रायः सभी प्रान्तों में न्यूनाधिक रूप में बढ़ जाता है और हमारे भारतवासी लाखों की संख्या में इस भयंकर व्याधि के शिकार होते हुए अनेक दारुण कष्ट भोगकर मृत्यु के विकराल मुंह में चले जाते हैं। इस भयानक बिमारी से जनता की रक्षा करने के लिये हमारी भारत सरकार की ओर से जो विविध प्रयत्न किये जा रहे हैं वे सर्वथा सराहनीय हैं।

इस बिमारी से बचने के लिये आप आज ही 'बिड़ला लेबोरेटरीज' द्वारा प्रस्तुत 'नियो ज्वरान्तक सुधा' की १ शीशी लेकर अवश्य अपने पास रख लें, जो सभी प्रकार के मलेरिया बुखार, इकतरा, तिजारी, चौथिया से बचने या छुटकारा पाने के लिये एक विशिष्ट एवं बहुबार सुपरीक्षित औषधि है।

इसके ३-४ खुराक पीनेसे ही मलेरिया बुखार का आना रुक जाता है तथा कुछ काल तक निरन्तर सेवन करने से मलेरिया बुखार से उत्पन्न बढ़ी हुई तिल्ली एवं जिगर ठीक होकर रक्त की कमी, मन्दाग्नि, कोष्ठबद्धता (कब्जियत) जी मिचलाना, नींद न होना, इत्यादि विकार समूल नष्ट होकर शरीर हृष्ट पुष्ट एवं सुन्दर बन जाता है।

यह जीर्ण ज्वर ('पुराना बुखार') इन्फ्लुएञ्जा, कफ ज्वर आदि में भी समान रूप से लाभप्रद है। इस निरापद औषध के सेवन से पुनः बुखार आने का कुछ [illegible] रहता। एक बार अवश्य परीक्षा कर लाभ उठावें।

बिड़ला लेबोरेटरीज

कलकत्ता—३०

प्रकाशचन्द्र [illegible] प्रिण्टिंग वर्क्स लि०,
८३, पुराना चीनाबाजार स्ट्रीट, कलकत्तामें मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

22/8/92

आयुर्वेद गौरव

आयुर्वेद का एकमात्र सर्वोत्तम मासिक पत्र

गुरुकुल पत्रिका

8-10-55

नासिका सम्बन्धी अरिष्ट

ग्लायते नासिकावंशः पृथुत्वं यस्य गच्छति
अशूनः शूनसंकाशः प्रत्याख्येयः स जानता ॥१॥

अत्यर्थं विवृता यस्य यस्य चात्यर्थं संवृता।
जिह्वा वा परिशुष्का वा नासिका न स जीवति ॥२॥

मुखं शब्दश्रवावोष्ठौ शुक्लश्यावातिलोहितौ।
विकृत्या यस्य वा नीलौ न स रोगाद्विमुच्यते ॥३॥ 'चरक'

भावार्थ—जिस व्यक्ति का नाक पतला तथा चिपटा एवं बिना सूजन के शोथयुक्त मालूम हो वैद्य उसकी चिकित्सा न करें।

जिसका नाक अधिक फैला हो या सिकुड़ा हुआ हो, टेढ़ा या सूखा हो वह मनुष्य नहीं जी सकता है।

जिसके मुख, कान, ओठ वगैरह श्वेत, कृष्ण, अत्यन्त लाल अथवा नीले रंग के विकार से मालूम हो वह रोग मुक्त नहीं होता।

वार्षिक मूल्य ३)
एक प्रति ।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

सम्पादक—श्री प्रकाशचन्द्र गुप्त M.Sc सह-सम्पादक- श्री मदनगोपाल वासोतियाँ आयुर्वेदाचार्य

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

विषय	लेखकका नाम	पृष्ठ
१ आयुर्वेद गौरव से	श्री सरयूप्रसाद भट्ट मधुमय, साहित्य विशारद ...	१
२ विषम-कालीन ज्वर (Kala-Azar)	आचार्य डा० श्रीश्यामदास प्रपन्नाश्रमी	२
३ बाल-मुखपाक (Stomatitis)	श्री सोमदेव शर्मा सारस्वत साहित्यायुर्वेदाचार्य	६
४ प्रतिश्याय (Coryza)	कविराज गौरीशंकर श्रीवास्तव आयुर्वेदाचार्य ...	१०
५ सन्निपात (आंत्रिक) ज्वर (Typhoib Fever)	वैद्य श्रीधीरेन्द्र मोहन भट्ट शास्त्री	१२
६ ब्रह्मचर्य का महत्त्व	पं० श्री बालेश्वर पाण्डेय धर्मरत्न ...	[illegible]
७ "नवाकर्षण"	डाक्टर श्री भवानी प्रसाद गुप्त	२३
८ विटामिन और हमारा खाद्य	कविराज एस०एन०बोस एल० ए० एम० एस० सी० ए०	२७
९ बूंटी और बटी	पं० युगेश्वर झा आयुर्वेदाचार्य	३०
१० शारीरिक स्वास्थ्य के साथ आत्म दर्शन ही आयुर्वेद का मौलिक ध्येय है	...	३१

वैद्यों को सूचना

१—उत्तर प्रदेशीय वैद्यों को सूचित किया जाता है कि लखनऊ में होनेवाले १८ वें उ० प्र० वैद्य सम्मेलन के अध्यक्ष पद का जो निर्वाचन होनेवाला था। उसके लिये, समस्त मताभिलाषियों के बैठ जाने के कारण श्री बाबू रामजी मिश्र, आयुर्वेदाचार्य हापुड़ निवासी, निर्विरोध अध्यक्ष घोषित किये गये।

२—लखनऊ में स्वागतकारिणी समिति का संगठन हो गया है। श्री ज्ञानेन्द्र दत्तजी त्रिपाठी, आयुर्वेदाचार्य स्वागताध्यक्ष और श्री सुरेन्द्रनाथजी दीक्षित, वैद्य स्वागत मंत्री निर्वाचित हुए हैं।

[illegible] वैद्य सभायें प्रतिशत दश प्रतिनिधि निर्वाचित कर उन नामों की सूची शीघ्र भेजे।

[illegible] आवश्यक प्रस्ताव पहले भेजे जो कि नियमानुसार सम्मेलन में उपस्थित किये जावें।

सम्मेलन महोत्सव की तिथियें स्वागत कारिणी समिति शीघ्र सूचित करेगी।

सूचक—

श्री अमरनाथ वैद्यशास्त्री,

संयोजक, उ० प्र० वैद्य सम्मेलन,

वनस्पति भवन देहरादून

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ॐ

प्राच्यं प्रतीच्यं यत्किंचिद् आयुर्वेदात्मकं हि तत् ।
तद्गौरवो विजयते, विश्वस्मिन् व्याधिसंकरे ॥ १ ॥

नोट—१-"यदिहास्तितदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्", इति चरक वचनात् ।

आयुर्वेद-गौरव

वर्ष ३	अक्टूबर १९५५	संख्या १

— आयुर्वेदगौरव से —

श्री सरयूप्रसाद भट्ट मधुमय, साहित्य विशारद मु० पो० भुआबिछिया जि० मंडला

(१)

आयुर्वेद तुम्हारा गौरव बढ़ता अहरह ।
डटे रहो पथ किये हुवे जो स्वीय वरण यह ॥
सम्मुख है पाथेय चरक, सुश्रुत का 'मधुमय'
तुम समर्थ सब भांति हरो दुखियों का रुज-भय
नई सभ्यता दीन है, दीन नया विज्ञान है ।
अपनी कृतिका स्वयम् ही, उसे न कुछभी भान है॥

(२)

वह बढ़ता है एटम की दुनिया को लेकर ।
वह बढ़ता है आविष्कार नित नूतन कर कर ॥
अपनी कृतियों में भूला वह आगे बढ़ कर ।
पर क्या फल पीछे है नहीं देखता मुड़ कर ?
उसकी स्थिति क्या अरे, पूर्व न कुछ आधार है?
केवल अनुमानिक सदा क्या उसमें कुछ सार है?

(३)

तुमको अपना पूर्व वही आदर्श बचाना ।
तुमको उसमें सब कुछ करना या मर जाना ।
बहु-प्रवाद-तूफान तुम्हें रहना है निर्भय ।
टकरा कर तुम महाशक्ति से हो उनका क्षय
सत्य न ढाँका जा सके 'मधुमय' यह भी सत्य है ।
अलम् यही कहना हमें, विहँस करो निज कृत्य है॥

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषम द्वौकालीन ज्वर (Kala-Azar)

लेखक—आचार्य डा० श्री श्यामदास प्रपन्नाश्रमी

पर्यायवाची शब्द—संस्कृत में आयुर्वेद संज्ञक नाम-विषमधात्वाश्रित ज्वर; आसाम प्रान्त में-काला ज्वर; हिंदी काल्पनिक शब्दार्थ काला+आजार काला का अर्थ=कृष्ण वर्ण, आजार का अर्थ बीमारी काली बीमारी—कालाज्वर है। अंग्रेजी में ब्लैक वाटर फीवर भी कहा जाता है। मलेरिया या दुर्जलज ज्वर की विकृत हालत पर ही यह काला-ज्वर उत्पन्न हो जाता है। धात्वाश्रित विषमज्वर का जो वर्णन महर्षि चरक ने अपनी संहिता में किया है उसी से इस काला ज्वर के निदान की पुष्टि हो जाती है। अधुना प्रचलित उक्त नामधेय शरीरस्थ धातु-क्षयकारी ज्वर का नामान्तर ही विषम द्वौका-लीन ज्वर होगा।

इस विषम ज्वर के साथ मलेरिया का जो निकटतम सामञ्जस्य हो सकता यह निर्विवाद सत्य है। फिर कतिपय लक्षणों से इन दोनों ज्वर का प्रभेद बताया जाता है वह भी वास्तविक रूप में विषमता की दृष्टि से महत्वपूर्ण ही हैं।

वर्तमान इतिहास—जब हम चिकित्सा विद्या के विद्यार्थी जीवन बिताने वाले थे उसी समय इसका व्यापक आविर्भाव और चिकित्सा सम्बन्धी गवेषणार्थ चर्चा हुआ था। हमें बताया गया था कि [illegible] के पूर्वी उपत्यका के जंगलों में [illegible] न-सहन के कारण या कार्यव-[illegible] करने वालों के द्वारा ही इस कालाज्वर [illegible] पहले बङ्गाल में आकर अपना अधिकार जमा लिया। गजटों के देखने से हमें यह पता चल गया था कि अन्यून १२५ साल से पहले जैसोर, नदीया, खुलना आदि कई जिलों पर मलेरिया राक्षसी की विनाशकारी लीला संघटित हुई थी और उसी से ही आबाल-वृद्ध, वनिता आदि सभी को उस लीला वैचित्र्यताकी अतीत कहानीके [illegible]क-नायिका रूप में "अकाल मृत्यु" को स्वीकार करना पड़ा। अतः उक्त प्राकृतिक अभिनय का रहस्यो-द्घाटन। बंगाल सरकार के जन-स्वा[illegible] के अनुसन्धान अधिकारियों द्वारा हुआ था। उनका कथन यह था कि १८२४-१८२५ ई० को ज्वराधि-कार सूत्र से सम्बद्ध होकर कम से कम जो ७।८ लाख की मृत्यु हुई थी उसका कारण यह कालाज्वर ही की करतूत थी। उक्त घटना के आठ वर्ष बाद इसी प्रकार का आक्रमण नदीया के जनपद पर हुआ। १८५७ ई० में हुगली और १८६२ ई० में वर्ध-मान जिला पर क्रमशः आक्रमण हुआ। काला-ज्वर का आक्रमण इतना व्यापक हो गया कि बंगाल प्रान्त को महाश्मशान के रूप में बदल देने के पश्चात् बिहार प्रान्त की ओर इसका दौरा हुआ और सन् १८८२ ई० में वहां इसका विस्तार हुआ। बङ्गाल के जनपदों को जन-मानव-शून्य करके इस कालाज्वर ने आसाम पर भी तेजी के साथ धावा बोल दिया। उस समय कालाज्वर का जो भीषण प्रहार करोड़ों मनुष्यों पर हुआ था, उसका न तो रोग-निदान ही हुआ और न इलाज, आसाम पर आक्रमण जारी होने के बाद ही रोग के सम्बन्ध में छानबीन होने लगी और नामकरण भी हो गया। आसाम में सर-कारी कार्यकर्त्ता पदाधिकारियों में यह रोग "सर-कारी बीमारी" के नाम से प्रचलित था। गारो पहाड़ पर १८६९ ई० में बहुत विकराल रूप इसका देखने में आया। डाक्टर नैपीयर की सन् १९२३ ई०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की रिपोर्ट से यह पता चलता है कि प्रायः पन्द्रह लाख से भी अधिक व्यक्ति इसके शिकार बने। मोटे तौर पर सन् १९२४ से १९४२ ई० तक बंगाल प्रान्त के विभिन्न जनपदों की मृत्यु संख्या करीब २५ लाख की थी।

पाश्चात्य मतानुसार "लिसमैन डानोवान" नामक कीटाणु के आक्रमण से यह ज्वर होता है। इसमें प्लीहा-यकृत की विवृद्धि और शरीर का रक्त एकदम काला बन जाता है। ज्वराक्रमण की प्राथमिक दशा में यह आन्त्रिक ज्वर या मलेरिया के अन्दर से ही गुजरती हुई हालत के आधार पर आ जाता है। इसके रोगी के चेहरा आदि की जांच से समझ लेना मुश्किल की बात है कि यह काला-ज्वर द्वारा आक्रान्त है। इसमें एक विशेष लक्षण तो यह है कि समय जितना ही अधिक व्यतीत होता जायगा रोगी के नाक और मसूढ़ों से रक्त निकलना शुरू हो जायगा। हृद्पिण्ड की विवृद्धि के साथ-साथ उसका धड़कन भी दिन प्रतिदिन बढ़ता ही जायगा।

रोजाना दो बार ज्वर का चढ़ना-उतरना और भूख की प्रबलता इसका विशिष्ट लक्षण है। रोग की प्राचीन दशा के साथ सर्वाङ्ग पर एक प्रकार उद्भेद भी निकलता रहता है। फिर सिर के बाल झड़ना और शरीरके चमड़ेका रूखा, काला और खुरदरा हो जाना। प्लीहा की आत्यन्तिक विवृद्धि तथा चौबीस घण्टे के अन्दर दो बार ज्वर का आना देख कर कालाज्वर का निदान सर्वांश में सत्य न होने पर भी आंशिक रूप से सही बैठता है। मलेरिया ज्वर के साथ निम्नलिखित कतिपय लक्षणों का प्रभेद है—

दुर्जलज ज्वर (मलेरिया)

(१) इसमें रक्तहीनता अधिक रहती है।

(२) रक्त स्थित श्वेत-कणों का परिमाण बहुत घट जाता है।

(३) प्लीहा और यकृत इन दोनों की विवृद्धि प्रायः समान हो जाती है।

(४) ज्वर का चढ़ना चौबीस घण्टे में एक बार ही होता है।

(५) वैज्ञानिक समीक्षण द्वारा मलेरिया के जीवाणु रोगी के रक्त में उपलब्ध होते हैं।

(६) पर्याय - निवारक ज्वरघ्न भेषज द्वारा इसका आक्रमण तथा प्रतिकार होना सम्भव होता है।

(७) शरीर के किसी भी स्थान पर उद्भेदादि का निर्गमन नहीं होता।

(८) क्षुधा व पाचन-शक्ति बहुत ही कम हो जाती है।

(९) जिह्वा का ऊपरी भाग अस्वच्छ मलावृत्त रहता है।

(१०) शरीर का पाण्डु वर्ण होना स्वाभाविक है।

(११) रोग के भोग की अन्तिम दशा पर शरीर में शोथोत्पन्न हो जाता है।

(१२) इसके भोग काल में श्वसनक आदि ज्वर किम्वा श्वास-संस्थान सम्बन्धी कोई भी पीड़ा नहीं होती है।

विषम द्वौकालीन ज्वर (काला ज्वर)

(१) रक्तहीनता बहुत कम ही प्रतीत होती है।

(२) रक्त स्थित श्वेत-कणों का परिमाण किसी भी हालत में न्यून नहीं रहता।

(३) प्लीहा और यकृत् दोनों ही बढ़ जाते हैं परन्तु यकृत् की अपेक्षा प्लीहा की विवृद्धि अत्यधिक

(४) रक्त परीक्षा से कालाज्वर के कीटाणु पाये जाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(५) चौबीस घण्टे के अन्दर इसका ज्वर दो बार चढ़ता और उतरता है।

(६) पर्याय-नाशक ज्वरघ्न भेषजों का कोई भी प्रभाव इस पर नहीं पड़ता।

(७) सर्व शरीर पर एक प्रकार के चर्मोद्भेदो का निकलना अवश्यम्भावी है।

(८) क्षुधा अत्यन्त प्रबल हो जाती है।

(९) जिह्वा का ऊपरी भाग स्वच्छ रहता है।

(१०) शरीर का चर्म कृष्णवर्ण हो जाता।

(११) रोग के भोगकाल में शीघ्रातिशीघ्र शोथ दिखाई देता है।

(१२) इसके भोगकाल में श्वास संस्थान के प्रायः सभी उपसर्ग उपस्थित हो सकते हैं।

रोगनिर्वाचन आधुनिक पद्धतियां—

(१) नैपीयर साहब द्वारा प्रचलित-फार्मेलीन टेस्ट अल्डिहायड रिएक्सन, फार्मेलीन अल्डिहायड नामक औषधि द्वारा रोगी के रक्त इसके अन्दर जो प्रतिक्रिया आ जाती है उसे ही फार्मेलीन टेस्ट कहा जाता है। इसकी विधि इस प्रकार है—काला ज्वर के सन्दिग्ध रोगी के बांह की सामनेवाली शिरा में से तीन सी, सी, रक्त शिरान्तर्गत विधिसे निकालकर एक छोटी सी "काच-नलिका" testt-ube के अन्दर भर कर मशीन पर चढ़ाकर घुमाना पड़ता है। मशीन न होने से केवल दश-पन्द्रह मिनट पर्यन्त काच नलिका को थोड़ी टेढ़ी करके [illegible], बाद में उस काच-नलिका को टेढ़ी हुई हालत में घुमाकर दूसरी एक स्वच्छ काच-नलिका के मुंह पर लगाकर धीरे धीरे ऐसे तरीके से पलटा जाय कि पहलेवाली नलिका के अन्दर से जलीय अंश ही आ गिरे। इसके बाद उस जलीय रस वाली नलिका को टेढ़ी हुई हालत में पकड़ उसके अन्दर दो-तीन बूंद (४० प्रतिशत) शक्ति-कृत फारमलीन डाल धीरे धीरे हिला कर ५ से ३० मिनट समय के लिए रख छोड़े। इसके बाद नलिका की बाहरी जांच से पता लगेगा कि उसके अन्दर वह जलीय रस गाढ़ा हो रहा है। जलीय रस का घनत्व और उसके समय की कमी वेशी के ऊपर ही काला ज्वर के आक्रमण जनित [illegible] और उसकी प्रबलता व अप्रबलता आदि के विषय अवगत होना सम्भव होता है। इसका तात्पर्य यह है कि जलीय रस जितने कम समय में गाढ़ा हो जाता है रोग भी उतना ही प्रबल समझना चाहिए।

(२) डाक्टर चोपरा द्वारा प्रचलित एण्टिमानी टेस्ट—यूरिया स्टिवामाइन का ४ प्रतिशत द्रव यदि रोगी के रक्त-रस Serum के साथ बूंद-बूंद से टपका कर मिलाया जाय तो काच-नलिका में जो तलछट जमेगा उसका स्वरूप होगा आसमानी रंगया काला धुँधलापन।

(३) रोगी की प्लीहा में से सूचीवेध विधि से रक्त निकाल कर उसकी रासायनिक परीक्षा करके उसमें लिस्मैन डानोवैन वाडीज कीटों का पता लग जाय तो समझना चाहिए कि यह रोग काला ज्वर ही है।

(४) छाती की हड्डी (Sturnum) छेद करके उसमें से रक्त निकालकर उसकी जांच करने का रिवाज आजकल असपतालों में चालू है। इससे कोई भी आपत्तिका सामना नहीं होता है। प्लीहा में से रक्त निकालना जिस प्रकार सहज है विधि भी उसी प्रकार निरापद है। रोग के प्रारम्भ काल में जब प्लीहा आदि की विवृद्धि मालूम करना मुश्किल हो जाता है और रक्त-रस का परीक्षण भी सन्तोष जनक नहीं होता तब यही एक ऐसा तरीका है जिससे काला ज्वर का निदान सही सूरत में बैठ सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(५) परीक्षा की गारंटी—देहात में कालाज्वर का सही निदान करनेवाले चिकित्सक बहुत ही कम होने के कारण आजकल एक राज्यादेश प्रचलित है कि विशुद्ध काच-नलिका में रक्त भरकर सरकारी ट्रापीकेल स्कूल आफ मेडीसन को भेजने पर वहां से परीक्षा का फलाफल जाना जा सकता है।

(६) रोगारोग्य का ज्ञापक लक्षण यह है कि रक्त रस में फारमलीन डालने से यह गाढ़ा नहीं होगा।

चिकित्सा—ज्वर शामक रूप में जय मंगल रस, बृहत ज्वर कुंजर पारीन्द्र, पुटपाक विषमज्वरान्तक लोह, बृहत् लोकनाथ रस, बृ० ज्वर चूड़ामणि, चन्द्र शेखर, रोहितकारिष्ट आदि शास्त्रीय औषधियों का प्रयोग विभिन्न अनुपानादि के साथ करना चाहिए। निर्गुण्डी, शेफालिका (हारसिंगार), पित्त पापड़ा अदरख आदि का स्वरस और मधु इनके विशिष्ट अनुपान हैं।

इसके अतिरिक्त प्रत्यह प्रातः समय दास्यादि क्वाथ (पाचन) का प्रयोग किया जाय तो विशेष लाभ होगा। कोई कोई रोगी की टांग पर "गूल" देना जो एक प्रकार लकड़ी के द्वारा घाव बनाता है पसन्द करती है। काला ज्वर में जब उदरामय का लक्षण आ जुटता तो रोगी को बलादि के अनुसार बृ० लवंगादि, महाराज नृपतिवल्लभ, महाशंखवटी आदि भूने हुए जीरे के साथ सहद से मिलाकर देनेसे भी लाभ होगा।

रक्त स्राव निवारणार्थ रक्तपित्तान्तक लौह काली दूब के रस मधु से देना चाहिए। पाण्डु व शोथ आ जाने से नवायस लौह गुडूची यानी गिलोय के रस और मधु से दिया जाए। अधिक गात्रताप न हो तो बृहत् ज्वरभैरव तैल किरातादि तैल की मालिश करनी चाहिए।

साधारणतः कालाज्वर के विविध उपसर्गों पर निम्नलिखित व्यवस्था-पत्र अनुभूत हैं :—

व्यवस्था पत्र नं १

नं० १ :-पुटपाक विषमज्वरान्तक लौह। प्रातः समय मात्रा—१ वटी,

अनुपान—हींग आधी रत्ती, पीपल चूर्ण छः रत्ती सैंधा नमक ३ रत्ती, मधु के सहित सेवनीय।

नं० २ :—सुदर्शन चूर्ण। सुवहः नौ बजे समय मात्रा आयुके अनुसार किम्वा ६ रत्ती; अनुपान—दारु हरिद्रा क्वाथ व मधु।

नं० ३ :—ज्वर चूड़ामणि। अपराह्न चार बजे मात्रा—१ वटी,

अनुपान—पानका अर्क व मधु।

ज्वर अधिक जीर्णता प्राप्त होने से और उसके साथ दाह अधिक रहनेसे निम्नलिखित व्यवस्था नुसार औषधियां देनी चाहिए।

व्यवस्था पत्र नं० २

नं० १ :—चन्दनादि लौह। प्रातः समय, मात्रा १ वटी, अनुपान—पित्तपापड़ा का स्वरस और मधु।

नं० २ :—भानु चूड़ामणि। मध्याह्न समय, मात्रा १ वटी, अनुपान निर्गुण्डी स्वरस व मधु सह सेव्य।

नं० ३ :—बृ० कस्तूरीभैरव। सन्ध्या समय, मात्रा—१ वटी, अनुपान—पटोल पत्र का स्वरस या क्वाथ व मधु।

मुखक्षत (Cancramoris) जो कि कालाज्वर का विशिष्ट लक्षण प्रायः ही रोगी को हो जाता है। ऐसी परिस्थिति पर बृ० खदिरादि वटिका ही मुंह में हमेशा रखी रहनेसे उसके प्रभाव से जिह्वा तथा मुह के क्षत तथा उससे होनेवाली यन्त्रणा शीघ्र ही ठीक हो जाती है मुखक्षत के कारण गलाप पड़ जाय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो निम्न लिखित व्यवस्था-पत्रके अनुसार औषधियां देनी चाहिए।

व्यवस्था पत्र नं० ३

नं० १ :—मकरध्वज आधा रत्ती+ माणिक्यरस १ रत्ती + नारदीय महालक्ष्मी विलास आधा रत्ती प्रातः समय, अनुपान—गुलंच (गिलोय) का सत्व और मधु।

नं० २ :—उदुम्बरसार। उष्ण जल के साथ मिला इसका कवल करना चाहिए।

पथ्यापथ्य—ज्वराधिक्यता पर यवमण्ड, वार्ली दूध, सूजी फीरोहा, और ज्वर की जीर्णता पर दलिया-मूंग की दाल, खिचड़ी आदि। कच्चा पपीता, लौकी, ढेंड़स, मूली, डुम्बूर (गूलर), पालक मेथी, बथुआ, बेतागु, कच्ची केले की फली आदि। जीरा, धनिया, कालीमिर्च आदि मसाले हितकर है पर नमक जितना कम खाया जाय उतना ही अच्छा है। रोगी यदि अधिक निर्बलता का अनुभव करे तो अन्नों का देना अनुचित होगा। इसे केवल शाकाहार व फलाहार व दुग्धाहार के ऊपर रखना ठीक होता है। इससे उसकी शारीरिकशुद्धि के साथ रक्त-शुद्धि और पाचन संस्थान की भी शुद्धि हो जायगी। आवश्यकतानुसार रोगी को सुखोष्ण जल द्वारा गात्र-मार्जन और वस्ति प्रयोग द्वारा अन्त्र शुद्धि करते रहना चाहिए।

रसांजन को रोसायनिक विश्लेषण द्वारा कतिपय योगों का निर्माण पाश्चात्य चिकित्सकों ने कर लिया है और यही अर्वाचीन चिकित्सा-क्षेत्र में काला ज्वरकी रामबाण सिद्धौषधि नाम से प्रसिद्धि पा चुकी हैं। यूरिमा स्टिवेसीन, स्टिव्यूरिया स्टिवोसान आदि पचासों पेटेण्ट स्पेसिफीक काला ज्वर के काल कहकर मशहूर हैं। इन काला ज्वर के कालों से जहां तक हो सके हमें स्वतन्त्र रहना चाहिए और इनसे विशेष परिचय पाठकों का न होना ही उचित है।

बाल-मुखपाक (Stomatitis)

ले० सोमदेव शर्मा सारस्वत, साहित्यायुर्वेदाचार्य ए० एम०एस०डी०एस०सी० ए चौक लखनऊ

बालकों को यह मुखपाक (मुख के छाले) रोग बहुत अधिकता से होता है। इस रोग में ओष्ठ, दन्तमूल, दांत, जीभ, तालु, गल्ला और गोल का प्रारम्भिक भाग यह मुख के साथ अंग, रोग की अवस्थानुसार थोड़े अथवा बहुत आक्रान्त हो जाते हैं, इसलिये सम्पूर्ण मुख में फैमनु के कारण ही यह मुखपाक रोग "सर्वसर[२]" नाम से भी विख्यात हुआ है। इस रोग के भेदों के विषय में प्राचीन अचार्यों के कई मत हैं। यथा—

१-(अ) मुखगलौष्ठादिसप्तस्थान व्यापकतयासर्वसरत्वं ज्ञेयम्।
(मधदनिदान-मधुकोश व्याख्या

(अ) सर्वसरा इति-ओष्ठगलताल्वादिसर्वस्थानव्यापकाः।
(अष्टाङ्गहृदय, उत्तर-३१ शिवदासकृत व्याख्या)

२-(क)-सर्वसरा मुखपाका उच्यन्ते। (माधवनिदान-मधुकोश व्याख्या)

(ख) सर्वस्मिन् मुखे ये भवन्ति ते सर्वसराः।
(सुश्रुतसंहिता निदान डल्हण कृत व्याख्या)

(ग) सर्व मुखेषु सरतीति सर्वसरः (शार्ङ्गधरसंहिता आढकमल्ली व्याख्या)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१ आचार्य बिदेह—

यह केवल एक रक्तज मुखपाक मानते हैं।

२ सुश्रुत मुनि

यह १ वातज, २-पित्तज, ३-कफज, ४-रक्तज के भेद से चार प्रकार का मुखपाक मानते हैं।

जैसे-सर्वसरास्तु वातपित्तकफशोणितनिमिताः।

(सुश्रुत निदान अ० १६)

३ आचार्य वाग्भट और शार्ङ्गधर—

ये दोनों आचार्य १-वातज, २-पित्तज, ३-कफज, ४-रक्तज, ५-सन्निपातज भेद से ५ प्रकार का मुखपाक मानते हैं।

४ आचार्य माधव आदि—

१-माधव आदि, १-वातज, २-पित्तज, ३-कफज भेद से तीन प्रकार का मुखपाक मानते हैं। वास्तव में यह उक्त तीन भेद, सुश्रुत मुनि के मत के आधार पर किये गये हैं, क्योंकि सुश्रुत मुनि ने पहिले चार भेद लिख कर आगे स्पष्ट रूप से निर्देश कर दिया है। कि रक्तज भेद स्वतन्त्र नहीं हैं। किन्तु पित्तज भेद के अन्तर्गत है। जैसे—

रक्तेन पित्तोदित्त एक एवकैश्चित्प्रदिष्टो मुखपाकसंज्ञः।

लक्षण— (सुश्रुत, निदान अ० १६)

वातज मुखपाक—वायु के प्रकोप से होनेवाले इस वातज मुखपाक के छालों में सूई चुभने के समान पीड़ा हुआ करती है।

पित्तज मुखपाक—पित्त के छाले लाल रंग के होते हैं इनमें दाह हुआ करता है। यह लाल मुखपाक (लाल छाले) के नाम से प्रसिद्ध है।

कफज मुखपाक—कफ के छालें में पीड़ा नहीं होती है परन्तु खुजली होती है और इनका रंग, जीभ आदि की श्लैष्मिक कला के रंग के समान होता है जो प्रायः सफेद होता है यह श्वेत मुख पाक या सफेद छाले के नाम से प्रसिद्ध है।

एलोपैथिकमत—

पाश्चात्य चिकित्सक तीन प्रकार का मुखपाक मानते हैं। यथा—

(१) साधारण मुखपाक (Simple stomatitis)

(२) श्वेतमुखपाक (Thrush or Parasitic Stomatitis)

(३) भीषण मुखपाक (Cancrumolis or Gangrene Stomatitis)

सूचना-इन तीनों भेदों के अतिरिक्त पारद जनित मुखपाक (Mercurial Stomatitis) एक भेद और माना जाता है परन्तु वह अधिकतर फिरंगोपदंश के रोगियों को होता है। केवल बच्चों को नहीं होता है, इसलिये यहाँ उसका वर्णन हमने नहीं किया है।

तुलनात्मक विवेचन।

पौरस्त्य तथा पाश्चात्य चिकित्सकों के लक्षणों पर विचार करके तुलना करने से निम्नलिखित समानता प्रतीत होती है—

१-साधारण मुखपाक (Simple Stomatitis	१-पित्तज तथा रक्तज मुखपाक (लाल छाले)
२-श्वेतमुखपाक (Thrush)	२-कफज मुखपाक (सफेद छाले)
३-भीषण मुखपाक (Cancrumoris or Gangrene Stomatitis)	३-सन्निपातज मुखपाक वातज मुखपाक भी इसके अन्तर्गत है।

विशद विवेचन और चिकित्सा—

पित्तज या रक्तज मुखपाक (साधारण मुखपाक (Simple Stomatitis) के निम्नलिखित दो भेद हो सकते हैं—

(अ)—दाँत निकलने से पहले होनेवाला मुखपाक जिनके बालकों का बाल्य पोषण ठीक न होने के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण कोष्ठबद्धता आदि अन्य उदर विकार होते रहते हैं, उनके दाँत निकलने के समय मुखपाक हो जाता है, ऐसे बच्चे बहुत कृश और कमजोर होते हैं। (अ) दाँत निकलने के पश्चात् होनेवाला मुखपाक दाँतों की स्वच्छता न रहने के कारण जिन बच्चों के दातों में कृमि पड़ जाते हैं तब उन कृमियों से भी मुखपाक हो जाता है।

लक्षण—

मुखपाक में मुख की भीतरी झिल्ली और मसूढ़ों में शोथ हो जाता है, पीड़ा रहती है। और मोटे व्रण हो जाते हैं। तीव्र मुखपाक की दशा में कपोल तल जिह्वा, तालु आदि सब स्थानों पर शोथ, छाले और व्रण हो जाते हैं, मुख से लाला स्राव होता रहता है। थूक बहुत आता है और कभी कभी ज्वर भी हो जाता है।

चिकित्सा।

१-यदि रोग का कारण कोष्ठबद्धता होतो उसकी चिकित्सा के प्रारम्भ में और फिर आगे भी आवश्यकता पड़ने पर एरण्ड तेल (Caster oil) या किसी दूसरे विरेचन से पेट साफ करके अग्नि कुमार रस या अष्टांग लवण का व्यवहार कोष्ठ-बद्धता (कब्ज) नष्ट करने के लिये प्रतिदिन करना चाहिये तथा मुख में खदिरादि वटी रखनी चाहिये। भोजन लघु और सुपाच्य देना चाहिये। छाले शान्त होने पर भी जठराग्निदीपन चिकित्सा करते रहना चाहिये जिससे कोष्ठबद्धता न होने पावें।

२-यदि दाँतों में मैल जमने एवं कृमि पड़ने के कारण मुखपाक रोग हुआ हो तो दाँतों और मुख को साफ करें तथा भोजन में सावधानी रखें और तरल पदार्थ खावें तथा भोजन करने के पश्चात्—

(अ) पञ्चवल्कल अथवा त्रिफला के क्वाथ में शीतल होने पर शहद मिला कुल्ला कर मुख को साफ करें।

(अः) टंकणक्षार को शहद में मिला कर छालों पर लगावें अथवा बरोग्लिसरीन (Borogly crine) दिन में तीन बार लगावें।

३-यदि व्रण हो गये हो तो—

(क) चमेली के पत्ते, मुनक्का, जवासा, दारु, हल्दी, हरड़, बहेड़ा, आँमला इन सबको कूट कर क्वाथ करें और शीतल होने पर शहद मिला कर—

(ख) इरिमेदादि तेल से कुल्ला करे और उसको छालों पर भी लगावे।

(ग) फिटकरी और खैर की छाल और बबूल (कीकर) की छाल के क्वाथ का गण्डूष धारण करे।

(घ) ८० ग्रेन पोटासियम् क्लोरास को एक पाव पानी में डालकर कुल्ले करावे तथा १० ग्रेन की मात्रा में दिन में ३ या ४ बार खिलावें।

(ङ) व्रणों पर ४ या ६ बार कास्टिक लगाना चाहिए।

(च) क्रोमिक एसिड (Cromic Acid) का ५ लोशन भी लगाया जाता है।

२- कफज या श्वेत मुखपाक Thrush or Para sitic Stomatitis) का लक्षण, यह रोग सदैव बोतलों के द्वारा दूध पीनेवाले बच्चों को विशेषतया हुआ करता है। दूध पीने के पश्चात् बोतल को साफ न करनेसे उसमें विशेष प्रकार के कीटाणु प्रविष्ट हो जाते हैं, जो बढ़कर मुखपाक रोग को उत्पन्न कर देते हैं। मुख में सर्व प्रथम जीभ पर

❀ औषधि के क्वाथ आदि तरल पदार्थों को मुखमें भर कर धारण करें कि वह मुख में घूम सके यह गण्डूष कहलाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर कपोलों के अन्दर तालु और कण्ठ में भी श्वेत वर्ण के छोटे छोटे छाले पड़ते हैं जो धीरे धीरे बढ़कर मिल जाते हैं, जिनसे सम्पूर्ण मुख शोथग्रस्त ज्ञात होता है परन्तु इसमें साधारण मुखपाक की भांति लालास्राव नहीं होता।

चिकित्सा

दूध पिलानेवाली बोतल को सदैव स्वच्छ रखना चाहिये। मुख पाक रोग हो जाने पर सोडियम सल्फाइट सोल्यूशन (Sodium Sulfhite Solution) १ ड्राम लेकर १ औंस पानी में घोल उससे मुख को स्वच्छ करें तथा बालक के साधारण स्वास्थ्य का ध्यान रखें।

१—कोष्ठबद्धता होने पर प्रारम्भ में तथा बाद में भी आवश्यकता पड़ने पर एरण्ड तेल देकर रेचन कराना चाहिये।

२—अतिसार हो तो शृंग्यादि चूर्ण देना चाहिए तथा भोजन करने के पश्चात् लवणभास्कर चूर्ण देना चाहिये।

३—शरीर दुर्बल होने पर मण्डूरवटक दें।

४—२॥ तोला शहद में १० रत्ती तक टंकणक्षार मिला कर छालों पर लगावें।

सूचना यदि बच्चा गाय बकरी आदि का दूध पीता हो तो दूध में चूना का पानी (लाइमवाटर Lime water) थोड़ा सा मिलाकर देना चाहिये। यदि बच्चा केवल माताका दूध पीता हो तो दूध पीने के पहिले और पीछे माता के स्तनों को भली भांति धो देना चाहिये।

सन्निपात अथवा भीषण मुखपाक (Gangrenous Stamatitis)

कारण—

इस रोग का यथार्थ कारण अबतक भलीभांति ज्ञात नहीं हुआ है। जिन बच्चों का पालन पोषण ठीक नहीं होता तथा स्वास्थ्य और स्वच्छता के नियमों पर ध्यान नहीं दिया जाता, उन बच्चों को दो से पांच वर्ष तक की अवस्था में यह रोग अधिक हुआ करता है। रोमान्तिका (Measles) खसरा तथा आन्त्रिक ज्वर आदि बालकपन के छूतदार रोगों के कुफल स्वरूप में यह रोग उत्पन्न हुआ करता है।

लक्षण—

यह रोग प्रायः ३ से ६ वर्ष तक के बालकों में होता है। इस रोग का प्रारम्भ धीरे २ होता है। मसूरिका लाल ज्वर Scarlate Finer तथा कुकुर-खांसी (हूपिंग कफ Whoopeng Cnugh) आदि रोगों के पश्चात् मुख में कपोलों के भीतरी पृष्ठ पर डिप्थीरिया रोगकी भांति एक छोटा सा व्रण बन जाता है। जिसके बीच में मृत तन्तु होते हैं और उसके चारों ओर साधारण प्रदाह होता है तथा उसमें से सड़ा हुआ भाग पृथक् हो जाता है। यह व्रण शीघ्रता से आगे पीछे तथा अन्दर से बाहर की ओर बढ़ने लगता है, यहां तक कि ७ से १० दिन में कपोल के आरपार हो जाता है और कभी कभी संड़ायद बढ़कर बाहर नेत्रों तक और मुख के अन्दर जीभ, दांत, जबड़ा, कपोल, की हड्डी तक पहुँच कर फैल जाता है। जब कपोल के भीतर एक बड़ा व्रण दृष्टिगोचर होता है तब उसकी चिकित्सा की चिन्ता होती है। कपोल अधिक कठोर हो जाता है तथा अन्य शारीरिक लक्षण भी प्रकट हो जाते हैं। यद्यपि ज्वर साधारण होता है परन्तु वह सांघातिक रूप धारण कर लेता है। ज्वर दुर्बलता आदि लक्षण बहुत तीव्र हो जाते हैं, नाड़ी बहुत तीव्र चलती है, कभी कभी अतिसार तथा फुफ्फुस प्रदाह भी हो जाता है और रोगी ७ से १० दिन में मर जाता है। स्वास्थ्य में व्रण २ या ४ दिन में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वयं भरने लगता है तथा ज्वर आदि शारीरिक लक्षण कम होने लगते हैं और रोगी १० दिन में अच्छा हो जाता है।

एलोपैथिक — चिकित्सा।

सड़ायँद (सड़ने की क्रिया) रोकनेके लिने पोटासियम परमेगनेण्ट से मुख के व्रणयुक्त भाग को शुद्ध करें और गर्म सेक तथा पुल्टिस के प्रयोग से सड़ा भाग निकाल दें। रोग होते ही उस स्थान पर ❀ कार्बोलिक एसिड Carbolic Acid या स्ट्रोंग नाइट्रिक एसिड (Strong Nitric Acid अथवा स्ट्रोंग सिलवर सोल्यूसन (Strong Siluer Solution) लगावें। कार्बोलिक एसिड का प्रयोग अधिक उत्तम माना जाता है। नाइट्रिक एसिड लगाने के कुछ मिनट बाद स्ट्रोंग सोल्यूशन आफ कार्बोनेट आफ सोडा से वह स्थान धो देना चाहिये। सड़ा भाग निकल जाने पर टिंचर फैरी पर क्लोराइड लगावें रोगी पूर्ण विश्राम करे तथा खाने के लिये दूध तथा अन्य पोषक तरल पदार्थ ले और बल बढ़ाने के लिये औषधि के रूप में टिंचर फैरी पर क्लोराइड अथवा किसी आयुर्वेदिक लोहघटित प्रयोग का सेवन करें तो शीघ्र लाभ होता है।

❀ उपर्युक्त औषधियाँ लगाते समय सावधानी रखें कि कहीं रोग रहित स्थान की जगह स्वस्थ श्लैष्मिककला न जल जाय इसके लिये तैल लगावें और पोटासियम कार्बोनेट का गाढ़ा सोल्यूशन लगावें इससे विकृति दूर हो जायगी। मुख को शुद्ध करने के लिये फार्मानिस्ट की टिकिया चार चार घण्टे पश्चात् व्यवहार में लावें।

आयुर्वेदिक चिकित्सा

१ त्रिफला, पाठा, मुनक्का और चमेली के पत्तों का क्वाथ करें तथा शहद मिलाकर मुख धोने के लिये प्रयोग करें।

२ भोजन के उपरान्त 'कुठेरादि गण' का प्रयोग करें।

३ वातज मुखपाक में छोटी पीपल सेंधानमक तथा इलायची के चूर्ण से प्रतिसारण (घर्षण) करें, अथवा वायु नाशक पदार्थों से सिद्ध तैल का कवल धारण करें और नस्य लें।

४ पित्तज, रक्तज और कफज तथा सन्निपातज मुखपाक में इन दोषों के नाशक द्रव्यों का प्रयोग करें।

———

प्रतिश्याय (CORYZA)

ले०—कविराज गौरीशङ्कर श्रीवास्तव आयुर्वेदाचार्य

साधारण भाषा में जिस व्याधि को जुकाम कहते हैं उसका अनुभव प्रायः सभी व्यक्तियों को होता है। छींकें आना, माथे में बोझ की अनुभूति हाथ पैरों में दर्द, सर्दी खांसी यही जुकाम की अलामातें हैं। प्रायः हर ऋतु परिवर्तन के समय यह व्याधि लोगों को होती देखी जाती है और तीन-चार दिन के बाद नाक से श्लेष्मा झड़ जाने के बाद साधारणतया ठीक भी हो जाती है।

जब यह जुकाम बिगड़ जाता है तो इसे नाकड़ा प्रतिश्याय कहते हैं। अंग्रेजी में इसका नाम (Coryza) है। इस बिगड़े हुए जुकाम में प्रारम्भिक जुकाम के प्रायः सभी लक्षण मौजूद रहते हैं और जीर्ण पड़ कर दुखदाई हो जाते हैं। प्रस्तुत लेख में इसी जीर्णव्याधि पर विचार करेंगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण

ऋतु परिवर्तन, पानी में भींगना, ठण्ढी हवा का लगना, पसीने का एकाएक रुक जाना, बहुत ठण्ढे या गरम स्थान में जाना आदि कारणों से साधारण-तया यह व्याधि जन्म लेती है।

किन्तु इसके और भी बहुत से कारण हैं।

(१) वेगावरोधः--मलमूत्रादि वेगों को रोकना।
(२) अजीर्ण।
(३) अतिसंभाषण।
(४) अति क्रोध।
(५) ऋतुचर्या का उल्लंघन।
(६) निरन्तर जागरण।
(७) सोकर उठ कर पानी पीना।
(८) अत्यन्त मैथुन।
(९) शीतोपचार का सेवन।
(१०) प्रमेहादि दोषों से।

उक्त कारणों से जो कफ मस्तक में जम जाता है वह वायु के प्रकोप से प्रतिश्याय को उत्पन्न करता है। कभी-कभी तीनों दोषों के कुपित होने से भी यह नज़ला पैदा हो जाता है।

पूर्वरूप

(१) छींकों का अत्यन्त आना।
(२) मस्तक में भारीपन।
(३) अङ्गों में जड़ता और अङ्गों का टूटना।
(४) रोमाञ्च।
(५) नाक से धूएँ के सदृश वायु निकलना।
(६) तालू का चटकना।
(७) नाक और मुख से श्राव।

प्रकार और लक्षण

वात, पित्त और कफ दोषों की प्रधानता से तीन प्रकार के प्रतिश्याय कहे गये हैं।

वातज प्रतिश्याय में गला, तालू और ओंठ सूखते हैं तथा स्वर नष्ट होकर गला लग जाता है।

पित्तज प्रतिश्याय में नाक और मुह से पीला-पन लिये हुए श्राव बहे, प्यास बहुत लगे और नाक से आग जैसी लपटें निकलती मालूम पड़ती हैं।

कफज प्रतिश्याय में श्राव पतला, कफयुक्त सफेद, नेत्रों पर बोझ और जड़ता; मस्तक में भारीपन; तालू, ओंठ और माथे में खुजली सी मचती है।

त्रिदोषज प्रतिश्याय में प्रतिश्याय उत्पन्न होकर अकस्मात् सूख जाता है।

कभी कभी प्रतिश्याय में श्राव के साथ रुधिर निकलने लगता है और आँखें लाल वर्ण की हो जाती हैं साथ ही मुख से दुर्गन्ध निकलती है।

यह प्रतिश्याय जब दुष्ट हो जाता है तो नीचे लिखे लक्षण वर्तमान पाये जाते हैं:--

(१) नाक का बार-बार खुजलाना और रुक जाना।

(२) नाक को गन्ध का ज्ञान नहीं होना।

(३) मुँह और नाक से दुर्गन्धित श्वास निकलना।

ऐसा प्रतिश्याय बहुधा कष्टसाध्य अथवा असाध्य होता है।

चिकित्सा

एलोपैथिक--इसमें साधारणतया e-टी कैटाईल वेक्सीन प्रयोगमें लाई जाती है। Vitamin C और कोरीजोल का मौखिक प्रयोग किया जाता है।

आयुर्वेदिक--(१) व्योषादि वटी--सोंठ, मिर्च, पीपल, चीता, तालीसपत्र, तिंतिड़ीक, अमलवेत, चव्य और जीरा इनको समान भाग लेकर इनका चतुर्थांश।

इलायची तेजपात और दालचीनी ले इन सब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का चूर्ण बना कर पुराने गुड़ में गोलियां बना ले। प्रतिश्याय, पीनस, श्वास और खाँसी की विश्वस्त दवा है।

(२) लवांदि बटी

मृगशृङ्ग भस्म १ रत्ती। पुराने गुड़ या मधु के साथ।

(३) रस कपूर १ से २ रत्ती हलुवा के साथ।

(४) सूँघने के लिये पोटली।

(अ) यूक्लिप्टिस आयल या विक्स का ट्यूब।

(ब) वायविडंग, सेंधा नमक, हींग, गूगल और मैनसिल का चूर्ण पोटली बनाकर सूँघिये।

(२) इलायची, दालचीनी और तेजपात का चूर्ण पोटली में रख कर सूँघिये।

(३) अकेली कलोंजी को ही पीस कर पोटली बनाकर सूँघिये।

(४) तिल में घी मिला कर—इलायची, दालचीनी और तेजपात को डालकर हवन करिये और उस कोठे में प्रतिश्याय के रोगी को रखिये।

सन्निपात (आंत्रिक) ज्वर (Typhoid Fever)

लेखक वैद्य श्री धीरेन्द्र मोहन भट्ट शास्त्री जी०ए०एम०एस्० बतौली, सरगुजा (म०प्र०)

ज्वर शब्द से सिर्फ ताप वृद्धि मात्र का बोध होता है। जो ज्वर जन्म और मरण का कारण होता है एवं सम मात्रा में रह कर शरीर का उपकार करता है। और वही ज्वर मिथ्याहार विहार के करने से आपाद मस्तक तक भीषण रूप में बढ़कर मृत्यु का कारण होता है। ज्वर होने के पूर्व उष्मा की वृद्धि होती है। जिससे रस दूषित होकर स्वेद मल मूत्रादि का ह्रास कर देता है। एवं प्यास अधिक लगती है। तथा नाड़ी की गति तीव्र हो जाती है। ज्वर-यति शरीराणीति ज्वरः ज्वरयति संतापयति इति चक्रपाणिः नान्ये व्याधयस्तथाविधा दारुणाः सोपद्रवादुश्चिकित्स्याश्च यथायमिति। ससर्वरोगाधिपतिः नानातिर्यग्योनिषु वहुविधै शब्दै रभिधीयते। सर्वे प्राणभृतश्च सज्वरा एवं जायन्ते सज्वरा एव म्रियन्ते इत्यादि।

ज्वरः प्रधानो रोगाणां त्वचि संताप लक्षणः।
देहेन्द्रियमनस्तापी निजश्चागन्तुकश्च सः॥

माधवाचार्य ने ज्वर की निरुक्ति इस प्रकार की है—

स्वेदावरोधः संतापः सर्वांग ग्रहणं तथा।
युगपद्यत्ररोगे च स ज्वरो व्यपदिश्यते॥

अर्थात् सभी प्रकार के ज्वरों में संताप वृद्धि प्राकृत पित्त का कर्म है। जो अग्नि रूप पित्त शरीर के धातुओंको जला कर उष्मा रूपी संताप को उत्पन्न करता है। यथा—

दर्शनं पक्तिरुष्माच क्षुत्तृष्णादेहमार्दवम्।
प्रभा प्रसादो मेधाश्च पित्तकर्माविकारजम्॥

९७.४ से ९८ फ्रा० तक स्वाभाविक संताप माना गया है। इससे अधिक हो जाने पर प्राणी ज्वरी कहलाता है। चरक ने निम्न रूप में स्पष्ट किया है।

नास्ति पित्तकृते उष्मा-न चोष्माहृते ज्वरे"

और भी देहेन्द्रियमनस्तापी त्वचि संताप लक्षणः।

आयुर्वेद के संहिता ग्रन्थ में वर्णित सन्निपात ज्वरों में आंत्रिक ज्वर का लक्षण कुछ कुछ मिलता जुलता है। लेकिन आन्त्रिक ज्वर या अंत्रज्वर करके कहीं संज्ञा नहीं मिलती है। जो ग्रन्थ ५०० वर्ष के इधर बने हैं। उनमें ज्वर करके एक ज्वर लिखा गया है जिसका लक्षण प्रायः आंत्रिक ज्वर से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिलता है। आंत्रिक ज्वर संज्ञा महामहोपाध्याय जी ने दी है। जो एनेट्रिक का दूसरा शब्द है। इस से ज्ञात होता है कि प्राचीन समय में यह ज्वर भारत वर्ष में नहीं होता था। इतिहास के देखने से पता चलता है कि भारत में सब से पहले १५० वर्ष पूर्व पश्चिमी पंजाब में इस रोग का आक्रमण हुआ और धीरे धीरे सम्पूर्ण देश में फैलता गया। यद्यपि यह सम्पूर्ण ऋतुओं में पाया जाता है। फिर भी ग्रीष्म वर्षा और शरद में अधिकतर होता है।

देहेन्द्रिय मनस्ताप लक्षण युक्त ज्वरको आंत्रिक ज्वर कहते हैं। जिसे प्राचीन आचार्यों के द्वारा वर्णित सन्निपात की विशेष अवस्था का द्योतक कहते हैं। महर्षि चरक ने १३ प्रकार तथा भालुकी ने दो-दो दोषों की अधिकता से सन्निपात को बताया है। कई विद्वानों के मत से वर्तमान संतत ज्वर को भी आंत्रिक ज्वर करके मानता है। क्योंकि आचार्यों ने दो तरहसे संतत ज्वर को बताया है। यथाः—

संतत ज्वरस्य सप्तमे दिवसे, सप्ताहं वा दशाहं वा द्वादशाहमथापिवा। संतत्या योऽविसर्गी स्यात् सन्ततः स निगद्यते। अपरंच सुख साध्यः प्रकीर्तितः। चरक-प्रायशः सन्निपातेन दृष्टः पञ्चविधो ज्वरः सन्निपाते तु यो भूयात् सदोषः परिकीर्तितः।

संतत ज्वर में वातादि दोष दूषित होकर धातुओं के साथ मल मूत्रादि को भी दूषित करता है। तथा सशुध्या वाप्यशुध्यावा मता शुद्ध्यति सर्वशः इत्यादि वाक्यों से दोष को शुद्ध होने में २५ दिन एवं इससे भी अधिक समय लगता है।

सन्निपात ज्वर का लक्षण—

क्षणे दाहः क्षणे शीतमस्थिसंधिशिरोरूजा।
सास्रावे कलुषे रक्ते निर्भुग्ने चापि लोचने॥
सस्वनौ सरुजौ कर्णौ कण्ठः शूकैरिवावृतः।
तन्द्रामोहः प्रलापश्च कासः श्वासोऽरुचि भ्रमः॥
परिदग्धा-खर स्पर्शा जिह्वा स्रस्तङ्गता परम्।
ष्ठीवनं रक्तपित्तस्य कफेनोन्मिश्रितस्य च॥
शिरसो लोठनं तृष्णा निद्रानाशो हृदि व्यथा।
स्वेदमूत्रपुरीषाणां चिरादर्शनमल्पशः॥
कृशत्वं नातिगात्राणां प्रततं कंठकूजनम्।
कोठानां श्यावरक्तानां मण्डलानांच दर्शनम्॥
मूकत्वं श्रोतसां पाको गुरुत्वमुदरस्य च।
चिरात् पाकश्च दोषाणां सन्निपातज्वराकृतिः॥

असाध्य लक्षणः—दोषे विवद्धे नष्टेऽग्नौ सर्व-
सम्पूर्ण लक्षणः।
सन्निपात ज्वरोऽसाध्यः कृच्छ्रसाध्यस्ततोऽन्यथा॥
उपद्रवः—सन्निपात ज्वरस्यान्ते कर्णमूलःसुदारुणः।
शोथःसंजायते तेन कश्चिदेव प्रमुच्यते॥

(माधव निदान)

सुश्रुत ने सन्निपात ज्वर का लक्षण निम्न रूप से किया हैः—

निद्रानाशो भ्रमः श्वासस्तन्द्रा सुप्तांगाऽरुचिः।
तृष्णा मोहोमदः स्तम्भोदाहः शीतं हृदिव्यथा॥
पक्तिश्चिरेणदोषाणामुन्मादः श्यावदंतताः॥ रसनाप-
रूषा कृष्णा सन्धिमूर्द्धास्थिजा रुजः। निर्भुग्ने कलुषे
नेत्रे कर्णौशब्द रुजान्वितौ। प्रलापः स्रोतसांपाकः
कूजनं चेतनाच्युतिः॥ स्वेदमूत्रपुरीषाणामल्पशः
सुचिरात्स्मृतिः। सर्वजे सर्वलिंगानि विशेषं चाथ मे
शृणु॥

विशेषलक्षणः—नात्युष्णशीतोऽल्पसंज्ञो भ्रांतपेक्षी
हतस्वरः। खरजिह्वः शुष्ककण्ठः स्वेदविण्मूत्रवर्जितः॥
साक्षनिर्भुग्नमे हृदयो भक्तद्वेषीहतप्रभः। श्वासोन्ने-
पतितः शेते फलायोपद्रवायुतः॥ सन्निपात ज्वरं-
कृच्छ्रमसाध्यमपरे विदुः। निन्द्रोपेतमभिन्यासं क्षीण
मेनं हतौजसम्॥ संन्यासगात्रं संन्यासेविद्यात्ल-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वालकेज्वरे। ओजो विस्रंसतेतस्य पितानिल समुच्छ्र यात्॥ सगात्रस्तंभ शीताभ्यां शयने स्यादचेतनः। अपि जाग्रत्स्वपं जंतुस्तंद्रालुश्च प्रलापवान्॥ संश्लिष्ट-रोमा स्रस्तांगोमन्द संताप वेदनः ओजो निरोधनं तस्य जानीयात्कुशलोभिषक्॥

(सु० उ० अ० ३९)

कफकी अधिकता से अभिन्यासात्मक सन्निपात और वात पित्त की अधिकता से एवं श्लेष्म के भाग (साम्यधातु) ओज को नष्ट करते हैं। उसे हतौजस सन्निपात कहते हैं।

अग्नि सोमात्मक संसार होने के कारण सन्निपात ज्वर के मुख्यतया दो ही भेद किये गये हैं।

अर्थात् सन्निपात ज्वर तीनों दोषों (वात, पित्त कफ) के दूषित सम्मिलित से होता है। और जिनमें जिस दोष की प्रधानता होती है उसमें उन्हीं दोषों के लक्षण दृष्टिगोचर प्रतीत होते हैं। अतः उसी की उष्णता समझनी चाहिये। इसलिये भगवान् धन्वंतरि, वाग्भट्ट एवं माधवाचार्य ने अलग अलग उल्लेख नहीं किया है। परन्तु महर्षि चरक ने तेरह प्रकार का उल्लेख किया है। जो निम्न है।

वातोल्वण, पित्तोल्वण, श्लेष्मोल्वण, वातश्लेष्मोल्वण, श्लेष्मपित्तोल्वण, द्विदोषोल्वण, वाताधिक-मध्यपित्तहीन श्लेष्मा, वात मध्य पित्ताधिक हीन कफ, वात हीन पित्त वृद्ध कफ मध्य वाताधिक हीन पित्त मध्य कफ, वात मध्य पित्तहीन कफादिक एवं हीन मध्यपित्त कफादिक। इस तरह १३ का वर्णन आया है।

लेख विस्तार भय के कारण उपरोक्त १३ का लक्षण पृथक पृथक न देकर आंत्रिक ज्वर के आधुनिक कारणों पर ध्यान आकृष्ट करना आवश्यक है। जो नीचे दिये जा रहे है।

इस रोग का कारण एक प्रकार का जीवाणु है जो प्रायः अधिक रास्ता चलने से अधिक उपवास करने से तथा दुर्गन्ध के समीप रहने वालों में शरीर से रोगक्षमता शक्ति के घट जाने से जीवाणु उनके शरीर पर आक्रमण करके रोग का शिकार बनता है। इस जीवाणु के आतों तक पहुँचने का मुख्य कारण दूषित अंत्र ही बताया जाता है। यह रोगी के आंत्रिक व्रण मूत्राशय, पित्ताशय, प्लीहा एवं रक्तादि में विद्यमान रहता है। जिससे रोगी के मल मूत्र तथा यदा कदा स्वेद में उपस्थित रहता है। आंत्रिक ज्वर से मुक्त होने के बाद भी कई दिनों तक रोगी के मल, मूत्रादि में यह जीवाणु देखा गया है। निम्न प्रकार से जीवाणु आहार द्रव्यों में जाकर रोग का कारण बनता है।

(१) रोगी के मल मूत्रादि से स्पर्श करने के बाद हाथ को साफ किये बिना भोजन आदि करने से।

(२) मक्खी द्वारा। (३) रोगी के वस्त्र द्वारा। (४) दूषित मल नदियों द्वारा जाकर सम्पूर्ण जल को दूषित कर देता है। (मल का शुष्क कण भी सम्भवतः खाद्य पदार्थों तक पहुँच सकता है।

भेदः—जीवाणुओं के भेद होने के कारण इसके भी निम्न भेद किये गये हैं :

(१) आन्त्रिक ज्वर (Typhoidfever)
(२) लघ्वान्तरिक ज्वर (Paratyphoidfever)
(३) ,, ,, (,, ,, ,,) (क)
(४) ,, ,, (,, ,, ,,) (ग)
(५) ,, ,, (,, ,, ,,) (घ)

सम्प्राप्ति—यह निर्विवाद सिद्ध है कि इनके जीवाणु प्रायः मुख द्वारा आतों में जाकर उनको अपना केन्द्र बनाते हैं। उसके बाद समीपस्थ लसीका ग्रन्थियों को शोथमय कर देते हैं। यह शोथ धीरे धीरे बढ़कर दूसरे सप्ताह में कपा (अलसक) का रूप धारण करता है। और कण के बढ़ने से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समीपस्थ रक्तवाहिनी के फट जाने से रक्तश्राव होने लगता है। इस समय यदि आमदोष उपस्थित रहे तो दोष बढ़ कर लक्षण भी तीव्र हो जाते है। जीवाणु बृद्धि करके रक्त तक पहुँचता है। जिसकी मृत्यु से एक प्रकार का विष पैदा होता है। जिसका बाह्य रूप ज्वर होता है।

पूर्वरूपः—शिरःशूल, अरुचि, मलविवन्धता, मन्द ज्वर, आलस्यता, धूधलापन, इत्यादि लक्षण १ सप्ताह तक बने रहते है।

लक्षण—(प्रथम सप्ताह) ज्वर सहित पूर्वरूप प्रायः ८ बजे दिन में स्पष्ट हो जाता है। एवं प्रतिदिन ज्वर का ताप सीढ़ी के समान बढ़ता जाता है। इस सप्ताह तक सन्ध्या समय प्रायः शारीरिक तापमान १०२ फा० तक रहता है। और सुबह से १०० फा० तक रहता है। शिरशूल, अंगदर्द, अनुत्साह, ज्वराधिक्य नाड़ी की गति मन्द, जिह्वा मलिन, जिह्वा ङ्कुरता, कोष्ठबद्धता, या अतिसार, पीड़ा, प्लीहावृद्धि, यकृत बृद्धि, आदि लक्षण के अतिरिक्त गात्र (विशेषतः उदर और जंघा) में रक्तवर्ण का गोलाकार चिह्न देखा जाता है जो गौरांग पुरुषों में अधिक साफ मालूम होता है। सबसे विचित्र तो यह है कि अतिसार रहने पर भी आध्मान बना रहता है।

द्वितीय सप्ताहः—इस सप्ताह तक ज्वर अपने सीमा (१०४ और १०५ फा० फा०) तक पहुंच कर स्थिर रहता है। प्रातःकालीन समय तापमान १०२ फा० से कम नहीं होता। पूर्व सप्ताह का लक्षण मौजूद रहता है। तन्द्रा प्रलाप, प्रमूढावस्था, दुर्बलता, कास, उरुशोष आध्मान, आदि लक्षण विशेष रूपसे पाये जाते हैं। स्पर्श-परीक्षा से जिह्वा खर स्पर्श मालूम होती है और वह किनारे से लाल अंकुर युक्त रहती है। शारीरिक तापमान ८ बजे दिन से बढ़कर ८-१० बजे रात्रि तक अपनी सीमा-तक पहुंचकर पुनः प्रातः घटने लगता है। इसके विष के कारण रक्तचाप कम होनेसे हृदयमें शिथिलता अनुभव होती है। रक्त श्राव होने का भय भी रहता है। विष एवं दोष तीव्रता के कारण मृत्यु भी होते देखी गयी है।

तृतीय सप्ताहः—यदि दोष का पाचन हो चुका है तब इस सप्ताह में क्रमशः तापमान घटने लगता है। ज्वर के साथ साथ उपद्रव सब भी घटने लगते है। २२ दिन में रोगी प्रायः विगतज्वर हो जाता है। साम में ताप क्रम कुछ बढ़ता है। जो २८ वें दिन तक ठीक हो जाता है। यह देखा जाता है कि इस समय विज्वर होने पर भी मिथ्या आहार विहारादि से पुनः दोष बढ़कर क्रमशः आरोहक्रम से ज्वर बढ़ता है। और ४२ वें दिन मनुष्य विज्वर होता है। किसी किसी में ६५ दिन भी लग जाते है। अतः पथ्यादि व्यवस्था काफी सावधानी रखनी चाहिए।

योग रत्नाकर आदि ग्रन्थों में मंथर ज्वर के लक्षण आये है जो लघ्वान्तरिक ज्वर से मिलते जुलते है। आधुनिकों के मतानुसार दोनों में निम्न भेद बताया गया है।

विभेदक लक्षण :—

मंथर ज्वर

(१) यह भारत, मिश्र आदि देशों में अधिक होता है।

(२) प्रायः १५ वर्षकी आयु तक विशेष होता है।

(३) एक बार होने के बाद पुनः हो सकता है।

(४) आँख मीचे तंद्रावस्था में रोगी प्रायः पड़ा रहता है।

(५) प्रायः मल बंधता रहता है। और ज्वर के अन्त में मल मलीन संयुक्त निकलता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(६) गर्दन पर छोटे २ दाने निकल आते हैं जो इसके आराम होने का प्रायः चिन्ह है।

(७) यकृत वृद्धि।

आंत्रिक ज्वर

(१) यह यूरोप में अधिक होता है।

(२) प्रायः १५ वर्ष से २५ वर्ष की आयुमें विशेष होता है।

(३) एक बार होने के बाद शरीर में प्रति विष उत्पन्न होता है जिससे आंत्रिक ज्वर पुनः नहीं होता।

(४) निश्चित नहीं कि रोगी आँख मूंदे पड़ा रहे।

(५) अतिसार आटोप और रक्तश्राव प्रायः होते है।

(६) लाल चकत्ते निकलते हैं जो उदर और वक्षस्थल पर दबाने से समाप्त हो जाते हैं। ये चकत्ते सात से १२ वें दिन के अन्दर स्पष्ट होते है।

(७) प्लीहावृद्धि।

सन्निपात ज्वर की चिकित्साः—सन्निपात ज्वर की चिकित्सा पर काफी सतर्क होकर विचार करना होगा। और तब फिर इसकी चिकित्सा में पूर्वोक्त लंघनादि के पश्चात् इन पर ध्यान देते हुए चिकित्सक चिकित्सा शुरू करें।

वर्धनेनैक दोषस्य क्षपणेनोच्छितस्य वा।
कफस्थानानुपूर्व्या वा सन्निपातज्वरं जयेत्॥
(च० चि० अ० ३३)

याने एक दोष को बढ़ाकर और बढ़े हुए दोषों को घटाकर अथवा श्लेष्म स्थान के अनुक्रम से चिकित्सा करें और दोष जब वृद्ध, वृद्धतर, वृद्धतम हो या अत्युल्वण हो तो उस अवस्था में वृद्ध दोष को बढ़ाते हुए वृद्धतर और वृद्धतम दोषको घटाना भी आवश्यक है। यथा कफ वृद्ध हो वात पित्त क्रमशः वृद्धतर या वृद्धतम हो तो मधुर द्रव्य दें। इसी तरह जब कफ वृद्ध हो और वातपित्त दोनों वृद्धतर हो तब भी मधुर द्रव्यों का उपयोग करें। क्योंकि मधुर रस यदि कफ वर्द्धक है तो वात पित्तको क्षीण करने वाला है। यदि तीनों दोष बराबर हैं तो पहले कफ स्थान की चिकित्सा करें। कफस्थान से कफ का भी ग्रहण हो जाता है। अतः स्थानीय दोष की अपेक्षा स्थान मुख्य है। जैसा कि स्थानं जयेद्धि पूर्वम्, लंघन आदि के द्वारा ही आमाशय एवं कफ की चिकित्सा करें। क्योंकि दोष आमाशय को दूषित कर ज्वर उत्पन्न करता है और फिर उसके बाद क्रमशः पित्त एवं वात की चिकित्सा करें।

सन्निपात ज्वरे पूर्वं कुर्यादामकफापहम्।
पश्चात् श्लेष्मणि संक्षीणे शमयेत्पित्तमारुतौ॥
(भेल संहिता)

ज्वर के अतिरिक्त सन्निपातों में यह क्रम नहीं होता है। यही प्रायः पहले वात और पित्त एवं बाद में कफ की चिकित्सा करते हैं। क्योंकि—"वातस्यानुजयेत्पित्तँ पित्तस्यानुजयेत्कफम्"।

एकोल्वण सन्निपातों में सनद्ध एक दोष को क्रम करके एवं जो क्षीण है उसे अल्प वृद्धि क्रमशः करना चाहिये।

"न्यूनैकदोषसंवृद्धि रेक वृद्धजयोऽपि।
सन्निपातेषु कर्त्तव्यः सन्निपात व शेनक॥"

कई टीकाकारों ने पश्चात् पद लोपी समास करके कफ स्थान का अर्थ पित्त करते हैं। (कफस्थान) (आमाशय) रूप है। स्थान जिसका अर्थात् पित्त) यहीं पर एक स्थानपद का लोप हो चुका है। उनके कथनानुसार पूर्व पित्त की चिकित्सा करनी चाहिए। जिसके प्रमाण स्वरूप ये सुश्रुत की निम्न पंक्ति को देते हैं—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

.शमयेत्पित्तमेवादौ ज्वरेषु समवायिषु।
दुर्निवारतरं तद्धि ज्वरार्तेषु विशेषतः॥

चक्रपाणि के अनुसार सुश्रुत का यह वाक्य जीर्ण त्रिदोष ज्वर के लिए समझना चाहिए परन्तु यदि नव ज्वर हो तो पहले कफ स्थान की ही चिकित्सा होनी चाहिए।

अनेक विद्वान् वर्धनेनैक दोषस्य में वर्धन का अर्थ छेदन करते हैं। छेदन का अभिप्राय संशोधन से है। अर्थात् एक एक दोषों का नाश संशोधन द्वारा करना चाहिए। यदि किसी कारण से संशोधन न हो सके तो प्रवृद्ध दोष का संशमन करें।

वृद्ध दोष सन्निपातों की भांति क्षीण दोष सन्निपात भी तेरह प्रकार का होता है। परन्तु यह ज्वर का आरम्भक न होकर केवल अपने लक्षणों के त्याग रूप विकार को करता है। जैसा कि वचन भी है। क्षीणः जहति लिङ्गं स्वम्,, जिसकी चिकित्सा का उल्लेख करना आवश्यक नहीं है। एक सन्निपात वह होता है जिनमें अलग अलग दोषों की युगपत् वृद्धि और क्षय होता है। जो १२ प्रकार के होते हैं। इनमें से घट में सम दोष की चिकित्सा की जरूरत नहीं है। शेष एक क्षीण और वृद्धतर रह जाता है। इसमें से वृद्ध दोष को उस औषध द्वारा कम करना चाहिए जिससे साथ साथ क्षीण दोष का क्रमशः उपचय हो क्षपणेनोच्छितस्य च द्वारा ही पहले इनकी चिकित्सा कर दी है इसी तरह शेष ६ जिनमें दो वृद्ध एक क्षीण और एक वृद्ध हो तो क्षीण है उनमें वृद्ध दोष वा दोषों को घटाते हुए चिकित्सा की जाती है। और उसके साथ साथ क्षीण दोषों को क्रमशः प्रकृति में लाना होता है।

क्षीण दोष सन्निपात एवं युगपत् वृद्ध क्षय कृत सन्निपातों की चिकित्सा का प्रकरण नहीं रहनेसे चिकित्सा का जिक्र नहीं किया जाता है। क्योंकि इन २५ सन्निपातों का ज्वरोपादक रूप में लेना व्यर्थ है। क्योंकि क्षीण और सम ज्वर के उत्पादक नहीं होते हैं। परन्तु वृद्ध दोष वा दोषों के साथ विशेष लक्षण हो सकते हैं। पर वहीं पर वृद्ध दोष वा दोषों की चिकित्सासे ही लाभ हो जाता है। उनमें विशेषतर एक दोषज द्विदोषज ज्वर चिकित्सा ही की जाती है।

सन्निपात ज्वर के अन्त में (कर्णमूल में) दारूण शोथ हो जाता है। जो असाध्य है फिर भी उसकी चिकित्सा का उल्लेख किया जाता है।

ज्वर के अन्त में कर्णमूल में शोथ हो जाने पर शीघ्र ही जलैकापातनादि द्वारा रक्तावसेचन, घृत पान, कफपित्त नाशक प्रदेह, नस्य और कवल धारणा द्वारा उसकी चिकित्सा करे। यथा—

"रक्तावसेचनैः शीघ्रं सर्पिःपानैश्च तं जयेत्।
प्रदेहैः कफपित्तघ्नैर्नावनैः कवल ग्रहैः॥

च० चि० अ ३

"अशांशं यत्र दोषाणां विवक्तुं नैव शक्नुयात् क्रियां साधारणीं तत्र विदधातु चिकित्सकः" अतः ज्वर के सामान्य चिकित्सा सूत्र को ध्यान देते हुए रोगी के दोषों पर अशांश कल्पना का विचार करते हुए पाचन कषाय का व्यवहार सर्व प्रथम रोगी को कराना चाहिए। यथापाचन कषाय :—

सोंठ, देवदारू, रोहिष, कंटकारी द्रव आदिको पाचन कषाय के लिए व्यवहार करें।

ज्वर में जल व्यवस्था पर भी ध्यान देना है जो प्रायः उष्ण जल दिया जाता है। यथा :—ज्वरितस्य कायसमुत्थानदेशकालानभिसमीक्ष्य पाचनार्थं पानीयमुष्णं प्रयच्छन्ति भिषजः ज्वरो ह्यामाशयसमुत्थः प्रायो भेषजानि चामाशय समुत्थानां विकाराणां पाचन शमनाय तर्पण समर्थानि भवन्ति पाचनार्थं पानीयमुष्णं तस्मादेव ज्वरितेभ्यः प्रयच्छन्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भिषजो भूयिष्ठम् (च० वि० अ० ३) रक्तातिसार यदि हो तो ह्रीवेरादि क्वाथ और मुक्तापिष्टि का व्यवहार करावें। प्रलापावस्था को दूर करने के लिए तगरादि क्वाथ या वातचिन्तामणि रस, प्रवालभस्म, आदि का व्यवहार करावे। मलावरोध में देव दार्व्यादि लेप और क्वाथ का प्रयोग करावे। हृदय शूल और शिरःशूल में प्रवाल भस्म शृंगभस्म गोदन्ती भस्म, मौक्तिक भस्म, शिरःशूलादि रस देना ठीक है। मूत्रकृच्छ्र नाशार्थ क्षारपर्पटी का प्रयोग अच्छा रहता है सिद्धप्राणेश्वर रस उष्णोदक से सेवन कराने पर ताप को कम करता है। बृ० कस्तूरी भैरव रस, सन्निपातभैरव रस आदि का व्यवहार व्युक्ति संगत है।

लंघनम्—त्रिरात्रं पंचरात्रं वा दशरात्रमथापि वा।
लंघनं सन्निपातेषु कुर्य्यादारोग्यदर्शनात् ॥
दोषाणामेव सा शक्तिर्लंघने या सहिष्णुता।
नहि दोषक्षये कश्चित् सहते लंघनादिकम् ॥
(भै० र० व०)

स्वेद—न स्वेदव्यतिरेकेण सन्निपातः प्रशाम्यति।
तस्मान्मुहुर्मुहुः कार्यं स्वेदनं सन्निपातिनाम् ॥
सन्निपाते जलमयो नराणां विग्रहो भवेत्।
विना वह्न्युपचारेण कस्तं शोषयितुं क्षमः ॥
प्रयोगा वहवः संति सविषा निर्विषा अपि।
वह्न्युष्माणं विना प्रायो न वीर्य्यं दर्शयन्ति ते ॥
प्रतिक्रिया विधावेवं यस्य संज्ञा न जायते।
पादतले ललाटे वा दहेल्लौह शलाकया ॥
लौहित्ये नेत्रयोर्वान्तौ प्रलापे मूर्द्धचालने।
न स्वेदः शुभदो ज्ञेयस्तत्र शीतक्रियाहिता ॥
(भै० र० व०)

आंत्रिक ज्वर का सामान्य चिकित्सा क्रम ऊपर बताया जा चुका है। जिसमें चिकित्सा क्रम रोगीकी अवस्थानुसार परिवर्त्तन और परिवर्द्धन कर सकते हैं। तृष्णा को दूर करने के लिये षडङ्ग पानीय में मुस्तपर्पट कोशीर चन्दनोदीच्यनागरैः। शृतशीतं जलं दद्यान्नि पासा ज्वर शान्तयै—अर्थात् नागरमोथा पित्तपापड़ा, खस, चन्दन, सुगन्धवाला एवं सोंठ को उबाल कर ठण्ढा करके तृष्णा और ज्वर शान्ति के लिये दे। नीचे पथ्य व्यवस्था का उल्लेख कर फिर आधुनिक एलोपैथिक चिकित्सा पर विचार करेंगे।

पथ्य व्यवस्थाः—उष्णोदक, जवासा, कटेरी, तथा गोखुला के क्वाथ से पकाई हुई पेया अथवा दशमूल से सिद्ध किया हुआ मंड का व्यवहार करें और अग्नि के बलाबल के अनुसार लाव, तीतर, बटेर, वतक, खरगोश आदि का मांस दे। पाश्चात्य चिकित्सक भी दो तरह से इसकी चिकित्सा करते हैं। प्रथम रोग प्रतिषेधात्मक और दूसरी रोगोन्मूलनात्मक।

(१) **प्रतिषेधात्मक**—रोग का तत्काल निर्णय करने के बाद रोगी को किसी अस्पताल में अलग कर देना, और किसी कारण से अस्पताल तक न जा सके तो मकान में ही उसका पूर्ण तरह से पृथक् करना आवश्यक हैं। कमरे की आवश्यक वस्तुओं को हटा देना चाहिए रोगी को मकान के एक स्वच्छ हवादार और अन्य भागों से दूर स्थित कोठरी में कर देना चाहिए। रोगी के वमन मल, श्लेष्मा और वस्त्र इत्यादि की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। क्योंकि रोग के विस्तार में ये मुख्य कारण हैं। अतः वमन मल इत्यादि के लिए अलग अलग वर्त्तन न दें। जिसमें रसकर्पूर या कारबोलिक अम्ल का विलेपन रहे। जिन वस्त्रों का प्रयोग रोगी करता हो उन्हें २४ या ४८ घण्टे तक विसंक्रात्मक द्रव्यों में भींगों कर उबलते हुए जल में धो डालें। रोगी के बर्तनों को एवं उसकी कोठरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और समीपस्थ क्षेत्रों को बराबर साफ रखना चाहिए।

रोग को रोकने के लिये महाशय राइड और सेपिल द्वारा आविष्कृत सूचिका प्रयोग किया जाता है। जिसमें प्रथम वार O. 5 c. c. दूसरी वार 1 c. c. देते हैं।

(२) **रोगोन्मूलनात्मक**—रोगी के रक्त को निकाल कर विडाल परीक्षा द्वारा (Boetiustyph osus) नामक रोग के जीवाणु का दर्शन किया जाता है। परन्तु इस परीक्षा के द्वारा रोग आक्रमण के करीब दो सप्ताह बाद जीवाणु का दर्शन होता है।

आज से तीन चार साल पूर्व (Chcoro Mycetion) नाम की दवा के आविष्कार से आधुनिक चिकित्सकों के लिये इसकी चिकित्सा आसान हो गई है। रोग निर्णय के पश्चात् क्लोरोमाइसेटिन १ कैपसूल के रूप में ६ मात्रा नित्य व्यवहार करने से दो तीन दिन में ज्वर उतर जाता है। और रोगी अपने को आराम अनुभव करने लगता है। अस्तु नीचें कुछ ऐलोपैथिक दवाओं का नाम दिया जाता है जो अवस्थानुसार व्यवहार में लायी जाती है।

१—टर्पैराटाइन (Turpentine) १० बूंद कैप्सूल २ या ३ मात्रा जो रक्त अवरोधक है।

२—पलक इपीकार (PueviPecocco) १२ ग्रेन की दो मात्रा यह अनिद्रा एवं प्रलाप नाशक है।

३—सिनेभन आयल (Cinnabhon oil) ३ से ५ बूंद जल (Aoua) १ औंस। } ४, ५ मात्रायह आध्मान को दूर करता है।

सोडा बाई कार्व (Soda Bycorb) ५ ग्रेन।
लाइफ पोटेशाइ (Liorpotassii) १० बून्द
सैफिरिनि (Sacchorini) १ ग्रेन
जल (Aoua) १ औंस
ओलिव आयल (Olive oil) २० बून्द। } दिन में ३, ४ मात्रा के सेवन मल ढीला होकर निकलता है।

रक्त मिश्रित प्रवाहिकाको दूर करने के लिए निम्न औषधों का व्यवहार किया जाता है।

१—पिल्फुला प्लमवाई-(Pillulaphumbicomopll) २-४ ग्रेन १ गोली ३ मात्रा कमओ वीपाई

२—विस्म व्यकार्व (Bismuthcorb) ५ ग्रेन।
कैलशियम लैक्टेट (Calocivmlactate) १० ग्रेन।
स्पि० क्लोरोफार्म (Spt. Chloroform) १० ग्रेन।
सोडा बाई कार्व (Soda Bicorb) ५ ग्रेन।
जल (Aoua) १ औंस। } ३ मात्रा दिन में

१—टेनिक एसिड (TenicAcid) १० ग्रेन।
स्पि० पेरीटाइन (Spt. Tur. Pentine) १० बूंद।
टि० क्लोरोफार्म को (Tr. Chloroformco) १५ बूंद।
टि० ओपियम (Tr. Opium) १० बुद।
आयल मैथपिप (Oil Meth pip) ४ बूंद।
जल (Aoua) १ औंस। } इसकी ६ मात्रा बनावें इसके सेवन से रक्तस्राव दूर होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रक्तस्राव रोध के लिए Morphineinj. की सूची ¼ ग्रेन की मात्रा में (त्वचागत व्यवहार करना चाहिए। इसके अतिरिक्त कैलसियम लैक्टेरी गोली और विटामिन सीके की १ गोली मिलाकर ३-४ मात्रा देने से रक्तस्राव दूर होता है।

हृदयावसाद को दूर करने के लिये स्ट्रिकनीन सूची के रूप में त्वचागत व्यवहार किया जाता है। इसके अतिरिक्त ग्लुकोज, कैलशियम विथ विटामिन सी० और एराटीटा इफाइड सी रस का सूची के रूप में चिकित्सक अवस्थानुसार व्यवहार करते हैं।

ब्रह्मचर्य का महत्त्व

लेखक—पं० बालेश्वर पाण्डेय 'धर्मरत्न' फतुहाँ (पटना)

आरोग्य की कुञ्जी ब्रह्मचर्य है। जो इसके तरफ ध्यान नहीं देकर अपनी विषयेन्द्रियों के दास बने रहते हैं वह इस कुञ्जी को खो बैठते हैं और तब फिर नाना प्रकार के रोग आदि खूखार लुटेरे उनके स्वास्थ्य रूपी अमूल्य धन को मनमाने ढङ्ग से लूटते हैं। जिस प्रकार से संग्रह किये हुए धन के खजाने में ताला नहीं लगाने से लम्पट उसे लूट कर सञ्चय कर्त्ता के परिश्रम को धूल में मिला देते हैं उसी प्रकार स्वच्छ हवा, निर्मल जल, पौष्टिक पदार्थ, कसरत आदि के द्वारा बड़े परिश्रम से प्राप्त किया हुआ स्वास्थ्य भी ब्रह्मचर्य रूपी ताले के अभाव से बहुत जल्दी नष्ट हो जाता है। ब्रह्मचर्य क्या है ? साधारणतया पुरुष-स्त्री के परस्पर को न भोगने को ही ब्रह्मचर्य कहते हैं। "न भोगने" का अर्थ यह है कि एक दूसरे के विषय की इच्छा से स्पर्श न करे। इतना ही नहीं इस विषय का मन से विचार भी न करें; और इन विचारों का स्वप्न भी न देखें। जो गुप्त शक्ति कुदरत ने हमें दी है उसे दबा कर शरीर में संग्रह कर उसका उपयोग आरोग्यता बढ़ाने में करें।

विषयेच्छा होने पर लोग कामान्ध हो जाते हैं। कामान्ध हुए लोग पागल जैसे देखे जाते हैं। यह विषय ही ऐसा है। एक क्षणिक (विषय भोग) के लिये हम अधिक अपना बल एक पल भर में खो बैठते हैं। सुवह हमारा शरीर भारी हो जाता है। हमें चैन नहीं पड़ता, मन ठिकाने नहीं रहता। इस स्थिति को सुधारने के लिये हम दूध के काढ़े पीते हैं। धातु पौष्टिक चूर्ण की फंक्कियां लेते हैं। इसी तरह समय व्यतीत होता रहता है। और ज्यों ज्यों काल बीतता जाता है त्यों-त्यों हमारा शरीर, हमारी बुद्धि क्षीण होती जाती है और बुढ़ापा में हमारी बुद्धि रफूचक्कर हो जाती है। वास्तव में ऐसा न होना चाहिये कि बुढ़ापे में बुद्धि मन्द होने के वजाय तेज होनी चाहिये। हमारी स्थिति ऐसी ही होनी चाहिये कि इस देह से सम्पादन किया हुआ अनुभव हमारे और दूसरों के उपयोग हो जाय। जो ब्रह्मचर्य का पालन करता है उसकी स्थिति ऐसी ही होती है। उसे मृत्यु से डर नहीं होता वह मुस्कराता हुआ इस देह को छोड़ कर परलोक चला जाता है। ऐसे ही लोगों ने ब्रह्मचर्य रूपी आरोग्य की रक्षा की है। कहा भी गया है:—

मृत्युव्याधिजरानाशो पीयूषं परमौषधम्॥
ब्रह्मचर्य्यं महद्रत्नम् सत्यमेव वदाम्यहम्॥१॥
शान्ति कान्ति स्मृतिं ज्ञानमारोग्यं चपि संततिम्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

य इच्छति महद्धर्म्मं ब्रह्मचर्य्यं चरेदिह ॥२॥

अर्थात !—मृत्यु, रोग तथा बुढ़ापा नाशक, अमृत के सदृश्य उत्तम औषध तथा उपाय ब्रह्मचर्य है। यह मैं सत्य ही कहता हूँ ॥१॥

शांति, तेज, स्मृति, ज्ञान, आरोग्यता और संतान की जो अभिलाषा रखता है उसे उत्तम धर्म ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना चाहिये।

हमारा शरीर एक महादेश है और उस महादेश का राजा वीर्य है। वीर्यकी रक्षा करना एक महादेश की रक्षा करना है। परन्तु वह रक्षा ब्रह्मचर्य के बदौलत ही होती है और ब्रह्मचर्य से बल की प्राप्ति होती है। ब्रह्मचर्य्य पर बल आश्रित है। कहा भी गया है—

बलेन पृथ्वी तिष्ठति, बलेनान्तरिक्षम्।
वीर्य मेव बलम् बलमेव वीर्यम् ॥

अर्थात् बल से पृथ्वी ठहर रही है, आकाश भी बल से ठहरा हुआ है, वीर्य ही बल है और बल ही वीर्य है।

ब्रह्मचर्य्य के द्वारा अपने शरीर को बलवान बनाना मनुष्य के लिये उतना ही आवश्यक है—जितना भोजन करना और रात्रि में सोना है। जीवन संग्राम में विजयी होने के लिये मनुष्य को ब्रह्मचर्य्य का पालन करना चाहिये। मनुष्य का शरीर आरम्भ से ही लड़ाई का मैदान है। दुनियां भर के रोग उसके शरीर को खाने के लिये मुंह बाये बैठे हैं क्रोध, काम आदि दुश्मन सदैव विनाश करने के फिक्र में रहते हैं—चोरी, बेईमानी, व्यभिचार आदि के बाजार उसे सदैव विनाश करने के लिये खुले रहते है।

इस युद्ध भूमि में वेही सैनिक विजयी सिद्ध होंगे, जिनकी भुजाओं में ताकत और मस्तिष्क में बुद्धि हो। मनुष्य की ताकत और बुद्धि है उसका वीर्य। बल, तेज, साहस, पौरुष, शौर्य ही वीर्य है। और इससे शरीर बलवान होता है।

जिस मनुष्य के पास वीर्य धन होता है वह हमेशा सफल होता है। विजय लक्ष्मी उसका आलिंगन करती रहती हैं। दर्शन, स्मरण, केलि आदि मैथुन से बच करके मन, वचन, कर्म से वीर्य की रक्षा करने का नाम ही ब्रह्मचर्य्य है। ब्रह्मचर्य्य से मतलब है समस्त मैथुन से बचते हुए शरीर और मन को पवित्र तथा बलवान् बनाना।

ब्रह्मचर्य्य पालन करनेवाले मनुष्य के शरीरमें सदैव यौवन रहता है, और जिन मनुष्यों ने वीर्य्य रक्षा नहीं की है, उनका शरीर हमेशा मन्दाग्नि, प्रमेह, आदि खराब रोगों का निवास स्थान बन जाता है—यौवन तो उनके पास आता भी नहींहै—जवानी के पूर्व बुढ़ापा आ टपकता है, चेहरे पर झुर्रिया पड़ जाती है और आंखे खड्ढे में घुस जाती है। मक्खन निकाले हुए दूध और रस निकाले हुए गन्ने का जो मूल्य होता है वही कीमत वीर्य से खाली शरीर की होती है।

ब्रह्मचर्य्य हीन शरीर की तुलना हम एक राष्ट्र से कर सकते हैं। जिस देश में कोई राजा नहीं होता कोई शासक सभा नहीं होती—उस राष्ट्र में अनेकों उपद्रव होते हैं। और अन्त में कोई बलवान देश उस पर अपना आधिपत्य कायम कर लेता है। उसी प्रकार ब्रह्मचर्य्य के नष्ट होने पर कोई बलवान रोग पकड़ कर भोज्य पदार्थ के स्थान पर ही उपस्थित कर देता है। किसी ने लिखा है :—

ब्रह्मचर्य्येण तपसा राजा राष्ट्रं विरक्षति।

ब्रह्मचर्य्य के बल से राजा राष्ट्र की रक्षा करता है; और वीर्य रक्षा से शरीर रूपी देश व्यवस्थित तथा स्वस्थ रहता है उसके ऊपर कायरता और रोगों का आक्रमण नहीं होता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानव शरीर की सर्वश्रेष्ठ वस्तु ब्रह्मचर्य्य है-यही उसका तेज और अस्तित्व है। जिस मनुष्य के पास ब्रह्मचर्य्य का बल है, उसके संसार में असंम्भव नाम की कोई चीज नहीं है। वह स्वयं ही अकेले ब्रह्मचर्य्य की शक्ति से सारी दुनियां को हिला सकता है और असम्भव को सम्भव बना सकता है। मृत्यु पर विजय पाने वाले महावीर भीष्म का सबसे बड़ा बल उनका अखण्ड ब्रह्मचर्य्य था। इसी प्रकार लिखा भी गया है :—

"ब्रह्मचर्य्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत।
इन्द्रोहि ब्रह्मचर्य्येण देवेभ्यश्च स्वराभरत॥"

ब्रह्मचर्य्य के पालन से देवताओं ने मृत्यु को जीतकर अमरपद प्राप्त कर लिया और ब्रह्मचर्य्य के बल से ही इन्द्र देवताओं तेज प्रदान करता है। स्वामी शङ्कराचार्य ने ब्रह्मचर्य्य के बल से ही वैदिक ज्ञान का पुनरुद्धार किया था। स्वामी दयानन्द ने ब्रह्मचर्य्य से ही हिन्दू जाति को नष्ट होने से बचाया था। परमहंस रामकृष्ण स्त्री के पास रहते हुए भी ब्रह्मचर्य्य व्रत को पालन करके अपना नाम अमर कर गये।

प्राचीन भारत वर्ष में प्रायः नरनारी ब्रह्मचर्य्यका पालन करते थे। और इसी शक्ति के अनुसार इन्होंने संसार के आदि गुरु का स्थान प्राप्त किया गया था।

भगवान शंकर ने भी कहा है—

"ब्रह्मचर्य्य सर्वोत्तम तप है अखण्ड ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करनेवाला मनुष्य देवता के तुल्य है, उसे मनुष्य नहीं समझो।"

योगी राम कृष्ण का मत है—

"ब्रह्मचर्य्य और अहिंसा शरीर की तपस्या है।"

महात्मा टालस्टाय लिख चुके हैं :—

समाज में सुख शान्ति की वृद्धि के लिये स्त्री पुरुष दोनों को ब्रह्मचर्य्य के नियमों का पालन करना चाहिये। इससे मानव जीवन का विकास होता है और समाज की भित्ति बलवती होती है।

इस प्रकार ब्रह्मचर्य्य की रक्षा करनेवाले अपने जीवन से देश का भला करते है और स्वयं जीवन का आनन्द लेते है और पूर्णायु के सुख भोगकर मुक्ति को प्राप्त हो जाते है।

अब मैं समस्त भारतवासियों से प्रार्थना करता हूं कि वे लोग ब्रह्मचर्य्य के पालन करके अपने देश और वंश की सदैव रक्षा करें। और विद्यार्थियों को भी इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। वर्तमान काल में कुछ भी ब्रह्मचर्य्य का महत्व दीख नहीं पड़ रहा है!

(ब्रह्मचर्य्य रक्षा के आधारपर)

'आयुर्वेद—चिकित्सक'

(जनता का व्यवहारोपयोगी, चुनिन्दा सामग्रीवाला मासिक-पत्र)

यह प्रति मास नियमित प्रकाशित होता है। प्रतिवर्ष दो-विशेषांक (१ छोटा, १ बड़ा) देता है। इस वर्ष ढाई-सौ पृष्ठ के बड़े-डिमाई साइज में पुरुष रोग-चिकित्साङ्क महत्वपूर्ण विशेषाङ्क भेंट करेंगे। वार्षिक मूल्य ४॥), एक अङ्क का ।), नमूना के लिये पाँच आने भेजिये। तत्काल फलप्रद प्रयोग (चारों भाग का मूल्य ८) पृष्ठ संख्या प्रायः ५५५, प्रयोग संख्या १ हजार से अधिक।

—वैद्य पं० चन्द्रशेखर जैन शास्त्री। लाखा भवन, पुरानी चरहाई, जबलपुर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"नवाकर्षण"

विश्वकी समस्त चिकित्साओं का आधार वेद है। (वैद्युतिक चिकित्सा (Electrt Aurvedic)

ले० डाक्टर भवानी प्रसाद गुप्त "उत्साही" रजिस्टर्ड लक्ष्मण मेडिकल हाल, रसड़ा (बलिया)

यह नवीन प्रणाली नहीं हैं और न तो नया आविष्कार ही है। जिस प्रकार विदेशी डाक्टरों ने जल चिकित्सा का नाम (Hydro Pathic) और सूर्य रश्मि चिकित्सा का क्रोमो पैथिक (Cromo Pothic) नाम रख अपना आविष्कार बना लिया उसी प्रकार शल्य शालाक्य क्रिया का सर्जरी (Surgery) नाम रख अपना लिया। परन्तु शस्त्र चिकित्सा के उपकरण के आकार प्रकार में अन्तर नहीं आया। हमसे ही सीख कर हमारे ही साधनों को लेकर आप प्रमाणित हो गये। और वैधानिक रूप देकर इस शस्त्र क्रिया से अलग कर दिया। स्वतन्त्रता के संग्राम में जो वलि चढ़ाई गई वह निरर्थक बन गयी। जिस आशा को लेकर यंत्रणाएं सहन की वह आशाएं निर्मूल बन गयी। अन्ततोगत्वा हमारी आजादी गुलामी से भी बदतर बन गयी। हमारी संस्कृति सभ्यता और वेद के मन्त्र गड़ेरिये के गीत बन गये। जो कुछ भी किया जा रहा है वह विदेश का अनुकरण मात्र है। हमारी पसीने की कमाई निरर्थक पानी की तरह बही जाती है। जब हम उचित आवाज उठाते हैं तब अवैधानिक कह कर प्रतिबंध लगा दिया जाता है। जनता की आवाज मानों स्टीमर का भोपा है। वास्तविकता यह है कि गणतन्त्र केवल ओट लेने का विधान मात्र है। और हम पहले दर्जे के बेवकूफ है, यह जानते हुए कि हम से ओट लेकर हम पर ही निर्दयता पूर्ण आघात होता हैं। फिर भी नाना प्रलोभनों में आकर उन्हीं को वोट देते है। यदि यही दशा हमारी रही तो निसन्देह हमारा देश स्वर्ग से नर्क बन जायेगा। समय रहते हम में चेतना आनी चाहिये अन्यथा शेष विभूतियाँ भी समाप्त हो जाएगी।

आज हम स्वतन्त्र हैं पर हमारी सांस्कृतिक सभ्यता स्वतन्त्र नहीं है। हमारे देश में विदेशी मसिनरियां निर्भय होकर हमें लाखों की तादाद में विधर्मी बना रही हैं। हम शेर की औलाद होकर गीदड़ बन गये हैं। आयुर्वेदिक चिकित्सा जिसका आविर्भाव वेद मन्थन एवं देवताओं तथा ऋषि महर्षियों के यौगिक परिश्रम द्वारा हुआ है। तिरस्कृत है। और देश का अर्वो रुपया प्रति वर्ष विदेशी औषधियों तथान्य चिकित्सा सम्बन्धी उपकरणों में विदेश चला जाता है। हम दावे के साथ कह सकते हैं कि आज जितनी बिमारीयां फैली हुई हैं। और शायद ही कोई पूर्ण स्वस्थ दीख पड़ता हो। यह सब कुछ विदेशी सभ्यता और उपचार के ही बदौलत है। हमें क्या खबर थी कि हमको उभाड़ कर और बर्बाद कराकर अपना प्रभुत्व जमा लिया जायगा। हम आर्य हैं और हमारा देश आर्य्यावर्त्त है। अतएव हमारी समस्त क्रियाएँ आर्य संस्कृति सभ्यता के अनुरूप ही होनी चाहिये। जब तक भारतीय चिकित्सा का उदय न होगा और यह अंग से पूर्ण न होगी तब तक देश स्वास्थ्य समर्थ और दीर्घ जीवन से वंचित रहेगा।

निर्माण कला—

निर्माण कला ठीक वैसी ही है। जैसी सूर्य रश्मि चिकित्सा (Cropathic) की। अन्तर केवल व्यवहारिक प्रायौगिक विधि का है। सम्पादक "आयु-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वेद गौरव" की आज्ञा का ही पालन है अन्यथा इन्जेक्शन विज्ञान पर जिस प्रकार डकैती हुई उससे प्रेरित हो यही निश्चय किया कि अनुभव सुरक्षित ही रखा जाय। प्रसन्नता होगी यदि समस्त भारतीय अनुसन्धान कर नये आविष्कारों को जन्म दें। पर खेद तो यह है कि आयुर्वेदिक इंजेक्शन का छिछा लेदर हो गया आज उसे वैज्ञानिक कहाने में लज्जासे मष्तिस्क झुक जाता है। स्वार्थी लोग मानेंगे नहीं क्योंकि उसमें अर्थ की प्राप्ति सुगम है।

मौलिक रंग तीन ही होते है लाल, पीला और व्लू इन्हीं के योग मिश्रण द्वारा अगणित रंगों का निर्माण होता है। हमारे शरीर में जो सप्त धातु हैं उनके सातो रंग पृथक् हैं वही धातुएं अपने वर्ण युक्त खनिज रूप से प्राप्त होते हैं। इन धातुओं की सृजन एवं वर्धन शक्ति ग्रहों पर निर्भर है। और ग्रहों का निवास सूर्य रश्मियों पर है अतः सूर्य रश्मियां ७ पृथक रंग की है। इसी आधार पर सूर्य रश्मि चिकित्सा का जन्म हुआ था। इसमें ७ रंग के पृथक बोतल चाहिये जिसका मिलना कठिन है। विदेशियों ने कृत्रिम रश्मियों से काम लेकर गन्दा बना दिया। स्वच्छ बोतल में स्वच्छ पानी बोतल से दो इन्च कम भर कर सवल कार्क लगा कर ११ से ३ बजे तक दिन में कड़ी धूप से उस समय तक परिपक्व करते हैं, जब तक जल पर तैल बून्द सा दृष्टि गोचर न होने लगे तत्पश्चात् उसे व्यवहृत करते हैं, इसकी मात्रा २॥ भर की है।

हम ४ रंग के बोतलों से काम लेते हैं लाल, पीला, व्लू, और सफेद। हमारे अनुभव में ५ रंग ही काम आते हैं लाल, पीला, व्लू, हरा, और सफेद पीला और व्लू बोतल के जल का आपस में मिश्रण कर ग्रीन (हरा) रंग बना लिया जाता है। शेष ४ प्राकृतिक ही होते हैं। इन बोतलों में चतुर्थांश जला हुआ जल शीतल होने पर जब उसका चूना पृथक हो जाता है फिल्टर पेपर से छान कर भरते हैं, और तैल विन्दु आ जाने पर ही व्यवहृत करते हैं, इसकी मात्रा १ ड्राम से १ औंस तककी है। सेवनीय काल दिन में दो या तीन बार, रोग की तीव्रता में आवश्यकतानुसार ५-५ मिनट पर भी व्यवहार में आता है। इसका विभिन्न रोगों में शीतल और उष्ण कम्प्रेस भी किया जाता है। इसका सूचीवेध Intral Hus euber Ingictisn वस्ति कर्म तथा अन्यान्य विधियां भी वर्ती जाती है। इसका इंजेक्शन शीघ्र प्रभावकर एवं आदरणीय होता है। इसका मालिस के लिये तेल और आवश्यक कामों के लिये मरहम भी बनाया जाता है। इसका रासायनिक चिकित्सा में अनुपान वेजोड़ काम करता है।

(३) रंगों का विश्लेषण

लाल रंग मंगल का है, भूगर्भ में उत्पन्न ताम्र का रंग लाल है। लवंग, कस्तूरी, अम्बर, दालचीनी जावित्री, जायफल प्रभृति औषधियों में लाल रंग होता है। लाल रंग अति उष्ण होता है, और उसमें तीव्रता होती है। रस की मन्द गति को तीव्रता देना इसका खास काम है। जब कफ की प्रवलता होती है। नाड़ी की गति अत्यन्त मन्द पतली या बन्द हो हाथ पैर या सर्वाङ्ग में शीतलता आ जाती हो, उस समय रक्त के श्वेताणुओं की वृद्धि और रक्ताणुओं के पतन में यह उस जगह जहां कस्तूरी अथवा कस्तूरी मिश्रित रसायन जैसे वृहद् कस्तूरी भैरव, आदि देने की आवश्यकता होती हो वहां केवल इसी रंग का प्रयोग करने से आशातीत लाभ होता है। अत्यन्त घोर अवस्था में कस्तूरीके संग लाल रंग का पानी कस्तूरी को शक्ति प्रदान करता है। यदि उसमें रस सिन्दूर षड्गुण बलिजारित अन्त-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धूप, लेवें, आज कोई विरलाही वैद्य होगा जिसके पास विधानानुकूल बना हुआ चन्द्रोदय या मकरध्वज हो। और भी शीघ्र लाभके लिये कस्तूरी कर्पूर और शुद्ध कुचिला लाल पानी के साथ घिसकर फिल्टर से छान कर मांसगत वेधें। इससे श्वेत कण शीघ्रतर से रक्तकण में बदलने लगेंगे। विसूचिका के घोर शीतांगमें "विसूचिका विध्वंसक रस" को लाल पानी में घिसकर उपर्युक्त रीति से इंजेक्ट कर देने पर जादू का प्रदर्शन बन जाता है। जब मस्तिष्क में रक्त की न्यूनता होती है या पक्षाघात पतन की धारणा होती है वहां लाल पानी संजीवनी बन जाता है। ऐसी अवस्थामें सावधानीसे काम लेना होता है। यदि ऐसी अवस्था में भूल से नीला पानी दे दिया गया तो उसी क्षण मृत्यु हो सकती है। इस इलाज में सावधानी से चलना पड़ता है कारण यह परमाणु चिकित्सा है। पानी का रंग सफेद जलवत् पर लाल रंग उसमें अवश्यरूपेण छिपा हुआ है। मस्तिष्क में खून न पहुँचने से ही शीत आता है और हृदय की गति मन्द होनेसे खून दिमाग में नहीं पहुंचता। अतः यह हृदय की गति को बढ़ा कर मस्तिष्क में रक्त पहुंचा देता है। लाल पानी अमृत है। यह अमृत जब रोगी मृत्यु शय्यापर मिन्टों और सेकेण्डों का मेहमान होता है उस समय रामकाल की संजीवनी बूंटी बन जाता है। यह लाल रंग ही है जो वर्ण को सुन्दर और शरीर को सुडौल बनाता है। यही विटामिन डी है और इसी में निर्बलता नाशक शक्ति है किसी भी बिमारी में आप उस हालत में दे सकते हैं जब चेहरा और शरीर का रंग श्वेत हो गया हो। उस सफेदी का मतलब है खून की कमी और श्वेतसार की वृद्धि। पित्त प्रबलता या रक्त की गति तीव्र होने में दिल धड़कने में भूलकर भी लालपानी का प्रयोग नहीं करना चाहिये नहीं तो सम्हाल में न आने से मृत्यु सम्भव है यह भी परमाणु चिकित्सा है और अन्य सूक्ष्मात्रिय चिकित्साएं परमाणु ही है। परमाणविक चिकित्सा में ही झाड़ फूंक तथा जड़ी बांधना। होमियोपैथिक भी परमाणु ही है परन्तु इलेक्ट्रो आयुर्वेदिक का लाल पानी अधिक शक्तिशाली और शीघ्र गामी है वैद्युतिक चिकित्सा के चिकित्सक को शरीर रचना का ज्ञान उसी प्रकार आवश्यक है जिस प्रकार आर्य्यों के लिये वेद, यवन के लिये कुरान, और क्रिश्चियन के लिये बायबिल है। ठीक इस प्रकार इलेक्ट्रो आयुर्वेदिक के चिकित्सक के लिये शरीर विज्ञान की पुस्तक है। हम ऊपर कह आये हैं कि तीन ही चित्रों द्वारा शरीर शास्त्र को भर देने की चेष्टा करेंगे जो रश्मि चिकित्सक को काफी पड़ेगा। शरीर शिथिल पड़ता जा रहा हो। नाड़ी का लोप हो गया हो आँखें धंस गई हों। उस समय आप इसके द्वारा ख्याति प्राप्त करेंगे। रोगी बहुधा मौत के पंजे से छूट जाता है और चिरकाल की निर्बलता का भी नाश होता है। ताम्र रक्त धातु होने से विधिवत् प्रयोग से अच्छा लाभ होता है। हृदय रोग के रोगी को लाल पानी कदापि नहीं देना चाहिये।

॥ लाल रंग में आधुनिक निर्णय ॥

लाल रङ्ग का सृजन नाइट्रोजन, आक्सीजन, वेरियम, जस्ता, स्ट्रानियम, कडिमियम, और रुबीडियम के मिश्रण से हुआ है।

शरीर में भी रासायनिक तत्व रहते हैं जैसे, युवा एवं स्वस्थ शरीर का वजन ७५ सेर माना गया है। जिसका पृथक करण निम्न प्रकार है।

स्नायु एवं स्नायु बन्धन ४०½ सेर अस्थियां ११ सेर विभिन्न अवयव ६ सेर, मज्जा ६ सेर, त्वचा ३½ सेर मस्तिष्क १½, रक्त ३½ सेर (७५ सेर योग) शरीर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में ¼ भाग पानी होता है, ¾ भाग प्राणवायु (आक्सीजन) अतिरिक्त इसके नाइट्रोज़न, हाइड्रोजन, क्लोरिन, फ्ल्युओरिन नामक वायु भी रहती है।

अतिरिक्त इन वायुओं के कार्बन कैल्शियम, फास्फार्स, सेडियम, सलफर; पोटाशियम, मेग्नेशियम, आयरन कापर, लीड, सिलिविन, लिथियम, मर्करी आर्सेनिकम, तथान्य कई पदार्थ मिलते हैं।

नोट—कार्वन कौल्शियम, सिलिकिरा, सोडियम, पोटाशियम, मेग्नेलियम, प्रभृति लवण पृथ्वी में विद्यमान रहते हैं। और वनस्पति जगत द्वारा मिलते हैं।

तामा, सीसा, पारद, सोमल प्रभृति स्वाभाविक रूपेण हमारे शरीर में नहीं होते। परन्तु वाह्यजगत से हम औषधि प्रभृति द्वारा शरीरस्थ करते हैं।

ज्ञातव्यता—

निगेटिव और पाजेटिव (ऋणात्मक और (धनात्मक) अर्थात् उष्ण और शीतल (आग और पानी) विना शारीरिक सृष्टि का संहार सम्भव है। इंजनादि की चालन शक्ति में भी आग और पानी (शीतलता और उष्णता) की आवश्यकता विशेष होती है। यही काम कफ और पित्त का है, वायु तो योगवाही है वहीं इन्हें संचालित रखती है। इन्हीं कफ तथा पित्त (शीतलता और उष्णता) की मात्रा में घट बढ़ होने पर ही कोई रोग होता है। यही बातें लाल और सफेद पानी में हैं। दो वस्तुओं को स्वाभाविक मात्रा में ला देना ही एकमात्र चिकित्सा है। लाल रंग की जब कमी होती है, तब सुस्ती, आलस्य, अधिक निद्रा भूख की न्यूनता मलवरोध, नेत्र तथा नख में अल्प नीलापन, मल मूत्र का रंग श्वेत अल्प नीलापन लिये।

शीत काल में शारीरिक निर्बलता की वृद्धि, चेहरा और हाँथ के तलुवें में सफेदी आ गई हो ऐसी अवस्थामें लाल रंग विशेष लाभकर होता है। जिनका शरीर पुष्ट न रहता हो और शरीरस्थ पोषण क्रिया की मन्द गति हो गई हो। ऐसी अवस्था में भी लाल रंग का प्रभाव सुन्दर पड़ता है। शरीर में छिपा रोग है जिसका निर्णय असम्भव बन गया है, सामान्य हेर फेर से ही अस्वस्थता आ जाती अर्थात् कभी स्वस्थ और कभी विमार रहता है। आमवात, लकवा, में लाल रंग सुन्दर काम करता है यह पूर्व ही लिख दिया गया है। तीन दोषों के तीन ही प्रधान रोग है, वात का शूल, पित्त की जलन, और कफ का शोथ, इसलिये शोथ में लाल रंग की क्रिया सुन्दर होती है। जब शीतला निकल कर वैठ जाती हैं या दानें कम निकलते हैं तब अनेक उपद्रव खड़े हो जाते हैं एसी अवस्था में दो एक मात्रा लाल रंग की देने से आश्चर्यजनक क्रिया होती हैं, भीतरी दानें वाहर हो जाते हैं और अवस्था सुधर जाती है। जब दाना उठाने की आवश्यकता हो तब ही लाल रंग की एक दो मात्रा ही देनी चाहिए फिर आसमानी रंग का ही प्रयोग चालू रखना चाहिये अन्यथा महान लक्षण वर्तमान हो सकते हैं। वातज निर्वलता, उरुस्तम्भ नष्टार्त्तव, तथा न्यूनार्त्तव में लाल रंग का व्यवहार लाभ कर होता है। लाल रंग के काँच लगे मकान में और लाल रंग का काम करनेवाले व्यक्तियों में चंचलता विशेष पायी जाती है। यानी लाल रंग द्वारा रक्त-मिश्रण एवं उतेजन के लिये स्मरण करना चाहिये जब शरीर स्थूल हो और वजनी वन जाय तब उसकी रासायनिक परीक्षा करने पर मालूम होगा कि श्वेत कण के एवं चर्वी के भाग बढ़ गये हैं। और यह बढ़ाव सामान्य नहीं अपितु बृहत् हो। ऐसी अवस्था में लाल रंग का व्यवहार अच्छा लाभ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिखाता है। यदि दो दो घण्टे अन्तर पर दिन में ६ बार दिया जाय तो थोड़े ही दिनों में आरोग्यता लाभ होगी। कारण लाल रंग के व्यवहार से श्वेत कण रक्त में परिवर्तित होने लगेंगे और रक्त में उत्तेजना आनेसे रक्तका बहाव तीव्र गति से होने लगेगा जिससे जत्थे विखर जाएगें। आज जगत फाइलेरिया गण्डमाला और श्लीपदादि रोगों से घिर गया है। डाकर लोग एम० वी० तथा अर्सिनों टाइफाइड का इंजेक्शन देते हैं। मगर यह उनकी भूल है उन्हें लाल रंग का मुख, सूई और स्नान में व्यवहार कर देखना चाहिये। हमारा दवा है कि लाल रंग के व्यवहार से इन रोगों का समूल नाश होता हैं। हमने अनेक ऐसे तथा अण्डवृद्धि रोगों में सफलता पायी है।

क्रमशः

विटामिन और हमारा खाद्य

कविराज एस० एन० बोस एल० ए० एम० एस० सी० ए० (इन्दौर)

आज दुनिया भरमें विटामिन का महत्व-प्रचार बड़े जोर-शोर से चल रहा है। कई बीमारियां विटामिन की कमी के कारण होती हैं—ऐसा डाकरों का मत है। विटामिन की गोलियाँ बाजार में काफी तादाद से विकती जा रही हैं—कुछ व्यक्ति तो विटामिन की गोलियों के सिवाय कोई काम ही नहीं कर सकते हैं। ऐसी परिस्थिति में विटामिन क्या वस्तु है?-कहां रहता है—क्या काम करता है और न होने से क्या-क्या तकलीफें हो जाती हैं—इस सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करना सब मनुष्यों का कर्त्तव्य होता है। जिस ज्ञान से विटामिन का उपयुक्त परिमाण में प्राप्त करना— तथा विटामिन की कमी के कारण होने वाली बीमारियों से बचना सम्भव हो सकता है।

विटामिन की कमी के कारण कई बीमारियां होती हैं। विटामिन की गोलियां अभी-अभी कुछ वर्षों से शुरू हुई है। इसके पहले क्यों विटामिन के कमी के कारण ये सब बीमारियां नहीं होती थीं—तब तो विटामिन की गोलियां या इन्जेक्शन की जरूरत नहीं पड़ती थी। कम से कम इतनी ज्यादा मात्रा में नहीं—जितनी कि आजकल जरूरत पड़ती है। इसका कारण भी है। विटामिन की कमी के कारण जो-जो बीमारियां आजकल ज्यादा दिखाई पड़ती हैं उनमें से Pallagra, Beri Beri Scurvy एवं Rickets प्रधान है। यह बात नहीं है कि ये बीमारियां पहले नहीं होती थीं। पाश्चात्य देशों में अठारहवीं तथा बीसवीं शताब्दी में इन बीमारियों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त हुई है—आयुर्वेद शास्त्र में बेरी-बेरी तथा रिकेटस् या सूखा रोग के सम्बन्ध में जानकारी मिलती है। अवश्य ये बीमारियां विटामिन की कमी के कारण होती हैं यह ज्ञान हमें आयुर्वेद से प्राप्त नहीं है। तो भी पुष्टिकारक खाद्य—जिससे कि विटामिनों की कमी की पूर्ति हो सकती है—उसका निर्देश हमें प्राप्त होता है। पाश्चात्य देशों में भी उन व्याधियों के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त हुआ था—परन्तु आजकल के सरीखे उन व्याधियों के शिकार इतने नजर नहीं आते थे। रोग सम्बन्धो ज्ञान-वृद्धि के साथ ही साथ आधुनिक कृत्रिम सभ्यता तथा सामाजिक व्यभिचारों से उत्पन्न हुई इन व्याधियों का प्रादुर्भाव हमारे नज़रके सामने ज्यादा आ रहे हैं। वास्तविक रूप में हमें अगर थोड़ा सा इस विषय सम्बन्धी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्ञान प्राप्त हो तो आसानी से कुछ तकलीफों से बच सकते हैं—बीमारी बढ़ने नहीं पाती। होते ही बराबर उपयुक्त चिकित्सा कराकर जल्दी से जल्दी तन्दुरुस्ती हासिल कर सकते हैं।

विटामिन क्या वस्तु है ? विटामिन कोई अस्वाभाविक वस्तु नहीं है—भगवान ने हमारी तन्दुरुस्ती के लिये हमारे खाद्य-पदार्थों के भीतर इसका समावेश कर दिया है जिससे भोजन से ही शरीर रक्षणोपयोगी चीजें मिल जांय—बाहर से विटामिन की गोलियां खानी न पड़ें। मैं गरीबों के लिये नहीं कह रहा हूं। क्योंकि उनको विटमिन सम्बन्धी पूर्ण ज्ञान देने से भी क्या होगा। गरीबी के कारण प्रयोजनीय पदार्थों का संग्रह कहां से हो सकेगा। परन्तु आज श्रीमन्तों के घर में ही विटोमिन की गोलियों की शीशी हर समय भरी हुई रहती है—यह क्यों ?

विटामिन को हम खाद्योजः अथवा खाद्य-प्राण कहते हैं—जैसे कि प्राणहीन शरीर की कोई कीमत नहीं है। वैसे ही विटामिन हीन खाद्य हमारे शरीर रक्षा के लिये उपयोगी नहीं है। जैसे कि प्राण को हम शरीर के अन्दर नहीं देख पाते हैं। क्रिया द्वारा ही अनुभव कर सकते हैं। ऐसे ही विटामिन को हम खाद्य पदार्थों के अन्दर देख नहीं पाते—उसकी क्रिया से ही अनुभव कर सकते हैं। (लेबोरेटरी में हो सकता है। परन्तु वह तो सर्व साधारण के लिये सम्भव नहीं है)—इसलिये हम विटामिन को खाद्य-प्राण कहते हैं। भोज्य-पदार्थों में प्रोटीन या आमिष जातीय पदार्थ, कार्बोहाइड्रेट अर्थात् शर्करा जातीय पदार्थ तथा फ्याट (Fat) तैल जातीय पदार्थ, कुछ खनिज पदार्थ, लवण आदि रहा करते हैं। परन्तु यह शरीर की हड्डी, मांस, चर्बी, रक्त को बनाता है—बढ़ाता है—प्राण का संचार तो विटामिन से ही होता है। इसलिये हम विटामिन को महत्त्व इतना देने लग गये हैं। डाक्टरों के द्वारा जब विटामिन की कमी के कारण बताये गये रोगों के ऊपर विटामिन की गोलियों के प्रयोग से हम स्वस्थ हो जाते हैं तब ही हम वस्तुतः समझ पाते हैं कि सचमुच विटामिन हमारे शरीर के लिये कितना प्रयोजनीय है।

विटामिन का आविष्कार कोई व्यक्ति विशेष या कोई जाति या देश विशेष की कृति नहीं हैं। विभिन्न देशों में विभिन्न समय पर विभिन्न विटामिनों का आविष्कार हुआ है। अवश्य इन आविष्कारों के भीतर आन्तर्जातिक अनुसंधान-सहयोगिता वर्तमान है। खाद्य द्रव्यों के अन्दर प्रोटीन या आमिषजातीय पदार्थ, कार्बोहाइड्रेट या शर्करा जातीय पदार्थ तथा फेट या चर्बीजातीय पदार्थ के अलावा और कोई पदार्थ की अवस्थिति विद्वानों के मस्तिष्क में विचारणीय विषय के रूपमें उपस्थित हुआ था जिसके अभाव में शारीरिक पुष्टि तथा स्वास्थ्य सम्यक् रुपेण नहीं मिलता था। इस वस्तु की खोज में ही विटामिन का आविष्कार हुआ। जैसे कि कुछ चर्बीजातीय पदार्थों के सेवन से स्वाभाविक शारीरिक पुष्टि मिलती है—परन्तु कुछ चर्बीजातीय पदार्थों के सेवन से ऐसी पुष्टि नहीं दिखाई पड़ती थी-दोनों ही चर्बीजातीय पदार्थ है—तो क्यों इन दोनों के सेवन से शारीरिक पुष्टि में तारतम्य होता है—यह समस्या वैज्ञानिकों को सोचने का विषय हो गया था। देखा गया था कि प्राणिज चर्बी (Lard के अलावा) तथा हरे पत्तों से निकली हुई) चर्बी शारीरिक पुष्टि के लिये हितकर है: परन्तु बीजो से निकली हुई चर्बी शारीरिक पुष्टि को नहीं बढ़ा सकती है-जिससे वैज्ञानिकों के अन्दर दोनों में अन्तर निकालने का प्रयत्न हुआ-जिसके फलस्वरूप विटामिन 'ए' का आविष्कार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुआ। परन्तु क्या यह आश्चर्य जनक नहीं है कि चर्बीजातीय पदार्थों के अन्दर मक्खन जिसको हम बहुत ऊँचे दर्जे का समझते हैं—उनके हरे शाक पत्तियों से निकाले हुए चर्बीजातीय पदार्थों के अन्दर विटामिन 'ए' ज्यादा तादाद में रहता है—और दूधमें जो विटामिन 'ए, रहता है वह विटामिन गाय या भैंसों के खाये हुए हरे घास तथा पत्तियों से आता है, उसीके ऊपर निर्भर है। वेरी वेरी रोग का ज्ञान हमें दीर्घकाल से प्राप्त है, परन्तु यह व्याधि एक प्रकार के विटामिन की कमी या अभाव के कारण ही होता है—यह ज्ञान हमें करीब करीब ५०-५५ साल से ही प्राप्त है। १८९७ साल में (Java) के एक जेन डाक्टर ईकम्यान (Eijkmand) यह घोषित किया था कि—"वेरी वेरी से आक्रान्त व्यक्तियों के ऊपर बारीक भूसीयुक्त चावल या चावल के ऊपर की बारीक भूसी खिलाई जाय तो वेरी-वेरी के लक्षण मिट जाते हैं। वह भूसीयुक्त चावल, गेहूँ तथा अन्यान्य अनाज तथा छिलकेदार दाल वेरी-वेरी का प्रतिरोधक है—परन्तु ऊपर की बारीक भूसी-निकाला हुआ अनाज तथा कारखानों में मेसिन से बनाया हुआ चावल से वेरी-वेरी हो जाता है।' इसके बाद 'ग्रीजन'स (Grijrls) ने १५०१ में यह धारणा की पूर्ति की कि खाद्य द्रव्यों के अन्दर एक प्रकार के अज्ञात पदार्थ की अवस्थिति ही इसका कारण है। इसके बाद 'केसीमिर फंक' (Casimir Funk) नामक एक पोलैण्डके वैज्ञानिक ने १९११ में चावल के भूसी से एक सत्व निकाला था—जिससे वेरी-वेरीका प्रतिरोध करने की प्रतिज्ञा की गई थी। सर फ्रेडरिक (Sir Fredrick) और गोलण्ड हफकिन्स (Gowland Hopkins) ने विटामिनों के पूर्ण ज्ञान का विकास किया था। इसके बाद 'कूपर' (Cooper) एवम् 'चीक व हिउमस्' (Chack & Huice) ने लिस्टर इनस्टिटयूट Lister (Institute) में विभिन्न खाद्य पदार्थों की वेरी-नेरी प्रतिरोधक शक्ति की परीक्षा कबूतरों तथा अन्यान्य प्राणियों के ऊपर चलाकर निर्णय किया था जिससे "विटामिन बी१" का आविष्कार हुआ। ऐसा ही अमेरिका में "गोल्डवर्जर" (Gold Berger) मुंहके दोनों कोनों में होनेवाले क्षतों को प्राणिजातीय भोज्य पदार्थों के प्रयोग द्वारा करीब-करीब निर्मूल किया था। इस बीमारी के सम्बन्धमें 'पेट्रो केसलस' (Pedro-Casals) ने १७०७ में अपनी अनुभूति व्यक्त कर कहा था कि 'यह एक हीनजातीय भोजन का परिणाम है। गोल्डवर्जर के अनुभव के बाद विटामिन 'बी२' का आविष्कार हुआ। उसी प्रकार 'विटामिन बी' श्रेणी को बी७ या 'निकोटिनिक एसिड नामक विटामिनका आविष्कार (Pallagra) नामक एक प्रकार व्याधि की चिकित्सा यकृत तथा मद्य बनाने में उत्पन्न (Yeast) नामक पदार्थों के सेवन से सफलता पूर्वक होने का कारण हुआ था। गोल्डवर्जार ने इसे (P. P. Factor) या (Pallagra Preventin Factor) नाम दिया था। बाद में (Elvelijem) १९३७ साल में यकृत से निकोटिनिक एसिड से मिलते जुलते एक पदार्थ को निकाला था। बाद में (Fonte) एवम् उसके साथी तथा (Spies) एवं उनके साथी ने उस पदार्थ को शिराप थे इन्जेक्शन द्वारा प्रयोग कर (Pellegra) रोगियों को आराम पहुचाया था—तब से निकोटनिक एसिड (Pellagra) नामक विटामिन की कमीसे उत्पन्न हुई एक व्याधि की मानी हुई दवा मिल जाती ई। क्रमशः

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बूंटी और बटी

ले०—पं० युगेश्वर झा आयुर्वेदाचार्य, रजिस्टर्ड वैद्य ५।१।१ए, दुर्गाचरण मित्र स्ट्रीट, कलकत्ता।

सर्पगन्धा

सर्पगन्धा का पौधा अधिकतर एक फीट लम्बा होता है। वर्षा ऋतु में इसकी उत्पत्ति और वसन्त में अन्त होता है। तगर के आकार की पत्ती और सफेद एवं थोड़ी लाली लिये इसके फूल और छोटे-छोटे गोले आकार के फल होते हैं। यह बूंटी अधिकतर बाग आदि गैर आबादी जमीन में जहां वर्षा ऋतु में पानी न जमता हो पैदा होती है। यह मनुष्यों के कतिपय रोगों का विनाशक है।

प्रयोग

१—सर्प काटे व्यक्ति को काली मिर्च ५ दाने को आठ आने भर ताजे पानी में पीस कर उसमें चार आने भर सर्पगन्धा के मूल को अच्छी तरह पानी में साफ धोकर पत्थर पर जल में पीसकर उसी काली मिर्च के पानीमें मिलाकर पिला दे और दोनों आंखों में उसका अञ्जन कर देने से सर्प का विष उतर जाता है। इसी तरह किसी भी प्रकार के विष खाये हुए व्यक्ति को भी सेवन कराने और अञ्जन से सारा विष उतर जाता है।

२—उन्माद के रोगी को मिश्री १ तोला, सर्पगन्धा का मूल चार आने भर को ताजे जल में बारीक पीसकर १ पाव जल में शर्बत तैयार कर उसमें १ तोला शहद डाल कर दोनों शाम पिलाने से दो सप्ताह में उन्माद का उन्मूलन हो जाता है।

३—सान्निपातिक ज्वरमें प्रलाप और बल करने वाले रोगी को जल में चार आने भर सर्पगन्धा की मूल और चार आने भर आदी का रस दोनों को सीप में गर्म कर ठण्ढा होने पर चार आने भर शहद डाल कर घण्टे-घण्टे पर पिलावे। इस क्रिया को दो-चार बार करने पर उपरोक्त उपद्रव शान्त होकर रोगी को नींद आ जाती है।

४—सर्पगन्धा के मूल को साथ में रखने वालों को सर्प का भय नहीं रहता है।

इस बूंटी को अभी हाल ही में अधिक मूल्य लेकर हमारे भारत से विदेश में भेजा गया है। अनुमान है कि इससे विष चिकित्साका इन्जेक्शन (Injection) तैयार कर पुनः भारत से विदेशी अधिक पैसे ले जायेंगे।

२ लाङ्गली

लाङ्गली बूंटी कन्द विष है। इसका पौधा एक गज तक लंबा होता है। बांसके आकारके पत्ते और पत्तों के नोंक पर मटर के पत्ते के समान लपटदार इसकी भी सूँग होती है। लांगली भी उसी गैर आबादीवाली जमीन में होती है जहां वर्षा का पानी न जमताहो।

लांगली की दूसरी पहिचान

इसको पानी के साथ शिलापर बारीक पीसकर मिट्टी के बर्तनमें गरम कर दूध देने वाली गाय, भैंस और बकरी आदिके शृङ्गोंपर कदुष्ण मोटा लेप लगा दीजिये। आधा घण्टा के बाद उसका दूध निकालने से खून के समान सुर्ख रंग का दूध निकलेगा।

प्रयोग

लांगली का कन्द चार तोले लेकर पानी में बारीक पीस कर मिट्टी के पात्र में गर्म कर लेप तैयार कर लीजिये जिस स्त्री को बच्चा पैदा करने में कष्ट होता हो अथवा बच्चा न निकलता हो (मूढ़ गर्भ) तो वैसी हालतमें कदुष्ण दोनों तलवों तथा हथेलियों में मोटे लेप लगा देने से २५-३० मिनट के बाद आसानी से बच्चेका का जन्म हो जाता है।

किन्तु अपने पास गर्म पानी तैयार रखिये और बच्चा पैदा होने के बाद सभी लेपको तुरत गर्म पानी से धो डालिये। देर करने से गर्भाशय को बिगड़ने या गिर जाने का भय रहता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शारीरिक स्वास्थ्य के साथ आत्मदर्शन ही आयुर्वेद का मौलिक ध्येय है

अवन्तिका आयुर्वेद विद्यालय की ओर से मुनि श्री सुशील कुमारजी शास्त्री का प्रकाश टाकीज में आयुर्वेद और जन स्वास्थ्य के विषय पर मार्मिक भाषण।

आयुर्वेद का उद्देश्य औषधि देना ही नहीं है अपितु स्वास्थ्य को स्थायी रखने के लिए दैवी गुणों का विकास भी करना है। जन कल्याण तथा विश्व हितकर संस्थाओं में आयुर्वेद दर्शन का भी मुख्य स्थान रहा है। यद्यपि भारतीय चिन्तन धारा का ध्रुव केन्द्र विमुक्ति और आत्मसिद्धि रहा है तो भी आयुर्वेद दर्शन का भी मुख्य उद्देश्य आत्मसिद्धि तथा मनुष्यके स्वास्थ्य को स्वस्थ रखना ही रहा है।

यद्यपि बीमारियां पेट की मन की ओर आत्मा की ही होती है आयुर्वेद विविध रोग ग्रस्त मानव को जीवन दर्शन देता हैं। आरोग्य जन को आश्वासन देता है। औषध देना ही आयुर्वेद नहीं है यह तो आयुर्वेद का आचार शास्त्र है जिसके साथ मेरा कोई सम्बन्ध नहीं क्यों कि यह कार्य वैद्यों डाक्टरों का है मेरा नहीं मेरा तो धार्मिक दृष्टिकोण से आयुर्वेदके दर्शनका तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करना हैं।

विश्व के आरोग्य पथ प्रदर्शक चिकित्सिकों की तुलना में भारत के आयुर्वेदज्ञ किसी प्रकार से पीछे नहीं अपितु प्रगति गामी है। आज चाहे भारत में और विदेशों में आयुर्वेद का कितना भी कम महत्व है आंका जाता है किन्तु यह निश्चय है कि चिन्तन की दृष्टि से आयुर्वेद संसार की सफलतम तथा श्रेष्ठ तम आरोग्य पद्धति है क्यों कि आयुर्वेद ने मानव को औषधियोंका दास नहीं अपितु दैवीगुण अहिंसा सत्य, श्रद्धा, ब्रह्मचर्य, सन्तोष और आत्म विश्वास की ओर प्रेरित किया है।

यह आत्मा का मन्दिर शरीर संसार भर के कूड़ा कचरा भरने के लिए नहीं है अपितु सत्य संशुद्धि तथा आत्मसिद्धि के लिए है। दवाइयों की गुलामी बढ़ती जा रही है वासना की लालसा उत्तेजित हो रही है। कामुकता, वीर्य क्षीणता, बल पुरुषार्थ हीनता दिनों दिन बढ़ती जा रही है रोग और रोग प्रसार की दवा इन्जेक्सन नहीं है अपितु संयम है। संयम का समर्थन आयुर्वेद करता है इस लिए हम आयुर्वेद को धर्म के अधिक निकट मानते हैं। मुझे आयुर्वेद के अध्ययन से यह विश्वास हो गया है कि आयुर्वेद संसार में शुद्ध, सत्व, दोष रहित, और कल्याणांश का शाश्वत बनना चाहता है इस लिए उसने उसी पुरुष को ब्रह्माचार्य कहा है जो पवित्र सत्य परायण जितेन्द्रिय न्यायप्रिय ज्ञान विज्ञान संपन्न वक्ता चिन्तन सम्यक दृष्टि सद् विधायक और वासना रहित होता है। क्यों कि आयुर्वेद का विश्वास है कि:—

क्यों कि मनुष्य के रोगों का प्रतिकार आन्तरिक शुद्धि से संभव है। हम आयुर्वेद के इस मुख्य अंश का आध्यात्मिक समर्थन करते हैं जिसमें :—

आत्मा की सत्ता मान का विवेचन, अन्तः करणशुद्धि और संयम की आज्ञा का उल्लेख किया है। आज भारतीयों की मानसिक स्थिति बड़ी विचित्र है लोग कहते हैं कि वैद्य सावधानी से चिकित्सा नहीं करते किन्तु मुझे खेद के साथ कहना पड़ता है कि आपके देश के पास ही जापान भी एक राष्ट्र है। जरा उसकी ओर भी ध्यान दीजिए उनका वैद्यों के साथ सम्बन्ध भिन्न प्रकार का है जापान में जब तक स्वास्थ्य ठीक रहेगा तब तक वैद्यों को पैसा मिलता रहेगा। और जब किसी भी सदस्य को रोग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने दबाया कि वैद्य की आमदनी कट गयी। क्योंकि वैद्य स्वास्थ्य रखने के लिए होता है न कि रोगके लिए।

हिन्दुस्तान की विचित्र दशा है बीमारी आवेगी तो वैद्य को पूछा जायगा नहीं तो वैद्य साहिब भूखा मरा करें।

अब आप समझ ले कि भावनाओं को किस प्रकार की बनवाना चाहते हैं। खैर यह आप का काम है मेरे कहने का आशय तो इतना ही है कि आयुर्वेद का मुख्य ध्येय आरोग्य को स्थायी बनाये रखना है। मैं जानता हूं कि आयुर्वेद एक जीवन दर्शन है जो धर्म पर विश्वास रखता है जो अहिंसा आदि सद्व्रतों का पालन करने की प्रेरणा करता है और फिर अहिंसा का विश्लेषण करना धर्म का काम है यही भारत की विशेषता रही है। आयुर्वेद धर्म का सहायक तथा धर्म आयुर्वेद का सहायक रहा है। जैन धर्म में तो तप का महत्तम तथा वनस्पति विज्ञान तथा यौवन का सूक्ष्म विवेचन प्राप्त होता है उसकी आयुर्वेद के साथ घनिष्ट समानता है।

जैन धर्म कन्द मूल के भोजन का परित्याग करवाता है। उसका कारण भी वैज्ञानिक है। प्रत्येक धार्मिक अन्धकार में पलने वाली वनस्पतियों का सेवन नहीं करें। क्यों कि उसमें सत्व गुण की प्रधानता कम रहती है।

वृक्षके ऊपर धूप में पकने वाले फल और जमीन की तहों के नीचे अन्धकार में पकने वाले वनस्पतियों में बहुत अन्तर रहता है। जैन धर्म समस्त तिथियों में तो वनस्पति सेवन की मर्यादा करवाता है।

दूज, पञ्चमी, अष्टमी, एकादशी, पूर्णमासी, कारण कि चन्द्रमा की कला घटने या बढ़ने के साथ जमीन और वनस्पति में पानी का अतिरेक बढ़ता है। अधिक से अधिक पानी रोग का कारण बनता है। यह स्वास्थ्य दृष्टि के अनुकूल तो है ही किन्तु साथ में अहिंसा के पालन करने में ये मर्यादायें सहायक है।

जैन धर्म के समस्त व्रत विधान तथा आचार नियमों का आयुर्वेद पूर्ण समर्थन करता है और यही क्या बौद्ध तथा बौद्धिक धर्म भी जिन विधानों को मानव के लिये आवश्यक निर्दिष्ट करते हैं आयुर्वेद उन तमाम धार्मिक मर्यादाओं तथा अहिंसावादी व्रतों को आरोग्यता के लिये अत्यावश्यक मानते हैं। आत्मवाद मनोयोग तथा ज्ञानेन्द्रिय आदि सभी धार्मिक तत्वों पर आयुर्वेद अपने समर्थन की मुहर लगाता है। एलोपैथी, होमियोपैथी आदि तमाम पाश्चात्य चिकित्सा पद्धति में भारतीय तथा मानवात्मा का संरक्षण करने में असमर्थ हैं।

अभी तक जो विचारधाराएं आत्मा तक को स्वीकार तक नहीं करती वे मानव का उद्धार क्या करेगी।

और साथ में मानव को यह सद्बोधन दूंगा:-

भारतीय इन्सानों! अपनी परम्परागत विरासत जो कि विज्ञान की अमूल्यतम निधि है, कल्याण की कुञ्जी है उस परमपूरित धर्म के सहायक आयुर्वेद के आध्यात्मिक का संरक्षण करो, वही तुम्हारे लिये वरदान है।

कार्यक्रम बहुत प्रभावशाली रहा, वैद्य मण्डल की ओर से बसन्तीलाल जी वैद्य तथा अवन्तिका आयुर्वेद विद्यालय के आचार्य वासुदेव शास्त्री ने मुनिजी के आयुर्वेद के तल स्पर्शी ज्ञान की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

पं० वासुदेव शास्त्री

अवन्तिका आयुर्वेद विद्यालय, उज्जैन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाइ-ला भैषज्य-पेटिका (Medicine Box)

हमारे व्यापारियों तथा शुभचिन्तकों के विशेष आग्रहसे जनता के लाभार्थ हमने "बाइ-ला भैषज्य पेटिका" का निर्म्माण किया है।

इस भैषज्य पेटिका में प्रचलित एवं तत्काल लाभप्रद औषधियों का समावेश है जो समय पर वैद्य एवं डाक्टर का काम करती हुई प्राण बचाती है।

यह पेटिका प्रत्येक पारिवारिक व्यक्तिको अपने घरमें अवश्य रखनी चाहिये। विशेषतः भ्रमण शीलि तथा देहात के लोगों के लिये तो अत्यन्त उपयोगी और आवश्यकीय है। देहातों में समय पर वैद्य या डाक्टर न मिलने पर परेशान होकर प्राणों से भी हाथ धोना पड़ता है। ऐसी परिस्थिति में यदि यह "भैषज्य पेटिका" घर में वर्तमान हो तो अपनी चिकित्सा आप स्वयं कर सकते हैं।

आकस्मिक दुर्घटनाओं से रक्षार्थ इसमें प्राथमिक चिकित्सा के सभी उपयोगी सामान दिये गये हैं।

जनहित का ध्यान रखते हुए मूल्य भी इतना कम है कि सर्व साधारण आसानी से खरीदकर लाभ उठा सकें। भैषज्य पेटिका में निम्न लिखित औषधियां हैं।

औषधि नाम	रोगाधिकार
१ अर्क पुदीना—	अजीर्ण, उदरशूल
२ अर्क कपूर—	हैजा, अजीर्ण, उदरशूल
३ मोहन मिक्श्चर—	विभिन्न रोग
५ एसीकुला	आंख, कान, नाक तथा गला रोग,
५ क्लोरोडिन	वायु शूल, दस्त, आंव।
६ मेन्थेरिया वाम (ट्यूब)—	शिरपीड़ा शोथ, सन्धि पीड़ा
७ अग्निप्रभा वटी—	स्वादिष्ट पाचक,
८ कैस्प्रेन —	विभिन्न पीड़ाओं पर
९ स्वस्ति मल्हम—	दाद, खाज, आदि चर्म्मविकार
१० टिंचर बेंजोइन—	खून बन्द करने के लिये
११ टिंचर आयोडिन—	क्षत तथा शोथ नाशक
१२ नियो लैक्स	जुलाब
१३ आयडो—सल्फेन	घाव तथा चोट नाशक
१४ बी० एल थ्रोटपेंट—	गले के विकार नाशक

इन औषधियों के अतिरिक्त १ कैंची, गाज, वैण्डेज क्लौथ, प्राथमिक चिकित्सा के साधन हैं बाइ-ला "भैषज्य पेटिका" में एक पुस्तिका रहती है जिसमें समस्त औषधियों का पूर्ण विवरण दिया गया है। मूल्य १६) रु० मात्र। प्राप्ति स्थान —बिड़ला लेबोरेटरीज, कलकत्ता—३०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिड़ला लेबोरेटराज द्वारा प्रस्तुत शीघ्र लाभदायक कुछ विशिष्ट वस्तुएं

स्वस्ति मलहम

वर्षा ऋतु में लोगों को प्रायः दाद, खाज, खुजली, अपरस, फोड़ा फुन्सी, आदि अनेक चर्म-रोग हुआ करते हैं। उक्त कष्टप्रद चर्म्म रोगों से त्राण पाने के लिये स्वस्ति मलहम का व्यवहार विशेष लाभप्रद है। इसके दो तीन बार लगाने से हो पुराना से पुराना दाद दिनाय, जड़ मूल से नष्ट हो जाता है। यह आकर्षक रूप से छपे हुए बड़ी और छोटी डिब्बियोंमें हर औषधियों की दुकानों में मिलता है। इस मलहम से कपड़े में दाग नहीं लगता। मूल्य बड़ी डिब्बी ।।) छोटी ।)

विक्टोरिया औरिजनल वाम।

सामान्यतः रात में अधिक जागने, परिश्रम, चिन्ता, स्वप्नदोष, अधिक सम्भाषण, तथा सर्दी लगने के प्रारम्भिक अवस्था इत्यादि कारणों से प्रायः शिर पीड़ा हुआ करती है। उक्त कारण जन्य पीड़ा से शीघ्र छुटकारा पाने के लिये विक्टोरिया औरिजनल वाम, एक अमोघ औषध है किसी भी कारण से उत्पन्न दर्द की प्रत्येक अवस्था में पूर्ण लाभदायक है। अधकपाली (आधा शीशी) की पीड़ा को अतिशीघ्र दूर करता है। मूल्य आधा औंस ।।।=) चौथाई औंस ।।)

गुरुकुल पत्रिका

सौन्दर्य रक्षक—"चम्पा"

नहाने का साबुन

मशहूर बिड़ला कटेली चम्पा केश तैल की मीठी खूशबू से बनाया हुआ "चम्पा" नहाने का साबुन, आपको बहुत पसन्द आयगा। स्नान करते समय इसके लगाने से इसके खुशबूदार झाग से आपका मन खिल उठेगा। इसके व्यवहार से आपका शरीर और त्वचा स्वच्छ, मुलायम आकर्षक ओर रोग मुक्त रहेगें। एक बार हमारे "चम्पा" साबुन का व्यवहार करनेके बाद आप दूसरा कोई साबुन लगाना पसन्द नहीं करेंगे। एक बार परीक्षा अवश्य करें। यह दो प्रकार की साइजों में मिलता है। बड़ी साइज की टिकिया का मूल्य ४४) प्रति ग्रास टोकेन और छोटी साइज का मूल्य १६) प्रति ग्रास रखा गया है।

ब्रांच—टोकोवारी रोड, गौहाटी (आसाम) } बिड़ला लेबोरेटरीज़ कलकत्ता-३०

"डेन्टोफिल"

(क्लोरोफिल युक्त टूथ पाउडर)

दांत शरीर का एक प्रमुख एवं आवश्यक अंग है। सुन्दर स्वच्छ एवं रोग मुक्त दांत मुख की शोभा बढ़ाने एवं विभिन्न प्रकार के भोजन [illegible]स्वादन के लिए नितान्त आवश्यक है [illegible]हित मनुष्य के लिए कैसा ही स्वादिष्ट [illegible]न क्यों न हो सब बेकार है।

इस लिए दांतकी रक्षा करना परमावश्यक है। हमारे यहां का नवनिर्मित "डेन्टोफिल" क्लोरोफिल युक्त टूथ पाउडर) आपके दांतों को स्वच्छ, चमकीले, मजबूत रखने के अतिरिक्त मुख की दुर्गन्धि, मसूड़ों का फूलना, पीव आना, दर्द होना, दांतों का हिलना, पायरिया, इत्यादि दांत सम्बन्धी सभी विकार का नाश करता है।

मूल्य—बड़ी डिब्बी १२) प्रति दर्जन
" छोटी डिब्बी ७।।) प्रति दर्जन

प्रकाशचन्द्र मुद्र ६१ [illegible] प्रिंटिंग वर्क्स लि०, ८३ पुराना चीनाबाजार स्ट्रीट, कलकत्तामें मुद्रित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

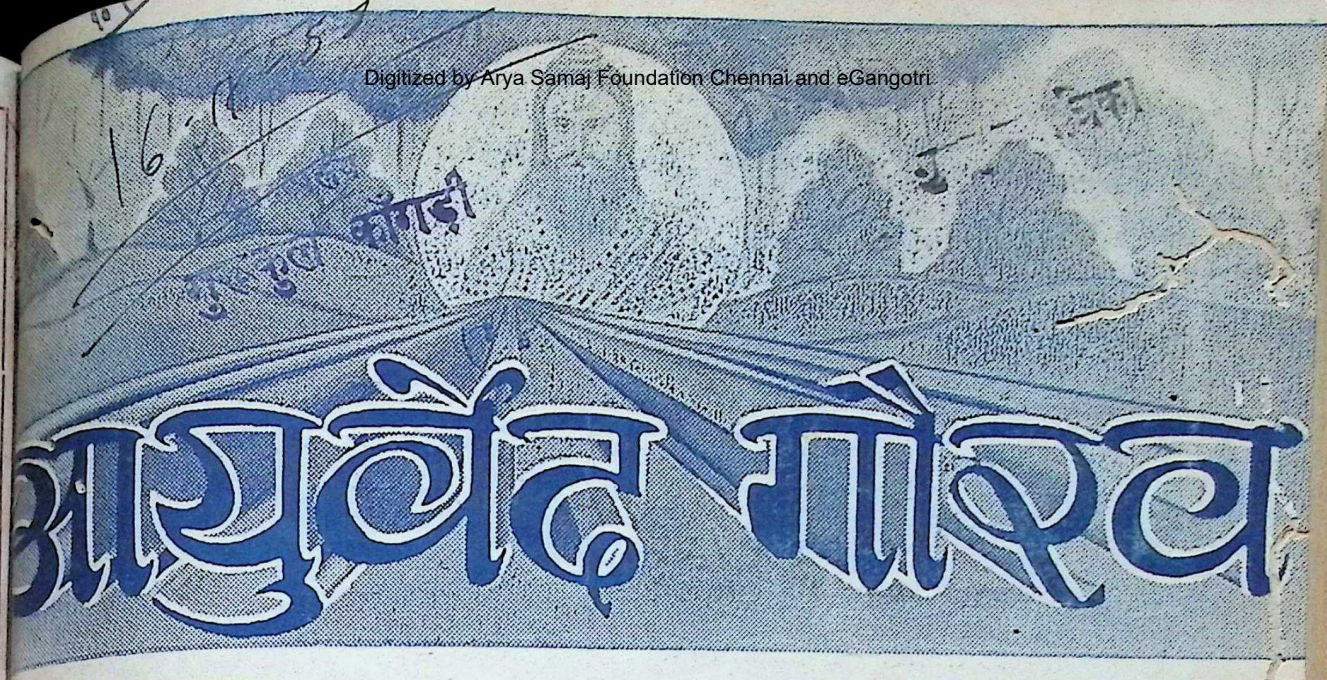

आयुर्वेद का एकमात्र सर्वोत्तम मासिक पत्र

उषःपान स्तुति

ले०—कविराज वैद्य श्री दुर्गादत्त शास्त्री 'दूरगामी' पो०डाचर, करनाल

"अपने प्रियतम के पीछे जब
विदा ले रही हो सखि, रात!
सौम्य मुखाकृति उदित हो रहा—
हो, जब, सुरभित मधुर प्रभात!!
ऐसे समय जाग नर जो नित
करे नासिका से जलपान।
बुद्धिपूर्ण वह होता, उसकी—
दृष्टि शक्ति हो गरुड़ समान॥
उसके केश कृष्ण ही रहते
रहे बुढ़ापा उससे दूर।
धन्य भाग्य वह सब रोगों से—
मुक्त रहे, बल से भरपूर॥

वार्षिक मूल्य
३)
एक प्रति ।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

सम्पादक—श्री प्रकाशचन्द्र गुप्त M.Sc. सह-सम्पादक—श्री मदनगोपाल वासोतिया आयुर्वेदाचार्य

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

विषय	लेखक का नाम	पृष्ठ
१ जय आयुर्वेद	—श्री सूर्य्यदत्त शास्त्री — —	३३
२ रतिज रोग	—डा० श्रीश्यामदास प्रपन्नाश्रमी 'पीयूषपाणि' —	३४
३ दन्तशठा (इमली)	—श्री दामोदर प्रसाद शर्म्मा "वैद्य विशारद"	४५
४ "नवाकर्षण"	—डा० भवानी प्रसाद गुप्त, एम. बी. बी. एस. —	४७
५ विटामिन और हमारा खाद्य	कविराज एस. एन. बोस, एल. ए. एम. एस. एम. सी. ए.	५०
६ श्लीपद क्या है ?	—वैद्य श्री मुन्नालाल गुप्त, बी. आई. एम. —	५२
७ बी. सी. जी.	—वैद्य श्री अम्बालाल जोशी —	५४
८ घृत कुमारी	—वैद्य श्री केदारमल शर्मा (कांवट) —	५७
९ बथुआ शाक से पारा	—पण्डित माधव प्रसाद शर्मा शास्त्री —	५८
१० बाल-मृत्यु के कारण और उसके साधन	—श्री महावीर प्रसाद भरद्वाज	५९
११ बी. सी. जी. टीके के लिये हठधर्मी क्यों ?	वैद्य पं० गोवर्द्धन शर्मा, आयुर्वेद विशारद	६१
१२ समाचार	— — —	६३

सूचना

"चिकित्सक" मासिक बीकानेर के सम्बन्ध में

उसके लेखक; शुभचिन्तक, ग्राहक एवं विज्ञापन दाताओं से निवेदन है कि "चिकित्सक" मासिक के सम्पादक अथवा प्रतिनिधि और उससे सम्बन्धित व्यक्ति बाहर की यात्रा पर नहीं है, इसलिये किसी भी व्यक्ति से इस सम्बन्ध में किसी भी प्रकार के सम्पर्क के लिये कार्यालय जुम्मेवार नहीं होगा, उन्हें सीधा बीकानेर से ही सम्बन्ध रखना चाहिये।

व्यवस्थापक

"शूल शमन"

जब खाने लगाने की दवाइयां, इन्जेक्शन आदि सभी फेल हो चुके हों तब आप इस गोली का धुआं दें। यानी भयंकर उदर शूल, वायु गोला शूल वृक्कशूल (गुर्दे का शूल) इनमें से कोई भी शूल हो, रोगी का वस्त्र हटा कर खुली खाट पर पेट के बल लिटा दें। खाट के नीचे (१ बालिश्त दूर) अंगीठी में अङ्गार रख कर १ गोली शूल शमन की डाल दें. धुआं लगते लगते सर्व-शूल शांत होते है। जिनके शरीर पर शीत पित्ती उभरती है उनको भी यह धुआं दें। यह ६ बूटियों का योग, एक देहाती से मिला है।

सवा रुपए—१।) मनीआर्डर से भेजने पर सैम्पल के तोर पर, आवश्यक खर्च काटकर यह अद्भुत औषधि रजिस्ट्री से भेज देते हैं। वैद्य इसे अपने पास सदा रखें, ज्यादे औषधि की मांग के लिए पत्र व्यवहार करें।

पता—भारतीय रस-सिद्ध कार्यालय पो० भुआ बिछिया जिला—मंडला (म० प्र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ॐ

प्राच्यं प्रतीच्यं यत्किंचिद् आयुर्वेदात्मकं हि तत् ।
तद्गौरवो विजयते, विश्वस्मिन् व्याधिसंकरे ॥ १ ॥

नोट—१-"यदिहास्तितदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्", इति चरक वचनात्।

आयुर्वेद-गौरव

वर्ष ३ | नवम्बर १९५५ | संख्या २

जय आयुर्वेद !

रचयिता—आचार्य श्री सूर्य्यदत्त शास्त्री रसवैद्य श्री धन्वन्तरि चिकित्सालय चौक पटना सिटी

पुरा पुरातन--उन ऋषियों की जय की कथा सुनाऊँ ।
जय आयुर्वेद महान की, नमन करूँ कुछ गाऊँ ॥१॥

भटक-भटक जंगलों में निशदिन,
संचित कर भारत का गौरव ।
खाक छान हर प्रान्त गाँव का,
लाया अतुल अलौकिक वैभव ॥
वे कौन ? क्या ? किन किन का नाम गिनाऊँ ।
जय आयुर्वेद महान् की नमन करूँ कुछ गाऊँ ॥२॥

अन्वेषक, उद्धारक, प्रेरक ।
श्रद्धा द्रष्टा मानव उद्बुद्धि ।
देव भावना से प्रति विम्बित,
अभिहित 'ब्रह्मा, की यह बुद्धि ॥
सुनो भिषग ? अब आगे तुझे सुनाऊँ ।
जय आयुर्वेद महान् की नमन करूँ कुछ गाऊँ ॥३॥

ध्यानावस्थित चित्त चतुरानन,
खोल दृगों से देखा ।
मानव के हित हर वस्तु है,
क्या ?, कर सकता कवि लेखा ॥
विद्धातु में ज्ञानालोक कराऊँ ।
जय आयुर्वेद महान् की नमन करूँ कुछ गाऊँ ॥४॥

आयु को स्थिर करता जो,
उन तत्वों का गहन विभेद ।
दिखलाता सिखलाता उनको,
कहते हैं—वह 'आयुर्वेद'
पढ़ ! गुन ! कर जग में, मैं वैद्य कहाऊँ ।
जय आयुर्वेद महान की, नमन करूँ कुछ गाऊँ ॥५॥

करूणा और मैत्री सम्बल ले,
ललित मधुर कोमलमय वाणी ।
प्रेम प्यार छलके जग तल में
चला जगत ले अमृत पाणि
जग सेवा की पी मदिरा ले हर्षू और हर्षाऊँ ।
जय आयुर्वेद महान की, नमन करूँ कुछ गाऊँ ॥६॥

हर देशों के हर वस्तु से,
मानव का होता कल्याण ।
पोषक पोष्य परस्पर विनिमित
आव हवा अनुयोजक प्राण ॥
प्राण पखेरू को बांधूं मैं प्राणाचार्य कहाऊँ ।
जय आयुर्वेद महान की नमन करूँ कुछ गाऊँ ॥७॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रतिज रोग-Venerial Diseases.

(उपदंश व फिरंग)

लें०—डा० श्रीश्यामदास 'पीयूषपाणि' दौगवाँ पो० कसेरकलां (बुलन्द शहर)

उपदंश की सम्प्राप्ति—

उपदंश व फिरंग प्रायः एक ही श्रेणी की व्याधि हैं। शिश्न के आहत होनेसे उपदंश उत्पन्न होता है। साधारणतया यह पुरुष-शरीर गत व्याधि होने पर भी स्त्रियों में इसका आविर्भाव हो नहीं सकता ऐसा कहना भी युक्ति संगत नहीं।

"हस्ताभिघातान्नखदन्तघाताद धावनादत्युप सेवनाद्वा। योनिप्रदोषाच्च भवन्ति शिश्ने पञ्चोपदंशा विविधापचारैः॥"

—हाथ की चोट लगने से, नख किम्बा दाँतों के आघात से क्षत हो जाने से मैथुनोपरान्त गुप्तांग के समुचित संस्कार की अवहेलना से, अस्वाभाविक मैथुन जैसे—हस्त मैथुन, गुदा मैथुन व पशु मैथुन, ब्रह्मचारिणीगमन, रोगग्रस्ता तथा कठोर केश दूषित योनि वाली स्त्रियों का सहवास, मलमूत्र, का वेग धारण आदि कारणों से वातज, पित्तज, कफज, त्रिदोषज, और शोणितज यह पाँच प्रकार के उपदंश होते हैं।

उपदंश के संक्षिप्त लक्षण परिचय—

"सतोदभेदस्फुरणैः सकृष्णैः स्फोटैर्व्यवस्येत्पवनोपदंशम्। पीतैर्बहुक्लेदयुतैः सदाहैः पित्तेन रक्तैः पिशितावभासैः॥ सकण्डुरैः शोथयुतैर्महद्भिः शुक्लैर्घनैः स्रावयुतैः कफेन। नानाविधस्रावरुजोपन्नमसाध्य माहुस्त्रिमलोपदंशम्॥"

—उपदंश के व्रण जिनमें सूची-वेधनवत् वेदना हो, शस्त्र-भेदनवत् पीड़ा हो, स्फुरण युक्त और कलौंस लिए हो तो यह वातज उपदंश समझना चाहिए।

—उपदंश के व्रण जिनमें पीताभ क्लेद भरा हुआ हो दाह उत्पन्न करते हुए लालिमा युक्त तथा मांस के समान प्रतीत हो तो यह पित्तज है।

—जो व्रण कण्डुयुक्त, रसादि द्वारा शोथयुक्त तथा श्वेताभ घनस्राव युक्त होता है, उसे कफज उपदंश जानें।

—पीड़ा युक्त अनेक प्रकार के स्रावयुक्त और परिवर्तनशील यन्त्रणा उत्पन्न करनेवाला हो तो यह त्रिदोषज एवं असाध्य भी कहलाता है।

—उपदंशके व्रण कृष्ण व्रण युक्त, अधिक शोणित स्रावी पैत्तिक लक्षण युक्त ज्वर, दाह तथा शोथयुक्त होने से यह रक्तज कहलाता जो कि समय पाकर याप्य हो जाता है।

उपदंश के असाध्य लक्षण—

"प्रशीर्णमांसं कृमिभिः प्रजग्धं मुष्कावशेषं परिवर्जनीयम्।" जिसमें मांस गल कर कीड़े पड़ जाते हों किम्वा गले हुए जननेन्द्रिय का मांस कीड़े खा लेते हों, आखिर फोते ही केवल बाकी रह जाते है। तो ऐसे उपदंश रोगी की चिकित्सा न करे।

दूषित योनिवाली स्त्री के प्रसंग से किम्वा अन्य किसी कारण से जो क्षत उपदंश में उत्पन्न होता है, उसे "कोमल-क्षत" (Soft Chancre) कहा जाता है। इसमें पहले से ही तरल रस-स्राव बाद में क्लेदादि निकलना शुरु हो जाता हैं। और फिर इसके साथ दुखदायी यन्त्रणा भी होती रहती है। इसमें गिल्टी उतर आती है और जल्दी से जल्दी पककर फूट जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिरङ्ग रोग के साथ उपदंश के जो कतिपय विशिष्ट लक्षण युक्त पार्थक्य रोगीके शरीरमें दिखाई देते हैं उसी से इन दोनों रोगोंका निदान निर्वाचन करना आसान हो जाता है। विभेदात्मक तुलना के बारे में फिरङ्ग के विस्तारित वर्णन पर समझाने की कोशिश की जायगी।

उपदंश की सामान्य चिकित्सा

उपदंश-रोग की चिकित्सा करते समय चिकित्सक को इस बात पर अधिक ध्यान देना जरूरी है, कि व्रणों में पूयोत्पत्ति होकर क्षत रूप में परिणत न हो। क्योंकि क्षत बन जाने से मेढ--शोथ के साथ आनुसंगिक यन्त्रणा जनित रोगी को बेहद तकलीफ तो इसमें होगी ही फिर चिकित्सा में उपेक्षा किम्वा प्रतिकूल परिस्थिति के कारण रोग दुश्चिकित्स्य हो पड़ेगा तो बेचारे रोगी का लिंगक्षय अवश्यम्भावी होगा। इसके अतिरिक्त ज्वर और मल-विबन्धता आदि से रोगी को स्वतन्त्र रखने की कोशीश करना भी चिकित्सा की विशेषता है। इस उद्देश्य से ज्वर शामक औषधि और अन्त्र-शुद्धि के लिए सात्म्य विरेचक या वस्ति प्रयोग करते रहना चाहिये।

उदुम्बर सार, पंचक्षीरि लेप उष्ण जल के साथ मिलाकर अथवा त्रिफला का इषदुष्ण क्वाथ किम्वा निम्बपत्र और टंकनमाल (बोरीक पाउडर) से उबाला हुआ जल द्वारा पीड़ित अङ्ग को रोजाना दो-तीन बार धोना चाहिए।

अगर दुर्दैववशतः उपदंश के व्रणों में पूयोत्पत्ति हो जाती है तो जयन्ती, जाती, कनेर, और आकन्द और आरग्वध (अमलतास) के पत्तों के क्वाथ द्वारा क्षत का शोधन संस्कार करना चाहिए। कनेर (सफेद) की जड़, सत्यनाशी (स्वर्णक्षीरी) की जड़, जाँगल, मैनफल इन सबको जल के साथ खूब अच्छी तरह से पीस कर पीड़ित अंग पर प्रलेप करने से आनुसंगिक प्रदाह की शान्ति हो सकती है निम्नलिखित व्यवस्थानुयायी औषधियाँ और उपचार करने से उपदंश के साधारण क्षेत्र में सफलता अवश्य ही प्राप्त होगी।

(१) अमृतादि क्वाथ—इसके प्रातःकाल सेवन से उपदंश के प्रारम्भिक उपसर्गों का नाश होता है।

(२) वरादि गुगल—यह उपदंश की प्रत्येक दशा में लाभदायक तो है ही, फिर रक्तदुष्टि पर भी इसका प्रभाव आश्चर्यजनक होता है। मात्रा—आधा तोला व एक तोला; अनुपान—उष्ण जल।

(३) रसशेखर—इसका प्रयोग करके चिकित्सा क्षेत्र में सफल चिकित्सक बना जाना सम्भव होता है। मात्रा—एक वटिका; अनुपान—दूध। रसशेखर के सेवन काल में लवण और अम्ल से परहेज रखना अत्यावश्यक है।

इनके अतिरिक्त सारिवाद्यासव, सारिवाद्यरिष्ट खदिरारिष्ट, पंचतिक्त घृत गुग्गुलु, माणिक्य रस आदि उपदंश अधिकार के शास्त्रीय योगोकी आवश्यकता पड़ती है। (४) आगर धूमाद्य तैल—इसके वाह्यिक प्रयोग द्वारा उपदंश के क्षत में से पूयादि अनायास ही निकल कर क्षत आरोग्य में सहायता मिलती है और पीड़ित अंग स्वाभाविक हो जाता है।

(५) अनन्ताद्य घृत—उपदंश की सभी हालतों पर तथा रक्तविकार को नष्ट करने में यह घृत विशेष उपयोगी है। मात्रा आधा तोला; अनुपान इषदुष्ण दूध।

उपदंश के साधारण क्षेत्र में निम्नलिखित व्यवस्था पत्र विशेष उपयोगी है।

(१) अमृतादि क्वाथ—मात्रा सवा तोले से ढाई तोला, पूर्वान्ह नौ बजे सेवनीय है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) अनन्ताद्य घृत—आधा तोला, आधापाव गर्म दूध के साथ मध्याह्न में भोजन के एक घन्टे के अन्दर सेवनीय है।

(३) रस माणिक्य—मात्रा एक गोली आधा तोला घी, चीनी ३ माशा, २० बूँद सहद के साथ सन्ध्या समय सेव्य है।

(४) उदुम्बरसार—सुखोष्ण जल में मिश्रित करके पीड़ित अंग को धोना चाहिए।

घाव के ऊपर लगाने के लिए "देशी जाम्बक" मेरे द्वारा अनुभूत पैटेन्ट मलहम किम्वा पारदीय कोई योग जो कैलोमेल, मुर्दा संग आदि द्वारा बनाया हुआ हो प्रयोग किया जा सकता है।

इनसे अतिरिक्त अन्यान्य विशेष चिकित्सोपचार प्रायः ही फिरंग रोग के समान होने के कारण फिरंग के उपचार और चिकित्सा स्थान पर एक ही क्रम से उनका वर्णन किया जायगा। पथ्यापथ्य तथा विधि निषेध आदि के बारे में भी फिरंग चिकित्सा द्रष्टव्य है।

फिरंग-रोग (Syphilis)

फिरंग एक तीव्र संक्रामक व्याधि है। इसका संक्रमण फिरंग रोग से ग्रसित स्त्री से सहवास के परिणाम स्वरूप होता है, पाश्चात्य चिकित्सकों के मतानुसार Treponema Pallidum जातीय जीवाणुओं के संक्रमण से ही यह रोग उत्पन्न होता है।

सम्प्रति यह रोग संक्रामक होने के कारण या तो नीरोग शरीर को रोग ग्रसित व्यक्ति का सम्पर्क अथवा स्त्री पुरूष दोनों में किसी को यह रोग उनके लिंगाश्रय के आधार पर प्रकटित हो सकता है। स्त्री हो या पुरुष इन में से किसी के जननेन्द्रिय के अन्दर यह विष पहले से हीं संचित रहते हुए पारस्परिक सम्पर्क द्वारा उन में रोग का संक्रमण होना स्वाभाविक है। फिरंग से ग्रसित पुरुष के साथ और उसी प्रकार स्त्रीं के साथ पुरुष के संसर्ग द्वारा किसी कारण वश किम्वा अज्ञानतावश यदि मैथुनोपरान्त शरीर शोधनादि नियमों में कहीं गड़बड़ी हो जाय तो एक के बदौलत दूसरे के शरीर में यह दुष्ट रोग अवश्य ही अपना धाक जमा लेगा।

फिरंग का विष मनुष्य के शरीर में दो प्रकार से प्रकटित हो सकता है;—(१) स्वोपार्जित और (२) कौलिक यानी वंश परम्परागत। फिरंग में होनेवाले क्षत "कठिन क्षत" (Hard chancre) कहते हैं।

स्वोपार्जित (Acquired) फिरंग रोग से ग्रसित रोगी के शरीर में तीन विभिन्न दशायें और उनसे होने वाले परिणाम के बारे में यहां संक्षिप्त रूप से बतलाना जरूरी है (१) प्राथमिक अवस्था (First stage), (२) द्वितीय अवस्था S cond Stage), (३) तृतीय अवस्था (Tertiary Stage)

रोग के प्रारम्भ काल में जब व्रणों में पूयोत्पत्ति के साथ क्षत बन जाना समाप्त हो जाता तो ऐसी अवस्थाही प्राथमिक और इसके बाद जब शरीर के रस, रक्तादि विकृत होकर नानाविध रोगोपसर्गों का आविर्भाव होता तब यह भोग काल द्वितीयक फिर इसके उपरान्त रोग विष का प्रभाव जब शरीर स्थित वैधानिक तन्तुओं तक पहूंच जाता है तो यह तृतीय अवस्था कहलाती है।

स्वोपार्जित फिरंग में प्राथमिक दशा का संक्षिप्त वर्णन—

कठिन क्षत—दूषित संगम के पश्चात् यह व्रण के रूप में पुरुषों के लिंग के आवरक चर्म की जड़ में अथवा लिंग-मुंड पर और स्त्रियों के योनि कपाट यानी वृहत् भगोष्ठों की खाई पर दिखाई देता है। इसके अतिरिक्त मूत्रनाली के अन्दर तथा स्तन व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओष्ठों (होठ) पर भी क्षत रूप में यह उत्पन्न हो सकता है। फिरंग-विष जनित, रक्त, रस तथा क्लेदादि का संस्पर्श होने से शरीर में सर्वत्र इसका विस्तार अवाध गतिसे हो सकता है। इसकी उत्पति साधारणतया सम्भोग क्रिया की अस्वाभाविक परिणति जैसे कि जननेन्द्रिय का चर्म विछिन्न होना-आदि कारण जनित रोग-विष संक्रमण के लगभग २०-२२ दिन वाद ही यह अपना रूप प्रकटित करता है। प्रथमतः उक्त स्थान पर खुजली पड़ने लगती है और उंगुलियों के घर्षण से पीड़ित स्थान उघड़ जाता है फिर वहाँ मसूरिका के समान लालिमा लिए हुए कठोर एक उद्भेद दिखाई देता है। इसकी क्रमिक विवृद्धि के परिणाम स्वरूप थोड़े ही समय के अन्दर यह क्षत बन जाता है। उंगुलियों के सहारे दवाकर देखने से य ह भलीभाँति प्रतीत होगा कि उक्त क्षत और उसकी चारों ओर की ग्रन्थियाँ मानों सख्त पत्थर सी बन गयी है। इस क्षत की उचित् चिकित्सा की उपेक्षा अथवा विलम्ब होने पर यह शरीरस्थ रक्त और उसके संचालन विधान को ही विकृत कर देता है।

परीक्षा द्वारा कठिन क्षत का निदान

कठिन-क्षत—यह एक स्थान पर केवल एक रूप से उत्पन्न होता, उसकी चारो ओर की किनारी व ग्रन्थियों की कठोरता। लिंग, योनि, स्तनों तथा ओठों पर होना, क्षत जनित प्रदाह व यन्त्रणा आदि का न रहना और क्षत में से प्रायः ही क्लेदादि का न निकलना। गिल्टी का उतर आना जो प्रायः ही वेदना-यन्त्रणा से रहित फिर पत्थर जैसा सख्त हो जाना ग्रन्थि यानि गिल्टी की उंगुलियों से दबाने से मालूम देती है कि चमड़े के गहरे नीचे कई ग्रन्थियां अलग अलग रहती हुई एक साथ मिल गई है।

कोमल-क्षत—उपदंश के यह क्षत स्थानीय उपसर्ग होने के कारण इसके द्वारा मनुष्य शरीर को विशेष हानि नहीं पहुचती है। परन्तु इसका विष रक्त के साथ संश्लिष्ट होने से दो तीन दिन के अन्दर ही गुप्ताँग के निर्दिष्ट स्थान पर फुंसी जैसा उभार क्षत का रूप ले लेता है। क्षत के ऊपर सफेद जैसा पर्दा चढ़ा हुआ रहता है। पर्दा हटा देने पर उसके अन्दर घाव का रंग लाल (सुर्ख) दिखाई देता है। क्षतांकुर (Granutaion) की वढ़ती हुई हालत में यह क्षत आरोग्य होने का तो नाम ही नहीं लेता। क्षत के प्रारम्भ काल के ५।७ दिन के अन्दर ही से पूयोत्पत्ति और उसका अधिक वहाव शुरु हो जाता है। क्षत और उसकी चारों ओर के स्थान को दवाने से पूर्व वर्णित "कठिन क्षत" के समान कठोरता इसमें नहीं मालूम देती। क्षत में से निकलनेवाले, रस रक्त व क्लेद का संस्पर्श, शरीर के जिस स्थान पर होगा वही फिर स्वतन्त्र रूप से यह प्रकटित हो जायगा। उपदंश जनित "कोमल-क्षत" एकाधिक तथा फिरंग में होनेवाला "कठिन-क्षत" केवल एकही जो उत्पन्न होता, यही इन दोनों प्रकार के क्षतों में विशेषता है। गिल्टी उभरना इसका भी विशेष उपसर्ग और उसमें काफी तादाद में रस, रक्त व क्लेदादि निकलता है। पहले ही हम कह चुके हैं कि, गिल्टियाँ जो "कठिन-क्षत" की सहयोगिता से निकल आती हैं

उनमें पूयादि कतई नहीं पैदा होता, परन्तु उपदंश और फिरंग इन दोनों के संयुक्त संक्रमण द्वारा आविर्भूत होने से उसकी गिलटियों में से क्लेदादि का निःस्राव अवश्य ही होगा।

इसके अतिरिक्त और भी दो प्रकारका कष्टसाध्य परिवर्तन "कोमल क्षत" में हो सकता है। क्षत साधारण अवस्था में से ही धीरे धीरे ऐसा रूप ले लेता है कि उससे रोगी तो अवश्य ही घवड़ा जाता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और यह क्षत रोगी की जान से ही खेलता है। ऐसे घाववाला रोगी अगर आप के सामने आवे तो उसे देखते ही आप पहिचान जायेंगे कि यह उपदंश के कष्टसाध्य रोगी और दूषित "कोमल क्षत" ने हीं इसे पछाड़ डाला है। क्षत में निम्नलिखित लक्षण मौजूद रहते हैं—इसके अन्दर और चारों ओर ऐसी खुरदरी सी मालूम देती है कि मानों, किसी ने घाव को खुरेंच डाला हो। बहुत सी बदबूदार मवाद का बहना और उसी बहाव के साथ साथ नवीन नवीन क्षतों का आविर्भाव होना। ऐसी बुरी हालत रोगी की हो जाती है कि आखिर वह पंगु या लंगड़ा बन कर ही रहता है। घाव का विस्तार इतना हो जाता है कि कभी कभी रोगी के पेट और मसाना तक ऊपर चढ़ बैठता है। डाक्टरी भाषा में ऐसे घाव को (Phagedænic Chancre) फैजेडिनींक-शैंकार" कहते हैं।

फिरंग की द्वितीयावस्था।

फिरंग की दूसरी दशा तभी मानी जाती है जब कि इसका विष शरीरस्थ रस, रक्तादि धातुओं को विकृत करके तरह तरह करके उपसर्गों को उत्पन्न करता है। प्रारम्भिक दशा में मैथुन के कुपरिणाम जननेन्द्रिय का चर्म विछिन्न होकर उन पर फुंसी से घाव बन जाता है तो यह "गुप्तावस्था" या प्रच्छन्न दशा" (Period of incubation) कहलाती है। यह दस से इक्कीस दिन तक रहता है।

जननेन्द्रिय के चर्म विच्छिन्न होकर रोग विष में उसमें प्रविष्ट होने के लगभग पैंतालिस दिन से लेकर नब्बे दिन के अन्दर एक प्रकार का उद्भेद निकल आना और क्षत स्थान की क्रमशः कठोरता प्राप्ति के समय को "गौण-अवस्था"—'Secondary Period of incubatioon) और चर्मोद्भेदों के निर्गमन के साथ साथ साथ सर्वांग में खास कर निम्नशाखाओं में पीड़ा-यन्त्रणा फिर सन्ध्या-समय शारीरिक उत्ताप का बढ़ना और इसके अतिरिक्त मुख-मंडल, तालु-मूल, नेत्रों तथा सर्व शरीर पर विभिन्न प्रकार के उद्भेदों का निकल आना, क्षत की विवृद्धि आदि के समय को "अपरोक्ष-अवस्था" —"Secondary manifostation कहा जाता है। द्वितीय दशा भोग काल कम से कम दो वर्ष पर्यन्त रह सकता है, बाद में समस्त उपसर्ग ही अन्तर्मुखीन गति को प्राप्त कर लेते हैं।

तृतीय अवस्था

पहली और दूसरी दशा अतीत होने से कुछ समय के लिए रोगी अपने को स्वस्थ अनुभव करने लगता है परन्तु उसके शरीर को अन्तर्मुखीन गति द्वारा विष का प्रभाव जब शनैः शनैः आगे बढ़कर उसके शरीरस्थित रस-रक्तादि को विकृत करने के परिणाम नाना प्रकार के रोगोत्पत्ति का माध्यम बन जाता है तब तो रोगी की दशा बड़ी ही भयानक हो जाती है। यही से उसके आमरण भोग का अध्याय शुरु हो जाता है।

फिरंग का विष जो अपने विषैले प्रभाव द्वारा केवल चर्म व श्लैष्मिक कलाओं को विकृत करके ही निवृत्त होता है यही नहीं अधिकन्तु वैज्ञानिक तन्तुओं को भी नष्ट कर देता है। इससे बढ़ कर मस्तिष्क आदि में विष का प्रभाव अधिक होने के साथ ही रोगी की जीवन लीला का नाट्याभिनय भी समाप्त हो जाता है।

पूर्व ही बतलाया गया है कि प्राथमिक अवस्था व द्वितीय अवस्था के अतीत हो जाने के कुछ समय बाद ही तृतीय अवस्था का प्रारम्भ होना जरूरी है; परन्तु यह नियम भी कदाचित परिवर्त्तित रूप में आविर्भूत हो सकता है यानि स्वाभाविक नियम में जो अवश्य होना चाहिए उसका भी हेर फेर हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाता है। प्रारम्भिक दशा के अतीत हो जाने के बाद ही द्वितीय दशा में आनेवाले उपसर्गों का शमन न होते हुए रोगी को तृतीय दशा में आना पड़ता है—और मृत्युकाल पर्यन्त इसी दशा के अनुसार उसका भोग भी होता रहता है। पुनः यह भी देखा गया है कि किसी किसी रोगी के शरीर में द्वितीय अवस्था का कोई भी लक्षण प्रकट नहीं हुआ।

द्वितीय अवस्था के सूचक उद्भेदों के साथ अन्यान्य प्रकार उद्भेदों की विभिन्नता यह रहती है कि फिरंग के उद्भेद का शिखर प्रायः ही ताम्राभ और उसकी चारों ओर के वर्ण अन्य प्रकार के हो सकते हैं जिसमें खुजली का नामोनिशान नहीं रहता है। फिर इसमें खास बात यह है कि हाथ-पैरों के तलुवें पर उनके सामने की ओर, बालों (केशों) की जड़ में, छाती, होठों, कन्धों (स्कन्ध), माथे (ललाट), पर ग्रीवा (गर्दन) के पीछे इनका निर्गमन अवश्य ही होगा।

परिणाम :—

द्वितीय अवस्था के अन्त में वैधानिक तन्तुओं पर विष के प्रभाव द्वारा उत्पन्न होनेवाले रोग और उनके उपसर्गों का संक्षिप्त वर्णन—

(१) अस्थ्यावरणी प्रदाह (Periostitis)—अस्थियों के ऊपर चढ़ी हुई झिल्लियों का प्रदाह आदि होना।

(२) वात व गठिया (Rheumatism & Gout)—

(अंडकोष-प्रदाह (Orchitis)—वीर्य बाहिनी यानी रेतःरज्जु का रोग इसमें प्रायः ही एक ही ओर के अण्ड और उससे संलग्न नाड़ी में यन्त्रणा आदि होती है।

(४) अंडकोषार्वुद; (५) खालित्य (Alopecia) -इसमें शरीर के केशों का झड़ जाना खास करके मस्तक के।

रक्ताल्पता आदि आदि रोगोपसर्गों के साथ लसिका-ग्रन्थियों पर भी आक्रमण होता है।

तृतीयावस्था में गम्भीरतम तन्तुओं पर विष का कुप्रभाव पड़ने से निम्नलिखित लक्षण दिखाई देते हैं—

(१) तन्त्वार्वुद (Gummata) —यान्त्रिक प्रदाह जनित उसके अन्दर गहराई में एक प्रकार के अंकुर जिसकी उत्पत्ति होने से शरीर के ऊपरी भाग पर भी छोटे छोटे अर्वुद निकलते हैं। ये कभी-कभी पूयोत्पत्ति भी कर लेते हैं। इन अर्वुदों का आकार मटर से छोटा और श्रीफल (वेल) से बड़ा नहीं होता।

(२) अस्थ्यर्वुद (Nodes)—अस्थियों और अस्थ्यावर्णी झिल्लियों के प्रदाह जन्य ऐसे अर्वुदों की उत्पत्ति होना और यदि इनमें पूय संचार हुआ तो ये अस्थियों को विकृत कर देते हैं।

(३) अस्थिक्षत (Caries)—उपरोक्त कारणों से अस्थि-क्षत होने पर इसके परिणाम स्वरूप उसमें गलाव पड़ जाता है।

(४) अस्थि का क्षय (Necrosis)-अस्थियों में गलाव पड़कर इनका ध्वंस होना।

इसके अतिरिक्त एक प्रकार का अर्वुद जो चर्म व श्लैष्मिक कलाओं के नीचे उत्पन्न होकर क्षत के रूप में प्रकटित हो सकता है। अस्थ्यर्वुदों की उत्पत्ति शरीर के विभिन्न अवयवों में होने से तद्नुसार विशिष्ट रोगोपसर्ग तथा रूप आदि भी ले लते हैं जैसे;—

(१) अस्थ्यर्वुद के कारण उत्पन्न क्षत सूख जाने के बाद स्थानीय संकुचितावस्था यानी वहां के चर्म, मांसादि सिकुड़ जाते है।

(२) शिराओं तथा धमनियों पर अर्वुदों की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्पत्ति हुई तो शिरास्तम्भ और धमन्यर्बुद के समुदय लक्षण प्रकटित हो जायगे।

(३) यकृत, फुफ्फुस आदि यन्त्रों पर अर्बुदोत्पत्ति होना और उनके नानाविध उपसर्ग।

फिरंग की तीसरी अवस्था यदि अधिक दिन पर्यन्त स्थायी होती है तो उसके विष के प्रभाव से मस्तिष्क, हृदययन्त्र, फुफ्फुस आदि आक्रान्त होकर रोगी अचिरात् ही चल बसता है। स्वर-यन्त्र (Larynx), अन्त्र आदि आक्रान्त होने पर भी रोगी के जीवन की आशा कम ही रहती है।

फिरंग रोगी की विशेष यन्त्रणा

इसके रोगी की रोग-यन्त्रणा और उपसर्गों की प्रबलता सूर्यास्त से लेकर सूर्योदय-काल तक यानी रात्रिकाल में ही हुआ करती है।

ग्रन्थि परिक्षा द्वारा फिरङ्ग का निदान

फिरंग से ग्रसित रोगी के अंगों में क्षत होने से गले के नीचे गिल्टी उतर आती है। उंगुलियों पर फिरङ्ग के व्रण उत्पन्न होने से कुहनियों के नीचे, और जननेन्द्रिय पर होने से वंक्षण सन्धि- (रगों) की ग्रन्थियों का आकार बढ़कर गिल्टी के रूप ले लेते हैं। इसलिये फिरंग से ग्रसित रोगी अपने रोगेतिहास के वर्णन समय चिकित्सक को किसी भी हालत में ही धोखे में नहीं डाल सकती। क्योंकि चतुर चिकित्सक को उसकी गिल्टी की विवृद्धि से पता चलता है कि रोगी के शरीर में फिरंग का विष अवश्य ही विद्यमान कई वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी इसके शरीर पर इस कदर्य व्याधि के आक्रमण का चिन्ह गिल्टी की विवृद्धियों के रूप में सदैव नजर आता हैं।

वंश परम्परागत (Hereditary) फिरंग (शैशवीय उपदंश व फिरंग

फिरंग से ग्रसित माता-पिता की सन्ततियों को जो उपदंश या फिरंग के ऊपसर्गों का शिकार बनना प्राकृतिक नियम है यह सभी विज्ञचिकित्सक भली-भाँति, जानते हैं। शैशवकालीन इस आक्रमण को फिर स्वोपार्जित व वंश परम्परागत इन दो हिस्सों में रखा गया।

सन्तान के भूमिष्ठ काल में प्रसूति के जननेन्द्रिय के किसी स्थान पर उपदंश या फिरंग के क्षत का रहना और उस क्षतोत्पन्न विष द्वारा ऊसके शरीर पर व्रणोत्पन्न होना—शिशु-उपदंश का स्वोपार्जित भेद है। फिरंग-विष के प्रभाव द्वारा विकृत-वीर्य और आर्तवांडों से उत्पन्न सन्तान का यह भेद शिशु उपदंश में कौलिक अर्थात् वंश-परम्परागत कहलाता है।

निम्नलिखित लक्षण समूह "शिशु उपदंश" सूचक हैं।

सन्तान के भूमिष्ठ होने से ४५ दिन के अन्दर अन्दर ही उसके शरीर पर रोग-लक्षण प्रकट होने लगते हैं। कदाचित् अधिक समय पर्यन्त प्रच्छन्नावस्थामें रह कर बाद में भी हो सकते है। साधारणतया ये लक्षण दृष्टि-गोचर हो सकते है, जैसे—क्षत दोनों ओष्ठों के बीच, गुदामार्ग नासामार्ग आदि स्थानों पर सदैव बने रहते हैं; श्वासकष्ट खासकर स्तन्यपान कालीन श्वासकष्ट जो नासाभ्यन्तर की अवरुद्धता वशतः होता है। सर्वांग पर ताम्राभ उद्भेदोत्पत्ति, गुदामार्ग की चारों ओर छोटे-छोटे मस्से से निकलना, हाथ-पैरों के तलुवे पर रजत वर्ण के ऊद्भेदों का होना तथा शरीर के चमड़े पर खड़िया पोथने के समान धब्बे दिखाई देना; नेत्रों के अनेक प्रकारके उपसर्ग, अस्थ्यावर्णी-प्रदाह, जानु-सन्धि प्रदाह, अस्थिक्षत, जीभ, तालु और उसकी चारों ओर, मुख के अन्दर प्रायः सभी स्थान क्षत युक्त हो जाते हैं। पूतिकर्ण, कर्ण-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शूल, वधिरता आदि तृतीय अवस्था के उपसर्ग प्रायः ही प्रकटित हो जाते है। शिशु का शरीर जीर्ण-शीर्ण एवं गात्रचर्म संकुचित दशा को प्राप्त होता है। देखने से यह मालूम देता है कि मानों बन्दर का बच्चा"। उसके सिर के बाल (केश) या तो बिलकुल ही झड़ जाते या कहीं कहीं पर थोड़े बहुत रह जाते हैं।

कतिपय विशेष लक्षणों द्वारा रोग-निदान

(१) नधर व उधर इन दोनों के सन्धि स्थल पर क्षत के आरोग्य होने के उपरान्त उसका स्थायी दाग जिसे डाक्टरी शब्द में "हैचिन्सान्स लाइन" कहते हैं।

(२) नासास्थि के क्षत के कारण उसकी विकृति से नासिका के बीच का हिस्सा बैठ जाता, बाहर से शिशु नकेटा सा मालूम देता है।

(३) नासिका के मूल देश और दोनों भ्रूओं (भौयें) के बीच वाले स्थान में गड्ढा सा हो जाना (Frontal eminence);

(४) नीचे की पंक्ति के सामनेवाले चारों दाँतों का क्षय (५) मुखपाक; (६) मस्तक की अस्थि का कोई कोई हिस्सा फूलकर मोटा हो जाता है और कहीं अर्बुदोत्पत्ति भी। इसके अतिरिक्त माथा और कनपट्टियों की भी यही दशा होती है।

उपरोक्त लक्षणों के अतिरिक्त अस्थि सम्बन्धी अन्य एक प्रकारकी पीड़ा हो सकती हैं जिसे डाक्टरी भाषा में (Atrophy of bone) कहते हैं। ऐसी हालत में शिशु के मस्तक के पिछले हिस्से की हड्डी बिलकुल पतली पड़ जाती देखने से मालूम देता हैं कि मानों यह एक कागज द्वारा बनाया गया सिर। शिशुओं को जो 'फक्क' यानी अस्थि-कोमलता (Rickets) नामक रोग साधारणतः हुआ करता है, उसके साथ शिशु-उपदंश जनित उक्त अस्थि-विकृति का कोई भी सामंजस्य नहीं।

स्तन्य दात्री को चेतावनी

उपदंश से ग्रसित शिशुके स्तन्य दात्री के स्तनों में जो क्षतोत्पन्न होते हैं यह मानी हुई बात है पर शंका तो इसी बात की हैं कि अपनी माताको यह क्यों आक्रमण नहीं करता? इसके जवाब में यह कहा जाता है कि माता के गर्भाधान काल में किम्वा तत्पूर्व ही से यह विष उसकी माता के शरीराभ्यन्तर विद्यमान रहकर उसके शरीर में एक प्रकार "संरक्षणात्मक शक्ति"—Immunity का संचय कर दिया जिससे वे इस विष के पुनराक्रमण से हमेशा के लिए छुटकारा पा सकती है।

उपदंश-पीड़ित शिशु के लिए धात्री-माता की व्यवस्था—

किसी कारणवश शिशु अपनी माता के दूध पान से वंचित होता है अथवा उसके जन्म के उपरान्त उसकी मृत्यु हो जाती हो तो उसके जीवन बचाने के लिए "धात्रीमाता"—(Wet-Nurse) की आवश्यकता होती है और ऐसी परिस्थिति में उसका निर्वाचन भी उचित ढंग से होना चाहिए। शील स्वभाव से सम्पन्न कोमलांगी स्वस्थ दुग्धवती स्त्री ही धात्री-माता के स्थान पर शिशु के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकतीं है पर जब उसके रक्तादि का परीक्षण वैज्ञानिक रीति के अनुसार कराया जाए अन्यथा शिशु का जीवन खतरेसे खाली नहीं। धात्री माता के निर्वाचन काल में इन बातों पर अधिक ध्यान देना चाहिए, जैसे-रक्त का परीक्षण वैज्ञानिक रीति के अनुसार (वाशर मैन टैस्ट); ग्रन्थि-परीक्षा हाथ-पैरों के तलुवे में काले धब्बे; स्तन-वृन्तों और उसकी चारों ओर की जगह पर फटे-फटे दाग। ऐसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लक्षणों से मिलती जुलती शरीरवाली स्त्री चाहे वह अप्सरा हो या देवी वह निषिद्ध है।

फिरङ्ग के रोगी का पाणि-ग्रहण

रोगी के शरीर में "द्वितीय दशा" का भोगकाल समाप्त होने के पूर्व उसके द्वारा उत्पन्न सन्ततियों को रोगग्रस्त होकर ही जन्म लेना होता है इसलिए एसी हालत पर विवाह-बन्धन के फेर में पड़ना अनुचित होगा। पाणि-ग्रहण कार्य तो कम से कम 'तीसरी दशा" के बीतनेके बाद ही करना चाहिए।

फिरंग के साथ औपसर्गिक-मेह (Gonorrhæa) तथा उपदंश की तुलनात्मक सामञ्जस्यता और पार्थक्यता के विषय में संक्षिप्त विवरण यहाँ दिया गया है।

औपसर्गिक मेह के साथ फिरंग का सामञ्जस्य

(१) दोनों रोग ही अपने अपने विषोत्पन्न प्रभाव द्वारा अन्य शरीर पर प्रकटित होते हैं—जिनका मार्ग है जननेन्द्रिय और उसके पारस्परिक सम्पर्क स्थापन।

(२) दोनों ही रोगों से ग्रसित व्यक्तियों के जनन-यन्त्र क्षत-युक्त होते हैं।

(३) दोनों रोग ही जन्तुसंक्रमण द्वारा शरीराभ्यन्तर में विष-क्रिया उत्पन्न कर देते हैं।

(४) ग्रन्थि-विवर्धन (गिल्टी उभर आना-Bujo) उभय रोग का ज्ञापक लक्षण है।

(५) दोनों रोग ही स्त्री पुरुषों के अन्योन्याश्रित सहवास जनित संक्रामक है।

फिरंग के साथ उपदंश का सामञ्जस्य

(१) दोनों ही रतिज - रोग हैं। (२) उभय रोग में ही जननेन्द्रिय पर क्षतोत्पन्न होते हैं।

(३) ग्रन्थि का विवर्धन उभय रोग के सूचक लक्षण हैं। पार्थक्यता—

औपसर्गिक-मेह

(१) इस रोग के कीटाणु मूत्रमार्ग द्वारा संक्रमित होते हैं।

(२) पुरुषाँग व योनि और मूत्रनली में क्षतोत्पन्न होता है।

(३) इसकी गिल्टियों में शीघ्र ही पूयोत्पत्ति होती है।

(४) ग्रन्थि विवर्धन वंक्षण-संधियों को आश्रय करके ही होता है।

(५) इसमें किसी प्रकार के उद्भेदादि का निर्गमन नहीं होता।

(६) मूर्ग मार्ग में से यन्त्रणादायक पूय तथा मूत्रकृच्छता इसमें विशेष लक्षण है।

(७) इसमें "कठिन क्षत्" नहीं होता है।

(८) रोग के परिणाम—अस्थि-माँसादि का ध्वंस नहीं होता परन्तु भोगकाल में दुग्धवत्, श्लेष्म स्राव प्रायः होता रहता है।

फिरङ्ग

(१) इसके रोग-कीटाणु जननेन्द्रिय के विच्छिन्न चर्मादि के मध्य से संक्रमित होते हैं।

(२) जननेन्द्रिय-मुख और उसकी आवरक झिल्लियों के अन्दर क्षतोत्पन्न होता है।

(३) इसकी बढ़ी हुई गिल्टियों में पूयोत्पति नहीं होती।

(४) गिल्टियाँ—इसमें रगों के ऊपरी हिस्से पर उभर आती है।

(५) इसमें विभिन्न प्रकार के उद्भेद निकल आते हैं।

(६) इसमें किसी भी प्रकार का स्राव नहीं होता।

(७) इसमें "कठिन क्षत" होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(८) रोग के भोग के परिणाम चर्म, मांस, अस्थियां आक्रान्त होना और उसके अन्त में पक्षाघात आदि से मृत्यु।

फिरङ्ग

(१) यह भयानक संक्रामकधर्मी पीड़ा है।

(२) स्त्री-पुरुष दोनों ही इससे आक्रान्त हो सकते हैं।

(२) जननेन्द्रिय पर क्षतोत्पन्न करके ही यह रोग प्रकटित होता है।

(४) शरीरस्थ "सप्त-धातु" इसके द्वारा दूषित हो जाते हैं।

(५) "कठिन-क्षत" (Hard-chancre) इसका विशेष लक्षण है।

(६) यह रोग होने से शरीर पर अनेक प्रकार की पिड़िकाओं की उत्पत्ति, तालुशोष, नासिका क्षत आदि होता है।

(७) गिल्टियां इसमें रगों के ऊपरी हिस्से पर ही निकलती है।

(८) इस रोग से सम्बन्धित वीजाणु के संक्रमण से रोगोत्पत्ति होती है।

पार्थक्य उपदंश

(१) रोग-संक्रमण की आशंका इसमें नहींहै।

(२) यह रोग केवल पुरुषाश्रित है।

(३) यह पुरुषेन्द्रिय के स्थानीय रोग होने के कारण स्थानिक रोगोत्पन्न होना इसका भेदात्मक लक्षण है। व्रण के अतिरूप में परिवर्तित होने का कोई निश्चित नियम नहीं।

(४) रस-रक्तादि इसके आक्रमण से दूषित नहीं होते।

(५) "कोमल-क्षत" इसका विशेष ज्ञापक है।

(६) उद्भेदादि इसमें नहीं दिखाई देता पर क्षत उत्पन्न होता है।

(७) गिल्टियाँ इसमें वंक्षण-सन्धि पर ही बढ़ जाती है।

(८) हस्त नखादि के आघात, अस्वाभाविक रक्तक्रिया किम्वा अत्यन्त सम्भोग के कारण ही यह रोग उत्पन्न होता है।

चिकित्सा—साधारणतः दो प्रकार की होती है—(१) प्रतिषेधक और लाक्षणिक। रोग आक्रमणसे छुटकारा पानेका सर्वोत्तम उपाय है संयम और पवित्रता। इस से पीड़ित व्यक्ति के क्षत में से निर्गत क्लेदादि के संस्पर्श होने पर ही इसका संक्रमण होना अनिवार्य है। फिर रोगी द्वारा व्यवहृत वस्त्रादि तथा भोजन-पात्र व उच्छिष्ट से भी रोगोत्पन्न हो जाता है।

लाक्षणिक चिकित्सा—रोगावस्थानुसार विभिन्न औषधोपचार के साथ क्षत-शोधन का उपाय करना अत्यावश्यक है। इसके लिये उपदंश की चिकित्सा में बताये हुए सभी साधनों को अपनाना चाहिये। गिल्टीं का उपद्रव फिरंग में बड़ा ही कष्ट देने वाला होता है इसलिये इसे शीघ्रातिशीघ्र पकाने की व्यवस्था भी करनी चाहिये ताकि विष के प्रभाव से संचित शोणित-विकार इसी मार्ग से निकल कर रोगी को शान्ति प्राप्त हो जाय। अलसी, तुकमरहम, गेहूँ का आटा, घी, हरिद्रा आदि संमिश्रित लूगदी (Poultice), टंकण-क्षार का का प्रस्वेद देकर अथवा कबूत्तर की वीट किम्वा सेमर (शिमूल) के कांटे को चन्दन की तरह घिस कर लगाने से गिल्टियां शीघ्र ही फूट जाती है, औषधोपचारों की असफलता पर शस्त्रोपचार की आवश्यकता पड़ती है।

निम्न लिखित प्रयोगों से काम लेना चाहिए—

अमृतादि क्वाथ, निम्बादि क्वाथ, अनन्ताद्य घृत, आमर धूमादि तैल, रसशेखर, रसगुग्गुलु, रसादि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धूम, भूनिम्बादि घृत, सारिवादि आसव, सारिवाद्यरिष्ट, वृ० मरिचादि तैल, कर्पूर भांडेश्वर आदि।

फिरंग की सामान्य दशा पर निम्नलिखित व्यवस्था-पत्र अनुभूत है—

नं० १—भूनिम्बाद्य घृत। समय-प्रातः, मात्रा—आधा पाव अनुपान—गर्म दूध।

नं० २—अनन्ताद्य क्वाथ। समय-पूर्वाह्न नौ बजे, मात्रा—एक छटाँक।

नं० ३—रस-शेखर। समय—सन्ध्या, मात्रा—१ वटी, अनुपान—दूध। (क) रसगुगुल। मात्रा—२ वटी, अनुपान—मैदा के आटे के पुट में रख कर खाकर ऊपर से दूध। रोजाना दो दफे चौदह रोज तक सेवन करना चाहिए।

क्षत-शोधनार्थ त्रिफला का इषदुष्ण काढ़ा उत्तम है। गिल्टी को अगर बैठाना हो तो घीकुवार के पत्ते के एक ओर के छिलके को उतार उसे गिल्टी के ऊपर लगाकर ३।४ दिन बांधना चाहिए। ३।४ घन्टे के बाद पुनः बदल देना होगा। अश्वत्थ (पीपर) की छाल का चूर्ण करके उसके साथ पापड़ी कत्था मिला कर या त्रिफला-भस्म, टंकणाम्ल (एसीड बोरिक) और कैलोमेल के सम भाग चूर्ण की बुर्की देने से घाव जल्दी ठीक हो जाता है।

सम्भोग-क्रिया के बीस-तीस मिनट से पहले पाँच ग्रेन (ढाई रत्ती) कैलोमेल का सेवन शीतल जल के साथ किया जाए तो किसी भी हालत में स्वस्थ शरीर पर रोग का आक्रमण नहीं होगा। यह घोषणा अर्वाचीन चिकित्सक आसलर साहब पचास-साठ साल से पहले ही कर गये हैं।

उपदंश व फिरंग के लिए पारद निर्मित औषधादि आम तौर से इस्तेमाल होती हैं परन्तु असावधानी से होनेवाले परिणाम पर विचार की दृष्टि डालने से इसके ऊपर से तबीयत खीसक जाना स्वाभाविक है। इसके असंगत प्रयोग जनित कुप्रभाव रोगी पर पड़ता है। उसमें मुँह, मसूड़े आदि का सूजन, लार गिरना (लालाधिक्यता) दन्तमूल से रक्तस्राव, अत्यधिक कण्डू, उदरामय आदि ही अधिक होते है।

फिरंग के परिणाम स्वरूप शीतपित्त, कोष्ठबद्धता अस्थियों में वेदना आदि उपसर्ग पर विवेचनापूर्वक योगराज, कैशोर आदि गुग्गुल का प्रयोग किया जाए तो आशातीत लाभ होता है। क्षत व शोणित-शोधन के लिए पंचतिक्त, महा खदिरक, महातिक्तक घृत आदि की व्यवस्था करनी चाहिए।

पथ्यापथ्य—चना, मूंग, मसूर की दाल, घी-खिचड़ी, हलुआ-मोहनभोग, पूरी-परोठा, साग-सब्जियों में—करेला, सहजना, गूलर, परवल, आलू, कलम्बी-शाक, फल-फूलों में—अंगूर, सेव, किशमिश, मुनक्का, काजू आदि।

विधि-निषेध—फिरंग की किसी भी हालत में शैत्य-क्रिया नहीं होनी चाहिए। मदिरा, मछलियाँ मांस, दधि, तक्र, तैल, सिगरेट का सेवन, मल-मूत्रादि का वेग धारण दिवानिद्रा, व्यायाम, मादक द्रव्यों का सेवन, मैथुन आदि वर्जनीय हैं तथा रोगी के लिए सम्पूर्ण विश्राम, दन्त-संस्कार व सुखोष्ण जल द्वारा अंग-संस्कार अत्यावश्यकीय है।

विशेष द्रष्टव्य—भारतीय प्रगतिशील पाश्चात्य आभिजात्यानुसरण करनेवाले डाक्टरों की उपदंश-विषोन्मूलिनी सिद्धौषधियोंमें से वर्त्तमान भारत के सर्वरोग हर पेनिसीलिन आदि का प्रयोग प्रत्येक पद्धति के चिकित्सक कर रहे हैं इसलिए इसका उल्लेख यहाँ न होना ही समझकर केवल भारतीय अभिजातीय के उद्बोधक और उसकी संस्कृत चिकित्सा आयुर्वेदीय का संक्षिप्त वर्णन दिया गया जिससे वैदेशिकी जातिकी पराकाष्ठा से हमें "वन्धन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुक्ति" और "कांचन-मुक्ति" दोनों ही सिद्धियों का साधन उपलब्ध है। पेनिसीलिन के "भव-रोग नाशन" आविर्भाव से पहले भी जो जो सिद्धौषधियों को अर्वाचीन आविष्कार हुआ था उनमें मल्लोत्थित महौषधियाँ—एन०ए० वी०, सल्फर्सेनाल, एसीटिलार्सन मेफर्साइड आदि के नाम से कम से कम पचासों औषधियाँ इसी पर्याय की है और उनसे भी हमारे पाठक वर्ग सुपरिचित ही होंगे। अतः व्यर्थ आलोचना से निवृत्त होने के कारण अगर प्रिय पाठको के हृदय पर कोई शंका आ खड़ी हो जाय तो वे कृपया उसके समाधानार्थ हमें सूचना देने का कष्ट करे तो उनका आभारी रहेंगे।

—❀—

दन्तशठा (इमली)

(ले०—श्री दामोदर प्रसाद शर्म्मा "वैद्य विशारद" "चुरू निवासी")

नाम—अम्बिका, चुक्रिका, अम्ली, चुक्रा, दन्तशठा, अम्ला, चिंचिका, चिंचा, तिन्तिडीका, वृक्षाम्ल, आम्लीका, भुक्ता, चरित्रा, गूरूपत्रा, पिच्छिला, यमदूतिका, पंक्तिपत्रा आदि इमली के संस्कृत नाम है। अन्य भाषाओ में जैसे हिन्दी में-इमली, बंगला-तेतुल, मं०—चिंच, आ—तमर हिंदी, गु०-आँबली, तथा क० हुलिचे आदि नामों से इमली को पुकारा जाता है।

परिचय—इमली अमेरिका, अफ्रीका और एशिया के बहुत से भागों में पाई जाती है तथा भारतवर्ष के अनेक प्रान्तों में इसकी उत्पत्ति होती हैं। इसका पेड़ बहुत बड़ा होता है, एवं आठ वर्ष बाद फल देता है। माघ फाल्गुन से वैशाख तक फल पकते हैं। इमली में खट्टापन होता है अतः इसका कम खाना ही लाभप्रद है। इसके पत्ते चौटली के समान डालियों में दोनों ओर बराबर लगे रहते हैं और खट्टे होते हैं। फूल गुच्छों में लगे रहते हैं, रंग पीला २ उनमें कुछ लाल २ विन्दु से पड़े रहते हैं। फलियें तिरछी और लम्बी होती है। उसको कटारा कहते हैं उन कटारों पर छिलके रहते हैं और उनको छिलने पर अन्दर से गुद्दा निकलता है। इन गुदो में भी एक कठोर वस्तु रहती है, जिसको हम बीज कहते हैं, असल में उसे चोइये (कइयें) कहते हैं। यह दो प्रकार की होती है, लाल गूदेवाली व सफेद गूदेवाली।

औषध प्रयोग—इसको अनेक रोगों पर व्यवहार में ला सकते हैं जैसे:—

(१) विच्छू के डंक (काटे) पर—बीज भूनकर अथवा कच्चा ही सफेद भाग निकलने तक घिसकर डंक पर चिपका देवें। दर्द दूर करके अपने आप गिर जाता है।

(२) खूनी बवासीर (अर्श) पर-इमली की बाहरी खुरदरी छाल का कपड़छान चूर्ण दोनों बार गाय के दही के साथ देना लाभप्रद है।

(३) क्षत कास पर—अर्थात् छाती में वायु क्षत उत्पन्न कर रक्त गिराता हो तो-भूने हुए इमली के बीजों का छिलका निकाल कर चूर्ण कर और शहद तथा ताजा घी से देवे।

(४) बिना कड़क के सुजाक पर—बाहरी छिलके का चूर्ण ६ माशे तथा नारियल के आधा पाव अंग रस से देना लाभदायक है।

(५) शूल रोग पर—इसकी छाल की भस्म वा छाल का चूर्ण गरम पानी में देने से शूल रोग शान्त होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(६) पांडुरोग पर—छाल की काली राख १ तोला बकरी के ४ तोले मूत्र से देवें।

(७) शीतला रोग न होने देने के लिये—इमली के बीज और हल्दी के चूर्ण को ठंडे पानी में देने से शीतला का प्रकोप नहीं होता।

(य) गले का कौवा (कागलिया) लटक आने पर:-इमली के बीज ठण्ढे पानी में पीस कर तलुवे में लेप करना चाहिये।

(९) चूहे के विष पर—इमली ४ तोला और घेरौसा २ तोले पुराने घी में मिला कर सात दिन तक लगावें।

(१०) अतिसार पर:—इसके पत्ते पीस कर ३ तोला चावलों के पानी में ईंट बुझाकर उसके साथ देने से अतिसार ठीक हो जाता है।

(११) अन्न न पचने पर:—इमली की ऊपरी सूखी छाल को वनकंड़ों में जलाकर रंख लेना चाहिये और सोते समय में ६ माशे खाकर गरम पानी पीने से फायदा पहुँचता है।

(१२) कर्णमूल पर:—इमली का दूध या रस गरम करके नोनवाली जमीन पर डालना और जमीन पर से उवाल लेकर उसका लेप करना।

(१३) बच्चों की रक्त संग्रहणी पर:—इमली की छाल का चूर्ण ६ माशे तक २ तोले अध धुले दही में मिला प्रातः सायं तीन दिन तक देवे।

(१४) भांग के नशे पर—इमली को पानी में डालकर पिलाने से जोर से चढ़ी हुई भांग का नशा तुरन्त ही शान्त हो जाता है।

(१५) पेचिश और मुर्रा पर—इमली ९ भाग और भिलावे ८ भाग पीस कर सफेद प्याज के रस में मिला कर कपड़े से छाना रस पीने से उबकाई आदि बन्द हो जाती है तथा यदि विष वाले जन्तु हों तो गिर कर मर जाते हैं और पेचिश रोग ठीक हो जाता है।

१६ सिंगरफ के विष पर—चार सेर पानी में आधा सेर इमली के बीज उबाल कर ७ दिन तक कुल्ले करना चाहिये।

१७ थूहर और आक के विष पर—इमली के पत्तों का लेप करे।

१८ बैल का पैर सूजा हो तो—ईमली के पत्ते और आमले-बांवी (चिऊँटियें के बील की मिट्टी को गरम करके उसकी पुटरियों से सेंक करना लाभदायक है।

१९ अरुचि और पित्त पर—अच्छी पक्की और मोटी इमली ठंडे पानी मे भिगो कर मलना और शक्कर डालना फिर छान लेना तथा बड़ी इलायची, लौंग, कपूर, काली मिर्च का चूर्ण डाल कर बार बार कुल्ले करना अच्छा है।

२० इमली का शरबत—पित्त तथा कोष्ठ-बद्धता पर—एक सेर इमली को दो सेर पानी में ४ पहर तक भिगने दें, बाद में छान कर आग पर चढ़ा कर आधा शेष रहने पर २ सेर शक्कर डाल कर शरबत बना लें। मात्रा—३ से ५ तोले तक, बद्धकोष्ठता पर रात को और पित्त पर सबेरे देना बहुत गुणकारी है।

इमली का पन्ना—पक्की इमली को जल में भिगो कर खूब मल लें, इसको अम्लिका प्रपानक (इमली का पन्ना) कहते हैं। यह वात विनाशक, पित्त तथा कफकारी, रुचिकारक और अग्निवर्द्धक है।

गुण—इसका वृक्ष भारी होता है, गरम, खट्टा; पित्तकर, कफप्रद, रक्तकोपन और वात नाशक है।

इसका फल—कषैला, स्वादिष्ट, खट्टा, रुचि-कर, विशद अग्निदीपक, हल्का और वायु कफ तथा प्रमेहनाशक है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्ते और बीज—सूजन तथा रक्तदोष नाशक एवं बहुत खट्टे, ग्राहक गरम, रुचिकर, अग्निदीपक, रक्तपित्त, कफ, पित्त कुपित करने वाले हैं।

पक्के और सूखे बीज—मीठे, दस्तावर, मलस्तम्भक, और व्रणदोष एवं कृमिनाशक है, श्रम, भ्रान्ति, तृषा आदि नाशक है।

इमली का फल भात, दाल आदि के साथ मिला कर भी खाया जाता है। नई इमली से पुरानी विशेष लाभप्रद है। इसके बीजों का तेल भी निकाला जाता है जो व्रण, कृमि आदि रोगों में लाभदायक है।

"नवाकर्षण"

ले० डा० भवानी प्रसाद गुप्त एम्० बी० बी० एस० पो० रसड़ा (बलिया)

(गताङ्क से आगे)

Red colour

लाल रंगका प्रभाव नेत्र, ग्रन्थि, लसीका, मांस पेशियों, वात सूत्रों तथा हलक पर एक सा पड़ता है। लाल रंग कफ प्रकृति के अनुकूल है। मानव प्रकृति का परिवर्तन रोगावस्था में सम्भव है। प्रकृति परीक्षा हम अन्त में लिखेंगे) इस की क्रिया पीड़ा निवारक, शक्ति-वर्द्धक, उत्तेजक, प्रदाह-हारक और ग्रन्थि विकार शामक है। रोग मुक्त होने पर जो निर्बलता शेष रह जाती है उसे यह दूर कर देता है। ऐसी अवस्था में १ ग्लास की मात्रा में सेवन करना चाहिये। ऐसी मात्राएँ हर दो २ घण्टे पर देने की आवश्यकता होती है। निम्न रोगों में इसका वाह्य प्रयोग कियो जाता है। मगर वाह्य प्रयोग में शरीर रचनाका विशेष ज्ञान अनिवार्य है। इसमें आकर्षण शक्ति (Law of palarity) का ज्ञान जरूरी है।

स्वर यंत्र का प्रदाह तथा आननक्षत में इसका गरारा (कुल्ली) लाभदायक होता है।

अर्द्धांग वात, लकवा, कमर उदर और गर्भाशय की पीड़ा में इसका वाह्य प्रयोग लाभकर होता है। चोट, मोच, कुचल जाना और छिल जाने पर लगाया जाता है। मगर ध्यान रहें घाव तथा छिले स्थान पर नहीं लगाना चाहिये अन्यथा कष्ट का होना सम्भव है। सुस्ती और अंग फड़कने में भी इसका वाहरी उपचार अच्छा होता है। ज्वरों एवं अन्यान्य प्रदाह जनित रोगों में इसका व्यवहार हानिकर होता है। (Colic), वृक्क, अन्त्र, मासिक धर्म समय, इन के शूल में और मूत्रावरोध एवं मूत्राघात तथा हिचकी प्रभृति में भी वाह्य प्रयोग से उपकार होता है। लाल रंग योगवाही है इसलिए शरीर के उन स्थानों पर लगाना चाहिये जो योग न देनेवाले हो।

Yellow colour

पीला रंग भी कफ प्रकृति की ही औषधि है, अन्तर केवल तीव्रता और न्यूनता का है। यह कृमि विनाशक है केवल तीव्रता और न्यूनता का। और इसका विशेष प्रभाव शुष्मणा के वातज तन्तुओं पर वड़ा ही सुन्दर पड़ता है। शूल, रक्ताल्पता, ऐंठन, वमन, नाशक एवं वातज तन्तुओं को शक्ति देनेवाला है। इस का प्रभाव मलाशय तथा आँतों पर भी अच्छा पड़ता है। इसलिये यह मृदु विरेचक तथा अंत्र दोष में व्यवहार करना चाहिये। मांस पेशियों और स्नायु मण्डल पर इसकी विशेष क्रिया देखी गई है। मांसपेशियों और स्नायु मण्डल में जब तनाव हो तब इसका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रयोग करना हितकर है। यह बच्चों के जमुवा या (Tetarms) मृगी, हिस्टीरिया, जकड़न, उन्माद, एवं अनिद्रा में यह औषधि अपना चमत्कार दिखाती है। वातज उष्णताकी चाहे जितनी भी प्रवलता हो। रोगी उठकर भागता हो, काटता हो रात भर सोता न हो निरर्थक एवं वहमी बातें करता हो, ख्याली पुलाव पकाता हो, अपने शरीर को काँच का बना अनुभव करता हो, कम्पन प्रभृति घोर सान्निपतिक अवस्था में दिन में ३-४ वार १-१ ड्राम देने से बड़ा उपकार होता है। यह योग न देने वाला रङ्ग है अतः वाह्य प्रयोग इसका योग देनेवाले स्थानों पर करना चाहिये। १ औंस की मात्रा में गरम दूधसंग देने से मलावरोध को मिटा देता है और मल ढीला होकर निकल जाता है। इसका व्यवहार अविराम गति से नहीं करना चाहिये अन्यथा कब्ज बढ़ जाता है और निर्वलता आने लगती है। यह ध्यान देने योग्य बात है कि जब तक विशेषथ्येय प्राप्तिकी इच्छा न हो इसका व्यवहार नहीं करना चाहिये। कृमि विनाशके लिये २ या ४ ड्रामकी मात्रा देनी चाहिये।

लाल रंग के समान पीला रंग भी कफ प्रकृति में ही व्यवहृत होता है। पर ये ज्ञानार्जन की बातें हैं कि पीला रंग लाल रंग के प्रतिकूल है। लाल रंग के व्यवहारसे जब रक्त वाहिनी धमनियाँ प्रसारित हो जाती है। जिससे रक्त प्रवाह का वेग बढ़ जाता हो या उष्णता आ जाती हो, तब पीला रंग उसको शांत कर देता है। यह नोट कर लेने की बात है कि लाल और ब्लू दोनों ही रंगों के उपद्रव का पीला रंग शामक है। ज्वर की तीव्रता को घटा देता है और आमाशय की उत्तेजना को भी शांत करता है। लाल रंग योग देनेवाला है और पीला रंग योग न देनेवाला है। अतः शरीरके योग न देने वाले स्थान पर लाल रंग का वाह्य प्रयोग करना चाहिये साथ ही योगवाही स्थानों पर पीला का प्रयोग करना चाहिये। अथवा लाल या नीला रंग का प्रयोग होनेके दो ४ सेकेन्डके पश्चात् ही शरीर के मध्यभाग (Nutral Parts) पर पीला रंग का व्यवहार अनिवार्य बन जाता है। सारटीना पर इसका व्यवहार जादूई असर दिखाता है। उंगली में एक भयानक पीड़ा एवं गर्मी देनेवाला शोथ होता है। जिसे साधारण बोल चाल में विषहरी कहते हैं। पीला रंग के पानी में रुई भींगों कर बांधने या ऊंगली को पीला रंग के पानी में डुबा रखने से वडी शांति मिलती है। इस पीला रंग के पानी से स्नान कराना उस समय बड़ा उपकार होता है जब रोगी ज्वर की तीव्रता से व्याकुल हो रोता है किम्वा वातज उष्णता की प्रवलता होती है। साइटिका में जब वाहरी प्रयोग से लाभ नहीं होता हो तब इसका चर्मगत स्थानीय सूचीवेध द्वारा शीघ्र लाभ होता है। इस पानी का खुले घाव पर भूल कर भी प्रयोग नहीं करना चाहिये। रक्त प्रवाह की विशेषता हो अथवा बिमारी के बाद की निर्वलता कम होती हो यानी रोगी में वल आना प्रारम्भ हो गया हो तब इसका व्यवहार नहीं करना चाहिये। यहां पर रक्त प्रवाह का अर्थ होता है जिसका स्वभाव ही रक्त प्रवाह का बन गया हो। वल आते हुए भी जब शारीरिक उन्नति के रुक जाने का भय हो इसका व्यवहार कदापि नहीं होना चाहिये।

पीला रङ्ग का विश्लेषण।

पीला रंगमें कठिन, नाईट्रोजन, आक्सीजन, कैलिसयम, वेरियम, आएरन, क्रोमियम, निकिल, कापर, जिंक, स्ट्रांटियम, केडनियम कोवाल्ट, मेगनिज़, अल्मुनियम और टिटोनियम का मिश्रण रहता है।

इनके देशी नाम का उल्लेख हमने नहीं किया है जो आसान पर समझने में अन्तर आ सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पीला रङ्ग का अभाव।

जब शरीर में पीले रंग की न्यूनता आ जाती है तब मन्दाग्नि, अरुचि, अनिद्रा, शारीरिक शूल, हड़कल, जम्हाई, मल का वर्ण नीलाहट लिये, और मूत्र में शूल लालिमा, नाखून और चमड़े में शुष्की और नेत्र में लालिमा दिखाई देती है।

पीला रङ्ग का वाह्य प्रयोग।

इस विषयको गुण धर्म प्रभावमें विहंगम दृष्टिसे रख दिया गया है विशेष जानकारी सिंहावलोकन में मिलेगी (Blw color)

यह नीला पानी रक्तप्रकृत्ति (पित्तज) के अनुकूल है, इसकी आकर्षण शक्ति लाल रंग की तरह योग-देने वाली है। अतः इसका वाह्य प्रयोग योग न देने वाले स्थानों पर होना चाहिये। योग देनेवाले स्थान को पाजीटिव और योग न देनेवाले स्थान को निगेटिव Negative Parts कहते हैं। इसका प्रभाव धमनी, शिरा, केशिकाओं, स्वरयंत्र, रक्त तथा वातसूत्रों एवं हृदय पर पड़ता है। मगर इसका विशेष प्रभाव हृदय के अर्द्ध बाम भाग पर पड़ता है। अतः धमनी नाड़ियों की रक्तगति का सुधार करने में सिद्ध है। वल प्रदान करने वाला तथा रक्त की गति को ठीक अथवा समान रखने वाला है। पर नीला रंग कष्ट को नाश करने वाला, वद्धता कारक, उपदंश निवा-रक, प्रदाहहारक, तृष्णा शामक, और व्रणपूरक है। इसके लिये वाह्य और अंतरीय प्रयोग बड़ी मात्रा में किया जाता है। रक्तस्राव को वह चाहे किसी भी शारीरिक वाह्य या आन्तरी अवयवों से पूर्ण प्रवाह (वेग) से होता हो तुरन्त वन्द कर देता है। ऐसी सफलता में लाल रंग तो विल्कुल ही विपरीत हैं। पीला रंग भी नहीं देना चाहिये। कारण ऐसी अवस्था में पीला रंग रक्तवाहिनी नाड़ियों की पेशियों को प्रसारित कर देता है। जिससे शोथ आ जाती है। और रक्त का प्रवाह तीव्र गति को प्राप्त होता है। ऐसी स्थिति में नीला रंग का पानी ही व्यवहार में लाना चाहिये। क्योंकि नीला रंग में संकोचक शक्ति की प्रचुरता है। यह रक्तवाहिनी नाड़ियों को सिकोड़ देता है। जिससे रक्त प्रवाह में लाभ होता है। जव मस्तिष्क में रक्त का दवाव वढ़ जाता है तव कानों में घन-घनाहट के शब्द होने लगते हैं। चक्कर आने लगते है। प्रवाह की वृद्धि होने लगती है। इन अवस्थाओं एवं प्रदाहजनित ज्वर में इस नीले रंग से प्रर्याप्त लाभ होता है। रक्त प्रवाह को शीघ्र रोकने के लिये घण्टे आध घण्टे पर नीला रंग का पानी ४ औंस की मात्रा में देना पड़ता है। सक्त्मे की वीमारी में जिसके अन्त में लकवा होने का भय रहता है इसके व्यवहार से आशातीत लाभ होता है। रक्त प्रदर में इस पानी का कमाल देखने योग्य होता हैं। शीतकाल में यदि एक मात्रा ले लीजिये तो सर्दी से वच सकते हैं। घावसे रक्त स्राव होने में, शिराओं के फूल जाने में, खूनी वावसीर में, तथा सर्व प्रकार व्रणों में एक आशीर्वाद है। धड़के के रोग में, वाहरी और भीतरी फोड़ों में, आदर्शवान दवा है। खांसी की खुशकी में इसको देने से फौरन कफ ढीला हो जाता है। हृदय की तीव्र गति को मन्द करने तथा वातज उष्ण में अच्छा लाभ होता है। इस जल का आदरणीय काम जलन को दूर करना है। जहां कहीं हृदय डूबने लगता है तव इसका व्यवहार कदापि नहीं करनी चाहिये। अन्यथा शीघ्र मृत्यु सम्भव होगी।

क्रमशः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विटामिन और हमारा खाद्य

कविराज एस० एन० बोस एल० ए० एम० एस० एम० सी० ए०, इन्दौर

गताङ्क से आगे

जैसे - जैसे विज्ञान उन्नति पर पहुँच रहा है ऐसे ही विटामिन सम्बन्धी ज्ञान हमें अधिकतर मिल रहा है। परन्तु डाक्टरों के अलावा साधारण जनता उस विषय में सूक्ष्म विचार से कोई लाभ नहीं उठा सकेगी इसलिये इस निबन्ध में हम सूक्ष्म विचार को छोड़ कर केवल विशेष प्रयोजनीय तथा साधारण जनता के बोधजन्य विषयों पर प्रकाश डालने की चेष्टा करेंगे। विटामिनों के अन्दर भी केवल प्रधान विटामिनों के विषय पर ही प्रकाश सार्थक होगा जिससे जनता तत्सम्बन्धी ज्ञान से लाभ उठा सके, अपने दैनिक व्यवहार में उपयोग कर स्वास्थ्य ठीक रख सके। विटामिनों के अन्दर विटामिन 'ए' विटामिन 'बी' श्रेणी के भीतर विटामिन 'बी,' १, विटामिन 'बी' २, विकोटिनिक एसिड तथा विटामिन 'सी', एवं विटामिन 'डी' प्रधान हैं जिनके सम्बन्ध में हमें प्रयोजनीय ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है—इसके साथ विटामिन 'ए' तथा विटामिन 'ई' के सम्बन्ध में संक्षेप में चर्चा की जायगी और खाद्य द्रव्यों के भीतर शरीर रक्षोपयोगी प्रयोजनीय पदार्थ—कैलसियम, फसफरस तथा लौह किस किस में ज्यादा परिमाण में रहता है—इस पर भी प्रकाश डालने की चेष्टा की जायगी। आशा है जनता चाहे गरीब श्रेणी की हो, चाहे मध्यवित श्रेणी की हो, चाहे अमीर हो अपने अपने खाद्य द्रव्यों को संतुलित बना कर स्वस्थ रह सकें।

विटामिय 'ए'—यह विटामिन हमारे शरीर की बृद्धि के लिये विशेष प्रयोजनीय है। इस विटामिन के अभाव में बच्चों का बढ़ना तथा शरीर की पुष्टि बन्द हो जाती है, बच्चे कमजोर हो जाते हैं। जब शरीर के बिटामिन "ए" का भण्डार शून्य हो जाता है, तब आदमी नाना प्रकार के रोगों का शिकार बन जाता हैं—Xeropthalmia नामक एक प्रकार से साँस की बीमारो से पीड़ित तथा रात को अन्धे बन जाते हैं। विटामिन 'ए' की कमी के कारण श्वासयंत्रों की बीमारी जैसे सबल न्युमोनिया वगैरह जल्दी-जल्दी हो जाते है। जबान के नीचे फोड़े होना, गिल्टियाँ पक जाना, कान से पीव बहना, नाक में नासूर सरीखा घाव हो जाना, बद्हज़मी की शिकायत होना पथरी की बीमारी हो जाना, मेंढ़क के चमड़े सरीखे अंग के चमड़े होना, मसूड़ों में पीव पड़ जाना, दाँतों का कमजोर होना तथा चमक चल जाना—वगैरह नाना विध तकलीफें हो जाती हैं। रोज के खाद्य द्रव्यों से हम चाहें तो विटामिन 'ए' का प्रयोजन पूरा कर सकते हैं और ऊपर लिखी हुई तकलीफों से बच सकते हैं। नीचे हम एक तालिका पेश कर रहे हैं— जिससे यह पता लग जायगा कि कौन - कौन खाद्य पदार्थ में विटामिन 'ए' कितने परिमाण में रहता है। हमारे शरीर की पुष्टि बृद्धि के लिये प्रतिदिन ४२०० से लेकर ५६०० इन्टरनेशनल युनिट की जरुरत पड़ती है। इन्टरनेशनल युनिट एक वैज्ञानिक माप है जो कि लेबोरेटरीज में निर्दिष्ट किया जाता है और खाद्य द्रव्यों में भी विटामिन 'ए' का परिमाण इस माप से ही लिखा जायगा जिससे साधारण ज्ञान से ही हिसाब किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जा सकेगा। बच्चों को उम्र के अनुपात से विटामिन 'ए' की थोड़ी-ज्यादा जरूरत पड़ती है—विटामिन 'ए' निम्न लिखित पदार्थों के प्रति औंस (२॥ तोले) में पार्श्व लिखित मात्राओं में मिलता है। अन्यान्य पदार्थों में अल्प मात्रा में रहने के कारण से, सूची में शामिल नहीं किया गया है।

घास पत्तियों से ही गाय भैंसों के पेट में जाता है-जो कि दूध में हमें मिलता है। हरे शाक की पत्तियों में 'कैटीन' नामक एक पदार्थ रहता है-जो कि शरीर पोषक तथा वर्द्धक है। Moore ने यह दिखाया कि यह केरीटीन लीवर में जाकर विटामिन 'ए' में परिवर्तित हो जाता है, जो कि हमारे

गाय या भैंस का दूध—	४५	से	५०	इन्टर	युनिट।	आम (पका हुआ)	६००	से	१६०२
माँ का दूध —	६०			,,	,,	संतरा —	१६०		
माखन —	३५०	से	२४००	,,	,,	टमाटर —	१००		
अण्डे —						पपई एरण्ड काकड़ी—	६००		
सफेद हिस्सा—	४००	से	१२००			पका हुआ			
पीला हिस्सा—	५००	से	२६००	,,	,,	केला-[पका]-	१००		
बकरे का जीगर [लीबर]	२२००	से	६०००	,,	,,	आम [अमरुद]	३०		
मछली (रोहू जातका)—	१५					हरी मिर्च	१००		
काडलिवर आयल —	४०००	से	७००००	,,	,,	पालक की शाक	८५०		
सर्क लिवर आयल —	३८०००	से	२१५०००,,		,,	चौलाई की शाक	७००	से	३३००
रोहू मछली क्लिमार आयेल-	१०००००			,,	,,	शालगम—	५००		
हरा धनिया —	४५०			,,	,,	हरा चना	५००	से	८५०
लौकी —	६००	से	१२००	,,	,,	पात गोभी-	६००	से	१०००
खाने का पान —	१२००	से	३६००	,,	,,	आलू	७	से	१२

उपरोक्त सूची से गरीब और अमीर सब ही के लिये उपयुक्त मात्रा में विटामिन 'ए' युक्त खाद्य पदार्थ निर्देश किया जा सकता है। हरे शाक में काफी तादाद में विटामिन 'ए' रहता है —परन्तु शाक ताजा होना चाहिये। मांसाहारी व्यक्ति के लिये आशानी से विटामिन 'ए' का प्रयोजन पूरा किया जा सकता है, परन्तु शाकाहारी व्यक्ति के लिये भी माखन, और हरे शाक से प्रयोजन पूरा हो सकता है। गरीब भी हरे ताजे शाक से अपना प्रयोजन पूरा कर सकता है। दूध से हरे शाक में विटामिन 'ए' ज्यादा रहता है, और दूध या माखन में जो विटामिन 'ए' रहता है वह विटामिन हरे

लिये प्रयोजनीय है। यह विटामिन 'ए' यकृत में संचित रहता है और शरीर के प्रयोजनानुसार यकृत में खर्च होता है। जन्म के समय यकृत में मामूली विटामिन 'ए' रहता है। जो कि बाद में भोज्य पदार्थों से ही यकृतमें संचित होता रहता है। विटामिन 'ए' अमाशय तथा आँतों में से शरीर में शोषित होकर यकृत में संचित होता है इसलिये विटामिन 'ए' का शोषण आमाशय तथा आंतों की स्वस्थता पर निर्भर है अर्थात् बदहजमी की शिकायत रहने से तथा आंतों में छाले या कमजोरी रहने से विटामिन 'ए' उपयुक्त मात्रा में शोषित नहीं हो सकता है, आंतों में तैलीक पदार्थ की अवस्थिति जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विटामिन 'ए' के शोषण के लिये प्रयोजनीय है। यह सब बातें भी ध्यान में रखना जरूरी है। यहां एक बात स्पष्ट कर देना चाहिए कि यद्यपि हरे शाक में विटामिन 'ए' काफी तादाद में मौजूद है –परन्तु बीजों से निकाले हुए तेल में विटामिन 'ए' बिलकुल नहीं रहता है, इसलिये कोई भी तेल या वनस्पति घी में विटामिन 'ए' नहीं रहता यह ध्यान में रखना चाहिये। घी को बहुत देर तक खुले बर्तन में गरम करने से उसका विटामिन 'ए' नष्ट हो जाता है इसलिये बार बार घी को पकाना नहीं चाहिये।

इस प्रकार से संतुलित भोजन से चाहे मांसाहारी हों चाहे शाकाहारी हो प्रत्येक व्यक्ति अपने अपने विटामिन 'ए' की प्रयोजनिता पूरी कर सकते हैं और विटामिन 'ए' की कमी के कारण से होने वाली तकलीफों से बच सकते हैं।

क्रमशः

श्लीपद क्या है ?

लेखक—वैद्य मुन्नालाल गुप्त बी० आई० एम० संयोजक आयुर्वेदोद्धरक मण्डल कानपुर।

आपने बिहार, कलकत्ता, जगन्नाथपुरी प्रदेश के जन्म भूमि वासियों को देखा होगा। किसी का एक पांव किसी के दोनो पांव किसी के अण्डकोष फूले हुए पाएंगे! इस रोग को संस्कृत में श्लीपद, देश भाषा में हाथी पांव, अंग्रेजी में एलीफेण्टाइटिश कहते हैं।

बिहार, बंगाल और उड़ीसा प्रान्त में यह विशेष होता है। यह वर्षा प्रधान प्रदेश में ही अधिक पाया जाता है, जहाँ वायु खश्क और गर्म होती है वहाँ नहीं पाया जाता। जैसे पंजाब, राजस्थान,

पहिले पहल वंक्षण (अंड कोषों) में शोथ उत्पन्न होता है। उसकी वेदना से ज्वर हो जाता है, ज्वरावस्था में पैर किसी निर्दिष्ट स्थान में—प्रायः घुटनों के निम्न भाग में कुछ उठा सा मालूम होता है। उक्त वंक्षण की वेदना युक्त शोथ में कुछ कमी होने पर रोगी को कुछ आराम मिलता है। पर पैर के शोथ में कोई कमी नहीं होती है। कुछ दिनों के बाद पुनः वंक्षण में अत्यधिक वेदना आरम्भ होती है और शोथ पांव का अधिक बढ़ जाता हैं। कुछ दिनों में और अधिक बढता चला जाता है। यह यह क्रम बराबर इसी प्रकार श्लीपद की बृद्धि करता रहता है। यथा—

यस्सज्वरो वंक्षणजो भृशार्ति—
शोथो नृणाँ पादगतः क्रमेण।
तच्छ्लीपदं स्यात् करकर्णनेत्र
शिश्नौष्ठनाशास्वपि केचिदाहुः।

निदानकार कहता है किसी किसी का मत है कि यह श्लीपद हाथ, कान, नेत्र लिंग, ओष्ठ और नासिका में भी होता है। यह प्रत्यक्ष में देखा गया है कि श्लीपद न कि पांव में ही होता है किन्तु दोनों हाथों में, एक हाथ में अण्डकोषों में, दोनों अण्ड कोषों और पैरों में, स्त्री के भगौष्ठ में, भगनाशा में स्त्री के स्तनों पर कटि संधिस्थान में भी देखा जाता है।

जिस प्रदेश में जल का संचय विशेष होता है जल पड़ा २ सड़ा करता है, या सब ऋतुओं में शील प्रायः रहती है। जहां मच्छर और मलेरिया का प्रकोष अधिक रहता है वहाँ ही इस रोग का भी प्रादुर्भाव पाया जाता है। कुछ लोगो का मत है, कि इस रोग को फैलाने वाला एक कीटाणु विशेष है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुख्यतया वह भी जल व नम भूमि में अधिक पन पता है। कुछ लोगों का कहना है चावल, शक्कर दही का भोजन भूमि का सोना उक्त प्रान्तों में रहने वालों को ही, यह रोग विशेष होता है।

आयुर्वेदमतानुसार यह रोग भी श्लेष्म प्रधान है। आश्रय स्थान मेद और माँस माना है। यथा—

मेदोमांसाश्रयं शोथम्पादयोश्श्लीपदम्भवेत्।
स्वलिंग दर्शिभिर्दोषै स्त्रिधास्याच्च कफोत्तरम॥
(निदान)

इससे भी यही सिद्ध होता है जो पदार्थ श्लेष्मा को बढ़ाने वाले हैं, वे सभी पदार्थ इस रोग की वृद्धि में सहायक हैं। आश्रय मेद और मांस बताया गया है। अतः इससे भी सिद्ध है कि जो पदार्थ मेद (चर्बी) और मांस को बढ़ाने वाले हैं वह भी इस रोग के प्रजनन में पूर्ण रूपेण सहायक है। इतना जान लेने पर निदान, पथ्यापथ्य, और चिकित्साका पूर्ण ज्ञान हो जाता है क्योंकि चिकित्साका सूत्र है—

अपकर्षणमेवादौ रोगाणां भेषजं स्मृतम्।
ततो विघातः प्रकृते र्निदानस्य च वर्जनम्॥

अर्थात्—बढ़े हुए दोषों का सर्व प्रथम अपकर्षण करना चाहिए। प्रकृति का विघात और, कारणों का वर्जन यही रोगो की प्रधान चिकित्सा है।

विस्तार में न जाकर यह बता देना आवश्यक समझता हूँ कि "गंधक रसायन" किंचित् परिवर्तन के साथ बनाया गया है। जिसमें "भल्लातक तैल" विशिष्ट पदार्थ है।

महर्षि चरकाचार्य का मत है कि—

कफजो न स रोगोऽस्ति न विबन्धोऽस्ति कश्चन।
यं न भल्लातकं हन्याच्छीघ्रं मेधाग्नि वर्धनम्।
चरक चि० रसायन पादे द्वितीय पाद

अर्थात् न तो कोई कफज रोग है और न कोई विबंध (दोषमलादि के द्वारा स्रोतोरोध) है जिसे मेधा और अग्नि बढ़ाने वाला भिलावा शीघ नष्ट न करदें। जो दोष दूष्य श्लीपद रोग में हैं उन्हें भिलावा नष्ट कर सकने में पूर्ण रूपेण सक्षम हैं। इसी लिए इस रसायन में इस भिल्लातक तैल की भावनाएं दी गयी हैं। और यह यथार्थ लाभदायक सिद्ध भी हुआ है। वैद्यों को अवश्य इसका अनुभव करके देखना चाहिए। यदि श्लीपद रोग पर इस प्रयोग से लाभ मिला तो यह एक नवीन अनुसंधान होगा।

प्रयोग निर्माण—विधि वैद्य शास्त्री पं प्रताप नारायण जी वाजपेयी आयुर्वेदाचार्य के लेख में देखें।

———

आवश्यकता

पं० ठाकुर दत्त शर्मा धर्मार्थ ट्रस्ट (अमृतधारा भवन) देहरादून के वास्ते एक ऐसे सुयोग्य वैद्य की आवश्यकता है कि जो औषध निर्माण और कूपीपक्व रसों का पूर्ण परिचय रखते हों। वेतन १००) रु० से १५०) रु० तक योग्यतानुसार। प्रार्थना पत्र मंत्री ट्रस्ट के नाम भेजिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक वैज्ञानिक कहानी–

बी० सी० जी०

लेखक—वैद्य अम्बालाल जोशी, जोधपुर

"मैंने बी० सी० जी० का टीका ले रखा है, डाक्टर! मुझे टी० बी० नहीं हो सकती।" रोगी ने कहा

"बी० सी० जीं० का टीका टी० बी० रोकने का अव्यर्थ अस्त्र नहीं है मित्र!" यह कह कर डाक्टर ने रमेश को ×, Ray कराने का आदेश पत्र दिया।

रमेश २५ वर्ष का युवक था न अधिक दुर्बल न अधिक मोटा। छोटा सा कद, पीलापन लिए गौर वर्ण। उसे प्रतिश्याय ने आ घेरा था इसी लिए तो डाक्टर ने समझा कि उसे टी० बी० हो गयी है।

×, Ray ने कोई विकृति प्रदर्शित न की इसी लिए तो वह थोड़े दिनों की चिकित्सा से स्वस्थ हो गया।

बड़े शहर की एक गन्दी कोठरी में वह रहता था जहाँ कभीं सूर्य के दर्शन नहीं होते थे। इसी कारण तो उसकी रुग्णा पत्नी एक दिन इसी रोग के कारण इस संसार से चल बसी थी। अब रमेश को अपने बच्चों की ओर अधिक ध्यान देना पड़ता था। उसकी थोड़ी सी तनख्वाह का अधिकांश भाग मकान किराया बच्चों के पढ़ाई आदि में ही खर्च हो जाते थे।

बूढ़ी मां जो बैठी थी। रमेश के बूढ़े पिता पास के एक गांव में निवास करते थे वहीं उनका अपना मकान था। रमेश को प्रतिमास कुछ रुपया उनके पास भी भेजना पड़ता था। इधर धर्मपत्नी की बीमारी में भी कुछ रुपये उधार किये थे उनकी भी किश्त चुकानी पड़ती।

दिन भर का थका रमेश घर आता इधर चिन्ता इधर गरीबी, इधर रूक्ष भोजन, सबने मिलकर उसे शिथिल करना प्रारम्भ किया। अधिक दिन वह उसे सहन न कर सका अतः उसमें "पीने" की भी आदत आ गयी। नित्य प्रति सायं नौकरी से लौटते समय वह अधिक रात्रि गये ही घर आता और नशे में चूर रहता।

निदान उसकी मानवता गरीबी तथा शीलता पाशविकता शासन करने की लालसा तथा उद्दण्डता में परिणित होती गई। वह कभी कभी इसी जोश में आकर मां पर भी हाथ चलाने लगा। माँ इसे अधिक दिनों तक सह न सकीं और एक दिन वह गांव चली गयी मनमें कभी न लौटने का प्रण कर। अब रमेश को आजादी मिल गयी। बच्चों को भी उसने गांव भेज दिया।

अब क्या था वह चरित्र में भी गिरने लगा। रात्रि में गायन सुनने तथा आत्म वासना तृप्त करने रंडियों में जाता। कर्ज चुकाने से मुंह चुराता, मांगनेवालों को पैसे न देता न गांव ही कुछ भेजता। नतीजा यह हुआ कि उसकी सारी तनखा से कुछ अधिक 'पीने' तथा आनन्द लूटने में व्यय हो जाता। कर्ज दिन प्रतिदिन और बढ़ता गया। डिग्रीदार डिग्री लिए तनखा के अवसर पर खड़े रहते। वह कभी बचकर निकल भागता परन्तु वसूल करने वाले भी पूरे होशियार होते अतः उसे पहले ही पकड़ लेते। इस प्रकार उसके हाथों में तो तनखा का ९ वां हिस्सा रहता।

अन्त में कर्ज चुकानेसे तंग आकर उसने नौकरी ही छोड़ दी। मकान मालिक ने भी लड़ झगड़ कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसके गुदड़े बाहर डाल दिए तथा कोठरी दूसरे को किराये पर दे दी। अब रमेश इधर उधर फिरता रहता नौकरी थी नहीं। कहीं से कुछ पैसे लाता और खर्च कर देता। बारिश के दिनों में कहां रहे। अधिक भीगने से एक दिन उसे ज्वर आया धीरे २ पसली में दर्द रहने लगा। और वह घुलने लगा।

एक दिन अधिक बेचैन होकर सड़क पर गिर पड़ा लोगों ने उसे अस्पताल ले जाकर लिटा दिया। डाक्टर ने गंभीर अवलोकन तथा सभी प्रकार की परीक्षाओंके बाद यह निश्चय किया कि उसे टी०बी० है। रमेश कभी होश में आता तो कहता मैंने बी० सी० जी० का टीका लगाया है मुझे टी० बी० नहीं हो सकती। डाक्टर हंस देते।

एक दिन डाक्टरों ने उसे टी० बी० के सफा खाने में भिजवा दिया। वह कहता मुझे टी० बी० नहीं हो सकती परन्तु डाक्टर कहते बी० सी० जी० टी० बी० रोकने का राम बाण अस्त्र नहीं है। अब वह होश में था। उसने सोचा "जब बी० सी० जी टी० बी० रोकने के लिए अव्यर्थ औषधि नहीं है तो सरकार क्यों करोंड़ो मासूम बच्चों पर इस भाले की मार मारती है।" राजा जी के शब्दों में उसने स्वीकार किया 'यह निरीह जन समूह पर गोली चलाने के समान है।

उसके सामने ये चित्र क्रमशः आने लगे— सिर्फ औषधियों का आविष्कार, उनका प्रचार अव्यर्थ औषधि बनाना, नई औषधियें निकालना पूर्ववर्ति औषधियों का वेकार सिद्ध होना, पेनसलीन आदि एन्टीवायटिक औषधियों का निकलना अव्यर्थ औषधि कहकर घनघोर प्रचार करना परन्तु फिर वही ढाक के तीन पात।

रमेश अब जीवन से निराश होने लगा। उसे दीखता था कि बिना पैसे उसकी चिकित्सा होनी नहीं है परन्तु अब वह करे भी तो क्या? उसे चारो ओर अंधेरा ही अंधेरा दृष्टिगोचर हो रहा था। धीरे धीरे उसकी हालत गिरने लगी। वह सोचता रहता क्या उसे वास्तव में टी० बी० ही है? क्या बी० सी० जी० का टीका उसने व्यर्थ लगाया? क्या सरकार इतनी गैर जिम्मेवार है कि एक औषधि का पूर्ण परीक्षण किये बिना ही विदेशी व्यापारियों के तथा उनके एजेन्टों के चक्कर में आकर राष्ट्र पर उसका विपुल प्रयोग प्रारम्भ कर सकती हैं? उसका मस्तिष्क एक जाल में फंसा रहता जिसका निकाल उसे कहीं नजर नहीं आता।

एक दिन उसे अस्पताल से घर जाने को कह दिया गया क्योंकि डाक्टर उससे नाराज था। औषधियों को खरीदने के लिये उसके पास पैसा न था। आगे इन्तजाम तो हो ही कहाँ से। अन्त में वह बाहर आया, चारो ओर अंधकार में वह आगे न बढ़ सका सोचा कहाँ जाऊँ। चक्कर आया वहीं गिर पड़ा। अस्पताल के अहाते के अन्दर ही कई व्यक्ति आये रोगी भी निरोग भी परन्तु किसी ने उसकी ओर न देखा। देखा भी कुछ ने भी तो देख कर यों ही मुंह फेर लिया। पड़ा रहा वह उसी स्थान पर।

डाक्टर तथा अन्य कर्मचारी अवकाश समय में अपने घर की ओर रवाना हुए परन्तु किसी ने उसकी परवाह न की। होश में आने पर वह आगे बढ़ा, परन्तु अधिक दूर न जा सका आगे जाकर फिर पेड़ के किनारे बैठ गया। रमेश के पिता को उसकी वीमारी के समाचार मिले। वे शहर में आये परन्तु पता न चला। उस दिन अचानक उनकी दृष्टि सड़क के किनारे पर पड़े अपने पुत्र पर पड़ गई। वे उसे अपने गाँव ले गये।

रमेश रोया। परन्तु पिता ने उसे धैर्य बंधा कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बताया कि गांव में एक देशी चिकित्सक बहुत दयालु हैं वे तेरा उपचार कर देंगे। रमेश बोला 'मैंने बी० सी० जी का टीका भी लिया था' परन्तु उसके पिता न समझ सके वे मौन रहे।

गांव की हवा, स्वच्छता, पानी आदि ने, जहां बचपन से खेला कूदा धूल में लोट लोट कर बड़ा हुआ, ने उसका उपचार किया गरीब बैद्य जी ने इस गरीब को रसोनकल्प कराना प्रारम्भ किया जिसके पैसे भी नहीं लगते थे। दुग्ध भी विशुद्ध हाथ आने लगा जो शहर में रुपये में सेर भर भी नहीं मिलता था यहां मुफ्त में मिलता था। लोग कहते लो भैया रमेश दूध—हमें पैसे नहीं चाहिये—गाय का दूध बेंचना मां के बूध बेंचने के बराबर है।'

रमेश को ऐसा प्रतीत हुआ जैसे वह मां की गोद में आ गया है। उसे सान्त्वना मिली वह धीरे धीरे ठीक होने लगा। अब वह घूमने जाता, कुछ खेती वगैरह का काम भी प्रारम्भ कर दिया जिसे उसका छोटा सा घर सुखी रहने लगा। शहर की गन्दगी पैसे की तंगी, अधिक मेहनत तथा अन्य व्यसन आदि की चीजें वहां न थीं। वह अब सदाचारिता मे रहता नशा न पीता, आवश्यक परिश्रम करता आज उसे टी० बी० नहीं है, वह कहा करता—'मैं गलत रास्ते पर चला गया अब मुझे टी० बी० नहीं है। अब होगी भी नहीं, कभी नहीं होगी—कारण असली बी० सी० जी अब मेरे हाथ में हैं वह नकली बी. सी. जी. का टीका मुझे टी. बी. से ग्रसित होने से नहीं बचा सका। समय, स्वच्छता, तथा आर्थिक सौकर्य ही टी. बी. की असली रोक है।

२२ वर्ष का चिकित्सा का निचोड़ 'ये अनुभवपूर्ण ग्रन्थ'

१—तत्काल फलप्रद प्रयोग (प्रथम भाग) १०० पृष्ठ, १५१ जादुंई योग १॥) पोस्टेज ॥)
२— ,, ,, (दूसरा भाग) महिला रोग चिकित्सा १६० पृष्ठ ३०१ योग २) ,, ॥-)
३— ,, ,, (तीसरा भाग) नारी रोग पर पैटेन्ट १७३ पृष्ठ ४५१ योग २) ,, ॥=)
४— ,, ,, (चौथा भाग) ८८ रोगों की स्वदिष्ट चिकित्सा१४४२-३८८ योग २) ॥-)
४— सौ रोगों का सरल इलाज (परिवर्धित, संस्करण) बड़ा आकार १४२ पृष्ठ १॥।) ,, ॥-)
६— प्राकृतिक चिकित्सा सार संग्रह सर्वोपयोगी ग्रन्थ ,,७० पृष्ठ १) ,, ॥)
७— पथ्य दर्शक ३२ पृष्ठ ।) आठ औषधों से सम्पूर्ण इलाज ।=)
८— सरल निघण्टु (तत्काल फलप्रद योग-युक्ति) पूर्वार्द्ध १।), उत्तरार्द्ध १।) (अक्टूबर में)
९— चिकित्सा चन्द्रशेखर (प्रथम भाग) हाजारों अनुभव, बड़े ३०० पृष्ठ ५) (दिसम्बर में)
१०— 'आयुर्वेद चिकित्सक'(मासिक) ३ वर्ष से प्रकाशित, वा० भेंट ४॥), दो विशेषांक देता है।

—वैद्य पं० चन्द्रशेखर जैन शास्त्री। लाखा भवन, पुरानी चरहाई, जबलपुर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घृत कुमारी

लेखक—वैद्य केदारमल शर्मा (कांवट) आयुर्वेदीय दातव्य औषधालय जुगसलाईबाजार "टाटानगर"

घृतकुमारी एक प्रकार के क्षुप जाति का पौधा है। जो कि खारी रेतीली भूमि में एवं नदी तालाव कूपादि के किनारे अधिकतर पाया जाता है। लेकिन इन स्थानों के अलावा भी यह हर एक तरह की भूमि में देखा जाता है। इसका कोई खास मौसम नहीं होता, यह बारहों महीना लगा रहता है। बहुँत से मनुष्य तो इसको अपने घर तथा बगीचों में भी गमलों में लगाते हैं। क्योंकि यह देखने में भी सुन्दर लगता है। इसकी केवल पत्तियां ही होती हैं यह फलता नही। केवल इसके क्षुपमें एक डण्डी निकलती है उसके फूल भी लगता है। लेकिन फल नहीं होता। वह डण्डी खाने में स्वादिष्ट एवं मधुर होती है। साथ ही इसकी तरकारी भी अत्युत्तम होती है। इसके पत्ते एक डेढ़ हाथ लम्बे तीन चार अंगुल चौड़े हरे तथा गुद्देदार होते हैं। जो गुद्दा इन पत्तों से निकलता है वह लुबावदार एवं खाने में कड़वा तथा वेमजा होता है। इसके पत्तों के दोनों तरफ काँटे होते हैं। तथा पत्ता अनीदार होता है। इसके कन्या, ग्रहकन्या; कुमारी घृत कुमारिका ग्वारपाठा तथा ग्वारपाठी आदि अनेक पर्यायवाची शब्द देखे जाते हैं।

अतः घीकुआर तिक्त, मधुर रस युक्त तथा शीतवीर्य प्रधान एवं रसायन है। मधुर विपाकी है। यह वात, पित्त, कफ नाशक तथा रेचन करता है। साथ ही रसायन होने से बृंहण पुष्टिकर्त्ता एवं वीर्यवर्द्धक है। इसी प्रकार मधुर होने के कारण से यकृत्, गुल्म, बमनादि को तथा शीतवीर्य प्रधान होने से विस्फोट, रक्त-पित्त, रक्तविकार,, ग्रन्थि आदि चर्म रोगों को नाश करने वाला है। कारण, चर्मरोग विशेष करके गर्म से पैदा होते हैं। इसी से शीतवीर्य प्रधान होने से चर्म रोगों को शमन करता है। इसी तरह यह अग्निदग्ध, दाह, प्रमेह, सुजाक आदि को भी शमन करने वाला है। क्योंकि घीकुवार के स्नेहयुक्त होने से शुक्र का स्तम्भन करके शुक्र को पुष्ट करता हुआ प्रमेहादि को शमन करता है। घीकुवार के गुद्दे से जो पीला दुग्ध निकलता है। वही तिक्त रसयुक्त होता है परन्तु अगर इसके गुद्दे को विना हाथ के लगाये ही निकाल कर खा लिया जाता है तो खाने में स्वादिष्ट एवं मधुर लगता है। और घीकुवार का गुद्दा ही काम में लिया जाता है। अगर इसके गुद्दे को प्रातः काल नमक मिला कर खांय तो यह प्लीहा के लिये अत्युत्तम है। साथ ही अनेक प्रकार की उदरव्याधि, कब्ज, यकृत, गुल्म तथा बमनादि को भी शमन करता है।

कुमारी मोदक

गेहूँ के एक सेर आटे को ग्वारपाठे के गुद्दे में सान (गूंद) करके पुष्पलिका बनाकर घी से परिपक्व करे। और फिर उनको कूट कर चूर्ण बना लेवे तथा उसमें बराबर की पीसी हुई चीनी मिलाकर उपर से थोड़ा घृत डाल कर एक एक छटाक के मोदक (लड्डू) बनावे। इनको सुवह शाम दुग्ध के साथ व पानी के साथ सेवन करने से यह प्रमेह गुल्मादि रोगों को शमन करता हुआ अग्नि को प्रदीप्त करके अन्न का पाचन करता है तथा शरीर में वल एवं वीर्य को बढ़ाता हुआ शरीर को हृष्ट-पुष्ट रखता है।

ग्वारपाठे की तरकारी

ग्वारपाठे के गुद्दे को निकाल कर उसके छोटे-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छोटे टुकड़े कर लेवे तथा उन टुकड़ों में थोड़ा सा नमक मिला कर धो लेवे और फिर घृत में भून कर गर्म मशाले के साथ हल्दी, नमक, मिर्च धनियां आदि मिला कर तरकारी बना लेवे। यह तरकारी अत्युत्तम स्वादिष्ट एवं गुणकारी तथा कफ एवं वातव्याधियों को शमन करती हुई वृद्धावस्था में होनेवाले वलिपलितादि रोगों को भी शमन करती है एवं मल को साफ लाती है। साथ ही इसका आचार भी बहुत अच्छा बनता है। जैसे कि एक सेर घृतकुमारी के दोनों तरफ के कांटों को दूर करके टुकड़े कर लेवे और एक मिट्टी के वर्तन में डाल कर उसमें नमक एक छटाक, मोथी एक छटाक राई २॥ तोला हल्दी १ तोला मिला कर तीन दिन तक धूप में रखे जिस से वह खट्टा हो जाय और तीन दिन के बाद में निकाल कर तैल में भून मिर्च मसाला आदि मिला देवे एवं उपर से गर्म किया हुआ तैल और भी दे देवे। जिस से बहुत दिनों तक सुरक्षित रहता है। अनेक प्रकार की पेट व्याधियों को शमन करता है। अगर इसमें थोड़ा सा नमक दे दिया जाय तो अत्युत्तम स्वादिष्ट एवं गुणकारी होता है क्योंकि फिर वात नाशक विशेष हो जाता है।

सुजाक के लिये

घृतकुमारी के एक सेर गुद्दे को किसी काँच व सील्वर के वर्त्तन में रख कर उसमें एक छटाक सोरा डाल देवे तथा ३-४ घण्टे के अन्तर से उसे मिलाता जाय। इस तरह एक दिन और एक रात पड़े रहने दे। तदुपरान्त उसे किसी साफ कपड़े से छान कर शीशी में भर देवे। इस रस को दिन में ३-४ दफा हक एक तोले ठण्डे जल में १०-१२ बून्द मिला करके पीने से सुजाक मूत्रजलन, मूत्र का हर वक्त लाल पीला उतरना इन्द्रिय पर की पिण्डकाओं को तथा कब्ज को दूर करता है।

इसके अलावे ग्वारपाठे के गुद्दे को निकाल कर हल्दी मिला कर आँख पर बांधा जाता है तो नेत्र विकारों को शमन करता हुआ नेत्रों की ज्योति में वृद्धि करता है। लेकिन उसी गुद्दे को गर्म करके हल्दी के साथ नमक डाल कर किसी ग्रन्थी आदि पर बाँधा जाय तो उसे जल्दी ही परिपक्व करके भेदन कर देता है और वृण को भर भी देता है। इसी तरह इसके गुद्दे को किसी काँसे की थाली में रख कर बराबर का सरसो का तैल उसमें डाल कर चूने के पानी से धोआ जाता है तो वह एक प्रकार की मलहम बन जाती है। जो विस्फोट, दाह, अग्निदग्ध रक्तपितादि चर्म रोगों में अत्यन्त लाभप्रद है। इसकी मस्तक में मालिश करने से मस्तक के रोगों को भी शमन करता है।

बथुआ शाक से पारा

पं० श्री माधवप्रसाद शर्मा शास्त्री, सिसवा बाजार

बथुआ एक क्षुद्र जाति का ही पौधा है, अधिकतर यह जौ गेहूँ के खेतों में हुआ करता है। राजस्थान में इसको बिलवा भी कहते हैं। 'शालिग्राम निघण्टु' में शाक वर्ग में सर्वप्रथम शाकवास्तुकम् लिखा हैं। मैंने एक रोज किसी ग्रन्थ में देखा कि बथुवा में पारा होता है। अस्तु मैंने अपने दवाखाना के नोकरो से बथुवा अधिक मात्रा में मंगा कर उसकी मिट्टी व जाला झाड़ पोछ कर साफ किया। पत्थर पर कूटकर उसका रस निकलवा कर वस्त्र की से छान लिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रस को बड़े खल में खला जो कि २२ इञ्च के लगभग गहरा था। उसके बाद ठण्डे स्थान में घुटाई शुरू की। तब तक घोटा गया जब तक वह रस गाढ़ा हुआ। गाढ़ा होने पर उसकी टिकिया बना ली। जिस तरह हिंगलु की बनाई जाती है। एक हंड़िये में टिकिया रख कर दूसरी हंड़िये को उस पर रख कर कपरौटी कर दी गयी। इस प्रकार वह डमरू यंत्र बन गया उसे चूल्हे पर चढ़ा के उसके नीचे करीब ४॥ घण्टे आंच दी गयी। ऊपर के पात्र को भींगे कपड़े द्वारा ठण्डा रखा गया।

सबेरे खोल कर देखा तो ऊपर के पात्र में पारा था। पारा निकाल लिया गया। प्रयोग अनुभूत है और पारा कम मात्रा में निकलता है।

मैं राजपुताना से उत्तर प्रदेश में प्रायः सेठ ब्रजलाल जी के पास आया करता हूं। आप यों तो व्यापारी और धनी मनुष्य है लेकिन आयुर्वेद में भी आपकी बड़ी श्रद्धा है। अब उसी पोर से मैं स्वर्ण घटित चन्द्रोदय षड्गुणित गन्धक से बनाने जा रहा हूं। जब यह वस्तु तैयार होगी तो आप लोगों की सेवा में पुनः पूर्ण विवरण प्रकाशित करूंगा।

सूचना—यह विधि लेखक के विशेष आग्रह से नई खोज के नाते प्रकाशित की गई है। वैद्य महानुभावों से निवेदन है कि उक्त विधि से पारा निकाल कर फलाफल आयुर्वेद गौरव में प्रकाशनार्थ भेजने की कृपा करें। सम्पादक

बालमृत्यु के कारण और उसके साधन

[ले० : महाबीर प्रसाद भारद्वाज]

आजकल भारत वर्ष में बालमृत्यु बहुत ज्यादा होती हैं क्योंकि हमारे धर्म शास्त्रों ने पच्चीस वर्ष तक पुरुष को ब्रह्मचारी रहने का आदेश दिया है, ब्रह्मचर्याश्रम में रहता हुआ, ब्रह्मचारी संयम द्वारा अपनी सब इन्द्रियों को बाह्य विषयों से रोक कर अपने वीर्य की सब प्रकार से रक्षा करता हुआ, उसे अपनी मेधा शक्ति और शारीरिक बल बढ़ाने में व्यय करता है। इस प्रकार वह ऊर्ध्व रेतस ब्रह्मचारी सांसारिक विषयों से अपने को पृथक रखता हुआ, ब्रह्म को साक्षात् करने में प्रयत्नशील रहता है।

इस प्रकार २५ वर्ष व्यतीत करने पर उसके शरीर में महान शक्ति और संयम की सिद्धि हो जाती है। ऐसे समय में उसे षोड़श वर्षीय युवति से विवाह करना चाहिए। यथा

'षोडशवर्षायाः पञ्चविंशतिवर्षः पुत्रार्थं यतेतेति'

आयुर्वेद शास्त्र के अनुसार अगर सोलह वर्ष से कम स्त्री नहीं होनी चाहिए और २५ वर्ष से कम पुरुष नहीं होना चाहिए, अगर सोलह वर्ष से कम स्त्री होगी और पुरुष स्त्री से भी छोटा होगा तो वह पुरुष सन्तान पैदा नहीं कर सकता है, परन्तु किसी के सन्तान हो भी जावे तो वह सन्तान अन्त में माता पिता को दुःख दिखलाने वाली होती है। क्योंकि जब माताका रज भी अच्छी तरह से नहीं पका है और न पिता का वीर्य ही पका है फिर उनके कमजोर हड्डियोंवाला बालक पैदा होता है, क्या तो बालक पैदा होते ही मर जाता है नहीं तो फिर दश या पन्द्रह का होने के बाद उसकी मृत्यु हो जाती है। क्योंकि कच्चे वीर्य और रज से उत्पन्न बच्चे की आयु कम ही होती है। वीर्य शुद्ध पच्चीस वर्ष की आयु में ही होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुद्ध वीर्य का लक्षण और शुद्ध रज का लक्षण हमारे आयुर्वेद के सुप्रसिद्ध ग्रन्थ सुश्रुत संहिता के शरीर-स्थान में लिखा है। यथा—

स्फटिकाभं द्रवे स्निग्धं मधुरं मधुगन्धि च।
शुक्रमिच्छन्ति केचित्तु तैलक्षौद्रनिभं तथा॥

स्फटिक के समान श्वेत हो, और स्निग्ध, द्रव, मधुर, शहद जैसी गंध आती हो इत्यादि यह लक्षण शुद्ध बीर्य के हैं। ऐसे लक्षण पुरुष की पच्चीस वर्ष की अवस्था में ही मिलते हैं।

शुद्धार्तव के लक्षण

शशासृक् प्रतिमंतत्तु यद्वा लाक्षारसोपमम्।
तदात्तवं प्रशंसन्ति यद्वासो न विरञ्जयेत्॥

इन लक्षणो से युक्त पुरुष और स्त्री के संयोग से ही एक शुद्ध सन्तान की उत्पत्ति हो सकती है और वह भविष्य में माता पिता को सुख-मय बना सकता है। क्योंकि शुद्ध वस्तुओं से निर्मित कोई भी वस्तु क्यों न हो उसकी आयु अवश्य ही दीर्घ होगी।

हमारे आयुर्वेद शास्त्र में गर्भ के अन्दर केश श्मश्रु, लोम, नख' दाँत, सिरा, धमनी, स्नायु, शुक्र इत्यादि पिता के वीर्य से होती है मानो यह पितृज हैं, जैसे कि लिखा है—

केशाः स्मश्रु च लोमानि नंखाः दन्ता शिरास्तथा।
धमन्यः स्नायवः शुक्रमेतानि पितृजानि हि॥

माता के रज से मांस, रक्त, मज्जा, मेदा, यकृत, प्लीहा, आंत, नाभि; हृदय, गुदा, इत्यादि मातृज है कि जब बच्चा दो चार साल का होता है तब ही उसकी दृष्टि कमजोर हो जाती है उस कमजोर दृष्टि का यही कारण है कि जब बच्चा गर्भमें था तब उसके नेत्रों में जो तेजो धातु नहीं पहुँच सकी, और देखने की शक्ति हैं ही तेजो धातु के अन्दर, तो समझना चाहिए कि न दींखने का कारण मानो तेजो धातु नहीं पहुँची है।

यही कारण बाल मृत्यु का है जैसे कि माता और पिता के अलग-अलग हिस्से बाँट दिये और आज कल जब कोई पुरुष अपनी लड़की की शादी करता है तो लड़का तो बारह वर्ष का और लड़की सोलह वर्ष की है तो फिर इनसे पैदा हुआ बालक कमजोर नाखून, धमनी, सिरा वाला बच्चा पैदा होगा और वह बच्चा माता पिता के लिये दुख-कारी होगा, यही कारण आज हमारे देश में है जो कि इतनी बाल मृत्यु होती हैं फिर भी मनुष्य ध्यान तक नहीं देते।

बाल मृत्यु तबही दूर हो सकती है कि जब अपने बच्चों को खूब संयम के साथ रक्खें और बाल विवाह का परित्याग कर दें तब ही यह समस्या हल हो सकती है अन्यथा असम्भव है।

आज हम देखते हैं कि लड़का सात आठ साल का होते ही कुमार्ग धूम्रपान इत्यादि पर चलने लगता है, इसलिए उन्हें खराब रास्तों से हटाना चाहिए।

आज हम यह प्रतीज्ञा कर लें कि बाल विवाह नहीं करना है और खूब संयम के साथ रहना है तब ही बालमृत्यु दूर हो सकती है आज बच्चा पैदा होते ही डाक्टरों के इन्जेक्शन शुरू हो जाते हैं बताइये उनकी कब तक जिन्दगी रहेगी और उनके सन्तान होंगी उनका तो फिर कहना ही क्या, इसलिए बालमृत्यु दूर करनेका यही साधन है कि बालविवाह सर्वथा बन्द कर दें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बी० सी० जी० टीके के लिये हठधर्मी क्यों ?

लेखक—वैद्य पं० गोवर्द्धन शर्म्मा, आयुर्वेद विशारद हैदराबाद (द०)

किसी भी देश के उत्थान और पतन का कारण उस देश के नेता तथा शासकों पर निर्भर रहता है। नेता और शासक अग्नि की तरह तेजस्वी, सत्ववान, जनकल्याण की कामना वाले सदाचारी परोपकाररत, कर्तव्यपरायण, धी, धारणा और स्मृति से विवेकपूर्ण नेतृत्व करते हों, तब उस देश के देशवासी सदासुखी, स्वस्थ, धन-धान्यादि से सुसम्पन्न होते हुए पूर्णायु को भोगते हैं।

जब वही शासक शासन के मद में मदोन्मत्त हो—अन्यों को हेय, विद्वानों की अवहेलना करता हुआ अपने स्वार्थों की रक्षा में संलग्न होता हुआ और अपनी अयोग्यता के कारण ही अपने आधीनों की आधीनता में आबद्ध होता हुआ जैसे वे उठ-बैठ करवाते हैं, इसी प्रकार चापलूसों की चातुर्यता से चर्चित हो चटकने लगते हैं। तब अन्य देशवासी भी उनकी मूल से लाभ उठाते हैं और वे अपने पतन के साथ देश का भी अधःपतन कर बैठते हैं, उस देश के जन निर्धन (कङ्गाल) रोगाक्रान्त, धन-धान्यादि से हीन हो दुःख उठाते हैं।

देश को स्वतन्त्र हुए आज आठ वर्ष हुए पर वही आई. सी. एस. की शासकता (हुकूमत) यथावत् स्थिर है, हमारी शिक्षा, दीक्षा रहन-सहन, भाव-भाषा तक विदेशी बनाई जा रही है। इसी प्रकार विज्ञान के नाम पर देश के स्वास्थ्य का सर्वनाश किया जा रहा है। अरबों रुपयों की औषधियां बाहर से आ रही हैं। हम अपने करांची कांग्रेस अधिवेशन के स्वीकृत प्रस्ताव की भी अवहेलना कर भारत के ९० प्रतिशत जनता के स्वास्थ की रक्षा करने वाले वैद्यों से दुर्भाव बरत रहे हैं। उनके भाग्य विधाता विदेशी शिक्षा से ओतप्रोत एलोपैथी डाक्टरों को बना दिया जाता है, वे कालत्रय में भारत की विद्या आयुर्वेद की भलाई नहीं सोच पाते। यदि भूल-चूक से कोई डाक्टर जो सत्यान्वेषी है वह आयुर्वेद के प्रति आदर प्रकट करता है तो उसे घी की मक्खी की तरह पृथक कर दिया जाता है। इसका उदाहरण स्वयं चोपडा कमेटी है। चौपडा कमेटी ने आयुर्वेद की भूरिभूरि प्रशंसा करते हुए आयुर्वेद को राजकीय चिकित्सा घोषित करने की सिफारिश की थी, किन्तु राज्य को यह सहन न हो सका और इस पर पण्डित कमेटी का निर्माण किया गया इसने भी विवश हो आयुर्वेद के पक्ष में कहा तब एक और कमेटी बना डाली। इसके पृष्ठ भूमि में कौनसा कौटिल्य छिपा हुआ था ? क्या यही "सत्यमेव जयते का आदर" है ? क्या यही न्याय है जिसके विषय में विचार किया जा रहा हो और उसमें उसके विशेषज्ञ ही न हो ये कहां तक ठीक है ?

भारत एक गरीब देश है इसके वासी अन्धाधुन्ध व्यय-भार उठाने में असमर्थ हैं। विदेशी दूषित औषधियों का विष अपने शरीर में लेने को तैयार नहीं है। बी. सी. जी. के टीके को स्वयं ब्रिटेन और अमेरिका ने अपूर्ण कहा है जिसके कतिपय उद्धरण अधोलिखित है।

डाक्टर प्राइस की सुप्रसिद्ध पुस्तक में बी. सी. जी. के सम्बन्ध में लिखा है "यह ट्यूबकुलर बैसिलस (लय कीटाणु) से जिसके रोग उत्पन्न करने की शक्ति क्षीण कर दी गई है। तैयार किया गया सजीव टीका है। फ्रांस में रोग की रोक-थाम के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिये इसका काफी उपयोग हुआ है। फ्रांस में लगभग १ लाख बच्चों को जिनमें मुख्यतः क्षय रोगग्रस्त माता-पिता के बच्चों को ये टीके लगाये गये। इसके परिणामों का अभी तक ठीक-ठीक अन्दाजा नहीं लगाया जा सका, किन्तु इस रीति के सम्बन्ध में एक बड़ी आपत्ति है कि इसमें यह सम्भावना रहती है कि बाद में मनुष्य के शरीर में जाकर कहीं यह दुर्बल कीटाणु फिर से बलवान न हो जाय।

डाक्टर प्राइस की अन्तिम पंक्ति विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। इस टीके में भय है। यह किसी टीके विरोधीकी राय नहीं है, अपितु एक प्रामाणिक चिकित्सक विशेषज्ञ की अनुमति है।

न्यूयार्क कार्नेल युनिवर्सीटी मेडिकल कालेज के डाक्टर डब्ल्यू. जी. इस्माइली द्वारा अपनी प्रामाणिक पुस्तक में प्रकट की हुई अनुमति को पढ़िये। उन्होंने लिखा है कि "व्यक्तियों के क्षय रोग के प्रतिरोध की शक्ति को प्रदान करने के लिए अनेक रीतियां अपनाई गईं। मृत कीटाणुओं या निर्वीर्य कीटाणुओं से तैयार की गई विभिन्न वस्तुयें प्रयोग में लाई गई, किन्तु कोई आश्चर्यजनक सफलता अभी तक नहीं पाई गई—इस विषय पर अभी और लाभकारी अनुसन्धान की आवश्यकता है।

क्या इसी अनुसन्धान के आधार पर भारत के होनहार बालकों के प्राण लिये जा रहे हैं? इन उदाहरणों से ठीक स्थिति का स्पष्टीकरण हो जाता है। पहले उदाहरण में इस टीके से उत्पन्न खतरा एवं उसकी संदिग्धता का संकेत खुले तौर पर है।

एक और डाक्टर लिखते हैं कि इन कीटाणुओं के मानव देह में जाकर पुनः सजीव सवीर्य हो जाने का भय है। अमेरीका और ब्रिटेन दोनोंने ही अभी तक सामूहिक रूप से बी. सी. जी. के टीके को नहीं अपनाया है।

केन्द्रीय स्वास्थ्य मन्त्रणालय के स्वास्थ्य सलाहकार डाक्टर बेजमिन ने अपने वक्तव्य में कहा है कि गाय की लसीका के टीके ने खूब अच्छा काम किया है यह भी एक सजीव विष है, इसलिए सजीव विषों के टीके लगाने में कोई निश्चित हानि नहीं है। आगे आप और लिखते हैं कि बी. सी. जी. के टीके अब ब्रिटिश स्कूलों में अनिवार्य कर दिये गये हैं। क्या यह वास्तव में सत्य है? एक उच्च पदाधिकारी द्वारा ऐसी अनर्गल घोषणा कितनी उचित और शोभनीय है।

इस टीके के विषय में अमेरीका के स्वास्थ्य मन्त्री का कथन है कि बी. सी. जी. के टीके को इस सीमा तक न बढ़ाया जाय कि स्वास्थ्य सेवायें उससे उत्पन्न दायित्वों को न संभाल सके।

बी. सी. जी. के टीके से मस्तिष्क में सूजन हो जाती है यह कहना कठिन है कि ऊंट किस करवट बैठेगा के अनुसार मस्तिष्क सब नाड़ियों का केन्द्र है इससे जिस नाड़ी पर ज्यादा दबाव पड़ेगा, उस इन्द्रिय के नाश होने की सम्भावना है। तथापि अन्धापन, बहरापन, पक्षाघात वात के ८० रोगों में से किसी को भी जन्म देना तथा मस्तिष्क विकृति होना तो स्पष्ट दृष्टिगोचर है। यदि सलाहकार डाक्टर साहेब का यह मत हो कि "विषस्य विषमौषधम्" जहर की जहर ही औषधि है तो यह मान लिया जाय तब भी दोष से नहीं छूट सकेंगे क्योंकि जिसे टी० बी० है ही नहीं, उसके शरीर में उक्त विष प्रवेश कराना कितना घातक होगा।

इस टीके में भय संदिग्धता भारत के लिये उपयुक्त है वा नहीं आदि विचारणीय विषय है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभी ब्रिटेन तथा अमेरिका ने भी इसे मान्य नहीं दिया है इन जब उक्तियों से सिद्ध होता है कि बी. सी. जी. के टीके हमारे लिये ठीक नहीं है यक्ष्मा रोग क्यों होता है, इससे बचने के उपाय, रोग होने पर क्या किया जाय और रोग का साध्यासाध्य अन्य लेख में दिया जायगा।

समाचार

आयुर्वेद विभाग के इंसपेक्टर पर सरकार को धोखा देने के आरोप

राजनैतिक दबाव के कारण जांच में बाधा

जयपुर। विश्वस्त सूत्र से ज्ञात हुआ है कि आयुर्वेद विभाग के एक इन्सपेक्टर के खिलाफ सरकार को धोखा देने के कई मामले पकड़े गये हैं, जिनकी जांच में राजनीतिक दबाव के कारण रोड़े अटकाये जा रहे हैं।

बताया गया है कि उक्त इन्सपेक्टर सरकारी दौरे के समय प्रायः तीसरे दर्जे में यात्रा करता है, परन्तु दूसरे दर्जे का भत्ता सरकारी खजाने से वसूल करता रहा है। इन्सपेक्टर के खिलाफ लगातार शिकायतें आने के कारण हाल ही में कई मामले पकड़े गये हैं, परन्तु उनकी जांच होने और अभियुक्त इन्सपेक्टर के विरुद्ध कारवाही की जाने में इसलिए कठिनाई हो रही है कि इन्सपेक्टर की ओर से स्वास्थ्य मन्त्री के पास राजनैतिक नेताओं की सिफारिशें पहुँचा दी गई हैं और स्वास्थ्य मन्त्री स्वयं उक्त नेताओं को सन्तुष्ट करने के लिए मामले को दबा देने की चेष्टा में लगे हुए हैं, किन्तु सरकारी फाइलों में जिस तरह अभियोग बना कर पेश किया गया है, उसे बदलने का कोई रास्ता नहीं मिल रहा है जिससे कि कोई वैधानिक आपत्ति से बचा जा सके। मामले को दबाने में मौलाना सिद्दीकी का बहुत बड़ा हाथ बताया जाता है, जो कि भूतपूर्व स्वास्थ्य मन्त्री चौ० कुम्भाराम की राजनैतिक गतिविधियों में बड़ी दिलचस्पी रखते रहे हैं और साम्प्रदायिक आधार पर इन्सपेक्टर का पक्ष ले रहे हैं।

बताया गया है कि इन्सपेक्टर के विरुद्ध पकड़े गये मामलों की रेलवे अधिकारियों से जांच-पड़ताल करवा ली गई है, जिससे प्रगट होता है कि जिन जिन दिनों का यात्रा भत्ते का बिल पेश किया गया है उनमें से कई तारीखों में उन स्थानों के लिये दूसरे दर्जे का कोई टिकट जारी नहीं किया गया है, जिन स्थानों के लिए इन्सपेक्टर ने भत्ता वसूल किया है। मामला अभी अनिर्णीत रखा जा रहा है। (राष्ट्रदूत, २४ सितम्बर)

आयुर्वेदिक चिकित्सा का विकास आवश्यक

श्री सुखाड़िया द्वारा आयुर्वेदिक सलाहकार बोर्ड का उद्घाटन

जयपुर। राजस्थान के मुख्य मन्त्री श्री मोहनलाल सुखाड़िया ने घोषणा की है कि द्वितीय पञ्चवर्षीय योजना में राज्य में आयुर्वेदिक चिकित्सा प्रणाली में विकास करने के लिये ५३ लाख रुपये व्यय किये जायेंगे। आपने कहा कि देहाती क्षेत्रों में भारतीय स्थिति के अधिक अनुकूल स्वदेशी चिकित्सा प्रणाली की विभिन्न शाखाओं में अनुसन्धान कार्य के लिए १५ लाख रुपये की धन राशि व्यय की जायेगी।

श्री सुखाड़िया ने जो राज्य में आयुर्वेदिक चिकित्सा प्रणाली के विकास के उपायों पर विचार-विनिमय करने के लिए स्थापित सलाहकार बोर्ड

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का उद्घाटन कर रहे थे व्यक्त किया कि राज्य सरकार स्वदेशी चिकित्सा प्रणाली को जिसे काफी सहायता मिली है और जिसने आशातीत प्रगति की है पुनर्जीवित करने के लिए आवश्यक धनराशि व्यय होगी।

आयुर्वेदिक विभाग के सञ्चालक ने विभाग की प्रवृत्तियों का उल्लेख करते हुए कहा कि इस दिशा में प्रगति की काफी सम्भावनायें है। आपने बताया कि आयुर्वेदिक अस्पतालों की संख्या २४३ से बढ़ा कर ५०३ कर दी गई है और द्वितीय पञ्चवर्षीय योजना में ५ लाख रुपये की लागत से एक सुसज्जित आयुर्वेदिक कालेज की स्थापना करने का निश्चय किया गया है।

राज्य के चिकित्सा एवं स्वास्थ्य मन्त्री श्री बद्रीप्रसाद गुप्ता ने बताया कि भारत जैसे देश में आयुर्वेदिक तथा प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली अपेक्षाकृत बहुत ही सस्ती है। आपने इस मनोवृत्ति की भर्त्सना की कि भारतीय किसी भी ज्ञान को स्वयं तक ही सीमित रखते हैं, जिसका परिणाम यह होता है कि उनकी मृत्यु के साथ ही उस ज्ञान की समाप्ति भी हो जाती है। आपने कहा कि ज्ञान का आदान-प्रदान एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक होता रहना चाहिये। (नवयुग, दि. २४ सितम्बर)

सिंहभूमि जिला वैद्य सम्मेलन का ऐतिहासिक अधिवेशन शीघ्र ही जमशेदपुर में होने जा रहा है

जिले के अतिरिक्त भी पलामू, रांची, हजारीबाग और मानभूमि के प्रतिनिधियों का शामिल होना भी निश्चित है। और बाहर के नेता भी निमन्त्रित होंगे।

स्वागत समिति बन चुकी है, तिथि स्थानादि और कार्यक्रम की सूचना सदस्यों की सेवा में अक्टूबर नवम्बर तक पहूंच जायगी। अधिवेशन का समय लगभग दिसम्बर के अन्तिम सप्ताह में २।३ दिन का अधिवेशन निश्चित होने की आशा है।

अधिवेशन की सफलता के लिए आपका सहयोग और सहायता नितान्त अपेक्षित है। कान्फ्रेंस जिला के अनुरूप होना चाहिए। आपकी किसी भी सेवा का स्वागत होगा। आप अपने आपको केवल एक सदस्य ही न समझें। आप स्वयं चिकित्सा संसार का प्रतिनिधि स्वीकार करें और नेतृत्व करना अपना कर्तव्य समझें।

अतः तन, मन धन और योग्यता तथा उदारता से जो भी कुछ सम्मेलन के लिए कर सकें, नाम और ख्याति के अनुरूप सेवा से प्रमाणित कर दें। और नेतृत्व करने के लिए तैयार हो जाय। और अपने दल-बल भी साथ ले आने का प्रयत्नशील रहें। आगामी मास में किसी दिन सम्मेलन के मान्य प्रतिनिधि सभ्य आपके स्थान पर पहुँचेंगे, और भावी कार्यक्रम पर आपके बहुमूल्य विचार भी संग्रह करेंगे। साथ ही वैद्यों और हकीमों का रहन-सहन, व्यवहार एवं चिकित्सा सम्बन्धी मानदण्ड का निरीक्षण तथा आवश्यकताओं को समझ कर योजनाओं में शामिल करेंगे।

यथा सम्भव सम्मेलन का अधिवेशन चिकित्सा जगत् में क्रान्तिकारी प्रमाणित होगा। और देशी चिकित्सकों में मन्द गति दूर होकर प्रगति आयेगी। निराशा में आशा, हीनता में सबलता का सञ्चार होगा। और प्रगतिशील, कर्मठ एवं एक नये मोड़ पर उपस्थित होने का अनुभव करेंगे। ऐसी पूर्ण आशा है।

विनीत—वैद्य रघुनाथजी थानकी
सभापति—सिंहभूम जिला वैद्य सम्मेलन, जमशेदपुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाइ-ला भैषज्य-पेटिका (Medicine Box)

हमारे व्यापारियों तथा शुभचिन्तकों के विशेष आग्रहसे जनता के लाभार्थ हमने "बाइ-ला भैषज्य पेटिका" का निर्म्माण किया है।

इस भैषज्य पेटिका में प्रचलित एवं तत्काल लाभप्रद औषधियों का समावेश है जो समय पर वैद्य एवं डाक्टर का काम करती हुई प्राण बचाती है।

यह पेटिका प्रत्येक पारिवारिक व्यक्तिको अपने घरमें अवश्य रखनी चाहिये। विशेषतः भ्रमण शील तथा देहात के लोगों के लिये तो अत्यन्त उपयोगी और आवश्यकीय है। देहातों में समय पर वैद्य या डाक्टर न मिलने पर परेशान होकर प्राणों से भी हाथ धोना पड़ता है। ऐसी परिस्थिति में यदि यह "भैषज्य पेटिका" घर में वर्तमान हो तो अपनी चिकित्सा आप स्वयं कर सकते हैं।

आकस्मिक दुर्घटनाओं से रक्षार्थ इसमें प्राथमिक चिकित्सा के सभी उपयोगी सामान दिये गये हैं।

जनहित का ध्यान रखते हुए मूल्य भी इतना कम है कि सर्व साधारण आसानी से खरीदकर लाभ उठा सकें। भैषज्य पेटिका में निम्न लिखित औषधियां हैं।

औषधि नाम	रोगाधिकार
१ अर्क पुदीना—	अजीर्ण, उदरशूल
२ अर्क कपूर—	हैजा, अजीर्ण, उदरशूल
३ मोहन मिक्श्चर—	विभिन्न रोग
५ एसीकुला	आंख, कान, नाक तथा गला रोग,
५ क्लोरोडिन	वायु शूल, दस्त, आंव।
६ मेन्थेरिया बाम (ट्यूब)—	शिरपीड़ा शोथ, सन्धि पीड़ा
७ अग्निप्रभा वटी—	स्वादिष्ट पाचक,
८ कैस्प्रेन —	विभिन्न पीड़ाओं पर
९ स्वस्ति मल्हम—	दाद, खाज, आदि चर्म्मविकार
१० टिंचर बेंजोइन—	खून बन्द करने के लिये
११ टिंचर आयोडिन—	क्षत तथा शोथ नाशक
१२ नियो लैक्स	जुलाब
१३ आयडो—सल्फेन	घाव तथा चोट नाशक
१४ वी० एल थ्रोटपेंट—	गले के विकार नाशक

इन औषधियों के अतिरिक्त १ कैंची, गाज, वैण्डेज क्लौथ, प्राथमिक चिकित्सा के साधन हैं बाइ-ला "भैषज्य पेटिका" में एक पुस्तिका रहती है जिसमें समस्त औषधियों का पूर्ण विवरण दिया गया है। मूल्य १६) रु० मात्र। प्राप्ति स्थान—बिड़ला लेबोरेटरीज, कलकत्ता-३०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिड़ला लेबोरेटरीज़ द्वारा प्रस्तुत शीघ्र लाभदायक कुछ विशिष्ट वस्तुएं

मेन्थेरिया बाम (ट्यूब)

रात को अधिक जागना, जुकाम, परिश्रम चिन्ता, स्वप्नदोष, अधिक सम्भाषण आदि कारण जन्य शिर पीड़ा से छुटकारा पाने के लिये (मेन्थेरिया बाम) एक अमोघ औषध है। अधकपाली एवं निमोनियां के छाती दर्द में भी इसका व्यवहार करना लाभप्रद है। मूल्य प्रति ट्यूब १) रुपया

नियो च्यवनप्राश

(विटामिन [illegible] युक्त)

अष्टवर्ग युक्त च्यवनप्राश के आधार पर आधुनिक रासायनिक परिवर्द्धनों द्वारा इसमें वास्तविक विशेष गुणों का समावेश किया गया है। इसके नियमित सेवन से सर्दी, खांसी, पुराना, जुकाम, श्वास, अपच, अरुचि, स्नायविक एवं धातु दौर्बल्य आदि का विनाश होकर नवजीवन की प्राप्ति होती है।

मूल्य १ पौंड ५) ८ औंस २॥) रुपया

सौन्दर्य [illegible]क—"चम्पा"

[illegible]ाने का साबुन

मशहूर बिड़ला कटेली चम्पा केश तैल की मीठी खूशबू से बनाया हुआ "चम्पा" नहाने का साबुन, आपको बहुत पसन्द आयगा। स्नान करते समय इसके लगाने से इसके खुशबूदार झाग से आपका मन खिल उठेगा। इसके व्यवहार से आपका शरीर और त्वचा स्वच्छ, मुलायम आकर्षक ओर रोग मुक्त रहेगें। एक बार हमारे "चम्पा" साबुन का व्यवहार करनेके बाद आप दूसरा कोई साबुन लगाना पसन्द नहीं करेंगे। एक बार परीक्षा अवश्य करें। यह दो प्रकार की साइजों में मिलता है। बड़ी साइज की टिकिया का मूल्य ४४) प्रति ग्रास टोकेन और छोटी साइज का मूल्य १६) प्रति ग्रास रखा गया है।

ब्रांच—टोकोबारी रोड, गौहाटी (आसाम) } बिड़ला लेबोरेटरीज़ कलकत्ता-३०

"डेन्टोफिल"

(क्लोरोफिल युक्त टूथ पाउडर)

दांत शरीर का एक प्रमुख एवं आवश्यक अंग है। सुन्दर स्वच्छ एवं रोग मुक्त दांत मुख की शोभा बढ़ाने एवं विभिन्न प्रकार के भोजन का रसास्वादन के लिए नितान्त आवश्यक है दन्त रहित मनुष्य के लिए कैसा ही स्वादिष्ट भोजन क्यों न हो सब बेकार है।

इस लिए दांतकी रक्षा करना परमावश्यक है। हमारे यहां का नवनिर्मित "डेन्टोफिल" क्लोरोफिल युक्त टूथ पाउडर) आपके दांतों को स्वच्छ, चमकीले, मजबूत रखने के अतिरिक्त मुख की दुर्गन्धि, मसूड़ों का फूलना, पीव आना, दर्द होना, दांतों का हिलना, पायरिया, इत्यादि दांत सम्बन्धी सभी विकार का नाश करता है।

मूल्य—बड़ी डिब्बी १२) प्रति दर्जन
" छोटी डिब्बी ७॥) प्रति दर्जन

CC-0.In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

प्रकाशचन्द्र गुप्त द्वारा, पोपुरिया घाट स्ट्रीट द्वारा प्रकाशित तथा जनरल प्रिण्टिंग वर्क्स लि०, ८३, पुराना चीनाबाजार स्ट्रीट, कलकत्तामें मुद्रित।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

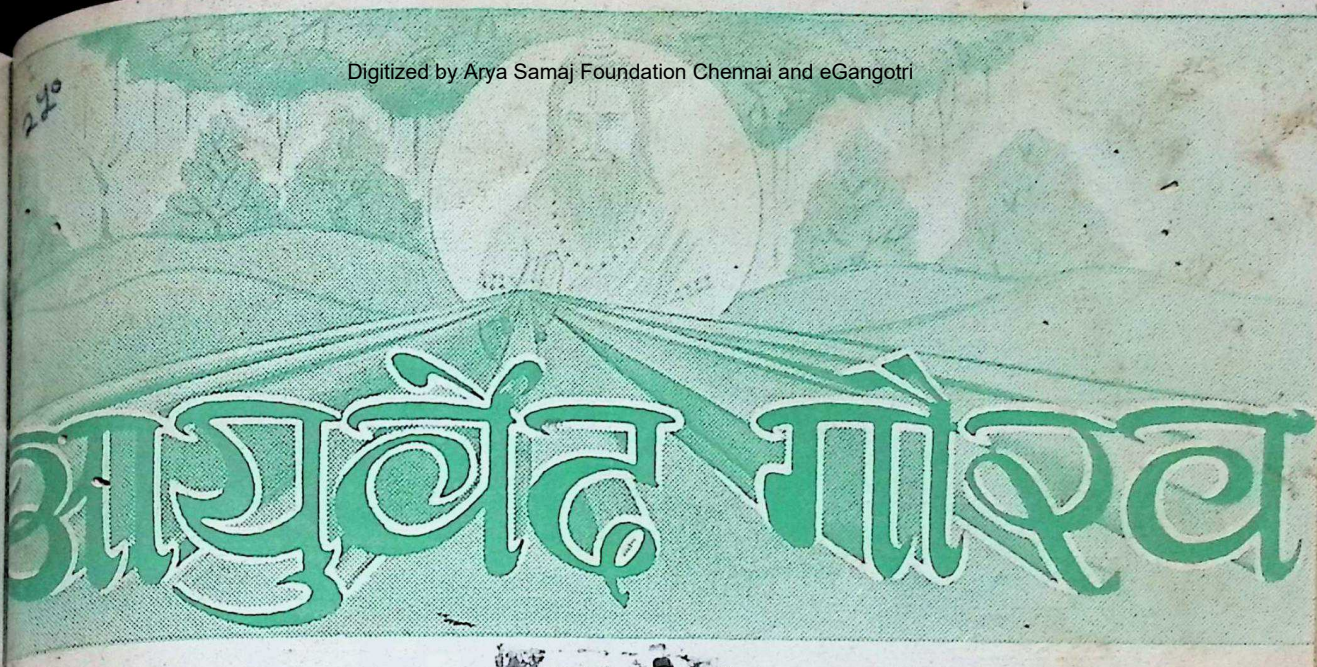

[illegible] पत्रिका

आयुर्वेद का एकमात्र सर्वोत्तम मासिक पत्र

"आयुर्वेद गौरव"

पण्डित श्री गिरिजादत्त पाठक, वैद्य, शास्त्री बक्सर (आरा)

जीवन का संदेश शुभ, लेखबद्ध प्रतिमास ॥
गौरव आयुर्वेद का, चिरजीवन हो पास ॥ १ ॥
आयुर्वेद उदात्त, भावभरा भासत सुखद ॥
जीवन का अनुपात्त, स्वास्थ्य मोक्ष साधक सुभग ॥२॥
मानव के अनुदार, व्याधि, वृद्धता, निधनता ॥
जीवन शास्त्र उदार, रहने देता है नहीं ॥ ३ ॥

आयुर्वेद गौरव के गुण गरिमा का गर्व,
आयुर्वेद गौरव की सत्यता अखण्ड है।
आयुर्वेद गौरव का मान अपमान मेरा,
आयुर्वेद गौरव भी प्रबल प्रचण्ड है ॥
आयुर्वेद गौरव के कल्पित प्रयोग भले,
आयुर्वेद गौरव का न कोई मानदण्ड है।
आयुर्वेद गौरव की भूति अनुभूति भरी,
आयुर्वेद गौरव से भरा ब्रह्म अण्ड है ॥४॥

वार्षिक मूल्य ३)
एक प्रति ।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

सम्पादक—श्री प्रकाशचन्द्र गुप्त M.Sc सह-सम्पादक—श्री मदनगोपाल वासोतिया आयुर्वेदाचार्य

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

	विषय	लेखक का नाम	पृष्ठ सं०
१	हंसोदक	श्री युगेश्वर शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य	९७
२	सम्पादकीय	....	९८
३	चीन और चिकित्सा विज्ञान	डा० श्री श्यामदास प्रपन्नाश्रमी "पीयूषपाणि"	१००
४	स्वास्थ्य रक्षा के कुछ उपाय	कविराज श्री राधावल्लभ पन्त भिषगाचार्य	१०४
५	ताल सत्व निर्माण विधि	श्री वैद्याचार्य उदयलाल महात्मा	१०७
६	विटामिन और हमारा खाद्य	कविराज श्री एस० एन० बोस	१०९
७	कुछ शंकाओं का समाधान	वैद्यभूषण पं० श्री ठाकुरदत्त शर्म्मा वैद्य	११२
८	कुक्कुटांड़—मुर्गी का अंडा	श्री इन्द्रभानसी भटनागर	११६
९	हृदय के कार्य	श्री रघुवीरशरण शर्मा वैद्य	११८
१०	आयुर्वेद का वैज्ञानिक महत्व	श्री चिरंजीलाल शर्मा आयुर्वेदाचार्य	११९
११	सिनेमा और स्वास्थ्य	श्री वेदप्रकाश शास्त्री साहित्यायुर्वेदरत्न बी०ए०	१२२
१२	चिकित्सा तालिका	श्री गंगाचरण शर्मा आयुर्वेदाचार्य	१२३
१३	बूंटी और बटी	श्री युगेश्वर शास्त्री आयुर्वेदाचार्य	१२५
१४	साहित्य समीक्षा	....	१२६
१५	समाचार संग्रह—	....	१२७

———

२२ वर्ष का चिकित्सा का निचोड़ 'ये अनुभवपूर्ण ग्रन्थ'

१—तत्काल फलप्रद प्रयोग (प्रथम भाग) १०० पृष्ठ, १५१ जादुई योग १॥) पोस्टेज ॥)

२— ,, ,, (दूसरा भाग) महिला रोग चिकित्सा १६० पृष्ठ ३०१ योग २) ,, ॥-)

३— ,, ,, (तीसरा भाग) नारी रोग पर पैटेन्ट १७३ पृष्ठ ४५१ योग २) ,, ॥=)

४— ,, ,, (चौथा भाग) ८८ रोगों की स्वादिष्ट चिकित्सा१४४२-३८८ योग २) ॥-)

४— सौ रोगों का सरल इलाज (परिवर्धित, संस्करण) बड़ा आकार १४२ पृष्ठ १॥) ,, ॥-)

६— प्राकृतिक चिकित्सासार संग्रह सर्वोपयोगी ग्रन्थ ,, ७० पृष्ठ १) ,, ॥)

७— पथ्य दर्शक ३२ पृष्ठ ।) आठ औषधों से सम्पूर्ण इलाज ।=)

८— सरल निघण्टु (तत्काल फलप्रद योग-युक्ति) पूर्वार्द्ध १।), उत्तरार्द्ध १।) (अक्टूबर में)

९— चिकित्सा चन्द्रशेखर (प्रथम भाग) हाजारों अनुभव, बड़े ३०० पृष्ठ ५) (दिसम्बर में)

१०— 'आयुर्वेद चिकित्सक'(मासिक) ३ वर्ष से प्रकाशित, वा० भेंट ४॥), दो विशेषांक देता है।

—वैद्य पं० चन्द्रशेखर जैन शास्त्री। लाखा भवन, पुरानी चरहाई, जबलपुर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ॐ

प्राच्यं प्रतीच्यं यत्किंचिद् आयुर्वेदात्मकं हि तत् ।
तद्गौरवो विजयते, विश्वस्मिन् व्याधिसंकरे ॥ १ ॥

नोट—१-"यदिहास्तितदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्", इति चरक वचनात् ।

आयुर्वेद-गौरव

वर्ष ३ | जनवरी १९५६ | संख्या ४

हंसोदक

पं० श्री युगेश्वर शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य, रजिस्टर्ड वैद्य
५।१।१ए, दुर्गाचरण मित्र स्ट्रीट, कलकत्ता—६

यदि कांच तथा रजतादिक पात्र पवित्र में पेय रहे जल जो ।
रवि के करसे भरवासर तापित शैत्य करे उसको निशि जो ॥
परिपूर्ण विधूकर से पुनि प्रातहिं पान करे उसको ऋषि जो ।
शिर चक्कर मक्कर आँखन के हर रोग हरे गहरे रहे जो ॥१॥

भाषा—यदि कांच अथवा चांदी आदि के पवित्र पात्र में पीने योग्य जल को रख कर उसे दिन भर सूरज की रोशनी में गर्म कर पुनः पूर्णमासी की रात में चन्द्रबिम्ब की रोशनी में ठण्डा कर प्रातःकाल कपड़ छान कर पीने से शिर का चक्कर, आंखों का धूंधलापन और पेट की कठिन एवं पुरानी बीमारियों को हटा कर अत्यन्त बलिष्ठ तथा कांतियुक्त मनुष्य होता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

कई शताब्दी पूर्व हिन्दूराज्य कालीन भारतवर्ष में आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति, एवं सद्वैद्यों का राजाओं तथा जनता द्वारा अधिकाधिक सम्मान होता था। हिन्दूराज्य के बाद मुसलमानों का राज्य हो जाने पर यूनानी चिकित्साका अधिकाधिक प्रचार होते हुए भी आयुर्वेदिक चिकित्सा का विशेष ह्रास न हुआ परन्तु भारतवर्ष पर अंग्रेजों का आधिपत्य होने पर भारतीयों की शिक्षा-दीक्षा, रहन, सहन, खानपान, पहनाव इत्यादि में परिवर्तन होते हुए चिकित्सा पद्धति में भी शनैः शनैः परिवर्तन हो गया कारण यह था कि अंग्रेज लोग अपने स्वार्थ के लिये भारतीयों की प्राचीन संस्कृति को विनष्ट कर पाश्चात्य संस्कृति में भारतीयों को रंग रहे थे। अंग्रेजों की ओर से भारतीयों का विभिन्न प्रकार से उत्पीड़न एवं शोषण होने लगा। ऐसी परिस्थिति में कांग्रेस का जन्म हुआ। कांग्रेस ने जनता के सहयोग से प्रायः पचास वर्ष तक शान्तिपूर्ण रीति से संघर्ष कर अंग्रेजों को भारत स्वतन्त्र करने के लिये विवश कर दिया। अंग्रेजों ने भारत में अपनी दाल अधिक दिनों तक न गलती देख कर परिस्थिति से बाध्य होकर अपनी कूटनीति द्वारा भारतवर्ष का दो खण्ड कर (हिन्दुस्तान पाकिस्तान) स्वयं विदेश चले गये। भारत स्वतन्त्र होने पर प्रत्येक भारतवासी प्रसन्न चित्त होकर यही पुकारने लगा कि अब हम भारतीयों के सुख के दिन नजदीक आ रहे हैं। भारतीय अधिकारीगण भी भारतवर्ष का कायाकल्प करने के लिये सतत प्रयत्नशील रहे तथा अब भी हैं परन्तु क्या सैकड़ों वर्षकी बिगड़ी हुई परिस्थिति १ या २ वर्ष में सुधर सकती है, नहीं। युद्धजन्य परिस्थिति एवं विभिन्न दैवी प्रकोप होने पर जनता को अनेक कष्ट भोगने पड़े तथा पड़ रहे हैं। सभी भारतीय विभिन्न प्रकार से अपनी-अपनी उन्नति करने में लगे हुए हैं। जनता को भारत सरकार भी यथासाध्य आर्थिक सहायता एवं सहयोग दे रही है। पर दुर्भाग्यवश भारतवर्ष स्वतन्त्र होने के ८ वर्ष बाद भी भारतीयों को भरपेट अन्न एवं कपड़ा तथा रहने के लिये मकान नहीं मिलते, कितने ही गरीब आज भारत में अन्न के बिना भूखों मर रहे हैं, कितने ही वस्त्र के बिना शीतकाल में कठिन कष्ट भोग रहे हैं कितने ही निर्धन मकान के बिना शीतकालीन रात्रि में फुटपाथ पर शयन करते हैं। कितने ही धनहीन रोगी समुचित चिकित्सा एवं पथ्यादि के अभाव में कष्टमय जिन्दगी के दिन व्यतीत कर रहे हैं। यद्यपि भारत सरकार तथा प्रान्तीय सरकार, डिस्ट्रिक्ट बोर्ड, म्युनिसिपैलिटी के तरफसे विभिन्न शहरों, गांवों में बड़े छोटे बहुत से अस्पताल हैं पर भारत की जनसंख्या के आगे ये नगण्य हैं। इन अस्पतालों के चिकित्सक (डाक्टर) एलोपैथ एवं चिकित्सा पद्धति भी एलोपैथी विशेष व्ययसाध्य होने के कारण गरीबों का उपकार इनसे होना कठिन है। क्योंकि इन सूट बूटधारी डाक्टरों की फीस एवं एलोपैथी औषधियों के अधिकाधिक व्यय भार को भारतीय गरीब जनता नहीं संभाल सकती। यस्य देशस्य यो जन्तुस्तज्जं तस्यौषधं हितम्, इस वचन के अनुसार भारतीयों के लिये आयुर्वेदिक औषधियां ही हितकर हो सकती हैं। क्योंकि इस चिकित्सा के चिकित्सक प्रायः दयालु और निर्लोभी होते हैं तथा अनेक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

औषधियां भी अल्प व्ययसाध्य हैं जो कठिन से कठिन रोगों को दूर करने में पूर्ण समर्थ हैं। आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति को वैद्य समुदाय समुन्नत करना चाहता है। इसके लिये प्रत्येक प्रान्त में प्रयत्न भी किये जा रहे हैं। सरकार भी अपनी ओर से थोड़ी बहुत सहायता दे रही है जो एलोपैथी की अपेक्षा नगण्य सी है। आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति की समुन्नति में निम्न लिखित कारण बाधक हैं। अतः सरकार एवं वैद्यसमुदाय को मिल कर इन्हें शीघ्रातिशीघ्र दूर करने का पूर्ण प्रयत्न करना चाहिये जिससे आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति समुन्नत हो।

१—वैद्य समुदाय में एकता का अभाव, पदलोलुपता के कारण परस्पर मतभेद एवं विद्वेष होना।

२—अपने से निम्नश्रेणी के वैद्यों को हेय समझ कर किसी रोग के विषय में सम्मति पूछने पर उपेक्षा की दृष्टि से बातें करना।

३—रोगी की चिकित्सा करनेवाले वैद्य की चिकित्सा पद्धति में सन्दिग्ध बातें बताना।

४—साङ्गोपाङ्ग शास्त्र बिना पढ़े तथा अपने हाथों से बिना औषध निर्म्माण किये चिकित्सा क्षेत्र में प्रविष्ट होना।

५—काष्ठौषधियों, एवं हरी औषधियों का परिचयाभाव तथा बाजारमें विशुद्ध यथार्थ औषधियों का न मिलना।

६—विष उपविष, धातु, उपधातु एवं खनिज पदार्थों का सर्वथा विशुद्ध रूप में सुलभ प्राप्ति का अभाव।

७—आयुर्वेद के लिये केन्द्रीय एवं प्रांतीय सरकारों की उपेक्षा नीति।

८—विभिन्न आयुर्वेदिक फार्मेसियों द्वारा शास्त्रीय योगों को मनमानी विधि से तैयार करना।

९—विभिन्न आयुर्वेदिक फार्मेसियों द्वारा निर्म्माण किये हुए शास्त्रीय योगों में गन्ध, वर्ण, स्वाद; गुण एवं मूल्यादि में भिन्नता होना।

१०—पत्र-पत्रिकाओं, दीवालों, सिनेमा प्रभृति द्वारा अपनी बनाई हुई औषधियों का गुणाधिक्य प्रकट करना।

११—केन्द्रीय एवं प्रांतीय सरकारों द्वारा आयुर्वेदिक अस्पताल न खोलना या नाममात्र के लिये नगण्य अस्पताल एवं औषधालय खोलना।

१२—स्वानुभूत आशु फलप्रद प्रयोगों को गुप्त रखना।

१३—केन्द्रीय एवं प्रांतीय सरकारों द्वारा आयुर्वेद सम्बन्धी उच्च साहित्य लेखकों एवं औषधि विषयक अनुसन्धान के लिये वैद्यों को पुरस्कारादि से अधिकाधिक सम्मानित न करना।

अन्त में केन्द्रीय एवं प्रान्तीय स्वास्थ्य मन्त्रियों से नम्र निवेदन है कि आयुर्वेद की समुन्नति एवं भारतीय निर्धन जनता के हितार्थ, शल्य कर्म्म सहित उच्च शिक्षालय, अस्पताल, औषधालय, भेषजोद्यान, आयुर्वेद सम्बन्धी अनुसन्धान तथा आयुर्वेद सम्बन्धी उच्च साहित्य पर लेखकों के लिये समुचित पुरस्कार की व्यवस्था करें ताकि भारतीय गरीब जनता रोगादि से मुक्त होकर सुखपूर्वक रह सकें। वैद्य महानुभावों से भी प्रार्थना है कि आपसी भेद भावों को भुला कर साधारण श्रेणी के वैद्यों को अपना ही अङ्ग मान कर समय-समय पर उन्हें समुचित सम्मति देते रहें ताकि वे भी आपका अधिकाधिक सम्मान करें। पारस्परिक सहयोग से ही आयुर्वेद की यथार्थ उन्नति होगी। आयुर्वेद की समुन्नति के लिये वैद्यों में एकता, सरकार एवं जनता का सहयोग आवश्यक है। आपस के द्वेष भावों को दूर कर कन्धे से कन्धा भिड़ा कर आयुर्वेद को समुन्नत करते हुए जनता के सच्चे हितैषी बनें ताकि जनता डाक्टरों एवं एलोपैथी चिकित्सा से विमुख होकर वैद्य समुदाय तथा आयुर्वेदिक चिकित्सा के प्रति अपनी हार्दिक आस्था प्रकट करे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चीन और चिकित्सा विज्ञान

ले० आचार्य श्री श्यामदास प्रपन्नाश्रमी "पीयूषपाणि" सर्वोदय सेवाश्रम-दौगवां, (बुलन्दशहर)

चीन की अर्वाचीन चिकित्सा पद्धति के बारे में कुछ कहने के पहले यह हमें मान लेना पड़ता है कि चीन की दुनियां के साथ मेलजोल रखनेवाली रीति-रिवाज बहुत पुरानी है और इसी से हम कह सकते हैं कि चीन देशीय चिकित्सोपचार और इससे सन्बन्धित अनुसन्धानों का कार्य बहुत पुराने जमाने से चालू होकर आज तक भी संसार भर को अपनाने का आदर्श कायम कर दर्शाया है।

चीन के चिकित्सा दर्शन शास्त्र की प्राचीन व प्रामाणिक पुस्तक का नाम है "पान छाओ कूङ्म"। उस पुस्तक के भैषज्य-विधान में वर्णित औषधियों के २६ प्रति शत विभिन्न वर्ग औषधियां ही भारत के चिकित्सकों की पेटिका में हमेशा स्थान प्राप्त किया है। (Vide "A Comparison of the Materia Medica of India and China"—Ry B. E. Read Lingman, Sc, J. 1929. 8. 423)

चीन में प्राणिज औषधियों का व्यवहार अति प्राचीन काल से ही होता आ रहा है और उससे जानकारी मिलने के बाद ही यूरोपीय चिकित्सकों ने सोलहवीं सदी से ही जीव जन्तुओं से औषधियों का काम लेना शुरू किया। यहां ध्यान रखना जरूरी है कि भारतीय प्राणाचार्योंका ध्यान प्राणिज औषधोपचार पर आयुर्वेद के प्रचार के साथ ही साथ आकृष्ट हुआ था। धातक और खनिज पदार्थों की औषधि कल्पना भारत तथा चीन में अति पुरानी मानीं जाती है।

चीन के भैषज्य-निघण्टुकार सम्राट् "शेन नूङ्" को ही आदि आचार्य माना जाता है। "शेन नूङ्" के जीवन चरित का अध्ययन करने से उससे जो निष्कर्ष निकलता है उसमें पौराणिक देव चिकित्सकों की अलौकिक सिद्धियोंके समान यह थोथी बातोंका किस्सा है ऐसा कहना अनुचित होगा। चीन के प्रायः प्रत्येक चिकित्सा मन्दिर में ही "शेन नूङ्" की प्रतिमूर्ति प्रतिष्ठित देखने को मिलती है।

चीन देशीय भेषज-पदार्थों के द्रव्य-गुण-विधान सम्बन्धी एक मौलिक पुस्तक का प्रणयन सर्वप्रथम सम्राट् "शेन नूङ्" ने ही किया था, चीन में कहावत है कि "शेन नूङ्" प्रत्यह पकसे एक वनस्पति या औषधि का अपने शरीर पर होनेवाले प्रभावों का वर्णन आभ्यन्तरिक सेवन जनित अनुभव द्वारा किया करते थे। केवल अनुभव ही किया करते थे यही नहीं, प्रत्यक्ष शरीर क्रिया पर जो जो इष्टानिष्ट प्रभाव तथा विकारादि हो जाता था उसके निवारणार्थ तात्कालिक उपाय उपचार के बारे में भी सोचा करते थे। उनके अन्दर एक ऐसी अलौकिक क्षमता थी जिसकी सहायता से खाई हुई औषधियों की रासायनिक क्रिया तथा विकार आदि का प्रत्यक्ष रूप से अनुभव हो जाता था। असलीयत् तो यह थी कि, उनके नेत्रों में आधुनिक "रंजन-रश्मि" X'Rays से भी अधिकतर कोई अत्याश्चर्य ज्योतिः शक्ति अवश्य थी। प्रत्यह एक-एक विभिन्न औषधि की जांच इसी तरह से कर के वर्ष भर में ३६५ भेषजों का निघण्टु उन्होंने निर्माण किया था। "शेन नूङ्" का चेहरा भी बड़ा विचित्र था। उनके मस्तकोपरि दो छोटी छोटी सींग थी। जब किसी औषधि की विषक्रिया सेवन के उपरान्त उन्हें प्रत्यक्ष रूप से प्रतीत होने लगती तो तत्काल ही वे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी सींगों को भूमि पर स्पर्श करा कर उनमें से विषौषधि को निकाल दिया करते थे।

सम्राट् "शेन नूङ्" की विचित्र वाहिनी की वास्तविकता पर ध्यान आकर्षित हो या नहीं इसपर स्वतन्त्र विचार करके देखने से हमें यह अवश्य ही मान लेना पड़ेगा कि अपनी अमानुषिक प्रतिभा द्वारा या अन्य किसी शक्ति की सहायता से उन्होंने उक्त "भेषज-संग्रह" पुस्तक का प्रणयन कर दिया।

संसार के यावतीय परिदृश्यमान संघटनाओं को एक साधारण नियम के आधीन करके देखना ही मानव-स्वभाव का स्वधर्म है। चिकित्सा विज्ञान के अन्दर विविधता का एकमात्र कारण है उसमें भिन्न भिन्न दार्शनिकों के स्वकीय मतवाद का अवाध प्रवेश के फलस्वरूप आयुर्वेद का त्रिदोष-तत्व, ग्रीक् चिकित्सा विज्ञान का Humoural theory, और आधुनिक चिकित्सा-विज्ञान की देन "ग्रन्थि रस तत्व"—Endocrinology तथा जीवाणु-तत्व आदि के अनुरूप चीन में "ईयाङ्" और "ईन" मतवादों की सृष्टि हुई है।

चीन के चिकित्सा-शास्त्र के अनुसार आत्मा या प्राण को ईयाङ् व ईन तत्त्व के आधार पर विभक्त किया गया है। यह ईयाङ् व ईन ही हमारे वेदान्तोक्त जड़ व चैतन्य के साथ उपमेय हो सकता है। चीन के प्रायः सभी दार्शनिक मतवादों के अन्दर ही इसी प्रकार ऋणात्मक व धनात्मक विचार-विभाजन देखने में आता है। जो कुछ भी हो, चीन के चिकित्सा-विज्ञान के मतानुसार देहाभ्यन्तरस्थित प्रत्येक यन्त्र ही वर्धिताकार, मध्यमाकार इन तीन रूप में अवस्थित है।

फिर प्रत्येक रूप को ही ईयाङ् व ईन द्वारा विभाजित किया जाने के कारण एक एक यन्त्र ही छः रूपों का अभिधेय माना जाता है। शरीर यन्त्र जब सूक्ष्माकार में अवस्थित रहता है तो देहधारी मानव स्वस्थता का अनुभव करता है और इसका विपर्यय होने पर ही अस्वस्थता का। इस सिद्धान्त के प्रवर्तक थे दार्शनिक "फूँशी"।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञान की देन जिनमें प्रत्यक्ष प्रयोग-परीक्षण Experiment, विश्लेषण Analysis आदि की सहायता से जो सब नवीन आविष्कार या सत्य का उद्भव Synthesis होने लगा है ऐसे विशेष विज्ञान प्रसूत उपाय-उपचारों की प्रगति चीन में अधिक नहीं हुई है। भारत में आयुर्वेद विज्ञान भी चीन के चिकित्सा शास्त्र के समान आज तक अंधेरे में ही है। अस्तु

प्रयोग जनित ज्ञान व अतीन्द्रिय ज्ञान द्वारा प्राप्त अनुभव के ऊपर ही चीन अधिक मनोनिवेश करने लगा था। इसी अतीन्द्रिय सिद्धान्त के प्राचीन मतावलम्बी लोगों में अलौकिक दिव्यौषधियों की सहायता से अजर-अमर होने की कथा-कहानी प्रचलित रही है।

चीन का सर्वदलीय "दर्शन-संग्रह"—"पाओ फू ज्जि" जिसमें विभिन्न मतवादोंका समन्वय-संकलन किया हुआ है। उस पुस्तक का अध्ययन करने से आपको प्रतीत होगा कि दार्शनिक सिद्धान्त के अतिरिक्त बहुमुखी आलोंचनायें तथा कहानी आदि लिखी गई है। पुस्तक के एक स्थान पर यह लिखा हुआ हैं कि :—यदि कोई व्यक्ति "स्वर्ण भेक" Golden frog के मस्तिष्क के साथ दालचीनी का का सेवन लगातार सात वर्ष तक करता रहें तो वह अजर-अमर अवश्य ही होगा उपरान्त जलराशि के ऊपर भ्रमण करने का सामर्थ्य भी उसे प्राप्त होगा।

यह कथा भी पुस्तक में लिखित है कि "कूव्ज चाओ" नामक व्यक्ति जिसने बीस वर्ष पर्यन्त उपर्युक्त औषधि का सेवन किया था, और इसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिणाम स्वरूप उस व्यक्ति के पादतल भाग में लोमोद्गम हुआ था जिससे २०० मील का रास्ता तय करना उसे आसान मालूम होता था। इसके अतिरिक्त वह व्यक्ति १३३३ पौंड का वजन उठा लेता था।—(Chinees Materia Medica, G. A. Stuart 1928 P. 108.)

कुसंस्कार-लब्ध अज्ञानता प्रसूत जो सब काल्पनिक चिकित्सा कहानियां तथा उपाय उपचारों का संकलन चीन के चिकित्सा शास्त्र में किया गया उन सब का वर्जन कर के भी ऐसी बहुत सी औषधियाँ उपलब्ध होगी जिनकी प्रभावशाली कार्यकारिता वास्तविक ही आश्चर्यजनक कही जाती है।

वहां की चिकित्सा शैली का उल्लेख करते हुए कण्ठ रोहिणी की चिकित्सा के विषय में वाटाविया के सुप्रसिद्ध चिकित्सक ए० जी० वोंगारमैन ने जो सन्देश प्रेषित किया उसका सारांश यह कि,—कण्ठरोहिणी--Dyptheria रोग का नाम वाटाविया के निवासियों ने इससे पूर्व कहीं भी नहीं सुना है। पर वर्तमान काल में यहां पर भी होना शुरू हो गई है।

परन्तु आश्चर्य की बात यह है कि-यहांके लोग रोगाक्रमण की सूचना मिलते ही रोगी को चीन देशीय चिकित्सक या चीनी पद्धति को अपनानेवाले चिकित्सक के ही हवाला कर देते हैं। केवल यहाँ के लोग ही जो चीनी चिकित्सा-प्रणाली पर ही अधिक आस्थावान है यही नहीं; यूरोपीय लोग भी "कण्ठ रोहिणी" द्वारा आक्रान्त होनेपर तत्काल ही चीनी पद्धति की शरण ले लेते हैं।

उक्त डाक्टर साहब ने एक स्थान पर कहा है कि—आगे चलकर मुझे भी चीनी चिकित्सा प्रणाली से काम लेना आवश्यकीय हो पड़ा। चीनी चिकित्सा का अनुभव मुझे एक नौ साल की उम्र वाले कण्ठ रोहिणी के रोगीके चिकित्सा काल में ही हुआ और तभी से मैं भी चीनी प्रणाली का ज्ञान प्राप्त कर चिकित्सा क्षेत्र विशेष प्रसिद्धि पा चुका हूं।

डाक्टर साहब का कहना है कि—मेरा कार्य-काल वाटाविया में नौ साल तक रहा और इस समय के अन्दर ⅞० कण्ठ रोहिणी द्वारा आक्रान्त रोगियों की चिकित्सा करके उन्हें मौत के गाल से मैंने बचा लिया।

एतद्भिन्न एफिड्रीन, सितिका, केरोलीन आदि भेषज या उनसे निर्मित प्रयोग समूह जो पाश्चात्य चिकित्सा विज्ञान के आविष्कार कह कर माने जाते हैं उक्त सभी का उल्लेख "शेन नूङ्" के भैषज्य संग्रह पुस्तक में बहूत पूर्व ही किया था। "शेन नूङ्" द्वारा रचित इस अपूर्व ग्रन्थ की रचना आज से पांच हजार वर्ष पहले हुई थी। "द्वानसू" नामक प्रयोग रूप जिसका उपयोग हृदय-विकार पर यहाँ के चिकित्सक लोग आम तौर से करते हैं उसका मूलतत्व है भेक यानी मेढ़क का ग्रन्थि-रस। पाश्चात्य आविष्कार डिजिटेलीस के साथ इस औषधि की कार्यकारिता आदि की विशेष रूप से सादृश्यता है। इसके अतिरिक्त "होयाङ्ची", "हाई-जेन द्वाओ" आदि आदि योगों की रोगारोग्य-शक्ति जादू की सी प्रतीति होती है। एरण्ड-तैल का प्रयोग चीन में अति प्राचीन है। विरेचक के स्थान पर यहां के लोग इसे अव्यर्थ नाम दे रखा है।

हमारी संहिता में इसे अति उत्तम माना गया है। केवल विरेचन के अलावा चीन में विड़ाल ग्रह द्वारा पीड़ित को इसका धूप भी अति प्रशस्त बताया गया। वहां पर एरण्ड तेल के साथ जयपाल, दालचीनी, मोम आदि के संयोग से धूप दिया जाता है। धूप चिकित्सा का विधान यह है—रोगी को अग्नि के पास बिठा कर उसमें उल्लिखित धूप-सामग्री

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसमें डाल दी जाती है। अग्नि में से धूआं उठ कर लगते ही उस धूआं के ऊपर आड़े-आड़े से अंगुलियों की सहारे काल्पनिक रेखा आंकी जाती है और इसी प्रक्रिया द्वारा तत्काल ही विड़ाल-ग्रह की शान्ति हो जाती है।

तुवरक का तेल (Oil Chaulmugra) जिसका औषधि-प्रयोग अति प्राचीन काल से यानी चीन "यूयैन वंश के अभ्युत्थान के समसामयिक काल से ही कहिये चीन में चालू है उसी तुवरक को पाश्चात्य चिकित्सकों ने कुष्ठ-नाशक कह कर आविष्कार किया है। कहने का आशय यह है कि तुवरक के गुणों का उल्लेख अर्वाचीन चिकित्सा शास्त्र के पृष्ठ पर केवल १८५५ ई० से ही हुआ। यूनैन राजवंश का शासन काल १२९० से १३६८ ई० तक रहा। जो कुछ भी हो तुवरक का व्यवहार हिन्दुस्तान में कब से हुआ है उसके आविष्कार और तत्सम्बन्धी आलोचना से यहां विशेष जानकारी प्राप्त न कराते हुए 'द्रव्य-गुण-विधान' का वर्णन इस प्रकार दिया गया :—

वामनं पाटली तैलं कुष्ठ-कण्डुविमर्दनम् ;
वलवह्नि-प्रदं-चर्म दोषहन्त्रि रसायनम् ॥

(द्रव्य-गुण-विधान)

अर्थात् तुवरक का तेल वामक तथा वल व अग्नि-वर्धक और रसायन है; यह खुजली, कोढ़ तथा चर्मरोग को विनष्ट करता है।

चीन देशीय चिकित्सा शास्त्रों में उल्लिखित औषधियों की कार्यकारिता तथा उपाय-उपचारों को चमत्कारिता के विषय अध्ययन करने से आप को अवश्य ही कौतूहल उत्पन्न होगा परन्तु प्रत्येक विषय के अनुभव के आधार ७५ प्रतिशत ही कायकारी हो सकेगा।

भारतीय आयुर्विज्ञान के साथ चीन के चिकित्सा-विज्ञान का मेल-जोल रखना और फिर उसकी खोज में लगन लगाना वास्तविक ही आज हमारे लिये व्यापक और विराट रूप बनाने का कार्य है। इससे सम्पर्क रखने के पहले हमें ससीम की भावनाओं से स्वतन्त्र होकर असीम की ओर बढ़ना चाहिये—ज्ञान के भंडारों की तलाशी लेनी चाहिए।

चीन के चिकित्सा विज्ञान में "पागल" (उन्मत्त) का पर्यायवाची शब्द "फफाङ्" है फिर "पिङ्" व "फफाङ्" के सम्मिलित अर्थ ही "पागल" है। पीङ् शब्द का अर्थ है रोगी और फफाङ् का का "वायु" अर्थात् पागल का पर्याय शब्द जिसका यौगिक अर्थ हुआ वायुग्रस्त रोगी। और हमारे आयुर्वेदोक्त उन्मत्तता के निदान पर उसे कहा गया है कि—उन्मार्गगामी दोषों के प्रकोपजन्य वातोल्वण व्याधि ही उन्मत्तता कहलाती है।

चीन के भेषज-विज्ञान ने भी दाड़िमत्वक् को कृमिनाशक बताया। और पाश्चात्य विज्ञान द्वारा भी दाड़िमत्वक् में से निकला हुआ क्षारोद की कृमिनाशिनी कार्यकारिता को सिद्ध किया गया, इसी प्रकार आयुर्वेद में योगरत्नाकर के लेखक भी लिखते हैं :—

दाड़िम-त्वक् कृतः क्वाथस्तिलतैलेन संयुतः
त्रिदिनात पातयत्येव कोष्ठतः क्रिमिजालकम् ॥

और वैद्यक शब्दसिन्धु वाले ने दाड़िम्ब शब्द का तात्पर्य भाव-प्रकाश के अनुसार "तन्मूलञ्च कृमिहरम् ॥" इस प्रकार ही लिखा है।

(सम्पूर्ण)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वास्थ्य रक्षा के कुछ उपाय

कविराज राधावल्लभ पन्त भिषगाचार्य धन्वन्तरि २६ नं० बाजार लेन, न्यू देहली ।

समदोषः समाग्निश्च समधातुमलक्रियः।
प्रसन्नात्मेन्द्रियमना स्वस्थ इत्यभिधीतते ॥

स्वस्थ (तन्दुरुस्त) किसे कहते हैं जो बाल, युवा, वृद्ध इन तीनों अवस्थाओंके अनुसार जिसको खाया हुआ अन्न ठीक समयपर पच जाय पाखाना पेशाब ठीक समय पर ठीक मात्रा में खुलकर हो अर्थात् चौबीस घण्टे भीतर एक या दो बार पाखाना जाय और छै बार पेशाब हो। प्रातः दो घड़ी रात रहते नींद खुल जाय रात को दस बजे सोते ही नींद आ जाय कान ठीक तरह सुनता हो आंखों से ठीक दीखे और कोई मैल न हो नाक के सूंघने की शक्ति ठीक हो मल सूजन वगैरह न हो। जीभ का स्वाद ठीक हो दांतों और गले में किसी किस्म का रोग न हो जीभ किसी किस्म मैली न हो। सर्व शरीर की त्वचा में स्पर्श शक्ति ठीक हो' त्वचा कोमल हो, आत्मा और मन प्रसन्न हों, काम काज करने की शक्ति ठीक हो, शरीर की लम्बाई चौड़ाई और अवस्थानुसार तोल ठीक हो और किसी प्रकार का रोग शरीर में न हो ऐसा पुरुष स्वस्थ कहा जाता है। ये तो हुए स्वस्थ के लक्षण अब स्वास्थ्य को ठीक बनाये रखने की प्रक्रिया—

न वेगितोऽन्य कार्यं स्यात् न वेगान् ईरयेद्बलात्।
काम शोक भय क्रोधान् मनोवेगान् विधारयेत् ॥

पाखाना पेशाब आदि की प्रवृत्ति के समय और कार्य न करे अर्थात् सब कार्य छोड़ पाखाना पेशाब प्रथम कर ले। परन्तु काम, शोक, भय, क्रोध ये मन के वेग हैं इनको रोकें अर्थात् इनके वश में न हो। सारे शरीर और मल मार्गों को प्रति दिन साफ रखे।

दांतों को साफ रखना—शौचके बाद दांतों को प्रतिदिन साफ रखना चाहिये। दंतोन नीम बबूल आदि की होनी चाहिए। आजकल लोग ब्रश से भी दाँत साफ करते हैं। जो हो दांत साफ रहने चाहिए। सबसे सस्ता उपाय सौ सयानों की एक राय—सरसों का तेल और नमक मिलाकर एक बर्तन में रख लें दतौन करने के बाद कूंची से दांतों में प्रतिदिन लगावें। लिखा भी है—'तैलसिंधुभवे न च, हमारी राय में टूथ पाउडरों, पेस्टों के व्यवहार से इतना लाभ नहीं होता जितना सरसों का तेल और नमक से होता है और चीज न मिलने पर प्रतिदिन एक बार केवल नमक के पानी का कुल्ला कर लें तो दांत नहीं बिगड़ते और मुख के रोग नहीं होते। अपने धर्मशास्त्रों में तो व्रतादि पारायणों के बाद 'अछिद्र प्रयोग, केमन्त्रों में 'दन्तान्तर्विलग्नं वा, इस वाक्य से यदि दाँत में मैल या अन्न का टुकड़ा रह जाय तो उसका प्रायश्चित्त लिखा है। सारे शरीर और मल मार्गों को प्रतिदिन साफ रखे। प्रति दिन प्रातः ब्राह्ममुहूर्त में उठ ईश्वर का स्मरण कर शौच स्नानादि से निवृत्त हो थोड़ा कसरत या भ्रमण कर दुग्धादि पान करे। चाय, कोको वगैरह न लें ये सब नशे की चीजें हैं। पुनः अपने दैनिक नित्य कार्य कर ग्यारह बजे से पहिले भोजन करने की आदत रखें। (ग्यारह बजे बाद जो भोजन करने के आदी हो जाते हैं उनका थोड़ा बहुत स्वास्थ्य खराब ही रहता है।) भोजन के बाद कुछ फलादि लेकर टहलें और अपने दैनिक कार्य में लग जांय दिन में सोनें की आदत ठीक नहीं—

दिवा स्वापं न कुर्वीत यतोऽसौ स्यात् कफावहः।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रीष्मवर्ज्येषु कालेषु दिवास्वप्नो निषिध्यते ॥

दिन में सोने की आदत न करे इससे कफ बढ़ता है गर्मी के दिनों को छोड़ कर अन्य समय में दिन को सोने का निषेध है। धर्मशास्त्रों में दिन में सोना पाप लिखा है परन्तु जिनको किसी कारणवश रात में जागना पड़ता है या दिन में न सोने से वातादि रोग की पीड़ा हो वे दिन में सो सकते हैं। छोटे बच्चे और अतिसारादि रोगों से पीड़ित भी दिन में सो सकते हैं। चार पांच बजे कुछ फलादि लघु आहार यथावसर लें पुनः सायंकाल आठ नौ बजे भोजन कर एक घण्टा भ्रमण या अन्य विनोद कर कार्य करें पुनः दस बजे सोने की आदत डालें।

वास्तव में भारतीय संस्कृति दिन रात में स्वस्थ मनुष्य को दो बार भोजन करने की आज्ञा देती है उष्ण प्रदेश होने से।

तस्मादु सायं प्रातराश्येव स्यात्स यो हैवं विद्वा-न्सायं प्रातराशी भवति सर्वं हैवायुरेति।

२।४।२।६। शतपथ।

जो दिन रात में दो बार भोजन करता है वह पूर्णायु (शत वर्षायु) होता है।

सायं प्रात र्मनुष्याणामशनं श्रुतिबोधितम्।
नान्तरा भोजनं कुर्यादग्निहोत्र समोविधिः॥

सुबह शाम भोजन करना वेद विहित हैं बीच में भोजन न करे जिस प्रकार अग्निहोत्र प्रातः सायं ही किया जाता है बीच में नहीं। अनेक बार भोजन और चायपान से आजकल पुराने समय की अपेक्षा अधिक रोग पैदा हो गये हैं। रक्त विक्षेप (ब्लड प्रेशर) में भी एक कारण अनेक बार भोजन करना है।

निवास स्थान – स्वास्थ्य के लिये उत्तम निवास स्थान की आवश्यकता है। रहने का मकान कम से कम आसपास की जमीन से गज भर ऊंचाई पर हो शुष्क जमीन जिसके भीतर प्रातः सायं सूर्य का प्रकाश अच्छी तरह आता हो। खुली हवा वाला निवास प्रवातैक देश। हो सकै तो चारों तरफ खुला और थोड़ा बहुत बगीचे का स्थान हो, न हो सके तो दो तरफ खुला अवश्य होना चाहिए। रसोई स्नान पाखाने का स्थान मकान से लगता हुआ पृथक् हो।

जल—ऋतु के अनुसार स्वच्छ, हो सके तो प्रति दिन उबाल कर ठण्डा किया हुआ पीना चाहिये। स्नान का जल ऋतु के अनुसार स्वास्थ्यानुकूल शीत उष्ण हो स्नान प्रातः शौचानन्तर कर लेना चाहिये। जलकी आवश्यकता प्रतिदिन प्राणीमात्र को होती है। शुद्ध जल अमृत है, जीवन है, तर्पण है, श्रम को दूर करता है, प्यास को दूर करता है, मूर्च्छा, तन्द्रा, निद्रा, दाह को शान्त करता है, अत्यन्त पथ्य है। शुद्ध जल गन्ध स्वाद वर्ण रहित होता है।

'वर्ण शुक्लो रस स्पर्शौ जले मधुरशीतलौ'

पानी का रंग सफेद, रस मीठा, स्पर्श शीत होता है यह न्यायशास्त्र की उक्ति है। मधुरादि स्वाद किसी खनिज द्रव्य के योग से, हरीतकी भक्षणा-नन्तर होता है अतः जहां शुद्ध जल न मिलता हो वहाँ जल को उबाल कर बालुकादि में छना हुआ हो ऐसा जल पीना चाहिये।

खराब जल से होने वाले रोग गलगण्ड विसू-चिका मौक्तिकज्वर प्रवाहिका कृमिरोग इत्यादि।

वायु—दिन भर भी यथा सम्भव ऐसे स्थान पर कार्य करना चाहिये जहां की वायु शुद्ध हो बन्द कमरे में पंखे की हवा भी शुद्ध नहीं रहती जिनको दिन भर शुद्ध वायु नहीं मिलती उनको प्रातः सायं कम से कम एक घंटे शुद्ध वायु का सेवन करना चाहिये। दिन की अपेक्षा रात्रि में शुद्ध वायु की अधिक आवश्यकता होती है। रोगी के लिये शुद्ध वायु की अत्यन्त आवश्यकता होती है सम्भव हो तो दूसरी मञ्जिल में रहन सहन करना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देश—जिनको सुबिधा हो समशीतोष्ण स्थानों में रहे समुद्र के किनारे की आव हवा रहने के लिये अच्छी होती है।

भोजन—क्षुत्सम्भवति पक्वेषु रसदोषमलेषु च।
कालेवा यदि वा काले सोऽन्नकाल उदाहृतः॥

रस और दोष के पक जाने पर भूख लगती है जब भूख लगे वही भोजन करने का समय है। गरम मुल्कों में या उष्ण ऋतु में प्रातः दस बजे से पहिले सायं आठ बजे दो समय ही ठीक हैं मध्य में आवश्यकतानुसार दुग्ध फलादि ठीक हैं। पहिला भोजन जब पच जाय तब फिर भोजन करना चाहिये।

भोजन पचने की पहिचान यथा—

उद्गारशुद्धिरुत्साहो वेगोत्सर्गो यथोचितः।
लघुता क्षुत्पिपासा च जीर्णाहारस्य लक्षणम्॥

डकार ठीक आ जाय, शरीर उत्साहित हो, पाखाना, पेशाब ठीक, पसीना ठीक तरह से हो, शरीर हल्का, भूख लग जाय, कुछ प्यास भी लगे यह जीर्णाहार की पहिचान है।

व्यायाम—प्रत्येक व्यक्ति को कुछ न कुछ व्यायाम प्रतिदिन करना चाहिए विशेष कर जिनको एक स्थान पर अधिक बैठना या दिमागी काम, अध्ययन विचार करना पड़ता है उनको प्रतिदिन अवश्य व्यायाम करना चाहिए। जिनको भोजन प्रशस्त मिलता है वे यदि व्यायाम प्रतिदिन न करें तो उन्हें भविष्य में अजीर्ण; मधुमेह, उच्चैः रक्त विक्षेपादि अनेक रोग हो जाते हैं। अति व्यायाम भी नहीं करना चाहिए, इससे हृदय को हानि पहुंचती है।

व्यायाम कितना करें—कपाल, नाक, शरीर की संधि और कोख इनमें जब पसीना आने लगे तब व्यायाम को बन्द कर देना चाहिए, इसको बलार्ध कहते हैं। व्यायाम से निम्न लाभ हैं—शरीर में बढ़े हुए दोष नष्ट होते हैं, भूख लगती है, शरीर सुडौल होता है, व्यायाम करने वाले को सहसा बुढ़ापा और बीमारी नहीं आती है प्रतिदिन यथा सम्भव तेल मलकर स्नान करना चाहिए। पं० मदन मोहन मालवीय जी प्रतिदिन तेल मल कर स्नान करते थे अतः वे दीर्घायु रहे।

व्यायामक्षुण्ण गात्रस्य पद्भ्यामुद्वर्त्तितस्य च।
व्याधयोनोपसर्पन्ति वैनतेयमिवोरगाः॥

व्यायाम से जिसका शरीर खूब टूट गया हो या पैदल चलने से ऐसे पुरुषों के पास रोग नहीं पहुँचते जैसे गरुड़ के पास साँप। अर्थात् गरुड़ से जितना सांप डरते हैं इसी प्रकार कसरती आदमी से रोग भी डरते हैं।

संक्रामक रोगों से बचने के उपाय—सुश्रुत में लिखा है—

'औपसर्गिकरोगाश्च संक्रामन्ति नरान्नरम्,

संक्रामक रोग एक रोगी से दूसरों में फैलते हैं। जैसे क्षय—क्षय का बीज किसी प्रकार व्रणादि से खून में पहुंच जाय क्षय वाले का कफ सूख कर धूल में मिल हवा में उड़कर सांस से फेफड़े में तथा खाने पीने की चीजों से मिल कर पेट में पहुंच जाय तो कालान्तर में क्षयी के सहवास से क्षय हो जाता है।

इसी प्रकार कुष्ठीके संसर्ग से कुष्ठ होता है तथा अनेक प्रकार के ज्वरों से जैसे प्लेग आदि। हैजे का बीज हैजे वालों के कै, पाखाना, पेशाब आदि में रहता है वह मक्खियों के द्वारा या अन्य किसी तरह से दूध, पानी या खाद्य पदार्थ में मिलकर पेट में चला जाय तो हैजा हो जाता है, इसी प्रकार खांसी, श्वास और सान्निपातक रोगियों का भी संसर्ग वर्जित है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ताल सत्व निर्माण विधि

लेखक—श्री वैद्याचार्य उदयलाल महात्मा, देवगढ़ (उदयपुर) राजस्थान

हमारी देवी चिकित्सा (रस चिकित्सा) जो आशुफलप्रद और स्वल्प मात्रामें लेने से ही रोगोंका जड़ से नाश कर देती है उसके अंश ताल सत्व शिला सत्व, मल्ल सत्व, विमल सत्व, अभ्रक सत्वादिका वर्णन रसग्रंथों में विद्यमान है परन्तु चिकित्सा में उपयोगार्थ न तो वर्तमान फार्मेसियां ही बना कर देती है। सरकारी रसायन शालाओं का भी इधर ध्यान गया प्रतीत नहीं होता। आयुर्वेद पुनर्निमाण कीं बातें करना और रस चिकित्सा के रत्नों को प्रकाशमें नहीं लाकर अनुसंधान की ओर कदम बढ़ाकर प्रत्यक्षीकरण किये बिना आयुर्वेद रस शास्त्र का और आयुर्वेद चिकित्सकों का सम्मान सम्भव नहीं है। इस ओर आज से २२ वर्ष पूर्व कुछ प्रयत्न किया गया वो दैनन्दिनी से ताल सत्व निष्कासन विधि को नीचे उद्धृत करता हूं।

हमारे रसायनाचार्य नागार्जुन जी का वाक्य है कि "जब तक रस शास्त्र जीवित है, तब तक बुभुक्षा, वेदना और दारिद्र्य मनुष्य को व्यथित करने में असमर्थ रहेंगे।"

बात बिलकुल सत्य है, परन्तु आज सरकारी रसायनशालायें, अनुसंधानशालायें और निजी औषधी विक्रेताओं का ध्यान इस ओर नहीं है कि लुप्त विषयों को फिर से खोज कर सर्व साधारण के व्यवहारोपयोगी कर दें। इस हेतु आवश्यक है कि जो अनुसंधान बैद्यनाथ झंडू, ऊंझा जैसी लोकप्रिय संस्थायें औषधी निर्माण में करें वो अपनी अपनी पत्रिकाओं द्वारा वैद्यसमाज को दे। आज इस ओर कुछ प्रयास किया जा रहा है। अनुभवी सज्जन अपने अनुभव पत्रिका द्वारा सूचित कर वैद्य समाज का उपकार करेंगे, ऐसी आशा है।

(१) ताल सत्व निष्कासन विधि—

रस प्रकाश सुधाकर अ० ६ के अनुसार—

शुद्ध वर्की हरताल में सुहागा, भैंस का घी और शहद (सुहागा हरताल के बराबर और घृत तथा शहद इतना मिलाना चाहिए कि जिससे हरताल गोली बनने योग्य हो जाय।) मिलाकर उसे एक दिन कुलथी के क्वाथ में घोटें। फिर आठ पल, यह हरताल और एक पल (पांच तोले) छिलके रहित अरण्डी के बीजों की पिठ्ठी को एकत्र मिलाकर अच्छी तरह घोट कर जौ के समान वत्तियां बना लें, और उन्हें सुखा कर (छाया में सुखाना चाहिए। धूप में सुखना कठिन है याने पिघली अवस्थामें ही रहेगी।) कपड़ मिट्टी की हुई आतिशी शीशी में भर दें। अब इसे वालुका यंत्र में रख कर बारह पहर तक अग्नि दें और शीशी के स्वाङ्ग शीतल होने पर उसके ऊपर वाले भाग में (गले के आस पास) लगे हुए हरताल सत्व को निकाल कर सुरक्षित रक्खें।

(२) रस तरङ्गिणी पृष्ठ २५६ ताल सत्व पातन विधि इस प्रकार है :—

दो पल शुद्ध हरताल और दो पल सुहागा दोनों को एकत्र लेकर, भेड़ के दूध में, पेठे के स्वरस में, घी कुआर के रस में, निम्बू के रस में और थोहर के दूध तथा आक के दूध में घोट कर अन्त में एरण्ड तैल और मधु तथा घृत के साथ मर्दन करके इसकी गोलियां बना लें। अब सूखी हुई गोलियों को एक कपड़ मिट्टी की हुई आतिशी शीशी में भर कर बालुका यंत्र में मन्द मन्द अग्नि से चार दिन तक निरंतर पकावें। स्वाङ्ग शीत होने पर शीशी के ऊर्ध्व

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाग में लगे हुए वज्र के सदृश कठोर चमकीले हरताल सत्व को कूपी को फोड़ कर निकाल लें।

अपना अनुभव—

ताल शोधन---

ता० २. ७. ३३ को हरताल तबकिया ऽ॥ (४० तोले के छोटे छोटे टुकड़े बनाकर कपड़े की पोटली में ढीला बांध कर दोला यन्त्र द्वारा १२ घन्टे तक गो मूत्र में स्वेदन किया। दूसरे दिन फिर दोला यन्त्र द्वारा ६ घण्टे तक त्रिफला क्वाथ में स्वेदन किया। स्वेदनानन्तर ठंडा होने पर जल से धोकर ता० ६. ७. ३३ को त्रिफला क्वाथ में। ताल को घोटा गया और खुश्क होने पर मटकी में डाल ऊपर दूसरी मटकी लगा, डमरू यन्त्र बनाकर ६ घण्टे तक अग्नि देकर ताल को ऊपर की मटकी में उड़ाया गया। ठंडा होने पर डमरू यन्त्र खोलकर ऊपर की मटकी में लगी हुई शुद्ध ताल के पुष्पको रख लिया गया।

(३) ताल सत्व निर्माण विधि—

शु० हरताल तो ७, भूना सुहागा १. तो०, ग्वार पाठे का रस, आक के पत्तों का रस, शरपुंखा का रन, गाडर का दूध मिलित दो तोला दिया गया और ६ घण्टे तक खरल कराया गया। ता० १०. ७. ३३. को हरताल को सुखा कर उसमें एक तोला शहद और ३ तोला कास्टर आयल दिया फिर गोलीवर्ती आकार बनाकर आतिशी शीशी (कपड़ मिट्टीकी हुई) में रख कर ऊपर से एक तोला कास्टर आयल डाल कर बालुका यंत्र द्वारा शीशी को चढ़ा कर शीशी का मुंह खुला रक्खा।

बालुका यंत्र—

एक मटकी के नीचे अठन्नी जितना गोल छेद उस पर सफेद अभ्रक का पत्र रख एक इंच बालू रख फिर शीशी जमा कर गले तक रेती भर कर क्रमशः मंद, मध्य, तेज १२ घण्टे अग्नि दी गई और लोह शलाका से देखते रहें जब सत्व अच्छा तैयार हो जाय तब अग्नि कम करे मगर १२ घण्टे से कम नहीं देवे।

इस क्रिया से हरताल का सत्व शीशी में वज्र की कान्ति वाला लगभग १॥ तोला निकला उत्तम ४ पहर खरल करने के बाद। मात्रा ½ रत्ती से ३ रत्ती तक। अनुपान---मधु या घृत।

प्रयोग---कुष्ठ, रक्त विकारादि रोगों में विशेषतः सफेद कोढ़ में करना चाहिए।

नोटः---इसी क्रिया से मैनसिल का भी सत्व निकाला था। मल्ल का सत्व भी इसी प्रकार निकलता है।

विज्ञ महानुभावों से विनय है कि भूनाग विमल और अभ्रक सत्व निकालने की अनुभूत सुगम विधि 'आयुर्वेद गौरव, पत्र द्वारा प्रकाशित कराने का कष्ट करावें। जिससे सत्व क्रिया-निर्माण में आने वाली कठिनाई दूर हो जाय।

आम के आम और गुठली के दाम।

चार ग्राहक बना कर साल भर आयुर्वेद गौरव मुफ्त पढ़िये और साथ साथ भारतवर्ष की प्राचीन आयुर्वेदिक औषधियों का प्रचार कीजिये।

सार्वजनिक पुस्तकालयों, वाचनालयों तथा आयुर्वेद शिक्षण संस्थाओं के लिये वार्षिक मूल्य केवल २) रु० है।

व्यवस्थापक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विटामिन और हमारा खाद्य

लेखक—कविराज एस० एन० बोस एल०ए०एम०एस०एम०एस० एम०एस०सी०ए० (इन्दौर)

(गतांक से आगे)

विटामिन बी १—इस विटामिन का दूसरा नाम विटामिन हाईड्रोक्लोराइड है। हमारे प्रतिदिन के भोजन को पचाने के लिये यह विटामिन बहुत ही आवश्यक है। विशेष कर श्वेत सार जातीय पदार्थों के सम्यक् पाचन के लिये विटामिन बी, अपरिहार्य है। इससे नाड़ी कोणों की पुष्टि होती है। इस विटामिन की कमी के कारण पहले प्रारम्भ में अरुचि, भोजन में अनिच्छा तथा उल्टियाँ (वमन) शुरू हो जाती है, इसके क़ारण रोगीका भोजन कम हो जाता है वह क्रमशः कमजोर होता जाता है। शरीर में विटामिन की कमी बढ़ती जाती है। और रोग का प्रकोप दिनप्रतिदिन ज्यादा होता जाता है। इससे एक ऐसी परिस्थिति उपस्थित होती है जिससे छुटकारा मिलना मुश्किल हो जाता है, रोगी जल्दी ही थकावट महसूस करता है, उसका वजन घटता जाता है और काम करने की अनिच्छा दिन प्रतिदिन बढ़ती जाती है। कुछ दिनों तक अगर विटामिन बी १ मिलना कम हो जाय तो अंगों में दुर्बलताके कारण कब्जी (कोष्ठ-बद्धता) हो जाती है। इससे सड़ते हुए मल वृहदन्त्र में जम कर एक प्रकार का विषाक्त पदार्थ उत्पन्न होता है। वह विषाक्त पदार्थ शरीर में शोषित होकर नाना प्रकार के लक्षण पैदा कर सकते हैं। धीरे-धीरे रोगी की दृष्टि-शक्ति क्षीण होती जाती है। हाथ पैरों में दर्द, हृदय में धड़कन, साधारण परिश्रम से श्वास फूलना आदि लक्षण प्रगट होते हैं। कुछ दिनों के पश्चात् पैरों में सूजन दिखाई देती है। पैरों की हड्डियों तथा मांसपेशियों में दर्द होता है, चमड़ी में स्थानिक स्पर्श ज्ञान का अभाव या स्पर्शासहत्व मालूम पड़ने लगता है। अन्त में मांस पेशियों का क्षय, पक्षाघात, हृत्पिंड की दुर्बलता तथा अकार्यक्षमता प्रकट होती है। ये सब 'वेरीवेरी' रोग के ही लक्षण हैं। साधारणत; वेरीवेर्स तीन प्रकार की दिखाई देती है। (१) नसों की तकलीफ युक्त, जिसमें सूजन नहीं होता है। (२) हृदय की दुर्बलता युक्त, जिसमें सूजन हो जाता है। (३) मानसिक लक्षण युक्त, जिसमें शारीरिक विकृति अधिक नहीं मालूम होती है। परन्तु ये सभी लक्षण विटामिन बी १ की कमी के कारण उत्पन्न होते हैं। बच्चों को भी वेरीवेरी की शिकायत हो जाती है जो कि बहुत ही शीघ्रकारी तथा खतरनाक होती है। बच्चा भोजन करना नहीं चाहता है। पेट फूल जाना, पेट में शूल के समान दर्द होना, उल्टियां होते रहना तथा कब्जियत हो जाना, पेशाब न उतरना और सूजन हो जाना ये सब बच्चोंकी वेरीवेरी के लक्षण हैं। बाद में हृदय की कमजोरी, श्वासगति में वृद्धि के साथ-साथ श्वांस कष्ट और हृदय की कार्यक्षमता आ जाती है, ऐसी हालत से बच्चों को बचाना मुश्किल हो जाता है।

हमारे शरीर में विटामिन बी १ की कमी दो प्रकार से हो सकती है, एक तो विटामिन बी १ वाले पदार्थों का कम उपयोग और दूसरा श्वेत सार जातीय पदार्थों का असम्यक् पचन। दोनों प्रकार से शरीर में उस विटामिन का शोषण कम हो जाता है और शारीरिक क्रियायें दिन प्रतिदिन बिगड़ती जाती हैं! गर्भावस्था में बच्चे के पोषण के लिये इस विटामिन की गर्भिणी को विशेष आवश्यकता पड़ती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। अगर उपयुक्त मात्रा में यह वस्तु नहीं मिलती हो तो गर्भिणी की क्षुधा कम हो जाती है। तथा उल्टियां शुरू हो जाती हैं! क्रमशः गर्भिणी कमजोर होती जाती है और अंत में बच्चा भी अत्यन्त कमजोर पैदा होता है! दीर्घकाल तक विटामिन बी १ की कमी के कारण संग्रहणी रोग भी हो सकता है संग्रहणी के कारण विटामिन बी १ का शोषण कम होकर पूर्वोक्त लक्षण प्रगट हो सकते हैं। हमारे शरीर के लिए कम से कम प्रतिदिन एक मिलिग्राम या ३३३ इंटर नेशनल यूनिट विटामिन बी की आवश्यकता है। बच्चों को ४ से ६ मिलिग्राम विटामिन बी १ की जरूरत रहती है! इस विटामिन का आवश्यकता शारीरिक वजन तथा कर्म-तत्परता के ऊपर निर्भर है। ज्वर, अतिसार, मधुमेह तथा अन्यान्य पाचन सम्बन्धी विमारियों में ज्यादा मात्रा में इस विटामिन की जरूरत पड़ती है! गर्भिणी तथा माताओं में करीब-करीब चार-पांच गुनी मात्रा में इस विटामिन की आवश्यकता रहती है! यह विटामिन शरीर में संचित नहीं रहता है और प्रयोजन से ज्यादा उपयोग करने पर चाहे वह अन्दर ही नष्ट हो जाता हो या पेशाब से बाहर निकल जाता हो! इसलिये इस विटामिन को प्रति दिन शरीर में पहुंचाना आवश्यक है! हमारे देश में साधारणतः जो भोजन किया जाता है उसमें वस्तुतः विटामिन बी १ प्रयोजन से कम ही रहता है! हमारी जनता के अधिकांश करीब-करीब इस विटामिन की कमी से या किसी प्रकार से न्यूनतम शारीरिक प्रयोजन मिटाकर गुजारा कर रही है! ऐसी परिस्थिति में अगर साधारण सा दबाव भी पड़े तो इस विटामिन की कमी के लक्षण प्रगट होते हैं! साधारणतः कब्जीयत हो जाना, पेट में छाले हो जाना हृदय की विमारियां वगैरह इसी तरह से उत्पन्न होती हैं! यह विटामिन अन्न नाली से ही शोषित होता है अतः अन्न-नाली की स्वस्थता इस विटामिन के शोषण के लिये अत्यावश्यक है।

यह विटामिन भी हमारे शरीर में खाद्य द्रव्यों के द्वारा ही पहुँचता है। नीचे हमारे नित्य के उपयोग में आने वाले पदार्थों में इस विटामिन का परिमाण बताया जा रहा है, जिससे जनता अपने-अपने खाद्य द्रव्यों के द्वारा इस विटामिन की पूर्ति कर शरीर को तकलीफों से बचा सकेगी।

प्रति औंस या २॥ तो० में	इ० यु०
चावल (घर का बना हुआ)	६०
,, (मशीन से चावल साफ किया हुआ)	२०
चावल के ऊपर की परत	८५ से २००
जौ	३५
गेहूं का आटा (चोकर रहित)	५०
गेहूँ का आटा (चोकर सहित)	७७
तुबर (अरहर) दाल (छिलके सहित)	५५
मसूर (छिलके सहित)	४०
मूंग	४०
चना	२५
मांस	७०
लिवर	३५
मछलियां	२ से ५
दूध	३ से ७
(गाय का ताजा)	६०
फूलगोभी	३२
पत्तागोभी	१४
मूली	१४
पालक	२१
प्याज	१०
गाजर	१६
हरा चना	१०—३५

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रति औंस या २॥ तो०	इ० यु०
पका केला	८-१५
सेव	१२
संतरा	१०
ककड़ी	७
इमली	१७५
आम	३ से ८
मूंगफली	८०
बादाम	२४

उपरोक्त सूचीसे अमीर-गरीब सभी गृहस्थ अपने-अपने खाद्य द्रव्यों में सरलता से उपयुक्त मात्रा में विटामिन बी १ का समावेश कर सकते हैं। शाकाहारी मांसाहारी दोनों श्रेणियों के लिये यह सूची मार्ग दर्शक है! उपरोक्त सूची से यह पता लग जायगा कि अगर हम छिलकेदार दाल, बिना चोकर निकाले आटा या लाल चावल हर समय उपयोग में लाते रहें तो किसी भी प्रकार से हमारे शरीर में विटामिन बी १ की कमी नहीं हो सकती है। जितना हम दिन प्रति दिन सभ्यता के नाते शौकीन बनते जा रहे हैं उतने ही हम रोगों के शिकार होते जा रहे हैं और स्वास्थ्य हीन होकर दुखी जीवन व्यतीत करने लगे हैं। स्वास्थ्य ही सभी सुखों का मूल है और स्वाभाविक जीवन यापन तथा पान भोजन ही उसका आधार है। जितना ही हम कृत्रिमता का आश्रय लेते जा रहे हैं, उतना ही हम स्वास्थ्य हीन बन कर अपनी तथा देश की उन्नति में सहायक होने के बदले बाधक हो रहे हैं। वस्तुतः हमारे देश में जहां की अधिकांश जनता विशेष रूप से शाकाहारी है अर्थात् ज्यादातर श्वेतसार जातीय पदार्थों के ऊपर निर्भर है वहां उन श्वेतसार जातीय पदार्थों के परिपाक के लिये विटामिन बी १ की कितनी आवश्यकता है, परन्तु आश्चर्य यह है कि भगवान ने उन श्वेतसार जातीय पदार्थों के परिपाक के लिए उन्हीं पदार्थों में विटामिन बी १ का समावेश किया है अगर हम उसे त्याग देते हैं या नष्ट कर देते हैं तो पाप का प्रायश्चित्त भोगना ही पड़ेगा। चावल धोने के नाम से हम अच्छी तरह मसल ममल कर उसके ऊपर की परत को निकाल देते हैं, जिसमें कि सबसे ज्यादा विटामिन बी १ रहता है। यह प्रथा नितांत हानिकारक है। आयुर्वेद में चावल के धोवन को विशेष महत्व दिया गया है। अजीर्ण अतिसार में चावल का धोवन अत्यन्त लाभदायक बताया गया है अतः हम समझ सकते हैं कि चावल द्वारा शरीर में विटामिन बी १ पहुँचा कर ही वैद्य लोग अजीर्ण अतिसारादि बदहजमी के रोगों में लाभ उठाते हैं और यह प्रयोग कितना विज्ञान सम्मत भी है? हाथ पैरों का फूटना, तथा दर्द में कब्जीयत तथा बदहजमी की शिकायतमें गर्भावस्था की उल्टियों में अरुचि तथा खट्टी डकार आदि तकलीफों में, दिल की धड़कन तथा मानसिक लक्षणों में जैसे कि मन में सुस्ती, अथवा चिड़चिड़ापन, स्मरण शक्ति की कमजोरी, बेकार की चिन्तायें किसी भी विषय में ध्यान न देनेकी अक्षमता वगैरहमें किसी चिकित्सक से परामर्श किये बिना विनामिन बी १ युक्त पदार्थों का उपयोग कर सकते हैं जिससे काफी लाभ हो सकता है। अवश्य ही उन पदार्थों के उपयोग के समय उनकी सहज पाच्यता या दुष्पाच्यता के सम्बन्ध में ध्यान रखना जरूरी है! मामूली अम्ल पदार्थ के संयोग से उबालने पर भी विटामिन बी १ नष्ट नहीं होता है इस लिये यह विटामिन आमाशय के अम्ल रस युक्त श्राव में भी नष्ट नहीं हो हो जाता है परन्तु क्षार जातीय होने के कारण पित्त श्राव के संयोग से विटामिन बी १ नष्ट हो जाता है। मधुमेह की बीमारी में भी विटामिन बी १ की उप-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारिता मानी गई है, कारण इस बीमारी में भी श्वेतसार जातीय पदार्थों की पचन क्रिया में गड़-बड़ी होती है और विटामिन बी १ से उस पाचन-क्रिया में सहायता मिलती है। जहां विटामिन बी १ का प्रयोजन भोजन के द्वारा पूरा नहीं किया जा सकता है। जेसे कि संग्रहणी आदि विमारियों में विटामिन बी १ का शोषण भी नहीं हो सकता है और न तो बदहजमी के कारण ज्यादा मात्रा में विटामिन बी १ युक्त पदार्थों का उपयोग किया जा सकता है। ऐसी परिस्थितियों में विटामिन बी १ की गोलियां या इन्जेक्शन दिये जाते हैं। वस्तुतः बिटामिन बी एक की कमी के कारण उत्पन्न हुए रोगोंमें उस कमी की पूर्ति के लिये विटामिन बी १ की गोलियां या इन्जेक्शन की आवश्यकता पड़ती ही है क्योंकि पाचन शक्ति की दुर्वलता के कारण खाद्य पदार्थों के द्वारा उस कमी की पूर्ति सम्भव नहीं है, परन्तु शुरू-शुरू में रोग लक्षण को पहचान जाने से खाद्य द्रव्यों के यथा योग्य उपयोग द्वारा पूर्ति हो सकती है ओर रोग का आगे वढ़ना रोका जा सकता है। नियमित बिटामिन बी १ युक्त पदार्थों के उपयोग से उन रोगों का शिकार बनने का अवसर ही नहीं आता है। क्रमशः

कुछ शंकाओं का समाधान

लेखक—कविविनोद, वैद्यभूषण पं० ठाकुरदत्त शर्म्मा वैद्य [अमृतधारा] देहरादून

चिकित्सा की अगणित पद्धतियाँ हैं और सभी से रोगीगण चिकित्सा कराते हैं और नीरोग भी हो जाते हैं। प्रत्येक पद्धति में किसी न किसी प्रकार की विशेषता है। इनमें आयुर्वैदिक चिकित्सा पद्धति सबसे प्राचीन है, और वेदों का उपवेद होने के कारण आयुर्वेद में सच्चाइयाँ हैं। वेदों से सत्यतायें लेकर ब्रह्मा जी ने पहले पहल एक लक्ष श्लोक आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति पर लिखे थे। तदनन्तर सुविधा के अनुरूप उनका रूप संक्षिप्त होता गया और दीर्घ काल से हाथों से ही लिखे जाने के कारण किसी किसी स्थल पर कतिपय अशुद्धियाँ भी हो गयीं। फिर भी, यह पता अवश्य लगता है कि सब पद्धतियों (पैथियों) का आधर आयुर्वेद में विद्यमान है। प्रथम यूनान (ग्रीस) और अरब वासियों ने भारत में आकर यह विद्या प्राप्त की और वह कुछ न्यूनाधिक्य के साथ ऐलोपैथी में डाक्टरी का आधार वन गई श्वेत जातियों ने इसी पद्धति को अपनाया और साइन्स (भौतिक विज्ञान) ने बड़ी उन्नति की जिससे ऐलौपैथी में कई नवीन आविष्कार सम्मिलित हो गये। परन्तु चिकित्सा के सिद्धान्त में कोई मौलिक उन्नति नहीं हुई यह बात तो सर्व विदित है कि यूनानी और डाक्टरी पद्धतियाँ आयुर्वेद से ही निकली हैं। होम्योपैथी के सिद्धांत भी आयुर्वेद में हैं। इसी प्रकार क्रोमोपैंथी, नेचरोपैथी आदिक का आधार भी आयुर्वेद ही है। किसी स्थान पर हुई उन्नति और नूतन आविष्कार को प्रयोग में लाने और आत्मसात् कर लेने में हमें आपत्ति नहीं है और सर पादरी ल्यूकस के 'विज्ञान किसी के घर की वपौती नहीं है' के कथनानुसार हर कोई इससे लाभान्वित हो सकते हैं। यदि 'एक्स रे, (XRay) से रोग के निदान में सहायता मिलती है तो उसे अंगीकार करने में किसको आपत्ति हो सकती है! वैद्यगण नाड़ी परीक्षा से ज्वर की जाँच करते थे। अब यदि कोई वैसा नहीं कर सकता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और थर्मामीटर लगा लेता है तो इसमें किसी को आपत्ति नहीं होनी चाहिए। यथार्थ बात तो आधार भूत सिद्धान्तों की चिकित्सा पद्धति की है जो आयुर्वेद में एक राजपथ के रूप में है। लगभग सारे रोग वात, पित्त, कफ से उत्पन्न होते हैं। औषधियों में भी वात, पित्त और कफ नामक त्रिदोषों को घटाने बढ़ानेके गुण पाये जाते हैं ये दोनों बातें यदि आप को याद हों तो बड़ी सुविधापूर्वक चिकित्सा कर सकते हैं। आप रोगका नाम न जानते हों किन्तु इस सिद्धांत के ज्ञाता हों तो आप चिकित्सक हैं। हमने संवाद पत्रों में कई डाक्टरों की ओरसे उठायी गयी आपत्तियाँ पढ़ी हैं जिनका उत्तर यहाँ दिया जाता है:---

प्रश्न---कुछ डाक्टरों का कहना है कि डाक्टर लोग अंगों के कार्य्य देख कर चिकित्सा करते हैं और वैद्यगण त्रिदोष को देख कर ही किया करते हैं, अतः ठीक चिकित्सा वैद्यगण नहीं कर सकते।

उत्तर---आप अंगों के कार्य देख कर चिकित्सा करने का दावा करते हैं इससे कितनी ही हानियाँ भी तो होती हैं। आप ने रोग मलेरिया ज्वर समझ कर कुनीन देना आरम्भ कर दिया। यदि रोगी की प्रकृति गरम (पैत्तिक) है तो वह चिल्लाता है कि उसके लिये स्वल्प मात्रा की कुनीन भी बड़ी हानिकारक है। इस पर डाक्टर कहेंगे कि 'कुछ भी हो, तुम्हारी चिकित्सा की यही औषधि है। मुंह से न खानी हो तो इंजैक्शन कर देंगे।' रोगी ज्वर से छुटकारा पाकर भी बहुत समय तक कुनीन-सेवन के पश्चात् परिणाम से कष्ट पाता रहता है।

वही रोगी यदि देशी चिकित्सक के पास जाय तो वह रोगी की प्रकृति को देख भाल कर यदि अनुकूलता जँची तभी कुनीन देगा। उष्ण (पित्ती) प्रकृति के रोगी को 'बंश लोचन' 'कमलगट्टा' आदि मिला कर शर्वत वनफशा, अर्क नीलोफर, अर्क कासनी आदि के साथ देगा जिससे रोगी का चित्त भी प्रसन्न रहे, ज्वर भी दूर हो जाय और उसकी उष्णता भी न बढ़ने पावे। यदि किसी रोगी के यकृत् के कार्य्य में विकार है तो आप उस कार्य को ठीक करने के लिये औषधि पर औषधि देते चले जायँगे, भले ही यकृत् का कार्य ठीक होकर बाद में कुछ और ही दशा हो जाय। परन्तु एक वैद्य या हकीम जानता है कि यकृत् के उपयोगार्थ 'अगर' भी है और 'अनार, भी है। इसमें एक गरम है और दूसरी वस्तु ठण्डी है। अब, जैसी परिस्थित होगी, अनुकूलता और प्रतिकूलता पर विचार करके, वैसी औषधि दी जायगी। यह कितनी सुन्दर बात है कि सब औषधियों के गर्म, ठण्डे और मृदु तथा शुष्क गुणों को ज्ञात करके हमारे पूजनीय पूर्वजों ने पहले ही लिख दिया है जिनके अनुकूल निर्विघ्नता से चिकित्सा होती है।

मानव शरीर का निर्माण ही हुआ है मल, दोष और धातुओं से। दोष अर्थात् वात, पित्त और कफ भी शरीर के आवश्यक अंग हैं। इनके बिना शरीर चल नहीं सकता और स्वास्थ्य भी स्थिर नहीं रह सकता है। इनके विकारों से रोग उत्पन्न होते हैं। कोई बुद्धिमान मनुष्य इसको अस्वीकार नहीं कर सकता। शरीर को गति प्रदान करने वाली शक्ति को **'वात'** कहते हैं। आप के Nerves ज्ञान तन्तु भी 'वात' से शक्ति प्राप्त कर के कार्य करते हैं। वात के विकृत होने पर ये (स्नायुएं) अपनी हालत में होते हुए भी निष्फल हो जाते हैं। शरीर की गर्मी (तापमान) का आधार **'पित्त'** है। **'कफ'** से शरीर में ऐसा कार्य होता है जैसा कि तैल द्वारा कोई मैशीन काम करती है। इन तीन दोषों के घटने बढ़ने से रोग उत्पन्न होते हैं और इनके घट जाने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा बढ़ जाने के कारण भी आयुर्वेद में लिखे हुए हैं। उन सब का वर्णन करने से यह लेख बहुत लम्बा हो जायगा। यहां तो संकेत मात्र ही लिखा गया है।

प्रश्न—बड़ा प्रश्न यह है कि कृमियों (कीटाणुओं) के आक्रमण से जो रोग होते हैं उन्हें देशी चिकित्सक नहीं जानते क्योंकि वे तो केवल वात, पित्त, कफ से ही रोगों की उत्पत्ति मानते हैं।

उत्तर—प्रथम तो यह जान लेने की आवश्यकता है कि दोषों से ही समस्त रोग उत्पन्न होते हैं—आप का यह कथन स्पष्ट नहीं है। यह भी तो लिखा है कि आगन्तुक (आकस्मिक) रोगों में प्रथम रोग उत्पन्न हो जाता है, दोष आते हैं उसके पश्चात्। आगन्तुक के अर्थ होते हैं 'आक्रान्त'। कीटाणुओं (Germs) के आक्रमण को भी यदि आगन्तुक मान लिया जाय तो दोष उसके बाद आ सकते हैं और फिर दोषों के अनुसार चिकित्सा करने से रोग के कीटाणु भी नष्ट हो जाते हैं। ऐसा होता भी है। आप तो निमोनिया के जर्म जान कर भी चिकित्सा में बड़ी कठिनाई देखते हैं किन्तु देशी चिकित्सक बारह सींगे की भस्म का सेवन आरम्भ कराकर रोग के समस्त लक्षणों को कम कर देते हैं। पर, सच सच आप यह तो बतलाइए कि क्या कभी निमोनिया, टायफाइड आदि में पहले दिन ज्वर चढ़ने पर, चाहे आप रक्त की भी परीक्षा करें, उसमें कोई जर्म्स (कीटाणु) देखे हैं? जब ज्वर नहीं उतरता, फिर भी आप कहते हैं कि सप्ताहान्तमें रक्त की परीक्षा करके देखेंगे कि कहीं टाइफाइड तो नहीं है? जब जर्म्स ने आक्रमण किया था, तब वे कहां गये थे? ऐसी दशा में यह क्यों न मान लिया जाय कीटाणुओं की उत्पत्ति रोग हो जाने के पश्चात् होती है। रोग तो वास्तव में दोषों के विकारों से ही उत्पन्न होते हैं। यदि 'दोष' शब्द भला नहीं लगता तो उसका नाम Foreign matter अथवा 'मवाद फ़ासिद' (दूषित पदार्थ) रख लीजिए। गेहूं की बोरी में जिस प्रकार कई प्रकार के कृमि पैदा हो जाते हैं। आटा रखा हुआ हो तो ख़मीर उत्पन्न करने वाले कृमि ख़मीर को पैदा करना आरम्भ कर देंगे। यदि आटा ही न हो तो कहां करेंगे? और यदि यह कहें कि कीटाणुओं से उत्पन्न रोग से ग्रसित रोगी के निकट रहने से रोग हो जाता है तो वह सबको तो नहीं होता है। होता उसी को है जिसका शरीर भली प्रकार स्वच्छ नहीं है और जिसके भीतर दोष मिल चुके हैं या, फारेन मैटर (Foreign matter) जमा हो चुका है। जब यह बात है तो प्रमुख कारण वही वात, पित्त, कफ का विकार ही होता है और चिकित्सा में भी किञ्चित् अन्तर नहीं पड़ता है। इन रोगों की चिकित्सा में संख्याओं की गणना से आज तक यह सिद्ध नहीं हुआ है कि देशी चिकित्सकों के हाथों कभी आराम नहीं हुआ है और सदैव डाक्टरों से ही होता है। वास्तव में वात, पित्त कफ को मान्यता न देना डाक्टरी पद्धति में एक त्रुटि है, अधूरापन है। खेद है कि इसी अधूरेपन को डाक्टर लोग अपनी विशेषता मान बैठे हैं।

प्रश्न—एक डाक्टर जी ने लिखा था कि वर्त्तमान काल में रोग-निदान के अनेक उपाय निकल आये हैं और वैद्यों के यहां तो पुराने अविकसित उपाय हैं जिनमें किसी प्रकार की उन्नति होने की आशा नहीं है।

उत्तर—यह समझमें नहीं आया कि भविष्य के लिये डाक्टर महाशय ने क्यों द्वार को बन्द कर दिया है? हम उन्हें बतलाना चाहते हैं कि आज कल जो स्कूल और कालेज देशी चिकित्सा पद्धति की शिक्षा के लिये खुल रहे हैं उनमें इन नवीन बातों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर ध्यान दिया जाना तथा विद्यार्थियों को नये उपायों से काम लेकर रोग-निदान में सहायता लेना सिखाया जाता है। इससे चिकित्सा के सिद्धांतों और पद्धतियों में किञ्चत् अन्तर नहीं पड़ता। उत्तम और योग्य वैद्य तथा हकीम रोग का निदान करने के लिये डाक्टरों के समान दूसरों से सहायता भी लेते हैं। जिस प्रकार प्रत्येक डाक्टर ऐक्स रे नहीं करता और बलगम, खून, मूत्र आदि की परीक्षा न करता हुआ भी आवश्यकता पड़ने पर किसी अन्य परीक्षक के पास भेज कर सहायता ले सकता है उसी प्रकार हकीम और वैद्य भी ले लें तो इसमें आपत्ति की कौन सी बात है? यह बात तो है ही नहीं कि केवल नाड़ी और मूत्र की परीक्षा कर लेना ही निदान है।

सुश्रुत में रोग का निदान करने के लिये 'छूना' देखना' प्रश्न करना, ठुकवाना रोगी का इतिहास ज्ञात करना, रक्त की गतिको सुनना; मूत्र की परीक्षा करना आदि बातों का स्पष्ट वर्णन है। बहुत प्राचीन पुस्तकों में निदान के लिये नाड़ी की परीक्षा करने का उल्लेख नहीं पाया जाता है। यह बाद में प्रचलित हुई है। जब कभी कोई नवीन तथ्य ज्ञात हुआ, हमने उसको आत्मसात् कर लिया। भारत के बाहर की विभिन्न औषधियां भी हमने चिकित्सार्थ सम्मिलित कर लीं—यथा, ममीरान चीनी, चोब चीनी, केशर ईरानी, मकी इत्यादि के नामों से प्रकट है। हम नये अन्वेषणों के विरुद्ध नहीं हैं। हमारा कहना तो यह है कि 'आयुर्वेद' में जो कुछ वर्णित है वह ठीक है। यह कहता ही कौन है कि आज यदि किसी बूंटी की खोज किसी विशेष रोग के लिये की गयी है तो वह केवल इस कारण त्याज्य है कि उसका वर्णन हमारे शास्त्रों में नहीं पाया जाता। हमारे यहां निदान के अनेक उपायों का वर्णन होते हुए भी, हमें नवीन अन्वेषण और उपाय से सहायता प्राप्त करने में संकोच नहीं करना चाहिए। पर, साथ ही हम यह मानने के लिये उद्यत नहीं कि इनके बिना निदान हो ही नहीं सकता। हमारे यहां रोग के लक्षणों की सूक्ष्मतायें और रहस्यों का जो वर्णन पाया जाता है उनको यदि अनुभव की कसौटी पर पूरा पूरा कसा जाय तो देशी चिकित्सकों के निदान-कौशल से समस्त संसार चौंक उठे।

आप को हैरानी यह है कि केवल मात्र मूत्र अथवा नाड़ी देख कर रोग का पता कैसे लग सकता है? हम भी यह दावा नहीं करते हैं कि केवल मात्र इन्हीं से रोग का निदान होता है। परन्तु जो सज्जन इनके सूक्ष्म रहस्यों का पता पाने के योग्य हो जाते वे इनके द्वारा भी बहुत कुछ कर सकते हैं, यद्यपि ऐसे व्यक्ति विरले ही हैं। नाड़ी परीक्षा में कमाल दिखाने वाले लाहौर में श्री पंडित जनार्दन जी वैद्य हो चुके हैं। वह नाड़ी पर हाथ रखकर केवल पन्द्रह मिनिट में रोग का सारा बृत्त बतला दिया करते थे। डेरा इस्माइल ख़ाँ में मूत्र परीक्षा के एक विशेषज्ञ रहते थे जो केवल मूत्र देख कर किसी से कुछ पूछे बिना ही नुसख़ा (प्रयोग) लिख दिया करते थे। एक बार वहां के सिविल सर्जन का बैरा मूत्र लिये जा रहा था। ज्ञात करके उन्होंने भी आप की तरह हँस दिया और कहने लगे "अच्छा, हम भी मूत्र भेजेंगे।" अगले दिन गाय का मूत्र देकर भेज दिया। उसको देख कर हकीम जी ने नुसख़ा लिख दिया कि जिसका यह मूत्र है उसको इतनी खली, इतना चारा दाना दिया जाय। इस पर सिविल साहेब दाँतों तले अंगुली दबा कर रह गये। यह कोई मन गढ़न्त कथा नहीं है, वास्तविक और सच्ची घटना है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुक्कुटांड—मुर्गी का अंडा (A Hen's Eggs)

लेखकः—वैद्य इन्द्रभान सी भटनागर आयुर्वेद भिषक् नेत्र अर्श विशेषज्ञ सीधपुर (उ० गु०)

संसारमें जितनी बस्तुएं हैं जीव व प्राणी चिकित्सा क्षेत्र में अपनी उपयोगिता रखती आयी हैं। यूनानी ग्रन्थों ने तो जीव मात्र को मनुष्य की चिकित्सा क्षेत्र में उपयोगी बतलाया है लेकिन हमारे सुश्रुत ने भी अपने ग्रन्थ में जीव व प्राणी को चिकित्सा क्षेत्र से पृथक् नहीं किया। राज यक्ष्मा में अज (बकरी) का मांस, दूध, घी, दही और उसकी हंगार का जो उपयोग बतलाया है वह किसी से भी बञ्चित नहीं है। उसी प्रकार आज मैं आप के सम्मुख कुक्कुटाण्ड की पृथक्-पृथक् रोगों में उपयोगिता बतलाना चाहता हूं।

यों तो कुक्कुट का मांस, वसा आदि कई रोगों में प्रयोग किया जाता है लेकिन यहां अण्डे का विषय होने से उसी की उपयोगिता बताना अनिवार्य है।

आजकल दुनियां की सभी पैथियां, यूनानी, एलोपैथी, आयुर्वेदिक, होम्मोपैथी आदि इस अण्डे का छूट से अपनी चिकित्सा में व्यवहार स्वरते है।

इस अंडे के तीन अंग होते हैं—त्वचा, रस और सफेदी (जर्दी) रसः—रक्त वर्धक, बलकारक, रसायन होने से यूनानी हकीम हमेशा एक अण्डे का रस मधु (शहद) के साथ मिश्रण करके रोगी को पिलाते हैं। जिससे उन्हें लाभ प्राप्त होता देखा गया है।

सफेदी (जर्दी)—विष नाशक, पुष्टिकारक, त्वचा को स्वच्छ तथा नरम रखने वाली से कितनी ही जाति के तिजावों तथ विषैली औषधियों के मामले (Cases)में सफेदी का पानी तथा दूध एक साथ मिश्रण करके पिलाने से आमाशय तथा शरीर का अच्छी प्रकार से रक्षण होता है। इसका लेप यथा अंजनोंमें भी प्रयोग होता है। यूनानीमें मोतीयांबिन्दु के ओपरेशनके बाद इसका पट्टा बांधते हैं। त्वचा—इससे भस्म बनती है जो खांसी के प्रयोग में ली जाती है आंख के शुक्र रोग के अंजनों में भी प्रयोग करते हैं १. प्रमेह की प्रबल महौषधिः—बंगाल के सुविख्यात कविराज के हस्तलिखित पुस्तक में इस प्रकार लिखा हुआ मिला हैः—

हमेशा मुर्गी का कच्चा अंडा लेकर उसे एक तरफ से फोड़ कर उसकी त्वचा अलग कर उसके अन्दर के भाग को मुँह में रखकर निगल जाने से असाध्य प्रमेह भी मिट जाता है। इस औषध का उपयोग करने पर विश्वास होगा। इसके प्रयोग से गर्मी की वृद्धि होगी। अतः नित्य एक ही अंड़ा खाना चाहिये-कुछ दिन इसका प्रयोग चालू रखने पर रोगी के रक्त में परिवर्तन होगा उसके रक्त की वृद्धि होगी, शरीर की कान्ति बढ़ेगी, स्फूर्ति आवेगी और प्रमेह का नाश होगा। जब तक यह औषध चालू रहे तब तक ब्रह्मचर्य, गेहूं की रोटी, पूड़ी चावल, घी, दूध ही खाना चाहिए।

२ उपदंश का अक्सीर इलाजः—वैद्यों की आयुर्वेदिक, हकीमों की यूनानी और डाक्टरों की एलोपैथिक चिकित्सा पद्धति द्वारा सिद्ध होता है कि गरमी के दर्द को मिटाने के लिये पारा का उपयोग परम आवश्यक हैं। पारे से बनी हुई दवाइयों का प्रयोग करते हैं। इसमें रसकपूर मुख्य वस्तु है। लेकिन इसमें एक बड़ा अवगुण यह है कि ज्यादा समय सेवन करने से रोगी का मुंह आ जाता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है तब रोगी को अत्यन्त पीड़ा भोगनी पड़ती है तब वैद्य व हकीम उसके लिये फांका मारते हुये हताश हो जाते हैं। इस कठिनाई को दूर करने के लिये व्याधि हरण रसायन नामक नुक़सा प्रगट किया जाता है। अच्छा रसकपूर जो कोरोसीव सब्लीमेंट नाम से प्रसिद्ध है और अंग्रेजी दवाइयों के केमिस्टों के यहां मिलती हैं उसका १ तो० का टुकड़ा लेकर लोहे की कढ़ाई में रक्खो उसमें एक सेर गाय का घी डाल कर कढ़ाई को अग्नि पर रखकर तपावो जब टुकड़ा बिलकुल लाल हो जाय तब कढ़ाई को अग्नि से अलग कर शीतल करो फिर उस रसकपूर के टुकड़े को लेकर पत्थर की खरल में डाल कर कसौंदी (कासमर्द) के रस के साथ १ महीना तक घोटो। जब १ महीना सम्पूर्ण हो जाय तब कसौंदी के रस को सूखने दो जब सूख जाय तब शीशी में भर लो जब उपदंश की दवा बनानी हो तब हिंगुल से निकाला हुआ शुद्ध पारा तथा शुद्ध गंधक एक एक भाग और उक्त तैयार किया हुआ रसकपूर दो भाग लेकर एक दिन खरल में खरल कर कज्जली बना लो फिर उस कजली को मुर्गी के अंडे में भरकर उस अंडे पर पाँच बार कपड़माटी कर दो फिर उसे सुखा दो जब कपड़ मिट्टी पूर्णरूप से सूख जाय तब उसे एक रेत से भरी हुई हंडी के बीच में रखकर उस हंडी को अग्नि पर चढ़ावो पहले धीमी फिर मध्यम और तीव्र अग्नि से १॥ कलाक के अन्तर से अग्नि दो फिर शीतल हो जाने पर औषधि को निकाल लो। नागरपान में दो रत्ती रख कर दिन में दो समय सेवन कराने से गरमी के प्रत्येक जातिके रोग नष्ट होंगे इतना ही नहीं योग्य अनुपान के सेवन से नपुंसकता कोढ़, कंठमाल, भगन्दर, मुख-रोग, फिरंग रोग, रक्त विकार आदि रोग भी मिटते हैं। किसी प्रकार की हानि न होगी। इसमें पारे का क्षार बन जाता है फिर भी रोगों के मिटाने का गुण नष्ट नहीं होता।

पथ्य—गेहूं की रोटी, दूध नमक वगैरह भात और घी की वस्तुयें खुराक में होनी चाहिए।

चूँकि रसकपूर और पारा तीव्र विष होने से रस विद्या के अनुभवी वैद्यों के सिवाय दूसरे वैद्यों को उपयोग नहीं करना चाहिए।

३ नपुंसकता पर अजब उपायः—तिब्बफरिस्ता नामक पुस्तक में लिखा है कि शुद्ध पारद और शुद्ध गंधक १-१ तो० लेकर एक दिन घोटकर कज्जली बनावो फिर उसमें लाल कत्था १ तो० और लवंग १ तो० का चूर्ण डाल शहत तथा मुर्गी के अंडे की जर्दी डाल कर दो तीन दिन खरल कर काली मिर्च के प्रमाण गोलियां बना लो उपयोग हमेशा सुबह शाम १-१ गोली खाकर दूध पीवो—अथवा बकरी के मांसका गरम-गरम सोरवा पीवो आठ दिन तक स्त्री गमन नहीं करने से अपूर्व रतिशक्ति बढ़ती है-पथ्य—गेहूँ की रोटी, भात, दूध घी और खांड।

४ बद अर्थात् उपदंश की चांदी व गांठ पर चमत्कारी औषधः—

कुकर्म के कारण उपदंश होने पर जांघ और पेड़ू के जोड़ में जो ग्रन्थि उत्पन्न होती है उसे बद कहते हैं।

लेप—१ बोदार सींग ०॥ तो० सिंदूर ०॥ तो० कली चूना ०॥। तो० गुड ०॥ तो० मुर्गी का अंडा १ नग।

विधिः—सबों को एक साथ खरल में पीसकर लेप जैसा बना लो

उपयोगः—बद की गाँठ पर लेप करने से या तो गांठ बैठ जावेगी या एक दो दिन में पका कर फोड देगी। फिर व्रण की भांति उपचार करो।

४ मरोड़, चोट, चणक आदि पर लेपः—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुंञ्जर (गुजराती शब्द) नव भाग, यवक्षार १ १ भाग, डामरं ४ भाग अफीम ४ भाग, एलिया १६ भाग फिटकरी ८ भाग, गुगल ७ भाग मैदालकडी ४ भाग आंबा हलदर ७ भाग खेचिनी का सिरा १२ भाग कलीचूना ४ भाग गुड़ ४ भाग मुर्गी के अंडे के फोतरे (छिलके) ८ भाग

विधिः—सबोंका बारीक चूर्ण बनाकर धत्तूरे के पत्ते के रस के साथ अच्छी तरह खरल कर पीड़ा वाली जगह पर लेप करो और ऊपर शुद्ध रूई दबा दो।

५ अंडे के तेल से चांदी का सोना भी बनाने के प्रयोग है।

६ सभी रोगों में अधिकतर हल्के भोजन के रूप में अंडे को उबाल कर खिलाते हैं। यानि चिकित्सा क्षेत्र में मुर्गी का अंडा बहुत उपयोगी है।

हृदय के कार्य

लेखक–रघुवीर शरण शर्मावैद्य M.S.C. (आयुर्वेद रसायनशाला) बुलन्द शहर उत्तरप्रदेश।

हृदय के अनेक कार्य हैं, जिनमें रक्त का ग्रहण करना, रक्त संचार करना, और गति करना ये तीन मुख्य कार्य हैं। इनका वर्णन शतपथ ब्राह्मण में वैज्ञानिक ढंग से इस प्रकार लिखा हैं—

तदे तत्त्र्यक्षरं हृदयमिति। हृ इत्येक मक्षरमभि हरन्ति अस्मैं··· द इत्येक मक्षरं ददन्ति अस्मै—— यं इत्येक मक्षरं एति इति" श० प० ब्रा० १४।८।४।१। वृहदारण्यकोपनिषद् ५।३।१।

हृदय शब्द तीन अक्षर हैं, प्रत्येक अक्षर अपने अपने कार्य की सूचना स्वयं देता है। जैसे—'हृ' का कार्य रक्त का हरण करना है। 'द' का कार्य रक्त का देना है। अर्थात् रक्त संचार करना है 'य' का कार्य गति करना है। हृदय शरीर में से अशुद्ध रक्त को ग्रहण करता है, शुद्ध रक्त शरीर को देता है और स्वयं निरन्तर गति करता रहता है। इस प्रकार शरीर से अशुद्ध रक्त लेना शुद्ध रक्त देना और गति करना हृदय के तीन मुख्य कार्य हैं।

'हृदय' शब्द में 'हृ' 'द' 'य' ये तीन अक्षर हैं व्याकरण के अनुसार ने तीनों ही तीन धातुओं से बने हैं। "हृ' अक्षर हृञ् हरणे 'द' दा दाने और य इण् गतौ से बना है।

भ्रम निवारण

कुछ ऐतिहासकों का कथन है कि रक्त संचार (सर्कुलेशन आफ ब्लड्) जो हृदयका कार्य है इसका ज्ञान भारतीयों को नहीं था। इंग्लैण्ड निवासी हार्वे नामक व्यक्ति ने सर्व प्रथम इसको जाना था। किन्तु उपरोक्त शतपथ ब्राह्मण के वर्णन से सिद्ध है कि इसका ज्ञान भारतीयों को सुदीर्घकाल से था। अतः उनका कथन नितान्त असत्य तथा अज्ञानता का सूचक है।

हृदय शरीर में जीवन के लिये एक महत्वपूर्ण अंग है। वृहदारण्यकोपनिषद् में हृदय को ब्रह्म कहा है "हृदयं ब्रह्म" श्रीकृष्ण भगवान ने हृदय को ब्रह्म का निवास स्थान कहा है "ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति" (श्रीमद्भगवद्गीता १४।१६ आयुर्वेद में हृदय को ओज (अष्टम धातु) बुद्धि चेतना का स्थान कहा है—

हृदयं चेतनास्थानमोजसश्चाश्रयो मतम्"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(शा० ध० सं० पू० ख० च०सू० श्लोक ४६) आयुर्वेद के अनुसार साधक पित्तका स्थान भी हृदय ही है। हृदय में रहकर ही साधक पित्त मेधा और प्रज्ञा को उत्पन्न करता है "मेधा प्रज्ञाकरं च तत्" शार्ङ्गधर पू० ख० ५।३१) और यहीं पर रह कर उत्साहादि गुणों के द्वारा मनोरथों को पूर्ति करता है इसी कारण पित्त का नाम साधक है। हृदय के विकृत होने पर ही अपस्मार और उन्मादादि कष्टसाध्य एवं असाध्य मानसिक रोग होते हैं हृदय के कार्य बन्द होने पर जीवन क्षण भर भी नहीं रहता।

नोट :—यह लेख अप्रकाशित है अतः सर्वाधिकार सुरक्षित है।

आयुर्वेद का वैज्ञानिक महत्व

वैद्य चिरंजीलाल शर्मा ('आयुर्वेदाचार्य') प्र०चि० म्यु०आ० औषधालय भाटापारा, म० प्रदेश)

किसी भी विज्ञान की वैज्ञानिकता; उपयोगिता की सच्ची परख इतिहास तथा अनुभव की कसौटी पर हुआ करती है। संसार का सबसे बड़ा व पुरातन इतिहास वेदत्रय, (ऋग्, यजु और साम) को ही माना गया है, यद्यपि अथर्ववेद, चतुर्थ होते हुए भी, उन्हीं तीनों में अन्तर्भावित कर लिया गया है। वेदत्रय (ऋक् यजु और साम) क्रमशः सत्व, रज, और तम, गुणों के आधार पर ही निर्मित हैं। सत्वगुण रजोगुण और तमोगुण की साम्यावस्था का ही नाम प्रकृति है, जो कि उत्पन्न न होने वाली भी होकर जगत् यावन्मात्र जंगम स्थावर की जननी है। उसी से क्रमशः महत्व अहंकारादि तथा पंच महाभूतों की उत्पत्ति मानी गयी है। जिन पंचमहाभूतों द्वारा ही जड़-जंगम-जगत की यह दृश्यमान रचना प्रत्यक्ष दिखलाई पड़ती है, जैसे स्वेदज, अंडज, उद्भिज और जरायुज। इन चारों प्रकार के चेतन प्राणियों के शरीर, आंख, कान, नाक आदि इन्द्रियों का और अन्यान्य प्रकारके बांह्य व आभ्यन्तरिक अंगावयवों का हुआ निर्माण भी हम प्रत्यक्ष देख रहे हैं। अतएव संसार के समस्त प्राणधारियों में मूल कारण प्रकृति ही मानी जाती है। प्रकृति त्रिगुणात्मक है। प्रकृति से परम्परागत संभूत पंचमहाभूतों से ही त्रिदोष वाद की स्थापना हुई है।

जैसे पृथ्वी और जलसे कफ नामक दोष की उत्पत्ति हुई, क्योंकि पृथ्वी से स्थिर-साधु-गुरु-आदि तत्वों को लेकर तथा जल से द्रवत्व-स्निग्ध-शीत मधुरादि तत्वों को लेकर कफ जो कि स्थिर-श्वेत वर्ण द्रव, स्निग्ध, मधुर-युक्त माना गया है।

इसी तरह तेज और जल से पित्त की उत्पत्ति हुई यथा :—तेज से दाह पीतवर्ण आदि तत्वों को लेकर तथा जल से द्रव-अम्लत्व आदि तत्वों को लेकर पित्त जो कि उष्ण, पीत वर्ण, द्रव अम्लत्व तेज से युक्त है।

आकाश और वायु को लेकर वात की उत्पत्ति हुई यथाः—आकाश में रूप राहित्य-शब्द बाहुल्य आदि तत्वों को लेकर तथा वायु में रुक्ष-शीत सूक्ष्म आदि तत्वों को लेकर बात जो कि रुक्ष-रूप रहित, शीत सूक्ष्म आदि से युक्त है।

इस तरह संक्षेपतः सत्व-रज और तमोगुण से युक्त प्रकृति से परम्परागत संभूत, पंचमहाभूतों से त्रिदोष विज्ञानवाद (कफ-पित्त वात। की स्थापना हमारे पूर्वज महर्षियों ने आविष्कृत की है। किसी भी ऋषि मुनि या आचार्य की बात केवल इसलिये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मान्य नहीं कि, वह केवल आद्योपदेश है, बल्कि इसलिये वह मान्य है कि, उसके पीछे हजारों वर्षों का अनुभव है, वह अनुभव आज वैज्ञानिक युग में भी वैज्ञानिक कसौटी पर सोलह आना ठीक उतर रहा है।

पारद-गंधक ताम्र-हरताल अफीम-हरड़े जयपाल आदि सैकड़ों द्रव्यगण, आज भी परखे जाने पर उन्हीं गुणों को दर्शित कर रहे हैं, जिन गुणों का आयुर्वेद ने अपने अन्वेषणों के आधार पर हजारों वर्ष पहले ही व्यक्त कर दिया था।

इसपर भी विश्वास न होने पर पुनः अनुभव करके देखे जा सकते हैं। आयुर्वेद के इन विशाल अनुभवों की मान्यता से इन्कार होना, किसी भी विज्ञान वेत्ता के लिए शोभा नहीं देता। आरम्भ से ही जनकल्याण-साधन करनेवाले भारतीय चिकित्सा-शास्त्र आयुर्वेद विज्ञान के तथ्यों की उपेक्षा नितान्त अनुपयुक्त है।

अस्तुः—आयुर्वेद के अनुसार त्रिदोष की विकृति के फलस्वरूप रोगकी उत्पत्ति तथा त्रिदोष की समता के फल स्वरूप रोग की शान्ति मानी गयी है।

"रोगस्तु दोषवैषम्यं दोषसाम्यं निरोगता !"

अर्थात् रोग की उत्पत्ति के सन्बन्ध में यह, शरीर में रोग प्रतिरोधक शक्ति हीनता को मुख्य मानता है। जिस प्रकार ऊषर भूमि में बीज बोने से अंकुर नहीं फूटते उसी प्रकार शरीर में बल तेज ओज आदि शक्ति विद्यमान रहने से शरीर रोग से संक्रामित नहीं होता। जब मिथ्याहार विहार आदि से शरीर शक्ति दुर्बल हो जाती है तो व्याधि उत्पन्न होनेमें बाधक नहीं होती। इससे जीवाणुवाद का भी निसर्गतः परिहार हो जाता है।

किसी के यह पूछने पर कि, पंचमहाभूतों से जब समस्त संसार के यावन् मात्र द्रव्यों की उत्पत्ति है तो सब द्रव्य एक स्वभाव वाले, आकार-रस-गुण आदि से समतावाले ही होने चाहिये। तो मै कहूंगा कि पंच महाभूतों की पारस्परिक अंशाशी तारतम्यानुसार प्रत्येक पदार्थ और द्रव्यों की प्रकृति तथा अवस्थाओं में भी स्वभावतः भिन्नत्व होना निश्चित हो जाता है। उदाहरणार्थ—नीम नींबू और गन्ना का परिपोषण समान रूप से जल, पृथ्वी द्वारा उन्हें प्राप्त होनेबाले पोषणीय खाद्य तत्वों से होता है, उक्त खाद्य तत्वों में पांचभौतिक त्रिदोष के भिन्न भिन्न मात्राओं व अंशासों का मिश्रण होना अनिवार्य हो जाता है, तो द्रव्यगण, रस गुण वीर्य-विपाक-प्रभाव आदि अवस्था भेद के साथ साथ भिन्न भिन्न प्रकृति वाले बन जाते है, जैसे नीम-नींबू और गन्ना में जल तत्व एकदम तीनों में रस रूप से समान भाव में बदल जाता है। और वायु की अधिकता प्राप्त कर 'नीम' कडुआ-रुक्ष आदि गुणों से युक्त, वात बढ़ानेवाला हो जाता है और पृथ्वी और अग्नि की अधिकता से 'नींबू" अम्लत्व-पित्त बढ़ानेवाला हो जाता है, तथा पृथ्वी और जल की अधिकता प्राप्त कर "गन्ना" मधुर कफ बढ़ानेवाला हो जाता है। जैसा कि लोक में प्रत्यक्ष देखा ही जाता है।

उक्त तीनों वृक्षों का रस, मानवीय शरीर में जाकर क्षेत्र की अवस्था के भिन्नित्व भेद से मिलकर भिन्न २ गुणों का देनेवाला हो जाता है। जैसेः—आकाश से गिरनेवाला जल का अभिन्नत्व होते हुए भी जमीन के भेद से कहीं मीठा, कहीं खारा, आदि विभिन्न प्रकार में परिणत हो जाता है। गोदुग्ध अमृत-मय गुण देनेवाला होकर भी सर्प के उदर में जाकर भयङ्कर परिणाम विष के रूप में परिणत हो जाता है। जल सींप के मुख में जाकर मोती के रूप में बन जाता है। वैसे ही तत्वों के अंशाशी मिश्रण के अनुसार विभिन्न भेद हो जाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस तरह आयुर्वेद के आधारभूत त्रिदोष (वात-पित्त-कफ) की संक्षेपतः वैज्ञानिक व्याख्या करते हुए मुझसे यह कहे बिगर नहीं रहा जायगा कि ता० २२-९-५५ के अंग्रेजी पत्र हितवाद में मि० "एलोनी" ने आयुर्वेद और हौम्योपैथिक को अवैज्ञानिक घोषित करने में हठवादिता का परिचय दिया। मि० एलोनी को स्मरण होगा कि, अभी कुछ दिन पूर्व पाश्चात्य वैज्ञानिकों की कान्फ्रेंस में, इस तथ्य को स्वीकार किया गया था कि मानव कल्याण के हित खोजी गई औषधियों के बावजूद भी, रोगों में कमी के बजाय दिनोंदिन वृद्धि होती जा रही है, इसी कान्फ्रेंस में, यह भी स्पष्ट माना गया था, कि तीव्र "भेषज'-मानव के हित के साथ साथ हानि भी पहुंचाती है तो इस तरह रोगोत्पादक "औषध" को भारतीय चिकित्सा शास्त्र में विशुद्ध औषध ही नहीं माना जाता, जिसको हमारे आचार्यों ने पहले ही कह दिया है।

प्रयोगः शमयेद् व्याधिं-योऽन्यमन्यमुदीरयेत्।
नासौ विशुद्धः शुद्धस्तु शमयेत् यो न कोपयेत्॥

जब कि अन्वेषण कर्त्ताओं में जो विदेशी हैं जहां ऐसी शंकापूर्ण विचारधारा अपने विज्ञान में विद्यमान है तो खोज व विचार की नितान्त अभावता को आगे रखकर अन्य चिकित्सा पद्धतियों का उपहास करना, निरी हठवादिता ही कहा जा सकता है। शिष्टाचार की दुनियाँ में इसका और कोई जवाब नहीं।

आयुर्वेद का ध्येय, मानव की शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक उन्नति कर के उसे, उसके पूर्ण स्वरूप का बोध कराना हैं। आयुर्वेद का प्रादुर्भाव ही उच्च उद्देश्यों और दयालुता की भावनाओं को लेकर हुआ है। आज के युग में जब कि स्वस्थ और रोग की परिभाषा में रोगी और चिकित्सक के सम्बन्ध में नया दृष्टिकोण उत्पन्न हुआ है तो आयुर्वेद सरीखे एक, मानव-रक्षक सांगोपांग विज्ञान की अत्यन्त आवश्यकता है।

सिनेमा और स्वास्थ्य

ले० वेदप्रकाश शास्त्री, प्रभाकर, साहित्यायुर्वेदरत्न बी० ए० सत्यौषधालय, हैदराबाद (दक्षिण)

आज विश्व के रंगमंच के ऊपर मृत्यु देवी अपना मोहिनी रूप धारण करके हमारा निष्ठुर परिहास कर रही हैं। हमारी मूर्खताओं को देख देख कर खिल खिला कर हंस रही है और हम प्रेमी पागल पतंगों की भांति उसकी रूप-शिखा में जलते जा रहे हैं। जीवन के बाजार में भारी घाटे से भरे इस सौदेकी ओर देखना तो दूर है हम उसपर विचार भी नहीं करते। यह विज्ञान का युग है चारों ओर भौतिकवाद और भौतिक विज्ञान का बोलबाला है विज्ञान ने हम पर जादू सा कर दिया है। आधुनिक आविष्कारों ने मानव को इतना बेबस और चकित बना दिया है वह चाह कर भी दूसरी ओर देखने का साहस नहीं कर सकता। विज्ञान जैसा कि उसके नाम से ही स्पष्ट हैं विशेष ज्ञान को ही विज्ञान कहते हैं, और उसका उपयोग लोक कल्याण के लिये होता है। पर आधुनिक विज्ञान मानव के मस्तक को विकृत एवं उसके स्वास्थ्य के विनाश के लिये ही विशेषकर प्रयत्नशील है।

सिगरेट, चाय आदि की भांति सिनेमा भी आधुनिक विज्ञान की एक महत्वपूर्ण पर हानिप्रद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देन है। इन बोलते चालते सिनेमाओं ने अपने कृत्यों से सारे संसार के मानव मात्र को चकित कर रखा है, वास्तव में यह कला के रूप में छिपी हुई बला है। भारत भला इस के पंजे से कैसे मुक्त रह सकता था आ ही गया लपेट में आखिर। अब भारत में एक भी बड़ा नगर ऐसा नहीं १०, २० छविघर न हों। धीरे धीरे गांव गांव में इस वला का प्रवेश होता जा रहा है। दो चार कम्पनियों को छोड़ कर शेष सभी भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता की होली जलाने एवं व्यभिचार एवं विलास का वोलबाला करने मात्र के लिये ही है, और वे वैसे वैसे खेल वना कर देश के भावी कर्णधारों के दिमाग से उच्च भावों के बदले गंदगी भर रही हैं। अच्छे अच्छे घरों की स्त्रियां अपने मर्यादा का परित्याग कर इस क्षेत्र की ओर अग्रसर हो रही हैं। कला के नाम पर ये फिल्म कम्पनियां व्यभिचार का ही प्रसार कर रही हैं। जो उचित नहीं कहा जा सकता।

इसमें संदेह नहीं कि सिनेमा के द्वारा भारत का उपकार भी किया जा सकता है। इनके द्वारा जिस आसानी से भारतीय सभ्यता, संस्कृति, कला कौशल एवं देश सेवा के प्रचार के साथ साथ अनेक प्रकार के सांमाजिक सुधार भी किये जा सकते है, जो अन्य उपायों द्वारा सम्भव नहीं। किन्तु हमारा अभाग्य है कि इस और राष्ट्र के कर्णधारों का ध्यान नहीं के बराबर है। हां, अभी कुछ दिनों से भारतीय समाचार दिखाये जा रहें हैं। पर ये अभी तक नहीं के वराबर ही हैं। फिल्म व्यवसाइयों का उद्देश्य रुपये वटोरना है चाहे जैसे हो। कहा जाता है कि इस प्रकार के खेलों का कारण जनता की स्वयं की मांग है। पर यह कहना सर्वथा निराधार है। सावन के अंधे को चारों ओर हरा ही हरा दीखता है। ठीक उसी प्रकार इन चित्र निर्माताओं को अपनी दूषित भावना के दर्शन जनता में होते हैं, और वे अपनी दूषित प्रवृत्तियों का दोष जनता पर मढ़ना चाहते हैं। चित्रों में इन्हीं भावनाओं के प्रयोग के कारण कई बार खेल फेल हो जाते हैं लोक कल्याण से सफल होना कला की कमनीयता तथा उपादेयता का सबसे बड़ा प्रमाण है। किसी भी विज्ञान की उत्पत्ति मानव के उत्थान के लिये होती है न कि पतन के लिये। प्राचीन भारत की नाट्य कला साक्षी है इस बात की कि गत काल में आदर्श व्यक्तियों के चरित्र चित्रण द्वारा समाज में शूरता वीरता, धीरता, देशभक्ति, तप, त्याग, साहस, सदाचार आदि सद्गुणों का प्रसार किया जाता था। उस समय भारत अनेक विद्याओं कलाओं का घर था, छोटे छोटे बच्चे तक के मन में स्वाभिमान भरा था वे अपने धर्म चरित्र, तथा देश-रक्षा के लिये सभी कष्ट सहना और मरना जानते थे। उनके जीवन और मरण दोनों ही सार्थक होते थे। पर आज उसके ठीक विपरीत छोटे छोटे बच्चों के मुख पर ओज के स्थान पर मिलेंगे प्रेम के गन्दे फिल्मी गानें। ब्रह्मचर्य की शिक्षा बेचारे पायें तो कहां, उन्हें क्या पता ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत। क्या वला होती है और ब्रह्मचर्य से लाभ क्या होता है कोई विद्वान, वैद्य यदि मुंह खोलता भी है तो डैड साइंस कह कर उसका मुंह बन्द कर दिया जाता है। ब्रह्मचर्य की शिक्षा के अभाव से भारत की क्या अवस्था है इससे सब भली भांति परिचित हैं।

सर्व प्रथम तो सिनेमा का प्रभाव जो वालकों पर पड़ता है, वह है दूषित विकारों का प्राबल्य जिसके परिणामस्वरूप ब्रह्मचर्य का पालन सम्भव नहीं, संतति निर्जीव होती जा रही है। सब जानते हैं कि निर्बल किसी काम का नहीं होता। फिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत के भावी कर्णधारों की वर्तमान स्थिति से भविष्य में क्या आशा की जा सकती है।

पहले बालकों को बड़ों का आदर करने की शिक्षा दी जाती थी जिसमें उनका ही हित था। पर अब अनुशासन और मर्यादा केवल किताबी बातें रह गई हैं। पाठकों को जानना चाहिये बड़ों की वंदना और उन्हें प्रणाम करने से व्यक्ति में चार वस्तुएं बढ़ती हैं। जो निम्न हैं—

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्या यशोबलम्॥

ब्रह्मचर्य और गुरुजनों की सेवा से ही भीष्म पितामह ने इच्छा का वरदान पाया था। आज उनकी सी वीरता की कल्पना करना भी अशक्य है। आज तो हर जगह अनुशासन भंग और गुरुजनों की अवज्ञा के ही समाचार सुनाई देते हैं जो स्पष्टतः सिनेमा का ही परिणाम है। निर्देशक जनता को हंसाने के लिये गुरुजनों के बनाने का दृश्य उपस्थित कर देते हैं, और बालक उन्हें सीखकर कार्यान्वित करने का प्रयत्न करते हैं, परिणाम स्पष्ट है ही। आंखों पर भी सिनेमा लाइट का बहुत बुरा असर होता है। आज हर युवक की आंख पर लगे चश्मे इस बात के साक्षी हैं। क्या पहले इस छोटी सी अवस्था में किसी को चश्मा लगाते देखा था? कभी नहीं फिर कभी इसके कारण पर विचार किया है, नहीं, सिनेमा और वनस्पति घृत ही इसके लिये एक मात्र उत्तरदायी हैं।

यदि किसी बालक को या बड़े को आप एक घण्टा खड़े रहने की आज्ञा दें तो शायद ही वह खड़ा रहे पर सिनेमा के लिये दिन भर खड़ा रहना उसके लिये साधारण बात है। इसके अतिरिक्त सिनेमा में बहुत से व्यक्तियों से सट कर बैठना पड़ता है और कई व्यक्तियों की उगली हुई सांस अन्दर ले जानी पड़ती है जिससे अनेक रोग होने का भय रहता है। आयुर्वेद के मतानुसार इस प्रकार की दूषित वायु में सांस लेना नितांत अनुचित है। यहीं से सिगरेट तथा चाय की बुरी आदतें भी सब लोग सीखते हैं, और जानबूझ कर इस मीठे, आयु नाशक, तथा खर्चीले विष को अपना स्वास्थ्य भक्षण कराते हैं। इस प्रकार विषकुम्भं पयोमुखम्, के अनुसार सिनेमा हमारा स्वास्थ्य चौपट करता जा रहा है और हम आंख बन्द कर इसके पीछे तबाह होते जा रहे हैं। कहां तो "आत्मानम् सततं रक्षेद् दारैरपि धनैरपि" का सिद्धांत था कहां स्वयं को विनाश के गर्त में ढकेलना आशा है पाठक धीमता तद्नुष्ठेयं स्वास्थ्यं येनानुवर्तते" आदि बातों पर ध्यान देंगे।

चिकित्सा तालिका

२ पामा रोग, छाजन, हमरा, नार फारसी ECZEMA

प्रोफेसर गंगाचरण शर्मा आयुर्वेदाचार्य (भिवानी)

परिचय—शरीर के किसी भाग पर अत्यधिक दाह और कंडूयुक्त छोटी छोटी फुंसियाँ हो जाती हैं जिनमें तीसरे चौथे या पाँचवें दिन पूय युक्त स्राव होकर पपड़ी सी जम जाया करती है और फिर उस पपड़ी के नीचे जल के सदृश पूय उत्पन्न हो जाता है जो बह बह कर जहाँ जहाँ स्पर्श करता है वहां का प्रदेश उसी प्रकार की फुंसियों से आक्रांत हो जाता है। इस रोग की तीव्रावस्था में ज्वर भी हो जाया करता है।

कारण—पाचन क्रिया के विकार, साधारण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुर्बलता विशेषकर मांस पेशियों की दुर्बलता, आम बात. वातरक्त ठंढ या गर्मी का लगना, उदरकृमि, बालकों में दन्तोद्गम, और स्त्रियों में ऋतुदोष वैषम्य इसके कारण होते हैं।

चिकित्सा—सर्व प्रथम यह विचार करना उचित है कि किस दोष की प्रबलता से यह रोग उत्पन्न हुआ है। यदि वायु का प्रकोप हो तो घृत पान करावें, कफ का दोष हो तो वमन करावें और पित्त के दोष में विरेचन या रक्तमोक्षण करावें तदनन्तर रक्त शोधनार्थ, लघुमंजिष्ठादि वृ० मंजिष्ठादि क्वाथ या अर्क मधु मिलाकर सेवन करावें या खदिरारिष्ट और अभयादि मोदक का सेवन करावें और स्थानिक चिकित्सा के रूप में निम्नलिखित योगों में से किसी एक का प्रयोग करें:—

(१) करबीर तैल—सफेद करनेर की जड़, मीठा तेलिया और गौ मूत्र से यथाविधि तैल सिद्ध कर लगावें इससे पामा के अतिरिक्त चर्मदल, सिध्म, विस्फोटक, क्रिमि और किटिभ कुष्ठ भी नष्ट हो जाते हैं।

(२) मूली के बीज, सरसों, लाख, हल्दी, दारु हल्दी, पवाड़ के बीज, गंधा बेरोजा, त्रिकटु वायविडंग, कूठकड़वा, इनको समान भाग ले गौ मूत्र में पीस कर लेप करें इससे भी पामा, दद्रु, सिध्म, किटिभ, और कपाल कुष्ठ भी नष्ट हो जाते हैं।

(३) मंजीठ, त्रिफला, लाख, हल्दी, मैंनसिल, हरताल, गंधक प्रत्येक एक एक तोला और सर्षप तैल ३६ तोला-सब द्रव्यों को कूट कर तैल सहित ताम्र पात्र में डालकर एक सप्ताह धूप में रक्खें बाद में छानकर पामा पर लगावें

(४) अर्कपत्र रस १ सेर हरिद्राकल्क १ छंटाक और सर्षप तैल १ पाव लेकर यथाविधि तैलसिद्ध कर लगाने से भी पामा, कच्छू विचर्चिकादि नष्ट हो जाते हैं।

(५) सिन्दूर और काली मिर्च का चूर्ण समान भाग ले भैंस के माखन में मिलाकर लगावें।

(६) यशद भस्म या जिंक आक्साइड १० ग्रेन वैसलीन १ औंस दोनों को मिलाकर लगावें अथवा इसी में १० ग्रेन गंधक सल्फर प्रेसी पिरेटेड और मिला लेवें

(७) सफेदा काशगारी मुर्दासंग प्रत्येक डेढ़ डेढ़ तोला कतीरा ३ माशा अहिफेन १ माशा कर्पूर २ माशा रसौंत शुद्ध ३ माशा मोम १ तोला तिल्ली का तैल ६ तोला विधि—प्रथम तैल को गर्म करके उसमें मोम को मिश्रित करें तदनन्तर अवशिष्ट द्रव्यों का वस्त्रपूत चूर्ण मिलाकर उसके बाद विहीदाने का लुआव ३ माशा और एक अण्डे की सफेदी मिला कर खूब घोट कर रख लेवें ओर पामा के व्रणों पर लगावें

(८) सफेदा काशगारी, मुर्दासंग, सफेद चन्दन और कर्पूर समान भाग ले और अर्क गुलाब में घिसकर तथा उसमें एक वस्त्र खंड भिगोकर आक्रांत स्थान पर रक्खें।

पामा व्रणों को जल से या किसी क्वाथ से धोने के बजाय एक शुद्ध बस्त्र खंड को तैल या सोडावाई कार्व ई लोशन में भिगोकर व्रणों पर रख दें जिससे पामा के खुरंड गीले होकर उतर जावेंगे तदनन्तर औषधि लगाने से आशु फलप्रद होगी।

(क्रमशः)

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बूंटी और बटी

ले०-पं० युगेश्वर झा आयुर्वेदाचार्य, रजिस्टर्डवैद्य, ५।१।१ए० दुर्गाचरणमित्र स्ट्रीट कलकत्ता ६

(गत अक्टूबर अंकसे आगे)

लक्ष्मणा

यह बूंटी जंगली भूमि में पायी जाती है, इसके चन्द्रकला फूल की पत्ती के आकार के लम्बे लम्बे पत्ते होते हैं और बसन्त ऋतुमें कुछ लाली लिये सफेद रंगके फूल तथा गोल गोल फल और उसके अन्दर काले दाने के बीज होते हैं तथा हाथ पांव और शिरके आकार युक्त मनुष्य के आकारका श्वेत कन्द होता है।

गुण

लक्ष्मणा बूंटी धातु संबन्धी सभी रोग नाशक पौष्टिक बलकारक और पुत्रोत्पादक है। मैंने इसे उक्त रोगों पर परीक्षाकर देख लिया है और यथार्थ में लक्ष्मणा पुत्रोत्पादनमें अमोघशक्ति की है।

प्रयोग

१—लक्ष्मणा का कन्द ३ और काली मिर्च ५ दाने लेकर शिला पर वारीक पीसकर गाय का दूध १ सेर, मिश्री १ छटांक और उपरोक्त दवा मिलाकर शर्बत बना लें और इसे सुबह साम दोनों समय ३ सप्ताह लेने से उपदंश "गोनोरिया" दूर होता है।

२—लक्ष्मणा कन्द को सुखाकर कपड़छान चूर्ण आधे तोला में आधा तोला मिश्री १ तोला सहद और आधा तोला गायका घी मिलाकर लेवें प्रातः गायका दूध एक पाव और साममें बकरी का दूध एक पाव पीनेसे, धातुक्षीणता स्वप्नदोष और धातु का पतलापन दूर होकर, बल वीर्य और कान्ति की अत्यन्त वृद्धि होती है।

३—लक्ष्मणा का कंद लेकर, पवित्र जलसे साफकर लेवें, सूर्योदय के बाद खुले स्थान पर जहां सूर्यकी किरणें आयी हो गायका गोवर और जलसे १। हाथ चौकोर चौका लगाकर सन्मुख सूर्य के चौके पर बैठकर कंदको पीस डाले बादमें अपने समान रंग की बछड़ेवाली गायका दूध एक पाव लेकर दूध के साथ कन्द को पीस कर मिलाकर पी जाय। यह विधि स्त्री के ऋतु स्नानके बाद ६ दिन तक होनी चाहिये। यों ३ बार का कल्प होने पर ऋतुरोग रहित वंन्ध्या स्त्री अवश्य पुत्रको उत्पन्न करती है। यह प्रयोग स्त्री पुरुष दोनों को करने से विशेष लग्भप्रद है।

नोट—लक्ष्मणा बूटी मेरे यहाँ मिलती है, प्रयोजनवाले लेखकके पते से विशेष पूछ पाछ करें।

यक्ष्मा क्षयंकर बटी

अंडूसेके पंचाङ्गका वस्त्रपूत चूर्ण, पीपल का चूर्ण कान्तलौह भस्म और दाख इनकी समान मात्रा लेकर सहद के साथ २४ घण्टे तक खरलमें घोट १ रत्तीके प्रमाण की गोलियां बनाकर छाया में सुखाकर शीशी में बन्द कर रखना चाहिये। यह वटी, कास, श्वास और क्षयनाशक है।

अनुभूत और परीक्षित प्रयोग

१—तुलसीका रस आधा तोला और सहद आधा तोलामें १ वटी मिलाकर भोजनके उपरान्त सेवन करनेसे २-३ सप्ताहमें कास नष्ट हो जाता है।

२—उपरोक्त वटी १ को चौथाई तोला शहदमें मिलाकर भोजन के उपरान्त दवाको खाकर १ तोला पुराना कनकासव और १ तोला ताजा पानी मिलाकर पी जानेसे अत्यन्त पुराना भी श्वास विनष्ट होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३—सोंठ और पीपल का चूर्ण एक एक रत्ती, और वटी १ को सहद में मिलाकर चाटने और ऊपर से द्राक्षारिष्ट १ तोला में ताजा जल १ तोला मिलाकर पीनेसे यक्ष्मा (Thisis, T.B.). रोगमें आशातीत लाभ होता है। यह प्रयोग भोजनके बाद दोनों समय किया जाता है।

साहित्य समीक्षा

कैंसर रोगकी चिकित्सा

लेखक—कविराज़ डा० श्री प्रभाकर चट्टोपाध्याय एम० ए०, आयुर्वेद वृहस्पति, पृष्ठ सं० २२२ मूल्य ६) रु० प्राप्ति स्थान राजवैद्य आयुर्वेद भवन, नं० १७२ बहुबाजार स्ट्रीट कलकत्ता—१२

विशेषतः कैन्सर रोग कष्ट साध्य होने के कारण रोगीको भी अधिक कष्टप्रद हैं। विज्ञानवेत्ताओंने राज्यक्षक्ष्मा, विषम ज्वर विसूचिकादि रोगोंके कारणों तथा चिकित्सा तथा प्रसारको रोकनेके लिये विविध अनुसन्धान कर लिया है पर कैन्सर रोगके निदानादिके सम्बन्धमें कोई निश्चित मत नहीं कर सके हैं। यूरोपादि देशमें अन्य रोगोंकी अपेक्षा कैन्सर रोगसे मरनेवालोंकी प्रतिशत संख्या अधिक है आयुर्वेद शास्त्र के सिद्धान्तों तथा चिकित्सा पद्धतिसे कैन्सर रोगके निदानादि पर कुछ भी असर पड़ा तो वह पाश्चात्य विज्ञान पर आयुर्वेद की महान विजय होगी।

प्रस्तुत पुस्तक पहले बंगला भाषा में प्रकाशित हुई थी जिस पर दी गई अनेक आयुर्वेद के धुरन्धर विद्वानोंकी सम्मतियां भी प्रकाशित हुई हैं लेखकने हिन्दी भाषा में अनुवाद कर एक बड़े अभाव की पूर्ति की है। इसमें गला, जिह्वा, दन्तमूलादि स्थानों के यथा सम्भव कैन्सर रोगका निदान चिकित्सादि सुगमता पूर्वक निर्देश करते हुए पाठकों को रोगके सम्बन्धमें प्रत्यक्ष ज्ञानके लिये कैन्सर रोग सम्बन्धी चित्रोंका प्रदर्शन भी यथास्थान किया है। विभिन्न स्थानोंके रोगकी विभिन्न अवस्थाओं का वर्णन तथा तज्जनित उपद्रवोंके वर्णन के साथ साथ आयुर्वेद शास्त्रानुसार चिकित्सा पद्धति भी वर्णित है। पुस्तक पढ़ने पर मालूम होता है कि पुस्तकमें निर्दिष्ट विषय जहां तहां से संग्रहीत नहीं है किन्तु लेखक स्वयं कैन्सर रोग के बिशेष चिकित्सक हैं अतः अपने दीर्घकालीन अनुभव के आधार पर लिखी गई है। आयुर्वेद में कैन्सर रोग सम्बन्धी यह पुस्तक हिन्दी भाषामें होनेके नाते उत्तम एवं उपादेय है। वैद्य समाज एवं आयुर्वेद प्रेमियोंसे मेरा अनुरोध है कि इस पुस्तकका अधिकाधिक प्रचार कर लेखकके उत्साह को बढ़ावें ताकि भविष्य में आयुर्वेद विषयक उत्तमोत्तम साहित्य प्रकाशित कर आयुर्वेद की समुन्नति एवं वैद्य समाज का हित साधन कर सकें। पुस्तक का आकार एवं कागज देखते हुए समयानुसार ६) रु० मूल्य कुछ अधिक मालूम होता है परन्तु पुस्तककी उपयोगिताके सामने मूल्य नगण्य वस्तु है।

समाचार संग्रह

विज्ञप्ति

उत्तर प्रदेशीय सरकार द्वारा स्थापित आयुर्वेदिक एवं तिब्बी एकेडेमी; उत्तर प्रदेश, लखनऊ, के एक उद्देश्य, जो कि उच्च कोटि के आयुर्वेदिक एवं तिब्ब सम्बन्धी पुस्तकों तथा हस्तलिखित ग्रन्थों की ढूँढ़ खोज के विषय में है, की पूर्ति के लिये शासन द्वारा एक उप-समिति की स्थापना की गई है। जिसके सदस्यगण भारत के ऐसे विभिन्न स्थानों का भ्रमण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करेंगे जहां कि तथाकथित साहित्य प्राप्त हो सकेगा।

एतदर्थ उक्त सदस्यों के सम्पर्क स्थापित कर सकने की सुविधा के लिये, उन सभी महानुभावों, विभिन्न पुस्तकालयों एवं आयुर्वेदिक यूनानी व अन्य शिक्षा संस्थाओं के अध्यक्षों, वैद्य एवं हकीमों तथा ऐसे अन्य व्यक्तियों से, जिनके पास उक्त प्रकार के प्राचीन दुष्प्राप्य पुस्तक व हस्तलिखित ग्रन्थ विक्रय या सुरक्षा के उद्देश्य से सुरक्षित हों, सानुरोध प्रार्थना है कि एकेडमी के अध्यक्ष के पते पर पूर्ण विवरण के साथ पत्र व्यवहार करने की कृपा करें। साथ ही वे महानुभाव जो ऐसे साहित्य को विक्रय के रूप में न देकर दान स्वरूप देना चाहते हों अथवा अर्थाभाव के कारण स्वयं प्रकाशन कराने में समर्थ न हों, वे भी इस सम्बन्ध में अध्यक्ष महोदय के साथ पत्र व्यवहार कर अपना पूर्ण सहयोग प्रदान करने की कृपा करें।

उक्त सभी विवरण एकेडमी के कार्यालय में दिनाङ्क १५-१२-१९५५ तक पहुंच जाने चाहिये।

(द० अ० कुलकर्णी)
अध्यक्ष आयुर्वेदिक एवं तिब्बी एकेडेमी, उत्तर प्रदेश

वैद्य श्रीसत्यनारायणशास्त्रि अभिनन्दनग्रन्थ

काशी-वैद्यसभा ने आयुर्वेदिक कालेज, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के भूतपूर्व अध्यक्ष, भारत के प्रख्यात वैद्य, आयुर्वेदादि शास्त्रों के प्रकाण्ड विद्वान् तथा राष्ट्रपति के निजी चिकित्सक पद्म-भूषण पं० श्रीसत्यनारायण शास्त्री जी को अभि-नन्दन ग्रन्थ समर्पित करने का निश्चय किया है। तदर्थ सम्पादक-मण्डल संघटित हो चुका है और ग्रन्थ की रूपरेखा प्रस्तुत की जा रही है। आगामी बसंत पंचमी के अवसर पर यह प्रकाशित हो जाय ऐसा प्रयत्न किया जा रहा है। अतः भारत के सभी वैद्य महानुभावों तथा आयुर्वेद प्रेमियोंसे इस महान कार्य में सब प्रकार का पूर्ण सहयोग प्रदान करने का अनुरोध किया जाता है। आशा है, सभी बन्धु इसमें पूरा हाथ बंटायेंगे जिससे यह ग्रन्थ आयुर्वेद का एक अपूर्व प्रकाशन बने। विषय-सूची सेवा में शीघ्र ही भेजी जायगी।

निवेदक—सम्पादक मण्डल वैद्य श्रीसत्यनारायण शास्त्रि-अभिनन्दनग्रन्थ काशी।

विज्ञप्ति

आयुर्वेदिक एवं तिब्बी एकेडेमी, उत्तर प्रदेश, लखनऊ द्वारा प्रसारित विज्ञप्ति जिस में आयुर्वेदिक एवं तिब्ब की प्राचीन तथा दुष्प्राप्य पुस्तक व हस्त-लिखित ग्रन्थ सम्बन्धी सूचनाओं को १५-११-१९५५ तक अपेक्षित किया है, की तिथि बढ़ाकर १५-१-१९५६ तक कर दी गई है।

एतदर्थ सभी वैद्य, हकीम अथवा अन्य महा-नुभाव जिनके पास उक्त प्रकार के ग्रन्थ विक्रय अथवा भेंट आदि की दृष्टि से संगृहीत या सुरक्षित हों, कृपा कर शीघ्र ही उपरोक्त संस्था के अध्यक्ष से पत्र व्यवहार करने का कष्ट करें।

(द० अ० कुलकर्णी
अध्यक्ष आयुर्वेदिक एवं तिब्बी एकेडेमी, उत्तर प्रदेश

आयुर्वेदिक प्रोफेसर सम्मेलन

विहार स्टेट आयुर्वेदिक कौंसिल तथा फैक्टरी में आयुर्वेदिक ग्रेजुएटों के प्रतिनिधित्व की मांग

विहार आयुर्वेदिक ग्रेजुएट प्रोफेसर सम्मेलन की एक आवश्यक बैठक श्री नन्दकिशोर मिश्र, प्रोफे-सर, राजकीय आयुर्वेदिक महाविद्यालय, पटना के सभापतित्व में १७ दिसम्बर १९५५ को पटने में हुई, जिसमें कविराजश्री विक्कू सिंह, कविराज श्री रघु-नाथ कर्मकार, कविराज श्री रणविजय कुमार मिश्र प्रभृति सम्मिलित हुए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभापति पद से श्री मिश्र जी ने कहा कि विहार आयुर्वेदिक तथा यूनानी चिकित्सा कौंसिल एवं फैक्टरी में वैद्यों का बहुमत होना चाहिये। आयुर्वेदिक कौंसिल और फैक्टरी के ५० सदस्यों में प्रांत के विभिन्न संस्थाओं के प्रतिनिधि तो प्रचुर मात्रा लिये गये हैं, पर उसी संस्था के उपाधिधारियों (आयुर्वेदाचार्य—जी० ए० एम० एस०) के, जिनकी संस्था करीब पाँच सौ है, प्रतिनिधित्व का न होना एक बहुत बड़ी कमी है।

पहले भी इस संबन्ध में तथा अन्यान्य आयुर्वेदिक समस्याओं के सम्बन्ध में आयुर्वेदिक ग्रेजुएट प्रोफेसरों का एक प्रतिनिधि मन्डल १३ मार्च, १९५५ माननीय स्वास्थ्य मंत्री विहार तथा स्टेट आयुर्वेदिक कौंसिल के प्रेसिडेन्ट का ध्यान आकर्षित किया था। ग्रेजुएटों को संगठित होकर आयुर्वेदिक तथा यूनानी एक्ट में आवश्यक परिवर्तन के लिये प्रयत्न करना चाहिये, जिसमें उन्हें इस संस्था में समुचित प्रतिनिधित्व मिले।

अंत में प्रोफेसरों का शिष्ट मण्डल आयुर्वेदिक रजिष्ट्रार से मिला।

बिम्कूसिंह मंत्री, विहार आयुर्वेदिक प्रोफेसर सम्मेलन पटना—३।

घोषणा-पत्र

सिंह भूमि जिला-वैद्य-सम्मेलन और अंजुमन अतिब्बा, जमशेदपुर का तृतीय वार्षिक तथान्य अधिवेशनों के द्वारा दिनांक २४।२५ दिसम्बर सन् १९५५ ई० की ऐतिहासिकः—

घोषणा

"यह संयुक्त अधिवेशन एक मत से, दृढ़ता पूर्वक घोषणा करता है, कि भारतीय चिकित्सा प्रणालियों (आयुर्वेदिक और यूनानी) का वैज्ञानिक विकास एवं सक्षम राष्ट्रीय जन-स्वास्थ्य की रक्षा के निमित्त आमूल परिवर्त्तन तथा परिष्कार एवं परिवर्द्धन कर लेने का उचित और उपयुक्त अवसर समझता है। अतः ससस्त वैज्ञानिक सोध प्रवृत्तियों को अपनाकर आयुर्वेद की हिन्दी में ओर यूनानी की उर्दू में और जरूरत पड़ने पर उर्दू-हिन्दी दोनों भाषाओं में शिक्षा दिये जाने पर विश्वास प्रगट करता है। संस्कृत या अर्बी, फ़ारसी और अंग्रेजी इत्यादि भाषाओं में दी जाने वाली शिक्षा की विशेषता को अस्वीकार करता है। साथ ही किसी उपलब्ध विज्ञान तथ्य को पूर्ण समझ लेना भी देश के लिये घातक समझता हैं; तथा किसी भी विज्ञान की चरम-सीमा मानने से इन्कार करता हैं। अतएव आवश्तकता पूर्ति के लिये प्रगतिशील विज्ञों द्वारा किये जाने वाले सद् प्रयत्नों और प्रयासों को स्वीकार तथा स्वागत करया है। एवं बन्धन रहित प्रगतिशील विकाश में पूर्ण आस्था रखता है"।

कविराज, पं० सुरेन्द्र कुमार शर्मा, आयुर्वेदाचार्य
जेनरल सेक्रेटरी, सिंहभूमि जिला वैद्य सम्मेलन

श्री धीरेन्द्र मोहन भट्ट को कन्या प्राप्त

सरगुजा (बतौली) स्थित राजकीय जनपद औषधालय के प्रधान चिकित्सक तथा "आयुर्वेद गौरव" के प्रसिद्ध लेखक आयुर्वेदाचार्य श्री पं० धीरेन्द्र मोहन भट्ट शास्त्री जी० ए० एम० एस० को ११ दिसम्बर की रात्रि में प्रथम पुत्री लाभ हुई है। इस अवसर पर श्री भट्ट जी ने अनेक मित्रोंको पार्टी दी। बच्ची तथा बच्ची की माँ श्रीमती विमला भट्ट वैद्य विशारदा स्वस्थ और प्रसन्न हैं।

श्री कृष्ण मोहन भट्ट शास्त्री प्रधान चिकित्सक
जनपद औषधालय महराजगंज वलरामपुर
सरगुजा (म० प्र०)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिड़ला लेबोरेटरीज कलकत्ता द्वारा प्रस्तुत।

शीत-काल में सेवनीय औषधियां—

(1) नियो च्यवनप्राश

(विटामिन व कैलसियम मिश्रित)

गुणः—पुराना जुकाम, खांसी, दमा, यक्ष्माकी प्रारम्भिक अवस्था, शारीरिक तथा हृदयकी दुर्बलता एवं अरुचि की महौषधि। शरीर स्वस्थ रखनेके लिये पौष्टिक रूपमें भी इसका सेवन श्रेयस्कर है।

मात्राः—आधा तोलासे १ तोला गर्म जल या दूध से

नियो-विगोरिन :–

नियो विगोरिनमें अन्य उपादानोंके साथ साथ पोटासियम, कैलसियम, लौह ताम्र, केशर कस्तूरी तथा मकरध्वज भी मिश्रित है। इसके सेवनसे रक्ताल्पता (रक्तकी कमी) वृद्धावस्था की कमजोरी, मांस पेशियोंकी थकान और धातु दौर्बल्यका नाश होता है। पुरुषत्व लाभ करनेके लिये मक्खनके साथ इसका उपयोग हितकर है।

राज राजेश्वर मोदकः–

यह महापौष्टिक मोदक है। इसके सेवनसेअग्निकान्ति, स्मृति तथा मेधादि वृद्धिके साथ साथ स्वर में माधुर्य आता है। इसका खास गुण तो यह है कि यह स्तम्भन शक्ति बर्द्धक है। दूधके साथ सुबह शाम उपयोग करना चाहिये।

नियो-ग्राप्पाः–

शरीरके क्षीण बलकी वृद्धिके लिये इसे रसायन कहना अनुपयुक्त न होगा। इसके सेवन मात्रसे आप अपनेमें अद्भुत शक्ति एवं स्फूर्तिका संचार होते पायेंगे। भूखकी कमी, शारीरिक तथा मानसिक घोर दुर्बलता एवं क्षयके रोगियोंके लिये अत्यन्त लाभदायक प्रमाणित हुआ है। प्रसवके बाद स्त्रियों की स्वाभाविक कमजोरी दूर करनेके लिये तथा बल एवं स्वास्थ्यकी वृद्धि चाहने वालोंको अवश्यमेव इसका सेवन करना चाहिये। भोजनके पश्चात् दो तोला औषधि बराबर जल मिलाकर पीना उचित है।

बृहत् बंगेश्वर रस

स्वर्ण रजत युक्त

(प्रमेह नाशक)

स्वर्ण, रौप्य, मोती और बंगादि खनिजों का यह प्रशस्त रसायन धातुगत क्षीणता, धातुका पतलापन, स्वप्नदोष, पेशाबमें चीनी आना, ज्वर, काम करनेमें जी न लगना, कब्जियत, कमरमें दर्द अधिक प्यास लगना, मानसिक शक्तिका ह्रास इत्यादि प्रमेह लक्षणोंको समूल नष्ट करता है। धातुको गाढ़ा बना कर शरीरमें ओज पौरुष तथा सौन्दर्य की वृद्धि करता है।

इसके प्रयोगसे पेशावकी जलन बून्द बून्द पेशाव का होना–पेशावके साथ रक्त तथा मवादका आना और अत्यधिक पेशावकी शिकायत भी दूर हो जाती है, मन्दाग्नि, अरुचि और कोष्ठ बद्धताको भी दूर करता है।

मात्रा—१ से २ गोली। अनुपान—मधु

बृहत् पूर्णचन्द्र रस

(स्वर्ण रजत युक्त)

(अत्यन्त पौष्टिक तथा बाजीकरण)

पारद, सोना, चांदी तांबा, बंग इत्यादि प्रशस्त खनिजोंका यह योग बलकारक रसायन, वीर्यवर्द्धक और उत्तम बाजीकरण है यह दमा, खांसी, अरुचि आमशूल, कमरका शूल, हृदयका शूल, अग्निमांद्य अजीर्ण पुरानी संग्रहणी, आमवात, अम्लपित्त, भगन्दर पांडु प्रमेह और वातरक्त को शीघ्र नष्ट करता है। इसके सेवनसे मनुष्य निरोग, शक्तिशाली सुन्दर और सुगठित हो जाता है।

बाँझ स्त्रियोंको, दुर्बल शरीर वाले पुरुषोंको क्षीण काय तथा शीघ्र स्खलित हो जानेवाले आदमियों को ओज, तेज और सन्तान देता है।

यह शरीरके अंगोंको सुदृढ़ करता है और मानसिक शक्तिका वर्द्धन करता है। मात्रा–१ वटी; अ० मधु।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

REGD. No. C.3822

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाइ-ला भैषज्य-पेटिका (Medicine Box)

हमारे व्यापारियों तथा शुभचिन्तकों के विशेष आग्रह से जनता के लाभार्थ हमने "बाइ-ला भैषज्य पेटिका" का निर्माण किया है।

इस भैषज्य पेटिका में प्रचलित एवं तत्काल लाभप्रद औषधियों का समावेश है जो समय पर वैद्य एवं डाक्टर का काम करती हुई प्राण बचाती हैं।

यह पेटिका प्रत्येक पारिवारिक व्यक्तिको अपने घरमें अवश्य रखनी चाहिये। विशेषतः भ्रमण शील तथा देहात के लोगों के लिये तो अत्यन्त उपयोगी और आवश्यकीय है। देहातों में समय पर वैद्य या डाक्टर न मिलने पर परेशान होकर प्राणों से भी हाथ धोना पड़ता है। ऐसी परिस्थिति में यदि यह "भैषज्य पेटिका" घर में वर्तमान हो तो अपनी चिकित्सा आप स्वयं कर सकते हैं।

आकस्मिक दुर्घटनाओं से रक्षार्थ इसमें प्राथमिक चिकित्सा के सभी उपयोगी समान दिये गये हैं।

जनहित का ध्यान रखते हुए मूल्य भी इतना कम है कि सब साधारण आसानी से खरीदकर लाभ उठा सकें। भैषज्य पेटिका में निम्न लिखित औषधियां हैं।

औषधि नाम	रोगाधिकार
१ अर्क पुदीना—	अजीर्ण, उदरशूल
२ अर्क कपूर—	हैजा अजीर्ण, उदरशूल
३ मोहन मिक्श्चर—	विभिन्न रोग
४ एसोकुला	आंख, कान, नाक तथा गला रोग,
५ क्लोरोडिन	वायु शूल, दस्त, आंव।
६ मेन्थेरिया वाम (ट्यूब)—	शिर पीड़ा, शोथ, सन्धिपीड़ा
७ अग्निप्रभा वटी—	स्वादिष्ट पाचक
८ कैस्प्रेन—	विभिन्न पीड़ाओं पर
९ स्वस्ति मल्हम —	दाद खाज, आदि चर्म विकार
१० टिंचर बेंजोइन—	खून बन्द करनेके लिये
११ टिंचर आयोडिन—	क्षत तथा शोथ नाशक
१२ नियो लैक्स	जुलाब
१३ आयडो-सल्फेन	घाव तथा चोट नाशक
१४ [illegible] ऑइंटमेंट—	गले के विकार नाशक

उपरोक्त औषधियों के अतिरिक्त १ कैंची, गाज, बैण्डेज क्लौथ, प्राथमिक चिकित्सा के साधन हैं बाइ-ला "भैषज्य पेटिका" में एक पुस्तिका रहती है जिसमें समस्त औषधियों का पूर्ण विवरण दिया गया है। मूल्य [illegible] रु० मात्र। प्राप्तिस्थान:—बिड़ला लेबोरेटरीज़ कलकत्ता- ३०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

प्रकाशचन्द्र गुप्त ६०, पाथुरिया घाट स्ट्रीट द्वारा प्रकाशित तथा जेनरल प्रिण्टिंग वर्क्स लि०,

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी

आयुर्वेद का एकमात्र सर्वोत्तम मासिक पत्र

"आयुर्वेद गौरव वर गौरव है"

लेखक—पण्डित युगेश्वर झा, आयुर्वेदाचार्य, रजिष्टर्ड वैद्य

जिसकी उन्नति उन्नति देश की,
फिर भी अवनति अवनति है।
अर्थ, धर्म, जीवन मन साधक,
जिसकी यह भारत संतति है ॥ १ ॥

माल खजाना जान जहाना,
सुख साधन का सौरव है।
गुणमय हृदय हार यह मेरे,
आयुर्वेद वर गौरव है ॥ २ ॥

अक्षय अभय भारत के आगे,
राष्ट्रमान्यता हेतुक जन जागे।
राष्ट्रपते ! श्री नेहरू ! पौरव !
स्वीकृति दो आयुर्वेदिक गौरव ॥३॥

वार्षिक मूल्य
३)
एक प्रति ।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

सम्पादक—श्री प्रकाशचन्द्र गुप्त M.Sc सह-सम्पादक—श्री मदनगोपाल वासोतिया आयुर्वेदाचार्य

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय सूची

विषय	लेखक का नाम	पृष्ठ सं०
१ निम्ब का वृक्ष (कविता)	पं० भगवद्दयालु त्रिपाठी "शंकर" साहित्यरत्न	१२९
२ वातोन्माद (शोकज) की सफल चिकित्सा	श्री दारोगा प्रसाद मिश्र	१३०
३ नव जीवन प्रदाता—अशगन्ध	वैद्य रघुनन्दन मिश्र आयुर्वेदाचार्य	१३२
४ आयुर्वेद का वैज्ञानिकत्व	कविराज डा० श्री प्रभाकर चट्टोपाध्याय	१३५
५ अभ्रकादि सत्व पातन	वैद्याचार्य उदयलाल महात्मा	१४०
६ गूलर की उपयोगिता	श्री वैद्य खेमराज शर्मा छांगणी	१४२
७ तुलना	श्री रामानन्द वैद्य	१४७
८ गर्भावस्था की कुछ प्रमुख व्याधियां और उनकी चिकित्सा	श्रीमती विमला देवी भट्ट वैद्या	१४९
९ विटामिन और हमारा खाद्य	कविराज श्री एस० एन० बोस	१५३
१० नवाकर्षण—	डा० भवानीप्रसाद गुप्त एम० बी० बी० एस०	१५७
११ जठराग्नि	श्री केदार मल शर्मा	१५९

———

बिड़ला लेबोरेटरीज़ कलकत्ता–३० द्वारा प्रस्तुत शीघ्र लाभदायक

कुछ विशिष्ट औषधियां

स्वस्ति मलहम

विभिन्न कारणोंसे लोंगोंको प्रायः दाद, खाज, खुजली, अपरस, फोड़ाफुन्सी, आदि अनेकचर्म रोग हुआ करते हैं। उक्त कष्टप्रद चर्म रोगोंसे त्राण पाने के लिये स्वस्ति मलहम का व्यवहार विशेष लाभप्रद है। इसके दो तीन बार लगाने से ही पुरानासे पुराना दाद दिनाय, जड़मूलसे नष्ट हो जाता है। यह आकर्षक रूपसे छपे हुए बड़ी और छोटी डिब्बियोंमें हर औषधियो की दुकानों में मिलता है। इस मलहम से कपड़े में दाग नहीं लगता। मू० बड़ी डिब्बी ।।), छोटी डिब्बी ।)

विक्टोरिया औरिजनल बाम

सामान्यतः रातमें अधिक जागने, परिश्रम चिन्ता, स्वप्नदोष, अधिकसम्भाषण, तथा सर्दी लगने के प्रारम्भिक अवस्था इत्यादि कारणोंसे प्रायः शिरमें पीड़ा हुआ करती है। उक्त कारण जन्य पीड़ा से शीघ्र छुटकारा पाने के लिये विक्टोरिया औरिजनल बाम, एक अमोघ औषध है किसी भी कारण से उत्पन्न दर्द की प्रत्येक अवस्था में पूर्ण लाभदायक हैं। अधकपाली (आधा शीशी) की पीड़ा को अति शीघ्र दूर करता है। मूल्य आधा औंस ।।।≈) चौथाई औंस ।।)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ॐ

प्राच्यं प्रतीच्यं यत्किंचिद् आयुर्वेदात्मकं हि तत् ।
तद्गौरवो विजयते, विश्वस्मिन् व्याधिसंकरे ॥ १ ॥

नोट—१-"यदिहास्तितदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्", इति चरक वचनात् ।

आयुर्वेद-गौरव

वर्ष ३ | फरवरी १९५६ | संख्या ५

निम्ब का वृक्ष

रचयिता—पं० भगवद्दयालु त्रिपाठी "शंकर" साहित्यरत्न
छिबरामऊ जि० फ़र्रुखाबाद

(१)

निश्चय निम्ब सुअम्ब सा, करता नित प्रतिपाल ।
दन्त रोग कुष्ठादि का, यह प्रत्यक्ष है काल ॥
यह प्रत्यक्ष है काल, मिटाता तन-दुख सारा ।
वैद्यगणों के हृदय सदा लगता अति प्यारा ॥
आयुर्वेदिक ग्रन्थ सभी इसके गुण गाते ।
अखिल विश्व, मर्मज्ञ, विज्ञ प्रतिदिन अपनाते ॥

(२)

चर्मरोग संहरन, दमन घातक कृम्यादि का ।
गलितकुष्ठ उपशयन पित्त-शम, रिपु व्रणादिका ॥
वायुदमन शीतल समस्त व्याधि विनाशक ।
विध्वंसक मधुमेह, सभी प्रमेह पर शासक ॥

(३)

नेत्र-ज्योति वर्द्धक सुदन्त स्वच्छक सुखदाता ।
ज्वर नाशक हृल्लास अरुचि वमनादि मिटाता ॥
अर्श, यकृत, गुल्मादि, गण्डमाला विषनाशक ।
किये तैल आँखन अरु शिर रोग विनाशक ॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वातोन्माद (शोकज) की सफल चिकित्सा

ले०—वैद्य दारोगा प्रसाद मिश्र प्रिन्सिपल आयुर्वेद कालेज मोतिहारी (बिहार)

रोगी का नाम अब्दुल रज़ाक मियाँ, आयु ३३ वर्ष मुसलमान रजाक मियाँ के घर में पारिवारिक दुःस्थितियाँ तो थीं ही, साथ साथ ईश्वर का प्रकोप उसके ऊपर आकस्मिक आ पड़ा। रजाक मियाँ मोतिहारी के ख्यातिप्राप्त घड़ीसाज हैं। इनकी घड़ी की दुकान से एक दिन दो हजार की सामग्रियाँ चोरी हो गईं। उसदिन,से इन्होंने अपनी चाय और सिगरेटकी मात्रा बढ़ा दी और शोक-निवारण के लिये वे इन्हीं चीजों में अपने को भुलाने लगे। शोक के द्वारा मस्तिष्क स्थित नाड़ीकेन्द्र पर गम्भीर आघात पहुंचा और ये बराबर मौन रहने लगे। इधर उष्ण आहार का सेवन मात्राधिक्य हो रहा था। वात की प्रधानता और पित्तका अग्रबल लेकर शरीर में क्रान्ति फैली। अकस्मात् एक दिन रजाक मियां उछल पड़े और कई एक आदमियों को मारने दौड़े। इनकी आँखें लाल हो गई। सारा अंग इनका नाचने लगा। रौद्र रूप में इनका आचरण सड़क पर चलनेवाले पथिकोंको बाधित करने लगा। डाक्टरी चिकित्सा चली व्यर्थ सिद्ध हुई। १५ दिनों के बाद रोगी का बड़ा साला और बड़ा पुत्र जो बी० ए० में पढ़ता था वे मेरे पास आये। मैंने रोगी को देखकर निम्नलिखित चिकित्सा प्रारम्भ की।

रोगी की अनिद्रा दूर करने के लिये दो दो घण्टे पर नागदमन चूर्ण ।।) आठ आना भर को ठण्डा पानी ऽ– एक छटाक में पीसकर पिला दें बाद एक पाव भैंस का सोष्ण दूध, ढाई भर भैंस का घी और मिश्री मिला कर पिला दें नागदमन नामक औषधि भावप्रकाश गुडूच्यादिवर्ग के अन्तिम में देखें।

तीन तीन घण्टे पर पाँच बार कोष्ठ शुद्धि कर चूर्ण चार आना भर तीन-चार घोंट गरम पानी से खिलावें। कोष्ठशुद्धिकर में, निशौत, कालादाना, छोटी हर्रे, उशारे रेवन, सौंफ बराबर बराबर लेकर वस्त्रपूत चूर्ण बनाया था।

माथे पर चार-पांच बार हिमानीकल्याण तैल एवं अलाबू तैल (कद्दूका तैल) सम भाग मिलाकर लगाने को बताया। नाक में चुपके से "परिमल" नामक नस्य सुंघाने को लिखा। ये सारी दवाइयां ९ बजे दिन में लिखी गईं।

पथ्य में घी-खिचड़ी बताया। खिचड़ीमें चावल ऽ=, तिल ऽ–, मूंग की दाल ऽ– डालने को बताया था। इन औषधियों के प्रयोग से अत्यन्त वमन और विरेचन हुआ। रोगीको पूरी शान्ति मिली एवं रोगी सो गया। बाद मैंने रोगी को लोहबलय और लौह बेड़ी धारण करा कर एक घर में सीकड़ से बन्धवा दिया। ऐसा नहीं करने से रोगी के पास बराबर दशदश आदमी को रहना पड़ता था। चूँकि रोगी का शरीर अत्यन्त बलवान् था।

उन्माद में निद्रा आ जाने पर एवं पाखाना अत्यन्त हो जाने पर शीघ्र लाभ होता है। लाभ देख कर मैंने चूर्ण की दवा को बदल कर अन्न स्निग्धकारक और वातानुलोमक औषधका प्रयोग किया। वे ये हैं :—

सायंकाल और प्रातःकाल एरण्डकेशरी पाक १ भर। आधा सेर भैंसका दूध मीसरीके साथ खाया जाय। एरण्ड पाक में केशर को गुलाब जल में पीस कर मिलानेसे "एरण्ड केशरी पाक" मैं बनाता हूं।

भोजनके बाद दिन में और रात में :—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(पूर्वोक्त) कोष्ठशुद्धिकर चूर्ण चार आना भर ढाई भर भैंस के घी में मिलाकर खिलावें। बाद दिन में नाशपाती, अंगूर, सन्तरा का रस एक पाव पिलावें। रात में फल नहीं दें। गरम पानी दें। माथे पर हिमकल्याण तैल लगावें। २-३ बार। कान में और नाक में ५-५ बूंद म० नारायण तैल का विंदु प्रक्षेप करें एवं देह में भी २-३ बार अभ्यङ्ग करावें। परिमलके प्रयोग से क्षवथु (छींक) की प्रवृत्ति नहीं हुई मैं कट्फलादिनस्य (कायफल का वस्त्रपूत चूर्ण) का प्रयोग किया और अत्यन्त छींक आई। आँख में स्थिरता लाने के लिये अजवाइन और कपूर को एक पात्र में एक साथ रख कर जलाकर ऊपर से लोटे का कजरौटा छानकर काजर पारकर आँखमें लगाने को बताया।

भोजन में चने का सत्तू घी चीनी एक साथ मिलाकर पानी मिलाकर पिलाने को कहा। रात में भात या रोटियां, छिलके सहित चने का झोर मूंग की दाल, परोरा, पपीता घेउरा (राजकोशातकी) भैंसका दूध बताया। २९-१०-५५की ये ऊपरकी बातें हैं। उस दिन कुछ कब्ज और अनिद्रा मालुम पड़ी एवं मैं उशारेरेवन को दो आने भरकी मात्रा में चूर्ण बनाकर पिलाया। इससे वमन और विरेचन दोनों होते है। इसे भी हुए। दो बजे दिन और ग्यारह बजे रात में नागदमन चूर्ण चार आना भर भैंसके दूध से पिलाया मीसरी मिलाकर २९-१०-५५ की रात में रोगी को नींद नहीं आई और कुछ कुछ प्रलाप करता रहा। मैंने ३०-१०-५५ के सुप्रभातमें ६॥ बजे महाकोष्ठ शुद्धिकर चूर्ण ।।) आठ आना भर की मात्रामें एक ग्लास सुषुम पानी से पिलाया। महा-कोष्ठशुद्धिकर में निशोत ही का चूर्ण बनाया था। रात में नागदमन चूर्ण चार आना भर देने को कहा। महाकोष्ठशुद्धिकर देनेके पूर्व आध पाव गाय का घी पिलाने को कहा। इस दवा से रोगीको खूब पाखना हुआ। पूर्वोक्त एरण्डकेशरी भी चल रहा था १-११-५६ को—

रोगी में अपूर्व शान्ति देखी गई और मैंने स्थायी औषध की व्यवस्था की। सायं प्रातः चतुर्मु-खचिन्तामणि रस एक गोली महाचैतस घृत एक भर में घोल कर पिलाने को कहा गया।

पश्चात् चतुर्मुख चिन्तामणि के स्थान पर कृष्ण चतुर्मुख चलाया गया। दोपहर दिन और रात में पञ्चसकार चूर्ण चार आना भर एक गिलास सुषुम पानी से दिया ऊपर से सारस्वतारिष्ट २ भर पानी एक भर मिलाकर पिलाया।

रातमें प्रतिदिन सोते समय नागदमन चूर्ण चार आना भर आधा सेर भैंस के दूध मिसरी से देनेको बता कर अञ्जन नस्यका प्रयोग चलाते रहनेको कहा अनुवासन वस्ति के लिये दिन में भोजनके पूर्व दश-मूलार्क १ पाउण्ड म० नारायण तैल १ छटाक सुषुम पानी एक पाउण्ड, गोदुग्ध एक पाउण्ड मिलाकर डूस दिलाने को लिखा। एक दिन बीच करके डूश दिया गया। माथेमें हिमकल्याण तैल दिया। इस औषधि के सेवनसे रोगी अत्यन्त शान्त हो गया और अच्छे आदमी की तरह बातें करने लगा। एवं एक सप्ताह बाद हाथकी बेड़ी खोल दी गई। बाद पुनः३-४ रोज में पैर की भी खोल दी गयी। रोगी का बड़ा भाई एक ओझा जो मुसलमान था से दिखाना प्रारम्भ किया और रोग बढ़ गया तब मैंने पुनः चिकित्सा प्रारम्भ की और उसने स्वस्थ होकर एक दिन घड़ी भी बनायी और शहरमें आया। रोगीका घर अत्यन्त शीतल है। मैंने उस घरको छोड़कर रोगीको दूसरी जगह शुष्क स्थान में रहने को कहा पर रोगी नहीं हटा। रोगी की इच्छा थी वह घर छोड़ दिया जाय, पर उसका बड़ा भाई अज्ञानी है और स्थान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परित्याग नहीं किया। आङ्गन में चटाई बिछा कर रोगी प्रतिदिन धूप में सोता था। एक दिन रोगीको सर्वाङ्ग कम्पन हो गया रोगी होश हवास में था। उन्मादी नहीं बल्कि स्थिर चित्त था। मैं चतुर्मुख चिन्तामणि को मधु से १-१ गोली एक एक घण्टे पर पांच बार दिलवाया और कम्पन शान्त हो गया एक दिन मुझे पुनः देखने के लिये रोगी के घर आह्वान हुआ। वहाँ आने पर देखा क्याकि रोगी आङ्गन में कपड़े पर पड़ा हैं। आवाज बन्द है और उसकी स्त्री मेरे पैर धरकर रोने लगी। मैं अत्यन्त नाराज हुआ और स्थान नहीं वदलने पर अब दवा नहीं करने का भय दिया। बाद आवाज खुलने के लिये एक एक घण्टे पर रसराज एक गोली पान के पत्ते के रस आठ आना भर के साथ पिलाने को कहा। अब रोगी पूर्ण स्वस्थ है। एवं मेरे यशवर्द्धनका कारण और सफलता का उदाहरण है।

नव जीवन प्रदाता—अशगन्ध

ले०—वैद्य रघुनन्दन मिश्र आयुर्वेदाचार्य जयश्री, आयुर्वेद विभाग रांची।

अशगन्ध एक ऐसी जड़ (मूल) है जिसको प्रायः सभी जानते हैं, और चिकित्सक समाज तो इसकी पोर-पोरका पता जानता है, वह किसी भी पैथी (प्रणाली) का चिकित्सक क्यों न हो। विशेषता तो यह है कि जहां भी जिन पंसारियोंकी दुकानमें खोजें अशगन्ध सर्वत्र मिलेगा। मांगनेवाला ग्राहक उसके यहां से नहीं लौट सकता अशगन्ध को साथ ही लायेगा।

विवरण

यह एक छोटी वनस्पतिहै, जो वर्षा ऋतु में पुनर्नवा की तरह अधिक मिलती है और कहीं कहीं पर वारहों महीना पायी जाती है खास कर पथरीली और उथरी जमीन पर ही विशेष उत्पन्न होती हैं। इसके पौधे ठीक पुनर्नवाकी तरह पुनर्नवा एक शाक विशेष और शोथ रोग नाशक बनौषधि है। जो वर्षाकालमें टिकलीदार पत्तियों में लाल किनारी लिए चारों ओर फैलनेवाली बूंटी है।

चारों ओर छितराया हुआ जमीन में फैलता है। वर्षाके अन्त और जाड़े के प्रारम्भ में ही इसमें लाल रंग के छोटे-छोटे गोल-गोल फल लग जाते हैं। जमीन के नर्म और कठोर के अनुसार इसकी जड़ मोटी लम्बी और पतली होती है। पर साधारणतया आध फीट से लेकर १॥ फीट तक लम्बी सफेद रंग और पीतता लिए हुए छाता युक्त होती है। यह बहुत ही कड़वी जड़ है। चलती भाषा में अशगन्ध नागौरी अशगन्ध, और वाजी बूंटी भी कही जाती है।

गुण

अशगन्धकी सर्वप्रथम क्रिया स्नायुमंडल पर सहसा होती है। यही कारण है कि अशगन्ध के प्रयोग से स्मृति-विभ्रंश (पागलपन), विस्मृति याददास्त की कमी, नपुंसकता, और वातिक वेदना में विशेष लाभ होता है। वात-रोग, वात-रक्त प्रमेह पित्तज विकार, रोगोत्तर कालिक कमजोरी मानसिक एवं शारीरिक शिथिलता, स्वप्नदोष पूयमेह अर्श, श्वास, कास यक्ष्मा दुर्बलता, ग्रन्थिवात (गठिया) अनिद्रा रोग, गदोद्वेग (रोगका वहम् वृक्क, और वस्ति रोगोंको नष्ट करके मनुष्यको बल, वीर्य, ओज और कान्ति वर्द्धक रसायनके रूप में है। स्त्रियों में गर्भाशय की स्थान भ्रष्टता डिम्ब-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोप-प्रवाह गर्भाशयकी दुर्बलता, कष्ट-रज, और गर्भ स्थिति की शक्ति क्षीणता को नष्ट करता है। अतः धातु सम्बन्धी, वयः स्थापन, गर्भधारण और स्मृति संवर्धन के लिए बहुत ही उपयोगी वनौषधि है। इसमें सबसे आश्चर्य की बात तो यह है कि अशगन्ध के सम्मिश्रित योग या केवल अशगन्ध का प्रयोग, उन रोगियों पर प्रयोग करके देखा गया है, जिनके मनमें प्रायः संगमेच्छा का ही उद्वेग होता रहता था और दूसरे की ध्वजभंगके कारण संगमकी तरफ ध्यान नहीं जाता था। वैसी परिस्थिति में अशगन्ध के प्रयोग से अति-संगमेच्छा की शान्ति और वल-वर्द्धन हुआ, दूसरे को प्रसंगेच्छा हुई। यह इसकी सबसे प्रधान विशेषताओंमें एक है। इससे यह निश्चित हुआ कि अतिका समीकरण और अभाव की पूर्ति करना अशगन्ध का सर्वश्रेष्ठ गुण है।

नोट—अशगन्ध के बीज शरीर में नशीला प्रभाव उत्पन्न करते है। इसकी मात्रा केवल २ रत्ती है। उस समय हृदयावसाद, और पसीने का आना और माथे में चक्कर आना प्रारम्भ हो जाता है। उसकी चिकित्सा वमन कराना ही सर्वश्रेष्ठ है।

रोगानुसार व्यवहार

वातिक वेदना—आधा तोला अशगन्ध चार छटांक पानी में भीगने दें या ६ छटांक पानी डाल कर तुरन्त उसको उबालें। और पश्चात् डेढ़ छटांक पानी शेष रहै तो उतार कर छान लें। शीतल होने पर एक तोला मधु मिलाकर पीयें। इस प्रकार प्रातः सायं पीना चाहिये। इससे सर्वाङ्ग दर्द सन्धि स्थानों का शोथ पृष्ठवंशका दर्द और शिरः शोथ में भी विशेष लाभ करता है। क्योंकि यह मूत्रल भी है।

सभी वात रोगोंमें—अशगन्ध आधा तोला और रास्ना आधा तोला दोनोंको दरदरा कूटकर एक पाव पानी में उबालकर शेष एक छटांक काढ़ा उतार लें। एक माशा सोंठ का चूर्ण ऊपर से छिड़क-कर पीयें। यह एक मात्रा केवल प्रातःकाल की है शामको भी इसी तरह बनाकर पीना चाहिए। इसके सेवनसे गले, बोली, सिर, नसों, घुटनों, मांस पेशियों, ग्रीवा, स्नायु मण्डल सिराओं, की जकड़ाहट नष्ट हो जाती है। अतः पक्षाघात, गठिया गृधसी और वातजन्य रोगोंमें भी विशेष लाभ करता है। कब्जियत रहनेपर इसी काढ़े में रेड़ी तेल शुद्ध (Pure) दो तोला मिला कर पीना चाहिए।

नपुंसकता—अशगन्ध ५ तोला को एक पाव बकरी के दूधमें शिलापर पीसना चाहिये। बाद में आधा पाव तिल तैल अच्छी तरह गर्म करके कड़ाही चूल्हे पर से उतार लें और दूध में पीसा हुआ अशगन्ध का कल्क (चटनी) धीरे धीरे तैल में गिरावें। जब सभी चटनी तैलमें गिर जाय तो पुनः चूल्हे पर तैल की कड़ाही चढ़ायें और आंच थोड़ी तेज कर दें। जब तेल पक जाय याने तेलमें दिया हुआ कल्क (चटनी) जल जाय तो पुनः तेल उतार कर छान लें। एक आना भर कस्तूरी घिस कर मिला लें। यह एक उत्तम तिला लगाने के लिये एवं खाने के लिए उत्तम रसायन है। खाने की मात्रा १५ बून्द तैल दो पानके पत्ते में लपेट कर प्रातः सायं खाना चाहिए। रात में सोते समय १५ बून्द तैल लेकर शिश्नेन्द्रिय (Penis) पर मालिस करके पानका पत्ता थोड़ा गर्म करके बांध लें और सो जाय, भोजनमें साधारण दूध पीना अति लाभदायक है इसके लगातार ४० दिन तक सेवन से स्वप्नदोषजन्य आघातजन्य प्रसंगज किसी तरह की नपुंसकता (नामर्दी) हो गयीहो तो ठीक हो जाती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। धातु स्राव और नसों की कमजोरी में अधिक लाभदायक है।

वीर्यस्राव—अशगन्ध ५ तोला, विधारा ५ तोला दोनोंका महीन चूर्ण कर कपड़छान करके एक शीशी में रख लें। प्रातः सायं भोजन नास्ता के पूर्व ही एक एक चम्मच खाकर दूध या पानी पीना चाहिये, इस चूर्ण के सेवनसे कमजोरी सर्वांगिक, कमजोरी, नित्य संभोगोत्तर कालकी कमजोरी स्वप्न-दोष, धातुस्राव, व अति उत्तेजना, मानसिक शिथिलता स्मरण शक्तिकी कमी तथा हस्तमैथुन जन्य युवकोंके दोष सरलता के साथ नष्ट हो जाते है। तथा सेवन करने वाले कान्तिवान् एवं मेधावी होते हैं। बवासीरः—केवल अशगन्ध का चूर्ण बना कर शीशी में रख लेना चाहिए। एक चम्मच (चाय के चम्मचसे) खाकर गर्म जल प्रातः सायं, और रात को सोनेके समय खानेसे रक्तार्श (खूनी बवासीर) वातार्श (वादी मस्से का बवासीर) और मलाशय की कमजोरी एवं तत्स्थानजन्य वेदना नष्ट हो जाती है। बवासीर का रोगी मजबूत हो जाता है। मस्सेवाले बवासीर में अशगन्ध का चूर्ण गुदा मार्गमें लगानेसे मस्से सूख जाते हैं।

फेफड़ों के रोगमें—अशगन्ध चार तोला दालचीनी एक तोला, तीन तोला वंशलोचन, लेकर महीन कपड़छान कर चूर्ण कर लेना, चाहिए। समयानुसार दूध मधु या केवल जलसे प्रातः दोपहर, सायं भोजन के पहले खाने से सर्दी; खांसी, फेफड़े के दर्द, श्वास और यक्ष्मा (पहली अवस्था) को नष्ट करता देता है। जिनको बराबर सर्दी लग जाया करती है उनके लिए तो यह अमृत की तरह लाभदायक है। मात्रा—१॥ माशा।

बुढ़ापा—अशगन्ध का चूर्ण एक चम्मच लगातार कुछ दिनों तक प्रातःकाल दूध में खाने से असमय का बाल पकना, शरीर या चेहरेपर की झुरियां मुंहमें कटिला (रूखड़ापन) हीन और आंखों की ज्योति हीनता नष्ट हो जाती हैं। किन्तु, ब्रह्मचर्य तीता, खट्टा, और गर्म चीजों से परहेज करना चाहिए।

जरायु विकार अशगन्ध ५ तोला अशोक छाल २ तोला इन दोनोंका महीन चूर्ण कपड़छान कर शीशीमें रख लें। एक चम्मच प्रातः सायं दूधसे खाना चाहिए। और अशगन्ध के काढ़े (अशगन्ध तीन तोला एक पाव जलमें उबालकर छान लेने से काढ़ा होता है) से जरायु को इससे धोना चाहिये इससे जरायु की स्थान च्युति, जरायु से श्वेत मवाद निकलना, जरायु शूल, डिम्बकोष प्रदाह, कष्टरज, योनिवात, योनिमें स्पर्शज्ञान की शून्यता, खाज, और गर्भाशयकी शिथिलता आदि रोग नष्ट हो जाते है। तथा गर्भाशय गर्भ धारक शक्ति से परिपूर्ण हो जाता है।

प्रदर—अशगन्ध ४ तोला, लोधपठानी २ तोला दोनों का महीन चूर्ण करके शीशी में रख लेना चाहिये। एक-एक चम्मच प्रातः सायं गर्म दूध या ताजा बकरी के दूध से खाना चाहिए इससे रक्त प्रदर श्वेत प्रदर, चीनी की दुर्गन्धि, सोमरोग और डिम्बकोष का दर्द तथा जरायु डिम्बकोष सम्बन्धित होनेवाले रोग, हिष्टीरिया, मनोविकार, चिन्ता, थकावट, और पेडूकी वेदनाएं नष्ट हो जाती है। इन रोगों के अलावे हृदय, मस्तिष्क, स्नायुमण्डल और मांसपेशीगत रोगों को नष्ट करने में अद्भुत सामर्थ्य रखता है। पक्वाशय, मलाशय, वृक्क और वस्ति पर भी सहसा क्रिया होनेके कारण उक्त स्थान जन्य रोगों को भी नष्ट करता है। अशगन्ध सबसे बढ़िया मिश्रित योग (कम्पौंड) बनता है। जो सभी रोगोंके लिए श्रेष्ठ योग साबित हुआ है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अशगन्ध पाक

अशगन्ध नागौरी २० तोला, सोंठ २० तोला, पीपल ५ तोला, काली मिरच २॥ तोला, दूध चार सेर, घी, दस छटांक, तज, तेजपात, नागकेशर, इलायची छोटी, लौंग, पिपरामूल, जायफल, सुगन्धवाला सफेद चन्दन, आंवला, मोथा, वंशलोचन, शतावर चित्रक मूल, आधा-आधा तोला मिसरी सवा सेर केशर, चौथाई तोला लेना चाहिए।

विधिः—अशगन्ध, सोंठ, पीपल और मिरच को अलग कपड़छन चूर्ण और तजमें चित्रकमूल तक के द्रव्यों का अलग कपड़छान कर चूर्ण करके रख लेना चाहिए। बादमें चार सेर दूध का खोवा बनाते हुए जब शेष रहें तो अशगन्ध वाला पहला चूर्ण दूध में डाल कर खोवा तैयार करे, जब खोवा तैयार हो जाय तो उक्त घी से उस खोवे को भूने, जब अच्छी तरह लाल होकर भूना जाय तो उसमें सभी दवाईयां मिलाकर रख लें। लड्डू की मात्रा एक छटांक की होनी चाहिए। केशरको गुलाब जलमें पीसकर चासनी में मिलानेके बाद अन्य दवाइयां मिलानी चाहिए। नित्य-प्रति एक लड्डू खाकर गर्म दूध मिश्री मिला हुआ पीना चाहिए। इससे समस्त वातिक वेदना, वातरोग, पक्षाघात, गठिया, बुढ़ापा, नपुंसकता, श्वास, खांसी कफजन्य अन्य विकार, पार्श्वशूल शिरःशूल, हृदयशूल, प्रमेह, अर्श अतिसार, ग्रहणी, निद्रानाश अरुचि, मन्दाग्नि और समस्त वात कफ जन्य रोग नष्ट हो जाते है, असमय में बाल पकना और बुढ़ापे की चुनौती के लिए स्वयं उनकी यह चुनौती है। पित्त प्रकृतिवाले आदमियोंको आधा लड्डू खाना चाहिए। इसी तरह अन्य रोगों में भी अवस्थानुसार, अशगन्ध के सेवनसे लाभ होता है।

नोटः—अशगन्ध, गर्भस्थापक धारक, पोषक और दुर्बलता नाशकोंमें श्रेष्ठ औषधि है।

आयुर्वेद का वैज्ञानिकत्व

राजवैद्य प्राणाचार्य कविराज डा० श्री प्रभाकर चट्टोपाध्याय आयुर्वेदबृहस्पति एम.ए. डी.एस.सी.

आधुनिक राष्ट्र के कर्णधारगण सोचते हैं कि आयुर्वेदीय चिकित्सा की कोई वैज्ञानिक भित्ति नहीं है। अतः आयुर्वेद के वैज्ञानिकत्व के विषय में इस स्थान पर कुछ आभास प्रदान करना अप्रासंगिक न होगा।

मनुष्यके जीवन काल का ही नाम आयु है। अक्षुण्ण रूप से दीर्घ और सुखमय जीवन प्राप्त करने के उपाय जिस शास्त्र में वर्णित है उन्हीं का नाम आयुर्वेद हैं। व्युत्पत्ति के अर्थ में विद् धातु का अर्थ होता है ज्ञान। आयु सम्बन्धी ज्ञान-विज्ञान जिस शास्त्र की सहायता से उपलब्ध किया जाय उसे ही आयुर्वेद कहते हैं। चरक ने कहा है :—

मनुष्य की आयु चार प्रकारकी होती है, यथा-हित आयु और अहित आयु, सुखमय आयु और दुखमय आयु। जो आयु संसारके हितकर कार्यों के लिये नियुक्त हो उसे हितकर या हित आयु कहते हैं। ठीक इसके विपरीत अहित आयु होती है एवं इसके भी विपरीत दशा को दुखमय आयु कहते हैं। मानव जिस प्रकार से सुखमय एवं हित आयु प्राप्त कर सके उसी का उपाय निर्धारण करने के लिये आयुर्वेद शास्त्र का आविर्भाव हुआ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुश्रुत ने कहा है :—आयुर्वेद का दो प्रयोजन है। यथा, स्वस्थ लोगों की स्वास्थ्य रक्षा करना एवं रोगग्रस्त होनेपर उसका प्रतीकार करना। इस प्रयोजन की सिद्धि के लिये सब प्रकार के उपाय आयुर्वेद शास्त्र में विस्तृत रूप से वर्णित हैं। चिकित्साभी

लेखक

दो प्रकार की कही जाती है—भेषजसाध्य और शस्त्रसाध्य। ऐसा होने से आयुर्वेद के दो प्रधान सम्प्रदायोंकी सृष्टि हुई। कायचिकित्सक सम्प्रदाय (School of Physicians) एवं शल्यचिकित्सक सम्प्रदाय (School of Surgeons)।

किन्तु सिर्फ स्वस्थ शरीर और दीर्घायु प्राप्त कर मानव सुखी नहीं हो सकता है। धर्म, अर्थ, समाज इत्यादि विविध विषयों के साथ भी मानव के सुख दुख का सम्बन्ध है। इसीलिये धर्मनीति, अर्थनीति, समाज नीति इत्यादि के सम्बन्ध में भी आयुर्वेदमें बहुमूल्य उपदेश पाये जाते हैं। अतः सिर्फ मनुष्य जातिकी स्वास्थ्य रक्षा और चिकित्सा ही आयुर्वेद शास्त्र का आलोच्य विषय नहीं हैं। भाषाहीन इतर प्राणि एवं स्थावर जीव वृक्ष लतादि के ऊपर भी आयुर्वेदके कर्णधारों की करुण वृष्टि हुई। इसी से अश्वायुर्वेद, गवायुर्वेद, गजायुर्वेद, वृक्षायुर्वेद, इत्यादि आयुर्वेद के उपांग समूहों की सृष्टि हुई। इन सब विषयों से शालिहोत्र संहिता, पालकाप्य संहिता इत्यादि प्राचीन ग्रन्थावली अभी भी मौजूद है।

अत्यन्त प्राचीन काल में ही आयुर्वेदीय चिकित्सा आठ अङ्गों में विभक्त हुई थी।

(१) शल्यतन्त्र या यन्त्र शस्त्र साध्य रोग निर्णय और चिकित्सा (Surgery and Mid wifery) (२) शालाक्यतन्त्र या चक्षु, कर्ण, नासा, कंठ इत्यादि ऊर्द्धजत्रुगत रोग-निर्णय और चिकित्सा (Practice of Medicine) (४) भूतविद्या या मानसिक रोग चिकित्सा (५) कौमारभृत्य या शिशु चिकित्सा (६) अगदतन्त्र या स्थावर जङ्गम सब प्रकार के विषों का ज्ञान और चिकित्सा (७) रसायनतन्त्र या ज्वर व्याधि पीड़ित जीर्ण शीर्ण लोगों की पुनः वयःस्थापन की चिकित्सा (८) वाजीकरणतन्त्र वां विवाहित जीवन में वीर्यक्षय प्रतिषेधक उपाय समूह एवं शुक्र क्षयके लोगोंकी चिकित्सा इन सब अङ्गोंमें शेषोक्त दो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सांगों की ओर चन्द दिन पहले पाश्चात्य चिकित्सकों ने दृष्टिपात किया है। यूरोप और अमेरिका में कुछ दिन पूर्व यह आविष्कार हुआ है कि मानव के लिये पुनर्यौवन प्राप्त करना असम्भव नहीं है।

विशेषज्ञ चिकित्सक

इस समय जिस प्रकार पाश्चात्य चिकित्सा के भिन्न-भिन्न अंगों से सम्बन्धित विशेषज्ञ चिकित्सक पाये जाते हैं, प्राचीन काल में भी उसी प्रकार आयुर्वेद के विशेषज्ञ चिकित्सक थे। वे लोग काय चिकित्सक (Phisician) शल्यतांत्रिक (Sugeon) शालाक्य चिकित्सक (Specialist in eye, ear, nose and throat diseases) अगद तांत्रिक या विष चिकित्सक (Foxicologist) इत्यादि नामोंसे सुपरिचित थे।

शिष्य निर्वाचन

प्राचीनकालमें शिष्यगण गुरुगृह में निवासकर चिकित्सा विषयक शिक्षा ग्रहण करते थे। गुरु शिष्य को उपनयन विधि के अनुसार कठोर नियमों से जांचकर एवं चुनावकर शिष्य ग्रहण करते थे। तीक्ष्ण मेधा शक्ति एवं सद् वंशजात छात्र न होनेसे उन्हें ग्रहण न किया जाता था गुरु और छात्र दोनों को अग्निको साक्षी कर अनेक प्रकार की प्रतिज्ञा करना पड़ता था। पश्चात् कठिन ब्रह्मचर्यादि नियमोंका पालन करते हुए गुरु की छत्र छायामें भृत्यकी भांति बहुत वर्ष तक गुरु सेवा एवं गुरुके समीप अध्ययन करतेथे। गुरु छात्रको ठीक अपने पुत्रवत् देखते थे एवं सर्वान्तःकरण से दीर्घ काल तक शिक्षा प्रदान करते थे। छात्र को गुरु के उपदेशानुसार सावयवच्छेद कर शरीर को जांच करना पड़ता था। शल्यतन्त्र शिक्षा के लिए चर्म, अलावू मृतपशु इत्यादि के ऊपर प्रायोगिक ज्ञान (Practical) की शिक्षा लेनी पड़ती थी। इसके सम्बन्ध में सुश्रुत में विस्तृत उपदेश पाया जाता है। इसके पश्चात् छात्र को द्रव्य परिचय, भेषज निर्माण, रोगी परीक्षा और चिकित्सा पद्धति इत्यादिकी शिक्षा दी जाती थी। अन्ततः सात वर्ष तक इसी प्रकार विना शिक्षा पाये कोई चिकित्सा नहीं कर सकता था। सुश्रुत ने कहा है :—

यस्तु केवल शास्त्रज्ञः कर्मस्वपरिनिष्ठितः।
स मुह्यत्यातुरं प्राप्य प्राप्य भीरुरिवाहवम्॥
यस्तु कर्मसु निष्णातो धाष्ट्र्याच्छास्त्रवहिष्कृतः।
स सत्सु पूजां नाप्नोतिवधं चार्हति राजतः॥
उभावेतावनिपुणावसमर्थौ स्वकर्म्मणि।
अर्द्धवेदधरावेतावेक पक्षाविविद्विजौ"।
"स्नेहादिष्वनभिज्ञा ये छेद्यादिषु च कर्मसु।
ते निघ्नन्ति जनं लोभात् कुवैद्या नृपदोषतः"।
यस्तूभयज्ञो मतिमान् स समर्थोऽर्थ साधने।
आहवे कर्म निर्वोढुं द्विचक्रः स्यन्दनोयथा।"

इसका भावार्थ यह है कि जो व्यक्ति सिर्फ शास्त्रज्ञ होता है और कर्माभ्यास (Practical Tarning) न करता हो वह कार्यमें अपटु समझा जाता है। वह रोगी के समीप जाकर युद्ध क्षेत्र में कापुरुष की तरह मोह को प्राप्त होता है। जो कार्य में पटु किन्तु शास्त्रज्ञान हीन होता है। वह केवल साहस के वशीभूत हो, चिकित्सा कार्य करता है वह राजा द्वारा प्राण दण्ड देने योग्य है। ये दोनों प्रकार के वैद्य अनिपुण और चिकित्सा के अयोग्य माने जाते हैं। ये एक डैनेवाले पक्षी की भांति अपने कार्यमें असमर्थ हैं? जो वैद्य स्नेह स्वेद, वस्ति, इत्यादि कार्य में एवं यन्त्र शस्त्र व्यवहार एवं कर्माभ्यास में अनभिज्ञ हैं वे राजदोष से मनुष्यको मार देते हैं। जो वैद्य शास्त्र एवं कर्म्माभ्यास दोनों में निपुण होते हैं वे वीर पुरुषकी तरह अनेकानेक जरा व्याधि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निवारण में युद्ध में रथ के दो पहिये के सदृश अपने कार्य सम्पादन करने में समर्थ होते हैं।

अध्ययन और अध्यापन के लिये तंत्र निर्वाचन बहुत प्रकार के आयुर्वेदीय तन्त्रों में कौन सा तन्त्र छात्र को अध्ययन करना है, यह पहले ही निश्चय कर लेना उचित है। कारण जनसमाज लोक में बहुत प्रकार से आयुर्वेदीय तन्त्र चिकित्सक गणों के लिए प्रचलित हैं। उसमें जो तन्त्र अधिकांश लोगों के लिए सेवित है, यशस्वी लोगों और धीर पुरुषों के व्यवहार योग्य है जो अर्थ बाहुल्य अर्थात् अल्पकालाध्ययन में सम्पूर्ण विद्या जनक एवं आप्त जनों से पूजित है। अर्थात् निर्दोष सिद्धान्त वचन-शाली जो त्रिविध शिष्य बुद्धि हित अर्थात् सर्वजनों के लिये बोधगम्य विषय है। जो पुनरुक्ति दोष रहित हो, जो ऋषि प्रणीत हो अर्थात् जिसके अध्ययन से धर्मादि फलप्रद, जिससे सूत्र का भाष्य और संग्रह के क्रम सुन्दर रूप से रचित हो जिसके अधिकरण अर्थात् परिच्छेद सुन्दर हो जिससे कोई नया शब्द प्रक्षिप्त न हो जिससे श्रुति कटु शब्द तवं उच्चारण और अभ्यास में कष्टप्रद न हो, आवृत्ति के द्वारा ही अनेक स्थलों में जिसका अर्थ बोध होता है जो सुश्रृंखलाबद्ध है। जिससे अर्थ निश्चय हो, जो संगतार्थ, जिसके प्रकरण वगैरह अमिश्रित हों जो श्रुतमात्र अर्थ बोध जनक हो एवं जिसमें लक्षण और उदाहरण हो वही तन्त्र अध्ययन करना उचित है। जिससे इस प्रकार का तन्त्र विमल सूर्य की भांति तमराशि का नाश कर सर्वत्र प्रकाशित करता है।

आचार्य निर्वाचन

तंत्र परीक्षान्तर आचार्य परीक्षा करना उचित है जो शास्त्रार्थ द्वारा यह निश्चय करते हैं जो सन्देह शून्य एवं दृष्टकर्मा दक्ष, अनुकूल स्वभाव शुचि, जित हस्त, उपकरणशाली सर्वेन्द्रियसम्पन्न, प्रकृतिज्ञ, प्रति प्रतिज्ञ, अविष्कृतविद्य, अनहंकृत असूयाशून्य, अंकोपन क्लेशक्षम शिष्यवत्सल अध्यापन में पटु, अर्थज्ञापनमें समर्थ हो, वे ही उपयुक्त आचार्य होते हैं जैसे आर्तव बादल शस्यगुण से सुक्षेत्र को शीघ्र ही उपजाऊ बना देता है उसी प्रकार उक्त गुणान्वित आचार्य अपने गुण से अच्छे शिष्यों को शीघ्र ही सम्पन्न कर देते हैं।

ज्ञानप्राप्ति के उपाय

ज्ञानवान् होनेसे अपने ज्ञान की अत्यन्त श्लाघा करना उचित नहीं है। आप्त व्यक्ति भी यदि आत्म श्लाघा करें तो उनकी आत्मश्लाघा से भी अनेक व्यक्ति विरक्त हो जाते हैं। क्योंकि आयुर्वेद शास्त्र की सीमा नहीं है अतः भिज्ञ व्यक्ति भी चिकित्सा के विषय में आत्मश्लाघा नहीं कर सकते हैं। अत-एव आत्मश्लाघा न करके अप्रमत्त रूप से इसी शास्त्र में अभिनिवेश करना उचित है। जो कुछ कहा गया है वह ही करना उचित है और उक्तरूप से प्रवृत्त दूसरे व्यक्ति के सौष्ठव की असूया न कर दूसरे के पास अथवा शिष्यके पास भी शिक्षा या उपदेश ग्रहण करना उचित है। क्यों कि सर्व जन बुद्धिमान लोगों के आचार्य और निर्बोध लोगों के शत्रु होते हैं।

कृत्स्नोहि लोको बुद्धिमतामाचार्यः।
शत्रुश्चाबुद्धिमताम्॥ च० सं० वि० स्था०।

अर्थात् जो बुद्धिमान हैं वे सबको आचार्य समझ कर उनसे सद्विषयों का उपदेश ग्रहण करते हैं और मूर्ख व्यक्तिगण मूर्खतावश सबको शत्रु समझकर किसीसे किसी प्रकार का उपदेश नहीं ग्रहण करते हैं। अत-एव बुद्धिमान लोगों को शत्रु के भी हितकर, यशकर आयुष्कर, पौष्टिक एवं लौकिक उपदेश पूर्ण वाक्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रवण करना और उसका प्रतिपालन करना उचित है।

भिषक्-भिषक् के साथ आयुर्वेदशास्त्र का वाद प्रतिवाद करें। कारण उस विद्या के सम्भाषण द्वारा अर्थात् समशास्त्र व्यवसायिद्वय के परस्पर शास्त्र विषयक वाद-प्रतिवाद द्वारा उन्हें उस शास्त्र में सर्व प्रकार से ज्ञान योग और सम्यक् हर्ष होता है। पांडित्य या प्रकाण्डता प्राप्त होती है और वाक्शक्ति विकसित होती है और यशकी वृद्धि होती है! पूर्व श्रुत अर्थात् अध्ययन काल में श्रुत अर्थ में कोई सन्देह हो तो पुनः श्रवणसे वह सन्देह दूर हो जाता है और पूर्व श्रुत में यदि कोई सन्देह नहीं हो तो भी उससे अधिकतर अध्यवसाय पैदा होता है। कोई अर्थ अश्रुत रहने से भी वह श्रोत्र विषय है। आचार्य सुश्रुसु शिष्य के सुश्रुषा क्रम से प्रसन्न होकर उसे जो गुह्य अभिमत अर्थ की शिक्षा दिये हैं, परस्पर वाद-प्रतिवाद करते करते अपने पांडित्य प्रकाशन द्वारा विजिज्ञासु होकर अत्यन्त हर्ष से उस समुदाय में कहते रहते हैं। इसी कारण से पण्डितगण तद्विद्य सम्भाषण का अत्यन्त प्रशंसा करते हैं।

पूर्वोक्त प्रकार से शास्त्राभ्यास और कर्माभ्यास करके राजा की आज्ञा प्राप्त कर प्राचीन कालके वैद्य गण क्रिचित्सा कार्यमें प्रवृत्त हो सकते थे। सुश्रुत ने कहा है।

"अधिगत तन्त्रेणोपासित तन्त्रार्थेन दृष्टकर्मणा कृतयोगेन शास्त्रम् निगदता राजानुज्ञातेन..... वन्धुभूतेन भूतानां सुसहायवता वैद्येन विशिखानु प्रवेष्टव्या :।

इस स्थान पर राजानुमोदन की कथा विशेषरूप से लक्षणीय है। राजानुमोदन न पानेसे कोईभी उस समय चिकित्सा कार्य नहीं कर सकते थे। इसी कारण प्रवाद है "कुवैद्या नृपदोषतः।„ कुवैद्यगणजो मनुष्यों का वध करते हैं वह राजाके ही दोष से होता है।

आचार्य चक्रपाणि ने कहा है—"निष्पन्नेन वैद्येन प्रजापालके राज्ञि आत्मा गुणतो दर्शनीयः, ततो राज्ञा परीक्ष्य वैद्यः प्रजारक्षार्थमनुमन्तव्यः एष धर्मः अनिष्पन्न वैद्यगुणश्चिकित्सां कुर्व्वाणो लोकोपकारकतया राज्ञा शासनीयः।"

अर्थात् विद्या और कर्माभ्यास समाप्त होने पर वैद्य प्रजापालक राजा के निकट अपनी कृतित्व का परिचय दें। अनन्तर राजा उनकी परीक्षा लेकर प्रजा रक्षार्थ चिकित्सा कार्य की अनुमति प्रदान करते थे। जो अनुत्तीर्ण किंवा अर्ध वैद्य होने से चिकित्सा के अयोग्य घोषित कर दिये जाते थे वे राजाज्ञा का उल्लंघन करनेवाले दण्डित होते थे।

डल्हणाचार्य ने भी ठीक इसी तरीके से सुश्रुत आलोचना में लिखा है—„राजा हि प्रतिपालन तत्परः तत्प्रमादात् वैद्य प्रतिरूपकाः राष्ट्रम् चरन्ति कन्टकभूता लोकस्य तस्माद् राज्ञा परीक्ष्य अनुज्ञा तेन विशिखाऽनुप्रवेष्टव्याः।

प्राचीनकालमें यह नियम था कि शरीर विद्या का ज्ञान न होने से चिकित्सा कार्य नहीं किया जा सकता था। यह शरीर विद्या का ज्ञान केवल शल्यतांत्रिकको ही नहीं सीखना पड़ता था वलिक काय-चिकित्सकको भी शरीर विद्या अवश्य सीखनी पड़ती थी। इसी से चरक ने कहा है :—

"शारीरं सर्वथा सर्वम् सर्वदा वेद यो भिषक्।
आयुर्वेदम् स कार्त्स्न्येन वेद लोक सुखं प्रदम्॥

अर्थात् जिन्होंने सब प्रकार की शरीर विद्या सीख लिया है एवं शरीर विद्या की कथा हमेशा बुद्धिगोचर है वे समस्त आयुर्वेदीय ज्ञान से सम्पन्न हैं।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"शरीरे चैव शास्त्रे च दृष्टार्थः स्याद् विशारदः।
दृष्टि स्रुताभ्यां सन्देह मवायोह्याचरेत क्रियाः॥

अर्थात् शरीर और शास्त्र दोनोको मिलाकर एवं देखकर शरीर विद्यामें निपुणता लाभ करे और इसी उपाय से निःसंशय ज्ञानार्जन कर चिकित्सा करनी चाहिये।"

सव्यवच्छेद की आवश्यकता से सम्बन्ध में सुश्रुत ने स्पष्ट भाषा में उपदेश दिया है :—

"शोधयित्वा मृतं सम्यक् दृष्टव्योह्यङ्ग विनिश्चयः अर्थात् "मृतदेह का सम्यक रूपसे शोधन कर शरीर वर्णित सब विषय का प्रत्यक्ष दर्शन करे।" क्रमशः

अभ्रकादि सत्व पातन

लेखकः—वैद्याचार्य उदयलाल महात्मा देवगढ़, (उदयपुर) राजस्थान

आयुर्वेद गौरवके पाठकों ने पिछले अङ्क में ताल शिला, संखिया सत्व पातन विधि अवलोकन की होगीं। हमारे रसायनाचार्यों ने काफी परिश्रम कर अनुसन्धान रत होकर सत्व और धातुओंकी द्रुतियें और रसायन विधियों से शरीर को जरा, व्याधि रहित बना कर सुवर्ण, रजत भी कृत्रिम तैयार कर लिये थे। जिसका वर्णन पाठकों ने सचित्र आयुर्वेद के पिछले अङ्कों में पूज्य ख्यालीराम जी द्विवेदी इंदौर के लेख द्वारा ज्ञात किया होगा। इसी तरह उत्तर प्रदेश के उपसंचालक दत्तात्रेय अनन्त कुलकर्णीजी का लेख भी सचित्र आयुर्वेद के पिछले अङ्कों में निकल चुका है कि पूज्य नारायण स्वामी सुवर्ण बनाने में सफल हुए हैं और अपनी सारी विधि राष्ट्र के हित में गांधी जयन्ती तथा नेहरू जयन्ती के आस पास प्रकट कर देंगे। जो सम्भवतया शीघ्र राष्ट्र के समक्ष आवेगी। रस ग्रन्थों में अभ्रक सत्व, भूनाग सत्व, विमलसत्व खर्परसत्व आदि पातन विधियों के उल्लेख हैं। इस अनुसंधान के युग में जब हम देख रहे हैं कि एम० बी० ६९३ एम०बी० ७६० आदि सैकड़ों ही निरन्तर परीक्षणोंके बाद याने सल्फापाथराइडिन ६९३ परीक्षणोंके पश्चात् और थिजामाइड ७६० परीक्षणोंके मिली है तो हमें इस युग में जहां थे उसने आगे न बढ़ते हुए उसको भी भूल जाना हमारे लिये लज्जाजनक है। उसका परिणाम भारत की जितनी भी प्रसिद्ध फार्मेसिये हैं उनकी सूची में कहीं भी इन सत्वों का उल्लेख नहीं मिलता है। साधन सम्पन्न आयुर्वेद औषधि-निर्माण कार्यालयोंको इधर ध्यान देना चाहिये।

उन रसायन शास्त्रियोंसे भी प्रार्थना है कि निम्न लिखित सत्व पातन विधियां जो रस तरङ्गिणी ग्रन्थ में उल्लिखित है उनका जिस प्रकार आपने प्रत्यक्षीकरण किया है कृपया स्पष्ट तौर से पूर्णतया विधि युक्त समझाते हुए आयुर्वेद गौरव के अगले अङ्कों में प्रकाश डालनेका कष्ट करावें जिससे पुनः वैद्यसमाज में सत्वों के प्रयोगों का चिकित्सा में प्रचलन हो। मैं विशेषतौर से रसशाला हिन्दू विश्वविद्यालय बनारस के अध्यक्ष जी से प्रार्थना करूंगा कि सत्व पातन सम्बन्धी अपना परीक्षण वैद्य समाज को देकर आभारी करें।

अभ्रक सत्व के गुण :—

अभ्रसत्वं सुशिशिरं मधुरं रुचिरं परम्।
सुस्निग्धं केश्यमायुष्यं त्रिदोषघ्नं रसायनम्॥

प्रौढाङ्गनामदविचूर्णन चारुदक्षः सिंहोपमप्रचुर पुत्रवृत्तः सुवृत्तः। लावण्यपरिपूरित वक्त्रचन्द्रो जीवेच्छतञ्च शरदां घनसत्वसेवी॥

मृताभ्रसत्वादपरं भैषज्यं नास्ति पुष्टिदम्।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेषात् पुंस्त्वजननं वयसः स्थापनन्तथा।
नास्त्यनेन समं लोके निर्विकारं गुणोत्तमम्॥
त्रिदोषघ्नञ्च भैषज्यं त्वन्यद् भैषज्य मण्डले॥

अभ्रक सत्वभस्म अतिशीत वीर्य, मधुर रस और रुचिकारक, स्निग्ध बालों के लिए लाभदायक आयुवर्धक, त्रिदोषनाशक रसायन है। इसको विधि पूर्वक कुछ दिन सेवन किया जाय तो सौ वर्ष की आयु हो जाती है। अभ्रक सत्व भस्म के समान शरीर पोषक विशेष रूपसे नपुंसकता हर और आयु स्थापक कोई औषधि नहीं है। इसके गुणों के देखने से ज्ञात होता है कि संसार में इस सत्व भस्म के समान निर्विकार अत्यधिक गुण और त्रिदोष प्रकोप नाशक कोई औषधि नहीं है।

अभ्रक सत्व निर्माण विधि—(र० त० पृ० २३८) सुहागा, गुग्गुल, गुड़, राल, ऊन, लाख तिल की खलि और छोटी मछली को छाग दुग्ध के साथ अभ्रकको पीसकर छोटे २ गोले बनालें अब इनको मूषा में भरकर भट्ठीमें रख कर तीव्र अग्नि से तपायें तो शीघ्र ही सत्व निकल आता है।

अभ्रक सत्व भस्म

उक्त विधिसे शुद्ध अभ्रक सत्व एक भाग, और पारद गंधक की समभाग कज्जली आधा भाग लेकर दोनों को एकत्र मर्दन करके कपड़ मिट्टी की हुई आतिशी शीशी में भर कर बालुका यंत्रमें पकावे तो इसकी शीघ्र ही भस्म हो जाती है।

(रस० त० पृ० २४०)

भूनाग सत्व पातन विधि :--

वर्षा ऋतु में प्रायः जमीन पर निकलनेवाले केचुओं को लेकर साफ करके धूप में सुखा लें। (गुरु कुल अलंकार फार्मेसी पो० बस्ती गुंजा, जालंधर, से मंगवाने पर जितने भी प्राणिज भैषजीय द्रव्य है प्राप्त हो जाते हैं।) अब इनमें मकड़ीका जाला गुगल, गुड, सुहागा, लाख, शुष्क मछलियों का चूर्ण और तिलकी खली इन सबको पृथक २ केचुओं के बराबर मिलाकर अच्छी तरह मर्दन करके एक दृढ़ मूषा में रखकर तीव्र अग्नि से तपायें तो इसमें से ताम्र के सदृश सत्व शीघ्र ही पृथक् हो जाता है।

(रस० त पृ० ४३३)

स्वर्णमाक्षिक सत्व निर्माण विधिः--

पहले शुद्ध स्वर्णमाक्षिक चूर्ण और शुद्ध गन्धक चूर्ण दोनों को एकत्र समभागमें लेकर कड़ाहीमें डाल कर बारह घण्टे तक चूल्हे पर पकायें। शीतल होने पर स्वर्णमाक्षिक चूर्ण को निकालकर उसमें स्वर्ण माक्षिक से आधा भाग गन्धक तथा आधा भाग भूना सुहागा चूर्ण मिलाकर इसको अन्ध मूषामें बन्द करके इस मूषा को कोष्ठी में रखें, धौंकनी या पंखे से तपायें तो शीघ्र ताम्र सदृश माक्षिक सत्व निकल आता है।

रौप्यमाक्षिक सत्व विधिः--

शुद्ध विमल माक्षिक से चतुर्थांश सुहागा चूर्ण मिला बड़हल के स्वरस से मर्दन कर मूषा में भर लें। अब इस मूषाको कोष्ठी में तीव्र अग्नि से तपायें तो शीशे के सदृश सत्व पातन होता है।

तुत्थ सत्व पातन विधिः--

१० तोला अच्छी तरह शुद्ध किया हुआ तूतिया १० तोला शुद्ध सुहागा लेकर दोनों को एकत्र खरल में निम्बू रस से खूब मर्दन कर सुखा लें अब इसको अन्धमूषा में रखकर कोयलोंकी अग्नि में तपायें तो शीघ्र ही ताम्र धातु रूप सत्व का पातन होता है।

(र० त० पृ० ५५८)

खर्पर सत्व पातन विधि :--

शुद्ध खर्पर चूर्ण में लाख, हरीतकी, हरिद्रा, अलसी गुड राल तथा सुहागा चूर्ण मिला घोंटें। जब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खूब बारीक हो जाय तो इसको गो दुग्ध तथा गो घृत में मिलाकर अग्नि में पकालें। जब यह गोला सा हो जायं तो इसे तीव्र धूप में सुखा लें। और इस गोलक को वृत्तान्तक आकार मूषा में रखकर तीव्र अग्नि से तपायें। जब खर्पर पिघलने को होता है तो अग्नि की ज्वाला नीले वर्ण की होने लगती है और जब पिघल जाता है तो अग्नि की ज्वाला सफेद वर्ण की हो जाती है। इस अग्नि परीक्षा से जब खर्पर का पिघलना निश्चित हो जाय तो इस इस (खर्पर मूषा) को जमीन में बनाये हुए एक छोटे से गढ़े में उलट दें! इस विधि से यशद के सदृश वर्ण तथा भारयुक्त स्वच्छ खर्पर सत्व निकल आता है। खर्पर सत्व यशद ही होता है क्योंकि खर्पर यशद धातु का ही Oxide है।

गूलर की उपयोगिता

लेखक—वैद्य खेमराजशर्मा छांगणी आर्वी (वर्धा) म० प्र०

नाम—संस्कृत, औदुम्बर, उदुम्बर, जन्तुफल, क्षीरवृक्ष, यज्ञाङ्ग, हेमदुग्धक आदि। हिन्दी—गूलर ऊमर, परोआ। बंगाली—यज्ञडूमर, जगनोडुबर। गुजराती—उबरोया उबरणे, उमरो। मराठी—ऊंबर गूलर,। पन्जाबी—ददुरी, काकमाल। कर्नाटकी एवं मलयालम—अत्ति। तेलन्गी—अत्तिभानु एवं वाडु-तामिली—अङ्किमारा,। अरबी—जनीज़ा। फ़ारसी-अञ्जीरेअदव,। समरेपश्या। अङ्गरेजी–Kig Tree अथवाCluser Fig लैटिन– Ficus Glomirate कहते हैं।

वर्णन—यह सर्वविदित २० से ५० फुट तक की ऊचाई का बड़ पीपल सदृश वृक्ष है। इसके पत्ते महुआ अथवा बड़ के सदृश कुछ लघु आकारके होते हैं। फल अञ्जीर सदृश होते हैं जिनमें अत्यधिक कोमलता रहती है क्योंकि फल के ऊपर की त्वचा एकदम बारीक झिल्ली के रूप में श्वेत एवं रक्त वर्ण की होती है। उसमें अञ्जीर के समान कई बारीक बारीक खसखसके दानोंकी तरह बीज होते हैं, तथा असंख्यों कृमियाँ भी पायी जाती है। फल खाने में मधुर होने के कारण बच्चे बड़े सभी खाते हैं। कई जगह इसको देशी अञ्जीर "Indian Fig" ही संज्ञा दी गई है। कच्चे गूलर जो छोटे छोटे एवं कोमल हों तब इसका शाक भी बनाकर खाया जाता है किन्तु इसके पूर्व कृमि रहित कर लेना परमावश्यक है। गूलर की छाल श्वेतवर्ण जिसमें लाल धब्बे रहते हैं तोड़ने पर प्रायः रक्त वर्ण की ही रहती हैं। ऐसे तो प्रायः सभी प्रान्तों में गूलर पाया जाता है, परन्तु बंगाल में बहुतायत से गूलर देखने को मिलता है। गूलर का वृक्ष अधिक वृद्ध होने पर उसमें से एक प्रकार का गोंद भी निकलता है।

औषधोपयोग में आवश्यक अङ्ग :—

गूलर के फूलके विषयमें बड़ा ही मतभेद माना जाता है। कई लोगों की धारणा है कि गूलर में फूल होता ही नहीं, यदि होता भी है तो वह रात्रिके समय फूलता है, जिसको देवतागण ही उपयोग में ले सकते हैं अन्य साधारण व्यक्ति की सामर्थ्य नहीं कि वह इसके फूलों का दर्शन भी कर सके। जिन्हें इसका सौभाग्य प्राप्त हुआ है उसके कुछ उदाहरण और गूलर की जानकारी "श्री चन्द्रशेखर धर मिश्रकृत,, "गूलर गुण विकाश" नामक ग्रन्थ में अच्छी प्रकार देखने को मिलती है। उनका दावा है कि सम्पूर्ण रोग प्रायः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसके द्वारा शमन कियेजा सकते हैं। ..... गूलर के फूल के सम्बन्ध में एक मत ऐसा भी पाया जाता है कि अश्वत्थवर्गके अन्य वृक्षों की तरह गूलर के भी अति सूक्ष्म फूल एक कोष के भीतर बन्द होते हैं। जिन्हें अन्मुख कहा जा सकता हैं। फलों में पाये जानेवाले बारीक बारीक बीज उपलब्ध होते हैं उन्हीं को वर्तमान उद्भिदविद्या के वैज्ञानिक फूल कहते हैं।..... (बनौषधि) इसकी त्वचा, जड़, दूध आदि सम्पूर्ण अङ्गही बहुतायत से उपयोगमें लाये जाते हैं।

विशेषता—जबकि सुविधा के हेतु यदि किसी को कुंआं आदि खोदने कीं आवश्यकता पड़े तो गूलर वृक्ष के नीचे, दाहिनी तरफ अथवा उसके इर्द गिर्द निकट हीं जल बड़ी सुगमता से निकल आता है और स्वास्थ्य के लिये उत्तम होता है। यह तो निश्चित ही है कि गूलर वृक्षके आसपास जलश्रोत झरना आदि अवश्य होता है। इस सम्बन्ध में भी गूलर के दो प्रकार यथा 'नद्युदुम्बर,' जो नदी के निकट पैदा होता है। यह गुणों में समान किन्तु रस वीर्य विपाकमें किञ्चित् न्यूनगुण युक्त होता है इसके पत्ते, फल, लघु आकार के एवं स्वयं पौधा भी गूलर से छोटा होता है। दूसरा काकोदुम्बरिका इसके पत्ते गूलर वृक्ष के पत्तो से कुछ बड़े होते हैं जिनसे दूधभी निकलता है। इसके पत्तों के स्पर्श से खुजली प्रतीत होने लगती है। इस गूलर को बोलचाल की भाषा में 'कठूमर, कहते हैं। प्रथम "नद्युदुम्बर" के गुण प्रायः गूलर के गुण के अनुसार ही पाये जाते हैं। जिनका उल्लेख आगे किया गया है। द्वितीय काकोदुम्बरिका के गुण शीतल, मदकर, तीक्ष्ण, त्वचा रोग एवं रक्तपित्तनाशक है। इसकी छाल अतिसारमें लाभदायक है इसके फल की त्वचा शीतल कषैली गर्भ के लिये पुष्टिकारक दुग्धवर्द्धक एवं व्रण नाशक है तथा मलस्तन्भक एवं कफ, पित्त, व्रण श्वेतकुष्ठ, कामला, पाण्डु इनको नष्ट करती है। इसके फल तृप्तिकारक, ग्राही मलावष्टंभक एवं दाह-नाशक है इसी प्रकार धातुवर्द्धक एवं त्रिदोष, एवं रक्तविकार नाशक है।

लेखके लेखक

गूलर वृक्ष की 'कल्पवृक्ष' से तुलना इस पृथ्वीतल के लिये की जा सकती है जिस प्रकार कल्पवृक्ष की छायामात्र से इच्छित वस्तु प्राप्त हो जाती है उसी प्रकार रोगरूपी जंजाल से मुक्त होने के लिये गूलर ईश्वर की अनुपम देन है, अधिक नहीं तो ६० प्रतिशत रोग इसके द्वारा दूर किये जा सकते हैं, इसके अनुसंधानार्थ जितना हो सके किया जाना चाहिये वह कभी निष्फल नहीं होता। सर्व साधारणके लिये गूलर प्रायः सभी जगह उपलब्ध है अतः क्यों नहीं जनता इस ओर आकर्षित होती यह हमारी अज्ञानता का द्योतक है। जहाँ बड़ी बड़ी औषधियां इन्जेक्शन असफल हो जावें वहाँ इसके प्रयोग की परमावश्यकता है।

गुण—गूलर शीतल, रुक्ष भारी, मधुर, कषैला, वर्ण कारक है। गर्भस्थापक, व्रण रोपणार्थ, अस्थि सन्धानक गुण भी यथेष्ट प्रमाण में होते हैं। यह कषैला रूक्ष होने के कारण कफ को हटाता है। मधुर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवं शीतल होने के कारण पित्त एवं रुधिर के विकारों में लाभकारी है। अतिसार एवं योनि रोगों के लाभकारी है।

गूलर की छाल-अतिशीतल, कषैली, व्रण नाशक एवं दुग्धवर्द्धक है तथा गर्भ को पुष्ट करती है। इसके वृक्ष की लकड़ी बहुत मजबूत एवं चिकनी होती है। इसको जलाकर बनाई राख उपदंश, फोड़े फुन्सी में वाह्योपचारार्थ व्यवहृत की जाती है।

गूलर का दूध—बच्चोंकी नाना भांति की व्याधियाँ यथा, कफ ज्वर, श्वसनक ज्वर, स्त्रियों के स्तन विकार यथा—गूलरका दूध उदर में प्रवेश कर स्त्री की उन स्तन ग्रन्थियों (Glands) को जो श्लेष्म एवं पित्त प्रकोप के कारण कड़ी एवं शुष्क हो जाती है उन्हें पुष्ट एवं स्निग्ध कर देता है। कफके कोप के कारण स्तन की ग्रन्थियों में दूध गाढ़ा करता है। साथ ही साथ अपनी अन्तर्निहित दुग्ध की पोषण शक्ति द्वारा दुग्ध उत्पन्न करने में भी सहायता पहुंचाता है। उसी प्रकार पित्त की उष्मा से स्तनों में दूध सूख जाता है, गूलर की त्वचा अपनी शीतलता द्वारा वहां शांति पहुंचाकर दूध का प्रवाह पुनः यथावत् कर देता है।

गर्भरक्षा करना—कुछ स्त्रियों को गर्भस्थापना हो चुकने पर भी उनकी जरायु में रोकने की शक्ति ही नहीं होती मास दो मास पश्चात् जब गर्भ में वृद्धि होती है, तब उसका श्राव हो जाता है। इसके कई एक कारणों में एक मुख्य हेतु पित्त एवं रक्त का प्रकुपित होना है। यह सर्व विदित है कि गर्भ स्थापना के बाद मासिक धर्म स्वाभाविक ही बन्द हो जाता है, यही रक्त जब प्रकुपित होता है तब गर्भ रहने के बाद भी अपनी उष्णताके कारण श्रवित होता रहता है और इसी श्राव के साथ कभी २ गर्भ भी श्रवित हो जाता है। गूलर का प्रधान गुण यह है कि वह रक्त को शुद्ध करता एवं पित्त को शांत रखता है रुक्षता का गुण होने के कारण रक्त की उष्णता न्यून हो चुकने पर रक्त अधोगामी न होकर ऊपर की ओर ही रहता है जिससे गर्भ स्थापन समुचित होता है एवं फल का चूर्ण सेवन करनेसे रक्तस्राव नहीं होता व गर्भ स्थिर रहता है।

गूलर के फल—इसके कोमल फल स्तम्भक, कषैले रक्त विकार नाशक एवं तृषा पित्त एवं कफ को नष्ट करते हैं। मध्यम गूलर फल शीतल, रुचिकारक, कषैले, फीकापन लिये हुए तथा पित्त, तृषा मोह उत्पन्न करते हैं। उनका प्रयोग वमन, रक्तस्राव, प्रदर एवं उदर विकारों में लाभकारी सिद्ध हुआ है पूर्णरूपेण पके हुए गूलर के फल—मधुर कषैले, कृमि उत्पादक, अतिशीतल, रुचिकारक, कफ कारक, रुधिर विकार, पित्त, उष्णता, तृषा भूख, श्रम, प्रमेह एवं मूर्च्छानाशक हैं। स्वादमें कुछ अम्ल दीपन मांस वर्द्धक तथा दोष जनक होते हैं।

गूलर में कषायिन (Tannin) मोम कामचूक (Caocutcheoac) तथा फास्फोटिक एसिड यह रासायनिक दृष्टि से पाया जाता है।

गूलरके उपयोगी अंगोंका संक्षिप्त प्रयोग

ऐसे तो गूलर के गुणों पर लिखना हमारी सामर्थ्य के परे की बात है, किन्तु सर्व साधारण की जानकारी के हेतु यह संग्रह पाठकों की सेवा में प्रस्तुत है; आशा है इससे लाभ उठावेंगे। विस्तार पूर्वक लिखने पर तो पृथक् एक ग्रन्थ ही तैयार हो सकता है। अतः कुछ व्याधियों पर प्रकाश डाला जाता है।

गूलर की जड़ का प्रयोग—इसका प्रयोग अतिसार, आमातिसार में किया जाता है, इसके लिये जड़ का चूर्ण एवं सौंफ सम भाग मिलाकर ३ माशा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तक सेवन करावें। इसकी जड़ का रस शीतल, स्तम्भक एवं बलवर्द्धक है तथा रक्तस्राव में भी लाभ कारी है। उष्णवात (सूजाक) व मूत्रकृच्छ्र में गुण-कारी है। इसकी जड़ का रस निकालने के लिए जड़ में एक गड्ढा करके कोई एक जड़ काटकर उसका छोर एक घड़े में रख दें; जिससे बूंद बूंद रस शनैः शनैः घड़े में जमा होता जावेगा इसको 'मद' कहा जाता है इसकी मात्रा आधा से ४ तोला तक है। इसी प्रकार गूलर की जड़, चौलाईकी जड़ कमल की जड़ एवं दूर्वा की जड़ ये चारों ३-३ माशा लेकर पीसकर चावल के धोवन के साथ लेने से लाभ होता है। (वैद्य)

गूलर की जड़ में से निकाला हुआ मद रक्तार्श में लाभकारी है, इसी प्रकार बहुमूत्र एवं अन्य मूत्र सम्बन्धी विकारों को भी शमन करता है। मात्रा ऊपर लिख चुके हैं। बाह्योपचारार्थ इसको किसी भी ग्रन्थि, फोड़ों पर भी लगाते हैं।

गूलर की छाल—के संकोचक गुरु अत्यधिक होने से इसका मुख्य उपयोग अत्यार्तव या अनियमित रजःस्राव, रक्त प्रदर में अति लाभकारी है इसी प्रकार श्वेतकुष्ठ अथवा गलितकुष्ठ के रोगी को अनुपान रूप से, गूलर की छाल के चूर्ण से यदि किसी औषधि की व्यवस्था की जाय तो जहां तक मेरा अनुभव है शीघ्र लाभ होता है। फोड़े, फुन्सी, जहरीले घाव इत्यादि धोने के लिये गूलर त्वक् का क्वाथ महान हितकारी है। इसी क्वाथ के कुल्ले करानेसे मुख रोग (दांतों के विकार) श्लेष्मज व्याधियां, रक्त निष्ठीवन आदि में लाभ होता है। जानवरों की महामारी अथवा कई एक व्याधियों में इसकी छालका प्रयोग सफलता पूर्वक किया जाता है। विषनिवारणार्थ भी कहीं कहीं इसको काम में लेते हैं। ऊपर की त्वचा के बजाय कई व्याधियों में आन्तरिक छाल कहीं ज्यादा गुण-कारी होतीं हैं यथा शरीरके किसी भी भाग से रक्त-स्रावको बन्द करनेके हेतु एवं गर्भपात निवारणार्थ इसको सिद्धौषध समझना चाहिए यह निरापद है।

पत्ते—गूलर के पत्तों में पित्तकारक गुण अव-स्थित हैं अतः उससे उत्पन्न व्याधियों तथा शुष्क कास में हितकारी है। एवं गूलर के सूखे हुए पत्ते सम भाग पीसकर मधु के साथ सेवन करावें।

प्रदर—गूलर का प्रयोग प्रायः 'रक्त प्रदर' (जिसको सुश्रुताचार्य जी ने असृग्दर संज्ञा दी है) में अधिक लाभदायक सिद्ध हुआ है। रक्त प्रदर में पित्त कुपित अवश्यम्भावी है, और इसी हेतु रक्त में भी विकार उत्पन्न हो जाता है, जिससे रक्त प्रदर में पित्त प्रकुपित हुए को शांत करने के लिये गूलर फल का चूर्ण मिश्री के साथ योग्य मात्रा में आधा से एक तोला तक लेने से तत्काल लाभ प्रतीत होता है यदि श्वेत प्रदर हो तो मिश्री के स्थान पर मधु के साथ सेवन करने पर आराम होता है।

रक्तपित्त—यह व्याधि भी रक्त के दूषित होने से होती है, जब रक्त में उष्णता बढ़ जाती है तबरक्त शरीर में न रुककर बाहर निकलने लगता है, इस व्याधि में गूलर, बड़, एवं पीपल के पेड़ के अंकुर १ सेर लेकर सोलहगुने जल में डाल कर पकावें, जब चौथाई जल शेष रहे तब इसमें १ सेर घी डालकर पकावें केवल घृतमात्र रहें रहे छानकर शीतल होनेपर इसका आधा भाग मिश्री एवं चौथा भाग मधु मिला कर योग्य मात्रा में सेवन करे तो शीघ्र ही प्रत्येक व्याधिका शमन हो।

वीर्यश्राव—गूलर का कार्य वीर्य में गाढ़ापन लाना है, जिस प्रकार स्त्रियों के उदर में जाकर वह रक्तको गाढ़ा एवं शोधन कार्य करता है उसी प्रकार पुरुषोंके दूषित रक्त को शुद्ध करके उसकी अना-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वश्यक उष्मा को जिसके कारण वीर्य में पतलापन आ जाता है, दूर करके वीर्य को गाढ़ा करता है। गूलरका दूध वीर्यवर्द्धक भी हैं। किन्तु इसका मुख्य गुण उसे गाढ़ा बनाने का है, अन्य बाजीकारण औषधियों की तरह इसमें कामोत्तेजक गुण नहीं के बराबर है क्योंकि यह स्वभाव से ही शीतल है और कामोत्तेजक गुण उसी द्रव्य में पाये जाते हैं जो उष्ण एवं वीर्यवर्धक हो यथा असगन्ध। इस अवस्था में गूलर का सेवन इस प्रकार किया जावे तो अच्छा गुण मिलता है। गूलर वृक्षकी त्वचा ३ माशा बड़ के वृक्ष की कोंपल ३ माशा मिश्री ६ माशा इनको सिल पर पीसकर लुगदी बनाकर एवं २ या ३ बार मुख में रखकर खा लेवें ऊपर से १ पाव गो दूध पीवें इसके एक मास या अधिक दिन तक सेवन से वीर्य वृद्धि एवं अन्य गुण प्राप्त हों। (२) गूलर की त्वचा, गोंद, ढाक की त्वचा एवं गोंद सेमल का मूसल एवं गोंद, मौलसरी की छाल, भूने हुए चने तथा बबूल का गोंद प्रत्येक ३-३ तोला होकर कूट पीसकर छान लें। मात्रा ४ से ६ माशा तक अनुपान मिश्री मिला गो दूध।

प्रमेह पीडिका—जब प्रमेह अत्यधिक बढ़ जाता है तब संधियों मर्म स्थानों एवं अधिक मांसल स्थानों में पीड़िकायें उत्पन्न होती है, इन पीड़िकाओं के पकने पर जब घाव हो जाता है तब उसे स्वच्छ धोकर (नीम, शुभ्रा आदि के जल से) गूलर का दूध लगावें। इसी प्रकार नासूर, जहरबाद आदि में गूलर का दूध मक्खनमें मिलाकर लगाने से लाभ होता है।

पारद भस्म—पारद शुद्ध लेकर गूलर के दूध में खरल करमे गोला बनाकर मूषा में रखकर ऊपर से दूसरी मूषा रखकर मजबूत सन्धि बन्द करके शुष्क ३-४ सेर कण्डों में फूँक दें भस्म हो जायगी।

गूलर का दूध—इसको प्राप्त करनेके लिये सूर्योदय से पहले जाग कर किसी तेज चाकू या छूरी से गूलर वृक्ष को छेदना चाहिये, तब शनैः शनैः एक एक बूंद रस टपकता है। जिसे सावधानी पूर्वक किसी छोटी कटोरी आदि में संग्रह करें, यह दूध वैसे तो कई व्याधियों में हितकारी है किन्तु बच्चों की विमारियां यथा कृमि, ज्वर, कफ प्रकोप (पसली चलना जिसे डब्बा रोग या Broncho Pnemomi कहते हैं) कास, अशक्ति, सूखा रोग (अस्थिमार्दव Rickets) अतिसार, रक्त विकार दुग्धजन्य व्याधियों में अतीव लाभकारी है। उदरमें सेवन करने के लिये १ से ५ बूंद तक गो दुग्ध या माता के दूध मधु आदि के साथ तथा छाती एवं कनपटियों पर लेप कराना ये दोनों क्रियायें करनी चाहिये मनुष्यों की व्याधियों में यह नासूर भगन्दर सदृश महा दुष्ट रोगों में बाह्योपचारार्थ प्रयोजित होता है तथा वीर्य सन्बन्धी रोगोंमें निम्नलिखित प्रयोग बनाकर सेवन करावें। अति उत्तम है। बड़ का दूध एवं गूलर का दूध में दोनों एक नारियलमें छिद्र करके भर दें उसी

पुत्रदा

शर्तिया पुत्र उत्पन्न करने की दवा

साधारण स्त्रियों-को 'पुत्रदा' से पुत्र होवेगा ही परन्तु जो बांझ अथवा जिन्हें रजस्वला होना बन्द हो उनको भी शर्तिया पुत्र उत्पन्न होगा। हजारों ने 'पुत्रदा' सेवन कर पुत्र पाया है। आज तक किसी को भी हताश नहीं होना पड़ा। यदि आपको पुत्र की इच्छा हो एक बार परीक्षा कर अवश्य देखिये पुत्र न पाने पर दाम वापस, चाहे प्रतिज्ञा पत्र लिखा लीजिये। मूल्य ५) पूरा कोर्स ३ शीशी १४)।

महाऋषि आश्रम (३१) पो० अलीगंज (मुंगेर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तम केशर, कस्तूरी, अम्बर जायफल आदि द्रव्य यथा मात्रा में मिलाकर ऊपर उसी का कटा हुआ नारियल का टुकड़ा लगाकर धान के ढेर में दो सप्ताह पर्यन्त दबा देवें तत्पश्चात् निकाल खरल में पांच सातघण्टे घुटाई करके एकएक माशेकी गोलियाँ बना लें ४१ दिन के सेवन से अपूर्व शक्ति पैदा हो वीर्य सन्बन्धी शिकायतें नपुंसकता नष्ट हो। पथ्या पथ्य सम्बन्धी बातोंपर ध्यान रखकर इस प्रयोगको सेवन कराने से इसके समक्ष बड़ी बड़ी औषधियांभी निरर्थक सिद्ध होंगी।

गूलर के फल—इसमेंभी रक्त रोधक गुण काफी प्रमाण में हैं अतः वमन, रजःश्रावाधिक्य, रक्तार्श आदि में सेवन कराने से लाभ होता है। मधुमेह के रोगी के लिये उत्तम खाद्य है इसमें पौष्टिक गुण होने से ये शक्ति संचय के लिये उपकारी है। इसी प्रकार नेत्ररोग उदर विकार यक्ष्मा विसूचिका (हैजा) आदि में इसके फलोंको स्वतन्त्र रूपसे अथवा अन्य प्रयोगों द्वारा सेवन कराने से लाभ होता है।

गूलर का घनसत्व—जो इसके कोमल पत्तों को वारीक कूटकर सोलह गुने जल में मिला क्वाथ कर पुनः क्वाथ को छान कर यथाविधि घनसत्व पैदा करके नाना भांति की व्याधियों में प्रयोजित होता है। वाह्य उपचारार्थ इसके मुकावले में वहुत कम औषधियां मिलेगी।

———

"तुलना"

लेखक—वैद्य श्री रामानन्द शर्म्मा आयुर्वेदाचार्य्य, पटियाला

आयुर्वेद प्राचीन ऋषिमुनियोंकी देन है, जिनका सिंहनाद था, यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तद् क्वचिद्" उनका प्रयास स्वार्थवश न था, मानव कल्याण की भावना इसके मूल में व्याप्त थी, उन्होंने प्रयोगवाद का खण्डन अपनी वाणीसे स्पष्ट कर दिया था, वह तो युक्तिज्ञ की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा कर गये हैं आज आयुर्वेद की पत्र पत्रिकाएं ही वैद्य समाज का सन्देश जनता तक पहुंचाने का एकमात्र साधन हैं, अगर इस साधन का भी दुरुपयोग किया जाय तो कहाँ तक यह आयुर्वेद को क्षति पहुंचानेमें समर्थ होगा, इन पत्रिकाओं में अधिकांश ने 'सिद्ध योग' नामक स्तम्भ प्रचलित किया है, प्रयास प्रशंसनीय होते हुए भी प्रकाशक जिन प्रयोगों का प्रकाशन इस स्तम्भ में करते हैं, उनमें शास्त्रीयता तथा उपयोगिता नाम की वस्तु एक प्रतिशत से शायद ही अधिक होती हो, जो विशुद्ध शास्त्रीय योग गुण धर्मों के सहित पत्रों में प्रकाशित होते हैं वहां भी अधिकतर शास्त्रोक्त गुणों का दर्शन होता है अनुभवता कभी कभी ही उपलब्ध होती है। इस दिशा में सुधार होना चाहिये इससे पत्र पत्रिकाओं का भी मापदण्ड बढ़ेगा। यहां पर हम आरोग्यवर्द्धिनी वटी तथा स्त्री रोगाङ्क "धन्वन्तरि" में प्रकाशित मान्यवर श्री गोवर्द्धनजी छाङ्गाणी का "कामिनी कुल मण्डन" नामक योग देकर उनकी तुलना करेंगे।

आरोग्य वर्धिनी—

रसगन्धकलोहाभ्र शुल्बभस्म समांशकम्॥
त्रिफला द्विगुणा योज्या त्रिगुणं तु शिलाजतु।
चतुर्गुणं पुरं शुद्धं चित्रमूलं च तत्समम्
तिक्ता सर्वसमाज्ञेया सर्वं संचूर्ण्य यत्नतः॥
निम्ब वृक्षदलाम्भोभिर्मर्दयेत्...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कामिनी कुल मण्डन—

पारद, गन्धक, अभ्र भस्म, ताम्र भस्म, लोह भस्म त्रिफला, चित्रक, शिलाजीत, गुग्गुल

कुटकी—

त्रिकटु, एलुवा, रेवा चीनी, भावना घृत कुमारी रस से।

तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि मूल योग आरोग्यवर्द्धिनी में कुछ द्रव्यों की वृद्धि कर उसको स्त्री रोगों पर दाइयाँ प्रयोग करती थी। लाभ अच्छा करता है इसकी पुष्टि स्वयं अपने अनुभव से भी श्रुतवयोवृद्ध आचार्य ने की है, शास्त्र के प्रकाण्ड पण्डित ने यह योग साधारण दाई से प्राप्त किया यह गुणग्राह्यता प्रशंसा के योग्य है। स्पृहणीय है, यत्र तत्र, से योगों को विकृत करके सिद्ध योगो के नाम से देनेवालों को इस सचाई को सन्मुख रख इस दिशा में प्रयत्न करना चाहिये, इन दोनों योगों में जो मूल द्रव्य हैं वह समान होते हुए भी किंचिद् परिवर्तन कितना महत्व रखता है उसको जानने के लिये मैंने दो समान मेदस्विनी स्त्रियों को सर्वप्रथम दोनों योग एक जैसे पथ्य पर रख कर प्रयोग कराये।

छ मास के प्रयोग से ईश्वरकी कृपा से दोनोंको गर्भ रहा! इसके पश्चात सामान्य शरीर गठनवाली एक स्त्रीको आरोग्यवर्द्धिनी का पथ्य पूर्वक प्रयोग कराया १० दशमास में सफलता मिली गर्भ रहा, बालक का जन्म हुआ यहां यह बताना विशेष लाभ कर होगा कि इसके विवाह को तो करीब नौ वर्ष हो चले थे, अनेक चिकित्सा करनेपर भी जब सफलता प्राप्त न हुई तो घरवालों ने दूसरी शादी करने का निश्चय कर लिया, दैववश उनका मेरे सम्पर्क में आना हुआ, जिससे उनकी अभीष्ट सिद्धि हुई आज यह स्त्री दो स्वस्थ बालकों की माता है इसके बाद मैंने एकमात्र आरोग्यवर्धिनी का प्रयोग किया लाभ हुआ कामिनी कुल मण्डन जो कार्य करता है वही कार्य आरोग्य वर्धिनी करती है, आवश्यकता है शास्त्रीय योगों के विधि पूर्वक निर्माण की युक्ति पूर्वक देने की एक स्त्री जिसका शरीर स्थूल था सोलह वर्ष पहले एक लड़का हुआ, बच्चे के जन्म-काल में कुछ शारीरिक विकृति हुई मासिक अनियमित-अधिक होने लगा स्त्री चिकित्सिकाओं और डाक्टरों का कहना था कि अब सन्तान न होगी, सोलह वर्ष नहीं हुई आशा भी न थी, अन्य चिकित्सावश उनका मेरे पास आना हुआ इसी बीच उन्होंने इसकी भी चर्चा की मैंने उनको अपना अनुभव बताया, चार पांच मास की चिकित्सा से ही सफलता मिली अब सन्तान होने को ही है। यह है शास्त्रीय योगों की विशेषता, मैं दूसरे लोगोंसे भी आग्रह करूंगा कि उनको इस प्रकारके योग उपलब्ध हों तो शास्त्र में उनका प्रसङ्ग देखें इससे आयुर्वेदीय योगोंका पुनः परीक्षण प्रकाश में आवेगा केवल मात्र आततायि योग कहकर छोड़ देने से लाभ नहीं!

———

❀ सचाई की गारन्टी ❀

(श्वेत कुष्ठ की अद्भुत दवा)

प्रिय सज्जनों! औरों की भांति मैं अधिक प्रशंसा करना नहीं चाहता। यदि इसके ३ दिन लेप से सफेदी के दाग जड़ से आराम न हों तो मूल्य वापस। शर्त लिखा लें। मूल्य ३॥)। गलित कुष्ठ (सोनवहरी) की अचूक दवा खानेवाली का मूल्य ५) लगाने वाली का २)।

हिमकल्याण औषधालय (७) पो० कोरारी (पटना)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गर्भावस्था की कुछ प्रमुख व्याधियां और उनकी चिकित्सा

लेखिका—श्रीमती विमला देवी भट्ट वैद्या पो० वतौली जिला सरगुजा (म० प्र०)

आज देखा जाता है कि कई बहनें गर्भावस्था में व्याधियों से पीड़ित रहती हैं। निदान कई ऐसे रोगों का आक्रमण होता है जिससे गर्भपात, गर्भस्राव आदि लक्षण मिलते हैं। यदि सन्तान पैदा होती है तो निर्बल और निष्काम। इन व्याधियों का कारण कुछ तो बहनोंकी भूल और कुछ दैवयोग कहा जा सकता है। जहां तक माताओं की असावधानी का सबाल है उन पर यदि ध्यान दिया जाय तो रोग होने का कारण ही न रहेगा। दैवयोग व्याधियों के लिये समीपवर्ती चिकित्सकों का परामर्श लेना आवश्यक है। नीचे कुछ प्रमुख व्याधियों का उल्लेख एवं चिकित्सा भी उद्धृत कर रही हूं।

विषम ज्वर (मलेरिया)

जन-श्रुति है कि गर्भावस्था में क्वीनीन के प्रयोग से गर्भपात होता है। किन्तु चिकित्सा शास्त्र के प्रसिद्ध विद्वान् श्री विलियम महोदय ने क्वीनीन का प्रयोग आवश्यक बताते हुए लिखा है कि—"क्वीनीन नहीं देने से ही गर्भपात होनेका भय रहता है।" इस अवस्था में क्वीनीन जीवाणु दोषसे रहित 'पेलुड्वीन' का प्रयोग अधिक लाभप्रद होता है। 'मेवाप्लीन' नामक औषधि का प्रयोग गर्भवती औरतों के लिये महत्वपूर्ण है जिन्हें क्वीनीन के प्रयोग से गर्भपात का डर रहता है।

("इन्जेक्शन,, पृ० सं० २७३)

आयुर्वेदिक औषधियों में अमृता (गुरुच) रक्तचन्दन, आमला, तुलसी और एरण्डमूल का क्वाथ देने से ज्वर नाश हो जाता है।

पूयमेह (गनोरिया)

पूयमेह नामक व्याधि हर एक अवस्था में ही कष्टदायक है। जैसा कि इसके लक्षणोंसे पता चलता है। खास कर गर्भावस्थामें यदि इस रोगका आक्रमण हो तो महान कष्टदायक ही समझना चाहिये। क्योंकि रोग का आक्रमण गर्भाशय के अन्दर की कला पर होता है जिससे गर्भाशय की ग्रीवा फैल जाती है और अनेकों बार गर्भपात होता है। रोगाक्रमण के पश्चात् यदि अविलम्ब इस पर ध्यान नहीं दिया जाय तो जीवाणु का आक्रमण डिम्बप्रणाली तक हो जाता है और वह पूय से संक्रमित रहता है। गोनो कोकस नामक जीवाणु के विष का प्रभाव प्रसव के समय बालक की आंखों पर होता है। जिससे अभिष्यन्द नामक नेत्र रोग होकर अनेक बच्चे अंधे भी हो जाते है।

इन रोगों को दूर करने के लिये रोगिणी को पूर्ण विश्राम देना आवश्यक है। औषधि के रूप में मूत्रल औषधि (गोक्षुर, पुनर्नवा, कदली कन्द, स्वरसआदि) सलफोना माइड, ए० एम० वी० ६९३ या ७६० का प्रयोग करें।

पोटास विलयन का जल से उत्तर वस्ति (योनि में डूस) करें। जान लेने पर कि माता 'पूयमेह से पीड़ित है तो बच्चा के पैदा लेते ही उसके नेत्रों में १ सील भर नाइकेटशलुसन को डाल देना चाहिये। इस औषधि के प्रयोगसे आँखें लाल हो जाती है जो स्वतः ३-४ दिनों के बाद ठीक हो जाती है और बच्चा अन्धा होने से बच जाता है। सूची के रूप में समीपवर्ती चिकित्सकों से परामर्श लेकर 'पेन्सलीन का व्यवहार भी किया जा सकता है।

उपदंश (अ) उपदंश रोगसे ग्रसित ७५ प्र० श० औरतों में गर्भपात होते देख जाते है। फिर भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगली गर्भावस्थाओं में यह अवधि बढ़ती है और अन्त में जीवित किन्तु सहज उपदंशसे ग्रसित बालक पैदा होता है।

(आ) गर्भ धारण के समय या प्रथम सप्ताहों में यदि इसके जीवाणु का आक्रमण होता है तो पूर्ववत् ही बालक जन्म लेता है।

(ई) गर्भावस्था के पिछले माह में यदि उपदंश हुआ हो तो बालक के पैदा होने पर इस रोग का आक्रमण नहीं होता है किन्तु माता की योनि से निकलते ही बालक आगन्तुक रोग से पीड़ित हो जाता है। आगन्तुक व्रण से पीड़ित बालक का प्रथम लक्षण नेत्रों में व्रण देखा जाता है।

(ई) अनेक बार यह देखा गया है कि जीर्ण उपदंश रोग से पीड़ित औरतों में उपदंश का जीवाणु प्राप्त होने के चिन्ह या लक्षण नहीं मिलते हैं। फिर भी ऐसी औरतों से उत्पन्न बालक सहज फिरंगी होता है। ऐसी परिस्थिति में रक्त परीक्षा आवश्यक है। क्योंकि रक्त परीक्षा से आवश्यक निदान सामने हो जाता है। ऐसे उत्पन्न हुए बच्चे को दुग्ध पान कराने से भी माता में कोई चिन्ह नहीं होता।

इस रोग से छुटकारा पाने के लिये काफी समय और धैर्य की आवश्यकता है। जब तक रोग से पूर्ण छुटकारा न मिल जाय तब तक गर्भ धारण करना खतरे से खाली नहीं कहा जा सकता। विशेष औषधि और पथ्य के लिये योग्य चिकित्सकों से परामर्श लेना ही श्रेयस्कर है।

राजयक्ष्मा यह एक भयङ्कर रोग है जिससे कष्ट काफी होता है। इस रोग से ग्रसित स्त्रीके गर्भावस्था में महा प्राचीरा पेशी के फुफ्फुस पर दबाव पड़ने के कारण कैमीटी (स्थान) के दब जाने के कारण तत्काल आराम मालूम होता है। लेकिन प्रसव के पश्चात् यह रोग उभर जाता है। अतः सामजिक विधान तो यह कहता है कि जिन औरतों में राजयक्ष्मा होने का सन्देह पूर्व से ही हो उन्हें शादी के झमेले से अलग रखा जाय। यदि सामाजिक कानून को छिपाकर विवाह भी होता है तो समागमसे परहेज रखना आवश्यक है। इसके विपरीत यदि समागम करने पर गर्भ रह जाय तो कृत्रिम साधनों से प्रसव करा देना चाहिये जिससे गर्भिणी को प्रसव के समय अधिक परिश्रम न करना पड़े। उत्पन्न बालक को यक्ष्मी मां अपने दूंध से परहेज करावे। रोग की भयङ्करताके कारण यदि गर्भिणीका स्वास्थ्य खराब हो रहा हो तो योग्य चिकित्सकोंसे राय लेकर ही गर्भपात कराना चाहिये।

हृदय रोग—

गर्भावस्था में हृदय को अधिक कार्य करना पड़ता है। जिससे हृदय रोग होने की सम्भावना रहती है। यदि इस अवस्था में हृदय रोग का आक्रमण होता है तो फल भयानक हो जाता है। क्योंकि शिराओं में रक्त के अधिक रुकने से गर्भपात की सम्भावना रहती है और प्रसव के समय हृदय की गति रुक जाने से मृत्यु भी हो जा सकती है। अन्य रोगों की अपेक्षा वाम कपाटावरोध होना अरिष्ट लक्षण कहा गया है। सबसे अधिक नाजुक अवस्था स्त्री के प्रसव काल की रहती है जब कि उसे अधिक जोर करना पड़ता है एवं अपरा का गर्भाशय से अलग होने का समय रहता है। प्रसवोत्तर रक्तस्राव का भी सन्देह होता हैं। अस्तु;

इस रोग से ग्रसित औरतों के लिये विवाह बंधन में पड़ना हानिप्रद है। उससे भी अधिक हानिप्रद पुरुष संगम और गर्भधारण करना कहा गया है। यदि गर्भ धारण हो ही जाय तो गर्भधारण काल में काफी परहेजकी आवश्यकता है। यदि कष्ट अधिक हो तो असमय गर्भपात योग्य चिकित्सकोंकी सम्मति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से ही करावें। प्रसवकालमें स्त्रीको अधिक प्रवाहण नहीं करने देना चाहिये साथ ही प्रसवकी प्रथमावस्था में लिटाये रखे। प्रथमावस्थाके पश्चात् संज्ञा नाशक द्रव्योंका नश्य देकर गर्भाशय ग्रीवाके फैलने पर यन्त्र की सहायता से प्रसव करा दे। इस कालमें हृदयको उत्तेजित करने के लिये कुचिला सत्त (स्ट्रिफनीन) स्ट्रोफैन्थिन आदि औषधियोंका प्रवेश सूची के द्वारा शरीर में कराना चाहिये। इसके अतिरिक्त सिद्ध मकरध्वज, कस्तूरी, मृत संजीवनी सुरा, अर्जुनारिष्ट या अर्जुन चूर्ण नागार्जुनाभ्र आदि औषधियों का व्यवहार मुख द्वारा कराना चाहिये। प्रसूतावस्था में रुग्णाके लिये पूर्ण विश्राम और पथ्य आवश्यक है। इसके अतिरिक्त गर्भावस्था में उण्डुक पुच्छ प्रदाह न होने पाये इसके लिये पूर्ण यत्न करना चाहिये। हृदय रोग से पीड़ित मातायें अपने बच्चों को स्तन्य-पान न करायें।

विसूचिका—विसूचिका के कारण यदा कदा गर्भपात भी होते देखा जाता है। इसके अतिरिक्त विषके कारण गर्भिणी की मृत्यु गर्भपातके पूर्व ही हो जाती है। गर्भपात के पश्चात् स्वस्थ होने की आशा की जाती है। जिसका एकमात्र कारण त्रिसूचिका का प्रथम आक्रमण रहता है। इसकी चिकित्सा के लिये निकट के योग्य चिकित्सकों से राय लें।

आंत्रिक ज्वर का आक्रमण बार बार यदि गर्भावस्था में हो तो गर्भपात होने की सम्भावना रहती है। आन्त्रिक ज्वर की प्रथमावस्था में प्रवाल भस्म, प्रताप लंकेश्वर आदि औषधियों का व्यवहार चिकित्सक से परामर्श लेकर करें।

श्वसनक ज्वर के होने पर सितोपलादि चूर्ण प्रवालपिष्टी कफकेतु आदि औषधियों का व्यवहार शीघ्र अपेक्षणीय है। अन्यथा श्वसनक ज्वर के तीव्र होनेसे असमय प्रसव हो सकता है।

गर्भावस्था के दवाव के कारण निम्न व्याधियां मुख्य हैं जो गर्भ जन्य कहाती है।

(अ) सिरा ग्रन्थियां—गर्भाशय के दवाव के कारण भगकी सिरायें तथा अधो शाखाओं की सिरायें संकुचित होने के कारण फूल जाती है। प्रसव के समय इसके फटने से प्रसव में बाधा होती है।

इसे दूर करने के लिये 'सोडियम मरूएट' नामक औषधियों का प्रयोग अधस्त्वकीय और शिरान्तर्गत करना चाहिये। रुग्णाको पृथ्वी के समतल स्थितिपर लिटाये रहना चाहिये।

ऊपर के कारण से ही अर्श भी होता है। इसके लिये आयुर्वेदिक औषधियों में बाहुशाल गुड़, जाति-फलादि वटी आदिका प्रयोग करना चाहिये।

(आ) अर्द्ध शोथ—यदि शोथ जांघ और भग तक ही स्थित हो तो चिन्ता की कोई बात नहीं है। क्योंकि गर्भाशय के दवाव के कारण उन अंगों में अर्द्ध शोथ होना स्वाभाविक लक्षण है। परन्तु सर्वाङ्ग शोथ या मुख का शोथ एवं वृक्क शोथ आत्म विष संचारके कारण होता है जो रोग का चिन्ह है। इस अवस्था में गर्भणी के मूत्र की परीक्षा सप्ताह में एक बार करा लेना आवश्यक है और कारणके अनु-सार चिकित्सा पर ध्यान देना चाहिये। पुनर्नवादि मंडूर, लौह भस्म शोथारि लौह, शोथ शार्दूल तैलका प्रयोग आवश्यकतानुसार किया जा सकता है।

(इ) मलबद्धता—गर्भावस्था के समय मल-बद्धता होना कोई खास हानिप्रद नहीं है। लेकिन अधिक होना नुकसानदेह भी हैं। मलबद्धता को दूर करनेके लिये तीव्र विरेचन का प्रयोग नहीं करके मृदु विरेचनों में गुलकन्द, सफगोलकी भूसी दूधके साथ, मुनक्काको दूध में उबालकर प्रयोग कराना चाहिये।

वृक्क पाक—प्रथम गर्भ के पाचवेंया छठे मास में गर्भवती में पाया जाता है। वृक्क पाक से प्रभा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वित अधिकतर दक्षिण बृक्क ही पाया जाता है। इस रोगका प्रधान कारण आधुनिकों के मतानुसार 'बी० कोलाई' 'स्ट्रेप्टो" और 'स्टेप्टोकोकस है। कभी कभी मिश्रित प्रणाली से भी यह रोग होता है। जिसका कारण मूत्रवह संस्थान का बाल्यावस्था से ही प्रभावित होना कहा गया है। लेकिन गर्भावस्था में अनुकूल समय पाकर व्यक्त होता है। पीठ के दाहिनी ओर शूल, ज्वर, कम्प, कुछ दिन या घण्टों के बाद गदला रंग का मूत्र आदि लक्षणों से युक्त रोगका अचानक आक्रमण होता है। मूत्र परीक्षा करने पर 'वृक्क पाक' रोग के जीवाणु को उपस्थित पाया जाता है। 'बी० कोलाई' युक्त मूत्र की क्रिया अम्लीय होती है।

वृक्कशूल पित्ताश्मरी, उरस्तोय, विषम ज्वर श्वसनक ज्वर आदि रोगों से विभेदक लक्षण करनेके पश्चात् वृक्क पाक का निश्चित करने के पश्चात् इस रोगी को पूर्ण विश्राम, लघुभोजन की व्यवस्था कर दें। मूत्र को क्षारीय बनाने के लिये २० से ६० ग्रेन की मात्रामें प्रति ४ घण्टे पर 'साइट्रेट' औफ पोटास दें। इसके साथ सोडा वाई कार्ब का मिश्रण देने से 'बी० कोलाई' की बृद्धि रुक जाती है। नीचे तीन प्रचलित औषधियों का उल्लेख किया जाता है। जिसके सेवन से स्थायी शान्ति होती है।

(क) क्षारीय मूत्र में दिन में दो या तीन बार १ ग्राम की मात्रामें सलफोना माइड' देना चाहिये।

(ख) एमोनियम क्लोराइड और 'मानडेलीफ एसीड' का प्रयोग भी अच्छा काम करता है।

(ग) 'हेक्जीविन" का प्रयोग मुख द्वारा और सूची द्वारा भी किया जाता है। भोजन के पूर्व एसीड सोडियम फास्फेड" का प्रयोग करना चाहिये आयुर्वेद मतानुसार मूत्रल और कृमिघ्न औषधियों में गोक्षुर, पुनर्नवा स्वरस, कदलीकंद स्वरस, श्वेत पर्पटी आदि लाभकर है।

ग्लाइको सूरिया—गर्भावस्था में स्तन्य दूध से आयी हुई दुग्ध शर्करा मूत्र में पायी जाती है जिससे कोई नुकसान नहीं होता, कार्बो हाइडेट का सेवन अधिक मात्रा में करने से एवं यकृत अपने कार्य को पूर्ववत् कर रहा हो तो मूत्र में शर्करा का आना स्वाभाविक है। वृक्क की क्रिया अव्यवस्थित होने के कारण भी मूत्र में शर्करा का आना अस्वाभाविक नहीं है। क्योंकि इसका सम्बन्ध सम्भवतः पीयुस ग्रंथि से रहता है। इससे शरीर को कोई हानि नही पहुँचती है और प्रसव के बाद स्वयं यह दूर हो जोता है। लेकिन कभी कभी वास्तविक मधुमेह के रूप में भी यह परिणत हो जाता हैं। जो गर्भावस्था के लिये अरिष्ट लक्षण है और गर्भपात भी हो जाता है। इसके अतिरिक्त मधुमेह का अन्य उपद्रव (सन्यास प्रबृत्ति) मिलता है और अनेक बार बालक की मृत्यु गर्भ में होती पायी गयी है। यह मधुमेह भी अनेकों में प्रसव के बाद शान्त हो जाता है। आधुनिक चिकित्सा क्षेत्र में इन्सुलीन देकर बच्चों तथा माताओं की रक्षा की जाती है।

कृमिदन्तक—गर्भ शरीर में बृद्धि के कारण खटिक की कमी होने से यह रोग होता है जिसके लिये योग्य दन्त चिकित्सकों की राय अपेक्षणीय है। इसे दूर करने के लिये गण्डूष धारण और जीवनीय द्रव्य (घ) का प्रयोग करें।

गर्भावस्थाजन्य पांडु—अनेक गर्भवती औरतों के आमाशय में उदहरिताम्लकी कमी हो जाने से लौह का प्रयोग उचित मात्रा में नहीं होने से पांडुता के लक्षण मिलते हैं। वृक्क शोथ, गर्भाक्षेप की पूर्वावस्था और स्वास्थ्यकर स्थानों में नहीं रहने आदि से भी रक्त की कमी से पांडु के लक्षण मिलते हैं।

इस अवस्था में लौह तथा यकृत का प्रयोग लाभकर है भयंकर पाण्डु में रक्त प्रदान करना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वास्थ्य सम्बन्धी लेख—

विटामिन और हमारा खाद्य

ले०—कविराज एस० एन० वोस एल०ए०एम०एस०एस०एस०सी०ए० इन्दौर

गतांक से आगे

विटामिन 'बी, २ :—इस विटामिन को पहले 'लैक्टोफ्लेविन, कहा जाता था क्योंकि पहलेइसे दूध से निकाला गया था—परन्तु बाद में इष्ट तथा यकृत से निकालनेके पश्चात् इसे 'इरिवोफ्लेविन' कहा जाता है। यह विटामिन हमारे शरीर में पुष्टि के लिये आवश्यक माना जाता है। विशेषतः चर्बी जातीय पदार्थों के स्वाभाविक पाचन-क्रिया में इस विटामिन का काफी महत्व है। इस विटामिन की कमी के कारण दो विशेष अङ्गों में हानि पहुँचती है। मुंह के अन्दर तथा आँखों में ही विशेष तकलीफ हो जाती है। मुंह के अन्दर होठों के कोणों में छाले हो जाना, होठों में छाले तथा जलन होना, जबान पर मसृणतायुक्त गहरा गुलाबी लाल रङ्ग हो जाना, बीच-बीच में फट जाना, जबान पर मामूली सूजन तथा प्रदाह हो जाना आदि विटामिन बी २ की कमीके कारण ही हो जाते हैं। इससे रोगीको खाना पीना कष्टदायक हो जाता है—जिससे शारीरिक पुष्टि पर भी प्रभाव पड़ता है। आँखों की तकलीफों मेंसे प्रकाश की असहिष्णुता आँखों में जलन होना, खुजली चलना, तथा आँसू बहना, थोड़ी देर पढ़नेके बाद या देखने के बाद आँखों की थकावट महसूस होना आदि प्रधान है। साधारणतः विटामिन २ की कमी विटामिन बी १ तथा निकोटिनिक एसिड या विटामिन बी ७ की कमी के साथ ही साथ होती है—इसीलिये विटामिन बी श्रेणी की कमी के लक्षण एक साथ प्रगट होते हैं। अनेक क्षेत्र में विटामिन बी २ को विटामिन बी ६ अर्थात् पाईरिडिन्सिन के साथ मिलाकर प्रयोग किया जाता है—जिससे ज्यादा लाभ मिलता है क्योंकि ये दोनों विटामिन ही परस्पर के लिये सहायक माने जाते हैं। गर्भावस्था में बच्चे के पोषण के लिये इस विटामिन की काफी जरूरत पड़ती है—इसलिये गर्भिणीको विटामिन २ ज्यादा मात्रा में देना जरूरी है। उपरोक्त मुंह और आँखों की तकलीफों के अलावा कई प्रकारके चर्मरोग विटामिन बी २ की कमीके कारण होते हैं ऐसा ही परीक्षा द्वारा प्रमाणित हुआ है। गर्भावस्था में इस विटामिन की कमी के कारण गर्भिणी को उल्टी होना, गर्भपात हो जाना अथवा गर्भ के अन्दर बच्चे की मृत्यु हो जाना वगैरह की शिकायतें हो सकती हैं। इस विटामिन की कमी के कारण माताओं में दूध कम हो जाता है—जिससे बालकों के स्वास्थ्यके ऊपर भी असर पड़ता है। इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए हमारे नित्य भोजन में अगर विटामिन बी २ युक्त पदार्थों का उपयुक्त समावेश करें तो हमारा स्वास्थ्य काफी ठीक रह सकता है। शारीरिक स्वाभाविक क्रियाओं के लिये प्रतिदिन करीब-करीब १ से २ मिलिग्राम विटामिन बी २ की जरूरत रहती है—गर्भिणी को २.५ मिलिग्राम तथा माता को ३ मिलिग्राम विटामिन बी २ प्रतिदिन मिलना चाहिये। नीचे हमारे प्रतिदिन उपयोग में आनेवाली चीजों में विटामिन बी २ का परिणाम क्या है—इसकी एक सूची दी जा रही है—जिसके सहारे हम प्रयोजनीय विटामिन २ का संग्रह कर अपने शरीर के पोषण में मदद कर सकते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। सभी विटामिन के समान विटामिन बी २ की टिकियां तथा इन्जेक्शन बाजार में मिलता ही है—तथापि स्वाभाविक भोजन से अगर हम अपना प्रयोजन पूरा कर सकेंगे डाक्टरों के पास जाने की जरूरत कम हो जायेगी। निम्नलिखित सूची से यह भी विदित होगा कि गरीब अमीर सब ही मामूली-मामूली चीजोंसे ही अपना प्रयोजन पूरा कर सकते हैं—इसके लिये खास कोई ज्यादा खर्चकी आवश्यकता नहीं पड़ती है—केवल अपने खाद्य-द्रव्यों के सम्बन्ध में जानकारी के अभाव के कारण ही हम नाना प्रकार की तकलीफें उठाते रहते हैं जिन्हें हम आसानी से दूर भगा सकते हैं।

विटामिन बी २

प्रति पौंड खाद्य-द्रव्य में	मिलिग्राम में
दूध (गाय या भैंस का)	४५ से १.३५
छाँछ—	१.०
मुर्गी काअन्डा—पीला हिस्सा	२.२५
सफेद हिस्सा	१.८
लीवर—(बकरे या भेड़ का)—	.४५से ५.०
गेहूँ का आटा	.२७
अंकुरित चना—(८ दिन)	१.२५
पालक	२.२५
चौलाई की शाक	.२
हरी धनियां [पत्ती]	.४२
हरा चना	१.२
गाजर	.१
पात गोभी	.२२
टमाटर	.२२
आलू	.१
लौकी	.३
फूलगोभी	.३३
करेला	.१२

प्रति पौंड खाद्य द्रव्यमें	मिलिग्राम में
शलगम	.१५
केला	.१३
खजूर	.१
सेव	.१

बिटामिन बी ७ या निकोटिनिक एसिड :—विटामिन 'बी' श्रेणी के विटामिनों के अन्दर यह एक महत्वपूर्ण विटामिन कहा जाता है। पेलागरा नामक एक प्रकार की व्याधिके विशिष्ट प्रतिरोधक होने के कारण इसे 'पेलागरा रोधक तत्व' भी कहा जाता है। यह विटामिन भी हमारे शरीर में अन्य बिटामिनों के समान साधारण खाद्य पदार्थों के द्वारा ही मिलता रहता है। साधारतः यह विटामिन शरीर में अन्न-नाली के जरिये ही शोषित होता है—जहाँ से यह रक्त-प्रवाह के साथ सम्मिलित यकृत में पहुंचता है और संचित होता रहता है। श्वेतसार जातीय पदार्थों के पाचन क्रिया में यह विटामिन काफी सहायता देता है—ऐसा अनुमान किया जाता है। शरीर में रक्त कणिकाओंकी सृष्टि में इस विटामिनका प्रयोग होता है तथा अन्त्र तथा आमाशय की चर्म तथा नलियों की स्वाभाविक प्रक्रिया संचालन में नितांत आवश्यक माना जाता है। पेलागरा नामक जिस व्याधि के लिये निकोटिनिक एसिड विशिष्ट औषधि मानी जाती है—उस व्याधि में पचन-क्रिया की गड़बड़ी के कारण भोजन अच्छी तरह न पचना, अरुचि होना, भूख नहीं लगना, पतले दस्त आना, उल्टियां होना, मुंह तथा जबान पर लालीपन व छाले हो जाना—जिससे भोजन करना भी मुश्किल हो जाता है—वगैरह लक्षण हो जाते हैं। नाड़ी क्रिया में बाधा उत्पन्न हो जाने के कारण सिर में दर्द हो जाना, चक्कर आना, बुद्धि कमजोर हो जाना, काम करने में अनिच्छा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानसिक सुस्ती आदि तकलीफें हो जाती हैं। पेलागरा की बिमारीमें दोनों हाथोंके पीछे से शुरू होकर चर्म के ऊपर साधारण सूजनके साथ लालीपन लिये हुए एक प्रकार के चकत्ते निकलते हैं जो कि पैरों में गले में तथा मुंह के ऊपर तक प्रसारित हो सकते हैं और उन चकत्तों के ऊपर की मरी हुई चमड़ी निकलती जाती है जिससे चर्म में लालीपन लिये हुए रूखापन सदा ही दिखाई पड़ता है। इस रोग में शरीर बहुत कमजोर हो जाता है—जिससे रोगी अकर्मण्य सा हो जाता है। हमारे शरीर की खाभाविक प्रक्रिया संचालन के हेतु प्रति दिन यह विटामिन १० से २० मिलिग्राम तक की जरूरत है। गर्भिणी यथा प्रसूता माताओं में इस विटामिन की जरूरत ज्यादा रहती है।

निकोटिनिक एसिड के अभाव में शरीरमें जिन लक्षणों को सचराचर दिखाई पड़ता है उन्हें आयुर्वेदोक्त ग्रहणी रोग का लक्षण माना जाता है। कभी कभी शुरू-शुरू में जबान पर तथा मुंह के अन्दर छालें हो जाना ही इसका प्रथम लक्षण प्रगट होता है। परन्तु निकोटिनिक एसिड की कमी के कारण जबान का एक विशिष्ट रूप दिखाई पड़ता है। जैसे कि जबान का परत निकल गया हो ऐसा गुलाबी लाल रङ्ग का दिखाई पड़ता है। जबान पर सूजन मालूम होता है—किसी भी चीज के खाने-पीने में तकलीफ महसूस होती है। चूंकि यह विटामिन अन्नों से ही शोषित होता है—और अन्नों की स्वस्थता इस विटामिन के शोषण में प्रयोजन है—इसी दृष्टि से निकोटिनिक एसिड के अभाव से ग्रहणी में विकृति उत्पन्न होकर यह बीमारी पैदा होती है यह ग्रहणी में विकृति के कारण निकोटिनिक एसिड के अभाव में यह बीमारी पैदा होती है - जिसे आयुर्वेद के मतानुसार ग्रहणी रोग कहा जा सकता है।

यद्यपि उपरोक्त पेलागरा नामक व्याधि के लिये निकोटिनिक एसिड औषधि मानी जाती है तथापि निकोटिनिक एसिड के प्रयोगसे ज्यादा लाभ विटामिन बी कम्प्लेक्स जिसमें कि यह विटामिन भी शामिल है—उसके प्रयोगसे मिलता है इससे विद्वानों के मन में सन्देह होता हैं कि पेलागरा नामक व्याधि केवल निकोटिनिक एसिड की कमीके कारण ही नहीं है—बल्कि उसमें विटामिन बी श्रेणी के अन्यान्य विटामिनों की कमी भी सम्मिलित है। मदात्यय [अत्यधिक मद्यपान] रोगमें भी जबान पर तथा मुंह के अन्दर जो सूजन तथा छाले हो जाते हैं उसमें भी निकोटिनिक एसिड के प्रयोग से काफी लाभ होता है। निकोटिनिक एसिड के सेवन से शरीर में एक प्रकार की चिनचिनाहट, चमड़ी के नीचे अधिक रक्त सञ्चार होना और गर्मी का अनुभव करना आदि लक्षण किसी किसी व्यक्ति में हो सकते हैं - इसका कारण शरीर में रक्तवाहिनी धमनियों का प्रसारण ही है, परन्तु और एक बाजार में मिलता है—जिसे निकोटिना माईड कहा जा सकता है उससे ये सब लक्षण कुछ भी नहीं होते है। इस लिये सरलता से निकोटिना माईडका उपयोग किया जा सकता है। परन्तु अगर हम अपने खाद्य पदार्थों के ऊपर ध्यान रखें और प्रयोजनीय बिटामिन हल्का भोजन द्वारा ही ग्रहण करने का प्रयत्न करें तो बाजार की बिटामिन की आवश्यकता नहीं पड़ेगी इसमें कोई सन्देह नहीं है। नीचे हमारे प्रतिदिन के साधारण खाद्य द्रव्यों में इस विटामिन के परिणाम की एक सूची दी जा रही है जिसके अनुसार हम आसानी से अपनी खाद्य तालिका बना कर उपयोग में ले सकते हैं और स्वास्थ्य हीन जीवन को दुःखदुर्दशा से बचा सकते हैं।

यहां और एक बात बता देना अनुचित नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होगा। आजकल सल्फ ड्रास जैसे की सल्फाडायज़िन एम. वि. ७६० तथा ६९३, सिवाजल, सेप्टिनिलम टेबलेट आदि का बहुत ही प्रचलन हो रहा है। जनता बिना डाक्टर की सलाह से भी आजकल इन दवाइयों को उपयोग में लेने लगी है। कुछ अशिक्षित चिकित्सक भी इन दवाइयों का काफी प्रयोग करने लगे हैं। परन्तु सल्फाड्रगस से क्या हानि हो सकती है—या क्या-क्या तकलीफें होजाती हैं—ये वे नहीं जानते हैं। कभी-कभी ऐसे बीमार सल्फाड्रगस के दुरुपयोग से असली बीमारी से ज्यादा तकलीफ उठाते हैं और अन्य चिकित्सक के पास उन तकलीफों को मिटाने के लिये भागते फिरते हैं। सल्फाड्रगसके दुरुपयोग से पैदा हुए लक्षणोंको मिटने के लिये निकोटिनिक एसिड अव्यर्थ औषधि है। इसके प्रयोग से जल्दी से जल्दी उन लक्षणों से छुटकारा मिल सकता है। पेनिसिलीन के इंजेक्शन के बाद किसी किसी को खुजली शीतपित्त के चकत्ते निकलना वगैरह लक्षण दिखाई पड़ते हैं उसके लिये भी निकोटिनिक एसिड लाभदायक सिद्ध हुआ है। आवश्यक खाद्य द्रव्यों के साथ इन बातों का कोई सम्बन्ध नहीं है—परन्तु युग की परिस्थिति की दृष्टि से इन बातों का महत्व अवश्य ही है। निकोटिनिक एसिड श्वेतसार जातीय पदार्थों की पचन क्रिया में सहायक होने के कारण मधुमेह में भी प्रयोग किया जाता है—इससे 'इनसूलीन' इन्जेक्शन में मदद मिलती है—तथा 'इनसूलीन' की मात्रा कम देनी पड़ती है—ऐसा भी कहा जाता है।

प्रति छटाँक खाद्य द्रव्य में	निकोटिनिक मिलिग्राम में
गेहूँ का आटा	·८
सिंघाड़े का आटा	१·८
बाजरा	२·१
चना	·७
अरहर की दाल छिलकेदार]	३·५६
हरा धनियां	·५
चौलाई की शाक	·६
बीट तथा गाजर	·२६
गोल आलू	·३३
लाल रतालू	५४
बैगन तथा सेम	५५
लौकी	·६
भिण्डी	·४

प्रति छटाँक खाद्य द्रव्य में पीछे	एसिड विटामिन मिलिग्राम में
टमाटर कच्चा या पक्का	·२६
शलगम	·३२
मूंगफली	६·४
पीली सरसों	२·६
बादाम	१·६
पिस्ता	१·
पातगोभी (बंधा गोभी)	·२६
आम	·२६
पालक	·३३
लीवर (भेड़ का)	१०·२
मांस (,,)	५·२
दूध (गाय का)	·०६
पान (खाने का)	·०३

साधारणतः हरे फलों में यह विटामिन मामूली मात्रा में मौजूद रहता है जिसका औसत करीब-२·५ से १·२ मिलिग्राम तक है।

ऊपर की सूची से गरीब, अमीर, शाकाहारी, माँसाहारी सब ही व्यक्ति अपने-अपने प्रयोजन के अनुसार उपरोक्त विटामिन का संग्रह कर शारीरिक स्वास्थ्य अटूट रख सकते हैं और यही हमारा उद्देश्य होना चाहिये। अगर हम कोशिश करें तो खाद्य पदार्थों के द्वारा ही विटामिनों की कमी के कारण व्याधियों से तथा विटामिनकी टिकिया से आसानी से दूर रह सकते हैं—इसमें कोई सन्देह नहीं है।

क्रमशः।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"नवाकर्षण"

डा० भवानीप्रसाद गुप्त M.B.B.S. अध्यक्ष लक्ष्मण मेडिकलहाल रसड़ा (बलिया) उत्तर प्र०

दिसम्बर के अङ्क से आगे

Organs and their specifics

शारीरिक अवयव और उनकी औषधियां

(१) अस्थि—लालपानी या रक्त जल,
(२) मांस-पेशियां-नीला जल या आसमानी पानी
(३) कण्ठ प्रदेश—लाल पानी या रक्त जल,
(४) आमाशय—लाल पानी या रक्त जल
(५) प्लीहा - सफेद पानी या श्वेत जल,
(६) यकृत— " "
(७) अंत्र—पीला पानी का पीत जल,
(८) लसीका—लाल पानी या रक्त जल,
(९) लसीका— " "
(१०) हृदय—आसमानी पानी या नीला जल,
(११) धमनियाँ— " "
(१२) शिराएं— " "
(१३) रक्त— " "
(१४) स्वर प्रणाली— " "
(१५) नासिका— लाल और नीला जल
(२६) वात प्रणाली " "
(१७) फुफ्फुस— " "
(१८) त्वचा— हरा पानी या हरित जल,
(१९) क्लोम— सफेद पानी या श्वेत जल
(२०) अस्थि संधि— " "
(२१) वृक्क— " "
(२२) कोमलास्थि— " "
(२३) मूत्राशय— " "
(२४) डिम्ब ग्रंथियां— सफेद और नीला जल
(२५) गर्भाशय— " "
(२६) मस्तिष्क " "
(२७) शुष्मणा - " "
(२८) वात सूत्र— " "
(२९) वात संस्थान—सर्व जल "
(३०) श्लैष्मिक कला " "
(३१) कर्ण— नीला जल "
(३२) पुरुष जनेन्द्रिय—लाल पानी "
(३३) मूत्र प्रणाली—नीला जल "

मात्रीय अनुशासन Dosology

औषधियों का शीघ्र और विलम्ब से देना रोग और औषधियोंकी तीव्रता एवं कोमलता पर निर्भर है। रोगकी नवीनावस्था में तीव्रता होती है अतः इस अवस्था में चाय के एक चम्मच (१ ड्राम) की मात्रायें प्रति घन्टे १ से १२ बार दे सकते हैं। इसका अभिप्राय हुआ कि रोग की जितनी तीव्रावस्था हो उतनी ही कम मात्रा में जल्द जल्द शारीरिक शक्ति निर्बल रहती है। ऐसी अवस्था में दो या तीन बार ही औषधि देनी चाहिए। अर्थात् एक औंस (२॥ तोले) से १ ग्लास (१ पौण्ड या आध सेर की मात्रा में दिन में दो बार प्रातः सायं या तीन बार प्रातः मध्यान्ह और सायं बड़ी मात्रा में लेनी चाहिए। जीर्ण रोगियोंकी प्रायः ज्ञातव्य शक्ति निर्बल हो जाती है, अतः ऐसी अवस्था में छोटी मात्रायें असफल रहती हैं। बहुधा देखा गया है कि ऐसे व्यक्तिको विरेचन देने से सफलता नहीं मिलती। ऐसी अवस्थामें चिकित्सक यह कह देते हैं कि कोठा कड़ा है, पर यह धारणा गलत है, कारण है ज्ञातव्य शक्ति का ह्रास। कुछ वैसे व्यक्ति भी होते हैं जिन्हें अत्यल्प मात्रा में भी औषधियों की हानि लाभ का अनुभव हो जाता है। ऐसे व्यक्ति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खान पान की वस्तुओं की शीतलता एवं उष्णता का अनुभव कर लेते ही ऐसे व्यक्तिको वातज प्रकृति मान लेना भूल है। अपितु इस अवस्था को समझना चाहिये कि ज्ञातव्य शक्ति की प्रबलता है। ज्ञातव्य शक्तिका सम्बन्ध वात संस्थान से हो। अतः ज्ञातव्य शक्ति की प्रबलता एवं न्यूनता वात संस्थान की उग्रता एवं न्यूनता पर निर्भर है। इस वस्तु को आधुनिक जगत में सेंसिटि वनेस Sensitiveness अर्थात् ज्ञातव्य की प्रबलता एवं शिथिलता, सस्सेप्टिबिलिट (Susceptibility) कहते हैं। अतः छोटी बड़ी मात्रा तथा जल्द २ तथा विलम्ब से दवा का देना वात संस्थान की उग्रता तथा कोमलता पर निर्भर है। बात तो ठीक है पर इसका ज्ञान बच्चों का खेल नहीं है। इसमें बहुत बड़े एवं सुयोग्य गुरु के सामने अध्ययन की आवश्यकता है हम इन नवीन एवं प्राचीन विज्ञान की शिक्षाका प्रबन्ध जनवरी से कर रहे हैं। इस शिक्षण व्यवस्थाकी अवधि ६ मास की होगी। इस विषय में बहुत बड़ी बुद्धिमानी धीरता एवं अनुभव की आवश्यकता है। रोगी के प्रति यह जान लेना चिकित्सक के लिये अतीव आवश्यक है कि रोगी पुरुष है या स्त्री युवा है वृद्ध हो या बालक हो। यहीं तक नहीं। शरीर की क्षीणता सबलता शक्ति प्रकृति आदि अनेक बातों की जानकारी की आवश्यकता होती है। अन्यथा सफलता प्राप्ति के कोसों दूर रहना पड़ेगा और प्रयोग से उदासीन होना पड़ेगा ज्ञातव्य शक्ति का अनुभव हुए बिना सफलता में विफलता ही सम्भव है। वह प्राकृतिक हो अथवा रोगिक अथवा किसी अन्य कारण से ज्ञातव्य शक्ति के अनुसार ही मात्रा का निर्णय होना चाहिए। कल्पना कीजिए—जैसे कोई रोगी प्राकृतिक रूप से निर्बल एवं कोमल है और उसे तीव्र ज्वर हो गया हो अथवा हिष्ट्रीया का रोग हो अथवा हृदय के बनावट में अन्तर आ गया हो, तो ऐसे रोगी की १ चम्मचकी मात्रा भी असहनीय हो सकती है। और इन्हीं दोषों का रोगी देखने में बलवान हो और उसकी ज्ञातव्य शक्ति न्यून हो तो एक चम्मच की मात्रा लाभ कर सिद्ध होगी। नवाकर्षण के चिकित्सक एवं विद्यार्थी को यह भी ध्यानमें रखना होगा रोग दो प्रकार के होते हैं नवीन और पुरातन और दोनों प्रकार के रोगी में निम्न बातें हो सकती हैं। प्रथम कि रोग शीघ्रता से बढ़ रहा हो और उसके लक्षण भयानक होते जा रहे हों और रोगी के नष्ट होने का अनुभव होता हो। द्वितीय रोग का बढ़ाव शीघ्र जमीन हो और किसी प्रकार के भयानक लक्षण भी न हों, रोगी के नष्ट होने का भय भी न हो पर ज्ञातव्य शक्ति कोमल पड़ गई हो। यह निश्चय आसान है कि प्रथम में न्यून और शीघ्रता से तथा द्वितीय में बड़ी मात्रा देर से देनी चाहिये। यदि रोगी दुर्बल निर्बल ज्ञातव्य शक्ति की न्यूनता हो रही हो तो ऐसी अवस्था में न्यून मात्रा और अगर रोगी सबल है चलता फिरता काम काज करता हो तो ऐसी अवस्था में यदि रोग धीरे २ बढ़ता हो तो बड़ी मात्रायें दे सकते हैं।

स्नान (Bath) की व्यवस्था

स्नान अनेक होते हैं और स्थानीय स्नान तो और भी प्रकार के होते हैं और उनके नाम स्थानानुसार भी होते हैं। जैसे चक्षु स्नान (Eye Bath) प्रकृति किन्तु स्नान साधारणतः दो ही प्रकार के होते हैं। शीतल स्नान (Cold Bath) और दूसरा वाष्प स्नान (Stem Bath) ये दोनों स्नान अनेक प्रकार से व्यवहृत होते हैं। जैसे समस्त शरीर का स्नान (who Bady Bath) दूसरा कमर तक का स्नान अर्थात् कटि स्नान (Hip

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Bath) तीसरा जनेन्द्रिय स्नान (Sits Bath) स्थानीय स्नान (Loed Bath) स्नान में रंगीन पानी का अधिक व्यय होता है कारण कि पानी के स्थान पर आवश्यक रंग का ही जल होना चाहिये। स्नान शीतल हो या वाष्प का पानी आवश्यक रंग का ही लेना पड़ता है। हमारे रंगीन गैलन बोतल तैयार हो रहे हैं जो मार्च से जो भी चाहें मंगा सकेंगे सर्वाङ्ग स्नान में शीत जल का स्नान टब में गर्दन तक का अथवा वस्त्र भीगो कर सारा शरीर पोंछ देने का होता है। वाष्प स्नान में ३ पात्र चौड़े मुंह के आवश्यक हैं जैसे पतीली वगैरह। पात्रों में आवश्यक रंग का पानी भरकर ढक्कन से ढक कर आग पर रख देना चाहिये। जब खौलने लगे तब विना बिस्तर के खाट पर वस्त्र रहित अवस्था में लेट जाना पड़ता है। पीठ कमर और पैर इन तीन स्थानों के सामने खाट के नीचे पात्रों को रखदें। अब एक कम्बल उढा दें जिसमें रोगी से लेकर पलंग तक ढक दें। कम्बल उतना लम्बा चौड़ा हो जिसमें जमीन पर सेहलने लगें। मतलब है कि वाष्प कहीं से भी बाहर न जा सकें।

क्रमशः

जठराग्नि

लेखक—वंद्य केदार मल शर्मा (काँवट) आयुर्वेदीय दातव्य औषधालय, जुगसलाई "टाटानगर"

मनुष्य का स्वास्थ्य आहार पर निर्भर करता है और आहार जठराग्नि पर। कोई भी रोग उत्पन्न होनेके पहले मनुष्यकी जठराग्नि विकृत हो जाती है। तब ही रोग उत्पन्न होते हैं अन्यथा नहीं। इसी से मनुष्य को चाहिये कि अपने को स्वस्थ एवं निरोग बनाये रखने के लिये अपने आहार एवं विहार को नियमित रखते हुए जठराग्नि को न बिगड़ने देवें। जठराग्नि मन्द, तीक्ष्ण, विषम तथा समके भेदसे चार प्रकार की मानी गई है। इनमें मन्दाग्नि कफके विकृत होने से उत्पन्न होती है। मन्दाग्नि होने पर अल्प-मात्रा में खाया हुआ अन्न भी नहीं पचता और उदर में शूल, शिर में पीड़ा, वमन, भोजनमें अरुचि तथा प्रसेक होता है। मल की कब्जता रहती है जिससे शरीर सुस्त बना रहता है। यह अग्नि मनुष्य को बहुत कृश कर देती है। क्योंकि इसमें अल्पमात्रा में सेवन किया हुआ भोजन भी नहीं पचता लेकिन तीक्ष्णाग्नि पित्त के विकृत होने से उत्पन्न होती है। पित्त उष्ण होने से पदार्थको जल्द ही पचा देता है। तीक्ष्णाग्नि पित्त के द्वारा उत्पन्न होती हैं। इस लिये अधिक उष्ण होनेसे श्रेष्ठ नहीं है। जब इसको आहार नहीं मिलता है तब यह शरीरके रस रक्तादि धातुओं को भक्षण करने लग जाती है। जिससे शिर में पीड़ा नेत्रों में जलन, मूत्र का लाल उतरना तथा मल की कब्जता रहती है। इसी से शरीर के जलीय परमाणु नष्ट हो जाते हैं। जिससे पित्त शरीर में उपद्रवों को उत्पन्न करता हुआ नाना प्रकार के रोगों को करता रहता है। इसी से पता चलता है कि तीक्ष्णाग्नि श्रेष्ठ नहीं है। इसी तरह विषमाग्नि वायु के कुपित होनेसे उत्पन्न होती है। विषमाग्नि में कभी कभी अल्प-भोजन भी नहीं पचता और कभी कभी गुरू भोजन भी पच जाता है। इस तरह जब विषमाग्निकी क्रिया विपरीत होती है तब यह शरीर में नाना प्रकार के रोगों को उत्पन्न करती है। इसमें पेट में आफरा शरीर में भारीपन, शूल, आंतों का बोलना आदि होता है। परन्तु इन तीनों जठराग्नियों से उत्तम समाग्नि है। समाग्निमें नियमित रूपसे नियमित मात्रा में समयानुकूल किया हुआ भोजन आसानी से पच जाता है समाग्नि में वात, पित्त, कफ, तीनों दोष स-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

112158
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मान रूपमें रहते हैं। जिससे उत्पन्न हुआ शुद्ध रस शुद्ध रक्तादि धातुओं को बढ़ाता हुआ शरीर को हृष्ट पुष्ट बलवान् बना करके मनुष्यको सदा स्वस्थ एवं निरोग बनाये रखता है। शरीर में किसी प्रकार का विकार उत्पन्न होने नहीं देता। क्योंकि वात, पित्त, कफ तीनों दोष जब समान भाव पर रहते हैं तब जठराग्नि भी सम रहती है। जिससे भोजन किया हुआ अन्न आसानी से पच जाता है। जिसके कारण मल मूत्रादि नियमित रूप से नियमित कालमें सृजन होते रहते हैं। जिससे शरीर हल्का स्फूर्तिकारक एवं चपल बना रहता है। इन कारणों को देखनेसे पता चलता है कि इन चारों अग्नियों में समाग्नि ही मनुष्य के लिये हितकर है।

अतः यही नहीं इन चारों अग्नियों के बाद आयुर्वेदाचार्यों ने एक और अग्नि बताई है जिसे भस्माग्नि कहते हैं। कोई कोई आचार्य तो इसे तीक्ष्णाग्नि का वृहद् रूप बताते हैं। लेकिन तीक्ष्णाग्नि में जब वायु का प्रकोप होता है और कफ का ह्रास होता है तब भस्माग्नि होती है। उस वख्त जो भी भोजन किया जाता है वह शीघ्र जल करके भस्म हो जाता है। उसका रस नहीं बनता बल्कि मल सूख जाता है। भस्माग्नि वाले को जब भोजन नहीं मिलता तब वह रस रक्तादि धातुओं को भक्षण करने लग जाती है। इसी से रोगी चिल्लाने लगता हैं और उसी कारण रोगी के हाथ पांव सूखने लगते है तथा पेट बढ़ने लगता है। शरार में जलन, शिरमें चक्कर, प्यास तथा मूर्छा बढ़ जाती है और भस्माग्नि अपना प्रचण्ड रूप धर लेती है। तब वह शरीर के रस रक्तादि धातुओंका शोषण करती हुई रोगी को जल्दी पांचभौतिक शरीरसे छुटकारा दिला देतीं है।

मन्दाग्नि तथा तीक्ष्णाग्निवाले रोग तो मेरे सामने बहुत से आये परन्तु भस्माग्नि रोग वाला रोगी मेरी नजरमें नहीं आया। लेकिन पिताजी पं० वैद्य सुन्दर लाल जोशी के कथनानुसार पता चलता है कि यह रोग बहुत जल्द ही मनुष्य को नष्ट कर देता है। उनका कहना है कि मैं एक दफा बेलगांव गया और वहीं एक १०-१२ साल के लड़के को देखा जिसके हाथ पांव कृश हो गये थे पेट बढ़ गया था एवं तीन चार दिन बाद राखी के समान बिखरा हुआ मल लगता था। मैंने उसको भस्माग्नि ठहराया और उसकी मामूली चिकित्सा संजीवनी वटी तथा गोदन्ती भस्म सुबह शाम देने लगा। इसके बाद अन्न कम देता हुआ अधिक मात्रा में भैंस का दूध तथा उसमें मामूली चावल देने लगा। जिससे थोड़े ही दिन में मुझे आशातीत सफलता नजर आने लगी। उसके थोड़े दिन बाद वह ठीक हो गया।

अतः इन बातों को देखने के यह मालूम होता है कि अग्नि मनुष्य के लिये महान वस्तु है। जो शरीर में पित्त है वह अग्नि का ही रूप है। यह समान रहनेसे शरीर को हृष्ट-पुष्ट बलवान रखती हुई आनन्द तथा उत्साह को देने वाली है। परन्तु इसके विपरीत होते ही यह नाना प्रकार के रोगोंको उत्पन्न कर देती है। इसी से वैद्यों का कर्त्तव्य है कि हर एक रोगमें अग्निको देखते हुए रोगकी चिकित्सा करें। क्योंकि अग्नि पर ही रोगी का बलाबल निर्भर रहता है।

सफेद बाल काला

इस अनोखे तेल से बालों का पकना रुककर पका बाल जड़से काला पैदा होकर ६० वर्षों तक स्थायी काला न रखे तो मूल्य वापसी की शर्त लिखा लें ३॥), एकत्र ३ का ९) और कुल पका हो तो ५) एकत्र ३ का १२), स्पेशल क्लास ७), एकत्र ३ का १७)

पी०डी० गुप्ता एण्ड को० (२) पो० बेगूसराय (मुंगेर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाइ-ला भेषज्य-पेटिका (Medicine Box)

हमारे व्यापारियों तथा शुभचिन्तकों के विशेष आग्रह से जनता के लाभार्थ हमने "बाइ-ला भैषज्य पेटिका" का निर्माण किया है।

इस भैषज्य पेटिका में प्रचलित एवं तत्काल लाभप्रद औषधियों का समावेश है जो समय पर वैद्य एवं डाक्टर का काम करती हुई प्राण बचाती है।

यह पेटिका प्रत्येक पारिवारिक व्यक्तिको अपने घरमें अवश्य रखनी चाहिये। विशेषतः भ्रमण शील तथा देहात के लोगों के लिये तो अत्यन्त उपयोगी और आवश्यकीय है। देहातों में समय पर वैद्य या डाक्टर न मिलने पर परेशान होकर प्राणों से भी हाथ धोना पड़ता है। ऐसी परिस्थिति में यदि यह "भैषज्य पेटिका" घर में वर्तमान हो तो अपनी चिकित्सा आप स्वयं कर सकते हैं।

आकस्मिक दुर्घटनाओं से रक्षार्थ इसमें प्राथमिक चिकित्सा के सभी उपयोगी समान दिये गये हैं।

जनहित का ध्यान रखते हुए मूल्य भी इतना कम है कि सर्व साधारण आसानी से खरीदकर लाभ उठा सकें। भैषज्य पेटिका में निम्न लिखित औषधियां हैं।

औषधि नाम	रोगाधिकार
१ अर्क पुदीना—	अजीर्ण, उदरशूल
२ अर्क कपूर—	हैजा अजीर्ण, उदरशूल
३ मोहन मिक्श्चर—	विभिन्न रोग
४ एसीकुला	आंख, कान, नाक तथा गला रोग,
५ क्लोरोडिन	वायु शूल, दस्त, आंव।
६ मेन्थेरिया बाम (ट्यूब)—	शिर पीड़ा, शोथ, सन्धिपीड़ा
७ अग्निप्रभा वटी—	स्वादिष्ट पाचक
८ कैस्प्रेन—	विभिन्न पीड़ाओं पर
९ स्वस्ति मल्हम—	दाद खाज, आदि चर्म विकार
१० टिंचर बेंजोइन—	खून बन्द करनेके लिये
११ टिंचर आयोडिन—	क्षत तथा शोथ नाशक
१२ नियो लैक्स	जुलाब
१३ आयडो—सल्फेन	घाव तथा चोट नाशक
१४ बी० एल थ्रोटपेंट—	गले के विकार नाशक

इन औषधियों के अतिरिक्त १ कैंची, गाज, वैण्डेज क्लौथ, प्राथमिक चिकित्सा के साधन हैं वाइ-ला "भैषज्य पेटिका" में समस्त औषधियों के पूर्ण विवरण की एक पुस्तिका भी रहती है।

मूल्य १६) रु० मात्र। प्राप्तिस्थान:—बिड़ला लेबोरेटरीज़ कलकत्ता—३०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

REGD. No. C.3822

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिड़ला लेबोरेटरीज़ [illegible]

शीत-काल में सेवनीय अ[illegible]धियां—

(1) नियो च्यवनप्राश

(विटामिन व कैल्सियम मिश्रित)

गुणः—पुराना जुकाम, खांसी, दमा, य[illegible] की प्रारम्भिक अ[illegible]स्था, शारीरिक [illegible]था हृदयकी दुर्बलता एवं अरुचि की महौ[illegible]धि। [illegible]रीर स्वस्थ रखनेके लिये पौष्टिक रूपमें भी [illegible] सेवन श्रेयस्कर है।

मात्राः—आधा तोलासे १ तोला गर्म जल या दूध से

नियो-विगारिन :-

नियो विगोरिनमें अन्य उपादानोंके साथ साथ पोटासियम, कैलसियम, लौह ताम्र, केशर कस्तूरी तथा [illegible] भी मिश्रित है। इसके सेवनसे रक्ताल्पता (रक्त [illegible] कमी) वृद्धावस्था की कमजोरी, मांस [illegible]यों की थकान और धातु दौर्बल्यका नाश होता है। पुरुषत्व [illegible] करनेके लिये मक्खनके साथ इसका उपयोग हितकर है।

राज राजेश्वर मोदकः-

यह महापौष्टिक मोदक है। इसके सेवनसेअग्नि-कान्ति, स्मृति तथा मेधादि वृद्धिके साथ साथ स्वर में माधुर्य आता है। इसका खास गुण तो यह है कि यह स्तम्भन शक्ति वर्द्धक है। दूधके साथ सुबह शाम उपयोग करना चाहिये।

नियो-ग्राप्याः-

शरीर [illegible] क्षीण बलकी वृद्धिके लिये इसे रसायन कहना [illegible]युक्त न होगा। इसके सेवन मात्रसे आप अपनमें अद्भुत शक्ति एवं स्फूर्तिका संचार होते पायेंगे। [illegible]त्रकी कमी, शारीरिक तथा मानसिक घोर दुर्बलता एवं क्षयके रोगियोंके लिये अत्यन्त लाभदायक प्रमाणित हुआ है। प्रसवके बाद स्त्रियों की स्वाभाविक कमजोरी दूर करनेके लिये तथा बल एवं स्वास्थ्यकी वृद्धि चाहने वालोंको अवश्यमेव इसका सेवन करना चाहिये। भोजनके पश्चात दो तोला औषधि बराबर जल मिलाकर पीना उचित है।

बृहत् बंगेश्वर रस

स्वर्ण रजत युक्त

(प्रमेह नाशक)

स्वर्ण, रौप्य, मोती और बंगादि खनिजों का यह प्रशस्त रसायन धातुगत क्षीणता, [illegible] पतलापन, स्वप्नदोष, पेशाबमें चीनी आना, [illegible] काम करनेमें जी न लगना, कब्जियत, कमरमें दर्द अधिक प्यास लगना, मानसिक शक्तिका ह्रास [illegible] लक्षणोंको समूल नष्ट करता है। धातुको गाढ़ा बना कर शरीरमें ओज पौरुष तथा सौन्दर्य की वृद्धि करता है।

इसके प्रयोगसे पेशाबकी जलन बून्द बून्द पेशाब का होना—पेशाबके साथ रक्त तथा मवादका आना और अत्यधिक पेशाबकी शिकायत भी दूर हो जाती है, मन्दाग्नि, अरुचि और कोष्ठ बद्धताको भी दूर करता है। मात्रा—१ से २ गोली। अनुपान—मधु

बृहत् पूर्णचन्द्र रस

(स्वर्ण रजत युक्त)

(अत्यन्त पौष्टिक तथा वाजीकरण)

पारद, सोना, चांदी तांबा, बंग इत्यादि खनिजोंका यह योग बलकारक रसायन, वीर[illegible] और उत्तम वाजीकरण है यह द[illegible] आमशूल, कमरका शूल, हृदयक[illegible] अजीर्ण पुरानी संग्रहणी, आमवात, अ[illegible] न्दर पांडु प्रमेह और वातरक्त को शीघ्र [illegible] है। इसके सेवनसे मनुष्य निरोग [illegible] और सुगठित हो जाता है।

बांझ स्त्रियोंको, दुर्बल शरी[illegible] वाले पुरुषोंको [illegible] काय तथा शीघ्र स्खलित हो [illegible]नेवाले आदमि[illegible] को ओज, तेज और सन्तान देता है।

यह शरीरके अंगोंको सुदृढ़ करता है और मानसि[illegible] शक्तिका प्रवर्धन करता है। मात्रा—१ वटी [illegible]

प्रकाशचन्द्र गुप्त द्वारा प्रकाशित तथा [illegible] प्रिण्टिंग वर्क्स लि०
८३, पुराना चीनाबाजार स्ट्रीट, कलकत्तामें मुद्रित।

Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

REC

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Compiled
1999-2000

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar